ISSN 2277 - 7083

आधुनिक साहित्य

Aadhunik Sahitya

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

UGC Approved CARE Listed Journal
अंक/Year-12 अंक/Vol.-45 द्विभाषी/Bilingual
जनवरी - मार्च / Jan. - March 2023

संपादक
डॉ. आशीष कंधवे

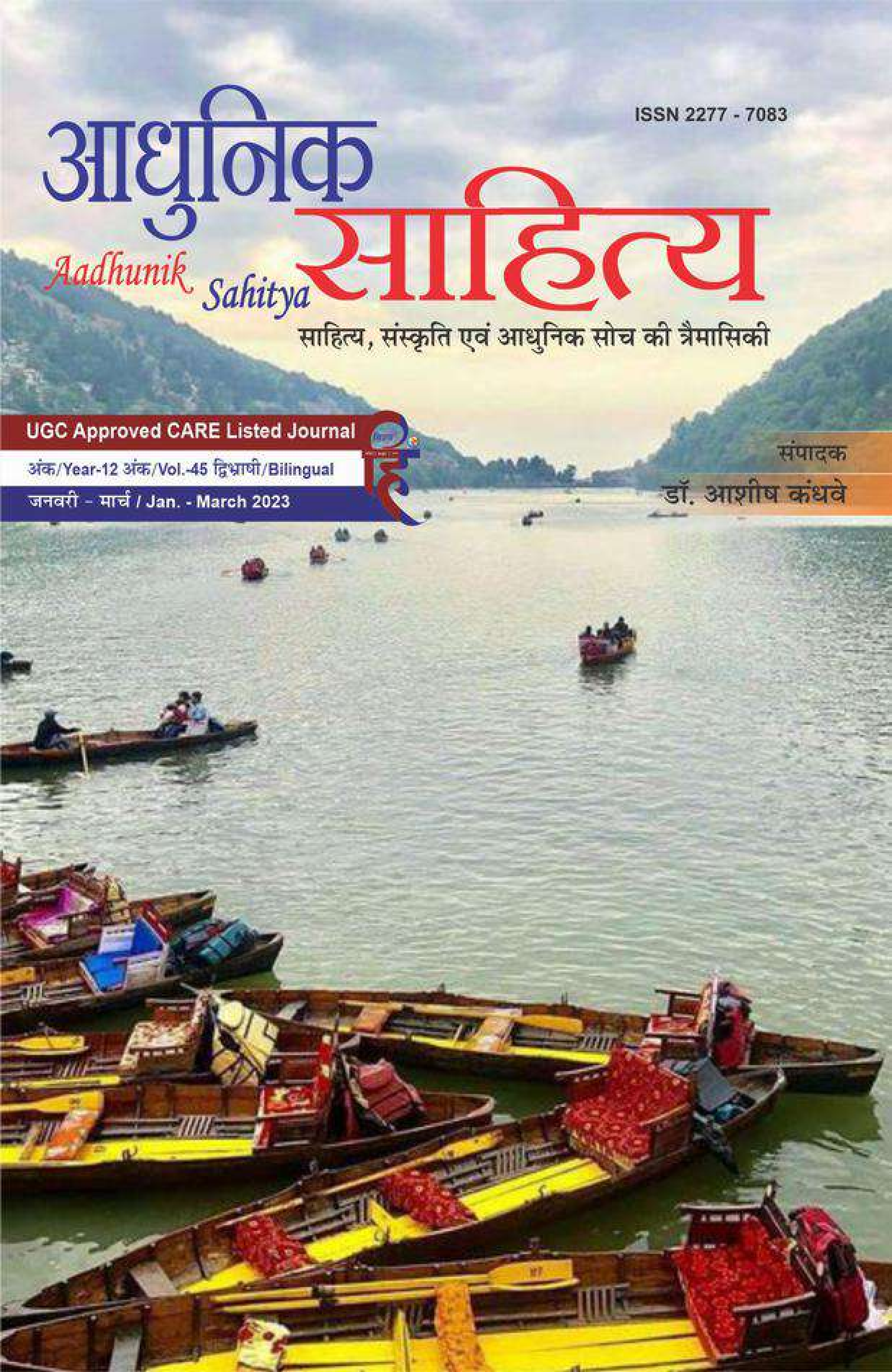

सभी देशवासियों को

आज़ादी के अमृत महोत्सव की हार्दिक शुभकामनाएँ।

संपादक
-डॉ. आशीष कंधवे

माखनलाल चतुर्वेदी स्मरणांजलि

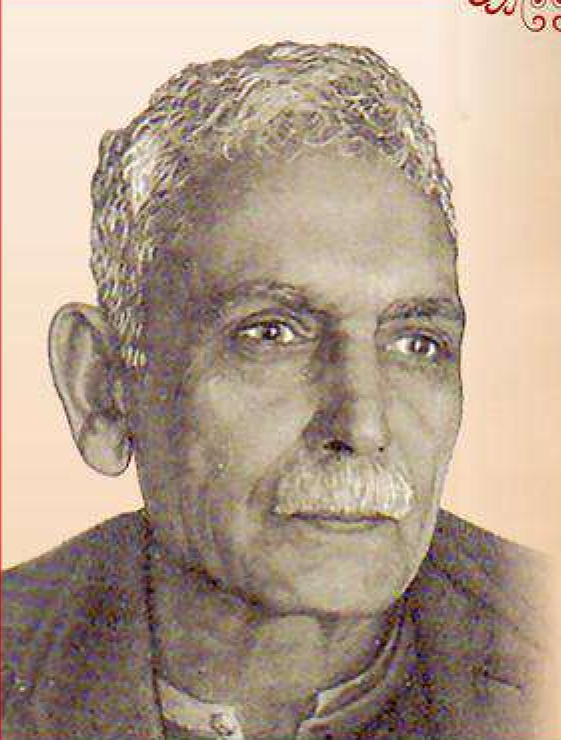

चाह नहीं, मैं सुरबाला के,
गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं प्रेमी-माला में,
बिंध प्यारी को ललचाऊँ,
चाह नहीं सम्राटों के शव,
पर हे हरि डाला जाऊँ,
चाह नहीं देवों के सिर पर,
चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ,
मुझे तोड़ लेना बनमाली,
उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृ-भूमि पर शीश- चढ़ाने,
जिस पथ पर जावें वीर अनेक।

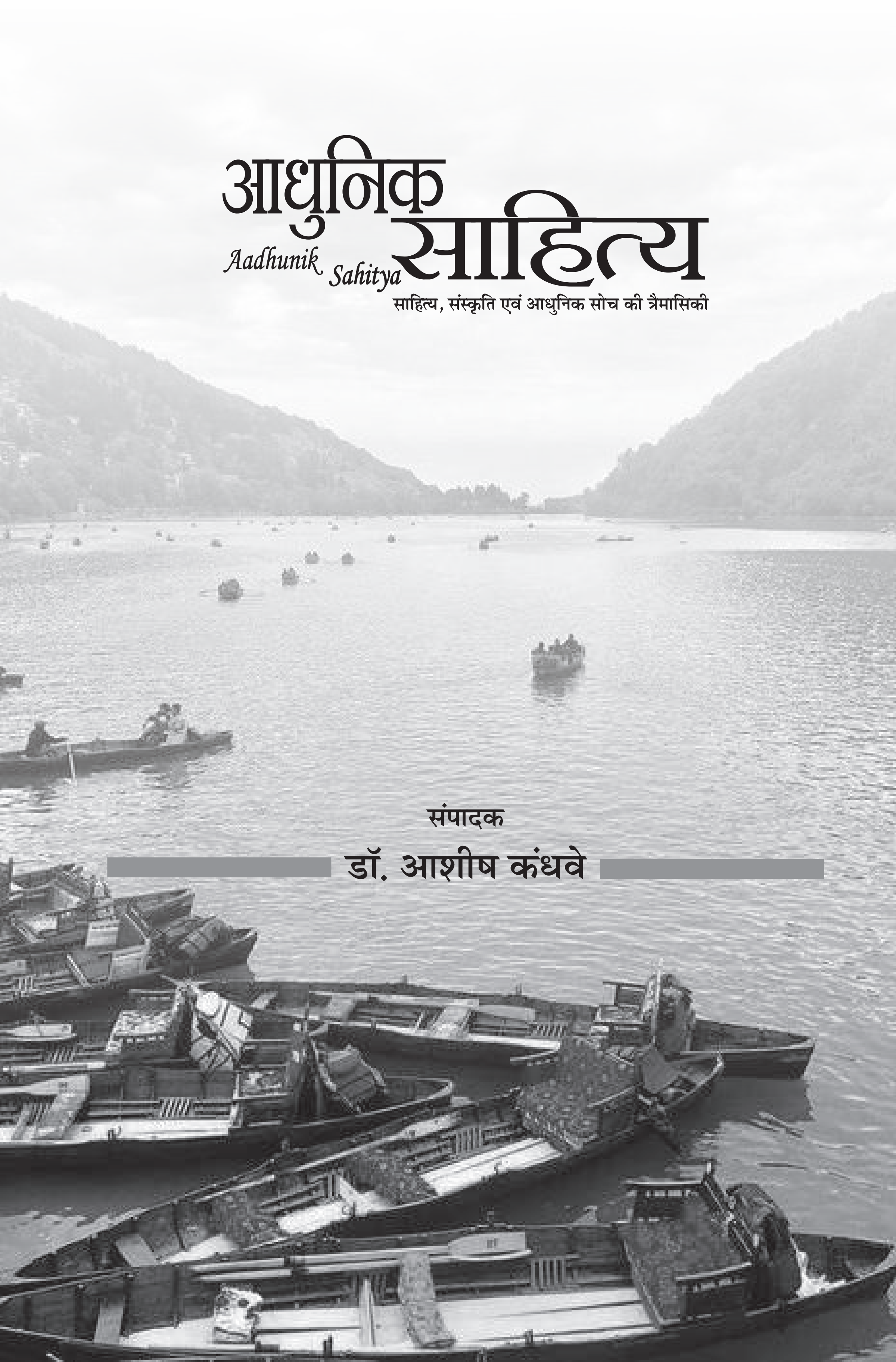

आधुनिक साहित्य

Aadhunik Sahitya

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

संपादक

डॉ. आशीष कंधवे

विश्व हिंदी साहित्य परिषद

प्रकाशन | वितरण | राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन

प्रमुख उद्देश्य

- हिंदी का प्रचार-प्रसार
- उत्तम साहित्य का प्रकाशन
- साहित्यकार साहित्य योजना
- पुरस्कार प्रतियोगिता का संचालन
- रोजगारोन्मुख हिंदी के लिए प्रयास
- हिंदी एवं भारतीय भाषाओं का समग्र विकास
- साहित्य एवं संस्कृति के चहुँमुखी विकास के लिए प्रयत्न
- संग्रहालय, पुस्तकालय एवं संगोष्ठी कक्ष की स्थापना में प्रयासरत

मुख्यालय

एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088

संपर्क सूत्र : 09811184393, 011-47481521

ई-मेल : vhspindia@gmail.com, aadhuniksahitya@gmail.com

Website : www.vhsp.in

UGC Approved CARE Listed Journal

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

वर्ष/Year-12 अंक/Vol.-45 जनवरी–मार्च 2023/January–March 2023 द्विभाषी/Bilingual

Aadhunik Sahitya

संपादक

डॉ. आशीष कंधवे*

Editor

Dr. Ashish Kandhway

उप संपादक	Sub Editor
रजनी सेठ	Rajni Seth
प्रबंध संपादक	Managing Editor
ममता गोयनका	Mamta Goenka
संवाददाता (अंग्रेजी)	Correspondent (English)
निलांजन बैनर्जी	Nilanjan Banerjee
संरक्षकगण	Patron
प्रो. उमापति दीक्षित	Prof. Umapati Dixit
कुमार अविकल मनु	Kumar Avikal Manu

*आशीष कंधवे (मूल नाम आशीष कुमार)

आधुनिक साहित्य में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबन्धित लेखकों के हैं जिनसे संपादक, प्रकाशक, मुद्रक एवं पत्रिका से जुड़े किसी भी व्यक्ति का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। सभी विवादों का निपटारा दिल्ली क्षेत्र के अन्तर्गत सीमित है। पत्रिका में सम्पादन से जुड़े सभी पद गैर–व्यावसायिक एवं अवैतनिक हैं।

आधुनिक साहित्य

साहित्य, संस्कृति एवं आधुनिक सोच की त्रैमासिकी

UGC Approved CARE Listed Journal

केंद्रीय हिंदी संस्थान के सहयोग द्वारा प्रकाशित

RNI No. DELBIL/2012/42547
ISSN 2277 - 7083

© सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशित सामग्री के पुनः उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक अथवा आधुनिक साहित्य की स्वीकृति अनिवार्य है।

संपादकीय कार्यालय
एडी-94-डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
फोन : 011-47481521, +91-9811184393
ई-मेल : aadhuniksahitya@gmail.com
adhuniksahitya@gmail.com

आलेख/रचना/कहानी में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के हैं इससे प्रकाशक या संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

मूल्य : **₹ 500 प्रति अंक**

शुल्क :	तीन वर्ष (12 अंक)	₹ 6000
	पांच वर्ष (20 अंक)	₹ 9000
	(डाक/कोरियर खर्च सहित)	
	आजीवन सदस्यता	₹ 21,000
	विदेश के लिए (3 वर्ष)	200 डॉलर

शुल्क **'AADHUNIK SAHITYA'** के नाम पर भेजें।

Account Name	:	Aadhunik Sahitya
Account No.	:	16800200001233
Bank	:	Federal Bank Ltd.
Branch	:	Shalimar Bagh New Delhi-110088
IFSC Code	:	FDRL0001680

'आधुनिक साहित्य' द्विभाषी त्रैमा"की आशीष कुमार के स्वामित्व में और उनके द्वारा एडी-94डी, शालीमार बाग, दिल्ली-110088 से प्रकाशित तथा आभा पब्लि"टी, 163, देशबंधु गुप्ता मार्केट, करोलबाग, नई दिल्ली से मुद्रित। स्वामी/संपादक/प्रकाशक/मुद्रक : डॉ. आशीष कुमार।

'AADHUNIK SAHITYA' A quarterly bilingual (Hindi & English) Journal of Literature, Culture & Modern Thinking owned/published/printed/edited by Ashish Kumar from AD-94-D, Shalimar Bagh, Delhi-110088 and printed at Abha Publicity, 163, Deshbandhu Gupta Market, Karolbagh, New Delhi.

अनुक्रम

संपादकीय

- डॉ० आशीष कंधवे / *अभ्युदय का मार्ग* / 10

हिंदी प्रभाग

- डॉ. बिपिन कुमार ठाकुर / **जी 20 की अध्यक्षता: भारत के लिए एक स्वर्णिम अवसर / 15**
- उर्मिला शर्मा, कविता नाहरवाल / **भगवान चित्रगुप्त / 20**
- डॉ. दीपांकुर जोशी, डॉ. शालिनी चौधरी / **घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं का संरक्षण: एक अध्ययन / 23**
- डॉ. अमृता श्री / **राष्ट्रभाषा हिंदी की आवश्यकता / 29**
- कुलदीप कुमार, डॉ. रीता सिंह / **एस. आर. हरनोट की कहानियों में वृद्धों का जीवन संघर्ष / 34**
- साकेत बिहारी / **भाषा का प्रश्न और राष्ट्रीय शिक्षा नीति / 39**
- दिगंत द्विवेदी / **कोंदर जनजाति की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन / 48**
- डॉ. नलिनी सिंह / **वैश्विक पटल पर भाषा का प्रश्न और हिंदी भाषा की स्थिति / 52**
- अपर्णा वर्मा, डॉ. वी. शिरिषा / **भारतीय भाषाओं के उन्नयन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 / 59**
- बसंत कुमार / **भारत में राष्ट्रीयता और हिंदी भाषा/ 64**
- स्वप्निल पांडेय / **वैश्विक अभिव्यक्ति की ओर अग्रसर हिंदी भाषा / 68**
- श्रीमती पॉली भौमिक / **त्रिपुरा में हिन्दी का भाषाई महत्त्व / 72**
- डा० आनंद जायसवाल, ममता रानी / **पत्रकारिता और हिन्दी भाषा का आंतरिक सम्बन्ध / 75**
- नंदकिशोर / **नन्द किशोर नवल : भाषाई व्यक्तित्व / 80**
- राजेश कुमार / **हिन्दी के अंतरराष्ट्रीयकरण में प्रवासी साहित्य का योगदान / 92**
- श्रीमती चैताली सलूजा, डॉ. नंदिनी तिवारी / **भाषा का प्रश्न और प्रवासी साहित्य / 96**
- डॉ. परिस्मिता बरदलै / **असमिया संस्कृति और राम-कथा की परंपरा / 105**
- डा. सुजीत कुमार, डा. गौरव रंजन / **इंटरनेट के युग में लोकजीवन एवं युवाओं की सामाजिक चेतना / 120**
- बी आकाश राव / **पूर्वोत्तर की भाषाई विविधता और हिंदी उपन्यास / 123**
- सिमरन / **ब्रिटेन की चयनित प्रवासी हिन्दी कहानियों में स्वदेशभक्ति / 128**
- पूजा / **भाषा का प्रश्न एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति / 133**
- कुसुम सबलानिया / **भाषा का प्रश्न और पूर्वोत्तर का हिंदी साहित्य / 138**

- डॉ. भगवान गव्हाडे / **भाषा का प्रश्न और हिंदी सिनेमा / 143**
- दीपक सोराड़ी / **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं बहुभाषिकता / 148**
- डॉ. जय प्रताप सिंह / **वैश्विक पटल पर भाषा का प्रश्न / 153**
- डॉ. हरप्रीत कौर/**हिंदी भाषा का समाजभाषिक अध्ययन/158**
- नीरज / **हिंदी भाषा एवं गद्य का उद्भव और विकास / 161**
- प्रियंका चौधरी/**भाषा का प्रश्न और स्त्री/557**
- प्रभंजन कुमार झा, प्रो- संजय कुमार /**फोर्ट विलियम कॉलेज और हिन्दी भाषा का प्रश्न/561**
- सूरज प्रकाश बडत्या/**महात्मा बुद्ध और साहित्य -समाज परिवर्तनकारी चेतना/566**
- संदीप कुमार जायसवाल/**भाषा का प्रश्न और वेब सीरीज/573**
- रमेश एस. लाल, प्रो. हासो दादलाणी/**सामी के काव्य में वेदांत/580**
- प्रो. मंजुला राणा/**कृष्णा सोबती का रचना-संसार/589**
- डॉ. मनोरमा मिश्रा/**भारतीय साहित्य में नैतिक मूल्य/594**
- डॉ. पूनम कुमारी/**परशुराम की प्रतीक्षा और भारतीय प्रसंग/598**
- कल्पना उप्रेती/**वर्तमान शिक्षा प्रणाली में त्रि-भाषासूत्र का महत्व व चुनौतियाँ/602**
- प्रो. सुशील कुमार शर्मा/**माटी के सम्मान की कविताएँ: 21वीं सदी का आदमी/607**
- अमित आर्य, प्रो. मैथिली गंजूँ/**अपराध, राजनीति, और व्यापार से संबंधित ख़बरें और 'एनडीटीवी'/611**

ENGLISH SECTION

- S. Gangaiamaran, Dr. K. Sindhu/**Portrayal of a Tribal Woman's Life as seen in Mahasweta Devi's Rudali / 167**
- P. Kumar, Dr. K. Dharaniswari / **Women's Liberationist Outlook in Manju Kapur's Novels 174**
- R.Vijayarani / **Emancipation of Woman in Gayle Jones's Healing / 179**
- R. Gopiram, Dr. J. Jayakumar / **Assumption of Ethnicity and Change of Modern Materialism in Kurt Vonnegut's Slaughter House Five / 186**
- C.Athiyaman, Dr. V. Radhakrishnan / **Woman as a Symbol of Sacrifice in Kamala Markandaya's Novel Nectar in a Sieve / 192**
- S. S. Uma Sundara Sood, Dr. P. Mythily/ **A Psychological Study of the Struggle between Love and Ambition of a Catholic Priest in Colleen Mccullough's The Thorn Birds. / 197**

- Mrs. J. Jebila, Dr. S. Briolgith Jusbell / **Hunger for Power and Emancipation in Nuruddin Farah's Sweet And Sour Milk / 203**
- Ms. R. Sakthi Priya, Dr. R. Sheela Banu / **Feminine Sensitivity in Chitra Banerjee Divakaruni's The Palace of Illusion /208**
- N. Priyadharshini / Dr.B.Visalakshi N. Priyadharshini / Dr.B.Visalakshi / **Bond and Beyond: Portrayal of Women and Nature in Anita Desai's Fire on the Mountain / 215**
- A. Arockiyaraj, Dr. S. Diravidamani / **Challenges Faced by First Generation Undergraduate Learners in Second Language Acquisition / 222**
- D. Eswaran, Dr. S. Diravidamani / **A Phenomenon of Second Language Spelling: A Study at Undergraduate Level / 231**
- Dr. M. Leena, Dr. N. Kavitha / **Social Background Exposes Distinctiveness in Namita Gokhale's Gods, Graves & Grandmother & Rohinton Mistry's A Fine Balance. / 240**
- Dr. K. Kannadasan / **Struggle and Success of Women in Rohinton Mistry's novel A Fine Balance / 247**
- Indusoodani / **Defocalization and the Magical Realist Text / 252**
- Dr. S. Maheswari / **The Pursuit of Justice in Arthur Conan Doyle's Sherlock Holmes Stories / 257**
- Mrs.Y. Ilarasi, Dr. B. Kavitha / **Feminist ambivalent ideas in Kamala Markandaya and Angela Carter Novels. / 264**
- C. Jeeva, Dr. C. Govindaraj / **The Portrayal of Slave Narratives and Racism in the Select Novels of Ishmael Reed / 271**
- S. Senthil Kumar, Dr. C. Govindaraj / **The Portrayal of Feministic Elements in Jamaica Kincaid's Select Novels: A View / 276**
- Dr Inderjeet Singh / **Failure of the State: Nation Right after the Independence Through the Eyes Khushwant Singh / 282**
- Rananjayaa Singh / **Environmental Racism: A Reading of Richard Wright's Eight Men / 289**
- Dr. Mandeep Kaur / **Study of Relatedness of Occupational Aspiration and Home Environment of Adolescents with Respect to Some Demographical Variables / 295**

- Harshita Rathee, Prof. Sujata Rana / **Examining the Stereotypes of Religion and Faith: A Reading of William Dalrymple's Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India / 304**
- Konsam Romabati / **Religion as a medium for Social Change: Ambedkar's Perspective / 310**
- Dr. Neena.TS / **Relevance of integral education in the 21st-century Indian context / 318**
- A. Akthar Parveen, Dr. P. Kumaresan / **Everending Waves of Female Struggle in Chitra Banerjee Divakaruni's "The Last Queen". / 326**
- Saurabh Mishra / **Exploring the tribal history of Jharkhand through ethnography / 332**
- A. Pearlin synthia, Dr P. Kumaresan / **Impairment undergone by Women in their Shattered Identities; A critical Study on Alice Walker's Select Works / 341**
- R. Prathap Chandran, Dr. P. Kumaresan / **Gynocentrism in Langston Hughes' Selected Poetic Works / 351**
- Dr. Ph. Jayalaxmi / **Folk Narratives in the Age of Digitalization in Manipur / 358**
- P. Jaya Prabha, Dr. T . Alagarasan / **Spiritual Realization and Cultural Identity through Music and Dance in Paulo Coelho's The Witch of Portobello / 368**
- Rajni, Dr. Manjit Kaur / **Easterine Kire's portrayal of the multi-conflict struggle of Nagas for identity / 374**
- Amanjyoti Kaur / **Impact of Social Media Influencers on Generation Z / 381**
- Dr. Yuki Azaad Tomar / **Parched : Story of Women Empowerment through Cinema / 391**
- Mrs.P. Nirmala Rani, Dr.P.Kumaresan / **Pitfalls of Prosperity in John Steinbeck's The Pearl / 401**
- Dr. Ramyabrata Chakraborty / **Re-interpreting the Nationalistic Discourses in Raja Rao's Kanthapura / 408**
- Dr. Shinam Batra, Dr. Sunil Kumar / **Effect of Learning and Thinking Style on Academic Achievement of CBSE and ICSE Board Students Using ICT: A Comparative Study / 414**

- Madan Mohan Joshi, / **Saiva Dharma as Depicted in the Icons of Kumaun Himalaya / 422**
- Nikita Kumawat, Ashok Singh Rao / **Thundering Sounds of Silence in Nature/432**
- Bipin Kumar Thakur / **Overcrowding by Political Parties in General Elections in India / 439**
- Imdad Ali Ahmed / **Medieval History and Culture of Assam as Depicted in Jean Baptiste Tavernier's Travels in India: A Critical Study / 447**
- Indrani Hazarika / **Discomfort in 'comfort': A reading of Ian McEwan's The Comfort of Strangers / 453**
- J. Jayalakshmi, Dr. K. Anand / **The Plight of Untouchables in Mulkraj Anand's Untouchable and Coolie / 460**
- Bavatharani. A, Dr. T.S. Ramesh / **The Posthuman Postulation of Consciousness in Richard Morgan's Altered Carbon / 464**
- V. Anitha, Dr.K. Ananad / **Ecological Concern in Reading the Poetry of Kamala Das / 471**
- V. Hamsaveni, –Dr. M. Maheswari / **Dubious Relationship In Shobha De's Snapshots / 477**
- R. Sivasankarit, Dr. K. Lavanya / **Blacks' Struggles after Slavery in Chester Himes' The Third Generation / 486**
- M. Karthik, Dr. K. Kumar / **Individuality and freedom in the frame with reference to Githa Hariharan's Times of Siege / 490**
- M.Prakash1, Dr. K. Lavanya / **Transformation of the Human Race in Octavia E. Butler's Clay's Ark / 497**
- Dr. Rajeshvari/**Dimensions of Language Learning: Special Reference of 'English Vinglish'/500**
- Nidhi Arora, Manisha Gupta, Mridul Dharwal, Nitendra Kumar/ **Couture turns Communal-A Post Covid-19 Case Study of Brand Collaborations/506**
- Dr. M.N.V.Preya/**Objectification is a Way of life- A study on Disquieting Existence of Monisha and Jaya in Voices in the city and That Long Silence/524**
- Dr. Suresh Kumar/**Role of Digital Currency in Changing The Future of Banking Sector in India/529**
- Rishab Manocha, Dr. Mridul Dharwal, Dr. Nitendra Kumar/**Millennials Attitudes and Purchase Intentions toward Secondhand Clothing in North India/542**

संपादकीय

अभ्युदय का मार्ग

समतल धरती, उन्नत पर्वत-शिखर, चंचल झरने, बहती नदियाँ, गहरी झीलें, अथाह जलराशि वाले सागर, नाना प्रकार के पेड़-पौधे, वनस्पतियाँ तथा विभिन्न आकार के पशु-पक्षी, कीट-पतंग व मानवों का यह संसार कब, कैसे और कहाँ से अस्तित्व में आया? आकाश में चमकते सूर्य-चंद्र व टिमटिमाते तारों के प्रकाश का रहस्य क्या है? अंतरिक्ष या व्योम का आयतन कितना होगा? आकाशगंगा या फिर ब्रह्मांड किसे कहते हैं? इनका स्वरूप तथा आकार कैसा है? इनकी रचना कब, कैसे और किससे हुई होगी तथा इनका अस्तित्व कब तक बना रहेगा, इत्यादि प्रश्न मानव के मस्तिष्क में आदिकाल से ही गूँजते रहे हैं।

चूँकि ये सभी घटनाएँ मानव-जन्म से बहुत पहले की हैं, अतः अपने काल के जैविक, भौगोलिक व खगोलिक परिवर्तनों के अनुमान-प्रमाण के आधार पर विभिन्न विवेकी मानवों द्वारा इन रहस्यों के मूल तक पहुँचने के अनेकानेक प्रयास अपने-अपने स्तरों से किए गए।

वैदिक काल से ही भारतवर्ष में ऋषियों ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सभी मौलिक तत्त्वों की विवेचना की है। महर्षि भृगु, वशिष्ठ, भारद्वाज, अत्रि, गर्ग, अगस्त्य, विश्वामित्र, पराशर आदि ने विज्ञान के विभिन्न विषयों-जैसे नक्षत्रविज्ञान, भौतिकविज्ञान, रसायनविज्ञान, जीवविज्ञान, आयुर्विज्ञान, विमानविज्ञान, नौकाविज्ञान. कृषिविज्ञान आदि सभी क्षेत्रों में कार्य किया है। सामान्यतः यह धारणा बनाई गई कि विज्ञान के क्षेत्र में भारतवर्ष का योगदान वैचारिक ही रहा था और यहाँ व्यावहारिक पक्ष को उपेक्षित किया गया, जबकि भारतीय शास्त्रों के अध्ययन एवं परीक्षण से यह स्वतः ही प्रमाणित हो जाता है कि विज्ञान के क्षेत्र में ऋषियों ने प्रयोगात्मक विधि को ही मुख्य आधार माना था।

महर्षि कणाद ने अपने वैशेषिक ग्रंथ के 10वें अध्याय में यह स्पष्ट किया है कि प्रत्यक्ष देखे हुए और अन्यों को दिखाने के उद्देश्य से या फिर स्वयं को दक्ष करने तथा अधिक गहराई से ज्ञान प्राप्त करने हेतु निरंतर किए गए प्रयोगों से अभ्युदय का मार्ग प्रशस्त होता है। (दृष्टानां दृष्ट प्रयोजनानां दृष्टाभावे प्रयेगोऽभ्युदयाय) इसी के अनुरूप रस प्रकाश सुधाकर भी प्रयोगात्मक विधि को ही उचित ठहराता है। भारतवर्ष में वैज्ञानिकों की एक समृद्ध परंपरा रही है, जिसमें अगस्त्य, भारद्वाज, कपिल, कणाद, बौधायन, विश्वरुचि, सुलोहित,

सुश्रुत, चरक, आर्यभट्ट प्रथम व द्वितीय, नागार्जुन, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य, माधवाचार्य, वाग्भट्ट, रामानुज, रमनलेकर, आदि प्रमुख है। महर्षि भृगु ने अपने ग्रंथ में विस्तार से चर्चा की है—

नानाविधानां वस्तूनां यंत्राणां कल्पसम्पदा

धातूनां साधनानां च वस्तुनां शिल्पसंज्ञितम्।

कृषिर्जल खनिश्चोतं धातुण्डं विधाभिधम्॥

नौका-रथग्रियानानां कृतिसाधनमुच्यते।

वेश्म, प्रकार, नगररचनां वस्तु संज्ञितम्॥

– भृगु संहिता

अर्थात् भृगु जी ने यहाँ मुख्यरूप से दस शास्त्रों का उल्लेख किया है- कृषिविज्ञान शास्त्रों के अतिरिक्त अन्यान्य ग्रंथों में बत्तीस प्रकार की विधाओं और 64 प्रकार की कलाओं का वर्णन मिलता है। इनमें धातु विज्ञान, वस्त्र निर्माण, शस्त्र निर्माण, गृह निर्माण, प्राणी विज्ञान, पशु विज्ञान, विष विज्ञान, मुद्रा शास्त्र, खगोल विज्ञान, सृष्टि रहस्य, वृष्टि विज्ञान आदि का समावेश है। प्रत्यक्ष प्रमाण पर आधारित होने के कारण आधुनिक विज्ञान की खोज स्थूल जगत् से अणु के विघटन तक जाकर समाप्त हो जाती है, जबकि भारतीय तत्त्ववेत्ता परमाणु से भी पूर्व की अवस्थाओं से आगे बढ़ते हुए, अपने इंद्रियातीत ज्ञान के आधार पर सृष्टि के अव्यक्त स्वरूपों को उजागर करने में सफल हुए।

सृष्टि-रहस्य का हल ढूँढने की उत्सुकता में ऋषियों, दार्शनिकों और वैज्ञानिकों द्वारा किए गए इस तरह के प्रयासों से जिस विधा का विकास हुआ, उसी से ब्रह्माडिकी (खगोलशास्त्र), जिसे आधुनिक विज्ञान की भाषा में कॉस्मोलोजी कहा जाता है। आधुनिक वैज्ञानिक परीक्षणों व अंतरिक्ष अनुसंधानों द्वारा उद्घाटित तथ्यों के माध्यम से सृष्टि, उसके स्वरूप तथा विघटन (प्रकृति में लय हो जाने की प्रक्रिया का जहाँ एक स्थूल अनुमान मात्र ही लगाया जा सकता है, वहीं वेद तथा अन्य भारतीय शास्त्रों में वर्णित गूढ़ तथ्यों के सम्यक् अध्ययनों द्वारा इस इंद्रियातीत सत्य की झलक को सहजता से स्वयं ही अनुभूत किया जा सकता है।

बदलते सामाजिक- सांस्कृतिक- शैक्षिक परिदृश्य और सोशल मीडिया

किसी भी समाज को समझने के लिए अथवा किसी भी समाज की परिकल्पना को समझने के लिए आपको उस राष्ट्र की बनावट और बुनावट को समझना होगा। यही मेटा फिजिक्स/ तत्व मीमांसा हमें राष्ट्र की गहराई तक पहुंचाता है और यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि राष्ट्रीय उद्भावनाओं के पड़ाव क्या हैं, अर्थात् स्वाधीनता-स्वराज, राष्ट्रीय बोध का जुड़ाव क्या है। सांस्कृतिक परिदृश्य और राष्ट्र का बौद्धिक विकास क्या है, अर्थात् शिक्षा, शैक्षणिक विकास, व्यवस्था को एक राष्ट्र कैसे निरंतर अपनी संस्कृति से जुड़ाव को बनाए रखती है। अर्थात् सामाजिक परिदृश्य और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अर्थात् मीडिया, अखबार/ सोशल मीडिया इसे समझने के लिए आवश्यक है कि हम लोग आधुनिक भारत को

समझें। भारत को समझने के लिए इसकी जीवन पद्धति को समझना होगा और जीवन पद्धति को समझने के लिए प्राचीन भारत की जीवन पद्धति के साथ-साथ भविष्य की जीवन पद्धति का भी आकलन करना होगा। इसी आकलन में शिक्षा, संस्कृति, समाज, राष्ट्रीयता, राष्ट्रवाद, धर्म, जागरण, आस्था, अनास्था, परंपरा, त्यौहार सब समाहित हैं।

किसी भी राष्ट्र के लिए ये संभव नहीं है कि उसके समस्त नागरिकों की मानवीय चेतना एकरूप मानवीय चेतना से ओतप्रोत हो एक रंग में रंगे और एक तरह के दृष्टिकोण से सोचे। यही राष्ट्र के तत्व मीमांसा की मूल अवधारणा है। सोच की प्रक्रिया हमारी संस्कृतियों का निर्माण करती है। हमारी भाषाओं का संरक्षण करती है। हमारी साहित्यिक विकास यात्रा की साक्षी बनती है और हमें हमारे सनातन मानवीय मूल्यों से जोड़ कर रखती है। इन सब के पीछे शिक्षा है।

अब प्रश्न ये है कि शिक्षा क्या है शिक्षा की परिभाषा क्या है और शिक्षक कौन है...? शिक्षा सीखने की सुविधा, या ज्ञान, कौशल, मूल्यों, विश्वासों और आदतों के अधिग्रहण की प्रक्रिया है। शिक्षा ही वह प्रकल्प है जो मानव विकास का मूल साधन है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन और परिष्कार करना सीखता है जिससे एक सभ्य-सुसंस्कृत योग्य नागरिक का निर्माण हो सके। शिक्षा औपचारिक या अनौपचारिक दोनों रूप में हो सकती है। शैक्षिक क्या है ? कोई भी अनुभव जो किसी व्यक्ति , समाज या राष्ट्र को सोचने, महसूस करने या कार्य करने की विधि पर रचनात्मक प्रभाव डालता है, उसे शैक्षिक माना जा सकता है। शिक्षक कौन हैं? एक व्यक्ति जो छात्रों को ज्ञान योग्यता या गुण प्राप्त करने में मदद करता है तथा औपचारिक शिक्षा के संदर्भ में दूसरों को पढ़ाने के लिए जैसे विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय की मुख्य भूमिका में रहता है को हम शिक्षक कहते हैं। संक्षेप में कहें तो जो शिष्य के मन में सीखने की जिज्ञासा को जागृत करता है वह शिक्षक है। इसी योग्य नागरिक के निर्माण में समाज और संस्कृति की मूल अवधारणा छुपी हुई है जिसकी बात हम आगे करेंगे। यहाँ हमने यह जान लिया है कि शिक्षक कौन होता है।

भगवद्गीता में भगवान कृष्ण बताते हैं कि एक नायक / शिक्षक / नेता का चरित्र उसकी छवि से अधिक महत्त्वपूर्ण क्यों है।

यत् यत् आचरति श्रेष्ठ, तत् तत् एव इतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरुते, लोकः तत्अनुवर्तते ।। श्रीमद्भगवद्गीता-3/21

अर्थात् महापुरुष के कार्यों का दैनिक जीवन के सभी संदर्भ में सामान्य मनुष्य द्वारा अनुकरण किया जाता है। आम लोग उन्हीं मानकों का अनुसरण करते हैं जो उन्होंने अपने अनुकरणीय व्यवहार के माध्यम से निर्धारित किए हैं।

परिणामस्वरूप, समाज के प्रत्येक शिक्षक को ऊपर बताए गए तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए और उसके अनुसार कार्य करना चाहिए।

इसीलिए, एक शिक्षक को "आचार्य' कहा जाता है।

विवेकः सह संयुत्या विनयो विद्यया सह।

प्रभुत्वं प्रश्रयोपेतम्, चिह्न मेतत् महात्मनाम्॥

अर्थात् कुशल और विचारशील अभिव्यक्ति के साथ बुद्धि, विनम्रता के साथ शिक्षा, शिष्टाचार के साथ नेतृत्व - ये महान लोगों की विशेषताएं हैं जो जीवन में प्रशंसा और सफलता प्राप्त करते हैं।

शिक्षा से ही संस्कृति का संरक्षण होता है । वास्तव में मानव द्वारा अप्रभावित प्राकृतिक शक्तियों को छोड़कर जितनी भी मानवीय परिस्थितियाँ हमें चारों ओर से प्रभावित करती हैं, उन सभी की सम्पूर्णता को हम संस्कृति कहते हैं, और इस प्रकार संस्कृति के इस घेरे का नाम ही 'सांस्कृतिक पर्यावरण' है। दूसरे शब्दों में, संस्कृति एक व्यवस्था है, जिसमें हम जीवन के प्रतिमानों, व्यवहार के तरीकों, अनेकानेक भौतिक एवं अभौतिक प्रतीकों, परम्पराओं, विचारों, सामाजिक मूल्यों, मानवीय क्रियाओं और आविष्कारों को शामिल करते हैं। सर्वप्रथम वायु पुराण में 'धर्म', 'अर्थ', 'काम', तथा 'मोक्ष' विषयक मानवीय घटनाओं को 'संस्कृति' के अन्तर्गत समाहित किया गया।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि मानव जीवन के दिन-प्रतिदिन के आचार-विचार, जीवन शैली तथा कार्य-व्यवहार ही संस्कृति कहलाती है। मानव समाज के धार्मिक, दार्शनिक, कलात्मक, नीतिगत विषयक कार्य कलापों, परम्परागत प्रथाओं, खान-पान, संस्कार इत्यादि के समन्वय को संस्कृति कहा जाता है।

जैविक उत्पत्ति के विषय को स्पष्ट करते हुए ऋग्वेद में यह कहा गया है कि सूर्य उत्पादनकर्ता पिता है और पृथ्वी गर्भधारण की सामर्थ्य वाली माता है। इसी संदर्भ को और अधिक स्पष्ट करते हुए ऋग्वेद का मंत्र कहता है कि तीन तत्व यानी पृथ्वी, जल और वायु प्राणी को माता यानी पृथ्वी से प्राप्त होते हैं तथा अग्नि आकाश और प्राण नामक तीन तत्व उसे पिता यानी सूर्य से मिलते हैं। यही नहीं बल्कि जैमिनीय ब्राह्मण में उल्लेख है कि सूर्य रशमियाँ द्वारा आंतरिक्ष्य सोम के भेदन से जो छींटे पृथ्वी पर गिरे वही औषधियों के रूप में उग आए। मैत्रेयी संहिता में भी लगभग इसी प्रकार से व्याख्या की गई है कि लोमरहित पृथ्वी पर देवों अर्थात् प्राकृतिक शक्तियों ने रोहिणी के सहयोग से विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों को प्रत्यारोपित किया था। इस प्रकार वैदिक वांग्मय के उपयुक्त संदर्भों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि परमेष्ठी मंडल अर्थात् आकाशगंगा से निर्बाध रूप से स्रुत / निर्झरित अंतरिक्ष सोम की आर्द्रता में निविष्ट उर्वरा तत्वों से ही पृथ्वी पर वनस्पति और जीवन की उत्पत्ति हुई है।

मेरा यहां यह बताना सिर्फ उस चेतना की और आप को लेकर जाना है जिसे हम भारतीय ज्ञान संपदा कहते हैं। भारतीय ज्ञान संपदा के मूल को समझे बिना भारत की संस्कृति को समझना लगभग असंभव है। और यही भूल हम लोग अब तक करते आए हैं। पृथ्वी की अचेतन सृष्टि के रूप में अगर हम कल्पना करें तो न संस्कृति है न मनुष्य । लेकिन अगर पृथ्वी को एक चेतनसृष्टि के रूप में देखें तो आप पाएंगे कि पादप

से लेकर कीटसृष्टि, क्रीमीसृष्टि, पशुसृष्टि, पक्षीसृष्टि से होते हुए हम लोग मनुष्यसृष्टि की ओर बढ़ जाते हैं।

सृष्टि में मनुष्यसृष्टि का अगर अनंत काल से सर्वांगीण विकास कहीं देखने को मिलता है तो वह भारतवर्ष ही है। अब भारतवर्ष क्या है ? विष्णु पुराण में कहा गया है

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।

वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥

भारत को समझे बिना भारत की संस्कृति को नहीं समझा जा सकता और भारत की संस्कृति को समझने के लिए इसकी सनातन ज्ञान परंपरा को समझना अत्यंत आवश्यक है। वशिष्ठ स्मृति के अनुसार रंग-रूप, आकृति-प्रकृति, सभ्यता-शिष्टता, धर्म–कर्म, ज्ञान–विज्ञान, आचार–विचार एवं शील–स्वभाव में सर्वश्रेष्ठ मानव को ही भारतवंशी कहा गया है। संस्कृति को समझने के लिए भारतीय परंपराओं को समझना पड़ेगा और भारतीय परंपरा के अनुसार वेद शब्दब्रह्म है अर्थात् ब्रह्म का शब्दमय स्वरूप है । ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हमारी संस्कृति के चार स्तंभ हैं। यहां मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि जो लोग इसे धर्म समझते हैं, उन्हें धर्म से ऊपर अध्यात्म के दृष्टिकोण से इसे देखना होगा तभी वह वेद और वेदांग समझ सकेंगे ।

मित्रों, हमारे वेदों की आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक तीनों प्रकार से व्याख्या की जा सकती है इसके उपरांत ही वेदों में ज्ञान, कर्म और उपासना यह तीनों विषय हम समझ पाएंगे और इसी के आधार पर वेद को त्रयी विधा कहा जाता है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति–सभ्यता, विशाल बौद्धिक संपदा जीवन–दृष्टि, जीवन–शैली, मनसा–वाचा कर्मणा व्यवहार एवं सामाजिक-राजनीतिक-आध्यात्मिक व्यवस्था जो हजारों वर्षों से निरंतर जीवंत तथा प्रगतिशील बनी हुई है, का स्रोत हमारी सनातन ज्ञान परंपरा में ही निहित है। यही हमारी वैश्विक दृष्टि है, और इसी दृष्टि में वैश्विक दर्शन, वैश्विक सत्य और तात्विक अभिव्यक्ति तथा एकत्व के स्वरूप का ज्ञान छिपा है । यही हमारी संस्कृति है। यही हमारी उपलब्धि है। हम सार्वभौमिक समरसता की बात करते हैं। हम समावेशी संतुलन की बात करते हैं और हम संस्कार के साथ मनुष्य को मूल्य बोध से अवगत कराने की बात करते हैं। वर्तमान में जहां सभी वस्तुओं के और सभी व्यक्तियों के मूल्य के अनुरूप उनकी गरिमा का निर्धारण किया जाता है वहीं हम भारतीय सनातन काल से ही स्वयं के मूल्यबोध के साथ मनुष्य की निर्मिती की व्यवस्था के उद्घोषक रहे हैं।

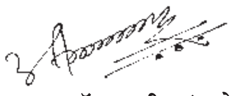

–डॉ. आशीष कंधवे

+91–9811184393

जी 20 की अध्यक्षता: भारत के लिए एक स्वर्णिम अवसर

–डॉ. बिपिन कुमार ठाकुर

जी 20 की अध्यक्षता निश्चय ही भारत के लिए गौरव का विषय एवं एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। अगले एक साल तक भारत लगभग 200 महत्त्वपूर्ण बैठकें आयोजित करेगा जिसका समापन 2023 में जी 20 शिखर वार्ता के साथ होगा।

"जी20 समूह विश्व के कुछ महत्त्वपूर्ण मंचों एवं संगठनों में से एक है तथा इसकी अध्यक्षता करना भारत के लिए निश्चिय ही एक गौरव की बात है। भारत के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर है कि वह विश्व मंच पर अपनी प्रगाढ़ विविधता; लोकतांत्रिक व्यवस्था; चिर- परिचित तटस्थता; मजबूत सांस्कृतिक धरोहर को जगत्-कल्याण हेतु निरूपित एवम् उपयोग कर सके।"

जी 20 समूह विश्व के कुछ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण मंचों एवं संगठनों में से एक है जिसका गठन वर्ष 1990 के दशक के अंत में किया गया था। इसका प्रमुख उद्देश्य तत्कालीन वित्तीय संकट का सामना करना तथा मध्यम आय वाले देशों को इसमें शामिल करके वैश्विक वित्तीय स्थिरता को सुरक्षित तथा सवंर्द्धित करना है। नवंबर, 2022 में संपन्न 17वें जी 20 राष्ट्राध्यक्षों और शासनाध्यक्षों के शिखर सम्मेलन, जिसका आयोजन इंडोनेशिया के बाली में हुआ था में आगामी एक वर्ष (2022-2023) की अवधि के लिए भारत को इसकी अध्यक्षता प्रदान की गयी। अब भारत वर्ष 2023 के सितंबर मास में, जी 20 समूह के शीर्ष नेतृत्व के शिखर सम्मेलन की मेजबानी करेगा। यह भारत के लिए अत्यंत गौरव का विषय है। साथ ही यह एक स्वर्णिम अवसर भी है जिसके माध्यम से भारत विश्व मंच पर अपनी अग्रणी भूमिका निभा सकता है क्योंकि भारत अपनी विविधता, लोकतांत्रिक व्यवस्था, तटस्थता तथा जगत-कल्याण हेतु प्रतिबद्धता एवं मजबूत सांस्कृतिक धरोहर हेतु विश्व विख्यात है। वर्तमान में जबकि विश्व में कुछ देश अपनी वित्तीय स्थिति के कारण परेशान हैं, कुछ आपसी युद्ध एवं विवादों के कारण परेशान हैं। भारत पर विश्व का ध्यान केंद्रित है ताकि संप्रति ज्वलंत समस्याओं का आम सहमति से एक समावेशी एवं दीर्घकालिक हल प्राप्त हो सके।

जी 20 का उद्भव, विकास, प्रमुख उद्देश्य एवं कार्य पद्धति

जैसा कि इस आलेख के शुरू में ही यह उल्लेख किया गया है, जी 20 की स्थापना 1990 के दशक के अंत में तत्कालीन वित्तीय संकट एवं अस्थिरता को दूर करने के लिए की गयी थी। यह विश्व के प्रमुख विकसित तथा तीव्र गति से उभरती हुई अर्थव्यवस्था वाले देशों का एक समूह है। अंतरराष्ट्रीय संघों में इसका एक प्रमुख स्थान है। इसके सदस्यों में अर्जेंटीना, ऑस्ट्रेलिया, ब्राजील, कनाडा, चीन, यूरोपियन संघ फ्रांस, जर्मनी, भारत, इंडोनेशिया, इटली, जापान, मेक्सिको, रूस, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रिका दक्षिण कोरिया, तुर्की, युनाइटेड किंग्डम, तथा संयुक्त राज्य अमेरिका शामिल हैं। एक आँकड़े के अनुसार जी 20 देशों में दुनिया की लगभग 60 प्रतिशत आबादी, वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद का 80 प्रतिशत तथा कुल वैश्विक व्यापार का 75 प्रतिशत शामिल है।[1]

जी 20 समूह के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं:

अ) समावेशी, सतत् विकास तथा विश्व स्तर पर आर्थिक स्थिरता प्राप्ति हेतु सदस्य देशों के साथ नीति-निर्धारण, नीति-समन्वयन, नीति कार्यान्वयन तथा नीति-अनुपालन;

ब) विश्वस्तर पर वित्तीय संकट का सामना करने हेतु उचित वित्तीय एवं आर्थिक विनियमन तथा उन्हें बढ़ावा देना;

स) विश्व स्तर पर उचित एवं नई आर्थिक संरचना खड़ी करना आदि।

दिसंबर 1999 में पहली बार जर्मनी के बर्लिन शहर में विश्व के कुछ विकसित तथा तीव्र गति से विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के कुछ चुनिंदा देशों के वित्त मंत्रियों एवं केन्द्रीय बैंकों के गर्वनरों की बैठक में अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय स्थिरता विषय पर बैठक हुई थी। कालांतर में यह बैठक हर साल होने लगी। भारत में यह बैठक 2002 में संपन्न हुई थी। 2008 में जी 20 बैठक को शिखर सम्मेलन के रूप में मान्यता मिल गयी ताकि तत्कालीन वैश्विक वित्तीय एवं आर्थिक संकट पर विस्तार से चर्चा हो सके तथा भविष्य के लिए आम सहमति बन पाए।

यह गौरतलब है कि जी 20 का कोई स्थायी सचिवालय नहीं है। एजेंडा और कार्य का कार्यान्वयन एवं समन्वयन सदस्य देशों के प्रतिनिधियों द्वारा किया जाता है:जिन्हे शेरपा के रूप में जाना जाता है– सदस्य देशों के वित्त मंत्रियों एवं केन्द्रीय बैंकों के गर्वनरों के साथ मिलकर अपनी भूमिका निभाते हैं। जी 20 की अध्यक्षता प्रत्येक वर्ष सदस्यों के बीच चक्रीय रूप से प्रदान की जाती है और अध्यक्ष पद धारण करने वाला देश पिछले और अगले अध्यक्षता धारक के साथ मिलकर जी 20 एजेंडा की निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए "ट्रोइका" का निर्माण करता है। 2023 के लिए भारत जी 20 का अध्यक्ष है, 2024 में इसकी अध्यक्षता ब्राजील तथा 2025 में यह क्रमशः दक्षिण अफ्रिका के पास होगी। वर्तमान में इंडोनेशिया, भारत एवं ब्राजील जी 20 के "ट्रोइका" देश हैं।

प्रमुख जी 20 शिखर सम्मेलन :

कुल मिलाकर अभी तक 17, जी 20 शिखर सम्मेलन हो चुके हैं। 2022 में नवंबर मास में बाली में

इसका आयोजन हुआ था तथा 2023 के सितम्बर में यह भारत में होगा। जी 20 का पहला शिखर सम्मेलन 2008 में वाशिंगटन डी. सी. में आयोजित किया गया था जिसमें प्रमुख रूप से अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था को मजबूत करने, अन्तरराष्ट्रीय विकास दर को मजबूत करने इत्यादि पर बल दिया गया था। दूसरा जी 20 शिखर सम्मेलन अप्रैल 2009 में लंदन में; तीसरा शिखर सम्मेलन सितंबर 2009 में पिट्सबर्ग में; चौथा जून 2010 में टोरंटो में; पाँचवाँ नवंबर 2010 में सियोल में; छठा जी 20 शिखर सम्मेलन 2011 में केन्स में तथा सातवाँ सम्मेलन जून 2012 में मेक्सिको में आयोजित किया गया था। आठवाँ शिखर सम्मेलन 2013 में रूस में; नौवाँ 2014 में ऑस्ट्रेलिया में; दसवां 2015 में तुर्की में; ग्यारहवाँ 2016 में चीन में; बारहवाँ 2017 में जर्मनी में; तेरहवाँ 2018 में अर्जेंटीना में; चौदहवाँ 2019 में जापान में; पंद्रहवाँ 2020 में सऊदी अरब में; सोलहवाँ जी 20 सम्मेलन 2021 में रोम में आयोजित किया गया। देखा जाय तो इन सारे शिखर सम्मेलनों के प्रारंभिक दौर में विश्वस्तर पर आर्थिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने का प्रयास किया गया। हाल के जी 20 शिखर सम्मेलनों का दायरा विश्व वित्तीय व्यवस्था के अलावा विश्व व्यापार; जलवायु परिवर्तन; वैश्विक उर्जा विकल्पों की तलाश तथा विश्व स्तर पर भ्रष्टाचार मुक्ति के प्रयासों की खोज करना शामिल है।

भारत के लिए एक सुनहरा अवसर

दिसंबर 1, 2022 को भारत को जी 20 की अध्यक्षता हासिल हुई। भारत पहली बार जी 20 शिखर सम्मेलन 2023 में आयोजित करेगा। इसका थीम वाक्य "वसुधैव कुटुम्बकम्" अर्थात् एक पृथ्वी, एक कुटुंब, एक भविष्य रखा गया है। इस संदेश को महा उपनिषद् से लिया गया है जिसका मूल अर्थ हमारी पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव-जन्तु, पेड़-पौधे तथा सूक्ष्म जीवों का महत्व समझना एवं उनके बीच स्थित तारतम्य को स्थापित करना है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के अनुसार, "अब जबकि भारत ने इस महत्त्वपूर्ण पद को ग्रहण किया है, मैं अपने आप से यह पूछता हूँ— क्या जी 20 अभी भी और आगे बढ़ सकता है? क्या हम समग्र मानवता के कल्याण के लिए मानसिकता में मूलभूत बदलाव लाने की पहल कर सकते हैं? मेरा विश्वास है कि हाँ, हम ऐसा कर सकते हैं। [2] आगे वह बताते हैं, "भारत में प्रचलित ऐसी एक परंपरा है जो सभी जीवित प्राणियों और यहाँ तक कि निर्जीव चीजों को भी पाँच मूल तत्वों पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के पंचतत्व से बना हुआ मानती है। इन तत्वों का सामंजस्य हमारे भीतर और हमारे बीच भी हमारे भौतिक, सामाजिक और पर्यावरणीय कल्याण के लिए आवश्यक है।"[3]

जी 20 की अध्यक्षता निश्चय ही भारत के लिए गौरव का विषय एवं एक ऐतिहासिक उपलब्धि है। अगले एक साल तक भारत लगभग 200 महत्त्वपूर्ण बैठकें आयोजित करेगा जिसका समापन 2023 में जी 20 शिखर वार्ता के साथ होगा। बतौर अध्यक्ष, भारत बांग्लादेश, मॉरीशस, नींदरलैंड, नाइजीरिया, ओमान, सिंगापुर, स्पेन और संयुक्त अरब अमीरात को अतिथि देशों के रूप में आमंत्रित करेगा। अध्यक्षता के दौरान भारत, इंडोनेशिया और ब्राजील "ट्रोइका" का गठन करेंगे। यह गौरतलब होगा कि "ट्रोइका" में तीन विकासशील एवं उभरती हुई अर्थव्यवस्थाएँ शामिल होंगी। शायद यह पहली बार ऐसा होगा। "ट्रोइका" जी 20 के भीतर शीर्ष समूह को संदर्भित करता है जिसमें वर्तमान, पिछले और आगामी अध्यक्ष वाले देश

शामिल होते हैं।

जी 20 अध्यक्ष के रूप में यदि हम भारत की प्राथमिकताओं की बात करें तो इनमें शामिल होने वाले विषयों में समावेशी न्याय संगत और सतत् विकास; पर्यावरण और जीवन-शैली के बीच संतुलन; महिला सशक्तिकरण; स्वास्थ्य, कृषि और शिक्षा से लेकर वाणिज्य आदि क्षेत्रों में सार्वजनिक डिजिटल संरचनाओं एवं तकनीकी सक्षमता का विकास आदि का शामिल होना तय है।

इसके अलावा कुछ अन्य जटिल विषयों को शामिल करने पर भी भारत का ध्यान होगा जैसे - जलवायु परिवर्तन अैर जलवायु वित्तपोषण; वैश्विक खाद्य सुरक्षा; आपदा जोखिम में कमी तथा अनूकूलन; संस्कृति और पर्यटन का विकास आदि। साथ ही भारत यह भी प्रयास करेगा कि विकासात्मक सहयोग; आर्थिक अपराध के विरूद्ध लड़ाई और बहुपक्षीय सुधार संबंधित विषयों पर भी विश्व स्तर पर एक आम सहमति बन पाए।

अध्यक्ष के रूप में भारत के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ

यह सर्व विदित है कि दुनिया के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण अर्थव्यवस्था वाले देश जी 20 समूह के सदस्य हैं। इसमें संयुक्त राष्ट्र संघ सुरक्षा परिषद के सभी स्थायी सदस्य देश; जी 7 के सभी सदस्य देश तथा ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, भारत तथा चीन) के सभी सदस्य देश शामिल हैं। जी 20 की अध्यक्षता यदि भारत के लिए अंतरराष्ट्रीय पटल पर एक स्वर्णिम अवसर है तो यह भी कहना गलत नहीं होगा कि भारत के सामने इस संबंध में अनेकानेक चुनौतियाँ भी हैं।

सर्वप्रथम चुनौती यह है कि जी 20 संगठन के अगले शिखर सम्मेलन के लिए एक ऐसा एजेंडा बनाया जाए तो सभी सदस्य देशों को मान्य हो। एजेंडे में ऐसे विषयों को शामिल किया जाय जो सदस्य देशों के हितों को प्रभावित करते हों। यह सच है कि जी 20 संगठन का प्राथमिक कार्य विश्व स्तर पर वित्तीय व्यवस्था को सुचारू एवं अबाध गति से संचालित करने में सहयोग करना है परंतु अब समय आ गया है कि इसमें सदस्य देशों से संबंधित "भू-राजनीतिक संघर्ष संबंधित मुद्दों" को भी शामिल किया जाए।

दूसरी चुनौती यह है कि उन सदस्य देशों को जिनके बीच आपसी द्विपक्षीय मुद्दों पर विवाद एवं विरोधाभास हैं, उनको कैसे साथ लाकर विश्व-कल्याण के मुद्दों पर आम सहमति बनाया जाए। उदाहरण स्वरूप किस प्रकार अमेरिका तथा चीन; भारत तथा चीन; रूस तथा पश्चिमी देशों को एक साथ लाया जाए। भारत को बहुत ही संवेदनशील होकर एक ऐसा एजेंडा बनाना होगा जिसमें सदस्य देशों के आपसी रिश्तों को ध्यान में रखते हुए विश्व कल्याण का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।

तीसरी चुनौती यह है कि किस प्रकार सदस्य देशों को जलवायु परिवर्तन; जलवायु वित्त पोषण तथा विश्व आतंकवाद की समस्या संबंधित मुद्दों पर एक साथ लाया जाए। विकास एवं विकासशील देशों के बीच तकनीकी साझेदारी को किस प्रकार बढ़ाया जाए ताकि जलवायु परिवर्तन संबंधित निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

चौथी चुनौती, भारत के लिए यह है कि किस प्रकार रूस-युक्रेन युद्ध को समाप्त करते हुए रूस-युक्रेन तथा रूस एवं पश्चिमी देशों के बीच के संबंधों को ठीक किया जाए। रूस-युक्रेन युद्ध का विश्व वित्तीय व्यवस्था पर हो रहे ऋणात्मक प्रभावों को कम करने की आवश्यकता है। जी 20 की अध्यक्षता निश्चिय ही भारत को रूस-युक्रेन युद्ध के शांतिपूर्ण अंत के लिए मध्यस्थता करने का एक नया अवसर प्रदान कर सकती है। भारत को जी 20 शिखर सम्मेलन को सफल बनाने के लिए भू-राजनीतिक संघर्षों के बीच तेजी से बदलती वैश्विक आर्थिक व्यवस्था को दुरूस्त करना होगा।

निष्कर्ष

जी 20 समूह विश्व के कुछ महत्त्वपूर्ण मंचों एवं संगठनों में से एक है तथा इसकी अध्यक्षता करना भारत के लिए निश्चिय ही एक गौरव की बात है। भारत के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर है कि वह विश्व मंच पर अपनी प्रगाढ़ विविधता; लोकतांत्रिक व्यवस्था; चिर परिचित तटस्थता; मजबूत सांस्कृतिक धरोहर को जगत् कल्याण हेतु निरूपित एवम् उपयोग कर सके। साथ ही भारत के पास एक मजबूत लोक–तांत्रिक नेतृत्व - श्री नरेन्द्र मोदी के रूप में है जिनके कुशल मार्ग-दर्शन में निश्चय ही जी 20 समूह नवीन उँचाइयों को हासिल करेगा तथा विश्व कल्याण हेतु नए आदर्शों की स्थापना, संकल्पना एवं अनुपालन करेगा। हमें अवश्य ही वर्ष 2023 के प्रति आशांवित एवं उन्मुख होना चाहिए और यह उम्मीद करनी चाहिए कि भारत इस संबंध में चुनौतियों के बावजूद अपनी भूमिका बखूबी निभाएगा।

❑❑❑

संदर्भ सूची:

1. Government of India, Ministry of External Affairs, “Group of Twenty-G20”. Available at https://mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/G20_Brief_for_website-_27.10_1.pdf
2. https://www.narendramodi.in/hi/today-india-commences-its-g20-presidency--566168.
3. वही
4. https://www.g20.org/en/

---

1. पूर्व कुल सचिव, राष्ट्रीय संग्रहालय संस्थान, जनपथ, नयी दिल्ली एवं वर्तमान में एशोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, श्री गुरु तेग बहादुर खालसा महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007; E-mail: bkthakur1510@gmail.com.

भगवान चित्रगुप्त

–उर्मिला शर्मा
–कविता नाहरवाल

कुछ कर्मों का फल तत्काल ही मिलता है तथा कुछ कर्मों का फल लम्बे समय तक मिलता रहता है। इसे हम ऐसे भी समझ सकते हैं कि यदि आपने किसी भूखे को रोटी खिलाकर पुण्य कर्म किया। यह कर्म करते ही आपको खुशी मिली, आनन्द की प्राप्ति हुई।

हमारे भारतीय समाज में यह मान्यता है कि हमारे द्वारा इस पृथ्वी पर जो भी कर्म किये जा रहे हैं उनका फल हमें अवश्य भोगना पड़ेगा। भगवान के घर देर है अँधेर नहीं। मृत्यु के पश्चात जीवात्मा यमलोक जाती है। वहाँ उसकी चित्रगुप्त के समक्ष पेशी होती है। भगवान चित्रगुप्त अपने बही-खाते खोलते हैं तथा उसके कर्मों का पूरा विवरण देखते हैं। पाप-पुण्य जो भी उसने किये हैं उसका सही-सही हिसाब लगाकर, स्वर्ग-नरक का निर्धारण करते हैं। एक रत्ती भर भी ऊपर नीचे नहीं होने देते और यमराज को स्वर्ग या नरक जिसके भी हम हिस्सेदार हैं, कार्यान्वित करने का निर्देश देते हैं। डॉ रामकृष्ण शर्मा ने अपने महाकाव्य भगवान चित्रगुप्त में यह स्पष्ट उल्लेख किया है-

”पूरा विवरण जीव मात्र का, अविकल रहे आपके पास।
रविनन्दन निर्देश ग्रहण कर, स्वर्ग-नरक का देंगे वास।।“(1)

यमराज और धर्मराज एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं। जब जीव को दण्ड दिया जाता है तब वे यमराज की प्रस्थिति धारण कर लेते हैं और जब जीव को पुरस्कृत किया जाता है तब वे धर्मराज की भूमिका का निर्वाह करते हैं-

”रहें रूप दो सदा आपके, जब दें दण्ड बनें यमराज।
दें आनन्द स्वर्ग का जन को, पद होगा तब धर्मराज।।“(2)

जो भी दण्ड या पुरस्कार देना है उसका निर्धारण भगवान चित्रगुप्त ही करते हैं। भगवान चित्रगुप्त सृष्टि के प्रथम न्यायाधीश हैं। वे न्याय के देवता हैं। पुराणों में आदिदेव ब्रह्मा जी को चित्रगुप्त के पिता तथा नारद जी को उनका ज्येष्ठ भ्राता बताया गया है। इस सृष्टि के प्राणियों को मृत्यु के पश्चात अपने-अपने कर्मों के अनुसार पहले तो परलोक में जाकर कुछ समय बिताना होता है। वहाँ वे पिछले जन्म में किये गये पुण्य-कर्मों अथवा पाप-कर्मों का फल भोगते हैं। फिर जब उनके पुण्यों व पापों के अनुसार सुख या दुःख को भोगने का हिसाब पूरा हो जाता है तब वे इस मृत्युलोक में फिर से जन्म लेते हैं।

इस मृत्युलोक को कर्मलोक भी कहा जाता है क्योंकि इसी लोक में प्राणी को वे कर्म करने का अधिकार है जिससे उसकी प्रारब्ध बनती है। भगवान चित्रगुप्त को प्राणियों का लेखा-जोखा रखने के लिए लेखन कला की आवश्यकता हुई। तब उनके द्वारा सर्वप्रथम ब्रह्मलिपि का आविष्कार हुआ। ब्रह्मलिपि ही इस सृष्टि की प्रथम लिपि है-

"गोपनीय लेखा-जोखा हो, विकसित करनी लेख कला।

लिपि का भी निर्माण जरूरी।

जिससे होगा कार्य भला।।

ब्रह्मलिपि की बनी योजना, ब्रह्मा जी से ले निर्देश।

मृत्यु और सब यमदूतों को, उसे सीखने का आदेश।।"(3)

भगवान चित्रगुप्त की उत्पत्ति ब्रह्मा जी की काया से हुई मानी जाती है इसलिए इनको कायस्थ कहा गया-

"मम् कायात्समुत्पन्न, स्थितो कायेऽभवन्तत।

कायस्थ इति तस्याथ, नाम चक्रे पितामहा।।"(4)

हिन्दू मान्यताओं के अनुसार परमपिता ब्रह्मा जी के पहले 13 पुत्र ऋषि हुए और 14 वें पुत्र श्री चित्रगुप्त जी देव हुए अर्थात् ब्राह्मण ऋषि पुत्र हैं और कायस्थ देव पुत्र। आदिदेव ब्रह्मा जी ने ही चित्रगुप्त जी के दो विवाह कराये थे। ऐसा उल्लेख ब्रह्म पुराण में मिलता है। इनकी बड़ी पत्नी शोभावती और छोटी पत्नी नन्दिनी थी। कहीं-कहीं इनके नाम इरावती एवं दक्षिणा भी मिलते हैं। शोभावती के आठ पुत्र एवं नन्दिनी के चार पुत्र हुए। ऐसी मान्यता है कि चित्रगुप्त के इन बारह पुत्रों से ही कायस्थों के बारह प्रमुख गोत्रों का निर्धारण हुआ है-

"चित्रगुप्त के द्वादश बेटे, सभी पढे थे गुरुकुल में।

यही मूल आधार गोत्र का, पढे किसी भी संकुल में।।"(5)

जब किसी की मृत्यु होती है तो असल में बाहर का स्थूल शरीर मरता है। इस स्थूल शरीर के अन्दर एक सूक्ष्म शरीर है वह नहीं मरता वह सूक्ष्म शरीर ही जीवात्मा कहलाता है। जीवात्मा के साथ उसका पाप-पुण्य भी जाता है। अच्छे कर्म किये हुए मनुष्य की जीवात्मा स्वर्ग में रहकर अपने पुण्य भोगती है और पापी मनुष्य की जीवात्मा नरक में रहकर अपने पाप भोगती है। केवल मनुष्य की योनि ही कर्म योनि है। केवल मनुष्य की योनि में ही किये गये कर्मों का फल भोगना पड़ता है। कर्मों का हिसाब पशु योनि में नहीं चुकाना पड़ता केवल मनुष्यों को ही चुकाना पड़ता है क्योंकि इस लोक पर केवल मनुष्य ही विवेकशील प्राणी है उसे ही अच्छे बुरे की पहचान होती है। केवल इसी धरती पर प्राणी जन्म और मृत्यु की पीड़ा सहते हैं इसलिए इसी धरती को मृत्युलोक भी कहते है। कई बार प्राणी स्वर्ग-नरक का सुख-दुःख पृथ्वी पर ही भोग लेते हैं। इस बात को इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि कोई सम्पन्न मनुष्य महल में रहता है उसकी सेवा के

लिए दास-दासियाँ हर समय खड़े रहते हैं। उसके पास सभी सुख विद्यमान हैं परन्तु एक दिन उसका जवान बेटा किसी दुर्घटना में मारा जाता है। दुखों का पहाड़ उस पर टूट पड़ता है। संसार की हर वस्तु उस के पास होने के बावजूद भी वह दुखी रहता है और मरते दम तक अपने पुत्र की मृत्यु की पीड़ा से विमुक्त नहीं हो पाता तो पुत्र के जवान होने तक उस मनुष्य में जो कर्म भोगे हैं वह स्वर्ग के सुखों की भाँति थे और पुत्र की मृत्यु के बाद उसने जो दुख भोगे है वह नरक के दुखों से भी बढ़कर थे। इस प्रकार मनुष्य इस संसार में रहकर भी अपने कर्मों का फल भोग लेता है।

कुछ कर्मों का फल तत्काल ही मिलता है तथा कुछ कर्मों का फल लम्बे समय तक मिलता रहता है। इसे हम ऐसे भी समझ सकते हैं कि यदि आपने किसी भूखे को रोटी खिलाकर पुण्य कर्म किया। यह कर्म करते ही आपको खुशी मिली, आनन्द की प्राप्ति हुई। यह खुशी और आनन्द ही अच्छा फल है और यदि आपने किसी की वस्तु चुरा ली तो आपके मन मे यह चिंता हो जायेगी कि कहीं कोई देख न ले, कहीं किसी को पता न चल जाए यह चिन्ता ही बुरा फल है। इस तरह कुछ कर्मों का फल तुरन्त ही मिल जाता है। अच्छे और बुरे कर्मों का फल तात्कालिक फल भी मिलता है और पारम्परिक फल भी मिलता है। पुण्य का तात्कालिक फल है संतुष्टि और पारम्परिक फल है सुख-समृद्धि। पाप का तात्कालिक फल है संताप और पारम्परिक फल है दुःख-दारिद्रय। अत्यधिक श्रेयस्कर होगा यदि मनुष्य अपने हृदय में चित्रगुप्त जी को अवस्थित कर ले। मनुष्य अपने कर्म-पथ पर आगे बढ़ने से पहले ही अपने मन में यह विचार कर ले कि अमुक कर्म सही है और अमुक कर्म गलत है। इससे मनुष्य श्रेष्ठ कर्म ही करेगा व पृथ्वी से पाप कर्मों का हरण हो सकेगा। मनुष्य फल की इच्छा त्यागकर कर्म को अपना धर्म समझकर कर्म करे तो उसका फल उसे अवश्य मिलेगा परन्तु इस फल को वो विधान की इच्छा समझकर स्वीकार करे। मनुष्य को कर्म फल में आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। मनुष्य केवल कर्म कर सकता है फल कदापि मनुष्य के हाथ में नहीं होता। फल तो प्रारब्ध के हाथ में होता है। मनुष्य कर्म करता है क्योंकि मनुष्य का धर्म है कर्तव्य का पालन करना । गीता में श्री कृष्ण जी ने सत्य ही कहा है-

”कर्मण्येवाधिकारस्तु मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।“

संदर्भ-

1. भगवान चित्रगुप्त महाकाव्य-डॉ रामकृष्ण शर्मा पृष्ठ सं0 16
2. भगवान चित्रगुप्त महाकाव्य-डॉ रामकृष्ण शर्मा पृष्ठ सं0 14
3. भगवान चित्रगुप्त महाकाव्य-डॉ रामकृष्ण शर्मा पृष्ठ सं0 82
4. भगवान चित्रगुप्त महाकाव्य-डॉ रामकृष्ण शर्मा पृष्ठ सं0 02
5. भगवान चित्रगुप्त महाकाव्य-डॉ रामकृष्ण शर्मा पृष्ठ सं0 136

❑❑❑

1. सह-आचार्य (हिन्दी) महारानी श्री जया कॉलेज, भरतपुर

2. महाराजा सूरजमल बृज विश्वविद्यालय, भरतपुर Email: jiyababy20@gmail.com Mob.No. : 9664432968

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं का संरक्षण: एक अध्ययन

–डॉ. दीपांकुर जोशी
–डॉ. शालिनी चौधरी

भारत की जनसांख्यिकी को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न चिंताओं को दूर करने में सक्षम होने के लिए एक बहु-आयामी नीति तैयार करना आवश्यक है। महिला आयोगों के विशेषज्ञों को राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तर की नीतियों और दिशा-निर्देशों के निर्माण में शामिल किया जाना चाहिए, ताकि सभी स्तरों पर कार्य योजना तैयार करते समय महिलाओं, बच्चों और अन्य कमजोर समूहों से संबंधित मुद्दों को ध्यान में रखा जा सके।

'Women are the only exploited group in history to have idealized in powerlessness' -Erica Jong

प्रस्तावना:

समाज में महिला और पुरुष दोनों ही महत्त्वपूर्ण एवं सक्रिय योगदान देते है। दोनों में से किसी एक के योगदान के बिना सामाजिक चक्र चरमरा जाता है। परिवार इस सामाजिक संरचना की सबसे महत्त्वपूर्ण इकाई है और महिला तथा पुरुष मिलकर परिवार का निर्माण करते हैं। सामाजिक परिवर्तन के साथ महिला और पुरुष की पारिवारिक स्थिति में भी परिवर्तन होते गये। परिवार में पुरुष का कार्यदायित्व परिवार चलाने के लिए धनार्जन और परिश्रम कर संसाधनों को जुटाना था और महिला का कार्यदायित्व गृह कार्यों को संपन्न करने के साथ-साथ संतान व आश्रित व्यक्तियों का पालन पोषण करना था अथार्त इस व्यवस्था के द्वारा एक प्रकार से कार्य-विभाजन द्वारा पारिवारिक व्यवस्था को चलाये रखना था। परिवार की इस व्यवस्था में पुरुष की मानसिकता सदैव श्रेष्ठ समझे जाने की रही है। पुरुष को लगता है कि जीविकापार्जन के लिए जो कार्य वह कर रहा है, वह कार्य ज्यादा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसमें अधिक श्रम की आवश्यकता होती है और महिला द्वारा किए जा रहे घरेलु या गृह कार्य महत्त्वपूर्ण नहीं है क्योकि इसमें कम श्रम की आवश्यकता होती है। इस तरह की सोच समाज में आमतौर से विद्यमान रही है और महिलाऐं भी कहीं ना कहीं इस सोच को पुष्ट करती रहीं है। जबकि हम यह भूल गए हैं कि गृह कार्यों में श्रम के साथ कुशलता व विवेकशीलता की भी आवश्यकता होती है तभी परिवार एक इकाई के रूप में कार्य कर पाता है। यदि समाजशास्त्रियों के दृष्टिकोण से देखे तो शक्तिशाली व्यक्ति प्रकृति के सृजनकाल से ही कमजोर को दबाने का प्रयास करता दिखा है। जब श्रेष्ठ होने की सोच बलवती हो और द्वितीय पक्ष कमजोर हो तभी इस सोच का विकास होता है और इसका अगला पड़ाव हिंसा है। जहाँ बलवान कमजोर पर बल का प्रयोग करने से भी बाज नहीं आता है और यह घरेलु हिंसा का स्वरूप ले लेता है।

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा का वैश्विक आयाम चिंताजनक है। कोई भी देश या समाज ऐसी हिंसा से मुक्त होने का दावा नहीं कर सकता,

एकमात्र भिन्नता, स्वरूप या प्रकृति में हो सकती है। महिलाओं का विनिदिष्ट समूह अधिक पीड़ित है जिससे अल्पसंख्यक समूह, अप्रवासी महिलाएं, शरणार्थी महिलाएं और सशक्त संघर्ष की स्थिति में रहने वाली महिलाएं, संस्थानों और निषेध में रहने वाली महिलाएं, निर्योग्य महिलाएं, लड़कियां और वृद्ध महिलाएं शामिल है।

भारत सरकार और यूनिसेफ द्वारा संयुक्त रूप से जारी राष्ट्रों की प्रगति पर यूनिसेफ की रिपोर्ट में कहा गया है कि लिंग आधारित भेदभाव के कारण कन्या भ्रूण हत्या से लेकर घरेलु हिंसा तक दहेज हत्या से लेकर शारीरिक हमले तक वे जिम्मेदार कारक हैं जो महिलाओं/बेटियों के पैदा होने से पहले ही ऐसा भेदभाव शुरू हो जाता है और यह मरते दम तक चलता रहता है।

घरेलु हिंसा से महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से घरेलु हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 भारत के राजपत्र में 14-09-2005 को अधिसूचित किया गया।

यह अधिनियम घरेलु हिंसा के सभी रूपों से महिलाओं का संरक्षण करने के लिये व्यापक विधायन है। यह अधिनियम किसी भी प्रकार की हिंसा, भौतिक, यौन, मानसिक, शाब्दिक या भावनात्मक को समाहित करता है। यह अधिनियम 26-10-2006 को प्रवर्तित किया गया। अधिनियम में 5 अध्याय और 37 धारायें हैं।

अधिनियम की धारा-3 घरेलु हिंसा को परिभाषित करती है। इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए प्रत्यर्थी का कोई कार्य स्रोत या किसी कार्य का करना या आचरण, घरेलु हिंसा गठित करेगा यदि वहः

(क) व्यथित व्यक्ति के स्वास्थ्य, सुरक्षा, जीवन, अंग की चाहे उसकी मानसिक या शारिरिक भलाई को अपहानि करता है, या उसे कोई क्षति पहुंचाता है या उसे संकटापन्न् करता है या उसकी ऐसा करने की प्रवृत्ति है और और जिसके अंतर्गत शारिरिक दुरूपयोग और अधिक दुरूपयोग कारित करना भी है।

(ख) किसी दहेज या अन्य संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के लिए किसी विधि विरुद्ध मांग की आपूर्ति के लिये उसे या उससे संबन्धित किसी अन्य व्यक्ति को प्रदर्शित करने की दृष्टि से व्यथित व्यक्ति का उत्पीड़न करता है या उसकी अपहानि कारित करता है या उसे क्षति पहुंचाता है या संकटापन्न करता है।

(ग) खण्ड (क) या खण्ड (ख) में वर्णित किसी आचरण द्वारा व्यथित व्यक्ति या उससे सम्बन्धित किसी व्यक्ति पर धमकी का प्रभाव रखता है या

(घ) व्यथित व्यक्ति को, अन्यथा क्षति पहुंचाता है या उत्पीड़ित करता है चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक।

धारा 3 के प्रयोजन के लिए

1. शारीरिक दुरुपयोग- शारीरिक दुरुपयोग से कोई भी कृत्य या आचरण जो कि व्यथित व्यक्ति के जीवन, अंग या स्वास्थ्य को शारीरिक दर्द कारित करता है या नुकसान करता है इसमें शामिल है। जैसे- हमला करना या आपराधिक अभित्रास करना और आपराधिक बल प्रयोग करना अभिप्रेत है।
2. यौन दुरूपयोग- यौन दुरुपायोग में सम्मिलित है यौन प्रकृति का कोई भी आचरण जो महिला की गरिमा का दुरूपयोग करता है, उसे अपमानित करता है, तिरस्कृत करता है या उसका उल्लंघन करता है।
3. भावनात्मक दुरुपयोग- भावनात्मक दुरुपयोग में शामिल है अपमान, हंसी उड़ाना, तिरस्कार करना, गाली देना और कोई संतान या लड़का नहीं होने के बारे में विशेषकर अपमानित करता है या हसी उड़ाता है। या किसी भी व्यक्ति जिससे व्यथित व्यक्ति हितबद्ध है को शारीरिक दर्द पहुंचाने की बार-बार धमकी देता है।

4. आर्थिक दुरुपयोग- आर्थिक दुरुपयोग में सम्मिलित है कोई भी या सभी आर्थिक या वित्तीय संसाधन जिससे व्यथित व्यक्ति विधि या प्रथा के अधीन है चाहे न्यायालय के आदेश के अधीन संदेय हो या व्यथित व्यक्ति की आवश्यकता होने के कारण अपेक्षित है, से वंचित करना इसमें शामिल है।

घरेलु हिंसा के कारण

भारत में घरेलु हिंसा केवल आज की समस्या नहीं है बल्कि इसका आधार सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में रहा है। कुरीतियॉ, रीति-रिवाज, मूल्यों विश्वासों ने जिस पुरूष प्रधान व्यवस्था को जन्म दिया उसके कारण लिंगगत भेदभाव, असमानता दहेज़, बाल विवाह, सती प्रथा जैसी अनेक अन्यायकारी व्यवस्थाओं को बढ़ावा मिला। समय के साथ सामाजिक सोच में बदलाव तो हुआ परन्तु कुछ नए कारणों के उत्पन्न होने से समस्या का समाधान और सामाजिक सोच में बड़ा बदलाव नहीं हो सका। भौतिकवाद के साथ बढ़ते उपभोगतावाद और व्यक्तिवाद ने पारिवारिक कुसामंजस्य को बढ़ावा दिया है। भोग- विलास, फैशन परस्ती के कारण पारस्परिक आदर, श्रद्धा, स्नेह और मान-सम्मान का महत्त्व समाप्त हो गया है। घरेलु हिंसा के लिए सामाजिक कुप्रथाओं का योगदान सर्वाधिक है। दहेज, बाल-विवाह, विधवा पुनर्विवाह निषेध, सती प्रथा, पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियाँ घरेलु हिंसा को प्रेरित करती हैं। यद्यपि कुरीतियों को ख़त्म करने के प्रयास होते रहें है, परन्तु पूर्ण विराम के न लग पाने के पीछे के कारण अशिक्षा, निर्धनता, रुढ़िवादी सोच है। इनका स्वरूप बदल गया है, पर ये समाज में अभी भी व्याप्त हैं। आधुनिकता की प्रवृति, उपभोगतावादी सोच ने भोगविलास को बढ़ावा दिया है। परिवार के प्रत्येक सदस्य द्वारा बाजार में उपलब्ध वस्तुओं की मांग और व्यक्तिगत कर्तव्यों को तिलांजलि ने पारिवारिक विवादों को बढ़ावा दिया है। जिसमें घरेलु हिंसा को भी बढ़ावा मिला है। तथाकथित आधुनिकता ने यौनाचार, अविवाहित मातृत्व, गर्भपात, परपुरुषगमन की स्थितियां पैदा कर पारिवारिक संघर्ष को बढ़ावा दिया है। वैवाहिक जीवन की विफलता, अश्लील साहित्य, फिल्मों, वेबसीरिज, टी.वी. कार्यकर्मों में परोसी जा रही अश्लीलता ने भी घरेलु हिंसा की प्रवत्ति को बढ़ा दिया है। महिलाओं में अशिक्षा भी एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारक है जिसके कारण महिलाएं चारदीवारी के अन्दर घरेलु हिंसा का शिकार होती हैं।

राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण उत्तराखंड के प्रावधान में समय-समय पर महिला जागरूकता अभियान एवं परामर्श सत्रों का आयोजन किया जाता है। जिसमें महिलाओं के साथ पुरुषों को भी लिंग आधारित संवेदनशील होने हेतु प्रयास किये जा रहे है।

एक रिपोर्ट में कहा गया है कि कोरोनो वायरस से लड़ने के लिए देशव्यापी तालाबंदी के बीच उत्तराखंड में घरेलु हिंसा के सबसे अधिक मामले दर्ज किए गए, इसके बाद हरियाणा और दिल्ली का स्थान है।

राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण ने कोरोना के दौरान घरेलु हिंसा के जो आँकड़े जारी किये है। इस अवधि के दौरान प्रदान की गई कानूनी सहायता पर प्राधिकरण की अंतरिम रिपोर्ट और आंकड़ों के अनुसार, घरेलु हिंसा के 63 मामले राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में, 144 मामले उत्तराखंड से और 79 मामले हरियाणा से सामने आए। पीड़ित महिलाओं ने काउंसलर से संपर्क कर मदद मांगी। ऐसी स्थिति में समाज कार्य विषय की प्रासंगिकता अधिक बढ़ जाती है कि ये सब समाज में जनजागरण का कार्य करें और समुदाय स्तर पर अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें।

उपचार

घरेलु हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005 के अनुसार घरेलु हिंसा से सम्बंधित सूचना को व्यथित व्यक्ति द्वारा दाखिल किया जाना आवश्यक नहीं है, कोई भी व्यक्ति जिसे यह विश्वास करने का

कारण है कि ऐसा कार्य किया गया है या किया जा रहा है अर्थात् पड़ोसी, सामाजिक कार्यकर्त्ता, सम्बन्धी इत्यादि पीड़ित की ओर से पहल कर सकता है।

अधिनियम के अंतर्गत घरेलु हिंसा से व्यथित व्यक्ति के अधिकार

1. अधिनियम की धारा 5 (महिलाओं के संरक्षण के संवैधानिक प्रावधान) के अधीन उन अधिकारों को जानने और अनुतोष के विषय में संरक्षण अधिकारी और सेवा प्रदाता से जानने का अधिकार।
2. संरक्षण अधिकारी, सेवा प्रदाता या निकटतम पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी की सहायता प्राप्त कर शिकायत दर्ज करने और अनुतोष के लिए आवेदन में सहायता प्राप्त करने का अधिकार।
3. धारा 18 के अधीन घरेलु हिंसा के कृत्यों से स्वयं एवं अपनी संतानों/संतान के लिए संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार।
4. धारा 19 के अधीन उसी घर में (जहाँ घरेलु हिंसा हुई है) में रहने और अन्य रहने वाले व्यक्तियों के हस्तक्षेप के बिना अलग अपनी संतानों के साथ निवास करने का अधिकार है।
5. धारा 18 के अधीन पीड़ित के स्त्रीधन, आभूषण, कपड़ों और दैनिक उपभोग की वस्तुओं और अन्य सामग्रियों पर कब्ज़ा पाने का अधिकार।
6. धारा 6,7,9,14 के अधीन चिकित्सीय सहायता, आश्रय, परामर्श और विधिक सहायता प्राप्त करना।
7. धारा 18 के अधीन घरेलु हिंसा कारित करने वाले से दूर रहना, धारा 22 के अधीन शारीरिक व मानसिक क्षति के लिए प्रतिकार प्राप्त करने का अधिकार।
8. घरेलु हिंसा के सम्बन्ध में किसी प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित कथन की प्रतियाँ प्राप्त करना और किसी खतरे से बचाव के लिए पुलिस या संरक्षण अधिकारी से सहायता प्राप्त करने का अधिकार।

उपरोक्त महत्त्वपूर्ण प्रावधानों के आंकलन से स्पष्ट होता है कि घरेलु हिंसा से पीड़ित महिला को अपनी सामाजिक परिस्थिति व आर्थिक परिस्थिति में रहने का अधिकार प्राप्त है। अपनी संतानों के संरक्षण के लिए भी सहायता प्राप्त कर सकने का अधिकार प्राप्त है। महिला घरेलु हिंसा कारित करने वाले व्यक्ति से अनुतोष प्राप्त कर अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने व उसी घर में निवास करने का भी अधिकार रखती है। इस स्थिति में उसे सक्षम प्राधिकारी या संरक्षण अधिकारी से स्वयं की शारीरिक सुरक्षा और अपनी संतानों की सुरक्षा के लिए सहायता प्राप्त करने का भी अधिकार प्राप्त है।

घरेलु हिंसा से संरक्षण के लिए सुझाव:

आवश्यकता है कि समस्त महिलाओं को उनके अधिकारों को जानने के लिए कदम उठाये जाएं, संगोष्ठियां, सामाजिक कार्यकर्ताओं विश्वविद्यालय के समाज कार्य विभाग द्वारा समय समय पर कार्यक्रम, जागरूकता अभियान चलाए जाएं जहाँ विधिक परामर्शदाताओं और अर्थशास्त्रियों या अर्थशास्त्र विभाग के साथ मिलकर महिलाओं को उनकी आर्थिक स्थिति को बेहतर करने और अपने पैरों पर खड़े होने के लिए प्रेरित भी किया जाए। महिलाओं को भरोसा दिलाया जाए कि उनके पास कई अधिकार हैं और वे उचित फोरम के माध्यम से संरक्षण भी प्राप्त कर सकती हैं।

जब व्यक्ति घरेलु हिंसा के प्रति अधिक अभ्यस्त हो जाता है तब भी महिलाओं पर दुर्व्यवहार का प्रतिशत बढ़ जाता है। पुरुष जहाँ एक ओर अपनी कुंठा और गलत आदतों के कारण महिलाओं पर अत्याचार करता है वही दूसरी ओर वह अपनी गलती को स्वीकार ना करते हुए अनेक तर्क देता है कि जो

कुछ एक महिला सहन कर रही है यह उसके कर्मों की अथवा अपनी की गयी गलतियों की ही सजा है, कई बार चापलूसी वस माफ़ी भी मांगी जाती है परंतु यह माफ़ी सिर्फ दिखावे के अलावा कुछ नहीं होती क्योंकि घरेलु हिंसा की प्रवृति बार-बार दोहराई जाती है और उस पर महिलाओं को उनके आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त ना होने के कारण अनेक यातनाओं को चुपचाप सहना पड़ता है।

जहाँ एक ओर घरेलु हिंसा के लिए कानून बना है वही रिपोर्ट करने के बाद के प्रभावों और सामाजिक रूप से फिर अनेक प्रकार की यातनाओं और संघर्षों को सोच कर एक महिला इसको अपना भाग्य समझ कर ज्यादातर चुप रहने में ही समझदारी समझती है क्योंकि एक अकेली महिला के लिए यदि वह आर्थिक रूप से कमजोर है तो उस परिस्थिति में परिवार और बच्चों का भरण-पोषण और कई अन्य समस्याएं भी सामने आती हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर किए गए विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि घरेलु हिंसा समुदाय में उच्च अनुपात में होती है। महिलाओं के शारीरिक, मानसिक और प्रजनन स्वास्थ्य के लिए परिणाम बड़े भयावह होते हैं और अंततः घरेलु हिंसा से मृत्यु का जोखिम भी बढ़ जाता है। उचित और समय पर हस्तक्षेप के लिए, घरेलु हिंसा की सीमा और प्रकृति को जानना महत्त्वपूर्ण है। (शहरी महिलाओं की तुलना में ग्रामीण महिलाओं में हिंसा होने की संभावना काफी अधिक रही है। ऐसा इसलिए हो सका है क्योंकि उन ग्रामीण महिलाओं में शहरी महिलाओं की तुलना में कम शिक्षा, कम आय और अपने अधिकारों के बारे में कम जागरूकता होती है। भारत एक विकासशील देश होने के बावजूद भी हिंसा की दर में कोई अंतर नहीं आ रहा है वरन हिंसा के नए-नए तरीके इजाद किये जा रहे हैं, हम किस तरह की महिला सशक्तिकरण की बाँट-जोह रहे हैं जबकि समाज का आधा तबका अभी भी शोषित, प्रताड़ित और संघर्षरत है कि उसको भी पुरुष के समान ही मानव समझा जाए।

इसी कारण से भारत में घरेलु हिंसा के बढ़ते मुद्दे को संबोधित करने के लिए एक मजबूत और कुशल रिपोर्टिंग तंत्र का होना महत्त्वपूर्ण हो जाता है। भारत की जनसांख्यिकी को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न चिंताओं को दूर करने में सक्षम होने के लिए एक बहु-आयामी नीति तैयार करना आवश्यक है। महिला आयोगों के विशेषज्ञों को राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तर की नीतियों और दिशा-निर्देशों के निर्माण में शामिल किया जाना चाहिए, ताकि सभी स्तरों पर कार्य योजना तैयार करते समय महिलाओं, बच्चों और अन्य कमजोर समूहों से संबंधित मुद्दों को ध्यान में रखा जा सके। इस हेतु समान अवसर आयोग का गठन किया जाना चाहिए। घरेलु हिंसा से सम्बंधित मुद्दों को एक आवश्यक सेवा के रूप में शामिल करना होगा। घरेलु हिंसा के मामलों को अत्यधिक तत्परता से निपटने के लिए प्रत्येक पुलिस स्टेशन में गृह विभाग द्वारा कम से कम एक पुलिस अधिकारी को नामित किया जाना चाहिए।

अधिक संख्या सुरक्षित आश्रय गृहों और पीड़ितों के लिए सुरक्षित स्थान की उपलब्धता सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में उपलब्ध होनी चाहिए। कॉलर-ट्यून, रेडियो, समाचार-पत्र, टेक्स्ट संदेश और सोशल मीडिया अभियानों के माध्यम से प्रभावशाली लोगों के माध्यम से घोषणा करके हेल्पलाइन नंबर या ईमेल पते या व्हाट्सएप नंबरों के बारे में जागरूकता बढ़ाना महत्त्वपूर्ण कदम होगा।

इसके अतिरिक्त अन्य सुझाव निम्नलिखित हैं -

1. विवाह के इच्छुक जोड़ों को विवाह पूर्व परामर्श प्रबंधन करने के तरीके के बारे में एवं उनके वैवाहिक संबंध के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण इत्यादि की शिक्षा और जागरूकता दिया जाना आवश्यक है।
2. समय के अनुसार परिवर्तित होती परिस्थितियों में खास जगह के रीति-रिवाज और आधुनिकता के पैमानों पर जनजागरण के माध्यम से सार्वजनिक ज्ञान प्रदान किया जाना आवश्यक है।
3. घरेलु हिंसा के नकारात्मक प्रभावों पर मीडिया के माध्यम से जनजागरण आवश्यक है।

4. प्रत्येक धर्म के धर्माचार्यों को भी सख्ती से इसके खिलाफ आवाज उठाने के साथ इसकी शिक्षा देनी चाहिए।
5. युवाओं को इस ओर अधिक जागरूक करने की जरूरत है और यह कार्य प्रथम स्तर पर घर से ही शुरू होना चाहिए ताकि नैतिक शिक्षा के माध्यम से लिंग-आधारित भेदभाव को प्रोत्साहित नहीं किया जाये।
6. समाज के प्रत्येक वर्ग चाहे वे पेशेवर हों या फिर अन्य सभी को इस विषय में सम्पूर्ण विधिक प्रावधानों एवं दंड इत्यादि के बारे में भी जागरूक किया जाना चाहिए ताकि ऐसे किसी कृत्य को करने से पहले ऐसे व्यक्ति सतर्क रहे कि उनको भी किस यातना से गुजरना पड़ सकता है।
7. लिंग-आधारित भेदभाव के प्रति लोगों को विशेष रूप से जागरूक किया जाना चाहिए और इसको अभ्यास में लाया जाना चाहिए।

सन्दर्भ:

1. घरेलु हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005
2. घरेलु हिंसा से महिला संरक्षण नियम 2006
3. डॉ० सुमन राय, कमेटी घरेलु हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005
4. Ankur K. Domestic violence in India: Causes, consequences and remedies (document on the Internet) Youth Ki Awaaz; 2010. [Last accessed on 2018 Mar 19]. Available from: http://www.youthkiawaaz.com/2010/02/domestic-violence-in-indiacausesconsequences-and-remedies-2/ [Google Scholar]
5. Charlette SL, Nongkynrih B, Gupta SK. Domestic violence in India: Need for public health action. Indian J Public Health. 2012;56:140–5. [PubMed] [Google Scholar]
6. Patel V. Gender in mental health research. Geneva: World Health Organization; 2004. [Last accessed on 2018 Mar 19]. pp. 11–21. World Health Organization. Gender and Health Research Series. Available from: http://apps.who.int/iris/bitstrem/handle/10665/43084/9241592532.pdf;jsessionid=B1254B7C832653F0B11AAC5BB4F2BA7A/sequence=1 . [Google Scholar]
7. International Institute for Population Sciences (IIPS) and Macro International. National Family Health Survey (NFHS-3), 2005-06 Domestic Violence: India. I. Mumbai: IIPS; 2007. [Last accessed on 2018 Mar 19]. Available from: http://www.measuredhs.com/pubs/pdf/FRIND3/15 Chapter 15.pdf . [Google Scholar]
8. https://swarajyamag.com/news-brief/uttarakhand-records-most-number-of-domestic-violence-cases-during-lockdown-reports
9. https://www.researchgate.net/publication/350048435_CRIME_AGAINST_WOMEN_IN_THE_STATE_OF_UTTARAKHAND_A_SOCIAL_STAIN

❐❐❐

---

1. सहायक प्राध्यापक, विधि विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
2. सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

राष्ट्रभाषा हिंदी की आवश्यकता

–डॉ. अमृता श्री

नई शिक्षा नीति '2020' में भी कई भारतीय भाषाओं की लुप्तप्राय स्थितियों पर चिंता प्रकट की गई है और ऐसे में यह और ज़रूरी हो जाता है कि किसी एक भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषा बनाया जाए और ऐसा करने से ही अन्य सभी भारतीय भाषाओं का विकास सम्भव है। अँग्रेजी के वर्चस्व से हिंदी का केवल नुक़सान हुआ हो ऐसा नहीं है

किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीयता के निर्माण में कुछ आवश्यक तत्वों का योगदान रहता है। उन्हीं कुछ आवश्यक तत्वों में एक महत्त्वपूर्ण तत्व भाषा है। यानी वह भाषा जो हमारे राष्ट्र की राष्ट्रीयता का परिचायक हो। हमारे देश के साथ शुरू से ही यह दुर्भाग्य रहा कि वह अब तक एक भाषा-विहीन राष्ट्रीयता को ढो रहा है। वैसे तो हमारा देश विविधताओं का देश है और भाषायी स्तर पर भी काफ़ी विविधताएँ हैं। लेकिन इन्हीं विविधताओं में से एक ऐसी भाषा का चुनाव करना होगा जो हमारे राष्ट्र की राष्ट्रीय चेतना के साथ जुड़े।

अभी तक हमारे राष्ट्र की घोषित रूप से अपनी कोई राष्ट्रभाषा नहीं है। संविधान में हिंदी को राजभाषा घोषित किया गया है, लेकिन राष्ट्रभाषा के रूप में किसी भी भाषा का ज़िक्र नहीं किया गया है। राजभाषा एक संवैधानिक अवधारणा है और राष्ट्रभाषा अभी तक एक भावनात्मक अवधारणा के स्तर पर ही है। राजभाषा हिंदी ने भी अभी तक संवैधानिक रूप से अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया है। आज़ादी के बाद राजभाषा हिंदी के सहायक रूप में अँग्रेजी को शुरुआती पंद्रह वर्षों के लिए रखा गया था लेकिन यह अवधि आज़ादी के 75 वर्ष पूर्ण होने के बाद भी समाप्त नहीं हुई है। संविधान में सहायक रूप में अँग्रेजी है लेकिन वास्तविकता इसके उलट है। सबसे ज़्यादा जो भाषा जिस देश में बोली और समझी जाती हो उसकी जगह पर चंद मुट्ठी भर लोगों के द्वारा बोलने वाली भाषा को महत्त्व दिया गया, जो कि इस देश के लिए दुर्भाग्यपूर्ण है। इन स्थितियों को देखकर यह महसूस होता है कि भले हमारा देश राजनीतिक रूप से पचहत्तर वर्ष पहले आज़ाद हो गया था लेकिन सांस्कृतिक रूप से आज भी ग़ुलाम ही है। इस सांस्कृतिक ग़ुलामी से मुक्ति पाने के लिए राष्ट्र को एक राष्ट्रभाषा की ज़रूरत है, इसमें कोई दो राय नहीं होनी चाहिए। महात्मा गाँधी से जब इस संदर्भ में प्रश्न किए जाते हैं कि "राष्ट्रभाषा की आवश्यकता क्यों है? क्या अनेक मातृभाषा और दूसरी विश्वभाषा काफ़ी न होगी ?" इसके उत्तर में गाँधी जी कहते हैं- "आपका यह प्रश्न आश्चर्य में डालने वाला है। अँग्रेजी तो विश्वभाषा है ही, मगर क्या वह हिंदुस्तान की राष्ट्रभाषा बन सकती है? राष्ट्रभाषा तो लाखों लोगों को जाननी ही चाहिए। वे

अँग्रेजी भाषा का बोझ कैसे उठा सकेंगें? हिंदुस्तानी स्वभाव से राष्ट्रभाषा है, क्योंकि वह लगभग 21 करोड़ की मातृभाषा है। सम्भव है कि 21 करोड़ की इस भाषा को बाक़ी के अधिकतर लोग आसानी से समझ सकें। लेकिन अँग्रेजी तो एक लाख की भी मातृभाषा शायद ही कही जा सके। अगर हिंदुस्तान को एक राष्ट्र बनना है अथवा वह एक राष्ट्र है तो हमें एक राष्ट्रभाषा तो चाहिए ही।" गाँधी जी का यह विचार 'हरिजन सेवक' में 26 अप्रैल 1942 में छपा था। तब से अब तक राष्ट्रभाषा की ज़रूरत अनवरत बनी हुई है।

भाषाई स्तर पर विविधताओं वाले देश में किसी एक भाषा को राष्ट्रभाषा बनाना आसान काम तो नहीं है। लेकिन राष्ट्रभाषा की यह पदवी वही भाषा प्राप्त करेगी जो इसकी योग्यता रखती हो। समस्त भारतीय भाषाओं में हिंदी अपनी यह योग्यता शुरू से साबित करती रही है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय से ही हिंदी पूरे राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने की भूमिका निभाती रही है। स्वतंत्रता संग्राम की भाषा हिंदी थी। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को राष्ट्रव्यापी और लोकप्रिय बनाने में हिंदी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। देश में हिंदी भाषा सबसे ज़्यादा बोली और समझी जाती है। विश्व में सबसे ज़्यादा बोली और समझी जाने वाली भाषाओं में हिंदी तीसरे स्थान पर है। हिंदी की इसी राष्ट्रव्यापी भूमिका को ध्यान में रखकर महात्मा गाँधी ने यह महसूस किया था कि भारत की एक राष्ट्रभाषा होनी चाहिए। स्वतंत्रता के समय गाँधी जी समेत समस्त भारतीय राजनेताओं व भाषाविदों ने हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने पर अपनी सहमति व्यक्त की। गाँधी जी कहते हैं "वही भाषा राष्ट्रीय बन सकती है, जिसे अधिक संख्यक लोग जानते बोलते हों और जो सीखने में सुगम हो। ऐसी भाषा हिंदी ही है" हिंदी राष्ट्रीय चेतना को खुद में धारण करने की पूरी योग्यता रखती है, इस बात से अधिकांश लोग अपनी सहमति रखते हैं। अभी तक राष्ट्रभाषा का मसला जो भावनात्मक स्तर पर है उसे एक ठोस और संवैधानिक धरातल मिलना ज़रूरी हो गया है।

हिंदी को जैसे ही राष्ट्रभाषा बनाने की क़वायद की जाती है तो बुद्धिजीवियों के एक वर्ग को अन्य भारतीय भाषाओं का विकास अवरुद्ध होते हुए दिखता है। दरअसल अन्य भारतीय भाषाओं की आड़ लेकर ये वर्ग हिंदी को राष्ट्रभाषा न बनाया जाए इसकी कोशिश करते हैं। अगर यह कारण होता तो (अभी तक अँग्रेजी की जो वर्चस्वता हमारे देश में है उससे समस्त भारतीय भाषाओं का विकास तो नहीं ही हो रहा है यह निश्चित है) ऐसी स्थिति में इस वर्ग द्वारा अँग्रेजी भाषा का विरोध भी किया जाना चाहिए था। किसी एक भारतीय भाषा का राष्ट्रभाषा बनने से ही अन्य भारतीय भाषाओं का समुचित विकास सम्भव है। अँग्रेजी की जगह हिंदी को महत्त्व दिया जाए तो अन्य भारतीय भाषाओं का भी विकास होगा। क्योंकि राजभाषा हिंदी के विकास के लिए संविधान के भाग-17 के अनुछेद 351 में सबसे पहले संस्कृत और उसके बाद अन्य भारतीय भाषाओं से शब्द लेने का आग्रह किया गया है। 'संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।' अगर इस पद्धति से हिंदी भाषा का विकास होता है और हिंदी राष्ट्रभाषा बनती है तो उससे अन्य भारतीय भाषाएँ भी खुद को जुड़ी हुई ही महसूस करेंगी न कि विलग क्यूँकि संविधान में भी हिंदी की प्रकृति को भारतीय सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने पर ज़ोर दिया गया है। यही बात महात्मा गाँधी अपने तरीक़े

से बोल रहे थे- "मैं हिंदी के ज़रिए प्रांतीय भाषाओं को दबाना नहीं चाहता, किंतु उनके साथ हिंदी को भी मिला देना चाहता हूँ, जिससे एक प्रांत दूसरे के साथ अपना सजीव सम्बंध जोड़ सके। इससे प्रांतीय भाषाओं के साथ हिंदी की भी श्री-वृद्धि होगी।"

नई शिक्षा नीति '2020' में भी कई भारतीय भाषाओं की लुप्तप्राय स्थितियों पर चिंता प्रकट की गई है और ऐसे में यह और ज़रूरी हो जाता है कि किसी एक भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषा बनाया जाए और ऐसा करने से ही अन्य सभी भारतीय भाषाओं का विकास सम्भव है। अँग्रेजी के वर्चस्व से हिंदी का केवल नुक़सान हुआ हो ऐसा नहीं है बल्कि राष्ट्र के साथ-साथ सभी भारतीय भाषाओं के लिए भी अँग्रेजी का वर्चस्व नुक़सानदायक रहा है। हिंदी तो अपनी प्राणवत्ता, जिजीविषा, जनसंख्या, कमोबेश राजकीय संरक्षण के कारण, सीमित संदर्भों में ही सही, पल्लवित-पुष्पित हो रही है। लेकिन अन्य भारतीय भाषाओं का तो और भी बुरा हाल है। विगत 29 जुलाई 2020 को प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अध्यक्षता में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' को अपनी स्वीकृति प्रदान की। इस शिक्षा नीति की धारा 22.5 तथा 22.6 में भी लगभग सभी भारतीय भाषाओं की चिंताजनक अवस्था को रेखांकित करते हुए कहा गया है कि- "दुर्भाग्य से, भारतीय भाषाओं को समुचित ध्यान और देखभाल नहीं मिल पाई जिसके तहत देश ने विगत 50 वर्षों में ही 220 भाषाओं को खो दिया है। यूनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को 'लुप्तप्राय' घोषित किया है। ... इसके अलावा, वे भारतीय भाषाएँ भी, जो आधिकारिक रूप से लुप्तप्राय की सूची में नहीं हैं- जैसे आठवीं अनुसूची की 22 भाषाएँ वे भी कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना कर रही हैं।" आठवीं अनुसूची की 22 भाषाएँ, जिसमें हिंदी भी शामिल है, कहने के लिए तो 'राष्ट्रीय भाषाएँ' हैं लेकिन वास्तविकता यह है कि उनमें से अधिकांश तो प्रांत विशेष की और कुछ तो एक प्रांत के क्षेत्र विशेष की भाषा बनकर रह गई है। आठवीं अनुसूची के अलावा जो सैकड़ों भारतीय भाषाएँ हैं, उनमें से अधिकांश का तो अस्तित्व ख़तरे में है। मेरा यह दृढ़ मत है कि किसी एक भारतीय भाषा के राष्ट्रभाषा बनने से ही अन्य सभी भारतीय भाषाओं का समुचित विकास संभव है। अँग्रेजी के वर्चस्व का वर्तमान वातावरण और अंततः सभी भारतीय भाषाओं के लिए नुक़सानदायक है।

राष्ट्रभाषा हिंदी का स्वरूप क्या होना चाहिए ? दरअसल जब से हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की बात की जाती है तो उसके स्वरूप पर भी विचार करने की परंपरा रही है। यह परंपरा महात्मा गाँधी के समय से ही देखने को मिलती है। जब गाँधी जी राष्ट्रभाषा के रूप में 'हिंदुस्तानी' को देखना चाहते थे तो वह उस 'हिंदुस्तानी' भाषा के स्वरूप पर भी प्रकाश डालते हैं। "हिंदुस्तानी यानी हिंदी और उर्दू के मिलाप से पैदा होने वाली भाषा।... हिंदुस्तानी से मेरा मतलब उस साहित्य की भाषा से है, जिसका आधार खड़ी-बोली है। पर जो न तो केवल संस्कृत के तत्समों को अपनाती है, न केवल अरबी-फ़ारसी के, बल्कि दोनों के।" लेकिन भाषा 'बहता नीर' है। भाषा की प्रवृत्ति होती है जटिलता से सरलता की ओर अग्रसर होना। कोई भाषा आगे चलकर अपना क्या रूप धारण करेगी यह तथ्य तो भविष्य के गर्त में छिपा होता है लेकिन भाषा के संदर्भ में यह तो निश्चित है कि जो भी रूप भाषा धारण करेगी वह पहले से ज़्यादा सरल होगा। गाँधी जी जब लिपियों के संदर्भ में यह कहते हैं कि "जिस लिपि में शक्ति रहेगी, वह लिपि ज़्यादा लिखी जाएगी और वह राष्ट्रीय लिपि बनेगी।" लिपि की शक्ति किस पर निर्भर करती है तो वह लिपि की सरलता है- "अंत में जिस लिपि में ज़्यादा सरलता होगी, उसकी विजय होगी।" समान प्रक्रिया भाषा पर भी लागू होती है। महात्मा गांधी की 'हिंदुस्तानी' किस प्रकार हिंदी में परिवर्तित हो गयी, यह आज सब के सामने है।

आजकल दो स्तरों पर हिंदी का स्वरूप प्रचलन में है एक हिंदी वह जो ज्ञान-विज्ञान की दुनिया से जुड़ी हुई है और जिसका प्रयोग सरकारी कार्यालयों में होता है जिसे 'राजभाषा हिंदी 'के नाम से जाना जाता है। यह हिंदी अपनी प्रकृति में जटिलता को लिए हुए है। दरअसल राजभाषा हिंदी के स्वरूप को भाषा की प्रवृति से मेल खाना चाहिए तभी वह ज़्यादा समय तक टिकी रहेगी। भाषा जितनी सरल और सहज रहेगी वह उतनी ही ज़्यादा प्रचलित होगी। हिंदी के कार्यालयी रूप को सरल और सहज करने की ज़रूरत है। जहाँ तक तकनीकी शब्दों की बात है तो उसे भी आसान बनाया जा सकता है। हर एक भाषा के शब्दों का अनुवाद करना ज़रूरी नहीं होता। दूसरे भाषा के शब्दों का हिंदी अनुवाद करने पर अपने विचार प्रकट करते हुए बालमुकुंद गुप्त अपने निबंध 'हिंदी भाषा' में कहते हैं- "अँग्रेजी के बहुत से शब्द ऐसे हैं कि जो हिंदी में कुछ बिगड़कर मिल गए हैं। उनके बोलने से उनका अर्थ भली-भाँति समझ में आ जाता है। पर उनका अनुवाद किया जावे तो समझना कठिन हो जावे। रेल, स्टेशन, लाट, क़मिटी आदि पचासों शब्द ऐसे हैं जिनका अनुवाद करना व्यर्थ सिर पचाना है। फ़ारसी, अरबी के कितने ही शब्द हिंदी में ऐसे मिल गए हैं कि लोग उनको हिंदी के शब्दों से भी प्यारा समझते हैं।" अगर डॉ. रघुवीर पारिभाषिक शब्दावली को बनाते हुए गुप्त जी के अनुवाद-सिद्धांत से सहमत हुए होते तो हिंदी भाषा की जटिलता जाती रहती। अगर किसी भाषा का कोई शब्द सरल हो तो उसका लिप्यांतरण करके हम उस शब्द को हुबहू अपनी भाषा में शामिल कर सकते हैं। अगर हम यही तरीक़ा अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को हिंदी में शामिल करने पर अपनाते हैं तो ग़ैर हिंदी भाषा-भाषी लोग भी हिंदी से जुड़ाव महसूस करेंगें। हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए उसका सरल और सहज होना बहुत ज़रूरी है।

हिंदी का दूसरा स्वरूप बोल-चाल की हिंदी है। जो आजकल 'हिंग्लिश' हो गई है। भाषा में यह मिलावट कितनी सही है और कितनी ग़लत यह तो भविष्य के गर्त में छिपा हुआ है। लेकिन अगर आज हिंदी हिंग्लिश होती जा रही है तो अपनी भाषा-प्रवृत्ति (कठिनता से सरलता की ओर) के कारण ही। लेकिन यहाँ एक तथ्य ध्यातव्य है कि जब भाषा की शुद्धता पर महावीर प्रसाद द्विवेदी अथक कार्य किए तभी हिंदी भाषा एक मुकम्मल रूप धारण किया और उसका एक मानकीकृत रूप प्रचलन में आया। नहीं तो अभी तक द्विवेदी जी के शब्दों में "एक ही वाक्य को एक लेखक एक तरह लिखता है, दूसरा दूसरी तरह, तीसरा तीसरी तरह।" भाषा में शुद्धता बनी रहे, इस ज़िम्मेदारी को भी हमें उठाना होगा। भाषाई शुद्धतावादी दृष्टिकोण कितना सही है, कितना ग़लत निम्न दो उद्धरणों से स्पष्ट होता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की भाषाई शुद्धतावादी दृष्टिकोण की प्रशंसा करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल कहते हैं- "गद्य की भाषा पर द्विवेदी जी के शुभ प्रभाव का स्मरण, जब तक भाषा के लिए शुद्धता आवश्यक समझी जाएगी तब तक बना रहेगा।" इसी संदर्भ में हज़ारी प्रसाद द्विवेदी की टिप्पणी द्रष्टव्य है- "उन्होंने कठोरता के साथ माँज-घिसकर भाषा को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया। परंतु इस मँजाई-घिसाई का कुछ दुष्परिणाम भी हुआ। 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में भाषा के स्वच्छंद प्रयोग से शैली-वैचित्र्य का स्वाभाविक विकास हो रहा था। द्विवेदी जी की मँजाई-घिसाई से उसके स्वाभाविक और सहज विकास को थोड़ा धक्का भी लगा।" भाषाई शुद्धता तभी तक सही है जब तक भाषा का स्वाभाविक विकास अवरुद्ध न हो। हमें हिंदी भाषा के संदर्भ में भी एक संतुलन बनाकर चलना चाहिए ताकि हिंदी भाषा व्याकरणिक रूप से भी सही हो और भाषाई प्रवृत्ति की धारा में बहते हुए उसका स्वाभाविक विकास भी हो। आज हमें राष्ट्रभाषा हिंदी को इन्हीं सिद्धांतों

पर ले कर चलने की ज़रूरत है ताकि एक तरफ़ वह अपना मानकीकृत रूप को भी बनाए रखे और दूसरी तरफ़ उसका प्रचार-प्रसार भी व्यापक धरातल पर हो।

बोल-चाल की हिंदी जिसको कभी महात्मा गाँधी संपर्क भाषा के रूप में देखना चाहते थे, उसको अंतर-प्रांतीय भाषा बनाने की वकालत करते हुए कहते हैं- "हिंदुस्तानी हिंदुस्तान की भाषा है। वह सब प्रांतों की भाषा होनी चाहिए। जिसके यह माने नहीं है कि तमिलनाडु में तामिल का, आंध्र देश में तेलगु का, मलाबार में मलयालम का और कर्नाटक में कन्नड़ का कोई स्थान नहीं है। प्रांतों की अपनी-अपनी भाषाएँ हैं, और होनी चाहिए। लेकिन जब हम एक दूसरे प्रांत में चले जाते हैं, तो हमारी एक ऐसी भाषा होनी चाहिए जो सभी प्रांतों के लोगों के आपसी व्यवहार में सहायक हो, जिसे हम अंतर-प्रांतीय भाषा कह सकते हैं।" यानी हिंदी को संपर्क भाषा बनाया जा सकता है और चूँकि वो पूरे राष्ट्र के लोगों को आपस में जोड़ने की भूमिका निभाती है तो राष्ट्रभाषा बनने की भी योग्यता रखती है। जब हिंदी राजभाषा, संपर्क भाषा के पद पर सुशोभित हो सकती है तो राष्ट्रभाषा के पद पर क्यों नहीं?

संदर्भ

1. गाँधी जी, 'राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी', अनुवादक- काशीनाथ त्रिवेदी, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, संस्करण- 2008, पृष्ठ- 146
2. वही, पृष्ठ सं- 147
3. वही, पृष्ठ- 44
4. वही, पृष्ठ- 34
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ- 87
6. गाँधी जी, 'राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी', अनुवादक- काशीनाथ त्रिवेदी, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, संस्करण- 2008, पृष्ठ- 134
7. वही, भूमिका से उद्धृत
8. वही, भूमिका से उद्धृत
9. बालमुकुंद गुप्त, 'निबंधों की दुनिया', वाणी प्रकाशन, नई दिलल्ली, संस्करण- 2009, पृष्ठ-74
10. 'महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली', भाग-1, संकलन-सम्पादन- भारत यायावर, किताबघर प्रकाशन, प्रथम संस्करण- 1995, पृष्ठ- 92
11. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, 'हिंदी साहित्य का इतिहास', प्रकाशन संस्थान, संस्करण-2009, पृष्ठ- 350
12. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, 'हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण - 2011, पृष्ठ- 137
13. गाँधी जी, 'राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी', अनुवादक- काशीनाथ त्रिवेदी, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, संस्करण- 2008, पृष्ठ- 143

❑❑❑

1. असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, पंडित जवाहरलाल नेहरू राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फ़रीदाबाद। ई- मेल : amritashreedu@gmail.com

एस. आर. हरनोट की कहानियों में वृद्धों का जीवन संघर्ष

–कुलदीप कुमार
–डॉ. रीता सिंह

वर्तमान के इस भौतिकवादी युग में वृद्धों की जो उपेक्षा हो रही है, वह नई पीढ़ी के लिए पतन का मार्ग प्रशस्त कर रही है। आज नई पीढ़ी के जीवन मूल्यों और संस्कारों में गिरावट देखने को मिल रही है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर युवा अपनी ही जिन्दगी में मस्त रहते है। उन्हें कभी यह चिंता नहीं होती जिन माता-पिता ने उन्हें सहारा दिया, उन्हें इस काबिल बनाया आज उन्हें सहारा देना भूल जाते है।

एस. आर हरनोट हिमाचल प्रदेश के प्रसिद्ध और चर्चित कथाकार है। इनके कथा साहित्य को प्रदेश और देश के अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। हरनोट अपने कथा साहित्य में पहाड़ी संस्कृति, पहाड़ी भाषा, पहाड़ की खूबसूरती, पहाड़ों और नदियों की चिंता, पहाड़ के संघर्ष, पहाड़ी जन-जीवन से सम्बंधित नित नवीन विषयों को पाठकों के समक्ष रखते है। भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण और नगरीकरण के प्रभाव से पहाड़, पहाड़ की संस्कृति और पहाड़ी जीवन में आये बदलावों, नैतिक मूल्यों, टूटते मानवीय रिश्तों, युवाओं का पलायन, पहाड़ों के गाँवों में रह रहे वृद्धों का अकेलापन आदि संवेदनशील विषयों को लेकर अपनी रचनाओं में चिंतित दिखाई देते हैं। युवाओं के पलायन और गिरते मानवीय मूल्यों से गाँवों में एकाकीपन के शिकार वृद्धों की विवशता को हरनोट महसूस करते है और ऐसे पात्रों को अक्सर अपनी कहानियों के केंद्र में रखकर उनका यथार्थ चित्रण करते हैं।

बीज शब्दः

पहाडी जीवन संघर्ष, भूमंडलीकरण, वृद्ध, वृद्धावस्था, युवाओं का पलायन, टूटते मानवीय मूल्य, एकाकी वृद्धों की पीड़ा और संघर्ष।

भूमिका :

एस. आर. हरनोट हिमाचल की ग्रामीण धरती में जन्मे एक प्रसिद्ध कथाकार है। जिनका कथा-साहित्य आज देश में ही नहीं, विश्व में भी पढ़ा और सराहा जा रहा है। इनकी कहानीयों में भूमंडलीकरण, औद्योगीकरण और नगरीकरण के प्रभाव को देखा जा सकता है। तभी देश-विदेश की कई भाषाओं में इनकी कहानियों के अनुवाद हो रहे है। भूमंडलीकरण और भौतिकवादी युग के कारण भारतीय जीवन, और समाज में काफी तेज गति से बदलाव आ रहा हैं। जिसमें सबसे अधिक बदलाव मानवीय रिश्तों और संबंधों पर पड़ा है। मानवीय रिश्तों और संबंधों की परिभाषा बदल गयी जिससे संयुक्त परिवार टूटते जा रहे हैं, एकल परिवार की परम्परा बढ़ती जा रही है। ऐसे वातावरण में बुजुर्ग जो कभी भारतीय परिवार और संस्कृति में पारिवारिक धरोहर, आस्था और आदर के प्रतीक हुआ करते थे। आज भारतीय परिवार और समाज में वृद्धों को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जा रहा है। जिन माता-पिता ने अपना पूरा जीवन अपने बच्चों को पालने, पढ़ाने-लिखाने और उनकी जरूरतों को पूरा करने में लगा दिया। वृद्धावस्था में वही

माता-पिता उपेक्षित, असहाय और एकाकीपन महसूस कर रहे हैं। वृद्धों के संस्कार, पारंपरिक मूल्य और अनुभव परिवार और समाज के मार्गदर्शन का काम करते थे। आज जहाँ वृद्धजनों की स्थिति घर की पुरानी वस्तु की तरह हो गई है जिसे घर की खूबसूरती में दाग की तरह समझा जाता है। आज हमने भौतिकता को अपनाकर नैतिकता का परित्याग कर अपने वृद्धों को एकाकी जीवन जीने के लिए विवश कर दिया है।

वर्तमान में वृद्धों की समस्याएँ ग्रामीण न रहकर वैश्विक समस्या बन गई है। आज समूचा विश्व वृद्धों की बढ़ती समस्याओं के प्रति चिंतित है और समाधान का प्रयास कर रहा है। वृद्धों की पीड़ा, संवेदना और समस्याओं को हिंदी साहित्यकारों ने भी अपने साहित्य में चित्रित किया है। हिंदी साहित्यकार स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, किन्नर विमर्श, पर्यावरण विमर्श तथा वृद्ध विमर्श आदि विचारधाराओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का काम कर रहे है। वृद्धों का संघर्ष परिवार, समाज और साहित्य में एक ज्वलंत मुद्दा है। यह संघर्ष किसी विशेष वर्ग, जाति, धर्म, लिंग का संघर्ष नहीं है बल्कि सम्पूर्ण मानव-समाज का संघर्ष है। यह संघर्ष सार्वदेशिक और सार्वकालिक है। वर्तमान समय में औद्योगीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति और नगरीकरण के कारण वृद्धावस्था में समायोजन से सम्बंधित अनेक समस्याएं परिवार में बड़ी तीव्रता से उत्पन्न हो रही हैं। आज का युवा जिस परिवेश में पल रहा है, वह वृद्धों के परिवेश से बिलकुल भिन्न है। आज की युवा पीढ़ी में पारिवारिक एकता से संबंधित नैतिक मूल्य टूटते जा रहे है। जिससे वृद्ध परिवार में अपनी भूमिका, स्थिति, आदर, सम्मान तथा प्रभुता को खोते जा रहे हैं। संयुक्त परिवार की अवधारणा समाप्त हो रही, जहाँ बुजुर्गो को आदर मिलता था। संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवार ने ले ली जिसमें पति-पत्नी और बच्चें रह गए। बुजुर्गों के लिए वृद्ध-आश्रम खुलने लगे है। संयुक्त परिवार का विघटन, एकल परिवार में अभिवृद्धि एवं नगरीकरण के बढ़ते प्रभाव ने वृद्ध-जीवन को और भी अधिक कारुणिक बना दिया है। उपेक्षित लोगों को वाणी देने की महत्त्वपूर्ण भूमिका हिंदी साहित्य निभा रहा है। समाज के उपेक्षितों को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्य की अनेक विधाएं है। लेकिन कहानी सर्वाधिक लोकप्रिय एवं प्रभावोत्पादक विधा है। कहानी समाज की समस्त समस्याओं एवं वर्तमान युग की जटिलताओं को व्यक्त करने में समर्थ है। वृद्धावस्था का संघर्ष और दारुण-दशा का सजीव चित्रण हरनोट ने अपनी कहानियों में किया हैं।

हरनोट की कहानियों में वृद्ध पात्रों का जीवन संघर्ष

हरनोट का साहित्य बड़ा व्यापक है। उनकी कहानियों में समाज के उपेक्षित वर्ग की पीड़ा है। जिसमें उन्होंने दलित, नारी, पर्यावरण तथा वृद्धों आदि से सम्बंधित संवेदनशील मुद्दों का यथार्थ चित्रण किया है। हरनोट की कहानियाँ पहाड़ी वृद्धों के जीवन संघर्ष से रु-बरु कराती है। उनकी दृष्टि हमेशा मानव और मानवता को बचाने की रही है। इसी क्रम में वृद्धों के संघर्ष की मार्मिक अभिव्यक्ति उनकी कहानियों 'माँ पढ़ती है', 'बिल्लियाँ बतियाती है', 'लोहे का बैल', 'बीस फुट के बापूजी', 'कागभाखा' इत्यादि में मिलती है।

'बिल्लियाँ बतियाती है' दारोश कहानी संग्रह की पहली कहानी है। इसमें अम्मा के अकेलेपन का विचित्र संसार है। उम्र के जिस पड़ाव में अम्मा है वहां उसे सबसे अधिक भावनात्मक सहारे की जरूरत है। अम्मा ने बेटे को हजारों कर्जा लेकर खूब पढ़ाया-लिखाया। एक दो खेत रेहन पर रक्खे। बेटे की नौकरी शहर में लगी और वहीं शहर में किसी लड़की से ब्याह भी कर लिया। बेटा गाँव और अम्मा को भूलकर वहीं का हो गया। लेकिन पति की मृत्यु और बहू के साथ बेटे की नगरोन्मुख्ता ने अम्मा को नितांत अकेला कर दिया। अम्मा ने अपने अकेलेपन के अनेक सहारे पाल लिए है। सुबह से शाम तक अम्मा किसी न किसी के साथ व्यस्त रहती है। इस कहानी का पहला अनुच्छेद, "अम्मा का झगडा शुरू हो गया। अपने आप से। दियासलाई की डिब्बिया से। ढिबरी से। चूल्हे में उपलों के बीच ठुंसी आग से और बाहर भीतर दौड़ती बिल्लियों से। यही सब होता है जब अम्मा उठती है। वह चार बजे के आसपास जागती है। ओबरे में पशु भी अम्मा के साथ ही उठ जाते हैं। आँगन में चिड़िया को भी इसी समय चहकते सुना जा सकता है और बिल्लियों की भगदड़ भी अम्मा के साथ शुरू हो जाती है। यह नहीं मालूम की अम्मा पहले जागती है या कि अम्मा की गायें याकि चिड़िया या फिर बिल्लियां। " (पृ. 9) अम्मा का साथ निभाने वाला उसका

बेटा नहीं बल्कि उसके अकेलेपन के साथी काली और निक्की नामक बिल्लियां, ओबरे में बांधे पशु, आँगन में चहकती चिड़िया। और इसके साथ गाँव के हर लोगों के साथ अम्मा किसी न किसी तरह व्यस्त रहती है। "ऐसा कोई बच्चा गाँव का न होगा जो अम्मा के यहाँ गुड की डली या मक्खन-रोटी न खा जाता हो, ऐसी औरत नहीं होगी

जो पानी-पनिहार, घास लकड़ी को आते जाते अम्मा के आँगन बैठ बीड़ी का कश न मार जाती होगी, ऐसा कुत्ता न होगा जो अम्मा के दरवाजे टुकड़ा न खा जाता होगा।" (पृ. 12) अब यही अम्मा का भरा-पूरा परिवार जिनसे वह अपना अकेलापन दूर करती है। जिनकी देखभाल में वह सुबह से शाम तक किसी न किसी तरह अपने को व्यस्त रखती है। यह कहानी गाँव में अकेली रह रही वृद्ध माँ की पीड़ा का अनोखा और मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है। माँ अपने घर, गृहस्थी, खेती से लेकर पशु-पक्षियों के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर लेती है। अपनी पीड़ा को किसी से नहीं बाँटती और न ही किसी से कोई शिकायत करती। जबकि उसका बेटा माँ की चिंताओं से विमुख अपने बीबी-बच्चों के साथ शहर में मजे से जी रहा है। माँ दिन-रात बेटे-बहू और पोतो की चिंता में लगी रहती। "अम्मा को डाकिये की बातें कई बार अकेले में याद आ जाया करती हैं। दंगे फसाद होते है, लाठियां-गोलियां चलती है। इन सभी के बीच उसके बेटे-बहू कैसे रहते होंगे। पोतू स्कुल कैसे जाता होगा। माँ का दिल है न ...बेटा दूर ही क्यों न हो, बहू नफरत क्यों न करे, अम्मा उन्हें याद किया करती है।" (पृ. 14) अंत में बेटा गाँव आता है, माँ से मिलने या हाल-चाल पूछने नहीं बल्कि पैसे लेने। लेकिन माँ से कहने की हिम्मत नहीं होती। पर माँ बेटे की बैचेनी और परेशानी समझ जाती है कि उसे पैसों की जरूरत है। अम्मा बेटे के बिना बोले अपनी सारी जमा-पूंजी ख़ुशी-ख़ुशी सौंप देती है। "तेरे सिरहाने पैसे रख दिए हैं बेटा। लेते जाना। तेरे काम आएंगे।" (पृ. 23) यहाँ माँ के चरित्र में जो सादगी, सहजता, वात्सल्य और प्रेम है वह अन्य किसी रिश्तों में नहीं। आधुनिकता के इस दौर में बच्चे माँ की ममता, त्याग, समर्पण, एकाकीपन को महसूस नहीं कर पाते। लेकिन माँ अपने बच्चों की हर समस्याओं और जरूरतों को बिना बोले समझ जाती है। हरनोट की कहानियां पहाड़ी जनजीवन में वृद्धों के संघर्षरत जीवन की सच्चाई प्रकट करती है।

'बीस फुट के बापू जी' और 'बिल्लियां बतियाती है' लगभग एक ही पृष्ठभूमि पर लिखी गई है। दोनों कहानियों की स्थितियां अलग-अलग है लेकिन इस कहानी में भी वही संघर्ष, एकाकीपन और स्मृतियाँ है। यह कहानी भी 'दारोश' कहानी संग्रह में संकलित है। यह कहानी बदलते परिवेश, टूटते मानवीय मूल्यों, पीढ़ियों के अंतराल की कहानी है। इस कहानी में अम्मा की जगह शिमला के रिज मैदान पर पर्यटकों की घुड़सवारी के लिए घोड़े का काम करने वाले स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर पचहत्तर वर्षीय चाचू नामक पात्र का विवरण प्रस्तुत हुआ है। जो अकेलेपन का शिकार होता है। चाचू ने घर-परिवार और लड़के की पढ़ाई के लिए दिन-रात मेहनत की। बेटा स्कूल से निकला तो सेना में नौकरी मिल गयी। "चाचू चाहता था बेटा जहाँ भी नौकरी करे ठीक है पर अपने गाँव को न भूले। वहां अच्छा सा घर बनाए, ब्याह करके बच्चों को वहां रक्खे। आखिर अपनी जगह जमीन है। पर बेटे को यह नहीं भाया। उसने बार-बार चाचू को घोड़े का धंधा छोड़ने को कहा पर चाचू नहीं माना। अंत में बेटे ने चाचू को ही छोड़ दिया।" जिस घुड़सवारी के काम से चाचू ने अपने बेटे को पढ़ाया-लिखाया, उसी काम-धंधे की वजह से उसके बेटे ने अपने पिता को छोड़ दिया।

उपर्युक्त दोनों कहानियों में अकेलेपन के शिकार वृद्ध पात्र अम्मा और चाचू की कहानी है। दोनों कहानियों में अम्मा और चाचू अपने-अपने बेटों को खूब पढ़ाते-लिखाते है। बड़ा अफसर बनाते है, शादी अपनी मर्जी से करते है। वहीं बेटे अपने गाँव और माता-पिता को भूलकर शहर में बस जाते है। ये कहानियां युवाओं का पलायन, वृद्धों की उपेक्षा, अकेलापन और जीवन संघर्ष का मार्मिक यथार्थ प्रस्तुत करती है। । सामान्य भाषा में कहा जाए तो ये दोनों कहानियां दो पीढ़ियों के बीच वैचारिक मतभेद की कहानियां है।

'कागभाखा' दारोश कहानी संग्रह की चौथी कहानी है। 'दादी' इस कहानी की प्रमुख पात्र है। बहू-बेटे द्वारा उपेक्षित स्वाभिमानी दादी को कई वर्ष अकेले हो गए। दादी का एक बेटा था जो दोघरी में अपने बीबी बच्चों के साथ रहता था। बहू को दादी अच्छी नहीं लगती थी। वह जब भी बीमार होती हल्का जुखाम भी हो जाए उसका दोष भी दादी को जाता बजाय इसके कोई दवा ले। "इस बुढ़िया के पास भूत है। उसी ने

कुछ कर दिया है। " (पृ. 53) दादी 'काग' यानी कि कौए की भाषा समझती थी। जिससे गाँव की नई पीढ़ी दादी को अच्छा नहीं समझती थी। वे समझते थे दादी जरुर कोई जादू टोना जानती होगी। कुछ लोग तो दादी को डायन तक कह देते थे। दादी ये सुनकर चुपचाप इधर-उधर निकल जाया करती, कभी पेड़ के निचे बैठकर खूब रोया करती। दादी का मानना था कि कौए किसी का बुरा नहीं करते। बल्कि गाँव और परगने की अच्छे-बुरे की खबर रखते है। कोई इनकी भाषा समझे तो विपत्ति आने से पहले ही टल जाए। दादी अपना अनुभव और कागभाखा का ज्ञान सभी ग्रामीणों की भलाई में लगाती थी। किसी के घर में ब्याह-शादी, किसी के घर बेटा जन्मा हो या कोई भी गाँव का अच्छा-बुरा काम दादी के बगैर सम्पन्न नहीं होता। यही दादी मौका मिलने पर गलत बातों का विरोध भी करती है। दादी जानती है कि गाँव के प्रधान ने अधेड़ उम्र के मंगलू की जमीन के कागजात पर जबरदस्ती अंगूठा लगाकर उसकी हत्या कर दी। पुलिस पूछताछ के लिए जब गाँव में आती है तो पुलिस द्वारा भी वृद्ध पात्र दादी से बदतमीजी की जाती है। "ये रे बुढ़िया।

पूछ रहा हूं तेने तो नहीं कुछ कहना। " (पृ. 57) गाँव में प्रधान द्वारा वृद्धों की पेंशन में भ्रष्टाचार करना। " अपने प्रधान से क्यों नहीं पूछते। वह पेंशन मेरे नाम से इसने अपनी जनानी को लगा रखी है। " (पृ. 59) प्रधान के विरुद्ध आवाज उठाने की सजा दादी को मिलती है, उसे घर के अंदर जिन्दा जलाने से। प्रधान दादी के घर में आग लगा देता है। दादी किसी तरह जान बचाकर दोघरी अपने बेटे के घर पहुँचती है। दरवाजा खडखड़ाया। " बहू..कौन है इस वक्त ? "मैं हूं बहू, मैं। आवाज सुनकर बच्चे भी उठ गए। बड़ी लड़की ने पूछा, "अम्मा कौन है ? दरवाजा खोलूं ?" "नहीं ..नहीं मत खोलना। वह डायन है। " दादी ने सुना तो भीतर तक टूट गयी। पता नहीं कितनी देर दरवाजे के पास अँधेरे में रोती रही। " (पृ. 59,60) कहानी में बेटे-बहू, गाँव की नई पीढ़ी, प्रधान, पुलिस वाले आदि से संघर्ष करते दिखाया गया है। हरनोट ने पहाड़ों में ग्रामीण समाज के उपेक्षित वृद्ध पात्रों को बड़ी शिद्दत से महसूस किया है। उनकी वृद्धों के प्रति गहरी संवेदना अम्मा, घोड़ेवाले चाचू तथा दादी की संघर्षरत जीवनगाथा में दिखाई पड़ती है। हरनोट की कहानियों के सभी वृद्ध पात्र एकाकी के साथ-साथ मेहनतकश, संवेदनशील और संघर्षशील है। ये वृद्ध पात्र अकेलेपन और विषम पहाड़ी जीवन स्थितियों के बीच भी अपने संघर्ष से जीवन जी रहे है। उनकी कहानियां सजीव एवं जीवन के बिल्कुल करीब लगती है। परम्पराओं से जुड़े रहने की ललक एवं मूल्यों को बचाने की तड़प उनकी हर कहानियों की खास विशेषता है। उपर्युक्त कहानियां इस बात की सबूत है।

एस. आर. हरनोट की 'लोहे का बैल' कहानी कीलें कहानी संग्रह में संकलित है। इस कहानी में बेटा नौकरीशुदा और शादीशुदा के बाद अपने बूढ़े माता-पिता की मेहनत और त्याग को भूल जाता है। आजकल की युवा पीढ़ी बड़े होकर चार पैसे क्या कमाने लगते माता-पिता के फोन सुनने के लिए भी समय नहीं है। कहानी का वृद्ध पात्र शोभा जब शहर में रह रहे अपने बेटे को फ़ोन करता है। तो बेटे को अपने पिता से बात करने की बजाय रविवार की छुट्टी में सोना ज्यादा सुखदायक लगता है। "अरे कौन बोल रहा है, आराम से सोने भी नहीं देते ?"... "मैं बोल रहा हूँ बेटा".. "हाँ ..हाँ पहचान लिया, बोलो, क्यों किया फ़ोन सुबह..सुबह" (पृ. 65,66) शोभा ने बेटे को फ़ोन अपने सुख-दुःख प्रकट करने के लिए किया था। उसका एक बैल गिर के मर गया था। बेटे को लगा पैसे के लिए फ़ोन किया था। "मेरे से पैसों की उम्मीद मत रखना। तुम तो जानते हो, शहर के खर्चे कितने होते है। उस पर दिनोदिन महँगाई आसमान छू रही है। मैंने इसी साल एक घर ले लिया है, उसकी किश्ते जाती हैं। अब कार के लिए लोन ले रहा हूँ। छोटी गाडी तो रख नहीं सकता। हैसियत के मुताबिक बड़ी रखनी पड़ेगी। घर का सारा सामान बदला है। नया एल.सी.डी. लिया है। फुली ऑटोमेटिक वाशिंग मशीन और तीन सौ लीटर का सेमसंग का फ्रिज" (पृ. 68) बहुत बड़ी विडम्बना है जो बाप अपनी पूरी जिन्दगी कर्ज लेकर अपने बच्चों के भविष्य को बनाता है। अपनी खून पसीने की कमाई सिर्फ उसी पर लगाकर उसे इस काबिल बनाता है। लेकिन उस बेटे के पास बुजुर्ग माँ-बाप से बात करने की फुर्सत भी नहीं। ग्रामीण समाज भी शहरी परिवार की परिकल्पना के विस्तार से अछूता नहीं रहा। शोभा के बेटे ने अपनी पसंद से अपनी ही कंपनी में काम करने वाली अफसर से शादी की थी। उसकी पत्नी को गाँव के नाम से एलर्जी थी। शोभा और उसकी बीवी ने

तो कभी बहू का चेहरा तक नहीं देखा था। कहानी में शहर और गाँव दोनों की अति-आधुनिकता की स्वार्थी मनोवृति पर व्यंग्य किया गया है। जिसमें बेटे द्वारा पिता के साथ किया गया विश्वासघात को भी दिखाया गया है। शहर में रहने वाला बेटा अपने पिता से पूछे बिना गाँव की जमीन को बेच देता है। गाँव के मास्टर जी "पूरा एक लाख दिया है ब्याज पर। उसने शहर में घर लेना था। मैंने बिना सोचे उसे एक लाख दे दिया। अब देख न, पक्का कागज़ बनाया है। मै जानता हूँ साल दर साल ब्याज बढ़ता रहेगा और जिस दिन शोभा गया जमीन हमारी। " (पृ. 77) यह सब सुनकर एक पिता के हृदय में क्या गुजरी होगी। माता-पिता खून पसीने की कमाई से अपने बच्चों को पढ़ाते है। लेकिन युवाओं का गाँव से पलायन और नगरों के होकर रहना। माँ-बाप को बिना बताए शादी करना। गाँव एवं बुजुर्ग माता-पिता को उपेक्षित और अकेला छोड़कर शहरों में बस जाना। एस. आर हरनोट इन समस्याओं को गहन संवेदनाओं और यथार्थ के साथ चित्रित करते है।

निष्कर्ष :

वर्तमान के इस भौतिकवादी युग में वृद्धों की जो उपेक्षा हो रही है, वह नई पीढ़ी के लिए पतन का मार्ग प्रशस्त कर रही है। आज नई पीढ़ी के जीवन मूल्यों और संस्कारों में गिरावट देखने को मिल रही है। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर युवा अपनी ही जिन्दगी में मस्त रहते है। उन्हें कभी यह चिंता नहीं होती जिन माता-पिता ने उन्हें सहारा दिया, उन्हें इस काबिल बनाया आज उन्हें सहारा देना भूल जाते है। माता-पिता की भावनाओं को अनदेखा कर स्वार्थी होकर अपनी जिन्दगी जीना चाहते हैं। इस भावी पीढ़ी को वृद्धों की भावनाओं और संवेदनाओं को समझना चाहिए। उपर्युक्त कहानियों में लेखक ने ग्रामीण समाज के वृद्ध जीवन के संघर्षों से हमें अवगत करवाया है। समस्त कहानियां वृद्ध पात्रों के अकेलेपन, गाँव से युवाओं के पलायन, वृद्धो की उपेक्षा, संवेदनाओं और संघर्षों की गाथा बनकर उपस्थित हुई है। जीवन के अनुभवों का रचनात्मकता के साथ गहरा संबंध होता है। एस.आर. हरनोट उन्हीं जीवनानुभवों को उद्घाटित करते चलते है। ग्रामीण समाज के वृद्ध पात्रों, उनकी भाषा, रहन-सहन, पहनावा, दैनिक कार्यकलाप, उनकी समस्याओं और संघर्षों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करते है। हरनोट अपनी कहानियों के माध्यम से युवा पीढ़ी का ध्यान वृद्धों के जीवन संघर्षों की ओर आकृष्ट करना चाहते है, जिस ओर वे अपनी व्यस्तता, स्वार्थपरता, एवं कर्तव्यहीनता के कारण नहीं दे पाते। युवा पीढ़ी को अपनी व्यस्तता के साथ-साथ माता-पिता के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन करना चाहिए।

सन्दर्भ सूची:

1. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-09
2. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-12
3. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-14
4. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-23
5. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-53
6. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-57
7. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-59
8. हरनोट, एस.आर. (2001) दारोश तथा अन्य कहानियां. पंचकूला हरियाणा : आधार प्रकाशन. पृष्ठ सं०-59-60
9. हरनोट, एस.आर. (2019) कीलें. एम.एस. प्रिंटर्स, दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृष्ठ सं०- 65-66
10. हरनोट, एस.आर. (2019) कीलें. एम.एस. प्रिंटर्स, दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृष्ठ सं०- 68
11. हरनोट, एस.आर. (2019) कीलें. एम.एस. प्रिंटर्स, दिल्ली : वाणी प्रकाशन. पृष्ठ सं०- 77

❒❒❒

1. शोध लेखक : कुलदीप कुमार (शोधार्थी) लवली प्रोफ़ेशन यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा पंजाब ।
2. शोध निर्देशिका : डॉ. रीता सिंह असिस्टेंट प्रोफ़ेसर लवली प्रोफ़ेशन यूनिवर्सिटी पंजाब।

भाषा का प्रश्न और राष्ट्रीय शिक्षा नीति

–साकेत बिहारी

स्कूली और उच्च शिक्षा में छात्रों के लिये संस्कृत और अन्य प्राचीन भारतीय भाषाओं का विकल्प उपलब्ध होगा परंतु किसी भी छात्र पर भाषा के चुनाव की कोई बाध्यता नहीं होगी। बधिर छात्रों के लिये राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पाठ्यक्रम सामग्री विकसित की जाएगी तथा भारतीय संकेत भाषा ISL को पूरे देश में मानकीकृत किया जाएगा।

सारांश

स्कूली और उच्च शिक्षा में छात्रों के लिये संस्कृत और अन्य प्राचीन भारतीय भाषाओं का विकल्प उपलब्ध होगा परंतु किसी भी छात्र पर भाषा के चुनाव की कोई बाध्यता नहीं होगी। बधिर छात्रों के लिये राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पाठ्यक्रम सामग्री विकसित की जाएगी तथा भारतीय संकेत भाषा ISL को पूरे देश में मानकीकृत किया जाएगा। NEP-2020 के तहत भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिये एक 'भारतीय अनुवाद और व्याख्या संस्थान' IITI, 'फारसी, पाली और प्राकृत के लिये राष्ट्रीय संस्थान (या संस्थान)' [National Institute (or Institutes) for Pali, Persian and Prakrit] स्थापित करने के साथ उच्च शिक्षण संस्थानों में भाषा विभाग को मज़बूत बनाने एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में अध्यापन के माध्यम से रूप में मातृभाषा/ स्थानीय भाषा को बढ़ावा दिये जाने का सुझाव दिया है।

परिचय

शिक्षा का शाब्दिक अर्थ है सीखने और सिखाने की क्रिया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किसी भी समाज में चलने वाली वह निरंतर प्रक्रिया जिसका उद्देश्य इंसान की आन्तरिक शक्तियों का विकास करना और उसके व्यवहार में सुधार लाना है। शिक्षा का प्राथमिक उद्देश्य ज्ञान और कौशल में वृद्धि कर मनुष्य को योग्य नागरिक बनाना है।

गौरतलब है कि आजादी के बाद भारत में पहली शिक्षा नीति सन 1986 में बनाई गई थी जो मुख्यतः लॉर्ड मैकाले की अंग्रेजी प्रधान शिक्षा नीति पर आधारित थी। इसमें सन् 1992 में कुछ संशोधन भी किए गए किंतु इसका ढांचा मूलतः अंग्रेजी माध्यम शिक्षा पर ही केंद्रित रहा।

आज समय के साथ हमें यह महसूस हुआ कि 1986 की वह

शिक्षा नीति में कुछ खामियां हैं इसके तहत बच्चा ज्ञान तो हासिल कर रहा है किन्तु यह ज्ञान उसके भविष्य में रोजगार के अवसर पैदा करने योग्य नही बन पा रहा है। अतः इन कमियों को दूर करने के लिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लाने की आवश्यकता पड़ी।

नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21वीं शताब्दी की ऐसी पहली शिक्षा नीति है, जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए आने वाले आवश्यकता को पूरा करना है। यह नीति भारत की परंपरा और उसके सांस्कृतिक मूल्यों को बरकरार रखते हुए 21वीं सदी की शिक्षा के लिए आकांक्षात्मक लक्ष्य, जिसके अंतर्गत शिक्षा व्यवस्था उसके नियमों का वर्णन सहित सभी पक्षों के सुधार और पुनर्गठन का प्रस्ताव रखता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति में निहित रचनात्मक क्षमता के विकास पर जोर देती है। यह नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से ना केवल साक्षरता, उच्च स्तर की तार्किक और समस्या समाधान संबंधित संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना चाहिए।

विश्लेषण

नई शिक्षा नीति के निर्माण के लिये जून 2017 में पूर्व इसरो प्रमुख डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था, इस समिति ने मई 2019 में 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मसौदा' प्रस्तुत किया था। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP), 2020' वर्ष 1968 और वर्ष 1986 के बाद स्वतंत्र भारत की तीसरी शिक्षा नीति होगी।

NEP-2020 के तहत केंद्र व राज्य सरकार के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर देश की जीडीपी के 6% हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य रखा गया है।

- नई शिक्षा नीति में वर्तमान में सक्रिय 10+2 के शैक्षिक मॉडल के स्थान पर शैक्षिक पाठ्यक्रम को 5+3+3+4 प्रणाली के आधार पर विभाजित करने की बात कही गई है।
- तकनीकी शिक्षा, भाषाई बाध्यताओं को दूर करने, दिव्यांग छात्रों के लिये शिक्षा को सुगम बनाने आदि के लिये तकनीकी के प्रयोग को बढ़ावा देने पर बल दिया गया है।
- इस शिक्षा नीति में छात्रों में रचनात्मक सोच, तार्किक निर्णय और नवाचार की भावना को प्रोत्साहित करने पर बल दिया गया है।
- कैबिनेट द्वारा 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' का नाम बदल कर 'शिक्षा मंत्रालय' करने को भी मंज़ूरी दी गई है।
- 3 वर्ष से 8 वर्ष की आयु के बच्चों के लिये शैक्षिक पाठ्यक्रम का दो समूहों में विभाजन – 3 वर्ष से 6 वर्ष की आयु के बच्चों के लिये आँगनवाड़ी / बालवाटिका/ प्री-स्कूल के माध्यम से मुफ्त, सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण "प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा" की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- 6 वर्ष से 8 वर्ष तक के बच्चों को प्राथमिक विद्यालयों में कक्षा-1 और 2 में शिक्षा प्रदान की जाएगी।

- प्रारंभिक शिक्षा को बहुस्तरीय खेल और गतिविधि आधारित बनाने को प्राथमिकता दी जाएगी।

NEP-2020 में कक्षा-5 तक की शिक्षा में मातृभाषा/ स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को अध्यापन के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है, साथ ही इस नीति में मातृभाषा को कक्षा-8 और आगे की शिक्षा के लिये प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है। भाषाई विविधता को बढ़ावा और संरक्षण:

- स्कूली और उच्च शिक्षा में छात्रों के लिये संस्कृत और अन्य प्राचीन भारतीय भाषाओं का विकल्प उपलब्ध होगा परंतु किसी भी छात्र पर भाषा के चुनाव की कोई बाध्यता नहीं होगी।
- बधिर छात्रों के लिये राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पाठ्यक्रम सामग्री विकसित की जाएगी तथा भारतीय संकेत भाषा ISL को पूरे देश में मानकीकृत किया जाएगा।
- NEP-2020 के तहत भारतीय भाषाओं के संरक्षण और विकास के लिये एक 'भारतीय अनुवाद और व्याख्या संस्थान' IITI, 'फारसी, पाली और प्राकृत के लिये राष्ट्रीय संस्थान (या संस्थान)' [National Institute (or Institutes) for Pali, Persian and Prakrit] स्थापित करने के साथ उच्च शिक्षण संस्थानों में भाषा विभाग को मज़बूत बनाने एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में अध्यापन के माध्यम से रूप में मातृभाषा/ स्थानीय भाषा को बढ़ावा दिये जाने का सुझाव दिया है।

पाठ्यक्रम और मूल्यांकन:

- इस नीति में प्रस्तावित सुधारों के अनुसार, कला और विज्ञान, व्यावसायिक तथा शैक्षणिक विषयों एवं पाठ्यक्रम व पाठ्येतर गतिविधियों के बीच बहुत अधिक अंतर नहीं होगा।
- कक्षा-6 से ही शैक्षिक पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को शामिल कर दिया जाएगा और इसमें इंटर्नशिप की व्यवस्था भी दी जाएगी।
- 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद' NCERT द्वारा 'स्कूली शिक्षा के लिये राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा' तैयार की जाएगी।
- NEP-2020 में छात्रों के सीखने की प्रगति की बेहतर जानकारी हेतु नियमित और रचनात्मक आकलन प्रणाली को अपनाने का सुझाव दिया गया है। साथ ही इसमें विश्लेषण तथा तार्किक क्षमता एवं सैद्धांतिक स्पष्टता के आकलन को प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है।
- छात्रों के समग्र विकास के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए कक्षा-10 और कक्षा-12 की परीक्षाओं में बदलाव किये जाएंगे। इसमें भविष्य में समेस्टर या बहुविकल्पीय प्रश्न आदि जैसे सुधारों को शामिल किया जा सकता है।
- छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन के लिये मानक-निर्धारक निकाय के रूप में 'परख' नामक एक नए 'राष्ट्रीय आकलन केंद्र' की स्थापना की जाएगी।
- NEP-2020 के तहत उच्च शिक्षण संस्थानों में 'सकल नामांकन अनुपात' (Gross Enrolment Ratio) को 26.3% (वर्ष 2018) से बढ़ाकर 50% तक करने का लक्ष्य रखा गया है, इसके साथ ही

देश के उच्च शिक्षण संस्थानों में 3.5 करोड़ नई सीटों को जोड़ा जाएगा।

- NEP-2020 के तहत स्नातक पाठ्यक्रम में महत्त्वपूर्ण सुधार किया गया है, इसमें मल्टीपल एंट्री एवं एग्जिट व्यवस्था को अपनाया गया है, इसके तहत 3 या 4 वर्ष के स्नातक कार्यक्रम में छात्र कई स्तरों पर पाठ्यक्रम को छोड़ सकेंगे और उन्हें उसी के अनुरूप डिग्री या प्रमाण पत्र दिये जाएंगे–
- 1 वर्ष के बाद प्रमाण पत्र (सर्टिफिकेट)
- 2 वर्ष के बाद डिप्लोमा
- 3 वर्ष के बाद डिग्री
- 4 वर्ष के बाद शोध के साथ स्नातक

विभिन्न उच्च शिक्षण संस्थानों से प्राप्त अंकों या क्रेडिट को डिजिटल रूप से सुरक्षित रखने के लिए एक अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट दिया जाएगा ताकि अलग अलग संस्थानों में छात्रों के प्रदर्शन के आधार पर उन्हें डिग्री प्रदान की जा सकें।

नई शिक्षा नीति के तहत एम.फिल कार्यक्रम को समाप्त कर दिया गया है।

भारत उच्च शिक्षा आयोग

चिकित्सा एवं कानूनी शिक्षा को छोड़कर पूरे उच्च शिक्षा क्षेत्र के लिये एक एकल निकाय के रूप में भारत उच्च शिक्षा आयोग (Higher Education Commission of India-HECI) का गठन किया जाएगा। HECI के कार्यों के प्रभावी और प्रदर्शितापूर्ण निष्पादन के लिये चार संस्थानों/निकायों का निर्धारण किया गया है-

विनियमन हेतु- National Higher Education Regulatory Council- NHERC

मानक निर्धारण- General Education Council- GEC

वितपोषण- Higher Education Grants Council-HEGC

प्रत्यायन- National Accreditation Council- NAC

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आने से पूर्व भारत में 1986 की शिक्षा नीति संचालित थी जिसमें केवल किताबी बातों पर ध्यान दिया जाता था पुराने शिक्षा नीति में कहीं भी इस बात का जिक्र नहीं था कि स्कूल में कक्षा छठवीं से बारहवीं तक अर्जित किया गया ज्ञान भविष्य में कैसे रोजगार सृजन में सहायक होगा। पुरानी शिक्षा नीति पाठ्यक्रम प्रधान थी, जिसमें बचपन से ही बच्चों को अंग्रेजी में पढ़ने लिखने हेतु विवश किया जाता था, जिस कारण बच्चा अपनी मातृभाषा से अनभिज्ञ बना रहा। पहले उच्च शिक्षा ग्रहण करने के दौरान यदि किसी कारणवश बच्चा 1 या 2 साल बाद पढ़ाई बीच में छोड़ता था तो उसका नुकसान होता था। 1 या 2 वर्षों में उसने जो कुछ भी सीखा उसका कोई प्रमाण पत्र प्राप्त नहीं होता था जिसके कारण पुनः डिग्री करने के लिए उसे अपने साल बर्बाद करने पड़ते थे। पहले कंप्यूटर या तकनीकी ज्ञान का अभाव था, बच्चा उच्च शिक्षण संस्थानों में जाकर कोडिंग का ज्ञान लेता था किंतु अब छठी कक्षा से ही बच्चों

को कोडिंग सिखाई जाएगी। NEP-2020 में एक ऐसे पाठ्यक्रम और अध्यापन प्रणाली/विधि के विकास पर बल दिया गया है जिसके तहत पाठ्यक्रम के बोझ को कम करते हुए छात्रों में 21वीं सदी के कौशल के विकास, अनुभव आधारित शिक्षण और तार्किक चिंतन को प्रोत्साहित करने पर विशेष ध्यान दिया जाए। पहले कॉलेज से 3 साल की डिग्री लेने के बाद 2 वर्ष स्नातकोत्तर और फिर 2 वर्ष का एम.फिल उसके बाद 5 वर्ष पीएचडी करने के बाद शोध उपाधि प्राप्त हो पाती थी। किंतु अब एम फिल को समाप्त कर दिया है।

नई शिक्षा

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Education Policy) 2020 में, भाषा एक नकारात्मक कारक है क्योंकि भारत में एक समस्याग्रस्त शिक्षक से छात्र अनुपात है, इसलिए शैक्षणिक संस्थानों में प्रत्येक विषय के लिए मातृभाषा की शुरूआत एक समस्या है। कभी-कभी एक सक्षम शिक्षक ढूंढना एक समस्या बन जाता है और अब NEP 2020 की शुरुआत के साथ एक और चुनौती आती है, जो अध्ययन सामग्री को मातृभाषा में लाना है।
2. 2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (National Education Policy) के अनुसार, जो छात्र स्नातक की पढ़ाई पूरी करना चाहते हैं, उन्हें चार साल की पढ़ाई करनी होगी, जबकि कोई भी आसानी से दो साल में अपना डिप्लोमा पूरा कर सकता है।

   यह छात्र को पाठ्यक्रम को आधा छोड़ने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार, निजी स्कूलों के छात्रों को सरकारी स्कूलों के छात्रों की तुलना में बहुत कम उम्र में अंग्रेजी से परिचित कराया जाएगा। सरकारी स्कूल के छात्रों को संबंधित क्षेत्रीय भाषाओं में शैक्षणिक पाठ्यक्रम पढ़ाया जाएगा।

यह नई शिक्षा नीति की प्रमुख कमियों में से एक है क्योंकि इससे अंग्रेजी में संवाद करने में असहज छात्रों की संख्या में वृद्धि होगी और इस प्रकार समाज के वर्गों के बीच की खाई को चौड़ा किया जा सकेगा।

नई शिक्षा नीति के सकारात्मक परिणाम

- नई शिक्षा नीति में मातृभाषा पर विशेष जोर दिया गया है जिससे बच्चा बचपन से ही अपनी मातृभाषा को अच्छे से समझ और जान पाएगा।
- इस नई नीति के तहत यदि कोई बच्चा अपनी उच्च शिक्षा पूरी कर पाने में असमर्थ है या 3 वर्ष का कोर्स पूरा नहीं कर पाता है तो भी उसका नुकसान नहीं होगा उसे सर्टिफिकेट, डिप्लोमा प्राप्त हो पाएगा। जिसका उपयोग वह रोजगार के क्षेत्र में कर पाएगा।
- छठी कक्षा से ही बच्चों को इंटर्नशिप कराई जाएगी जिससे व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- शिक्षा नीति में कोडिंग को भी शामिल किया गया है, यानी बच्चे मात्र किताबी और व्यावहारिक ज्ञान ही नहीं अपितु तकनीकी क्षेत्र में भी बेहतर प्रदर्शन कर पाएंगे।
- कुल मिलाकर यह नीति बच्चे के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करेगी।

2020 में नई शिक्षा नीति 30 वर्षों के बाद आई और भारत की मौजूदा शैक्षणिक प्रणाली को अकादमिक के अंतरराष्ट्रीय स्तर के बराबर बनाने के उद्देश्य से बदलने के लिए पूरी तरह तैयार है। भारत सरकार का लक्ष्य वर्ष 2040 तक एनईपी की स्थापना करना है। लक्षित वर्ष तक, योजना का मुख्य बिंदु एक-एक करके लागू किया जाना है।

एनईपी 2020 द्वारा प्रस्तावित सुधार केंद्र और राज्य सरकार के सहयोग से लागू होगा। कार्यान्वयन रणनीति पर चर्चा के लिए केंद्र और राज्य दोनों स्तर के मंत्रालयों के साथ विषयवार समितियों का गठन किया जाएगा।

1950 में अपनाए गए संविधान में यह आवश्यक था कि यूनियन के आधिकारिक कामकाज के संचालन (कंडक्ट) के लिए अंग्रेजी और हिंदी का उपयोग 15 साल के समय के लिए किया जाएगा [343(2) और 343(3)]। उस समय के बाद, हिंदी, यूनियन की एकमात्र आधिकारिक बोली बन जाएगी। दक्षिणी राज्यों में, जहां द्रविड़ बोलियां बोली जाती थी, उनसे पर्याप्त प्रतिबंध (रिस्ट्रिक्शन) के आलोक में, अंग्रेजी को हिंदी के साथ प्रतिस्थापित (सप्लांट) करना मुश्किल था। उन्होंने महसूस किया कि केंद्र सरकार दक्षिण सहित पूरे देश को हिंदी का उपयोग करने के लिए मजबूर करने का प्रयास कर रही थी, और उन्होंने अंग्रेजी का उपयोग करना जारी रखा, जिसे उन्होंने इस आधार पर अधिक "पर्याप्त" माना कि, हिंदी की तुलना में, यह कोई विशिष्ट जातीय संस्कृति (स्पेसिफिक एथिनिक कल्चर) के साथ नहीं जुड़ी हुई थी।

संसद ने, 1963 में, ऑफिशियल लैंग्वेजेस एक्ट पास किया, जिसने कानूनी रूप से हिंदी और अंग्रेजी को कांग्रेस के एक हिस्से के रूप में उपयोग की जाने वाली बोलियों के रूप में स्थापित किया, जबकि राज्यों और डोमेन को अपनी औपचारिक (फॉर्मल) भाषा चुनने के लिए छोड़ दिया। 1976 में, ऑफिशियल लैंग्वेज नियम बनाने के लिए एक्ट में बदलाव किया गया, जिसे 1987 में संशोधित (रिवाइज) किया गया।

एक्ट की समरी

ऑफिशियल लैंग्वेजेस एक्ट की धारा 3, अंग्रेजी के उपयोग के लिए 15 साल पुरानी अवधि को नकारती (नीगेट) है। उप-धारा 3 (सब – सेक्शन 3), केंद्र सरकार द्वारा या किसी सेवा, प्रभाग (डिवीजन), कार्यालय या कंपनी द्वारा जारी या किए गए प्रस्तावों, सामान्य अनुरोधों (रिक्वेस्ट्स), नियमों, चेतावनियों, केंद्र सरकार द्वारा जारी की गई या बनाई गई आधिकारिक (अथॉरिटेटिव) या अलग-अलग रिपोर्ट्स या प्रेस डिस्चार्जेस में दोनों बोलियों, हिंदी और अंग्रेजी के उपयोग (यूटिलाइजेशन) की अनुमति देता है। धारा 3 की उपधारा 5 में यह कहा गया है कि जब तक उन राज्यों की विधायिका (लेजिस्लेचर्स), जिन्होंने आधिकारिक रूप से अंग्रेजी भाषा को नहीं अपनाया है, एक्ट द्वारा निर्धारित (लेड डाउन) उद्देश्यों के लिए अंग्रेजी के उपयोग को रोकने के लिए एक प्रस्ताव पास नहीं करते हैं, तब तक यह प्रावधान लागू रहेंगे।

इस एक्ट की धारा 5 में यह कहा गया है कि सरकारी एक्ट्स के हिंदी अनुवाद को अंग्रेजी वर्जन का अंतिम रूप माना जाएगा। इस प्रकार ऑफिशियल लैंग्वेजेस एक्ट, अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी के प्रयोग को बल प्रदान करता हुआ प्रतीत होता है। एक्ट की धारा 6 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जब किसी राज्य की विधानसभा (असेंबली) द्वारा पास एक्ट्स के लिए हिंदी के अलावा कोई अन्य भाषा निर्धारित (प्रेस्क्राइब)

की जाती है, तो अंग्रेजी व्याख्या (इंटरप्रेटेशन) के साथ हिंदी में एक समान व्याख्या पब्लिश की जाएगी, और हिंदी वर्जन को अंतिम माना जाएगा।

ऑफिशियल लैंग्वेजेस एक्ट की धारा 7 के तहत, किसी राज्य के राज्यपाल (गवर्नर) (जम्मू और कश्मीर को छोड़कर), राष्ट्रपति की पूर्व सहमति के साथ, किसी भी कारण से अंग्रेजी के बावजूद, हिंदी या राज्य की आधिकारिक बोली को, उस राज्य के लिए हाई कोर्ट द्वारा पास किए गए निर्णय, घोषणा या अनुरोध और उस बोली (अंग्रेजी के अलावा) में पास किए गए किसी भी निर्णय, घोषणा या अनुरोध के लिए, उपयोग को मंजूरी दे सकते हैं।

विषय (थीम्स)

तीन भाषा सूत्र (थ्री लैंग्वेज फॉर्मूला)

तीन भाषा सूत्र एक नीति है, जिसे 1968 के नेशनल पॉलिसी रेजोल्यूशन में भारत सरकार के एजुकेशन मिनिस्ट्री द्वारा तैयार किया गया था। यह प्रावधान करता है कि भारत भर के सभी सरकारी स्कूलों में तीन भाषाओं को पढ़ाया जाना चाहिए:

- अंग्रेजी, एक जरुरी भाषा के रूप में;
- हिंदी, हिंदी भाषी राज्यों और गैर-हिंदी भाषी राज्यों में यह भाषा जरूरी है; और
- तीसरी भाषा उस क्षेत्र की स्थानीय भाषा होगी, जहां वह स्कूल स्थित होगा।

राज्यों और उनकी अपनी आधिकारिक और स्थानीय भाषाओं के आधार पर भारत में तीन भाषा सूत्र ने कई रूप लिए हैं। जबकि हिंदी और अंग्रेजी सभी के लिए समान हैं, वह उस विशेष राज्य की सरकार के अनुसार पहली भाषा से दूसरी और तीसरी भाषा में बदल जाती हैं। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल की स्थानीय बोली बंगाली, मलयाली या तमिल की तुलना में हिंदी के सबसे करीब है, इसलिए वहां की सरकार ने हिंदी बिल्कुल न पढ़ाने का फैसला किया है, क्योंकि वे बंगाली को सांस्कृतिक (कल्चरल) रूप से अधिक समृद्ध (रिच) भाषा मानते थे। हालांकि, केरल में हिन्दी और स्थानीय भाषा के बीच भारी अंतर के बावजूद हिंदी को एक भाषा के रूप में सीखना अनिवार्य कर दिया गया था।

तीन भाषा सूत्र का मूल (बेसिक) उद्देश्य, हिंदी और अंग्रेजी को राष्ट्रीय भाषाओं के रूप में व्यापक रूप से जागरूक करने के अलावा, देश भर में बच्चों में बहुभाषावाद (मल्टीलिंगुअलिज्म) को बढ़ाने का अस्पष्ट (ऑब्सक्योर) उद्देश्य भी यही था। बहुभाषावाद, जैसा कि वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है, न केवल एक बच्चे के क्षितिज (होराइजन) को विस्तृत (ब्रोडेन) करता है, बल्कि उन्हें अधिक रचनात्मक (क्रिएटिव) और अधिक सामाजिक रूप से सहिष्णु (टॉलरेंट) बनने के लिए भी तैयार करता है।

भारत में भाषा नीति (लैंग्वेज पॉलिसी इन इंडिया)

जब हम भारत की भाषा नीति के बारे में बात करते हैं, तो सबसे पहले जिस बात का उल्लेख (मेंशन) किया जाता है वह है किसी देश की राष्ट्रीय भाषा और आधिकारिक भाषा के बीच का अंतर। जहां एक तरफ राष्ट्रीय भाषा का मतलब उस भाषा से है जो सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में सबसे

व्यापक रूप से उपयोग की जाती है, वहीं दूसरी तरफ आधिकारिक भाषा का मतलब यह है की जिसका उपयोग सरकार के सभी कार्यों के लिए किया जाता है। आधिकारिक भाषा व्यावहारिक (प्रैगमैटिक) है और राष्ट्रभाषा केवल प्रतीकात्मक (सिंबॉलिक) है।

हिंदी, जिसका प्रयोग आज तक किया जाता है, उसे राष्ट्रीय भाषा के रूप में माना जाता है क्योंकि यह एकमात्र ऐसी भाषा है जो राज्य या क्षेत्र-विशिष्ट (रीजन-स्पेसिफिक) नहीं है। हालाँकि, भारत के संविधान के अनुसार, केवल हिंदी ही भारत की आधिकारिक भाषा है।

इन दो आंशिक (पार्शियल) रूप से "आधिकारिक" भाषाओं के अलावा भारत के जनगणना (सेंसस) रिकॉर्ड के अनुसार देश भर में 112 भाषाएँ हैं जो पूरे देश में प्रचलित (प्रीवेलेंट्र) हैं। फिर भी, उनमें से केवल 22 ही 8वें शेड्यूल का हिस्सा हैं, जिसका अर्थ है कि कुल 114 बोलियों में से केवल 24 को ही राष्ट्रीय भाषाओं के रूप में मान्यता (रिकॉग्निशन) प्राप्त है। हालाँकि ये 22 भाषाएँ सभी अलग-अलग भाषा परिवारों से आतीं हैं, फिर भी हिंदी को छोड़कर, 'भीली' जैसी कई भाषाएँ हैं जो भारत में सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली जाती हैं, जिन्हें लिस्ट में शामिल किया जाना चाहिए। ऐसी अन्य बोलियों के बीच 'भीली' के बाहर होने का एकमात्र संभावित (लाइकली) कारण राजनीतिक हस्तक्षेप (इंटरफेरेंस) है।

शिक्षा नीति और भाषा नीति (एजुकेशन पॉलिसी एंड लैंग्वेज पॉलिसी)

भारतीय शिक्षा प्रणाली (सिस्टम) शब्द के हर भाव (सेंस) में अपने हाव-भाव से बहुभाषी है। मुंबई में प्राइमरी स्कूलों में नौ अलग-अलग भाषाओं का इस्तेमाल किया जाता है, और कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में 8 और 14 भाषाओं का इस्तेमाल किया जाता है। अधिकांश राज्यों, जैसा कि स्वतंत्रता के समय शिक्षा नीति निर्माताओं (मेकर्स) का लक्ष्य था, उनका उद्देश्य प्रणाली में बहुभाषा के इस्तेमाल को विकसित और मजबूत करना है।

हालाँकि, तीन भाषा प्रणाली को काम में लाने में कई समस्याएं हैं। यह सूत्र किसी छात्र की मातृभाषा या घरेलू बोली को संदर्भित (रेफर) नहीं करता है, जो दोनों बच्चे के संज्ञानात्मक (कॉग्निटिव) विकास के लिए अनिवार्य हैं। साथ ही, कई राज्यों ने सूत्र को केवल आंशिक रूप से लागू किया है, तीन के बजाय केवल दो भाषाओं को चुनने का विकल्प चुना है, जिनमें ज्यादातर अंग्रेजी और हिंदी शामिल हैं। ज्यादातर हिंदी भाषी राज्यों में संस्कृत जैसी शास्त्रीय (क्लासिकल) भाषाओं का अस्तित्व (एक्सिस्टेंस) दुर्लभ (स्कार्स) है। हालाँकि 8वें शेड्यूल का विस्तार अधिक भाषाओं को शामिल करने के लिए किया गया था, लेकिन भाषाओं के संबंध में शिक्षा प्रणाली लगभग समान ही रही है।

निष्कर्ष (कंक्लूजन)

यह भारतीय मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली है जो सभी को उच्च्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराकर और भारत को वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाकर भारत को एक जीवंत बनाए समाज में बदलने के लिए प्रत्यक्ष रूप से योगदान करेगी। इस नीति में परिकल्पित है हमारे संस्थानों की पाठ्य चर्चा और शिक्षा विधि जो छात्रों में अपने मौलिक दायित्व और संवैधानिक मूल्य देश के साथ जुड़ाव और बदलते विश्व में नागरिक की भूमिका के उत्तरदायित्व की जागरूकता उत्पन्न करें। इस नीति का विजन है छात्रों में, भारतीय

होने का गर्व, केवल विचार में नहीं बल्कि व्यवहार, बुद्धि और कार्यों में भी रहे ; साथ ही ज्ञान, कौशल, मूल्यों और सोच में भी होना चाहिए। जो मानव अधिकार हो स्थाई विकास और जीवन यापन तथा वैश्विक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हो ताकि वह सही मायने में एक योग्य नागरिक बन सकें।

भारत में भाषा नीति मुख्य रूप से ऑफिशियल लैंग्वेजेस एक्ट, 1963 पर निर्भर है। कोठारी कमिशन ने एक आम 'आधिकारिक' भाषा, जो उस समय हिंदी थी, के माध्यम से देश की विविध संस्कृतियों और बोलियों को एक करने के उद्देश्य से भाषा नीतियां तैयार की थीं। हालाँकि, तीन भाषा सूत्र और भाषाओं के संबंध में भारत की शिक्षा नीति की विफलताओं के कारण मूल उद्देश्य, अब अंग्रेजी और हिंदी दोनों को अर्ध-आधिकारिक भाषाओं के रूप में बदलने का है। वास्तविक नीति में कमियों के लिए उक्त नीतियों को लागू करने में कई राज्यों द्वारा प्रतिरोध (रेसिस्टेंस) से, लैंग्वेज कमिशन द्वारा पाया गया समाधान एक प्रकार का अस्थायी (टेंपरेरी) और उपचारात्मक (रेमेडियल) उपाय था (जो 10 वर्षों के लिए अंग्रेजी के उपयोग की अनुमति देता है) जिसे, आज की जरूरतों और उद्देश्यों के अनुरूप अधिक अचूक (इनफॉलिबल) और निरंतर नीति खोजने के बजाय, लगातार बढ़ाया और इस्तेमाल किया गया है।

संदर्भ

1. Dravidian languages". Encyclopædia Britannica Online. Retrieved 10 December 2014.
2. "There's no national language in India: Gujarat High Court". The Times of India. Retrieved 5 May 2014.
3. Sisir Kumar; A History of Indian Literature, 500-1399: From Courtly to the Popular, pp.140-141, Sahitya Akademi, 2005, New Delhi.
4. "Indian Education Commission 1964-66". PB Works. 2015. Retrieved June 20, 2015.
5. Introduction to Education Commissions 1964-66. Krishna Kanta Handiqui State Open University. 2015. Retrieved June 18, 2015.
6. "Board of Higher Secondary Education". Board of Higher Secondary Education. 2015. Retrieved June 21, 2015.
7. "National Policy on Education 1968" (PDF). Ministry of Human Resource Development, Government of India. 2015. Retrieved June 21, 2015.

❑❑❑

1. शोधार्थी, हिंदी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोध गया

कोंदर जनजाति की सामाजिक स्थिति का समाजशा-स्त्रीय अध्ययन

–दिगंत द्विवेदी

भारत सरकार एवं राज्य सरकार विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनाओं के लिए अनुदान प्रदान करती है। यह अनुदान सरकार द्वारा अनुमोदित कार्यक्रमों और योजनाओं के क्रियान्वयन में सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं-संगठनों को प्रदान किया जाता है।

शोध सार

न्याय का संवैधानिक ध्येय कोंदर जनजाति, महिलाओं, आदिम जनजाति, पिछड़े व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति का स्मरण करते हुए पूरा नहीं हो पाया है। परिवारों एवं सामाजिक क्षेत्रों और कार्य क्षेत्रों पर लिंग भेद या जातिभेद आम बात है। कोंदर जनजाति के व्यक्ति आधुनिक समाज के साथ चलना चाहते हैं और अपने समाज का सामाजिक उत्थान भी चाहते हैं। जिसके लिये वह निरंतर प्रयासरत रहते है। यह बात सोचनीय है कि आधुनिक समाज के विकास की क्रिया के समान उनके विकास का लाभ कोंदर समाज को प्राप्त नहीं हो पा रहा है। जबकि उनके विकास के लिए बनाई गई सरकारी योजना कोंदर समाज के विकास के लिए ही हैं। सरकार और विभागों द्वारा बनाए गए कार्यक्रम को लागू करने में अधिक खर्चा भी किया जा रहा है। परंतु कोंदर समाज की मूलभूत वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सरकार और विभाग असफल रहा है।

आदिम जनजातियों के लिए बनाई गई योजनाएं एवं कार्यक्रम के क्रियान्वयन में स्वतंत्रता, आधुनिकता और लचीलापन चाहिए और इसके साथ सरकार द्वारा चलाए कार्यक्रम में अनैतिकता, शिथिलता और बर्बादी को समाप्त करने पर जोर देना चाहिए। 'जनजाति समाज के लिए कार्य करने वाली संस्था या एनजीओ के अनुभव का सरकार लाभ उठाएं और इन संस्था या एनजीओ की इच्छा है कि सरकार द्वारा जनजाति समाज के विकास कार्य में साथ रहकर सहयोग करें।' इसलिए इन संस्थाओं या एनजीओ एवं सरकारों के मध्य एक मजबूत संबंध की वास्तविक आवश्यकता है। यह संबंध सरल, पारदर्शी ,स्पष्ट तथा कार्यों के प्रति पूर्ण समर्पित होना आवश्यक है।

मुख्य बिंदु कोंदर जनजाति के विकास उन्मूलन कार्यक्रम, वास्तविक आवश्यकताएं, योजना, संबंधित विभागों की आवश्यकतायें, राज्य सरकारों की कोंदर जनजाति से संबंधित वास्तविक आवश्यकताएं

राज्य और केंद्र सरकारों के विकास कार्य कार्यक्रम और मानव सहायता के कार्य में एनजीओ या संस्थाओं की भागीदारी संबंधित योजना और कार्यक्रम को प्रोत्साहित कर रही है। सरकार द्वारा अपने बजट का एक बड़ा हिस्सा जनजाति समाज के विकास के लिए संस्था और एनजीओ की सहायता से खर्च किया जाता है। परंतु ध्यान देने योग्य है कि यह धन ईमानदारी मितव्ययिता और कुशलता के साथ बिना भ्रष्टाचार हुए खर्च किया जाए और जनजाति समाज को इसका लाभ मिल सके।

भारत सरकार एवं राज्य सरकार विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनाओं के लिए अनुदान प्रदान करती है। यह अनुदान सरकार द्वारा अनुमोदित कार्यक्रमों और योजनाओं के क्रियान्वयन में सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं-संगठनों को प्रदान किया जाता है। सामान्यतः यह अनुदान वित्तीय नियम 2005 के नियम 2006 से 2015 तक प्रदत्त नियमों के उपबंध के अनुसार होता है। साथ ही विकास से संबंधित कार्यक्रमों और योजनाओं का क्रियान्वयन करने वाले नियमों और अनुदान के नियम के अनुरूप होती हैं। इनमें से कुछ विशिष्ट नियम और शर्तें यह हैं।

1 एजेंसी और सामुदायिक संगठन सोसाइटीज पंजीकरण अधिनियम 1860, सहकारी समिति अधिनियम, चैरिटेबल ट्रस्ट अधिनियम किसी कानून के अंतर्गत पंजीकृत हों।

2 अनुदान प्राप्त करने वाला संगठन प्रतिष्ठित और पंजीकृत हो, उस संगठन के कार्यों को सरकार द्वारा संतोषजनक बताया गया हो।

3 एनजीओ की स्थापना समुचित रूप से की जाए एवं यह व्यापक आधार से ओतप्रोत हो। प्रबंध और कार्यकारी समिति के कर्तव्यों, दायित्वों और आधारों का लिखित संविधान में स्पष्ट रूप से वर्णित होना चाहिए।

4 अनुदान प्राप्त करने के पूर्व किसी भी संगठन को कम से कम 3 वर्षों तक समाज के कल्याण और विकास के लिए कार्य किया हो।

5 संगठन का कार्य और सेवा, धर्म, जाति और नस्ल का विभेद न कर समाज के सभी वर्गों के लिए समान होना चाहिए3।

6 एनजीओ आर्थिक रूप से सुदृढ़ हो। इनके पास अनुसंधान, कर्मिक कार्यों के संपादन के लिए पर्याप्त सुविधा और कोंदर जनजाति के कुशल कर्मचारी हो, जिसके लिए उन्हें अनुदान प्राप्त हो।

7 एनजीओ को व्यक्तिगत या किसी विशेष समूह को लाभ देने के लिये परिचालित नहीं करना चाहिये।

8 एनजीओ को बंधनपत्र भरना अनिवार्य हो अगर वह अनुदान प्राप्त करना चाहता है। अगर बंधनपत्र की शर्तों का पालन न होने पर अनुदान को वापिस करना होगा।

9 एनजीओ को बंधन पत्र भरना होगा। इसका आशय यह होगा। अनुदान प्राप्त करने के लिये अनुदान के नियमों का पालन न होने पर अनुदान राशि देनी होगी।

10 एनजीओ को अनुदान मिलने पर एनजीओ की कार्यप्रणाली और उद्देश्यों का किसी भी समय निरीक्षण किया जा सकता है।

11 एनजीओ अंशदान लेने में और संसाधन को एकत्रित करने के लिए स्वयं समर्थ हो।

12 अनुदान में प्राप्त राशि का सही प्रयोजन में खर्च होनी चाहिए।

कोंदर जनजाति के लिये केंद्र सरकार द्वारा बागवानी बोर्ड द्वारा योजनाएं लागू है जिससे कोंदर जनजाति को लाभ मिल सके। बागवानी बोर्ड द्वारा संचालित योजना या कार्यक्रम कृषि मंत्रालय, सहकारिता और कृषि विभाग, एनएचबी के निदेशक मंडल और भारत सरकार के निरीक्षण के अंतर्गत योजनाओं का संपादन करती हैं।

1 योजना के अंतर्गत लाए क्षेत्रों का आधुनिक विकास और अपनी कार्यरूपरेखा से उस क्षेत्र को विशिष्ट बनाना होता है।

2 परियोजना के महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में समूह को सुविधाओं में आधुनिक कृषि और प्रबंधन का क्षेत्र विस्तार परियोजनाओं में विकास करना।

3 कोल्ड चेन ढांचे का विकास उद्देश्य बागवानी उन्नत में एकत्र ऊर्जा की बचत करने का विकास।

4 आधुनिक समय की प्रौघोगिकी औजार और नई तकनीकों का आकलन कर उसको वाणिज्यिकरण में सम्मिलित करना।

5 अच्छे किस्म के पौधों के लिए कलम लगाकर पौधों और जड़ों के लिये मदर प्लांट, भंडारण बैंक एवं नर्सरी की स्थापना करना।

6 नर्सरी को मान्यता दिलाने एवं रेटिंग कर और सामग्री की उपलब्धता कर आयात करने में सहायता प्रदान करना।

7 विपणन के विकास के लिये एवं बागवानी उपज के कार्यों को प्रोत्साहित करना।

8 आधुनिक पौधों की सामग्री का आयात और अन्य कृषि उत्पादनओं को आईएनएम, आईएचएम और पीएचएम प्रोटोकॉल द्वारा खेतों का परीक्षण करवाने हेतु प्रोत्साहित करना और अनुसंधान और विकास योजना का वाणिज्यिकरण द्वारा निर्धारण होना चाहिए।

9 पीएचएम प्रोटोकॉल्स द्वारा निर्धारित विकास एवं अनुसंधान करना।

10 कुशल कोंदर जनजाति के व्यक्तियों में बागवानी, उपज भंडारण एवं उत्पाद के उपभोग का नई पद्धति द्वारा उपयोग करने के लिए प्रोत्साहन करना।

11 कृषि क्षेत्रों और उद्यानों में सुविधा केंद्रों का निर्माण करना।

12 मार्केट के बारे में डाटा प्राप्त करने के लिए आंकड़ों का विकास कर और एकत्र करने की प्रणाली को मजबूत करना।

13 समस्याओं का पता लगाकर उनका सर्वेक्षण और अध्ययन करना एवं बागवानी के विकास के लिए दीर्घ और लघु नीतियों का विकास करना एवं परामर्श और सलाहकारी सेवाओं सहित आधुनिक सेवाओं को एकत्र करना।

जिसे तालिका 1.1 द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक-1.1

आवेदन की लागत का ढांचा

आवेदन की लागत	डिमांड ड्राफ्ट और वर्ग	क्रेडिट या डेबिट कार्ड (वीजा/मास्टर)
परियोजना के लिये 10 लाख रुपए तक लागत	1000 रुपए	1000 रुपए की अदायगी के लिये लगने वाला प्रभार अतिरिक्त होगा
10 लाख रुपए से अधिक और 20 लाख रुपए तक की लागत वाली परियोजना।	2000 रुपए	2000 रुपए की अदायगी के लिये लगने वाला प्रभार अतिरिक्त होगा
20 लाख रुपए से अधिक और 50 लाख रुपए तक की लागत वाली परियोजना।	5000 रुपए	5000 रुपए की अदायगी के लिये लगने वाला प्रभार अतिरिक्त होगा
20 लाख रुपए से अधिक की लागत वाली परियोजना	10000 रुपए	10000 रुपए की अदायगी के लिये लगने वाला प्रभार अतिरिक्त होगा

स्रोत - आदिमजाति कल्याण विभाग सांख्यिकी पत्रिका

कोंदर जनजाति के लिये केंद्रीय बागवानी बोर्ड की योजना उपयोगी एवं उचित है। इन योजनाओं के द्वारा कई प्रकार की हाईटेक वाणिज्य उत्पादन को अधिक मात्रा में बढ़ाया जा सकता है। जिससे कोंदर व्यक्तियों को लाभ मिल सके।

सन्दर्भ:

1. डॉक्टर एस एम जैन एवं डॉक्टर चतुर्भुज मामोरिया ,साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा संस्करण 1997, पृष्ठ 193
2. डॉक्टर एस एम जैन एवं डॉक्टर चतुर्भुज मामोरिया, साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा संस्करण 1997, पृष्ठ 69-70
3. डॉक्टर प्रमिला कुमार, मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2003, पृष्ठ1
4. सामान्य अध्ययन , मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2004, पृष्ठ 191
5. Janjatiya Samaj, Kailash Pustak Sadan, Bhopal(M.P.), 2019
6. स्रोत - आदिमजाति कल्याण विभाग सांख्यिकी पत्रिका
7. शरण, आर, भारतीय सभ्यता एवं भारतीय संस्कृति का इतिहास, राधा पब्लिशर्स नई दिल्ली 2002
8. दिनकर सिंह रामधारी, संस्कृति के चार अध्याय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
9. महाजन डॉ. धर्मवीर, महाजन डॉ. कमलेश, नातेदार, विवाह एवं परिवार का समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन नई दिल्ली 2014
10. महाजन डॉ. धर्मवीर, महाजन डॉ. कमलेश, अपराध एवं समाज, विवके प्रकाशन नई दिल्ली 2013
11. गुप्ता एल.एम., शर्मा डी.डी. भारतीय सामाजिक समस्याऐं, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा 2010
12. छापडिया मनोज, अग्रवाल के.जी., जनजातीय समाज का समाजशास्त्र, एसपी. वी.डी. पब्लिशिंग हाउस, आगरा, 2012

❒❒❒

1. शोध छात्र (समाजषास्त्र) श्री कृष्णा विश्वविद्यालय छतरपुर (मध्य प्रदेश)

वैश्विक पटल पर भाषा का प्रश्न और हिंदी भाषा की स्थिति

–डॉ. नलिनी सिंह

हिंदी शब्द के सम्बन्ध में प्राय: यही अनुमानित व ध्वनित होता था कि इसका सम्बन्ध भारत में रहने वालों से है, जिसका अर्थ कभी देशपरक रहा, तो कभी वस्तुपरक। दूरस्थ देशों में इसका सम्बन्ध देश के सम्बन्ध को ही दर्शाता है। 8वीं शताब्दी में ऐसा प्राय: समझा गया है। फारसी लेखक ग्रियर्सन के अनुसार "फारसी के लेखक भारत के निवासियों को हिंदी कहते थें"।

भाषा का प्रश्न अहम् है, भाषा का सम्बन्ध अस्तित्व से भी है, भाषायी अस्मिता से तात्पर्य है, भाषा बोलने वालों की अपनी पहचान। 'अस्मिता' शब्द के सन्दर्भ में डॉ० नामवर सिंह का कथन है कि- "हिंदी में अस्मिता शब्द पहले नहीं था। 1947 से पहले की किताबों में मुझे मिला और संस्कृत में भी अस्मिता का यह अर्थ नहीं है", तात्पर्य यह है कि प्रत्येक राष्ट्र के विकास के लिए उसके सम्मान के लिए राष्ट्र की भाषा का उन्नत होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य होता है क्योंकि प्रत्येक राज्य अथवा राष्ट्र और समूह की भाषा एक दूसरे से पृथक होती है। किसी भी राष्ट्र की तत्कालीन परिस्थिति, सभ्यता व संस्कृति, शिक्षा एवं अशिक्षा के बारे में यदि जानना हो तो सर्वप्रथम भाषा की आवश्यकता पड़ती है, इस तरह राष्ट्रीय अस्मिता और भाषा का भी अन्तः सम्बन्ध है। इसी को आधार बना कर प्रत्येक राज्यों का गठन भाषा के ही आधार पर किया गया है। इसके साथ प्रत्येक राज्य के सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश का प्रभाव भी भाषा पर पड़ता है। सामाजिक, सांस्कृतिक समुदाय का प्रभाव भी भाषा के अस्तित्व पर दिखायी पड़ता है। वस्तुतः अस्मिता के निर्माणक तत्वों में ऐतिहासिक परिवर्तन एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। इन ऐतिहासिक परिवर्तनों का प्रभाव सर्वप्रथम व्यक्ति पर, तत्पश्चात् सम्पूर्ण समाज पर पड़ने लगता है। परम्परागत रूप में देखें तो 'अस्मिता' का आधार वर्ग, समाज, जाति और आपसी सम्बन्ध रहे है। जिसका सम्बन्ध 'स्व' से है, स्वसम्मान, स्वपरिचय, स्वाभिमान से है। जिसका सर्वप्रथम उपयोग सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयायन 'अज्ञेय' ने किया। इस तरह 'अस्मिता' का सम्बन्ध हिंदी साहित्य में भी देखा गया। हिंदी भाषा की स्थिति वैश्विक पटल पर समृद्धि की ओर है किन्तु अभी बहुत कुछ शेष है, अभी कई चुनौतियां ऐसी हैं जिससे हिंदी भाषा को गुजरना होगा। इसी को दृष्टि में रखकर शोध पत्र को विस्तार दिया गया है।

बीज शब्दः अस्तित्व, संघर्ष, चुनौती, स्थिति, चिन्तन, क्रियान्वयन।

"भारत की निरंतर विकासमान अन्तर्राष्ट्रीय हैसियत और इसकी बढ़ती एक व्यावसायिक पहचान हिंदी को एक वृहत्तर भूमिका से संबद्ध कर रही है"।[1] हिंदी अपनी जययात्रा पर चल पड़ी है, कई पड़ावों पर हिंदी ने विजय प्राप्त भी कर लिया है। हिंदी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं की तरफ भी लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ है। किसी देश-विदेश की भाषा का सम्बन्ध उसके सम्मान से जुड़ा हुआ है, फिर चाहे वह भाषा संस्कृति विशेष को दर्शाती हो, या वह भाषा अभिव्यक्ति के माध्यम के साथ-साथ बाजार और रोजगार की आवश्यकता बन रही हो; पिछले कुछ दशकों से "हिंदी के कदम और अधिक मजबूती से आगे बढ़ रहे है"।[2]

वैश्विक स्तर पर हिंदी, बाजार की भाषा भी बन गई है, बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा हिंदी में स्लोगन प्रसारित करना, साफ्टवेयर तैयार करना, हिंदी वेबसाइट्स का विकास करना, इनका प्रमाण है कि हिंदी अपना परचम लहरा रही है, जहाँ हिंदी संवेदना की सीमाओं से निकल कर अभिव्यक्ति का साधन बन रही है, और व्यवहृत हो रही है। "हिंदी ने बहुत संघर्ष कर धीरे-धीरे लोकायतन में अपनी जगह बनाते हुए साहित्य, शिक्षा और समाचार प्रसार के क्षेत्र में अपना विस्तार किया"।[3]

'हिंदी, हिन्दू, हिन्दुस्तान' जैसे शब्द गौरव बोध की प्रतीक बन गए, जिनका प्रयोग आज से नहीं हो रहा है, इसकी पृष्ठभूमि ही इसके अस्तित्व का प्रमाण है।

भाषा के अर्थ में हिंदी के प्रयोग का सम्बन्ध-

हिंदी शब्द के सम्बन्ध में प्रायः यही अनुमानित व ध्वनित होता था कि इसका सम्बन्ध भारत में रहने वालों से है, जिसका अर्थ कभी देशपरक रहा, तो कभी वस्तुपरक। दूरस्थ देशों में इसका सम्बन्ध देश के सम्बन्ध को ही दर्शाता है। 8वीं शताब्दी में ऐसा प्रायः समझा गया है। फारसी लेखक ग्रियर्सन के अनुसार "फारसी के लेखक भारत के निवासियों को हिंदी कहते थें"।[3] हिंदी शब्द का प्रयोग देश से सम्बद्ध करके आत्मगौरव व आत्मसम्मान से जोड़कर किया गया है। प्रसिद्ध कवि इकबाल की पंक्तियां इस बात को चरितार्थ भी करती हैं-"सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्ता हमारा........ हिन्दी हैं हम, वतन है हिन्दोस्तां हमारा" ऐसा जो देश से सम्बन्ध है। इस शब्द का प्रयोग अमीर खुसरों ने भी किया। हिंदी को वस्तुपरक अर्थ में भी प्रयोग में लाया गया। वस्तु के सामने हिंद लगा कर बोलने और लिखने की परम्परा रही है जैसे, तेग-ए-हिन्द तलवार के लिए प्रयुक्त किया गया। इसी तरह साज-ए-हिन्द (तेजपत्ता के लिए), तमर-ए-हिन्द (इमली के लिए) प्रयोग किया गया। स्पष्ट है कि उक्त शब्द का निहितार्थ महत्त्वपूर्ण और उद्देश्यपूर्ण रहा है।

विश्व की तीसरी भाषा हिन्दी के वैश्विक पहचान के सन्दर्भ में लोग बँटे हुए हैं, कुछ लोग इसके उन्नत स्वरूप को स्वीकार कर रहे हैं, तो कुछ लोग इसके वर्चस्व और स्वरूप में ठहराव की स्थिति देखते है। "हिन्दी हृदय की भाषा है। हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाना उसकी आत्मा को प्रतिष्ठा देना है"। महात्मा गांधी के इस विचार से अधिकांश सहमत होंगे, लेकिन समस्या वहां है जहां लोग असहमत है। निज भाषा, परिवेश और उपादान की तरह कार्य करती है, जब भाषा अपने सदन में दूसरे भाषा को आने की छूट देती तो दोनों सदन में विकार उत्पन्न होता है। परम्परा को छोड़कर आयातित विचार से साहित्य सर्जन होने लगे तो भाषा के स्वरूपगत ढाँचे में भावभूमि के स्तर पर, सम्प्रेषणीयता के स्तर पर परिवर्तन स्पष्ट दिखायी देता है, ऐसी

ही स्थिति हिन्दी की हुई। हिन्दी को 'क्रियोल लैंग्वेज' कहा जाने लगा। अंग्रेजी से हिन्दी को विस्थापित कर दिया गया है। अंग्रेजी का प्रभाव इतना बढ़ गया कि निज भाषा की अहमियत भारतीयों के लिए कोई मायने नहीं रखती। संभवत यही वजह है कि आज तक हिन्दी राष्ट्रभाषा बनने से वंचित है। निज भाषा को छोड़ कर दूसरी भाषा को अपनाना पूरी तरह से दूसरी दुनियां को अपनाना है।

"भाषा एक वृहद सांस्कृतिक प्रक्रिया है"।[4] भाषा की सांस्कृतिक प्रक्रिया न तो किसी शून्य में जन्म लेती है और न किसी शून्य में आकार ग्रहण करती है, वह मनुष्य के अपने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक क्रिया-कलापों की जरूरतों से निर्मित होती है, परिवर्तित होती है, इस तरह भौतिक जीवन में आया बदलाव उसके भाषायी रूप में बदलाव लाता है"।[5] फिर भी आयातित भाषा के प्रभाव में आकर "यदि हम हिन्दी जानते हैं और हिन्दी नहीं बोलते है तो हम राजद्रोह करते है" ((मदनमोहन मालवीय)। निज भाषा में विचाराभिव्यक्ति गौरव बोध से सम्बद्ध है। भाषिक स्वराज पर चलने के लिए अपनी भाषा को राजपथ पर लाने के लिए प्रयत्न करना अपेक्षित है। भाषा एक दूसरे तक हस्तान्तरित होती है, चूंकि भारत बहुभाषिक देश है अतः आयातित शब्दों का सम्मिश्रण स्वाभाविक है, लेकिन जब भाषा का वास्तविक स्वरूप विलुप्त होने लगे तो समस्या कही जाएगी। अंग्रेजी एक विजातीय भाषा है, लेकिन इस विजातीय भाषा के साथ तालमेल बनाने के लिए हिन्दी पट्टी के लोग बहुत उत्सुक रहते है। दो विचार आज भी प्रमुखता से सामने आते है, जिनमें विरोधाभास है, एक तो यह कि हिंदी संकट में है क्योंकि भारत में अंग्रेजी का प्रभुत्व बढ़ रहा है, अंग्रेजी बोलना, लिखना, पढ़ना, समाज में बेहतर स्थिति और रोजगार की बहुत बड़ी योग्यता है, इसलिए हिन्दी को वह जगह नहीं मिल पा रही है, जिसकी वह हकदार है, हो सकता है कि शिक्षा के प्रसार और आर्थिक सम्पन्नता के बढ़ने की वजह से हिंदी बिल्कुल ही हाशिए पर पहुंच जाए। दूसरा विचार यह कि हिन्दी तेजी से फल-फूल रही है। "अर्थव्यवस्था और उदारीकरण के बाद लोकप्रिय जनसंचार माध्यमों में हिन्दी का जितनी तेजी से प्रचार हुआ वह इसका प्रमाण है"।[6] हिन्दी बोलने वालों की तादाद बढ़ रही है। अब वे लोग भी हिन्दी बोलने के लिए मजबूर हो रहे है, जो पहले इसे हिकारत से देखते थे"।[7] यह सच भी है कि कुछ लोग हिन्दी के प्रति गौरव का अनुभव करते हैं, तो कुछ हीनता से ग्रस्त हैं और कुछ लोग आकृष्ट होते है उनमें इसे सीखने की ललक भी होती है। "अब हिन्दी की स्थिति यह लगातार बदलता हुआ परिदृश्य तय कर रहा है और करोड़ो लोग तय कर रहे हैं, जो सहज रूप से जैसे भी बोल सकते हैं, हिन्दी बोल रहे हैं, न वे व्याकरण की फिक्र करते है, न ही हिन्दी परम्परा की और न ही हिन्दी विभागों की। यह परिदृश्य अराजक है और ऊर्जावान भी"।[8] एक जनवरी 1900 ई0 से न्यायालयों में हिन्दी में कार्य करने का आदेश हुआ था, लेकिन आदेश के बावजूद हिन्दी का प्रयोग नहीं हो रहा था क्योंकि न हिन्दी के प्रति आत्मीयता का भाव था, न ही आदेश के प्रति गंभीरता। मदन मोहन मालवीय जी ऐसे लोगों से क्षुब्ध थे, उन्होंने आक्रोश को व्यक्त करते हुए कहा था- "हिन्दी भाषा के कितने लोग हैं जिनको इस बात से दुःख और लज्जा होती है कि यह आर्यावर्त देश, जहाँ आप देखेंगे कि लाखों लोग ऐसे है जो अपनी माँ की बोली से परिचय नहीं रखते। सब आशा उन्नति छोड़ दीजिए"। भाषा एक परिवर्तनशील सांस्कृतिक प्रक्रिया है"।[9] सांस्कृतिक रूप से विश्लेषित करें तो हिन्दी भाषा की स्थिति विदेशों में अच्छी है। अमेरिका के जनगणना विभाग की रिपोर्ट के अनुसार "अमेरिका में वर्ष 2020 तक हिन्दी बोलने वालों की संख्या नौ लाख से अधिक थी।

यह लगातार बढ़ रही है। अमेरिका में रहने वाले 70% भारतीय घर पर हिन्दी को वरीयता देते हैं"[10] तथा अमेरिका के 150 से ज्यादा विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। त्रिनिदाद, सूरीनाम, गुयाना आदि देशों में 'रामचरित मानस' को संगीत के रूप में ढाल कर गायन होता है, यही नहीं भारतीय मूल के मनीषियों के द्वारा विदेशों में सांस्कृतिक पहचान हेतु मंदिरों में 'हनुमान चालीसा' का पाठ किया जाता है। साथ ही संगीत प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। अंग्रेजी भाषा-भाषी सहर्ष हिन्दी का अध्ययन और अध्यापन करते हैं।

हिन्दी राजभाषा घोषित होने के बाद 1997 में भाषा की स्थिति जानने के लिए सर्वे किया गया जिसमें यह बात सामने आयी कि भारत में 66 प्रतिशत जनता हिन्दी बोलती है, और 77 प्रतिशत लोग हिन्दी बोली समझ लेते हैं। 2016 के आंकड़ों के अनुसार डिजीटल माध्यम पर हिन्दी भाषा में समाचार पढ़ने वालों की संख्या 5.5 करोड़ जिसे 2021 में 14.4 करोड़ बढ़ जाने का अनुमान लगाया गया। 'वर्ल्ड लैंग्वेज डेटा बेस' के 22वें संस्करण में बताया गया कि संसार में 20 सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषाओं में, 6 भारतीय भाषाएं हैं, जिनमें हिन्दी तीसरे स्थान पर है। संसार के तीस देशों में हिन्दी का अध्ययन, अध्यापन होता है। लगभग 100 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन अध्यापन होता है।

"एथेनोलॉग के अनुसार वर्ष 2022 में हिन्दी तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। भारत में 35 करोड़ से ज्यादा लोगों की मूल भाषा हिन्दी है और 26 करोड़ से अधिक ऐसे हैं जो हिन्दी भाषा का प्रयोग कर रहे है"।[11]

विदेशों में हिन्दी बोलने वालों के सम्बन्ध में जारी आंकड़े-

संयुक्त राज्य अमेरिका-	648.983
मॉरीशस-	685.170
दक्षिण अफ्रीका-	890.292
यमन-	232.760
युगांडा-	147.000
सिंगापुर-	5.000
नेपाल-	800.000 (लगभग)
न्यूजीलैण्ड-	20.000
जर्मनी-	30.000

इस तरह 20 देशों से भी अधिक देशों में हिन्दी बोली जाती है और 176 विश्वविद्यालयों में हिन्दी विषय की पढ़ाई होती है। विदेशों में हिन्दी के अध्ययन अध्यापन के साथ हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएं भी नियमित रूप से प्रकाशित होती हैं। अनुमानतः विश्व में हिन्दी बोलने वालों की संख्या 75 से 80 करोड़ है।

वैश्विक स्तर पर 600 मिलियन वक्ताओं के साथ हिन्दी विश्व की तीसरी भाषा के रूप में अधिष्ठित है। हिन्दी की अच्छी स्थिति को इस प्रकार और अच्छी तरह समझा जा सकता है कि 'फिजी सरकार के

सहयोग से विदेश मंत्रालय भारत सरकार 15 से 17 फरवरी, 2023 तक फिजी में विश्व हिन्दी सम्मेलन की मेजबानी का दायित्व पूर्ण करेगा। यहां विश्व हिन्दी दिवस पर भाषा के प्रचारार्थ कविता पाठ परीक्षण, सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन, भाषण व वाद विवाद प्रतियोगिताएं करायी जाती है, यही नहीं भारतीय डाक विभाग द्वारा हिन्दी के प्रचारार्थ अद्वितीय स्मारक डाक टिकट भी जारी किया जाता हैं। 2023 वर्ष की विशेष उपलब्धि यह है कि हिन्दी भाषा को पारम्परिकता और आधुनिक तकनीक से अर्थात् 'आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस' से सम्बद्ध किया जा रहा है। हिन्दी अपने वर्चस्व को बढ़ा रही हैं, इसका प्रमाण यह है कि इंजिनियरिंग और मेडिकल की पढ़ाई हिन्दी माध्यम से होना आरंभ हो चुकी है। तकनीकी रुप से हिन्दी, साफ्टवेयर के जरिये समृद्ध हो रही है, जहां बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा अंग्रेजी का प्रयोग होता था, वहीं अब हिन्दी को महत्त्व दिया जा रहा है। विभिन्न सोशल साइट्स पर हिन्दी में कन्टेन्ट उपलब्ध हो रहे हैं।

राष्ट्रीय नई शिक्षा नीति ने भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता देने का सराहनीय कार्य किया है। 2022 में हिन्दी, संयुक्त राष्ट्र संघ की सातवीं आधिकारिक भाषा बनने की दावेदार है।

"भाषा के प्रति तंग नजरिया हमारे लिए घातक होता है, ज्यादा से ज्यादा भाषाओं का ज्ञान हमें सांस्कृतिक और सामाजिक तौर पर सम्पन्न बनाता है लेकिन जब किसी एक भाषा का विकास दूसरी भाषा की कीमत पर हो, तब स्थिति बदल जाती है"।[12] "भाषा हमारी सामाजिक परम्परा की देन है"।[13] उसे संरक्षित करना हम सबका कर्त्तव्य है।

हिन्दी वैश्विक पटल पर सम्मानित हो रही है, विदेशों में हिन्दी भाषा की स्थिति अच्छी है, प्रश्न यह है कि भारतीयों के हृदय में हिन्दी के लिए वैसा सम्मान है? सच तो यही है कि हिन्दी को गौण रूप में महत्त्व दिया जाता है। नब्बे प्रतिशत कार्य कार्यालयों में अंग्रेजी में होते हैं। कारण यह है कि अंग्रेजी आज भी कारपोरेट जगत में अच्छा वेतन पाने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। बहुत विरोधाभास है इस क्षेत्र में कि आज भी हिन्दी को, हिन्दी भाषियों द्वारा महत्त्व नहीं दिया जाता है।

चुनौती यह है कि क्या हम भारतीय हिन्दी को सम्मान दिलाने के लिए अपने उत्तरदायित्व का निर्धारण कर सकेंगे? यह चुनौती है जिसे हिन्दी के मनीषियों, शिक्षकों को सोचना होगा कि चुनौती का सामना कैसे करेंगे ? क्योंकि अधिकांश लोगों की यह प्रवृत्ति होती है कि वे अंग्रेजी बोलना जरूरी ही नही, शान की बात समझते हैं। हिन्दी के अध्येता और विद्वानों द्वारा ही हिन्दी के व्याख्यानों में अपरकास्ट, स्प्रिचुअल, पोलिटिकल जैसे शब्दों का प्रयोग निःसंकोच किया जाता है। हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में प्रश्न यह है कि उच्चकोटि के साहित्य सर्जन, विस्तृत व समृद्ध शब्द भंडार, हृदय और अनुभूति की अभिव्यक्ति करने में समर्थ, व्यापक परिक्षेत्र में व्यवहृत और समादृत, व्याकरणिक रूप से सहज व सरल भाषा है, देवनागरी लिपि सुस्पष्ट और वैज्ञानिक है, भारतीय संस्कृति सभ्यता, एकता और राष्ट्रीयता का प्रतिनिधित्व करती है, बहुविध भाषाओं के शब्दों को ग्रहण करने में समर्थ है, फिर भी हिन्दी 'राष्ट्र भाषा' के पद पर अधिष्ठित होने से वंचित क्यों है ? यह विडम्बना ही है। हाल ही में मेडिकल की पढ़ाई हिन्दी में होने की बात सामने आई, यह एक सकारात्मक पहल है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता देने का सराहनीय कार्य किया है।

निराकरण-

- हिन्दी भाषा बोलने, समझने वालों के लिए आवश्यक है कि इस विषय पर चर्चा ही नहीं करें, जो जरूरी पक्ष है, उस पर भी अमल करें।
- व्याकरण सम्बन्धी बारीकियों पर हिन्दी के विद्वानों को निर्णय लेना चाहिए। लेखन में जो वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियां बढ़ रही हैं, उसका एक कारण व्याकरण का ज्ञान न होना भी है, इसलिए इस विषय पर ध्यान केन्द्रित करना होगा।
- भाषा, वर्तनी प्रयोग, व्यवहार आदि पर संगोष्ठी का आयोजन समय विशेष पर ही न हो, हिन्दी के अध्येता एवं वरिष्ठ भाषाविद् के सहयोग से हिन्दी के व्यावहारिक रूप और व्याकरणिक रूप पर चर्चा निरंतर हो। नव शोधार्थी, नये अध्येताओं के ज्ञानार्जन के लिए अपने ज्ञान का हस्तान्तरण आवश्यक है अतः वक्तव्य केवल 'वाह्य स्वरूप' का वर्णन-विवेचन तक सीमित न हो, बल्कि भाषा पर गहराई से विवेचन व विश्लेषण होना चाहिए।
- भाषा के अध्येता, विद्वान अपने छात्र-छात्राओं को भाषा सम्बन्धी प्रतियोगिताओं के आयोजन के द्वारा वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों को शुद्ध कराना चाहिए, इससे भाषा में आ रही वर्तनी सम्बन्धी अशुद्धियों और त्रुटियों में तो सुधार होगा ही, साथ ही आने वाले साहित्यिक विद्यार्थी व भाषा के संरक्षक, संवर्धक भी तैयार कर सकेंगे।
- अंगेजी चैनल्स को भी हिन्दी में परिवर्तित करने से हिन्दी की स्थिति और समुन्नत होगी।
- राष्ट्रीय नीति 2020 के बाद भाषा के सम्बन्ध में विचार करना आरंभ किया है, वह सुखद संकेत है, क्रियान्वयन के बाद विजय के सूर्य का प्रकाश हिन्दी जगत को आलोकित करेगा ऐसी आशा है और संकल्प भी।
- हिन्दी भाषी, अपनी हिन्दी भाषा के सम्मान के लिए स्वयं प्रस्तुत हों, हिन्दी को जाने, समझें और प्रयोग करें पूरे सम्मान और गौरव के साथ।
- गीतांजलि श्री के उपन्यास 'रेत समाधि' के अंग्रेजी अनुवाद 'ट्रम आफ सैंड' को अन्तर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार एक उपलब्धि है, यह सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के लिए गौरव का विषय है। इस सन्दर्भ में अनुवाद कार्य को किया जाना चाहिए। साथ ही शब्दकोश निर्माण कार्य गंभीरता से होना चाहिए।
- हिन्दी के सम्मानार्थ, हिन्दी की उपेक्षा करने से रोकना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में युवा पीढ़ी को प्रेरित करना आवश्यक है।
- प्राथमिक शिक्षा के माध्यम से जमीनी स्तर पर विद्यार्थियों को हिन्दी भाषा और व्याकरण का ज्ञान दिया जाना चाहिए।
- हिन्दी भाषा में लिंग निर्धारण, नियम आदि का निर्धारण जटिल हो सकता है पर असम्भव नहीं, इस सन्दर्भ में अभ्यास कार्य को प्रतिबद्धता से किया जाना चाहिए।
- हिन्दी भाषा के उन्नति के लिए निरन्तर उत्कृष्ट लेखन, साहित्य सर्जन आवश्यक है। सुधीश पचौरी के

शब्दों में-"यूं तो हर एक बंदा लेखक है। ऑनलाइन है। सब कुछ न कुछ लिखते रहते हैं पर अब इन सबके दिल में भावों, भावनाओं और विचारों व शब्दों की जगह 'इमोजी' रहते हैं, भावों और विचारों की जगह उसके चिह्न रहते हैं इसलिए अब साहित्य में कोई 'रिस्क' नहीं लेता सब सिर्फ 'सेफ' खेलते है। किसे दुश्मन बनाए ? (हिन्दुस्तान, 22 जनवरी 2023 रविवार, पृष्ठ 10, हिन्दी साहित्य में इतना सन्नाटा क्यों है से उद्धृत)।

हिंदी को समृद्ध करने के लिए अपनी भाषा में सर्जना आवश्यक है। हिन्दी भाषा, हिन्दी के अस्तित्व और सम्मान को ऊँचा करेगी क्योंकि भारत और हिन्दी हमारे हृदय से सम्बद्ध है।

सन्दर्भ सूचीः-

1. साहा,रणजीत (सं०),समकालीन भारतीय साहित्य (साहित्य अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका) सितम्बर-अक्टूबर, 2013 (अंक-169) पृष्ठ-05
2. पाण्डेय, कैलाश नाथ, हिन्दी भाषा और साहित्य पृष्ठ 195
3. साहा,रणजीत (सं०),समकालीन भारतीय साहित्य (साहित्य अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका) सितम्बर-अक्टूबर, 2013 (अंक-169) पृष्ठ-05
4. साहा,रणजीत (सं०),समकालीन भारतीय साहित्य (साहित्य अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका) सितम्बर-अक्टूबर, 2013 (अंक-169) पृष्ठ-05
5. सहाय, संजय (सं0)- पूर्णांक -412 वर्ष 35, अंक-7, फरवरी 2021 पृष्ठ-58
6. सहाय, संजय (सं0)- पूर्णांक -412 वर्ष 35, अंक-7, फरवरी 2021 पृष्ठ-58
7. हिन्दुस्तान, वाराणसी, बुधवार, 14, सितम्बर 2011 पृष्ठ-10
8. हिन्दुस्तान, वाराणसी, बुधवार, 14, सितम्बर 2011 पृष्ठ-10
9. हिन्दुस्तान, वाराणसी, बुधवार, 14, सितम्बर 2011 पृष्ठ-10
10. सहाय, संजय (सं0)- पूर्णांक -412 वर्ष 35, अंक-7, फरवरी 2021 पृष्ठ-58
11. हिन्दुस्तान, वाराणसी, मंगलवार, 10, जनवरी 2023 पृष्ठ-12 (तकनीक की दुनियां में बढ़ रहा हिन्दी का दबदबा)
12. हिन्दुस्तान, वाराणसी, मंगलवार, 10, जनवरी 2023 पृष्ठ-12
13. कादम्बिनी, सितम्बर, 2016, पृष्ठ-05
14. कच्छल दीपिका,प्रधान संपादक ,योजना, जनवरी 2016,वर्ष 60 अंक 01 पृष्ठ-69
15. हिन्दुस्तान, वाराणसी, रविवार, 22 जनवरी 2023 पृष्ठ-10

❑❑❑

---

1. असिस्टेण्ट प्रोफेसर-हिन्दी स्वतंत्रता संग्राम सेनानी विश्राम सिंह राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय चुनार मीरजापुर उ0प्र0 dr.nalinisingh1997@gmail.com 9580876839

भारतीय भाषाओं के उन्नयन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020

–अपर्णा वर्मा
–डॉ. वी. शिरिषा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारत को वैश्विक महाशक्ति के रूप में विकसित करने की प्रगतिशील और अभिनव पहल है। 'भाषाएँ विविध हैं परन्तु भाव एक हैं' की अभिव्यक्ति राष्ट्रीय शिक्षा नीति का सार तत्व है। यह नीति हमें शिक्षण पद्धति में भाषा के दर्शन को समझने की अनिवार्यता समझाती है।

भारत बहु-भाषिक और बहु-सांस्कृतिक राष्ट्र है। भाषा वह स्त्रोतवाहिनी है जिसके एक एक शब्द शताब्दियों में गढ़े जाते हैं। यह माँ के गर्भ से अगली पीढ़ी तक पहुँचती है, दादी-नानी की कहानियों में, कहावतों में रचे बसे जाते हैं। इतिहास इस बात का गवाह है कि किसी भी सभ्यता संस्कृति के संवर्धन के लिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण औजार है और शिक्षा का संवहन भाषाएँ करती है। सर्वविदित है कि भारतीय भाषाओं को प्रोत्साहन देना राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 की प्राथमिकताओं में से एक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 इक्कीसवीं शताब्दी के महत्त्वकांक्षी लक्ष्यों का महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। यह शिक्षण और ज्ञानार्जन में बहुभाषावाद को बढ़ाने की पुरजोर वकालत करता है। 'शिक्षा की भाषा' कैसी हो? यह राष्ट्रीय शिक्षा नीति की महत्त्वपूर्ण विषयात्मा है। इसमें सॉफ्ट स्किल्स को बढ़ावा देने के साथ-साथ अनिवार्यतः पांचवी तथा अधिमानतः कक्षा आठ तक की शिक्षा को मातृभाषा, स्थानीय भाषा या राष्ट्रीय भाषा में करने की बात कही गयी है। यह नीति व्यवस्था करती है कि भारतीय भाषाओं में पाठ्य पुस्तकें और अध्ययन सामग्री जल्द उपलब्ध करायी जाएँ। शिक्षण के दौरान स्थानीय भाषा, शब्दों, परम्परा, लोककथा आदि को ध्यान में रखते हुए बच्चों से संवाद किया जाए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मूल मंत्र है कि रटने की परम्परागत प्रवृति को दूर कर आनंद और रचनात्मकता की ओर नया कदम बढ़ाया जाए। यह नीति इंगित करती है कि किसी भी देश की समृद्धि अपनी जड़ों के साथ बंधे रहने में ही संभव है। यूरोप, चीन, जापान की भाषाई समृद्धि का यही मूल कारण है। भारतीय लोकतंत्र का चरित्र सभी भारतीय भाषाओं के सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व पर आधारित है। चाहे अवधी, बघेली, भोजपुरी हो या तमिल, तेलुगु या कन्नड़। हालाँकि यह चिंता का विषय है कि यूनेस्को द्वारा जारी लुप्तप्राय भारतीय भाषाओं की सूची में 197 भारतीय भाषाओं को सूचीबद्ध किया गया है। आज आजादी के इस अमृत काल में जरूरत है कि हम अपनी विलुप्त होती भारतीय भाषाओं का उन्नयन करें। उच्च शिक्षा तथा तुलनात्मक शोध कार्यों में

भारतीय भाषाओं को शामिल किया जाए जैसे की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्रावधान में किया गया है। 1996 से प्रतिवर्ष यूनेस्को द्वारा 21 फरवरी को विश्व मातृभाषा दिवस मनाया जाना इस दिशा में स्वागत योग्य कदम है। भारत अपनी बहुभाषिकता और भाषा शक्ति को मजबूत करके ही शिक्षा के क्षेत्र में वैश्विक नेता के रूप में उभर सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 का यही मौलिक कथ्य है। **बीज-शब्द:-बहु-सांस्कृतिक, बहुभाषावाद, सॉफ्ट स्किल्स, सह-अस्तित्व, तुलनात्मक शोध**

विषय- भारतीय भाषाओं के उन्नयन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020

जैसे चींटियाँ लौटती हैं / बिलों में

कठफोड़वा लौटता है / काठ के पास

वायुयान लौटते हैं एक के बाद एक / लाल आसमान में डैने पसारे हुए

हवाई-अड्डे की ओर / ओ मेरी भाषा

मैं लौटता हूँ तुम में / जब चुप रहते-रहते

अकड़ जाती है मेरी जीभ / दुखने लगती है / मेरी आत्मा[1]

केदारनाथ सिंह, कविता शीर्षक 'मातृभाषा'

केदारनाथ सिंह की यह कविता मातृभाषा के प्रति गहरे आभार को व्यक्त करती है। सच कहें तो भाषा ममत्व की अभिव्यक्ति है। भाषाएँ हमें वह सुरक्षित कोना उपलब्ध कराती है जहां हम निर्बाध रूप से स्व का निर्माण करते हैं। सदियों से भाषाएँ नूतन विश्व दृष्टि और जीवन दृष्टि का पोषण करती आ रहीं है। वास्तव में स्व-भाषाएं विविध विचारों, कल्पनाओं और व्यापक सामाजिक-राष्ट्रीय दर्शन का माध्यम हैं। सर्वविदित है कि एक बहु-भाषिक और बहु-सांस्कृतिक राष्ट्र के रूप में भारत विविध भाषाओं की संगमस्थली है। एक सशक्त एवं विश्वगुरु भारत-निर्माण की संकल्पना भारतीय भाषाओं के उन्नयन पर निर्भर करता है। स्वयं महात्मा गांधी भी अपनी जुबान के समर्थक थे। उनका तर्क था कि जो बात जिस भाषा में मूल रूप में कही गई है और जिसमें वह रची-बसी है, उसी में उसका सही अर्थ समझा जा सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 इक्कीसवीं शताब्दी के आकांक्षी लक्ष्यों को प्रतिबिंबित करती है। 34 वर्षों के लंबे इन्तजार के बाद राष्ट्रीय शिक्षा नीति नई संभावनाओं के साथ आई है। भाषा के क्षेत्र में देश में ही नहीं अपितु विश्व भर में यह एक ऐसा बड़ा विमर्श है जो ग्राम पंचायत से लेकर राष्ट्रीय स्तर, छात्रों, अध्यापकों, अभिभावकों, जनप्रतिनिधियों, राजनेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं तथा शिक्षाविदों के सुझावों, चिन्तन, मनन का परिणाम है। एनईपी-२०२० संयुक्त राष्ट्र के संवहनीय विकास लक्ष्य-4 के अनुरूप है। एनईपी दस्तावेज के चौथे और बाइसवें अध्याय में बहुभाषिकता और भाषा की शक्ति पर बात की गयी है। यह नीति इस ओर ध्यान आकर्षित करती है कि अपनी भाषाओं में शिक्षण से ज्ञान, विज्ञान, नवाचार के नए-नए क्षितिज खुलेंगे। मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा में शिक्षण से सृजनात्मकता एवं स्व-पहचान की दिशाएं उद्घाटित होगी।

भाषाई विविधता हमारे देश की पहचान है। यहाँ कई भाषाएँ और बोलियाँ एक साथ फलती-फूलती हैं। "प्रारंभ में संविधान की 8वीं अनुसूची में 14 भाषाएँ थीं, जो अब बढ़कर 22 हो गई हैं। ध्यातव्य है कि 2011

की जनगणना के अनुसार, बोलियों सहित 1369 भाषाएँ हैं, जिनमें 121 भाषाएँ 10 हजार से अधिक लोगों द्वारा बोली जाती हैं।[3] यूनेस्को के अनुसार, पिछले 50 वर्षों में 197 भारतीय भाषाएँ लुप्तप्राय हो गई हैं, कई विलुप्त होने के कगार पर हैं। किसी भाषा के मर जाने से उस भाषा के बोलने वालों की सभ्यता, संस्कृति आदि समाप्त हो जाती है। ऐसे में भाषा का महत्त्व और बढ़ जाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इसे भली-भांति स्वीकार किया गया है। इस दृष्टि से नीति के सिद्धांत में लिखा है कि संस्कृति के संरक्षण, संवर्धन और प्रसार के लिए हमें उस संस्कृति की भाषाओं की रक्षा और प्रचार-प्रसार करना होगा। "इस नीति में भारत को ज्ञान के क्षेत्र में वैश्विक महाशक्ति में तब्दील करने का लक्ष्य रखा गया है। यह अपने दृष्टिकोण में वैश्विक होने के साथ ही भारत केन्द्रित भी है। यह मानवाधिकारों, संवहनीय विकास, जीवनशैली तथा वैश्विक कल्याण के प्रतिबद्धता को बढ़ावा देने वाले ज्ञान, कौशल, मूल्य और आचरण को स्थापित करती है। इस तरह इसका प्रयास छात्रों को सही मायने में वैश्विक नागरिक के रूप में तब्दील करने का है। साथ ही इसका मकसद छात्रों में विचारों के साथ ही भावना, बुद्धि, और कार्यों में भी भारतीय होने का गहरा गौरव स्थापित करना है।"[4]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 और मातृभाषा में शिक्षा

किसी भी देश का सांस्कृतिक उत्कर्ष उनकी स्वभाषाओं में परिलक्षित होता है। यह नीति प्रस्तावित करती है कि स्वभाषा एवं मातृभाषा शिक्षा का सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम है। मातृभाषा में शिक्षा विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण व्यवस्था की अनिवार्य शर्त है। मातृभाषा में शिक्षा से एक परिपक्व एवं मौलिक लोकतंत्र का निर्माण होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में सॉफ्ट स्किल्स को बढ़ावा देने के साथ-साथ अनिवार्यतः पांचवी तथा अधिमानतः कक्षा आठ तक की शिक्षा को मातृभाषा, स्थानीय भाषा या राष्ट्रीय भाषा में करने की बात कही गयी है। साथ ही अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) ने अपने से संबद्ध इंजीनियरिंग कॉलेजों में भारतीय भाषाओं में पाठ्यक्रम चलाने की अनुमति दी है। शुरूआती स्तर पर बंगाली, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल और तेलुगु सहित आठ भारतीय भाषाओं में पाठ्य-सामग्री के अनुवाद पर काम शुरू किया जा रहा है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों (आईआईटी) में भारतीय भाषा के विकल्प की प्रस्तुति पर भी यथासमय निर्णय लिया जाएगा।

त्रिभाषा सूत्र/ फ़ॉर्मूला

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में त्रिभाषा सूत्र निम्नलिखित बिंदुओं पर प्रकाश डालता है:-

- बहुभाषावाद को बढ़ावा देने के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए तीन-भाषा सूत्र को लागू करना जारी रहेगा।
- राज्य, क्षेत्र, विद्यार्थी अपनी सुविधानुसार तीन भाषाओं का चयन करें।
- तीन भाषाओं को सीखना राज्यों, क्षेत्रों और स्वयं छात्रों की पसंद होगी, किसी पर कोई भाषा थोपी नहीं जायेगी।
- ग्रेड 6 या 7 में तीन में से एक या दो भाषाओं को बदलने की सुविधा होनी चाहिए। उससे पूर्व उन्हें माध्यमिक कक्षाओं के अंत तक कम से कम एक भारतीय भाषा की साहित्यिक स्तर पर बुनियादी दक्षता दिखानी होगी।

- साहित्यकारों और भाषा विशेषज्ञों को भाषा शिक्षण और प्रशिक्षण में विशिष्ट प्रशिक्षकों के रूप में जोडनें और विद्यार्थियों को सृजनात्मक लेखन के लिए प्रोत्साहित करने पर बल दिया जाएगा।

भारतीय भाषाओं की वैज्ञानिकता पर बल

किसी भी भाषा की जीवन्तता/प्रासंगिकता उसमें नित नए प्रयोग होने से ही संभव है। अस्तित्व की रक्षा के लिए भाषाओं को समय के साथ खुद को तकनीकी रूप से समृद्ध करते रहने की बात राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 करती है। यह नीति 'क्या-क्या सीखने' के साथ 'कैसे सीखने पर भी जोर देती है| राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारतीय भाषाओं में सॉफ्टवेयर तैयार करने, ऑनलाइन कंटेंट, ई-लर्निंग, मनोरंजन आधारित अधिगम एप्स जैसे प्रोद्योगिकी विकसित करने की सिफारिश करती है। यह अभिनव प्रयास दूरस्थ छात्रों एवं दिव्यांग विद्यार्थियों के लिए औषधि साबित होगा। इस तरह राष्ट्रीय शिक्षा नीति भारतीय भाषाओं को वैज्ञानिक कलेवर देने का भरसक प्रयास कर रही है। इसमें एक प्रभावी प्रोजेक्ट "भारत की भाषाएँ" (लैंग्वेज ऑफ़ इंडिया) की संकल्पना की गयी है। यह ग्रेड 6 से 8 के लिए 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल है। विद्यार्थियों को भारतीय भाषाओं में ध्वन्यात्मकता, वैज्ञानिक वर्णमाला, लिपि आदि की समानता दिखाकर समरसता का पाठ पढ़ाया जाएगा। इससे विद्यार्थी विविध भाषाओं की प्रकृति, पद-संरचना, साहित्य को जानकर भारत की सामासिक एकता को आत्मसात कर सकेंगे।

प्राचीन और शास्त्रीय भाषाओं की महत्ता एवं कला, संस्कृति का संवर्धन

भारतीय सभ्यता-संस्कृति 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के दर्शन पर आधारित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारत की इस सांस्कृतिक संपदा का संरक्षण, संवर्धन एवं प्रसार करती है। तुलनात्मक साहित्य, सृजनात्मक कौशल, कला, संगीत, दर्शन आदि के सशक्त विभागों को देश भर में शुरू किया जाएगा। साथ ही इन विषयों में दोहरी डिग्री के रूप में चार वर्षीय बी.एड. कोर्स विकसित किए जाएंगे। बेशक यह नीति भाषा प्रशिक्षकों के एक बड़े कैडर को विकसित करने में मददगार साबित होगी। यह नीति प्रस्तावित करती है कि तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, ओड़िया जैसी शास्त्रीय और पालि, प्राकृत, फारसी जैसी प्राचीन भाषाओं को समृद्ध करके हमारी ज्ञान विरासत सुदृढ़ किया जाए। भाषा समर्पित संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों का विस्तार किया जाएगा तथा उनमें दोहरी डिग्री प्रदान करने की व्यवस्था की जायेगी। विद्यार्थियों के वैश्विक ज्ञान में वृद्धि के लिए विदेशी भाषाओं जैसे अंग्रेजी, कोरियाई, जापानी, थाई, फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, पुर्तगाली, रूसी के शिक्षण की भी वकालत की गयी है| इस दिशा में नेशनल रिसर्च फाउंडेशन (एनआरएफ) गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान हेतु वित्त उपलब्ध करायेगा। यह नीति इंगित करती है कि विविध कलाएं, थिएटर, कथावाचन, संगीत जैसे माध्यमों से निश्चय ही भाषा की श्रीवृद्धि होगी। इन सभी सुझावों का शतप्रतिशत क्रियान्वयन भारत को विश्वमानचित्र पर अग्रिम राष्ट्रों की श्रेणी में स्थापित करेगा।

भारतीय भाषाओं में अनुवाद की व्यवस्था

भारत को ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था के रूप में स्थापित करना राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रमुख लक्ष्य है। इस दिशा में सर्वसाधारण को विभिन्न भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में गुणवत्ता युक्त अधिगम सामग्री उपलब्ध कराने हेतु इंस्टीट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एण्ड इंटरप्रिटेशन (अनुवाद और विवेचना संस्थान)

की स्थापना की जायेगी। आईआईटीआई अपने अनुवाद और व्याख्या में प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग करेगा। देश के विभिन्न अनुसन्धान परक संस्कृत विभागों में चार वर्षीय बहु-विषयक बी.एड. डिग्री कोर्स प्रारंभ किए जायेंगे। संस्कृत शिक्षकों को बड़ी संख्या मे व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की जायेगी। इस तरह शास्त्रीय भाषा संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन को संस्कृत पाठशालाओं, विश्वविद्यालओं तक सीमित न रहकर सामान्य पाठशालाओं में त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत इसका सीमा विस्तार किया जाएगा। भाषा की शक्ति को बढ़ावा देते हुए आठवीं अनुसूची में अनुसूचित प्रत्येक भाषा के लिए अकादमी स्थापित की जायेगी। केंद्र और राज्यों के सहयोग से स्थापित ये अकादमियां आपसी समन्वय से अपनी अपनी शब्द संपदा में गुणोत्तर वृद्धि करेगी। विभिन्न भारतीय भाषाओं और उनकी कला, स्थानीय संस्कृति का वेब आधारित पोर्टल, विडियो रिकॉर्डिंग, कहानी पाठ, विकिपीडिया आदि के द्वारा दस्तावेजीकरण किया जाएगा|

निष्कर्षतः राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 भारत को वैश्विक महाशक्ति के रूप में विकसित करने की प्रगतिशील और अभिनव पहल है। 'भाषाएँ विविध हैं परन्तु भाव एक हैं' की अभिव्यक्ति राष्ट्रीय शिक्षा नीति का सार तत्व है। यह नीति हमें शिक्षण पद्धति में भाषा के दर्शन को समझने की अनिवार्यता समझाती है। प्रत्येक भाषा अपनी मातृ संस्कृति की वाहक होती है। भारतीय भाषाओं के उन्नयन के माध्यम से ही हम इस मातृ संस्कृति को ज़िंदा रख सकते हैं। यह चिंता का विषय है कि हमारी राष्ट्रीय अस्मिता और आत्म चेतना का जो चित्र महात्मा गांधी ने 'हिंद स्वराज' में वर्णित किया था उसकी तस्वीर आज धुंधली नजर आ रही है। भारत की बहुभाषिक संस्कृति उसकी ताकत है, कमजोरी नहीं। वर्तमान पीढ़ी को यह समझना होगा कि भाषा सिर्फ शब्द और व्याकरण का समुच्चय नहीं है। इसमें हमारी जीवन दृष्टि झलकती है। हमारे जीवन के सिद्धांत बसते हैं। हमारी विश्व दृष्टि बोलती है।

आधार सामग्री:-

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 दस्तावेज, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार
2. योजना अंक, फ़रवरी-2022, राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 विषय पर केन्द्रित

सन्दर्भ सामग्री

1. कविता 'मातृभाषा', केदारनाथ सिंह, कविता कोश
2. आलेख- नई शिक्षा नीति और भारतीय भाषाएँ, प्रेमपाल शर्मा, भूतपूर्व संयुक्त सचिव, रेल मंत्रालय, भारत सरकार
3. आलेख- नई शिक्षा नीति और भारतीय भाषाएँ, अतुल कोठारी, शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 दस्तावेज, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, पृष्ठ-6

लेखक, पी.एच-डी. हिंदी भारतीय भाषा केंद्र भाषा, साहित्य एवं संस्कृति संस्थान जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110067

❒❒❒

1. सहायक आचार्य, सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ़ सोशल एक्सक्लूशन एंड इंक्लूसिव पॉलिसी स्कूल ऑफ़ सोशल साइंसेज जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली-110067

भारत में राष्ट्रीयता और हिंदी भाषा

बसंत कुमार

उक्त समय काल और दशा के आधार पर सारा राष्ट्र एक सूत्र में नहीं बंधा था अपितु छोटे छोटे खण्डों में विभक्त था, और वही खंड उनका राष्ट्र था इस समय साहित्यकार अपने खण्डों / राज्य/ राजाओं के शोर्य का गुणगान किया करते थे और वीरपूजा, धर्म, एवं राजनीति का बखान गीत गाकर किया करते थे। उस समय की राष्ट्रीयता अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा, उसका विस्तार एवं धर्मं का पालन करना ही था।

राष्ट्रीयता एक भाव है जिसमें राष्ट्र की संकल्पना, राष्ट्र के प्रति प्रेम स्नेह,अधिकार एवं कर्तव्यों का भाव समाहित होता है और इन भावों को भाषा के बिना देख पाना सम्भव नही दिखाई आदिकाल (जिसे चारणकाल या वीरगाथा काल के नाम से भी जाना जाता है) में राज कवि अपने आश्रयदाता राजाओं के शोर्य और पराक्रम की गाथा गया करते थे अपितु युद्ध का आगाज कवियों के द्वारा वीरता और पराक्रम की गाथा के माध्यम से ही होता था जो की सैनिकों और नागरिकों में देशप्रेम,बलिदान, अधिकार एवं कर्तव्यों के भावों का संचरण एवं उत्तेजना उत्पन्न करते थे। हिंदी भाषा साहित्य के इतिहास का यह पहला चरण मन जाता है। अतः आदिकाल से भक्तिकाल, रीतिकाल आधुनिककाल और आज तक हिंदी भाषा साहित्य और राष्ट्रीयता गहरा सम्बन्ध प्रमाणिक है। अतः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा की भारतवर्ष में हिंदी भाषा राष्ट्रीयता की जननी है, हिंदी साहित्य ने न केवल राष्ट्रीयता अपितु सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में भी अपनी रचनाओं के माध्यम से जनक्रांति,जनचेतना,जनजागरण का अविस्मर्णीय कार्य किया, हिंदुस्तान की रचना और राष्ट्रीयता के भाव के संचरण में हिंदी भाषा का योगदान अतुलनीय एवं आद्वितीय है।

हिंदी साहित्य का इतिहास उतना ही पुराना और वैसा ही है जैसे भारत का इतिहास रहा है समय देश काल के आधार पर समाज की स्थिति और परिस्थिति का बखान रचनाकारों ने अपने अपने अनुसार व्यक्त किया है आज की हिंदी भारतीय आर्य भाषा के सतत प्रवाहमान परंपरा की फलश्रुति है, आदिकाल से संस्कृत से प्रारंभ होकर आज तक की ऐतिहसिक घटनाओं के एकमात्र साक्षी भाषा ने सब कुछ सहते हुए त्याग और बलिदान करते हुए राष्ट्रीयता की कसौटी पर अपने आप को सदा ही खरा साबित किया है और आज भी अपने आप को जीवंत बनाये हुए है यदि भारत वर्ष के सन्दर्भ में देखा जाए

तो हिंदी को हटाने पर सारा का सारा इतिहास ही विलुप्त हो जाता है यह हमारे देश के संघर्ष और प्रेम की क्षण प्रति क्षण की गवाही देती है। भाषा इतिहास के देशकाल की आंतरिक और बाहरी संरचना को बुनती है भाषा के माध्यम से इतिहास के सूत्रों को बुनती है। जहाँ तक हिंदी भाषा के ऐतिहासिक विकास का प्रश्न है तो हिंदी हिंदुस्तान में रहने वालों की भाषा है जिसका प्रारंभ वैदिक काल से ही माना जाता है, जहाँ हिंदी संस्कृत से प्रारंभ होकर प्राकृत, पाली, अपभ्रष एवं अवहट्ट से होती हुई अध्यतन हिंदी तक पहुँचती है। सामान्यतः हिंदी साहित्य का विकास तीन अवस्थाओं में माना जाता है|

- आदिकाल (1000 ई- 1500 ई)
- मध्यकाल (1500 ई – 1850)
- आधुनिक काल (1850ई – अब तक)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार हिंदी साहित्य की विभिन्न प्रवृतियों की शुरूआत संवत 1050 से प्रारंभ हो गई थी। इस युग में वीर, श्रृगार, एवं लोक पर आधारित रचनाओं के साथ साथ सिद्ध और नाथों ने भी अपनी उपस्थिति दर्ज करा ली थी। इस की प्रवृतियों के आधार पर अलग अलग साहित्यकारों ने इसे अलग अलग नाम से प्रस्तुत किया है राहुल संकृत्यायन ने इसे सिद्ध सामंत युग कहा, मिश्र बंधुओं ने इसे प्रारंभिक काल कहा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे वीरगाथा काल कहा

उक्त समय काल और दशा के आधार पर सारा राष्ट्र एक सूत्र में नहीं बंधा था अपितु छोटे छोटे खण्डों में विभक्त था, और वही खंड उनका राष्ट्र था इस समय साहित्यकार अपने खण्डों /राज्य/ राजाओं के शोर्य का गुणगान किया करते थे और वीरपूजा, धर्म, एवं राजनीति का बखान गीत गाकर किया करते थे। उस समय की राष्ट्रीयता अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा, उसका विस्तार एवं धर्मं का पालन करना ही था। भाव वही था बस सीमाओं का विस्तार कम था इस काल में प्रथम कवि चन्द्रवरदाई जिन्होंने अपने आश्रयदाता पृथ्वीराज चौहान के वैभव और गुणों का वर्णन उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ पृथ्वीराजरासो में किया, इसी दौरान परमाल रासो, वीसलदेव रासो, कीर्तिपताका, कीर्तिलता, विद्यापति की पदावली, पउमचरिउ, आदि रचनाओं के प्रमाण मिलते है सभी रचनाएँ अधिकतर अपने आश्रयदाता के शोर्य का गुणगान किया। जहाँ तक प्रश्न हिंदी भाषा और राष्ट्रीयता का है तो इस काल की रचनाएँ केवल और केवल राष्ट्रीयता को प्रबल बनाने के लिए ही हुई है इस काल में कवि युद्ध की तैयारी गायन के माध्यम से अपने राष्ट्र जीत और सुरक्षा प्रति उत्सुकता और मनोबल को बढ़ा किया जाता था, युद्ध में जाने के समय के गीत राष्ट्र के प्रति उनके कर्तव्यों का बोध कराते थे, राष्ट्र के प्रति त्याग और बलिदान का पाठ केवल पाठ नहीं पढ़ाते अपितु त्याग और बलिदान की भावनाओं को प्रबल करते थे, उक्त समय में प्रत्येक नागरिक का धर्म उनका राष्ट्र के प्रति बलिदान राष्ट्र के प्रति त्याग ही था जो की साहित्यकार अपनी रचनाओं के माध्यम से जनजाग्रति,और जनचेतना की ज्योति जगाने का काम किया करते थे, और भाषा ही केवल एक माध्यम था यह काल हिंदी साहित्य का प्रारंभिक काल है अतः यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी की हिंदी भाषा साहित्य का उदय ही राष्ट्रीयता के लिए हुआ है।

मध्यकाल में हिंदी भाषा का स्वरूप का और विस्तार हुआ जो की बोलियों के रूप में परिलक्षित हुआ जिनमें ब्रज भाषा और अवधी प्रमुख रूप से सामने आयीं साथ ही खड़ी बोली के प्रारंभ नें रचनाकारों को एक नया आयाम दिया मध्यकाल में भक्तिधारा का प्रवाह हुआ जिसके कारण हिंदी साहित्य ने नयी ऊँचाइयों को छुआ। यह काल अनिश्चितता का काल था देश छोटे-छोटे राज्यों में बंटा हुआ था, विदेशियों के आक्रमण तेज हो गए थे इसी काल में देश में सगुण भक्ति धारा और निर्गुण भक्ति धा की गंगा बही, सगुण भक्ति धारा के अंतर्गत कृष्ण भक्ति की रचनाएँ ब्रज भाषा में हुई जिनमें सूरदास, नंददास, निम्बार्क सम्प्रदाय के श्रीभट्ट, चैतन्य संप्रदाय के गदाधरभट्ट, राधाबल्लभ के हितहरिवंश एवं रसखान और मीराबाई आदि प्रमुख रहीं जिन्होंने भाषा परंपरा का निर्वहन किया जो की अपने समय की उच्च श्रेणी की परिनिष्ठित व उच्च श्रेणी की साहित्यिक भाषा थी। वहीं दूसरी ओर अवधी को सूफी कवियों जायासी, कुतुबन, उस्मान, नूरमुहम्मद आदि कवियों ने प्रतिष्ठा प्रदान की राम भक्ति धारा के श्री तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के माध्यम से अवधी को अन्य भाषी क्षेत्रों में भी जन-जन तक पहुँचाया एवं साहित्यिक गरिमा प्रदान की एवं पद्य के क्षेत्र में मानक स्थापित किये, इनके साथ-साथ खड़ीबोली का प्रचलन बढ़ा और इसका केंद्र दक्खन बना जिसमें दादू, मलूकदास, कबीर आदि संतों ने अपनी रचनाएँ रची|

इस समय में भारत अस्थिरता के दौर में था एक तरफ मुगलों का दौर और दूसरी तरफ विदेशियों का आक्रमण एवं तीसरा राष्ट्र का एक सूत्र में ना होना अतः देश कई खण्डों में बंटा हुआ था और लगातार धर्म और संस्कृति पर प्रहार हो रहा था वहीं भक्ति धारा ने देश को एक सूत्र में बांधा और एक राष्ट्र की कल्पना को ज्वलंत किया आध्यात्मिकता और धर्म के माध्यम से जन-जन में उनका धर्म और उत्तरदायित्व और कर्म की अलख जगाई ,व्यक्तिगत विकास के साथ-साथ जीवन शैली का पाठ पढ़ाया वहीं दूसरी तरफ रूढ़ीवादिता और आडम्बरों पर तीखा प्रहार कर कबीर और रहीम जैसे कवियों ने समाज में पनप रही कुरूतियों का घोर विरोध किया। भाषा की दृष्टि से ब्रज, अवधी और खड़ी बोली ने देशवासियों में एक राष्ट्र की कल्पना को जागृत किया साथ ही साथ समाज से कुरूतियों और आडम्बरों को दूर करने का भरसक प्रयास किया यह भारत गंगा जमुनी सरस्वती तहजीब का अनूठा साहित्यिक संगम रहा इस भक्ति धरा ने पूरे देश को एक माला के रूप में तैयार किया अतः हिंदी साहित्य की इस भक्ति धारा ने भारतवर्ष सुसंस्कृत,धार्मिक अध्यात्मिक और जागरूक जनमानस को तैयार किया। राष्ट्रीयता की अद्वितीय मिशाल है किसी भी राष्ट्र के लिए राष्ट्रीयता के इनसे अलग कोई और घटक नही हो सकते जिसने एक राष्ट्र की कल्पना को साकार किया राष्ट्रीयता के विकास का स्वर्णिम काल है|

अठारहवीं शताब्दी के उपरांत देश में यूरोपीय आक्रमण तेज हो गए एवं ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना हो गई वहीं जन जन अपने राष्ट्र की आजादी के लिए और कटिबद्ध होता चला गया इस दौर में तकनीकी का भी विकास वहीं पद्य के साथ गद्य का विकास हुआ जिससे हिंदी साहित्य में रचनाकारों की बाढ़ आ गई। इस दौर में विभिन्न भाषाओं में विभिन्न रचनाएँ विभिन्न दृष्टीकोण से रची गई जिसमें कहानी,नाटक उपन्यास एवं पत्रकारिता का उदय हुआ जिसने आजादी के संघर्ष को एक दिशा प्रदान की इस काल के प्रारंभ में भारतेंदु हरिश्चंद्र, जगन्नाथ दस रत्नाकर, श्रीधर पाठक, रामचंद्र शुक्ल, आदि नें अपनी रचनाएँ

ब्रज भाषा में की,इसी दौरान महावीर प्रसाद दिवेदी नें गद्य को एक विशेष पहचान एवं स्वरूप प्रदान किया इनकी प्रेरणा स्वरूप एवं प्रयास के बाद मैथिलीशरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय, नाथूराम, रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, राम कुमार वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि रचनाकारों नें हिंदी साहित्य को नई ऊँचाईयों तक पहुचाया।

1857 की क्रांति के दौर में राष्ट्रीयता का प्रचार प्रसार क्षेत्रीय भाषा और हिंदी भाषा में लोकगीत और पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से होने लगा कालान्तर में कविवचनसुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन भी प्रकाशित होने लगी, साथ ही भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी जैसे नाटक भी रंगमंच में बहुत लोकप्रिय हुए, श्रीनिवासदस का उपन्यास परीक्षागुरु (हिंदी का पहला उपन्यास) की रचना हुई आचार्य महावीरप्रसाद दिवेदी ने सरस्वती पत्रिका का संपादन किया। हिंदी साहित्य की इन रचनाओं ने लगातार हिंदुस्तानियों में राष्ट्र प्रेम की भावना का संचार किया और देश में जनचेतना, जनजागरण और जनक्रांति का विगुल बजा दिया|

मुझे तोड़ लेना बनमाली उस पथ पर देना तुम फेंक।

मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पर जावें वीर अनेक।

❒❒❒

---

1. सहायक प्राध्यापक शिक्षा विभाग गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर छ. ग. मोबाइल न. 8815993312 ईमेल bkkrmaiharedu@gmail.com

वैश्विक अभिव्यक्ति की ओर अग्रसर हिंदी भाषा

-स्वप्निल पांडेय

त्रिनिडाड, टोबागो, मॉरीशस, ब्रिटेन आदि देशों में हिंदी पर कार्य किया जा रहा है। यहां अप्रवासी भारतीयों द्वारा धन और श्रम दोनों की व्यवस्था अपने आप कर रहे हैं भारत को चाहिए कि विदेशों में बसे भारतीयों में जो भी लेखक, हिंदी साहित्य को प्रोत्साहित कर रहे हैं उसे भारत द्वारा निश्चित रूप से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

प्रस्तावना

दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित भारत एक विशाल लोकतांत्रिक गणराज्य है। लोकतंत्र की सबसे बड़ी ताकत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है। जब से सृष्टि का निर्माण किया गया तभी से भाषा का संबंध मानव समाज से माना गया है। भाषा मनुष्य जीवन का एक ऐसा अंग है जिसके के अभाव में मनुष्य गूंगा हो जाता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने कहा -

चार कोस पर बदले पानी / आठ कोस पर वाणी।

जो आज भी चरितार्थ हो रहा है।

समाज में अभिव्यक्ति का सबसे बड़ा माध्यम भाषा को समझा जाता है इसी कारण भाषा के माध्यम से व्यक्ति सब को अपना बनाने की क्षमता रखता है जहां तक सभी को अपनी भाषा अपनी वाणी से मंत्रमुग्ध करने का कार्य है वह तो अवश्य हिंदी भाषा के माध्यम से ही संभव है इसी कारण हिंदी विश्व की समस्त भाषााओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान रखती है। जो निश्चित रूप से जनसामान्य के बीच अपना राष्ट्रीय स्वरूप स्थापित कर रहा है। औद्योगिक क्रांति के समय संपूर्ण विश्व में उपनिवेश युग की शुरूआत हुई थी जिसका फल हुआ कि बड़े राष्ट्रों ने छोटे राष्ट्रों को गुलाम बनाना प्रारंभ कर दिया। इन राष्ट्र के बढ़ने के साथ ही अंग्रेजी भाषा भी वैश्विक पटल पर छाने लगी जिसकी छाप भारत पर भी पढ़नी प्रारंभ हो गई परंतु इसको भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि देश में हिंदी बोलने लिखने वालों की भी संख्या अच्छी खासी है।आज हिंदी विश्व में 3 सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है विदेशों में बसे भारतीय मूल के लोग हिंदी माध्यम से ही अपना कार्य संपादन करते हैं अमेरिका में बसे अप्रवासी भारतीयों का हिंदी के प्रति रुझान, मॉरीशस जैसे देष जहां पर हिंदी ने वैश्विक मंच पर अपनी छाप बना रखी है जिससे हिंदी के प्रति लोगों का रुझान बढ़ा। आज हम सभी को मिलकर अपने विश्व धरोहर को बचा के रखने का

प्रयास करना चाहिए। इस भाषा को वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषा के मुख्यधारा से जोड़े जाने का प्रयास किया जा रहा है जिसका परिणाम है कि विश्व में प्रत्येक भारतीय ने इसे अपने सांस्कृतिक अभिव्यक्ति से जोड़कर देखने का प्रयास किया है। वर्तमान में नेपाल ,फिजी, मॉरीशस, त्रिनिदाद, टोबैगो में हिंदीभाषी अपनी पहचान बनाने में प्रयासरत हैं इसके साथ ही ब्रिटेन लैटिन, अमेरिका, फ्रांस और अफ्रीकी देशों में भी हिंदी का वर्चस्व बढ़ता ही जा रहा है।

आज यदि देखा जाए तो हिंदी भाषा में वैश्विक स्तर पर स्थापित होने की पूरी क्षमता है परंतु यदि शासन सरकार की तरफ से इस पर बल तथा सहयोग दिया जाए तो हिंदी भाषा भी वैश्विक स्तर पर स्थापित होने की पूरी क्षमता रखती है परंतु यदि शासन सरकार की तरफ से इस बात पर बल दिया जाए तथा सहयोग दिया जाए तथा प्रचार-प्रसार में वृद्धि की जाए तो शायद ही भारत का कोई क्षेत्र हो जहां हिंदी भाषा स्थापित न हो सके। यदि भारत में समाज तथा समाजसेवी संस्थाएं सरकारी अनुदान की स्वयंसेवी संस्था पूरे मनोयोग से कार्य न कर के पन्नों पर चढ़ती जा रही है अन्यथा क्या कारण है कि पूरे भारत में हिंदी के विकास के नाम पर अरबों रुपए पानी की तरह आने के पश्चात भी परिणाम सकारात्मक रूप से नहीं परिलक्षित हो रहा है ।

जब भी हम हिंदी को विश्व पटल पर अंकित करने की बात करते हैं तो अपने संकुचित पूर्वाग्रह को निश्चित रूप से छोड़ देते हैं । विश्व पटल पर हिंदी को स्थापित करने के लिए समग्रता के साथ रचनाओं साहित्य को भी स्थान देना होगा जो अप्रवासी भारतीयों द्वारा लिखी जाती है। यदि भारत अंतरराष्ट्रीय मित्रों के साथ मधुर संबंध बनाए तो हिंदी भाषा को भी स्थान मिलेगा।

त्रिनिडाड, टोबागो, मॉरीशस, ब्रिटेन आदि देशों में हिंदी पर कार्य किया जा रहा है। यहां अप्रवासी भारतीयों द्वारा धन और श्रम दोनों की व्यवस्था अपने आप कर रहे हैं भारत को चाहिए कि विदेशों में बसे भारतीयों में जो भी लेखक, हिंदी साहित्य को प्रोत्साहित कर रहे हैं उसे भारत द्वारा निश्चित रूप से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

अपनी राष्ट्रभाषा के विकास में राजनीतिक सरोकारों का अपना महत्त्व होता है जिसे नकारा नहीं जा सकता रूस में आज हिंदी का प्रचलन है उसका मुक्त भारत संबंधों की प्रगाढ़ता को दिया जाता है 1921 में यंग इंडिया में छपे लेख में महात्मा गांधी ने कहा आप हिंदी साहित्य की गरीबी की बात करते हैं, वर्तमान हिंदी की गरीबी की बात करते लेकिन अब तुलसीदास की रामायण में लगाएं तो शायद आप मुझसे सहमत हैं कि कोई और पुस्तक ऐसी नहीं जो आदिम भाषाओं में संसार के साहित्य में इसकी बराबरी कर सके एक पुस्तक ने मुझे आशा और श्रद्धा प्रदान की है कि जो साहित्यिक लालित्य में कविता और धार्मिक भावनाओं की गहराई में किसी भी आलोचना और किसी परीक्षा में टिक सकती है ।

आज वैश्विक स्तर पर प्रयासों का परिणाम है कि अमेरिका में अप्रवासी भारतीयों ने अपनी दुकानों के नाम हिंदी में लिखना प्रारंभ किया।

आज विश्व में देखा जाए तो उषाप्रियंवदा ऐसी रचनाकार जिसने अमेरिका में रहते हुए हिंदी साहित्य में लेखन कार्य किया, भारतीय मूल की अमेरिकी उपन्यासकार शिक्षाविद सुषम बेदी ने अपने उपन्यासों

साहित्य कहानियों के माध्यम से हिंदी का प्रचार-प्रसार किया जिसमें सबसे प्रमुख हवन, वापसी आदि हैं। ब्रिटेन की हिंदी साहित्य त्रैमासिक पत्रिका पुरवाई की संपादक का हिंदी समिति यूके की उपाध्यक्ष रही उषा राजे का भी योगदान महत्त्वपूर्ण है। पूर्णिया बर्मन के संपादन में हिंदी इंटरनेट पत्रिका अभिव्यक्ति और अनुभूति खूब सराहना की गई है आज बहुत सारे ऐसे कारण हैं जिससे यह प्रमाणित हुआ कि यदि वैश्विक स्तर पर हिंदी को स्थापित करना है तो विदेशी, स्वदेशी सभी को मिलकर हिंदी को एक मंच पर लाना होगा हम निरंतर प्रयासरत रहेंगे तो हिंदी निश्चित रूप से विश्व भाषा के रूप में प्रमाणित होगी।

औद्योगिक क्रांति के समय जो विश्व में उपनिवेशवाद के युग का प्रारंभ हुआ तब दुनिया के सभी छोटे-बड़े देशों के विकास के नए रूप जिसमें ब्रिटेन, फ्रांस, पुर्तगाल और पश्चिम के अन्य देशों ने छोटे राष्ट्रों को गुलाम बनाना प्रारंभ कर दिया। इसी गुलामी की बेड़ियों के साथ ही पश्चिमी भाषा अंग्रेजी का विश्व स्तर पर प्रभाव स्थापित होने लगा जिसका परिणाम हुआ कि अंग्रेजी भाषा विश्व स्तर पर स्थापित होने लगी और अन्य सभी भाषाओं को विश्व में दोयम दर्जा प्राप्त होने लगा। कई भाषाएं तो अपना अस्तित्व ही खत्म कर ली निश्चित रूप से गुलामी के 100 वर्षों का असर भारत पर भी पड़ना स्वाभाविक था जिसका परिणाम हुआ कि हिंदी को अपनी साख बचाने के लिए अंग्रेजी से जबरदस्त प्रतिस्पर्धा करनी पड़ी जो आज भी निरंतर जारी है। परंतु अपनी लोच और उत्तम अभिव्यक्तिपूर्ण क्षमता के कारण हिंदी हिंदुस्तान का सही अर्थ में प्रतिनिधित्व करती हुई दिखाई दे रही है। आज शिक्षा का जो स्वरूप है वह पूर्णतः पश्चिमी सभ्यता की देन है। हमने पश्चिम की भाषा, शिक्षा, रहन-सहन आदि सभी को हमने अपना लिया है। आज हमारी संवैधानिक प्रावधान, न्याय व्यवस्था, शासन तंत्र, चिकित्सा, प्रबंधन सभी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी में ही स्थापित हो चुकी है। आज विश्व शक्ति संरचना जो स्थापित है वह भूमंडलीकरण का ही रूप है जिसका वास्तविक स्वरूप बाजारवादी हो गया है। संक्रमण की तरह फैलता हुआ बाजारवाद हमारी जीवनशैली को प्रभावित करने की क्षमता रखता हैं जो किसी न किसी रूप में विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। आज हिंदी के विकास के लिए विश्व के लगभग 35 विदेशी रचनाओं का हिंदी में अनुवाद किया जा चुका है। हिंदी का केंद्रीय सचिवालय मॉरीशस में बनना और हिंदी को विज्ञान प्रबंधन से जोड़ने के लिए तथा यूनाइटेड नेशन में हिंदी का स्थान दिलाने के लिए कारगर है।

देखा जाए तो चीन, श्रीलंका, कंबोडिया, लाओस थाईलैंड आदि देशों में रामलीला के माध्यम से राम के चरित्र का मंचन किया जा रहा है, वहां के स्कूलों के पाठ्यक्रम में रामलीला को शामिल किया गया है। हिंदी वर्तमान में ना सिर्फ भाषा बल्कि बाजारवाद की भाषा बन गई है। उपभोक्तावादी संस्कृति की पहचान दिलाने का प्रयास किया है। हिंदी की भाषा संस्कृति को विकसित करने में संत महात्माओं, फकीरों, रोजी-रोटी की तलाश में जुटे लोगों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। जिसका परिणाम है कि आज हिंदी वैश्विक स्तर पर अपनी छाप छोड़ रही है, इंजीनियरिंग ,मेडिकल, प्रबंध हिंदी में संचालित की जा रही है जो कहीं ना कहीं हिंदी के पुनर्जागरण को प्रेरित कर रही है। हिंदी विश्व में तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है इस भाषा को वैश्विक स्तर पर संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषा के मुख्यधारा से जोड़े जाने का प्रयास किया जा रहा है जिसका परिणाम है कि विश्व में प्रत्येक भारतीय इसे अपनी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति से जोड़कर देखने का

प्रयास कर रहा है आज बाजारवादी उपयोगितावाद अपना व्यापार बढ़ाने के लिए अपने स्थानीय भाषा का प्रयोग कर रहे हैं 10 जनवरी को जब लगभग 180 देशों में हिंदी दिवस का आयोजन किया जाता तभी हम हिंदी भाषा में बात करते हैं तब हमारा उद्देश्य हिंदी के प्रचार-प्रसार को ही माना जाता है। सूचना क्रांति के समय में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को महत्त्वपूर्ण मानना होगा इसे कंप्यूटर की भाषा बनाना होगा, हिंदी भाषा के सॉफ्टवेयर बनाने होंगे, हिंदी कूटो को बढ़ाना होगा, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी को स्थापित करने के लिए, हिंदी को प्रतिष्ठित करने के लिए भारतीय संस्कृति संबंध परिषद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा पीठ की स्थापना की जाए शिक्षकों की नियुक्ति की जा रही । हिंदी प्राध्यापकों का पैनल तैयार किया जा रहा है जिससे हिंदी भाषा को वैश्विक स्तर पर स्थापित किया जा सके।

विभिन्न विज्ञापन एजेंसियों में सारे विज्ञापन अंग्रेजी भाषा में बनते हैं बाद में किसी भी प्रकार से काम चला अनुवाद करके उसको तोड़ मरोड़ कर प्रस्तुत किया जाता है । सभी सरकारी कार्यालय में तोड़ मरोड़ कर हिंदी भाषा को प्रस्तुत किया जा रहा है। हिंदी और अंग्रेजी को मिलाकर हिंगलिश बना दी गई है आज हिंदी और अंग्रेजी की खिचड़ी जो बनाई गई वह कहीं ना कहीं विश्व हिंदी भाषा की सबसे बड़ी विडंबना बन गई

हमें हिंदी के प्रति अपने उत्तरदायित्व पर भी विचार किया जाना चाहिए। हम हिंदी के लिए जितना भी कर पाए हमें वह करना चाहिए । यह हमें सोचना चाहिए कि क्या हिंदी दिवस मनाने से ,हिंदी साहित्य को समृद्ध करने से सभा, सम्मेलन करने से हिंदी भाषा बन सकती है। हम सभी को विश्वव्यापी प्रयास हम कागजी योजनाएं बनाकर उसे पूर्ण नही कर सकते। आज की आवश्यकता है कि वैश्विक स्तर पर प्रयास करके ऐसी भूमि तैयार की जाए जिससे हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित हो सके। इस दिशा में बड़े स्तर पर सभी कार्य करना निश्चित है कि आने वाला समय हिंदी को स्थापित करने में मिलेगा और हिंदी का स्थान मिलेगा परंतु हमें भी अपने प्रयासों में कोई कमी नहीं करनी चाहिए।

संदर्भ

1. https://www.nationalistonline.com/special-story-on-hindi-diwass-2/
2. https://www.jagran.com/news/national-hindi-on-its-way-to-become-a-global-language-23069040.html
3. https://gshindi.com/category/articles/hindi-in-age-of-globalisation
4. विश्व भाषा की ओर हिंदी के बठते कदम:- राकेश शर्मा
5. आजकल
6. https://www.google.com/search?q=vishv+hindi+divas&rlz=1C1GCEJ_enIN1029IN1029&sxsrf=AJOqlzWNp9ptt2hOrbweh1C16RaJlLrjWA:1674465071384&source=lnms&tbm=isch&sa=X&ved=2ahUKEwjj4pK-rN38AhU6CrcAHQnlDJAQ_AUoAXoECAEQAw&biw=1280&bih=632&dpr=1#imgrc=HDXXidG2aINziM

❑❑❑

1. असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान विभाग चंद्रकांति रामावती देवी आर्य महिला पीजी कॉलेज

त्रिपुरा में हिन्दी का भाषाई महत्त्व

–श्रीमती पॉली भौमिक

यह तो रही शिक्षा के स्तर पर हिन्दी भाषा का प्रभाव और प्रचार-प्रसार इसके अलावा साहित्यिक जगत में भी हिन्दी पर जोरों से काम चल रहा है। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा द्वारा द्विभाषिक कॉकबोरोक – हिन्दी शब्दकोश का निर्माण कार्य हो चुका है। कई अहिंदी भाषी और हिन्दी भाषी साहित्यकार हिन्दी पर मौलिक रचना कर रहे हैं। साथ ही त्रिपुरा की विभिन्न लोककथा और लोकगीतों का हिन्दी अनुवाद हो रहा है

शोध सार: त्रिपुरा भारत के पूर्वोत्तर में स्थित एक छोटा सा सुंदर, मनोरम और पर्वतीय राज्य है। इसकी राजधानी अगरतला है। इस राज्य की स्थापना 14वीं शताब्दी में इंडो-मंगोलियन आदिवासी मुखिया द्वारा की गई थी जिसने हिंदू धर्म अपना लिया था। इसके अलावा यह भी माना जाता है की ययाति वंश के 39 वें राजा 'त्रिपुर' के नाम पर इस राज्य का नाम त्रिपुरा पड़ा। एक अन्य मान्यता के अनुसार देवी दुर्गा के 51वें शक्तिपीठों में एक शक्तिपीठ त्रिपुरासुंदरी माताजी का मंदिर है जो दक्षिण त्रिपुरा यानी उदयपुर में स्थित है, इसी मंदिर के नाम से इस राज्य का नाम त्रिपुरा पड़ा।

त्रिपुरा में मुख्य रूप से दो प्रमुख भाषाएँ बोली जाती हैं - बांग्ला और कॉकबोरोक (त्रिपुरी जनजातियों की भाषा) और आधिकारिक भाषाएँ हैं - अंग्रेजी, बांग्ला और कॉकबोरोक। बांग्ला भाषा का प्रभाव त्रिपुरा में अधिक है क्योंकि यहाँ बंगाली आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा है साथ ही उन्नीस प्रमुख जनजातियों की भाषा यहाँ बोली जाती है। कॉकबोरोक भाषा की उत्पत्ति तिब्बती-बर्मन भाषा परिवार से हुई है परंतु इनके पास अपना कोई लिपि न होने के कारण यह बांग्ला या रोमन लिपि में लिखी जाती है।

इस प्रकार से त्रिपुरा एक अहिन्दी भाषी क्षेत्र है। परंतु यहाँ हिन्दी भाषा का प्रयोग अहिन्दी भाषियों द्वारा किया जाता है, जैसे व्यावसायिक कारोबारी, रिक्शा चालक, नाई, कूली, रेलकर्मियों, मजदूर तथा सेनाओं द्वारा हिन्दी भाषा का प्रयोग होता है। त्रिपुरा में हिन्दी सेतु का काम कर रही है जो विभिन्न भाषा-भाषियों को एक सूत्र में बांधकर इस क्षेत्र की भाषिक, ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान को बढ़ावा दे रही है। हमारी राष्ट्रीय एकता को और सशक्त रूप प्रदान कर रही है। बहुभाषिक क्षेत्र और लिपि रहित होने से देवनागरी लिपि एक सशक्त विकल्प बन गई है जो यहाँ की भाषाओं में छिपे मौखिक साहित्य, रीति-रिवाज, आचार-विचार आदि को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाने में सफल माध्यम बन रही है। इसके अलावा हिन्दी को इस अहिन्दी क्षेत्र में आगे बढ़ाने

में विभिन्न संस्थाओं का भी प्रमुख योगदान है जैसे हिन्दी विभाग - त्रिपुरा विश्वविद्यालय, विद्या भारती के विद्यालय, आकाशवाणी विद्यालय, महाविद्यालय, उच्च शिक्षा में हिन्दी भाषा का प्रयोग सिनेमा, मीडिया व विभिन्न टेलिविज़न के कार्यक्रम इत्यादि।

बीज शब्द : त्रिपुरा राज्य, हिन्दी भाषा, विद्यालय, लिपि, राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक, धार्मिक, भाषाई महत्त्व।

प्रस्तावना:

त्रिपुरा भारत का तीसरा छोटा राज्य है,और इस राज्य का क्षेत्रफल १०४९२ कि.मी. हैं। इसकी राजधानी अगरतला है। इसके उत्तर, पश्चिम और दक्षिण में बांग्लादेश स्थित हैं। वैसे तो यहाँ कि मुख्य भाषा बांग्ला और कॉकबोरोक है परंतु आधिकारिक तीन भाषाओं का प्रयोग किया जाता है ------- अंग्रेजी, बांग्ला और कॉकबोरोक। आधुनिक त्रिपुरा में त्रिपुरी राजवंशियों ने कई शताब्दियों तक राज किया था। वैसे तो त्रिपुरा की स्थापना १४ वीं शताब्दी में माणिक्य नामक इंडो मोनगोलियाँ आदिवासी मुखिया ने कि थी। सन १८०८ में ब्रिटिश साम्राज्य ने इसे अपने अधीन कर लिया और १९५६ ई. में यह भारतीय गणराज्य में शामिल हुआ और १९७२ ई. इसे राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ। त्रिपुरा में आधे से अधिक भाग पर्वतों और जंगलों से घिरा हुआ है और प्रकृति प्रेमियों को यह राज्य और आकर्षित करता है। त्रिपुरा का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों जैसे महाभारत और पुरानो में भी प्राप्त होता है। त्रिपुरा प्रमुख रूप से एक अहिंदी भाषी क्षेत्र हैं परंतु पूर्वोत्तर के अन्य सातों राज्यों कि तरह यहाँ भी हिन्दी सुनने, समझनें और बोलनें वाले लोग है और यदि हम पठन-पाठन के क्षेत्र को देखें तो हिन्दी का उत्तरोत्तर विकास होता आ रहा है। त्रिपुरा को हम विविधता में एकता का राज्य कह सकते हैं क्योंकि यहाँ कि प्रमुख भाषा बंग्ला और उन्नीस जनजातियों कि भाषा कॉकबोरोक का ही अधिकतर प्रयोग होता है परंतु शिक्षा, व्यापार इत्यादि दृष्टि से देखा जाए तो हिन्दी भाषा का भी प्रयोग वर्तमान में हर क्षेत्रों में संपर्क हेतु जोरों से हो रहा है। हिन्दी एक ऐसी भाषा है जिसको राष्ट्र भाषा का दर्जा अनेकता में एकता के तार पिरोने के लिए दिया गया है। उत्तर पूर्व में हिन्दी सेतु का कार्य कर रही है जो विभिन्न भाषा के लोगों के संस्कृतियों को जोड़कर रखने का काम कर रही है। यहाँ लोगों में हिन्दी के प्रति लगाव निरंतर बढ़ रही है। यहाँ सेना, व्यापार के लिए हिन्दी भाषी क्षेत्रों से आए व्यापारियों,उत्तर प्रदेश, बिहार इत्यादि राज्यों से आए मजदूरों के कारण हिन्दी का प्रचार-प्रसार निरंतर हो रहा है। साथ ही विभिन्न संस्थाओ द्वारा हिन्दी के विकास के लिए प्रयास किए जा रहा हैं। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा द्वारा पूर्वोत्तर तथा भारत के विभिन्न राज्यों में बसने वाले हिंन्दी भाषी लोगों के लिए कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं जैसे बी.एड, एम. एड इत्यादि। इन नि:शुल्क पाठ्यक्रमों द्वारा छात्रों के रोजगार के मार्ग खुल रहे हैं। इसके अलावा हिन्दी अध्यापकों के लिए नवीकरण पाठ्यक्रमों का भी आयोजन किया जाता है जिससे कि अध्यापकगण अपने को सदा नवीनतम ज्ञान से समृद्ध कर सके। एक और संस्था राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा द्वारा अहिंदी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी सीखाने के लिए कई हिन्दी के पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं जैसे हिन्दी प्रवीण, पारंगत, कोविद, निष्णात, रत्न इत्यादि। इन पाठ्यक्रमों को करने के बाद वे हिन्दी में उच्च शिक्षा ग्रहण कर अपने लिए रोजगार का रास्ता खोज सकते हैं जैसे हिन्दी प्रचारक, हिन्दी अध्यापक, हिन्दी में पत्रकारिता, मीडिया इत्यादि। त्रिपुरा में हिन्दी के प्रचारक श्री रामेंद्र पाल महोदय जी हैं

जिनका हिन्दी के प्रचार प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान है। त्रिपुरा में हिन्दी स्कूल नाम से माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालय हैं जहां से प्रतिवर्ष सौ – सौ छात्र उत्तीर्ण होकर उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। त्रिपुरा में विभिन्न महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर पर भी हिन्दी शिक्षण हो रहा है। हिन्दी विभाग महाविद्यालयों में मौजूद हैं जहां पर हिन्दी साहित्य की पढ़ाई हिन्दी और अहिंदी भाषी शिक्षकों द्वारा हो रही है जिन्होंने हिन्दी साहित्य में उच्च शिक्षा प्राप्त की है। त्रिपुरा विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग है जहां पर हिन्दी की स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर कि पढ़ाई के साथ–साथ हिन्दी में शोध कार्य भी हो रहे है जो हिन्दी के विभिन्न उच्च स्तर के शिक्षक और विद्वान कर रहे हैं।

यह तो रही शिक्षा के स्तर पर हिन्दी भाषा का प्रभाव और प्रचार–प्रसार इसके अलावा साहित्यिक जगत में भी हिन्दी पर जोरों से काम चल रहा है। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा द्वारा द्विभाषिक कॉकबोरोक – हिन्दी शब्दकोश का निर्माण कार्य हो चुका है। कई अहिंदी भाषी और हिन्दी भाषी साहित्यकार हिन्दी पर मौलिक रचना कर रहे हैं। साथ ही त्रिपुरा की विभिन्न लोककथा और लोकगीतों का हिन्दी अनुवाद हो रहा है जिससे त्रिपुरा कि लोकसंस्कृति, लोकपरम्परा से भारत के अन्य राज्यों के लोग अवगत हो रहे हैं। इस तरह से यहाँ के साहित्य को पहले केवल यहीं के लोग जानते थे परंतु अब इसका रसास्वादन विश्व भर के लोग कर रहे हैं। इस प्रकार एक-दूसरे कि भाषा कला संस्कृति से पहचान हो रही है। हिन्दी एक तरह से अनुवाद कि भाषा बनकर महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है, और यहाँ कि भाषाओं के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

शोध आलेख का उद्देश्य :

इस शोध आलेख का उद्देश्य है त्रिपुरा में हिन्दी भाषा के प्रभाव और प्रचार-प्रसार से लोगों को अवगत कराना साथ ही हिन्दी के क्षेत्र में किन-किन विद्वानों का क्या योगदान रहा है या वे क्या-क्या कार्य हिन्दी के लिए कर रहे हैं इसकी जानकारी पाठक वर्ग को देना।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि त्रिपुरा एक अहिंदी क्षेत्र होते हुए भी यहाँ पर हिन्दी भाषा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। हिन्दी में बोलचाल के साथ-साथ शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में बहुत सराहनीय कार्य कर रही है।

संदर्भ :

1. Tipperaa – Encyclopedia 10 सितम्बर 2014 को पुरलेखित.
2. रहमान, सय्यद अमानुर; वर्मा, बलराज 5 अगस्त 2006. The beautiful India.
3. पूर्वोत्तर में हिन्दी – हिन्दी विवेक https://hindivivek.org/335
4. त्रिपुरा में हिन्दी की गतिविधियां http://hindi-khabar.hindyugm.com/2010/10/hindi-gatividhiyan-in-tripura.html?m=1.

❐❐❐

1. सहकारी अध्यापिका, हिन्दी विभाग रामठाकुर महाविद्यालय, अगरतला त्रिपुरा- 799003 ई-मेल - polybhowmick123@gmail.com Mob: 9863195241

पत्रकारिता और हिन्दी भाषा का आंतरिक सम्बन्ध

–डा॰ आनंद जायसवाल
–ममता रानी

पत्रकारिता समाज का वह आईना है जिसमें मनुष्य की आस्थाओं, विचारों, मूल्यों को सही रूप से समाज के सामने रखा जाता है । पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य साहित्यिक-कलात्मक रूझान को बढ़ाना, नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा कराना, भौतिकवादी दुनिया को सही मार्ग दिखाना, सुखी जीवन के द्वार खोलना आदि।

सार:

आज के इस युग को जनसंचार का युग कहना उचित होगा। जनसंचार का यह युग आधुनिक काल से चला आ रहा है जिसमें पत्रकारिता ने अपना विशेष स्थान बनाया हुआ है। हिन्दी भाषा और पत्रकारिता का प्रभाव वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ज्यादा दृष्टिगत रहा है। पत्रकारिता के क्षेत्र में हिन्दी भाषा की उदंत मार्तण्ड मासिक पत्रिका का सबसे पहले प्रकाशन हुआ। लेकिन कुछ समय बाद ही इस पत्रिका को बंद कर दिया। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में हिन्दी पत्रकारिता को निम्न चरणों में बांट दिया, प्रथम चरण 1826 से 1867, द्वितीय चरण 1867 से 1900, तृतीय चरण 1900 से 1923, चतुर्थ चरण 1920 से 1947 और पंचम चरण 1947 से आजतक माना गया है।

इसका प्रकाशन मई 1826 कलकत्ता के कोलूतोला नामक मोहल्ले में जुगलकिशोर शुकल ने किया था। हिन्दी भाषा के आगमन से पत्रकारिता के क्षेत्र में बहुत विकास हुआ। जिससे समय-समय पर इसकी मांग भी बढ़ती जाने लगी और पत्रकारिता समाज को शिक्षित करने के साथ-साथ पाठकों और हिन्दी साहित्यकारों को अपने साथ जोड़ने लगी। आज के इस दौर में पत्रकारिता का महत्त्व इतना बढ़ गया है कि गांव-2 व शहर-शहर में इसकी मांग बढ़ती ही जा रही है।

मूल शब्द: जनसंचार, परिप्रेक्ष्य, दृष्टिगत, प्रकाशन, आगमन, पाठकों, पत्रकारिता आदि।

विस्तृत शोध-पत्र:

आधुनिक युग से पत्रकारिता समाज के हित में अपना योगदान देती आ रही है। आज के समय में भारत में अनेक प्रकार के पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित की जा रही है। जिनमें हिन्दी पत्रकारिता अपनी अलग पहचान बनाए हुए है। पत्रकारिता समाज के लिए एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो अपने राज्य, प्रदेश की प्रतिदिन होने वाली गतिविधियों और समाज में होने वाली दिन प्रतिदिन की घटनाओं को अपने तरीके से प्रकाशित करने का कार्य करता है। हिन्दी पत्रिका उदंत

मार्तण्ड प्रकाशित होने से पहले कुछ नगरों की प्रसिद्ध पत्रिका ऐंग्लोइंडियन अंग्रेजी भाषा में थी। यह पत्र हर मंगलवार को निकलता था जिसके केवल 68 अंक ही प्रकाशित हुए थे, और दिसंबर 1896 में इसका प्रकाशन बंद हो गया। जिसके अंतिम अंक में लिखा है उदंत मार्तण्ड की यात्रा शुरू हो रही है। 1826 उदंत मार्तण्ड के प्रकाशन से हिन्दी पत्रिकाओं में हिन्दी भाषा की यात्रा का शुभारंभ हो गया।[1] 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में पत्र-पत्रिकाओं का दौर चला हुआ था। जिसमें रोचक तथ्य हिन्दी भाषा में पत्रकारिता का पदार्पण, साप्ताहिक और मासिक पत्रों के रूप में किया जाने लगा। हिंदी भाषा आज केवल प्रदेश की भाषा न रहकर विदेशों में भी अपनी महत्त्वपूर्ण छवि बनाए हुए है। पत्रकारिता की विश्वसनीयता और विकास में हिन्दी पत्रिकाओं सारथी, जयहिन्द, स्वराज्य, प्रहरी, लोकमित्र, जिन्दगी, देहाती दुनिया, प्रकाश, जैसी हजारों साप्ताहिक, अर्द्ध साप्ताहिक, मासिक, पत्र हिन्दी पत्रकारिता का ध्वज वाहक बने हुए हैं। पत्रकारिता हिन्दी भाषा के विराट व्यक्तित्व का स्वर है। यह भारतीय जनमानस की जान्हवी, प्रेम की मंदाकिनी है। इसमें देश की एकता सन्निहित है, जो राष्ट्र की केन्द्रीय शक्ति है। हिन्दी भाषा को भारत की जनवाणी कहा जाता है जिसमें स्वतंत्रता आंदोलन और उत्कर्ष की कहानियों का समन्वय है। जिसकी संवाहिका पत्रकारिता बनी हुई हैं। हिन्दी पत्रकारिता में प्रारंभ से आज तक विभिन्न प्रकार के बदलाव आये हैं जिसमें पत्रकारों ने देश को अंग्रेजों और उनकी भाषा अंग्रेजी से मुक्त करना, राष्ट्रीय अस्मिता का बोध कराना, घर-घर राष्ट्रभक्ति की लहर जगाना, राष्ट्रभाषा को प्रांजल रूप देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए पत्रकारों ने अपने-अपने पत्र-पत्रिकाओं के लिए हिन्दी भाषा का अधिक-से अधिक प्रयोग किया है।2

पत्रकारिता:

पत्रकारिता समाज का वह आईना है जिसमें मनुष्य की आस्थाओं, विचारों, मूल्यों को सही रूप से समाज के सामने रखा जाता है। पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य साहित्यिक-कलात्मक रूझान को बढ़ाना, नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों की प्रतिष्ठा कराना, भौतिकवादी दुनिया को सही मार्ग दिखाना, सुखी जीवन के द्वार खोलना आदि। आधुनिक युग में पत्रकारिता को युगबोध, राष्ट्रीय चेतना, जनजागरूकता एवं व्यापक जनसंवेदना को संप्रेषित करने का सर्वसुलभ उन्नत जनमाध्यम माना जाता था, जो लोकमानस में सामुदायिक सहभागिता की जीवन विद्या है जिसमें समाज के लोगों की आत्मा के स्वर उसके सुख-दुख, जय-पराजय, आशा-निराशा, आकांक्षा तथा सामयिक एवं सनातन सत्य मुखर हो उठते हैं। वर्तमान पत्रकारिता के अंतर्गत तत्कालीन समाचारों, विचारों का लिपिबद्ध मुद्रित प्रकाशन अर्थात् इसमें पत्र-पत्रिकाएं ही सम्मिलित नहीं हैं बल्कि रेडियों, दूरदर्शन तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक जनसंचार माध्यमों द्वारा भव्य प्रस्तुति एवं आकर्षक मौखिक प्रसारण भी समाहित है। इससे स्पष्ट होता है कि आज के इस युग में पत्रकारिता लोकतंत्र शासन प्रणाली का अविभाज्य अंग बन गई है। जिसमें पत्रकारिता को लोकतंत्र के चौथे स्तंभ की संज्ञा दी गई है। पत्रकारिता जनमत की अभिव्यक्ति का सशक्त साधन भी है क्योंकि यह समस्त मुद्दों को जनता के सामने बड़ी कलात्मकता के साथ रखती है।[3] अंग्रेजी में पत्रकारिता को जर्नलिज्म कहा जाता है जर्नलिज्म शब्द लैटिन भाषा के धुर्नालिस (Diurnalis) से लिया गया है, जो फ्रैंच भाषा में जनरल (Journal) हो गया तथा जिसका शाब्दिक अर्थ हैं - दैनिक [4]

हिन्दी भाषा का विकास:

हिन्दी भाषा मानव के बुद्धि-कौशल, विवेक, चिन्तन आचार व्यवहार तथा संस्कृति की भाषा है। यह ऐसी जीवंत भाषा है जिसमें अन्तर्निहित रचनात्मक शक्ति, व्यवहार धार्मिकता एवं गतिमयता है। हिन्दी भाषा के विकास को भारतीय लोक-चेतना का विकास कहा जाता है। नवजागरण और मुक्ति की कामना के प्रसार में हिन्दी का योगदान अविस्मरणीय है। केशवचन्द और राजाराम मोहन राय ने हिन्दी को भारत की एकमात्र मुक्तिदायिनी भाषा माना था। स्वतंत्रता लड़ाई में हिन्दी ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। मुहम्मद इकबाल ने 'हिन्दी हैं हम वतन है हिन्दोस्ता हमारा का नारा दिया था जो आज भी भारत देश में सीमाओं की रक्षा करने वाले सैनिकों के मनोबल को प्रोत्साहित करता है। अनेक विद्वान, साहित्यकार, संत एवं क्रांतिकारियों ने हिन्दी को विकसित करने में योगदान दिया है। हिन्दी भारत के विराट व्यक्तित्व का अनमोल स्वर है जिसने जनसंचार के माध्यम पत्रकारिता में अपनी विशेष भूमिका निभाई है। उदंत मार्तण्ड हिन्दी भाषा के प्रथम समाचार पत्र में पत्रकारिता के क्षेत्र में हिन्दी को जनमानस की आवाज के रूप में दिखाया गया था। पत्रकारिता को हिन्दी भाषा की सशक्त संवाहिका कहा जाता है5 जिसमें समन्वरा, समाहार और शांति के भाव समाहित हैं। पत्रकारिता ने हिन्दी भाषा को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने में विशेष भूमिका निभाई है। जो इस प्रकार से है:

प्रथम चरण 1826 से 1866:

हिन्दी का प्रथम समाचार पत्र उदंत मार्तण्ड को माना जाता है। जो कोलकाता से हर मंगलवार को प्रकाशित होता था जिसके संपादक जुगलकिशोर शुक्ल थे। इसका पहला अंक 30 मई 1826 को निकला था। हिन्दी पत्रों का प्रकाशन करने के लिए मुद्रक, पत्रकार और संपादक की अपनी भूमिका होती है जो कि उस समय नहीं थी और पाठकों की रूचि भी कम थी जिस कारण डेढ़ वर्ष बाद ही इस पत्रिका का प्रकाशन बंद कर दिया। 1848 में बंगला भाषा के साथ हिन्दी में मालवा पत्र का प्रकाशन आरंभ हुआ। 1861 में सूरज प्रकाश नामक पत्र आगरा से और 1865 मे तत्वबोधिनी बरेली से हिन्दी भाषा में समाचार पत्रों का प्रकाशन हुआ। इसके बाद भारत में पत्रकारिता के विकास ने कदम आगे बढ़ाने आरंभ कर दिये।

द्वितीय चरण: (1873 से 1900)

हिन्दी पत्रकारिता का दूसरा चरण 1873 से 1900 तक का माना जाता है। जिसे हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग भी कहा जाता है। इस युग का प्रारंभ भारतेन्दु द्वारा प्रकाशित कविवचन सुधा के प्रकाशन से होता है। इस युग को भारतेन्दु युगीन हिन्दी पत्रकारिता के नाम से जाना जाता है। 1873 में हरिश्चन्द्र चंद्रिका का प्रकाशन हुआ 1877 में हिन्दी प्रदीप मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जिसे आज भी उनके द्वारा प्रकाशित किये गए पत्रकारिता में सराहा जाता है।6 इस युग में हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुई थी। भारत को बांटने के लिए अंग्रेजों ने हर सम्भव प्रयत्न किए। लेकिन भारत की जनता समाचार पत्रिकाओं के माध्यम से जागरूक होने लगी थी और इस युग ने पत्रकारिता में हिन्दी के प्रकाशन पर ज्यादा जोर दिया।

तृतीय चरण: 1900 से 1920

20वीं शताब्दी की पत्रकारिता हमारे लिए अपेक्षाकृत निकट है जिसमें द्वितीय चरण की पत्रकारिता

में विविधता और बहुरूपता मिलती है। 19वीं शताब्दी के पत्रकारों को भाषा शैली क्षेत्र में अव्यवस्था का सामना करना पड़ता था क्योंकि हिन्दी भाषा में रूचि रखने वाली जनता बहुत कम थी। जैसे-जैसे परिस्थितियां बदलनी शुरू हुई वैसे-वैसे ही हिन्दी भाषा में साहित्य और पत्रिकाओं में लोगों की रूचि विकसित होने लगी। क्योंकि महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य, भाषा और पत्रकारिता को एक नया रास्ता दिखाया था। इस चरण में सरस्वती नामक पत्रिका का सफलतापूर्वक प्रकाशन होने के बाद मर्यादा, इन्दु, क्षमालोक, विश्वमित्र, कर्मवीर और आज का प्रकाशन पूर्ण हुआ। साहित्य जगत के लिए अलग से पत्र- पत्रिकाओं का प्रकाशन इसी चरण से होने लगा था। इस चरण में हिन्दी पत्रिकाओं के प्रकाशन की गुणवत्ता में काफी सुधार हुआ, जिससे आने वाली नई पीढ़ी को आसानी से सिखने में सहायता मिली।[7]

चतुर्थ चरण - 1920 से 1947

भारत की आजादी से पहले के इस चरण को गांधी युग के नाम से जाना जाता था। इस युग में राष्ट्रीय और साहित्यिक चेतना को साथ-साथ पल्लवित होते देखा गया है। हिन्दी पत्रों को अंग्रेजी, मराठी और बंगला भाषा में पत्रों के समक्ष समझा जाने लगा। फलस्वरूप साहित्यिक पत्रकारिता में एक नए युग का आरंभ हुआ।8 गांधी ने 1921 में हिन्दी जनजीवन और हरिजन नामक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जो कि भारतीय जनता को बहुत अधिक पसंद था। उस समय ही कुछ पत्रिकाएं दैनिक जागरण, नवभारत, दैनिक नवयुग और प्रजासेवक नाथ से प्रकाशित हुई जिससे हिन्दी भाषा विकास के पथ पर अग्रसर होती दिखाई दी जो कि आने वाले समय के लिए बहुत बड़ी बात थी।9

आधुनिक चरण:

स्वतंत्रता के बाद इस चरण को हिन्दी पत्रकारिता का युग कहा जाता है। अंग्रेजी सत्ता का अंत होने के उपरान्त भारतवासियों ने कदम से कदम मिलाकर चलने का प्रण लिया और अपनी मातृभाषा हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए साहित्यकारों ने बढ़-चढ़कर हिन्दी साहित्य की रचनाएं की। समाज में जागरूकता बनाए रखने के लिए अधिक से अधिक हिन्दी भाषा की पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जाने लगा खेल, व्यापार, विज्ञान, शिक्षा, अर्थव्यवस्था और राजनीति की प्रमुख खबरें पत्रकारिता के माध्यम से जनता तक पहुंचाई जाने लगी। इसके प्रति जनता के लगाव एवं पल-पल की जानकारी लेने के लिए पत्र-पत्रिकाओं को अधिक से अधिक प्रयोग किया जाने लगा। जो हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्य करने वाले और नये जुड़ने वाले लोगों तथा देश के विकास के लिए बहुत अच्छा सरल एवं सराहनीय कदम माना जाता है।10 आज के इस वैज्ञानिक और जनसंचार के युग में नये-नये माध्यमों की खोज के उपरान्त भी समाज में व्यवसायिकता मनुष्य पर हावी होने के बाद भी कुछ पत्रिकाएं निश्चित रूप से हिन्दी भाषा का विकास कर रही है। विश्व में पांचवें स्थान पर विराजमान हिन्दी भाषा आज पत्रिकाओं में अपना प्रथम स्थान बनाए हुए है।

निष्कर्ष:

पत्रकारिता एक कला है। जिसमें हिन्दी भाषा पत्र-पत्रिकाओं और पाठक दोनों को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से एक-दूसरे से जोड़ती है। जनमानस में सामाजिक व राजनीतिक गतिविधियों के प्रति रूचि उत्पन्न करती है। पत्रकारिता के माध्यम से हिन्दी भाषा देश तथा विदेशों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है।

आधुनिक युग में प्रतिदिन हिन्दी पत्रिकाओं की मांग बढ़ती जा रही है। जिसके कारण विश्व में आज हिन्दी की गूंज सुनाई देती है। इससे समाज को एक सूत्र में बांधने और पत्र-पत्रिकाओं का हिन्दी में प्रकाशित होने से युवा वर्ग के लोगों को सुनहरे अवसर प्राप्त होने से युवा वर्ग की पत्रकारिता में रूचि बढ़ती जा रही है। हिन्दी पत्रकारिता से इस प्रकार का जुड़ाव युवा पीढ़ी को सुनहरे भविष्य की और ले जाने के लिए सही निर्णय और सटीक कदम माना जा सकता है। जो बिना किसी डर के समाजसेवा और हिन्दी पत्रकारिता को आगे ले जाने के लिए अच्छा कदम माना जाता है। अर्थात् यह कहना उचित होगा कि पत्रकारिता और हिन्दी भाषा समाज रूपी गाड़ी के दो पहिये है जो समाज को विकास के रास्ते पर ले जाने के लिए सदा पथ पर रहते है।

शोधपत्र का उद्देश्य:

पत्रकारिता का जीवन में सर्वाधिक महत्त्व होने लगा है कि सुबह से शाम तक जिसके माध्यम से हमें देश-विदेश की जानकारी प्राप्त होती रहती हैं। पत्रकारिता को रोचक और सरल बनाने में हिन्दी भाषा के गुणों, रोचकता, तथ्य, शुद्धता, आडम्बरपूर्ण, शब्दों से बचना, सत्यता, भाषा का प्रयोग करना, उपदेश का अभाव, प्रवाहभयता, वस्तुनिष्ठता आदि से अधिक प्रभावशाली बनाया जा रहा है। हिन्दी शब्दों के चयन से पत्र-पत्रिकाओं के लेखन में निखार लाया जा सकता है। वर्तमान समय में हिन्दी के प्रमुख दैनिक समाचार पत्रों में पंजाब केसरी, दैनिक जागरण, नवभारत, अमर उजाला प्रमुख है। हिन्दी पत्रिकाओं में धर्मयुग, मायापुरी, सहेली, आयोग्य, मनोरमा आदि प्रमुख है जो वर्तमान समय में हिन्दी भाषा के महत्त्व को बनाए हुए है। हिन्दी भाषा और पत्रकारिता के इस महत्त्व को समाज के सामने रखना ही इस पत्र का मुख्य उददेश्य रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मिश्र, कृष्णबिहारी, हिन्दी पत्रकारिता, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, पृ॰ 20-45
2. श्रीधर, विजयदत्त, भारतीय पत्रकारिता कोश, खण्ड-एक वाणी प्रकाशन।
3. अग्निहोत्री, कुलदीप चन्द, हिन्दी पत्रकारिता के भविष्य की दिशा, पृ॰ 26-30
4. शर्मा, ऋषभदेव, हिन्दी भाषा के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान
5. जोशी, ज्योतिष, साहित्यिक पत्रकारिता, पृ॰ 53
6. यादव, रमेश, आधुनिक हिन्दी पत्रकारिता और उसकी भाषा, प्रकाशन, रावत, संसकरण, प्रथम 201, पृ॰ 24-37
7. चतुर्वेदी, जगदीश प्रसाद, हिन्दी पत्रकारिता का इतिहास, पृ॰ 35-52
8. मिश्र, कृष्ण बिहारी, हिंदी पत्रकारिता: अश्वस्ति और आशंका, प्रभात, प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2019, पृ॰ 48-54
9. गोदरे, विनोद, हिन्दी पत्रकारिता स्वरूप एवं सन्दर्भ, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2021, पृ॰ 125-155
10. हरीश पत्रकारिता एक अध्ययन, साहित्य, सरोवर, प्रकाशन, संस्करण 2016, पृ॰ 12-27

❑❑❑

1. शोध छात्रा ललित कला विभाग, प्राच्य विद्या संकाय कुरुक्षेत्र

2. सहायक प्राध्यापक ललित कला विभाग प्राच्य विद्या संकाय कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

नन्द किशोर नवल: भाषाई व्यक्तित्व

–नंदकिशोर

नवल जी का बचपन गाँव में बीता और वे अपने प्रिय गुरूजी रामसो हाग सिंह के प्रति आजीवन समर्पित रहे। अपने गुरूजी पर लिखे गए संस्मरण में वे एक जगह लिखते हैं- 'मुझे अफसोस है तो इस बात का कि कालेज में जब मुझे नौकरी मिल गई तो मैं उनके घर जाकर उनके पाँवों पर एक जोड़ धोती रखकर उन्हें प्रणाम नहीं कर सका। उनकी स्मरण शक्ति इतनी जबर्दस्त थी

हिन्दी साहित्य की आलोचना विधा के सशक्त हस्ताक्षर थे। स्वभाव से 'वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि' के कथन को चरितार्थ करते थे। अर्थात् वे अपने कर्तव्य के प्रति 'वज्र से भी कमेर, किंतु लौकिक व्यवहार में फूल से भी अतिशय को मल थे। यह उनके सान्निध्य में रहने वाले लोग जानते रहे हैं। यही कारण है कि हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में उनका नाम डा. नामवर सिंह के बाद आता है। उन्होंने मूलतः आधुनिक काव्य पर विशेष काम किया है। वे काम आने वाली पीढ़ी के लिए तो है ही, वर्तमान पीढ़ी के लेखकों और आलोचकों के लेखन के लिए विमर्श और चर्चा के लिए महत्त्वपूर्ण आधार भूमि भी छोड़ गए हैं। उनके साहित्यिक अवदान की चर्चा करते हुए हिन्दी साहित्य के विज्ञ प्राध्यापक एवं संपादक प्रो. (डॉ.) कलानाथ मिश्र ने अपनी साहित्यिक पत्रिका 'साहित्य यात्रा' (त्रैमासिक) में (नवल जी के साथ लिए गए एक साक्षात्कार) में ठीक ही लिखा है- 'वे हिन्दी साहित्य के यशस्वी हस्ताक्षर थे। नवल जी हमारे गुरू एवं पटना विश्वविद्यालय में हिन्दी के श्रेष्ठ एवं लोकप्रिय अध्यापक थे। नवल जी सच्चे, सहृदय प्राध्यापक तो थे ही, हिन्दी जगत के भास्वर नक्षत्र थे। कविता, आलोचना के साथ-साथ आलोचना की आलोचना भी वे सूक्ष्मता से कर देते थे। तुलसी, मैथिलीशरण, निराला, मुक्तिबोध, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद जैसे महान साहित्यकार उनके अध्ययन के विषय रहे। गंभरी विचारों को सहजता से रख देना उनकी विशेषता थी।'

नवल जी ने अपने बारे में बहुत कम जगहों पर लिखा है किंतु अपनी संस्मरण पुस्तक 'मूरतें माटी और सोने की' में बहुत-कुछ लिखा है और उस पर गहराई से विचार किया जाए, तो उनके व्यक्तित्व गुण, स्वभाव, चारित्रिक वैशिष्ट्य एवं उनकी कार्य-शैली को देखा जा सकता है।

उनका जन्म बिहार राज्य के वैशाली जिलान्तर्गत चाँदपुरा नामक ग्राम में एक किसान परिवार में 2 सितम्बर 1937 को हुआ था। उनकी माता का नाम सबुजपरी देवी तथा पिता का नाम श्री रामपरोहन सिंह था। इनके दादाजी का नाम सूबेलाल राय था।2 इस बारे में वे स्पष्ट लिखते

हैं- ''मेरे बाबा सूबेलाल जीवित रहीं। इसे संयोग ही कहेंगे कि उनमें सबसे बड़ी संतान भी लड़की थी और सबसे छोटी संतान भी। बड़की फुआ विवाह के बाद ही विधवा हो गई थीं और छोटकी फुआ परित्यक्ता थीं।'3 इसी प्रकरण में वे अपने पिता के भाईयों की चर्चा करते हैं तथा स्पष्ट तौर पर लिखते हैं- 'भाइयों में जैसा कि नाम से ही सूचित है, बड़का बाबू सबसे बड़े थे। उनके बाद बाबू थे, फिर मँझिला काका और उनके बाद छोटका काका। बड़का बाबू युवाकार में राँची में संभवतः बिजली विभाग में काम करते थे।'[4]

इनका घरेलू परिवेश धार्मिक था किन्तु अंधविश्वास नहीं था। एक जगह नवल जी लिखते हैं- 'वे (पिताजी) अतिरिक्त रूप से धार्मिक नहीं थे, बड़का बाबू की तरह ही। पर्व-त्योहारों की पवित्रता की वे रक्षा करते थे, लेकिन न पूजा-पाठ करते थे और न किसी मंदिर में जाते थे।'5 इस तरह स्पष्ट है कि नवल जी के आगे के जीवन पर बिल्कुल इसी तरह का प्रभाव पड़ा था। कहा जाता है कि बचपन की शिक्षा तथा धार्मिक मान्यताओं और लोक विश्वासों का प्रभाव मनोवैज्ञानिक रूप से पड़ता है, यदि घर में वातावरण धार्मिक होगा तो वे निश्चित तौर पर वे वैसा ही करेंगे और सीखेंगे। नवल जी के मामले में भी यही विचार काम कर रहा था और जैसा कि उनके समय में परंपराबद्ध होकर लोग सोचते होंगे, वैसा ही इनके बाल मन पर भी प्रभाव पड़ा होगा। इसी प्रकरण में वे आगे लिखते हैं- 'भगवान के अस्तित्व के बारे में वे (पिताजी) कहते थे- सोचकर देखने पर (यानी तर्क-बुद्धि से काम लेने पर) यह पता चलता है कि भगवान नहीं है। इसीलिए ईया को लेकर वे कई तीर्थ स्थानों को गए, पर अपने लिए कोई तीर्थाटन नहीं किया। जब वे सेतुबाँध रामेश्वरम् देखकर लौटे, तो मैंने उनसे पूछा- आपने समुद्र देखा? वे बोले- हाँ! मैंने फिर पूछा-क्या उस पर पुल बाँधा जा सकता है? उन्होंने बेलौस होकर कहा- नहीं। मैं (नवल जी)- यदि भगवान चाहें तब। वे पुनः दृढ़तापूर्वक बोले- तब भी नही। ...लेकिन यह विरोधाभास ही है कि वे भादों चतुर्दशी को हर साल गंगाजली में जल लेकर बैद्यनाथ धाम शिव को चढ़ाने जाते थे। जल वे पहलेजा घाट में ही भरते थे, क्योंकि मगध की गंगा को वे अपवित्र मानते थे। उन्हें शास्त्र का ज्ञान भी था, लेकिन शास्त्रों में भी मगध को अपवित्र कहा गया है, क्योंकि वहाँ वृष्णि रहते थे।'6

नवल जी के बाल-मन पर उस समय चतुर्दिक परिव्याप्त जाँति-पाँति के भेद-भाव पर भी विशेष पड़ा, साथ ही साथ उनके मन में इस सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह का भाव भी था। वे इसलिए लिखते हैं- 'पिछड़ों को अब तक इतना दबाकर रखा था कि ये गुलामी को सहर्ष अपनी नियति मानने लगे थे। मैं किशोर था, इसलिए कुछ कर नहीं सकता था। लाचारी में भीतर ही भीतर ऐंठकर रह गया। इसी तरह मैंने जगदीश बाबू को भी अपनी आँखों के सामने एक चमार को लाठियों से पीटते देखा था उसका कसूर सिर्फ इतना था कि उसने मछली मारी थी।'7 सामाजिक विषमता की इस गहरी खाई के प्रतिरोध स्वरूप ही उन्होंने जीवन में मार्क्सवादी विचारधारा को अपनाया था तथा बिना किसी लोभ-लाभ के साहित्य-साधना में आजीवन तल्लीन रहे।

नंदकिशोर नवल के पिताजी एक किसान थे जिनके पास अच्छी खासी भूमि थी। नवल जी लिखते हैं- 'बाबू में अपार धैर्य, सामंतकालीन साहसिकता और बोझ उठाने की अकूत क्षमता थी। मैंने उन्हें बड़ी से बड़ी विपत्ति में कभी विचलित होते हुए नहीं देखा।'8 किंतु बचपन की अवस्था में नवल जी ने गाँव-घर की गरीबी भी देखी, उसे अनुभव किया, साथ गाँव के लड़ाई-झगड़े, वाद-विवाद, पंचैती तथा ग्रामीण स्तर पर होने वाले फैसलों को भी अपनी आँखों से देखा। उन्होंने अपने पिताजी का वर्णन करते हुए लिखा है- 'बाबू

बहुत मेधावी थी। बचपन में उन्होंने कभी 'दृष्टान्त प्रकारा' नामक कहानियों का ग्रंथ पढ़ा था। साक्षर-मात्र होने के बावजूद उन्हें उसकी कहानियाँ हू-ब-हू याद थीं। बचपन में मैं उन्हीं के साथ सोया करता था, खासकर जाड़ों में। रात में मैं उनसे कहानियाँ सुनने की जिद करता था और वे चार-पाँच कहानियाँ मुझे सजीव दृश्य-वर्णन के साथ सुनाया करते थे। उनमें से बहुत थोड़ी कहानियाँ मुझे याद रह गई हैं। गणित पर उनका ऐसा अधिकार था कि वे जवानी बेहद लंबा जोड़-घटाव ही नहीं कर सकते थे, दूसरे हिसाब भी चटपट हल कर देते थे।'9

इसका अर्थ है कि नवल जी को बचपन में ही अपने पिता के द्वारा ऐसे पवित्र संस्कार मिले थे, जिनका पल्लवन उनके आगे के जीवन में लगातार होता रहा और यह उनके चारित्रिक आदर्श में तथा उनके साथ बिताये लोगों के अनुभव से जाना जा सकता है। पिता का अपने बच्चों पर नियंत्रण किस कदर था इसका चित्रण यहाँ देखिए- 'मैं जब बड़ा हो गया, तो मेरी जगह मेरा सबसे छोटा भाई शेखर उनके साथ सोने लगा। उसकी रूचि कथा-कहानी में नहीं थी। इस कारण बाबू उससे सोते वक्त और फिर भोर में जागने पर हिसाब बनवाते थे, जिसका परिणाम यह हुआ कि तीन भाई जहाँ आर्टस में गए, शेखर ने बी.एस.सी., इंजीनियरिंग (प्रोडक्शन) करके सेकेंड लेफ्टिनेंट हो गया और वहाँ एम.टेक. की परीक्षा दी, जिसमें उसका स्थान विश्वविद्यालय में अव्वल रहा।'10

नवल जी अपने पिताजी के बारे में एक जगह बताते हैं कि वे किस तरह से अपने जीवन में जमीन के लिए मुकदमा किया करते थे। प्रायः ग्रामीण परिवेश में आज भी लोग अर्थाभाव झेलते हुए भी केस लड़ने से पीछे नहीं रहा करते। यही स्थिति नवल जी के बचपन की रही थी। नवल जी आगे लिखते हैं- 'बाबू की सारी मेधा मुकदमा लड़ने और घर चलाने में खर्च हो गई। उन्होंने माँ-बाप के श्राद्ध के साथ दस-ग्यारह लड़कियों का ब्याह भी किया और अपने चारों लड़कों को एम.ए. तक पढ़ाया। उनकी एक मात्र सवारी 'हरकुलस' साइकिल थी, जिस पर वे पीछे से चढ़ते थे, जबकि आज मेरे बृहत्तर परिवार में करीब आठ कारें हैं। मेरे कनिष्ठ अनुज शेखर ने अपनी बेटी की शादी में दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल में भोज दिया। इसमें नामवर जी और केदार जी भी आए थे। श्यामकश्यप और विपिन कुमार शर्मा के साथ, जो मेरे छात्र थे और उन दिनों जे.एन.यू. में पढ़ रहे थे, मैं भी ऑटो से उसमें पहुँचा था। मैंने देखा कि खाने के पहले शराब की नदी बह रही है। नामवर जी ने तो ड्रिंक नहीं लिया, लेकिन केदार जी ने बोडका की फरमाइश की। उसके बाद खाने का दौर चला। जबतक मैं उस भोज में रहा, बाबू के बारे में ही सोचता रहा। उनके लिए दो रूपये का नोट भी एक बड़ी रकम थी, जबकि अंत में पूछने पर शेखर ने बतलाया कि इस आयोजन में कुल एक लाख अट्ठारह हजार रूपये खर्च हुए।'11

नवल जी का बचपन गाँव में बीता और वे अपने प्रिय गुरूजी रामसो हाग सिंह के प्रति आजीवन समर्पित रहे। अपने गुरूजी पर लिखे गए संस्मरण में वे एक जगह लिखते हैं- 'मुझे अफसोस है तो इस बात का कि कालेज में जब मुझे नौकरी मिल गई तो मैं उनके घर जाकर उनके पाँवों पर एक जोड़ धोती रखकर उन्हें प्रणाम नहीं कर सका। उनकी स्मरण शक्ति इतनी जबर्दस्त थी कि मानस का पूरा सुन्दरकाण्ड उन्हें केठस्थ था और वे उसे धाराप्रवाह सुनाते चले जाते थे।'12

गुरूजी मेहनती, बुद्धिमान, शिष्यों पर स्नेह करने वाले तथा परम उदार व्यक्ति थे। अपने गुरूजी के बारे में लिखते हुए वे कहते हैं- 'गुरूजी बुद्धिमान और विवेकी थे। कभी-कभी उनकी मेधा बिजली की तरह

चमकती थी। वे स्वयं बहुत उतार-चढ़ाव से गुजरे थे, इसलिए गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के मानस से परिचित हो गए थे।... उनकी माँ की मृत्यु के बाद गाँव के लोगों ने उनसे कहा-आपको गाँव को भोज देना चाहिए। गुरूजी ने उन्हें उत्तर दिया- मैं एक शाम आपलोगों को खिला दूँगा, इससे आपका कुछ नहीं बने-बिगड़ेगा, पर मैं उसी में उजड़ जाऊँगा। लोग निरूत्तर होकर चुप रह गए और लौट गए।'[13]

उनकी गुरूजी के प्रति भक्ति और घनिष्ठता निरंतर बनी रही। नवल जी अपने गाँव चाँदपुरा, वैशाली (बिहार) में रहते हुए गुरूजी की छत्र-छाया में बहुत-कुछ सीखा, पढ़ा तथा जीवन के आँगन में संघर्ष करने योग्य बन सके। ऐसा नवल जी अपने संस्मरण में लिखा है। गुरूजी के बारे में वे एक जगह कहते हैं- 'वे जन्मजात शिक्षक थे। बहुत ही सख्त और नियमित। न खुद चैन लेते थे, न छात्रों को लेने देते थे। मैं सबेरे उनसे पढ़ने जाता था, लेकिन उनसे बहुत डरता था। इस कारण मैं रोज रात में सोते समय देर तक 'राम-राम' जपता था और भगवान से प्रार्थना करता था कि गुरूजी मर जाएँ। लेकिन मैं तड़के देखता था कि वे सामने के अपने खेत में केरौनी कर रहे हैं, तो बहुत निराशा होती थी और भगवान पर क्रोध आता था कि उन्होंने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी।'14 यह स्वाभाविक ही है कि अकसर बाल मन पढ़ाई से भागता फिरता रहता है। यह तथ्य मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी सत्य ही है कि बाल का कोमल मन कितना भावुक और संवेदनशील होता है जो केवल अपने लिए किसी भी प्रकार के दण्ड या कष्ट से मुक्ति की आकांक्षा करता है। इसी लिए नवल जी गुरूजी से भय खाते थे। लेकिन नवल जी अपने गुरूजी की प्रशंसा स्वरूप ऐसा भी कहते नहीं अघाते कि 'एक-दो बार छोड़कर मैं मैट्रिकुलेशन तक अपने वर्ग में प्रथम ही आता रहा। इनके पीछे भी गुरूजी का हाथ था, जिन्होंने मेरी बुनियादी पक्की कर दी थी।'[15] नवल जी अपने बालपन बेहद जिज्ञासु प्रवृत्ति के बालक थे। उस समय भारत की पराधीनता का दौर था। सामंती वर्ग व्यवस्था तथा पूँजीपति और शोषक वर्ग का काफी बोलबाला था। नवल जी ने इसे बहुत नजदीक से देखा था और महसूस किया था। उनके मन में इसका विरोध भी होता रहता था, लेकिन वे कुछ नहीं कर पाते थे। किंतु इन सब बातों का प्रभाव नवलज को अपने गुरू की संगति और उनके आशीर्वाद से प्राप्त हुआ। नवलजी ने लिखा है कि गुरूजी स्वभाव से क्रांतिकारी थे। वे गाँव तथा समाज की सेवा में तत्पर रहा करते थे। उनके गाँव में एक पुस्तकालय था, जिसे गुरूजी सँभालते थे। इसके अलावा गुरूजी गाँव की कन्या पाठशाला में शिक्षक भी थे। नवलजी लिखते हैं- 'कन्या पाठशाला में गुरूजी की स्थायी नियुक्ति हो गई। ...कन्या पाठशाला का शिक्षक होने के साथ गुरूजी ने पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष का भार भी अपने ऊपर ले लिया था। ...पुस्तकालय की पुस्तकें और पत्रिकाएँ पढ़ते-पढ़ते गुरूजी के विचार क्रांतिकारी हो गए थे। महात्मा गाँधी और पं. नेहरू के प्रति उनका भक्ति-भाव कभी कम नहीं हुआ पर अब वे सोशलिस्ट पार्टी के प्रशंसक हो गए थे और जयप्रकाश नारायण की चर्चा बहुत आदर से करते थे।'[16]

लिखने का शौक नवल जी को बचपन से ही था। वे कहते हैं कि 'बचपन में वे डायरी लिखा करते थे। उनके घर में उनके चाचा जिन्हें वे प्यार से 'नन्हकी चा' कहा करते थे, ने पहले पहल डायरी लिखने की शुरूआत की थी'17 नवल जी डायरी लेखन से यह मानते थे कि इससे व्यक्ति भावनात्मक रूप से मुखर होता है तथा उनके भीतर तर्कशक्ति विकसित होती है। छठे वर्ग में वे पुस्तकालय का सदस्य बन चुके थे तथा रोजाना पुस्तकालय जाकर पुस्तकें पढ़ते थे। उस समय 'कानूनी डायरी' ज्यादा प्रचलित थी, जो अपने भव्य कलेवर में बालक नंदकिशोर नवल को विशेष आकर्षित करता था। डायरी के बारे में वे एक जगह लिखते

हैं- 'डायरी अपने को अपने अभिभावकत्व में रखने की ही चीज नहीं है, उसमें लेखक आत्मनिरीक्षण करता है और कभी झूठ नहीं बोलता। यही कारण है कि डायरी विश्व-साहित्य में एक साहित्यिक विधा के रूप में स्वीकृत हुई है।'18 कहना नहीं होगा कि उनके भीतर जो लेखक का उभार आया था, वह बहुत कुछ इसी लेखन की वजह से आया होगा। क्योंकि इस तरह अपने विचारों की प्रस्तुति तथा आत्मनिरीक्षण के क्रम में व्यक्ति अपने आपको आंतरिक रूप से मुखरित करता है। वह अपनी भावनाओं को प्रकट करता है तथा उन भावनाओं में उसके भीतर का एक लेखक सामने आता है।

उन्होंने अपने संस्मरण में लिखा है कि गाँव की पढ़ाई पूरी करने के बाद पटना आए तो फिर गाँव से उनका नाता कम रह गया। इसका कारण यह था कि उनकी शादी बिहार के स्वनाम धन्य गीतकार एवं साहित्यकार रामगोपाल शर्मा 'रूद्र' की पुत्री .... से हुई था। वे गर्दनीबाग इलाके में रहते थे। फलतः उनकी रचनाएँ प्रारंभिक अवस्था में काव्य-विधा में साहित्यिक धरातल पर आईं। नवल जी ने उन्हें अपना साहित्यिक गुरू माना था और आजीवन कविताओं के साथ आलोचना निबंध तथा संपादन का कार्य करते हुए हिन्दी साहित्य से जुड़े रहे। नवल जी ने शुरू-शुरू तो कविताएँ ही लिखीं। अपने ससुर रूद्र जी की चर्चा करते हुए नवल जी लिखते हैं- 'हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और मेरे संबंधी रामगोपाल शर्मा 'रूद्र' जब कभी मेरे गाँव जाते थे, तो सुबह-शाम बड़का बाबू के साथ बैठकर धूरा तापते थे, खैनी मलकर दोनों खोते थे और देर तक बातें करते थे। बड़का बाबू उन्हें 'कवि' कहते थे और उनके प्रति अपार प्रेम रखते थे।'19

नवल जी ने गाँव से आकर अपना नाम पटना कॉलेज में लिखवाया था और वहाँ हिन्दी साहित्य का विद्यार्थी बने, फिर स्नातकोत्तर पटना विश्वविद्यालय के दरभंगा हाउस से किया तथा फिर प्रो. देवेन्द्रनाथ शर्मा के निर्देशन में 'निराला की कविताओं पर' शोध कार्य किया। नवल जी ने अपने पटना आने तथा पढ़ाई करने की घटना का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। वे लिखते हैं- 'मैंने अपने जीवनकाल में कई लेखकों में जो दो-तीन महापुरूष देखे हैं, उनमें प्रो. नलिन विलोचन शर्मा सर्वोपरि थे। मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे उनका शिष्य बनने का गौरव प्राप्त हुआ। मैंने उनका प्रथम दर्शन 1952 की संध्या को सम्मेलन भवन के प्रांगण में उसकी बाईं तरफ किया था। वे झक्क सफेद धोती, खादी का चुन्नटदार कुर्ता पहने थे और उनके हाथों में जलती हुई सिगरेट थी।'20 इसी प्रकरण में वे 'रूद्र जी' से हिन्दी साहित्य सम्मेलन, कदमकुआँ, पटना में भी मिलने की बात कहते है। वे लिखते हैं- 'मैं बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् में 'रूद्र जी' से अपनी कविता शुद्ध कराने अपने गाँव से आया था। वे उस समय परिषद् के पुस्तकाध्यक्ष थे और वह सम्मेलन भवन के बाएँ हिस्से में अवस्थित थी।'[21]

इसका मतलब है कि तब नवल जी रूद्र जी से परिचित हो चुके थे और यह विवाह से पूर्व की घटना थी। वहीं नवल जी ने महान साहित्य सेवी आचार्य शिवपूजन सहाय को भी देखा था, जिसके बारे में वे लिखते है- 'सम्मेलन भवन में राष्ट्रभाषा परिषद् के नीचे जो कमरा था, उसमें शिवपूजन बाबू आराम से बैठे हुए कई शोधकत्र्ताओं से शोध करा रहे थे।'22

1956 में नवल जी ने पटना कालेज में दाखिला लिया था तथा इंटरमीडिएट की पढ़ाई इसी पटना कालेज में की थी। अपने संस्मरण नवल जी ने न केवल अपने कालेज-जीवन की पढ़ाई का वर्णन किया है, बल्कि वे साहित्यकारों, कवियों, लेखकों तथा माक्र्सवादी विचारकों के संपर्क में किसी प्रकार आए, उसका भी बड़ा ही सिलसिलेवार वर्णन किया है। उनके यह वर्णन एक तरह से आजादी के बाद का पटना और वैशाली (जन्मभूमि

का क्षेत्र) की सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा राजीनतिक परिदृश्य का दस्तावेज है, जिसमें हम चित्रपट की भाँति एक-एक घटनाएँ, समस्याएँ और जिजीविषा की कथाएँ और विविध प्रसंग देख सकते हैं। समाज में उस समय कहाँ क्या हो रहा था? गाँव और शहर का विाकस, स्त्रियों की स्थिति, आम आदमी के जीवन का अंत द्रवन्द्व और संघर्ष-सब-कुछ का वर्णन उसमें मिल जाता है। वे सामाजिक स्थितियों का वर्णन जब करते हैं, तब ऐसा लगता है कि वे आँखों देखी घटना सुना रहे हों। पटना आने और प़ने का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि '1956 में मैंने पटना कालेज में दाखिला लिया। इंटर में मेरा विषय प्रिंसपल हिन्दी भी था। उसका वर्ग भी ऊपर हिंदी विभाग के सत्रह नंबर के कमरे में होता था, सो मैं वहाँ नलिन जी (आचार्य नलिन विलोचन शर्मा) को अपने कक्ष में आते-जाते देखता था। वे बहुत लंबे-चैड़े थे। इस कारण बाजार में उनके पाँव0 का जूता नहीं मिलता था। फलतः वे फरमाइशी सैंडिल पहनते थे'23

इस प्रकार नवल जी ने अपने गुरूजनों को बेहतर नजदीक से देखा था। कहा जा सकता है कि वे अद्भुत गुरूभक्त थे। उनकी गुरूभक्ति में हीं से भी कभी नहीं दिखलाई पड़ती है। कहा जा सकता है कि एक ओर उनके चरित्र में माता की प्रत्येक बातों का पालन करते रहे हैं। चाहे घर में हों या बार में-प्रायः सभी जगह पर ही वे चारित्रिक आदर्श को बचाये रखते हैं। किसी भी रचनाकार या साहित्यकार का महत्त्व तभी कायम रह सकता है जब वह आदर्श गुणों से युक्त हो। यहाँ जब नवल जी के के चरित्र का विश्लेषण किया जा रहा है तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे माता-पिता तथा गुरू भक्ति के अनुपम आदर्श चरित्र थे। कहा जा सकता है कि किसी भी व्यक्ति के चरित्र की सुन्दरता तथा शालीनता उसके घर-परिवार पर निर्भर करता है। यदि घर का वातावरण बेहतर है, तो बालक की देख-देख और परवरिश भी बढ़िया से होगा, यदि घरेलू वातावरण कलुषित और कहलपूर्ण है, तो बालक को चाहे कितनी ऊँची शिक्षा-दीक्षा दी जाए, चाहे उसके माता-पिता कितने ही ध्नी क्यों न हो, वे सच्चरित्र नहीं बन सकते। नवल जी के माता-पिता तथा उनके अन्य परिजन लोग शिक्षित थे। इसलिए नवल जी के चरित्र में प्रारंभ से ही गुरू के प्रति आदर-स्नेह का भाव तो दिखलाई पड़ा ही है, वे उनके मैत्रीपूर्ण भाव से इस प्रकार जुड़ जाते हैं कि ऐसा लगता है कि उनके स्नेह-साहचर्य में आने वाला शिक्षक या आर्चा अभिभावक की भूमिका का भी निर्वाह करने लग जाते थे। गुरू जी के प्रति स्नेह तो प्रारंभ से रहा ही था, परिवार के प्रति भी हमदर्दी देखते ही बनती थी। नवल जी का परिवार बड़ा था और उसमें उनके चचेरा, फुफेरा आदि मिलाकर बीस-पच्चीस व्यक्तियों का एक सुविस्तृत समूह था, जिसमें सभी लोग एक था रहा करते थे। नवल जी लिखते हैं- हमारा पपरिवार बहुत बड़ा था, करीब बीस व्यक्तियों, का और बाबू की आमदनी बहुत सीमित थी।'24 नवल जी आगे लिखते हैं कि उनके 'दोनों काका उन्हें हर माह मुश्किल से पचास-पचास रूपये देते थे, जो भी बाद में बंद हो गए।'25

कहना नहीं होगा कि उनके जीवन का यह स्वर्ण पक्ष, जो लगभग किशोरावस्था के बाद शुरू होता है और उन्हें अने दाम्पत्य जीवन के मधुर पक्ष के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए, जिसके संबंध में नवल जी स्वीकार करते हैं कि उनकी पढ़ाई-लिखाई पटना कॉलेज में शुरू हुई और आगे्रि दरभंगा हाउस में एम.ए. हिन्दी विषय से किया था और वहीं पटना कॉलेज में हिन्दी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हो गए।

नवल जी लिखते हैं कि एम.ए. में वे पढ़ाते हुए पटना कॉलेज में आई.ए. और बी.ए. (ऑनर्स) के छात्रों का भी क्लास लेना होता था। उनके शब्दों में, तीस वर्षों तक मैं पटना विश्वविद्यालय में अध्यापक रहा। शुरू

में छः वर्षों तक बी.एन. कॉलेज में था, जहाँ से 1976 के दिसम्बर में मेरा तबादला पोस्ट ग्रेजुएट में हो गया। दरभंगा हाउस में एम.ए. के लडत्रकों को पढ़ाते हुए मुझे पटना कॉलेज में आई.ए. और बी.ए. (ऑनर्स) तथा हिंदी रचना के वर्ग भी लेने पढ़ते थे'26 नवल जी अपने चिंतन और विचार से साहित्यिक ही नहीं थे, वे मार्क्सवादी भी थी, जिस साहित्यिक भावभूमि पर वे रचनाशील थे, उसे संदर्भ में वेंकटेश कुमार ने ठीक ही लिखा है- 'वे साहसी आलोचक थे। वे जो बात कहना चाहते थे, उसे बहुत मजबूती के साथ कहते थे। इस मामले में उन पर रामविलास शर्मा का प्रभाव साफ-साफ दिखाई पड़ता है'27

नवल जी व्यक्तित्व से उदार दिल थे, साथ ही अनुशासन प्रिय भी थे। इसके साथ-साथ वे परिश्रमी और ईमानदार भी थे। कक्षा में छात्रों को पढ़ाने से पहले दो-तीन दिन (अपनी कक्षा हेतु) अपने नोट्स की तैयारी कर लेते थे। समय के साथ चलने वाले नवल जी अपने कर्तव्य के प्रति कभी भी लापरवाह नहीं रहे और न दिखे। उन्होंने अपने संस्मरण में साफ लिखा है कि पढ़ाने में मैंने कभी लापरवाही या लेट लतीफी नहीं की। जहाँ तक संभव हो सका, छात्रों के हित में निरंतर लगा रहा। 'मेरी निष्पक्षता के ही कारण आज तक किसी लड़के ने मेरे साथ कोई बदसलूकी नहीं की। मैं कह चुका हूँ कि शुरू में मैंने ट्यूशन भी किया करना छोड़ता गया।... छात्र मेरे अध्यापन और अनुशासन के कारण मुझे बहुत सम्मान देते थे। एम.ए. में मैं जिन-जिन कवियों को पढ़ाता था, उनका संपूर्ण साहित्य पढ़ जाता था।'28 इस तरह स्पष्ट है कि नवल जी पढ़ाकू किस्म के अध्यापक थे, वे लिखने में सिद्धहस्त थे। वे प्रायः सभी कवियों तथा उनकी रचनाओं का गहनतापूर्कक अध्ययन किया करते थे। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि उन्होंने अपने बाल्यकाल में ही अनेकानेक साहितियक कृतियों का पारायण किया था। नवल जी लिखते हैं- '1950-60 के ग्रीष्मावकाश में मैंने उनसे बिना टीका के 'रामचरितमानस' और 'पद्मावत' पढ़ा था। बदले में मैंने उन्हें निराला की 'राम की शक्ति-पूजा' और अनुवाद करते हुए रवींद्रनाथ की अँग्रेजी 'गीतांजलि' पूरी सुनाई थी- कई दिनों तक पुस्तकालय के बरामदे में बैठकर।'29

वस्तुतः नंदकिशोर नवल का जीवन पूर्णतः साहित्यिक और शैक्षिक था। जीवन के आरंभिक दिनों में वे कुछ न कुछ लिखने लगे। जैसा कि सभी रचनाकारों के साथ देखा जाता है कि वे कविता की ओर पहले मुड़ते हैं, अन्या विधा की ओर बाद में। बिल्कुल इसी तरह उनकी भी प्रवृत्ति पहले कविता की ओर गई थी, बाद में पत्रिका प्रकाशन की ओर भी रही। प्रारंभ में उन्होंने ध्वज भंग, सिर्फ, धातल, उत्तरशती और आलोचना (सह-संपादक) आदि का संपादन भी किया था। वे मावीर प्रसाद द्विवेदी की भाँति कवियों और लेखकों से रचनाएँ माँगकर उसे तराशते थे तथा नए लेखक और कवियों का भी निर्माण करते थे। यही कारण है कि उनके पटना ही नहीं, बल्कि प्रत्येक शहरों में अनेक साहित्यकार-रचनाकार मित्र थे। उन मित्रों के साथ इनका लगातार पत्र-व्यवहार चलता रहता था तथा साहित्य संबंधी विभिन्न विमर्श तथा उन पर लेखन, संपादन तथा आलोचना-संबंधी कार्य सफलतापूर्वक होता रहा था। इसी कारण उनकी लेखन-क्षमता तथा लेखन-शैली भी लगातार विकसित और परिमार्जित होती रही। दिल्ली में डा. रामविलास शर्मा से मिलना तथा उनसे साहित्यिक विमर्श करना उनके साहित्यिक रचना-कर्मों में शामिल था। शुरू-शुरू में उनका झुकाव साहित्यिक गोष्ठियों में भी रहा था। प्रगति लेखक संघ से जुड़ाव तथा उनकी गतिविधियों में शामिल रहना उनकी दिनचर्या में शामिल था। एक ओर साहित्यिक गोष्ठियों में उनकी सहभागिता लगातार बनी रही तो दूसरी आरे कविता-लेखन से भी उनका जुड़ाव बना रहा। इसी के फलस्वरूप उनका कविता-संग्रह मंजी (1954) प्रकाशित हुआ। आलोचना

तथा समीक्षा से संबंधित उनकी पुस्तक 'कविता की मुक्ति' (समीक्षात्मक निबंधों का संग्रह) 1980 ई० में वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित हुई। जब वे बी.ए. ऑनर्स तथा एम.ए. (हिन्दी) की कक्षाएँ ले रहे थे तब उन्होंने अपनी पहली आलोचना की पुस्तक 'हिन्दी आलोचना का विकास' 1981 ई० में (राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली) सामने आयी। उसके बाद से वे लगातार एक-पर-एक पुस्तक, संपादन (रचनावली तथा आलेख) के कार्यों में लगे रहे। लेखन-संपादन के साथ-साथ साहित्यकारों, कवियों तथा समीक्षकों से उनकी घनिष्ठता लगातार बनी रही। नागार्जुन के संबंध में चर्च करते हुए वे लिखते हैं- 'नागार्जुन के गाँव के बुजुर्ग उन्हें 'ठक्कन मिसिर' कहते है, जबकि उनका असली नाम 'वैधनाथ मिश्र' था।'30

इसके अतिरिक्त अन्य कई साहित्यकारों के साथ उनकी गहरी मित्रता भी। उनमें राविलास शर्मा, नामवर सिंह, त्रिलोचन, नलिन विलोचन शर्मा आदि प्रमुख थे। नलिन विलोचन शर्मा पटना विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रसिद्ध प्रोफेसर, आलोचक तथा कहानीकार थे। नकेनबाद के प्रवर्तकों में उनका नाम भी शामिल था। हिन्दी साहित्य की काव्य विधा के अंतर्गत प्रगतिवाद तथा प्रयोगवाद के समानान्तर चली इस काव्य धारा का सूत्रपात आचार्य केसरी कुमार, नलिन विलोचन शर्मा और कविवर नरेश के द्वारा हुआ था जिसका दूसरा नाम हिन्दी में 'प्रपद्यवाद' दिया गया था तथा इसकी महत्ता कम नहीं है। नवल जी ने अपना साहित्यिक तथा रचनात्मक जीवन बेहद ईमानदारी तथा मेहनत के साथ जीया। नवल जी जब पी.एच.डी. कर रहे थे, तो उस समय उनकी जिज्ञासा कम नहीं थी। नवल जी ने स्वयं लिखा है- '1967 की गर्मियों में अपने शोद्य के सिलसिले में मैं बनारस गया, पहली बार। मेरा विषय था- 'निराला का काव्य विकास' सो मुझे त्रिलोचन के नाम एक पत्र नागार्जुन ने दिया औ एक राजकमल ने।'31 इसके साथ-साथ उनका प्रयास यह था कि वे 'निराला' पर शोद्य कार्य कर रहे हैं, तो उसे पूरी ईमानदारी के साथ करेंगे। इसके लिए वे केवल पुस्तकों से अपना काम निकालना उचित नहीं समझते थे, बल्कि इसके लिए बनारस जाना तथा निराला जी के जीवन तथा काव्य रचना से संबंधित विशेष जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता भी महसूस करते थे। इसीलिए नवल जी के शोद्य छात्रों का यह कहना कि वे अपने अधीन शोद्य कार्य करने वाले लोगों का गहराई के साथ कार्य करने पर बल देते थे ताकि छात्र केवल पुनरावृत्ति न कर अपने अनुभव और ज्ञान का समावेश भी अपने शोद्य-प्रबन्ध में कर सके।

अध्यापक के तौर पर नवल जी की खासियत यह थी कि वे छात्रों की समस्याओं को भी गौरपूर्णक सुनते थे। जहाँ उचित होता था वहाँ वे अपने पुस्तकालय की पुस्तकों को उपलब्ध कराना अपनी जरूरत समझते थे। नवल जी के व्यक्तित्व की एक और विशेषता यह थी कि छात्रों की कुशलता का बराबर ख्याल रखते थे। वे उनके माता-पिता तथा परिवारजनों का कुश-क्षेम लिया किरते थे। नवल जी न, केवल छात्रों को शोद्य कार्य कराते थे, बल्कि वे उनके जीवन के पत्र-प्रदर्शक भी बन जाते थे। क्योंकि पी.एच.डी. करने के क्रम में वे छात्रों को उनके जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति के प्रति सचेत भी करते रहते थे।

इसी तरह अध्यापकीय जीवन में भी नवल जी का स्वभाव सदैव मधुर तथा प्रेमपूर्ण रहा। उनके मन में किसी प्रकार की छल-कपट तथा कामना नहीं होती थी। उस समय जैसा कि विश्वविद्यालयों और विभागों में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के साथ-साथ जातीयता संबंधी विवाद हुआ करता था, उससे वे असम्पृक्त थे। उनके मन में किसी के प्रति छल-कपट की कामना बिल्कुल नहीं रहती थी। पहले वे पटना कॉलेज के

हिन्दी विभाग में रहे, फिर 'आगे चलकर स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग (दरभंगा हाउस) में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हो गए, जहाँ से वे क्रमशः रीडर और युनिवर्सिटी प्रोफेसर बनकर वर्षों सेवा देते रहे। पुनः 31 अक्टूबर, 1998 को उन्होंने अवकाश ग्रहण किया।'32

नंदकिशोर नवल ने अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् अपनी भोजनानुसार 'कसौटी' पत्रिका निकाली। यद्यपि इसके पूर्व भी 'उन्होंने सिर्फ, धरातल, उत्तरशती आदि पत्रिकाएँ निकाल चुके थे। नामवर जी के साथ आलोचना पत्रिका का सह-संपादक के रूप में काम किया था।'33 नामवर जी के बारे में नवल जी का कहना था- 'नामवर जी का प्रथम दर्शन मुझे 1965 में गया के पूर्वांचल लेखक सम्मेलन में हुआ था। उनके लेखन से उनका जो चित्र बनता था, वह सूट-बूट और टाई वाले लेखक का था, पर उन्हें देखकर तो लगा कि वे ठेठ गाँव के आदमी हैं। -नामवर बनारस से आए थे मैले धोती-कुर्त्ते में और बढ़ी हुई दाढ़ी लेकर, लेकिन आने के बाद दाढ़ी बनाकर और स्नानोपरांत धुला हुआ धोती-कुर्त्ता पहनकर वे पूरी तरह सज-धज गए थे, उन्होंने ऐसा व्याख्यान दिया जिससे श्रोता मन्त्रमुग्ध हो उठे। उनके व्याख्यान को सुनकर एक कॉमरेड ने उठकर कहा कि काश, इस देश की वामपंथी राजनीति को भी माक्र्सवाद का ऐसा व्याख्यान मिलता।'34

वस्तुतः नवल जी का जीवन एक ओर माक्र्सवादी विचारधारा से प्रभावित रहा तो दूसरी ओर पौराणिकता और परंपरावादी विचारधारा को अपने स्वविवेक से अपनाते रहे। हिन्दी कविता की आलोचना करते हुए नवल जी की दृष्टि सदैव शोद्य एवं अनुसंधान के मानकों तक ही सीमित नहीं, बल्कि आलोचना के सामाजिक एवं व्यावहारिक पक्ष को भी पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास किया। वे अपने जीवन में पूर्णतः सादगी संपन्न थे। दिखावा उन्हें बिल्कुल ही पसंद नहीं था और न फिजूल खर्ची उन्हें पसंद थी। लेकिन हाँ, वे कभी किसी छात्रों से कोई पुस्तक, पत्रिका, कागज, कलम और लिफाफा या डाकटिकट मँगाते तो न केवल उसे पूरा यात्रा का खर्च (भाड़ा आदि) देते, बल्कि वस्तुओं के मूल्य से 2-4 रूपये अधिक देने का ध्यान रखते। सेवानिवृत्ति के पश्चात् वे स्पोन्डलाइटिश से पीडित रहे थे। चिकित्सक ने उन्हें कुर्सी पर सीधी रीढ़ की हड्डी टिकाकर बैठने की सलाह दी थी किंतु अधिक लेखन कार्य करने से मनाकर दिया था किंतु उन्हें खाली बैठने में मन नहीं लगता था। ज्ञातव्य है कि उन्हें यह दर्द (रीढ़ की हड्डी का दर्द) 'कसौटी' पत्रिका निकालने के क्रम में हुई थी। उस समय नवल जी लखनचंद कोठी वाले डेरे में रहा करते थे। कुछ समय पश्चात् वे धधा घाट वाले डेरे में चले आए। कहना नहीं होगा कि 'आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास' पुस्तक उन्होंने इसी धधा घाट, महेन्द्रू वाल डेरे में पूरा किया था।

नवल जी पूर्णतः मसिजीवी लेखक थे। वे प्रायः विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से भी व्यक्तिगत तौर पर जुड़े रहे थे। दैनिक हिन्दुस्तान, दैनिक आज, दैनिक आर्यावत्, दैनिक नवभारत टाइम्स, दैनिक प्रदीप, दैनिक जनसत्ता आदि दैनिक समाचार पत्रों के अलावे इंडिया टूडे (पाक्षिक), पात्रच जन्म छपते रहते थे। उनके लेखन में जो तर्क, विचार तथा स्थापनाएँ होती थीं, वे प्रायः मौलिक हुआ करती थीं। यही कारण है कि उनके पास देश भर से साहित्यकारों, पत्रकारों, शोद्य-छात्रों तथा संपादकों के पत्र आते रहते थे तथा साहित्यिक-विमर्श चलता रहता था। उनकी अनेक आलोचना पुस्तकें आज भी जिज्ञासु छात्र-छात्राओं की ज्ञान-पियासा शान्त करती हैं तथा साहित्यिक तर्क, ज्ञान एवं वैचारिक सवालों से टकराती हैं। नवजली का व्यक्तित्व प्रभावशाली था। वे पाठकों की जिज्ञासा शांत करते थे तथा उनके पत्रों का जबाव भी दिया

करते थे। इस संदर्भ में ध्यातव्य तथ्य यह है कि वे पाठकों का ज्ञानार्जन के लिए विभिन्न तर्कों तथा तथ्यों का हवाला देकर अपने चिंतन और विचार को पुष्ट करते थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य के विभिन्न कालों पर भी तथा कवियों पर भी मौलिक चिंतन प्रस्तुत किए थे। इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे नए-पुराने लेखक-मित्रों से संवाद बनाए रखकर वर्तमान साहित्यिक परिचर्चाओं और उनसे प्राप्त प्रश्नों के उत्तर तलाशते रहे। उन्होंने आचार्य शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी बंद दुलाये वाजपेयी, रामविलास शर्मा, नामवर सिं और मैनेजर पाण्डेय की आलोचना-परंपरा का विस्तार ही नहीं किया, उनके बीच आयी संवदहीनता को खाई को पाटने का भी सारस्वत प्रयास किया।

डा. नंदकिशोर 'नवल' को नई धारा पत्रिका की ओर से राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह के सुपुत्र डा. उदयराज सिंह की स्मृति में दिया जाने वाला साहित्यिक पुरस्कार, जिसके तहत एक लाख रूपये दिये जाते हैं, से भी सम्मानित किया गया था। इसी तरह राजभाषा विभाग (मंत्रिमंडल सचिवालय, बिहार सरकार) द्वारा दिया जाने वाला राजेन्द्र शिखर सम्मान के तहत भी इन्हें नकद एक लाख रूपये का पुरस्कार प्रदान किया गया था। जबकि इसके पूर्व मैथिली शरण गुप्त पुरस्कार (मध्यप्रदेश) भी आज से करीब 20 वर्ष पहले 2002 के आस-पास प्रदान किया गया था जिसके तहत शाल, नारियल का फल प्रशस्ति पत्र, चिन्ह आदि भी दिए गए थे।

नवल जी के मन में किसी भी समान के प्रति लोभ या लालच या मोह नहीं रहा था, यदि किसी संख्या अथवा प्रतिष्ठान ने उन्हें सम्मानित भी किया , तो उनके साहित्यिक योगदान की वजह से कारण उनका प्रायः बिहार राज्य के अंतर्गत विभिन्न विश्वविद्यालयों में ही नहीं, वरन भारत भर के विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं साहित्य अकादमी, साहित्य सम्मेलनों आदि में शिरकत करने के लिए लगातार बुलावा आता रहा था। कभी पी. एच.डी. की मौखिकी के संबध में, तो कभी किसी जयंती अथवा पुण्यतिथि के अवसर पर व्ययलान देने के लिए उन्हें सादर आमंत्रित किया जाता रहा था, तो कभी किसी सेमिनार अथवा संगोष्ठी में सम्मानीय अतिथि के तौर पर भी भारत भर में भ्रमन करते रहे थे। इधर चार-पाँच वर्षो से वे अस्वस्थ नजर आ रहे थे। अपने संस्करण के आखिरी पृष्ठ पर नवल जी बड़े ही दुखी अवसाद ग्रस्त नजर आते है, वे संस्करण -पुस्तक की अंतिम पारग्राफ में साफ शब्दों में लिखते है- पिछले दिनों के दारजी (केदारनाथ सिंह) पटना आए, तो मुझे बताया कि वे अस्वस्थ चल रहे हैं। कभी-कभी उन्हें दस्त लगने लगते है और एक दिन तो वे बेहोश भी हो गए थे। मैंने कहा कि मैं तो जब कभी उनके स्वास्थ के बारे में फोन करता हूँ। तो वे यही कहते है कि 'मैं ठीक हूँ। के दारजी ने मुझसे कहा कि 'वे सबको यही कहते है, लेकिन वे ठीक है नहीं। मुझे जो करना था, वह कर चुका। यह मेरी अंतिम पुस्तक हैं। अब मेरी जीने की इच्छा नहीं है, सो मैं चाहता हूँ। कि मेरी शेष आयु उन्हें मिल जाए और वे शती पूरी करें। उनकी उपस्थिति-मात्र से हिंदी श्री संपन्न बनी रहेगी। अंत में प्रियदर्शी ठाकुर 'ख्याल' का एक शेर उद्धत कर मैं आपसे विदा लेता हूँः

''थोड़ी दूर और मेरा बोझ उठा

फिर तो ले जाएगी हवा मुझको।''35

कहना नहीं होगा कि अवगत दो वर्ष हुए 12 मई, 2020 की रात को वे इस संसार से विदा हो गए। उनके निधन की खर सुनकर चारों ओर उन पर श्रद्धांजलियों का ताँता लग या। सबों ने उनके युगांतरकारी व्यक्तित्व

को अपने-अपने नजरिए से आँका और अपने उद्गार व्यक्त किए। उनके मित्रों के साथ-साथ परिजनों ने भी अपने-अपने वक्तव्यों के द्वारा उनके अब नहीं होने को बड़ी शिद्दत के साथ याद किया। दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रोफेसर एवं समीक्षक डा. अपूर्वानंद ने उनपर अपने उद्गार व्यक्त करते हुए लिखा- 'वे न चंद लेखकों में थे जो सच्चे अर्थ में साहित्यव्यसनी अध्यापक कहे जा सकते थे। वे आलोचक, संपादक के तौर पर जाने जाते हैं लेकिन अपने छात्रों के लिए वे एक समर्पित अध्यापक ही रहे, बल्कि वे हमेशा कहा करते थे कि उन्होंने अध्यापन सेही लिखना सीखा, वही उनके लेखन का स्रोत रहा।'36

नवल जी ने हिंदी साहित्य को अपनी मौलिक रचनाओं एवं संपादित कृतियों से समृद्ध किया तथा उनको उनके सारस्वत अनदान के लिए सदैव याद किया जाएगा।

उनकी कृतियों की सूची निम्नलिखित है-

- प्रमुख मौलिक कृतियाँ- हिन्दी आलोचना का विकास, मुक्ति बोधः ज्ञान और संवेदना, निरालाः कृति से साक्षात्कार, मैथिलीशरण, तुलसीदास, सूरदास, रीतिकाव्य, दिनकर; अर्धनारीश्वर कवि, समकालीन काव्य यात्रा, मुक्तिबोध की कविताएँः बिम्ब-प्रतिबिम्ब, पुनर्मूल्यांकन, शताब्दी की कविता, निराला-काव्य की छवियाँ, कविता के आर-पार कविताः पहचान का संकट, निकष, रचनालोक, आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास, हिन्दी कविताः अभी, बिल्कुल अभी आदि।
- प्रमुख संपादित कृतियाँ- निराला रचनावली (आठ खंड), दिनकर रचनावली (आरंभ पाँच खंड) सह-संपादक-डा. तरूण कुमार, मैथिलीशरण रचयिता, नामवर संचयिता, स्वतंत्रता पुकारती, मुक्तिबोध: कवि-छवि, निरालाः कवि-छवि, हिंदी साहित्य शास्त्र, छायांतर, संधि-वेला, अंत- अनंत, कामायनी-परिशीलन, खुल गया है द्वार एक, हिंदी की कालजयी कहानियाँ, बीसवीं शती: कालजयी साहित्य, पदचिन्ह आदि।
- मुख्य संपादित पत्रिकाएँ- सिर्फ, धरातल, उत्तरशती, आलोचना (सह-संपादक के रूप में), कसौटी आदि।

निष्कर्षतः नंदकिशोर नवल का व्यक्तित्व प्रतिभासम्पन्न, साहित्य-गुण-मंडित, आलोचक और अध्यापक के रूप में साहित्यकाश के भव्य भूषण युक्त शिखर पर भास्कर-सा दीप्त है। उनका चारित्रिक वैशिष्ट्य आदर्श गुण युक्त रहा है। छात्रों एवं शिक्षकों के लिए सदैव तत्पर रहने वाले नवल जी सदैव सबका हित सोचते रहे, हित-साधन में तत्पर और तल्लीन रहे। आज वे हमारे बीच नहीं हैं किंतु उनकी मौलिक एवं संपादित कृतियाँ हिन्दी साहित्य के पिपासु छात्रों एवं शिक्षकों का ज्ञान-पिपासा शांत करेगी, ऐसी आशा है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. सं. कलानाथ मिश्र, साहित्य यात्रा (त्रैमासिक) वर्ष-6, अंक- 21-22, जनवरी-जून, 2020, पृ०- 16
2. नंदकिशोर नवल, मूरतें माटी और सोने की, संस्मरण पुस्तक, प्रकाशकः राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली, प्रकाश वर्ष: 2017, पृ०- 13
3. वही, पृ०- 13
4. वही, पृ०- 13
5. वही, पृ०- 40

6. वही, पृ०- 40
7. वही, पृ०- 57
8. वही, पृ०- 31
9. वही, पृ०- 30
10. वही, पृ०- 30
11. वही, पृ०- 29
12. वही, पृ०- 80
13. वही, पृ०- 79
14. वही, पृ०- 68
15. वही, पृ०- 69
16. वही, पृ०- 70-71
17. वही, पृ०- 55
18. वही, पृ०- 56
19. वही, पृ०- 15
20. वही, पृ०- 168
21. वही, पृ०- 168
22. वही, पृ०- 168
23. वही, पृ०- 168
24. वही, पृ०- 36
25. वही, पृ०- 36
26. वही, पृ०- 69
27. वागर्थ, (पत्रिका)
28. मूरतें माटी और सोने की- 69
29. वही, पृ०- 74
30. वही, पृ०- 83
31. वही, पृ०- 146
32. नंदकिशोर नवल, आधुनिक हिन्दी कविता का इतिहास प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-2012 पुस्तक के अंतिम आवरण फ्लैप पर लेखक मरियम में उल्लिखित।
33. नंदकिशार नवल, मूरतें माटी और सोने की (संस्मरण) प्रकाशकः राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली प्रथम संस्करण: 2017, पुस्तक के अंतिम फ्लैप पर आत्म परिचय में लेखक के वक्तव्य से।
34. वही, पृ०- 189
35. वही, पृ०- 224
36. द वायर, (इंटरनेट पत्रिका), दिनांकः 13 मई, 2022

❒❒❒

हिन्दी के अंतर राष्ट्रीयकरण में प्रवासी साहित्य का योगदान

–राजेश कुमार

प्रवास के बाद प्रवासी लेखक अपने परिवेश को आत्मसात् करने लगता है। परिवेश में आये बदलाव के कारण नूतन सोच, विचार, दृष्टिकोण, मान्यताओं को लेखक ग्रहण करता है। उनकी मान्यताएं सामाजिक परिवेशों से प्रभावित होती रहती हैं।

सार:

हिन्दी भाषा ने जिस प्रभावी ढंग से विदेशों में अपनी पहचान बनाई है उससे स्पष्ट होता है कि हिन्दी में लिखे जाने वाले साहित्य ने पिछले दो-तीन दशकों से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर साहित्य और प्रवासी साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान है। हिन्दी को अधिक समृद्ध बनाने में हिन्दी साहित्यकारों के साथ-साथ प्रवासी रचनाकारों ने भी अपना विशेष योगदान दिया है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी को जो पहचान प्राप्त हुई है उसके पीछे प्रवास की प्रक्रिया में आई कम्पयूटर क्रांति, निरन्तरता, विश्व बाजार, और संचार के माध्यमों से फैले हिन्दी के रचनाकारों का विभिन्न माध्यमों के द्वारा साहित्यिक जुड़ाव है। हिन्दी साहित्य ने अपनी विशिष्ट संवेदना, दृष्टिकोण, परिस्थिति और सृजन-प्रक्रिया के बल पर ही प्रवासी साहित्य को एक मौलिक रूप प्रदान किया है। प्रवासी साहित्यकारों ने हिन्दी की सत्ता और महत्त्वता को बनाये रखने के लिए विभिन्न माध्यमों का प्रयोग किया है जैसे पत्रिकाओं के द्वारा प्रवासी अंक निकाला जाना, प्रवासी रचनाकारों का सम्मेलन, प्रवासी पुरस्कार आदि। विदेश में रहने वाले रचनाकारों की रचनाओं में अलग-अलग देशों की विभिन्न परिस्थितियों का वर्णन किया जाता है जिससे हिन्दी साहित्य को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिलती है। इस शोध पत्र के माध्यम से मैंने प्रवासी साहित्य के द्वारा हिन्दी भाषा को किस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय पहचान प्राप्त हुई है, का विस्तृत वर्णन किया है।

मूल-शब्द: निरन्तरता, संवेदना, अंतर्राष्ट्रीय, सृजन, क्रांति आदि।

विस्तृत शोध पत्र:

साहित्य के क्षेत्र से अनेक विषय जुड़े हुए हैं जिनमें प्रवासी साहित्य अपना विशेष स्थान रखता है। आज के इस वैज्ञानिक युग में हिन्दी भाषा एक राष्ट्र तक सीमित न रहकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाए हुए है। भारत में निवास करने वाले साहित्यकार यदि हिन्दी भाषा में साहित्य की रचना कर रहे हैं तो भारत से दूर विदेश

में रहने वाले भारतीय साहित्यकार विदेशी भूमि पर हिन्दी साहित्य की रचना कर रहे हैं। इस साहित्य को प्रवासी साहित्य कहा जाता है। प्रवास मनुष्य की स्वाभाविक प्रक्रिया है। प्रागैतिहासिक काल से ही मनुष्य अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए अलग-अलग स्थानों पर भ्रमण करता रहा है। वर्तमान समय में भी मनुष्य अपनी सुविधानुसार तथा अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए अपने देश से दूसरे देश में चला जाता है ।1 प्रवास की यह प्रक्रिया हर मनुष्य के लिए एक जैसी नहीं होती। इतिहास के पन्नों से ज्ञात होता है कि भारत में अनेक जातियों, यूरोपियन, मराठों, मुगलों आदि का स्थापत्य रहा है। इस कारण लगभग तीन करोड़ प्रवासी तथा भारतीय आज विश्व के लगभग चालीस देशों में रहते है ।2 जिनको दो वर्गों में रखा गया था। पहला वर्ग जिसमें ऐसे भारतीय थे जिन्हें अंग्रेज, डच व फ्रांसीसी शासक अपने-अपने गुलाम देशों में धोखे से गिरमिटिया मजदूर बनाकर ले गए थे। शोषण का शिकार गिरमिटिया मजदूरों ने अपनी जन्म भूमि भारत से जुड़े रहने के लिए अपने साथ विरासत के रूप में धर्मग्रंथ, लोकगीत, स्वभाषा, संस्कृति और परम्पराओं को साथ लेकर गए और उनको सुरक्षित रखा। दूसरे वर्ग में वो लोग जो अपनी इच्छा से विदेश चले गए पर भारतीय अपनी मातृभूमि में जुड़े रहे और विदेश में रहने वाले प्रवासी लेखकों ने अपनी लेखनी को माध्यम बनाकर न केवल भारतीय परिवेश, संस्कारों, यहां की मिट्टी, पर्व-त्यौहारों को जीवित रखा विदेशी परिवेश संस्कारों, समस्याओं, परिस्थितियों एवं भाषा से भी हिन्दी पाठकों को परिचित किया और हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप विकसित किया ।3

प्रवासी साहित्य:

साहित्य के क्षेत्र में प्रवासी शब्द अपने अस्तित्व को कायम कर एक नये आयाम को बनाने की ओर अग्रसर है, क्योंकि भारतीयों ने हिन्दी को वैश्विक पटल पर इस प्रकार स्थापित कर दिया है कि छोटा सा बदलाव बड़े रूप में परिचर्चा का विषय बन जाता है। 'प्रवास' शब्द का मूल अर्थ विस्थापन से जुड़ा है, जब व्यक्ति अपनी मातृभूमि, को छोड़कर नई भूमि या किसी अन्य देश में आवास करता है तो वह भावों-विचारों से नए धरातल पर पहुंच जाता है, और उसे अपनी अभिव्यक्ति का विषय बनाता है। इस अभिव्यक्ति में अपनी मातृभूमि की सभ्यता, संस्कृति, साहित्य व अपने अस्तित्व को कायम रखने का प्रयास करता रहता है, इस प्रकार किए गए प्रयास से प्रवासी साहित्य का उद्भव होता है ।

प्रवास के बाद प्रवासी लेखक अपने परिवेश को आत्मसात् करने लगता है। परिवेश में आये बदलाव के कारण नूतन सोच, विचार, दृष्टिकोण, मान्यताओं को लेखक ग्रहण करता है। उनकी मान्यताएं सामाजिक परिवेशों से प्रभावित होती रहती हैं। जिसे वे अपने साहित्य में स्थान देने लगते हैं। विभिन्न परिस्थितियों और विषमताओं के बाद भी प्रवासी लेखक अपना साहित्य ऐसी भाषा में लिखने लगा है जो वहां की नहीं होती ।4 जैसे कि विदेश में बैठकर प्रवासी लेखक हिन्दी भाषा में अपना साहित्य सृजन करता है। हिन्दी साहित्य में मारिशस की एक अलग पहचान है। इन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं, कविता, कथा-साहित्य आदि की रचनाओं से प्रवासी साहित्य को समृद्ध किया है। इनके द्वारा लिखित 'लाल पसीना' चर्चित उपन्यास माना जाता है। जिसमें भारतीयों की वेदनाओं का मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है। प्रवासी साहित्य की रचना चाहे जो भी रही हो, उनमें चित्रित परिस्थितियां चाहे कैसी भी क्यों ना हो किंतु वर्तमान समय में प्रवासी साहित्य हिन्दी साहित्य का अभिन्न अंग बन गया है ।5

हिन्दी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचाने में प्रवासी साहित्यकारों का योगदान:

प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी रचना के माध्यम से हिन्दी को जो पहचान दिलाई है उसको नकारा नहीं जा सकता। प्रवास में लिखे जा रहे हिन्दी साहित्य की अपनी एक अलग संवेदना है। जिसमें भारतीय मन के साथ विशिष्ट प्रवासी सोच मिली होती है। प्रवासी हिंदी साहित्य के मूल में जिस अकुलाहट, बैचेनी को महसूस किया जाता है वह अपनी संस्कृति और परम्परा से दूर होने का मुख्य कारण माना जाता है। भारतीय एवं पश्चिमी संस्कृति के बीच में फंसे प्रवासी भारतीयों के मानसिक आंदोलन का चित्रण प्रवासी हिन्दी साहित्य में हुआ है। 'कमल किशोर गोयनका' के अनुसार हिन्दी के प्रवासी साहित्य का रूप-रंग, उसकी चेतना और संवेदना भारत के हिन्दी पाठकों के लिए एक नई वस्तु है, एक नये भावबोध का साहित्य है, एक नयी व्याकुलता का और बैचेनी का साहित्य है जो हिन्दी साहित्य को अपनी मौलिकता एवं नये साहित्य संसार से समृद्ध करता है।

'प्रवासी साहित्य' साहित्य की लगभग सभी विधाओं में उपलब्ध है, कविता, कहानी, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खंडकाव्य, अनूदित साहित्य, यात्रा वृतांत, आत्मकथा आदि का समावेश है।6 प्रवासी हिन्दी साहित्यकारों में हरिशंकर आदेश का नाम अग्रणी है। इनकी तीन सौ से भी अधिक रचनाएं प्रकाशित हुई हैं। वर्षों पहले ब्रिटिश सरकार मजदूरों के रूप में ले जाए गए भारतीयों की सहायता कर आदेश जी ने वेस्टइंडीज में भारतीय विद्या संस्थान का निर्माण कर बी.ए. स्तर के हिन्दी पाठ्यक्रम सीखने के लिए प्रोत्साहन किया हरिशंकर आदेश के अंतर्गत हिन्दी प्रवासी लेखकों में अभिमन्यु अनंत, सुषम बेदी, तेजेन्द्र शर्मा, उषा राजे, दिव्या माथुर, पूर्णिमा वर्मन आदि शामिल है।

प्रवासी साहित्य से हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर:

विश्व में हिन्दी भाषा की स्थिति काफी दृढ़ है। आज भारत की सीमाएं पार कर, हिन्दी राष्ट्रीय सरोकार स्थापित कर रही है। इसका पूरा श्रेय अगर प्रवासी साहित्य को दिया जाए तो गलत नहीं होगा वर्तमान में विश्व के सभी देशों में हिन्दी भाषा का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। किन्तु सभी देशों में हिन्दी भाषा में साहित्य नहीं लिखा जाता। देश प्रेम से ओत-प्रोत प्रवासी हिन्दी साहित्यकार दूसरे देश में रहकर भी प्रवासी साहित्यकार हिन्दी भाषा को समृद्ध बनाने में अपना योगदान दे रहे हैं। वर्तमान दौर में विश्व के ज्यादातर देशों में हिन्दी के प्रेमी प्रवासी साहित्यकार के चलते अध्ययन-अध्यापन और साहित्य सर्जना की नींव रखी जाती है। इतना ही नहीं हिन्दी भाषा में शोधकार्य भी कराया जा रहा है।7 जिससे हिन्दी साहित्य एवं भाषा को विकसित किया जा सकता है। आज का प्रवासी साहित्य प्रारंभिक प्रवासी साहित्य से बिल्कुल अलग है। तकनीकी विकास के कारण आज का प्रवासी साहित्य जन-जन तक पहुंच गया है और भारत से दूर रहकर भी इंटरनेट के द्वारा अपने हिन्दी साहित्य को पहचान दे रहे हैं। प्रवासी साहित्य में भूमंडलीकरण, उपभोक्तावाद प्रवासी जीवन की त्रासदी, अजनबीपन परिवार से दूरी आदि को देखा जा सकता है।8 प्रवासी साहित्य में अमेरिका के 'प्रवासिनी के बोल' कविता संकलन का उल्लेख करना अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। अंजना संधीर द्वारा संपादित इस कविता संकलन में सिर्फ हिंदी प्रवासी कवित्रियों का ही समावेश है जिसमें प्रवासी हिन्दी कवित्रियों की 324 कविताएं संकलित हैं तथा 33 हिन्दी लेखिकाओं की 115 हिंदी पुस्तकों की भी सूची दी गई है।9

शोध-पत्र उद्देश्य:

वर्तमान युग में प्रवासी साहित्य राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाए हुए हैं। जिसमें हिन्दी भाषा को विशेष महत्त्व दिया गया है। हिन्दी भाषा के इस महत्त्व को समाज के सामने प्रस्तुत करने और प्रवासी साहित्य में हिन्दी भाषा के बढ़ते प्रभाव को दर्शाना इस शोध का मुख्य उद्देश्य रहा है क्योंकि प्रवासी साहित्य हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीयकरण का सबसे बड़ा सशक्त माध्यम माना जाता है। साहित्य को विश्व के कोने-कोने में पहुंचाने और विश्व में हिन्दी को साहित्य में लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य प्रवासी साहित्य से ही संभव हो सकता है। इसलिए इस शोध-पत्र में प्रवासी साहित्य के माध्यम से हिन्दी भाषा के अन्तर्राष्ट्रीयकरण पर प्रकाश डाला गया है और साथ ही यह बताया गया है कि हिन्दी भाषा को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रवासी साहित्य ने पहचान दिलाई है।

निष्कर्ष:

अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि प्रवासी साहित्यकार भावनात्मक दृष्टि से भारत से जुड़ा हुआ है जो उनकी साहित्यिक रचनाओं से स्पष्ट होता है। वर्तमान परिस्थितियों में हिंदी भाषा में विश्व के भिन्न-भिन्न देशों में ज्ञानात्मक और सर्जनात्मक साहित्य की रचना की जा रही है। जिसके कारण हिन्दी, भारत की सीमाएं पार कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाए हुए है। प्रवासी साहित्य ने नए परिवेश, विचार, जीवन शैली एवं साहित्यिक संसार हमें प्रदान किया है। हिन्दी को विश्व स्तर पर स्थापित करने के लिए विभिन्न साहित्यकारों ने पत्र-पत्रिकाओं, बाजार, कम्पयूटर, इंटरनेट आदि माध्यमों का प्रयोग किया है। यह कहना उचित होगा कि प्रवासी साहित्यकारों के साहित्य से ही आज हिन्दी भाषा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी अलग पहचान बनाए हुए है।

सन्दर्भ सूची

1. गोयनका, कमल किशोर, हिन्दी का प्रवासी साहित्य, अमित प्रकाशन, गाजियाबाद 2011, पृ॰ 405
2. गंभीर सुरेन्द्र, प्रवासी भारतीयों में हिन्दी की कहानी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, संस्करण 2017, पृ॰ 53
3. सुखलाल, गंगाधर सिंह, विश्व हिन्दी पत्रिका, 2010 पृ॰ 30
4. मोहन, अरविंद, प्रवासी भारतीयों की पीड़ा, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली, 1988, पृ॰ 40-50
5. अग्रवाल, रोहिणी, समकालीन कथा साहित्य, सरहदें और सरोकार, आधार प्रकाशन, पंचकूला 2007
6. कंवल, जोगिन्द्र सिंह, फिजी में हिन्दी काव्य साहित्य, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्, नई दिल्ली, 2004, पृ॰ 26-34
7. शर्मा, तेजेन्द्र, प्रवासी भारतीयों की वर्तमान पीढ़ी, प्रवासी संसार, जनवरी मार्च 2005, पृ॰ 20
8. रणभिरकर, संदीप, विदेशों में हिन्दी साहित्य: सृजनात्मकता के विविध आयाम, सरहद ई पत्रिका 2017; वाल्यूम-2, पृ॰ 5-54
9. शर्मा, राकेश निशीथ, विदेशों में हिन्दी का बढ़ता प्रभाव, संस्करण 2006, पृ॰ 34-40

❐❐❐

---

1. असिसटेंट प्रोफेसर ललित कला विभाग प्राच्य विद्या संकाय कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

भाषा का प्रश्न और प्रवासी साहित्य

–श्रीमती चैताली सलूजा
–डॉ. नंदिनी तिवारी

प्रवासी भारतीयों के द्वारा हिंदी में लिखे गए साहित्य को प्रवासी हिंदी साहित्य की संज्ञा दी गई हैं, जिसने अपनी भिन्न संवेदना, भिन्न सरोकार एवं भिन्न रूप के कारण अपनी एक अलग पहचान बनाई है, जैसा कि कमल किशोर गोयनका जी ने कहा है - ''अपने देश से बाहर जाकर भिन्न-भिन्न देशों की संस्कृतियों, जीवन-शैलियों एवं मूल्यों तथा जीवन-संघर्षों तथा चुनौतियों से जो टकराहट उत्पन्न होती है, जो संघर्ष एवं द्वन्द्व होता है

शोध सार - हिंदी भाषा को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने में प्रवासी हिंदी साहित्यकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। यह शाश्वत सत्य है कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है और परिवर्तन के इस दौर से हिंदी भाषा भी गुजर रही है। प्रवासी भारतीयों के द्वारा हिंदी सात समुंदर पार विदेशों में पहुंच गई है। प्रवासी भारतीयों के पास प्रवास में कई भाषा के विकल्प होते हैं परंतु अपनी अस्मिता, अपनी संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए वे सदैव हिंदी को प्राथमिकता देते हैं। हिंदी उनकी अभिव्यक्ति की भाषा है। वैश्वीकरण के इस दौर में भाषा का स्वरूप भी परिवर्तित हो रहा है। यह परिवर्तन परिमाण और गुण दोनों स्तरों पर परिलक्षित होता है। प्रवासी साहित्यकार आज साहित्य की हर विधा में सृजन कर रहे हैं। प्रवासी साहित्य में एक ही साथ, एक ही समय में, भिन्न संस्कृतियों की झलक, सामाजिक चेतना की छाप और शैलेन्द्र जी के लिखे हुए गीत की निम्न पंक्तियों को चरितार्थ करने का भाव निहित है

''मेरा जूता है जापानी,
ये पतलून इंग्लिस्तानी,
सर पर लाल टोपी रूसी,
फिर भी दिल हैं हिन्दुस्तानी।''

हिंदुस्तान को दिल में बसाकर प्रवासी साहित्यकार अपने साहित्य में जिस हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं उसकी मूल प्रकृति तो हिंदी साहित्य की तरह ही है परंतु विदेश की भाषा, परिवेश, परिस्थिति, भावबोध, शिल्प, शैली एवं नए शब्दों के कारण हिंदी भाषा नए रूप में, नए अर्थ सामर्थ्य और भाव सामर्थ्य के साथ विस्तारित होकर वैश्विक फलक पर स्थापित हो रही है।

बीज शब्द - प्रवासी साहित्य, भाषा, वैश्वीकरण, भावबोध, शिल्प।

1	हिंदी का प्रवासी साहित्य	कमल किशोर गोयनका	स्वराज प्रकाशन, दिल्ली
2	प्रवासी महिला कहानीकार	डॉ. प्रभा शर्मा (संपादक)	वान्या पब्लिकेशंस, कानपुर
3	प्रवासी साहित्य भाव और विचार	संध्या गर्ग (संपादक)	साहित्य संचय, दिल्ली
4	भारतीय मन और प्रवासी महिलाकार	डॉ. एम. फिरोज. (संपादक)	विकास प्रकाशन, कानपुर
5	प्रवासी हिंदी साहित्य अवधारणा एवं चिंतन	प्रदीप श्रीधर (संपादक)	विद्या प्रकाशन, कानपुर
6	वैश्विक संवेदन-संसार और प्रवासी महिला कहानीकार एक अध्ययन	डॉ. मधु संधु	अमन प्रकाशन, कानपुर
7	प्रवासी भारतीयों की व्यथा-कथा	डॉ. शगुफ़्ता नियाज़ (संपादक)	विकास प्रकाशन, कानपुर
8	हिंदी का भारतीय एवं प्रवासी महिला कथा लेखन	डॉ. मधु संधु	नमन प्रकाशन, नई दिल्ली
9	हिंदी प्रवासी कथा साहित्य (भाग-1 व भाग-2)	डॉ. कल्पना गवली (संपादक)	माया प्रकाशन, कानपुर
10	प्रवासी हिंदी साहित्य	संतोष सिंह	गौरव बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली
11	समकालीन कथा साहित्य, सरहदें और सरोकार	रोहिणी अग्रवाल	आधार प्रकाशन, पंचमूला
12	प्रवासी लेखन नयी ज़मीन, नया आसमान	अनिल जोशी	वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
13	हिंदी का वैश्विक परिदृश्य	डॉ. कल्पना देशपांडे (संपादक)	विनय प्रकाशन, कानपुर
14	प्रवासी साहित्य की हकीकत	डॉ. एम. फिरोज खान अकरम हुसैन {संपादक}	विकास प्रकाशन, कानपुर
15	प्रवासी हिंदी साहित्य और ब्रिटेन	राकेश बी.दुबे	सामयिक पेपरबैक्स, नई दिल्ली
16	प्रवासी साहित्य एवं हिंदी भाषा का बदलता स्वरूप	डॉ. कोयल विश्वास, डॉ चिलुका पुष्पलता, डॉ वाणीश्री बुग्गी {संपादक}	अमन प्रकाशन, कानपुर
17	प्रवासी भारतीयों में हिंदी की कहानी	डॉ. सुरेन्द्र गंभीर	भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली

अनुसंधान उद्देश्य - प्रवासी साहित्यकारों की रचनाओं में अलग-अलग देशों की विभिन्न सामाजिक,

सांस्कृतिक परिस्थितियाँ हिंदी की साहित्यिक रचनाशीलता का अंग बनती हैं। विभिन्न शैलियों का आदान-प्रदान होता है। प्रवासी साहित्यकारों की रचनाओं में हिंदी भाषा के साथ ही कई अन्य भाषाओं के शब्दों का भी बहुतायत में प्रयोग हुआ है जिससे हिंदी का एक नया स्वरूप उभरकर सामने आता है क्योंकि प्रवासी हिंदी साहित्य की भाषा पश्चिमी संस्कृति में पलती है, बढ़ती है अतः वातावरण एवं परिवेश का प्रभाव भाषा पर पड़ना स्वाभाविक है। इस प्रकार हिंदी साहित्य एवं भाषा का अंतर्राष्ट्रीय विकास होता है। हिंदी के इस वैश्विक स्वरूप का विश्लेषण कर उससे सभी को अवगत कराना प्रस्तुत शोध का उद्देश्य हैं।

अनुसंधान पद्धति - प्रस्तुत शोध आलेख के माध्यम से मैंने प्रवासी साहित्य में निहित भाषा, भाव व विचारों को एक नए दृष्टिकोण से देखकर व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। अतः यह मेरा व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध है। साहित्य भाषा पर आधारित एक सृजनात्मक व्यापार का परिणाम है। साहित्य का अध्ययन वास्तव में भाषा की उस सामग्री का ही अध्ययन है जिसका प्रयोग साहित्यकार एक विशेष प्रभाव के लिए करता है। प्रवासी कथा साहित्य के भाषा व शिल्प को विश्लेषित करने के लिए भाषा तात्विक पद्धतियों का भी मैंने प्रयोग किया है।

निष्कर्ष - प्रवासी साहित्य के माध्यम से हिंदी भाषा नए रूप में, नए अर्थ सामर्थ्य और भाव सामर्थ्य के साथ विस्तारित होकर वैश्विक फलक पर स्थापित हो रही है।

शोध की सीमाएँ - प्रवासी साहित्य का कार्यक्षेत्र संपूर्ण विश्व है अतः अध्ययन सामग्री का संकलन सीमित क्षेत्र में ही संभव है।

सिफारिशें - हिंदी साहित्य में प्रवासी साहित्य को समुचित स्थान मिलना चाहिए जिससे हम ग्लोबल भारतीयों के जीवन दशा को समझ सकें तथा भाषा के बदलते स्वरूप का अध्ययन भी किया जा सके। आज आवश्यकता इस बात की है कि प्रवासी साहित्य पर शोध को बढ़ावा दिया जाए, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर संगोष्ठियों का आयोजन किया जाए, विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में इस विषय को शामिल किया जाए जिससे प्रवासी साहित्य हिंदी की मुख्य धारा से जुड़ सके।

भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। क्षेत्र विस्तार के साथ ही भाषा का रूप परिवर्तित होने लगता है, उसका नया स्वरूप विकसित होता जाता है। कहा भी जाता है कि ''कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी''। भूमण्डलीकरण के कारण जहाँ भौगोलिक रूप से दूरियाँ घटी हैं वहीं भाव और संवेदना की दृष्टि से विभिन्न देश परस्पर परिचय सूत्र में भी बंधे हैं। साहित्य ने भी देश की भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण कर अंतरदेशीय और अंतर्राष्ट्रीय सरोकारों का निर्माण किया है। इन नए सरोकारों ने नए साहित्य को भी जन्म दिया है जो प्रवासी साहित्य के नाम से चर्चित है। प्रवासी भारतीयों ने अपनी संवेदनशीलता के कारण प्रवास के अनुभवों को एक नए दृष्टिकोण के साथ अपनी मातृभाषा हिंदी में पिरोना प्रारंभ किया और यही से प्रवासी हिंदी साहित्य का आविर्भाव हुआ।

प्रवासी भारतीयों के द्वारा हिंदी सात समुंदर पार विदेशों में पहुँच गई है। प्रवासी भारतीयों के पास प्रवास में कई भाषाओं के विकल्प होते हैं परंतु अपनी अस्मिता, अपनी संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने

के लिए वें सदैव हिंदी को प्राथमिकता देते हैं। हिंदी उनकी सहज अभिव्यक्ति की भाषा है। व्यावसायिक कार्य या रोजगार के लिए विवश होकर वे भले ही किसी और भाषा का प्रयोग करें परंतु हिंदी उनकी आत्मा की भाषा है, अस्तित्व और अस्मिता की भाषा है। प्रवासी भारतीयों के कारण ही आज हिंदी विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है।

प्रवासी भारतीयों के द्वारा हिंदी में लिखे गए साहित्य को प्रवासी हिंदी साहित्य की संज्ञा दी गई हैं, जिसने अपनी भिन्न संवेदना, भिन्न सरोकार एवं भिन्न रूप के कारण अपनी एक अलग पहचान बनाई है, जैसा कि कमल किशोर गोयनका जी ने कहा है - ''अपने देश से बाहर जाकर भिन्न-भिन्न देशों की संस्कृतियों, जीवन-शैलियों एवं मूल्यों तथा जीवन-संघर्षों तथा चुनौतियों से जो टकराहट उत्पन्न होती है, जो संघर्ष एवं द्वन्द्व होता है, उससे एक नयी संवेदना, एक नयी जीवन-दृष्टि एवं जीवन का नया स्वप्न जन्म लेता है। हिंदी का प्रवासी साहित्य इसी जीवन-संघर्ष तथा नये जीवन-स्वप्न का साहित्य कहा जा सकता है और इसी रूप में उसकी अलग पहचान बनती है।''1

भारतीय मन की सोच और विदेशी पृष्ठभूमि के भावों का जब परस्पर मेल मिलाप होता है तब प्रवासी हिंदी साहित्य का उद्भव होता है। यह साहित्य हिंदी की सृजनात्मक अभिव्यक्ति को एक नया परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है। प्रवासी हिंदी साहित्यकारों का परिवेश हिंदी साहित्यकारों से भिन्न होता है। भारतीय हिंदी साहित्यकार जहां अपनी जमीन, अपने परिवेश और अपने संदर्भों से रूबरू होकर साहित्य सृजन करते हैं वहीं प्रवासी रचनाकारों के समक्ष परिस्थितियाँ भिन्न होती हैं। प्रवासी साहित्यकार के लिये सब कुछ नया होता है चाहे वह नयी जमीन, नया आसमां हो या फिर उस नयी जमीन से उपजे संघर्षों के नए आयाम हो। अतः दोनों प्रकार के लेखकों के लेखन में भी अंतर होता है। कमल किशोर गोयनका जी ने इस संदर्भ में कहा है - ''भारत के हिंदी लेखकों तथा विदेशों में रहने वाले भारतवंशी हिंदी लेखकों की परिस्थितियों में अंतर है, उनकी जीवन-शैली और जीवन के तनावों और संघर्षों में अंतर है। भौतिक सुख-सुविधा, सांस्कृतिक मूल्यों तथा नैतिकता के मापदण्डों में भी अंतर है। अतः इन दोनों प्रकार के हिंदी लेखकों का संवेदन, जीवन-दृष्टि और मनुष्य को रचने की संकल्पना एक नहीं हो सकती। विदेशों के भारतवंशी अप्रवासी हिंदी लेखकों की रचनाएँ हमें नये प्रकार की संवेदनाओं का आस्वादन कराती है और हमारे साहित्यिक आकाश को विस्तृत करती है।''2

वैश्वीकरण ने न केवल मानव जीवन को प्रभावित किया है बल्कि भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के विविध पक्षों को भी प्रभावित किया है। अब विश्वग्राम की संकल्पना में राष्ट्रों के मध्य आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रों में विचारों के पारस्परिक आदान-प्रदान के नए आयाम दिखाई दे रहे हैं। ऐसे में वाद-संवाद का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है जो भाषा के एक नवीन रूप का निर्माण कर रहा है। संपूर्ण विश्व में राष्ट्रों के मध्य बंधुत्व का मूल आधार है - संचार और संचार का सबसे सशक्त माध्यम है भाषा। भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिवेश परिवर्तित होते ही भाषा भी परिवर्तित होकर एक नए रूप में प्रकट होती है। देश, काल, परिवेश की गहरी छाप होने के कारण भाषा गत्यात्मक होती है जिसमें परिवर्तन की प्रक्रिया सदैव चलती रहती है। देश-विदेश की भिन्न-भिन्न संस्कृतियों की टकराहट से भाषा के विविध

पक्षों जैसे शब्द-भंडार, वाक्य रचना, शिल्प, शैली आदि में परिवर्तन होने लगता है। हिंदी भाषा की भी यही स्थिति है। प्रवासी साहित्यकारों की भाषा प्रवास में पलती-बढ़ती है अतः नवीन परिवेश में नयी विषयवस्तु, नए भाव-बोध एवं नए दृष्टिकोण का प्रभाव भाषा पर भी परिलक्षित होता है।

प्रवासी हिंदी साहित्य के माध्यम से हिंदी भाषा में हुए परिवर्तनों को आसानी से देखा जा सकता है। भाषायी तत्वों के आधार पर जब हम प्रवासी साहित्य का विश्लेषण करते हैं तो हम देखते हैं कि यह साहित्य पारंपरिक शिल्प से हटकर एक नवीन शिल्प बोध में अभिवक्त हुआ है। डॉ. प्रेम भटनागर इस संदर्भ में कहते हैं - ''समाज, मनोविज्ञान, नैतिकशास्त्र, इतिहास आदि के परिप्रेक्ष्य में जब व्यक्ति बदलता है, उसकी जीवन दृष्टि बदलती है, भाव बोध परिवर्तित होता है तब उन्हें नया आयाम देने वाला शिल्प क्यों न बदलेगा और जब शिल्प बदलेगा, शिल्पी भी बदलेगा। कभी पात्रों में सम्पृक्त होकर, कभी उनसे असम्पृक्त रहकर। वह सोचेगा, लिखेगा और अंततः वह अपनी अनुभूति की संकीर्णता के चक्रव्यूह से निकलकर जीवन और जगत की बहुमुखी जटिलताओं, गुत्थियों, उलझनों को नया आयाम देगा, सतत् नये शिल्प से रूपायित होगा और इसी में उसकी इतिश्री हैं।''3

साहित्यकार अपने भावों को जिस रूप में व्यक्त करता है वही शिल्प कहलाता है। प्रत्येक रचनाकार का शिल्प उसके वैयक्तिक पहचान से जुड़ा होता है तथा उनका भोगा हुआ यथार्थ उनके साहित्य में दिखाई देता है। भिन्न-भिन्न परिस्थितियों के कारण साहित्यकारों की विषय-वस्तु भी भिन्न होती हैं और उसे अभिव्यक्त करने का ढंग भी भिन्न होता है। यही कारण है कि हर रचनाकार का अपना एक शिल्प होता है। अतः लेखकीय दृष्टिकोण के साथ ही लेखक का बाह्य एवं आंतरिक परिवेश भी शिल्प निर्माण के महत्त्वपूर्ण कारक हैं। प्रवासी साहित्यकार शिल्प से ज्यादा कथ्य पर बल देते हैं। शिल्प उनके कथ्य का अनुगामी बनकर आता है। इन साहित्यकारों के साहित्य में नयी विषयवस्तु के साथ ही कथन की नयी शैलियाँ, बिम्ब, प्रतीक, नये शब्द भंडार, सांकेतिकता दिखाई देती है जो यथार्थ के धरातल पर संवेदना से जुड़े भावों को सहज ही पाठकों के मन-मस्तिष्क तक पहुँचा देते हैं।

प्रवासी साहित्य में कथावस्तु के नये आयाम - प्रवासी साहित्यकारों ने प्रवास के खट्टे मीठे अनुभवों को अपने साहित्य की विषयवस्तु बनाया है। एक ओर जहाँ ये प्रवासी जीवन के विविध पक्षों का चित्रण करते हुए नजर आते हैं तो दूसरी ओर कुछ नये अनकहे, अनछुए पहलुओं को भी अपने साहित्य में अभिव्यक्त करते हैं। डॉ. मधु संधु जी ने कहा है - ''प्रवासी जीवन की आहटे यहाँ गूंज अनुगूंज बनकर, चुनौती बनकर प्रस्फुटित हुई हैं।''[4]

अंगदान और अंग प्रत्यारोपण जैसे विषय भी हमें प्रवासी साहित्य में दिखाई देते हैं। अचला शर्मा की कहानी 'उस दिन आसमान में कितने रंग थे'[5] में आई.वी.एफ. तकनीक से माता-पिता बनने की चाह है तो सुदर्शन प्रियदर्शिनी की 'अवैध नगरी'[6] में टेस्ट ट्यूब बेबी की मनःस्थितियों का विश्लेषण है। शैलजा सक्सेना की कहानी 'उसका जाना'[7] एच.आई.वी. अर्थात् एड्स की भयावहता लिए है। अर्चना पेन्यूली की 'हाईवे फार्टी सेवन'8 में किडनी ट्रांसप्लांट जैसे विषय का वर्णन है तो अरूणा सब्बरवाल की '16 जुलाई

1980'9 में नेत्र ट्रांसप्लांट का वर्णन है। सुषम बेदी की 'एक अधूरी कहानी'[10] में नस्लवाद का भयावह चित्रण है तो उषा राजे सक्सेना की 'अस्सी हूरें, शिराज, मुनव्वर और जूलियाना'[11] में किशोर बच्चों को आतंकवादी बनाए जाने का चित्रण है। अर्चना पेन्यूली की 'बेघर'[12] और अनिल प्रभा कुमार की 'घर'[13] में हैफ फादर जैसे विषय का उल्लेख है तो अर्चना पेन्यूली की 'एन.आर.आई.'[14] में एन.आर.आई. के संघर्षों का वर्णन है। सुधा ओम ढींगरा की 'फंदा क्यों'[15] में ग्रीन कार्ड की समस्या का चित्रण है तो अरूणा सब्बरवाल की 'क्लब क्रोलिंग'[16] में लेस्बियन और गे जैसे विषय का वर्णन है। तेजेंद्र शर्मा की कहानी 'देह की कीमत'[17] में विदेशी चकाचैंध का वर्णन है तो सुषम बेदी के उपन्यास 'पानी केरा बुदबुदा'[18] में दाम्पत्य जीवन को एक नये दृष्टिकोण से देखने का प्रयास है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रवासी साहित्यकारों ने प्रवासी जीवन के विविध पक्षों के साथ ही कुछ अछूते विषयों का भी वर्णन किया है।

शैलीपरक वैविध्य-प्रवासी साहित्य की पृष्ठभूमि, विषयवस्तु, परिवेश नया होने के कारण प्रवासी साहित्यकारों ने अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए नित-नई शैलियों का प्रयोग किया है, जिनमें से प्रमुख है -

पूर्व दीप्ति शैली - इसे फ्लैश बैक शैली भी कहा जाता है। इस शैली के द्वारा कथाकार अतीत की घटनाओं को वर्तमान में याद करता है। उदाहरण के लिए तेजेंद्र शर्मा की कहानी 'जिन्दगी और मौत के बीच की चुप्पी' कहानी में इसी शैली का प्रयोग हुआ है। ''वह भी तो उसे प्रतिदिन अपने स्टेशन पर आते जाते देखता था .... आँखों में पहचान भी बन चुकी थी .... एक दूसरे को देखकर आपस में नमस्कार कह लेती .... अंग्रेज आँखे .... भारतीय आंखे .... कहीं कोई असमंजस नहीं .... बस पहचान होने का अहसास। उसका नाम पता चला भी तो उसकी मृत्यु के बाद।''[19]

मनोविश्लेषण शैली - पात्रों की मनःस्थितियों के विश्लेषण के लिये यह शैली प्रयुक्त की जाती है। सुषम बेदी का उपन्यास 'कतरा-दर-कतरा' में इसी शैली के द्वारा पात्रों का मनोविश्लेषण किया गया है। एक उदाहरण देखिये - ''माँ को मैं अक्सर उसके चेहरे पर खामोश टकटकी लगाये पाती। कुछ अजीब अपारदर्शी सा भाव होना उनके चेहरे पर। पता नहीं वे कक्कू के भीतर चल रही किसी उथल-पुथल को पकड़ने की कोशिश में होती है या कि कोई और ही उलझन थी उन आँखों में''[20]

आत्मकथात्मक शैली - इस शैली के माध्यम से लेखक मैं के धरातल पर आत्मवर्णन के माध्यम से पूरी कथा का वर्णन करता है। इस शैली के माध्यम से लेखक कथा का वर्णन ऐसे करता है जैसे वह स्वयं पूरी कथा का साक्षी हो या भोक्ता हो। उदाहरण के लिए उषा प्रियंवदा की रचना 'एक कोई दूसरा' में लेखिका ने इसी शैली का प्रयोग किया है - ''पर मैं रोऊंगी नहीं। यह कैसी अपूर्व शांति मेरे ऊपर छा गई है, यह कैसी परितृप्ति का बोध ! मैं किताब हाथ में लिये उजली धूप में बैठी हूँ। उसका समर्पण का पृष्ठ मेरे सामने खुला है - 'टु दैट अदर वन (उस दूसरी को) ! अक्षर कहते हैं। और एक मृदु दृष्टि बार-बार मुझसे कह रही है - तुम, नीलांजना, तुम ही तो थीं वह दूसरी !''[21]

संवाद शैली - प्रभावी संवाद ही कथा को गति देते हैं। प्रवासी साहित्यकार दानीश्वर शाम का उपन्यास 'कमल कांड' में संवाद शैली द्रष्टव्य है -

''नाना यह क्या है?

यह तुम्हारी नानी के लिए है। क्यों यह भी नानी के लिए?

अभी-अभी उसको पाउडर दिया न?

भाई तुम्हें भी तो मिला न?

हाँ, तो?

देखो दीप्ति, नानी बीमार-बीमार रहती है न?''[22]

इसी प्रकार प्रवासी साहित्यकारों ने डायरी शैली, प्रश्नोत्तर शैली, विवरणात्मक शैली, चित्रात्मक शैली आदि विविध शैलियों का प्रयोग कर हिंदी को एक नए रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रवासी साहित्य की भाषा-भाषा के अभाव में साहित्य सृजन असंभव है। प्रवासी साहित्यकारों की भाषा में देशी सुगंध के साथ विदेशी भाषा की सौंधी महक भी है। प्रवासी साहित्य की पृष्ठभूमि परदेश होने के कारण उसमें हिंदी के साथ ही अंग्रेजी शब्दों का बहुतायत में प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिये सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'सूरज क्यों निकलता है' में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग इस तरह हुआ हैं - ''लेसर लाईट्स के बदलते रंगों में डांस फ्लोर भर गया।''[23] प्रवासी साहित्य में न केवल अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हुआ है बल्कि कई स्थानों पर अंग्रेजी वाक्यों का भी प्रयोग हुआ है। उदाहरण के लिए तेजेन्द्र शर्मा की कहानी 'देह की कीमत' से एक उदाहरण दृष्टव्य है - ''आई वूड पुट इट दिस वे, सीरियस, यू थिंक सर हैज डायगनॉस्ड दी केस करेक्टली''[24]

प्रवासी साहित्य में अंग्रेजी शब्दों की भरमार के अतिरिक्त तद्भव, तत्सम, उर्दू, अरबी, फारसी, पंजाबी, भोजपुरी शब्दों का भी बहुतायत में प्रयोग हुआ है।

प्रवासी साहित्य में प्रतीक योजना - प्रतीक योजना के द्वारा कथाकार मनोभावों को परत-दर-परत खोलने का प्रयास करता है। प्रतीकों के माध्यम से कथाकार कई भावों को एक साथ प्रकट करता है। प्रवासी साहित्यकारों ने न केवल अपने कथा-साहित्य में प्रतीकों का सफल प्रयोग किया बल्कि उनकी कहानियों एवं उपन्यासों के शीर्षक भी प्रतीकात्मक हैं जैसे तेजेंद्र शर्मा की कहानी 'रेत का घरौंदा'[25] प्रतीक है अस्थिरता व क्षणभंगुरता का। सुषम बेदी की कहानी 'सड़क की लय'[26] समय की लय का प्रतीक है। उषा प्रियंवदा का उपन्यास 'पचपन खम्भे लाल दीवार'[27] में छात्रावास के पचपन खम्भे नायिका के अवसाद, कुंठा, संताप, घुटन व नीरस जीवन का प्रतीक है।

साहित्य में बिम्ब योजना - प्रवासी साहित्यकारों ने बिम्बों के द्वारा अपनी कल्पनाओं, विचारों को प्रतिबिम्बित किया है जो पाठकों की आंखों के सामने सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं। सुषम बेदी की कहानी 'अवशेष' में बिम्ब प्रयोग का एक उदाहरण देखिये - ''उसने खिड़की से बाहर झाँका, पेड़ों पर इक्के-दुक्के

पत्ते ही बचे हुए थे। तेज हवाओं में नंगी शाखाएँ ठिठुर रही थी। झील के इर्द-गिर्द की सारी जमीन को लगातार झरते भूरे-पीले, लाल-करही पत्तों ने लगभग पूरा-का-पूरा ढक दिया था। कुछ दिनों बाद जम जाएगा झील का पानी। लगेगा ही नहीं कि झील कभी वहाँ थी। संगमरमर का झक्क सफेद फर्श बन जाएगी झील।''28

इस प्रकार हम देखते है कि बदलते परिवेश के अनुसार विषयवस्तुओं के वैविध्य ने शिल्पगत वैविध्य को जन्म दिया है। चूँकि प्रवास में साहित्यकार का मानसिक स्तर परिवर्तित होता है फलस्वरूप भाषा की बुनावट भी विभिन्न स्तरों पर परिवर्तित होती रहती है। प्रवासी साहित्यकारों की भाषा मन की भावनाओं को परत-दर-परत खोलने में पूर्णतः सक्षम है। उनकी भाषा में व्यंजनात्मकता, सपाटबयानी, प्रतीकात्मकता, व्यंग्य का पैनापन जैसे प्रयोग उनके अर्थ सामर्थ्य को विस्तार देते हैं। उनकी भाषा में कहीं कोई बनावटी-पन नहीं है बल्कि उनकी भाषा सदैव सहज, सरल रूप में अभिव्यक्त हुई है। प्रतीक और बिम्ब योजना के द्वारा वे अपने भावों को सजीवता व जीवंतता के साथ प्रस्तुत करते दिखाई देते हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि हिंदी भाषा को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने में प्रवासी हिंदी साहित्यकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान है क्योंकि प्रवासियों के द्वारा ही हिंदी विदेशों में पहुँची है जहाँ एक नवीन परिप्रेक्ष्य में नवीन रूप में हिंदी प्रस्फुटित होकर पल्लवित हो रही है। देश परिवर्तन के कारण-भाषा का स्वरूप भी परिवर्तित हो रहा है। यह परिवर्तन परिमाण और गुण दोनों स्तरों पर परिलक्षित होता है। प्रवासी साहित्यकार आज साहित्य की हर विधा में सृजन कर रहे हैं। प्रवासी साहित्य में एक ही साथ, एक ही समय में, भिन्न संस्कृतियों की झलक, सामाजिक चेतना की छाप और शैलेन्द्र जी के लिखे हुए गीत की निम्न पंक्तियों को चरितार्थ करने का भाव निहित है -

'मेरा जूता है जापानी,

ये पतलून इंग्लिस्तानी,

सर पर लाल टोपी रूसी,

फिर भी दिल है हिंदुस्तानी'।29

हिंदुस्तान को दिल में बसाकर प्रवासी साहित्यकार अपने साहित्य में जिस हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं उसकी मूल प्रकृति तो हिंदी साहित्य की तरह ही है परंतु विदेशी भाषा, परिवेश, परिस्थिति, भावबोध, शिल्प, शैली एवं नए शब्दों के कारण हिंदी भाषा नए रूप में, नए अर्थ सामर्थ्य और भाव सामर्थ्य के साथ विस्तारित होकर वैश्विक फलक पर स्थापित हो रही है।

संदर्भ सूची

1. गोयनका, के.के. (2017). हिंदी का प्रवासी साहित्य, नई दिल्ली: स्वराज प्रकाशन.
2. गोयनका, के.के. (2017). हिंदी का प्रवासी साहित्य, नई दिल्ली: स्वराज प्रकाशन.
3. डॉ. भटनागर, पी. (2019). हिंदी उपन्यास शिल्प: बदलते परिप्रेक्ष्य.
4. डॉ. संधु एम. (2015). वैश्विक संवेदन-संसार और प्रवासी महिला कहानीकार एक अध्ययन, कानपुर: अमन प्रकाशन.

5. शर्मा, ए. (2015). उस दिन आसमान में कितने रंग थे, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
6. प्रियदर्शिनी, एस. (2015). अवैध नगरी, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
7. सक्सेना, एस. (2014). उसका जाना, साहित्यकुंज.
8. पेन्यूली, ए. (2004). हाईवे फार्टी सेवन, वागर्थ, कलकत्ता.. भारतीय भाषा परिषद्.
9. सब्बरवाल, ए. (2014). 16 जुलाई 1980, आधारशिला.
10. बेदी, एस. (2015). एक अधूरी कहानी, नई दिल्ली.. हंस.
11. सक्सेना, यू.आर. (2007). अस्सी हूरें, शिराज, मुनब्बर और जूलियाना, वह रात और अन्य कहानियाँ, नई दिल्ली: सामयिक.
12. पेन्यूली, ए. बेघर, वार्गथ, कलकत्ता: भारतीय भाषा परिषद्.
13. कुमार, ए.पी. (2011). घर, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
14. पेन्यूली, ए. एन.आर.आई., दिल्ली: सरिता.
15. ढींगरा, एस.ओ. (2011). फंदा क्यों, कौन सी जमीन अपनी, दिल्ली: भावना प्रकाशन.
16. सब्बरवाल, ए. (2015). क्लब क्रोलिंग, सरिता.
17. शर्मा, टी. (2008). देह की कीमत, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
18. बेदी. एस. (2017). पानी केरा बुदबुदा, नई दिल्ली: किताब घर प्रकाशन.
19. शर्मा, टी. जिन्दगी और मौत, एक मध्यांतर, दिल्ली: यश पब्लिकेशन.
20. बेदी, एस. (1994). कतरा-दर-कतरा, नई दिल्ली: अभिषेक प्रकाशन.
21. प्रियंवदा, यू. (2000). एक कोई दूसरा, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
22. शाम, डी. (1998). कमल कांड, नई दिल्ली: वर्तिका पब्लिकेशन.
23. ढींगरा, एस.ओ. (2013). सूरज क्यों निकलता है, विजनौर: हिंदी साहित्य निकेतन.
24. शर्मा, टी. (2008). देह की कीमत, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
25. शर्मा, टी. रेत का घरौंदा, अभिव्यक्ति. https://www.abhivyakti-hindi,org{}
26. बेदी, एस. (2017). सड़क की लय, नई दिल्ली: ज्ञान विज्ञान एजूकेयर.
27. प्रियंवदा, यू. (1990). पचपन खंभे लाल दीवार, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन.
28. बेदी, एस. (2017). सड़क की लय, अवशेष, नई दिल्ली: ज्ञान विज्ञान एजूकेयर.
29. शैलेन्द्र, एस.के. (1955). श्री 420 https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct

❑❑❑

---

1. सहायक प्राध्यापक (हिंदी), शास.जे.पी.वर्मा स्नातकोत्तर कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) E-mail – chaitalisaluja2017@gmail.com, Mob No. - 9039771619
2. प्राध्यापक (हिंदी), शास.बिलासा कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) E-mail – nandini.nnt@gmail.com, Mob No. - 9340312212

असमिया संस्कृति और राम-कथा की परंपरा

–डॉ. परिस्मिता बरदलै

माधव कंदलि के परवर्ती कवि श्रीमंत शंकरदेव के मन में कंदलि के प्रति अगाध प्रेम और श्रद्धाभाव था। उनके काव्य कौशल और भाषा लालित्य को शंकरदेव ने अत्यंत प्रशंसा की है। श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित 'रुक्मिणी हरण' नाटक और रामायण के 'उत्तरकांड' में माधव कंदलि की भाषा का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है।

भूमिका-

भारतीय इतिहास में भक्ति आंदोलन एक युगांतरकारी घटना है। इस आंदोलन के दौरान संपूर्ण भारतवर्ष में भक्ति की लहर ने भारतीय समाज को एक साथ उद्वेलित किया था। बंग में श्री चैतन्य, उत्तर में कबीर, सूरदास, तुलसीदास, जायसी, मीरा दक्षिण में रामानुज, आलवार संत, अक्क महादेवी और पूर्व में श्रीमंत शंकरदेव, माधवदेव आदि महान कवियों ने जन्म ग्रहण करके संपूर्ण भारतवर्ष में भक्ति आंदोलन को एक दिशा देने में सक्षम हुए। भक्ति आंदोलन का स्वरूप अखिल भारतीय होने के बावजूद साहित्य के आलोचक भारत के कुछ ही क्षेत्र के कवियों और उनकी कविताओं को ही इसके अध्ययन में शामिल कर पाते हैं। यह तथ्य विशेष रूप से पूर्वोत्तर भारत के महान कवियों और उनके साहित्यिक अवदान के बारे में ज्यादा सत्य है।

मध्यकालीन पूर्वोत्तर भारत के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और साहित्यिक परिस्थितियों में भारत के अन्य प्रांतों के साथ कोई अंतर दिखाई नहीं देता। मध्यकाल के प्रमुख असमीया कवि माधव कंदली, महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव, माधवदेव, आनंद कंदली, दुर्गावर कायस्थ, रघुनाथ महंत आदि महान साहित्यकारों ने अपने साहित्य के द्वारा पूर्वोत्तर भारत के साहित्य, समाज, कला तथा संस्कृति के निर्माण और प्रतिष्ठा में अपना महती योगदान दिया है।

इस संदर्भ में हिंदी साहित्य के आलोचक डॉ. अनुशब्द का एक कथन उल्लेख कर सकते हैं- "ध्यातव्य है कि समूचे मध्यकालीन भारतीय समाज की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक परिस्थितियाँ कमोबेश एक जैसी ही थी और उनसे जनता तथा समाज के लिए चिंतित और समर्पित रचनाकारों-समाजसुधारकों की मनःस्थिति भी लगभग एक जैसी ही थी, फिर चाहे वह पूर्वोत्तर भारत हो, उत्तर, दक्षिण या पश्चिम भारत हो।"

भारतीय साहित्य में रामायण की परंपरा में सबसे पहले संस्कृत

में रचित आदिकवि वाल्मीकि की **'रामायण'** आती है। वाल्मीकि की रामायण ही समस्त रामकथाओं का स्रोत बिंदु है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में रचित रामायणों में द्रविड़ भाषा परिवार की भाषाओं में रचित रामायण का नाम पहले आता है। कंबन कृत **'कंब रामायण'**, रंगनाथ कृत **'रंगनाथ रामायण'**, मलायलम में राम नामक कवि रचित **'रामचरितम्'**, नरहरि कृत **'तोरवे रामायण'** प्रमुख हैं। इसके पश्चात आधुनिक भारतीय आर्यभाषा में रचित रामायण का क्रम आता है।

अप्रमादी कवि माधव कंदलि की 'सप्तकाण्ड रामायण'

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में पहली बार रामायण पूर्वोत्तर भारत की एकमात्र आर्य भाषा असमीया में 14वीं सदी में लिखी गयी। प्राकशंकर युग के कवियों के बीच में माधव कंदलि अप्रतिद्वन्दित रूप से श्रेष्ठ हैं। उन्होंने सप्तकाण्ड रामायण की रचना करके असमीया भाषा में रामायणी साहित्य का सूत्रपात किया। काल और स्थान के विषय में विभिन्न विद्वानों में मतभेद होने के बावजूद भी हम माधव कंदलि को चौदहवीं शताब्दी का कवि मान सकते हैं। उन्होंने 14 वीं सदी के मध्य में ही (सं.1330-1370) अपने आश्रयदाता **बाराही राजा महामाणिक्य** की प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं आदेश से **'सप्तकाण्ड रामायण'** की रचना की। इस दृष्टि से अगर विचार किया जाए तो माधव कंदलि की रामायण तुलसी की **'रामचरित मानस'** से 150 वर्ष पहले की है।

माधव कन्दली के रामायण की प्राचीनता के विषय में ज्ञानपीठ विजेता इंदिरा गोस्वामी का कथन महत्त्वपूर्ण है-"कोसबिहार राज्य के महाराजा नरनारायण के समसामयिक महान संत कवि शंकरदेव से प्रायः एक सौ वर्ष पहले के वैष्णव असमीया साहित्य के प्रमुख कवियों के बीच में माधव कन्दली उज्ज्वल नक्षत्र पुंज है। आधुनिक भारतीय भाषाओं के कवियों में से सबसे पहले माधव कन्दली ने ही वाल्मीकि रामायण का अनुवाद एक स्थानीय भाषा में किया था।"[2]

माधव कंदलि ने अपने विषय में स्वयं ही लिखा है कि वह बराही राजा महामाणिक्य के आग्रह से वाल्मीकि रामायण का अनुवाद असमीया भाषा में किया है-

"कविराज कंदली जे, आमाकेसे बुलिवय,
करिलोहों हर्ब्बजन बोधे।
रामायण सुपयार, श्रीमहा माणिके जे,
बराह रजार अनुरोधे।।23
सात काण्ड रामायण, पदबन्धे निबन्धिलो,
लम्भा परिहरि सारोधृते।
महामाणिकर बोले, काव्यरस किछो दिलों,
दुग्धक मथिले येन घृत।।24"[3]

(सभी लोग मुझे कविराज कंदलि के नाम से जानते हैं। मैंने बराही राजा श्री महामाणिक्य के आग्रह से वाल्मीकि रामायण को असम की जनता के लिए सहज सरल रूप में लिखा है। मैंने पद रूप में जो सप्तकाण्ड रामायण लिखी है, उसे आप लोग कृपया स्वीकार कीजिए। महामाणिक्य को और कहा है कि इस रामायण में मैंने अपने तरफ से भी कुछ संयोजन किया है। जिस तरह दूध को मथकर घी निकाला जाता है, उसी तरह मैंने वाल्मीकि रामायण को पद रूप में आकार दिया है। यदि मेरे इस काम से पंडित वर्ग में असंतोष व्याप्त होता है तो मैं आप लोगों से हाथ जोड़कर क्षमा मांगता हूँ और अगर वाल्मीकि रामायण का कोई अंश यहाँ प्राप्त नहीं होता है तो आप लोग मेरी निंदा कर सकते हैं।)

माधव कंदलि के परवर्ती कवि श्रीमंत शंकरदेव के मन में कंदलि के प्रति अगाध प्रेम और श्रद्धाभाव था। उनके काव्य कौशल और भाषा लालित्य को शंकरदेव ने अत्यंत प्रशंसा की है। श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित **'रुक्मिणी हरण'** नाटक और रामायण के **'उत्तरकांड'** में माधव कंदलि की भाषा का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। श्रीमंत शंकरदेव कृष्णभक्त कवि थे, लेकिन इसके बावजूद इन्होंने रामायण की रचना की और इसे लेकर एक किंवदंती प्रचलित है। माधव कन्दली के रामायण में राम और सीता को पूर्ण रूप से मानवीय रूप प्रदान किया है। उन्होंने अपनी रचना में राम चरित्र को मानवीय दुर्बलताओं के बीच में ले जा कर रख दिया। उनके रामायण में राम और सीता इतने मानवीय हैं कि ऐसा प्रतीत होता है वह लोग हमारे साधारण समाज में ही निर्मित हुए हैं। कंदलि ने राम के ईश्वरीय रूप पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया है। कंदलि ने शायद समसामयिक असम के सहज-सरल लोगों को ध्यान में रखकर ही रामायण लिखी थी, ताकि जनता खूब अपनत्व भाव से राम को स्वीकार कर पाए, लेकिन यह बात शंकरदेव के गुरु अनंत कंदलि को पसंद नहीं आई। शंकरदेव की जीवनी **'कथा गुरुचरित्र'** में इस बात का उल्लेख मिलता है कि आनंत कंदलि ने माधव कंदलि की **'सप्तकाण्ड रामायण'** का पुनर्लेखन करना चाहते थे, इसका मूल कारण यही था कि **'सप्तकाण्ड रामायण'** में राम के चरित्र का ईश्वरीय रूप प्रतिफलित नहीं हुआ है, लेकिन एक दिन शंकरदेव के सपने में माधव कंदलि ने आकर यह प्रार्थना की कि आनंद कंदलि के कब्जे से उनकी रामायण की रक्षा करनी है। इसके पश्चात शंकरदेव ने अपने प्रिय कवि माधव कंदलि की 'रामायण' के उद्धार हेतु कार्य करना शुरू किया। माधव कंदलि की रामायण में 'आदिकाण्ड' और 'उत्तरकाण्ड' का अभाव है। संभवतः उन्होंने इन दोनों काण्डों की रचना की ही नहीं थी या की भी थी तो वह काल के गर्भ में खो गई। इसी कारण माधव देव ने **'आदिकाण्ड'** और शंकरदेव ने **'उत्तर काण्ड'** की रचना करके माधव कंदलि की **'सप्तकाण्ड रामायण'** को पूर्णता प्रदान की। यहाँ इस बात का उल्लेख करना उचित होगा कि माधव कंदलि ने लंकाकाण्ड के अंत में ही लिखा है कि 'सप्त काण्ड रामायण पदबन्धे निबन्धिलो लम्भा परिहरि सारोधृते' इस बात से अनुमान लगाया जा सकता है कि उन्होंने लंकाकाण्ड से ही अपने रामायण को पूर्ण किया था और उनके रामायण का नाम **'सप्तकाण्ड रामायण'** है।

महापुरूष शंकरदेव ने 'उत्तरकाण्ड' की रचना करते समय माधव कंदलि के पाण्डित्य और कवित्व को स्वीकृति देते हुए श्रद्धापूर्वक प्रशंसा करते हुए कहा है कि –

"पूर्व्व कवि अप्रमादी, माधव कन्दलि आदि,

विरचिला पदे राम कथा।[3]

हस्तीर देखिया लाद, शशाजेन फारे मार्ग

मोर भौल तेन्हय अवस्था।।[4]"

(अप्रमादीकवि माधव कंदलि और उनके पूर्ववर्ती कवियों ने छन्दबद्ध पदों में रामायण की रचना की थी। उसके तुलना में मैं सिर्फ रास्ते में पड़े हाथी के गोबर को देखकर डर के मारे पलायन करने वाले एक खरगोश की तरह ही हूँ।)

श्रीमंत शंकरदेव और माधवदेव असम में नव वैष्णव धर्म के प्रतिष्ठापक रहे। माधव कंदलि के रामायण की जनप्रियता की ओर लक्ष्य करके श्री शंकरदेव यह भली-भांति अनुमान लगा पाए थे कि कवि कंदलि कृत रामायण को ही वह वैष्णव धर्म के प्रचार के वाहक के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। इसी कारण महापुरुष शंकरदेव और महापुरुष माधवदेव ने रामायण के आदिकाण्ड और उत्तरकाण्ड रचना करते समय राम को साक्षात विष्णु के अवतार के रूप में स्पष्ट रूप से दिखाया है। श्रीमंत शंकरदेव ने संपूर्ण संसार को राममय ही माना है। उत्तरकाण्ड रामायण में इस विषय में एक दृष्टि डाल सकते है-

"रामे पितृ मातृ सुत, सुहृद सोदर बंधु,

रामे आत्मा रामे जीव प्राण।

रामे जप यज्ञ दान, रामेसे परम ज्ञान,

रामे कौटि शत तीर्थस्नान।।35

राम मोर ईष्ट देव, रामकेसे करों सेव,

गति मोर रामर शरण।

राम धर्म रामे कर्म्म, रामेसे बान्धव मर्म्म,

जानि लैलों रामर चरण शरण।।36"[5]

(राम ही मेरा पितृ, मातृ और सुहृदय सहोदर भाई और बंधु हैं, राम ही आत्मा है और राम ही प्राण है। राम ही जप, तप, यज्ञ, दान और राम ही परम ज्ञान स्वरूप है, राम ही कोटी कोटी तीर्थ स्नान के समान है। राम ही मेरे ईष्ट देव हैं और राम को ही मैं पूजता हूँ, राम की शरण के अलावा मेरी और कोई गति नहीं है। राम ही धर्म है, राम ही कर्म है, राम से ही जीवन के मर्म को समझ पाया हूँ और ये सब कुछ समझने के पश्चात् ही मैंने राम के चरण में शरण ली है।)

माधव कंदलि और श्रीमंत शंकरदेव एवं माधवदेव की रामायण में राम के स्वरूप के संदर्भ में डॉ. इन्दिरा गोस्वामी का एक मन्तव्य यहाँ उल्लेख कर सकते हैं- "यह बात सही है कि शंकरदेव और माधवदेव ने नव वैष्णववाद के प्रचार और प्रसार के उद्देश्य से राम को विष्णु के अवतार के रूप में मूल रामायण में नए रूप से सन्निविष्ट किया है, किंतु कंदलि की रामायण में भी कुछ कथांश ऐसा है, जहाँ राम को विष्णु के

अवतार के रूप में दिखाया गया है, इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये सब बाद का संयोजन नहीं है। इसके अलावा कहीं कहीं ऐसी भी उपमा मिलती है जहाँ राम की विष्णु के साथ और सीता की लक्ष्मी के साथ तुलना की गई है। ये सब इसी कारण उल्लेख योग्य है क्योंकि ये सभी उपमा कंदलि के मूल सृष्टि जैसा लगता है, शंकरदेव या माधवदेव द्वारा बाद के संयोजन जैसा नहीं लगता।"[6]

एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि भारत के विभिन्न जगहों पर प्रचलित वाल्मीकि रामायण का पाठ एक जैसा नहीं है। प्रधान रूप से हम वाल्मीकि रामायण के तीन पाठों को मान सकते है। वह हैं- दक्षिणात्य पाठ, गौड़ीय पाठ और पश्चिम उत्तरीय पाठ। इन तीनों पाठों में वैषम्य देखने को मिलता है, लेकिन इन तीनों पाठों के उत्तर काण्ड में कोई भिन्नता नहीं है। इनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इन तीनों पाठों का उत्तर काण्ड वाल्मीकि की रचना ना होकर बाद का संयोजन है। इस विषय में केशदा महंत की एक युक्ति उल्लेख किया जा सकता है- "उत्तरकाण्ड को वाल्मीकि रामायण में बाद में जोड़ा गया है यह एक शक्तिशाली युक्ति है। रामायण की षष्ठकाण्ड युद्धकाण्ड के अंत में रामायण के पाठ और श्रवण की फल प्राप्ति के विषय में वर्णन किया गया है। किसी भी ग्रंथ की समाप्ति में ही उसके पाठ-श्रवन के फल के विषय में वर्णन किया जाता है, अर्थात् युद्धकाण्ड में ही वाल्मीकि रचित रामायण समाप्त हुआ था।"[7]

माधव कंदली कृत रामायण का आधार गौड़ीय पाठ को माना जाता है, लेकिन असमीया साहित्य के विभिन्न विद्वानों में इस विषय को लेकर मत-वैभिन्नता देखने को मिलती है। इन विद्वानों का कहना हैं कि वाल्मीकि रामायण के इन तीनों पाठों के अलावा और एक पाठ है जिसे कामरूपीय पाठ कहा जाता है। माधव कंदलि की रामायण का अध्ययन करने के पश्चात् हम यह जान पाते है कि उन्होंने रामायण रचना करते समय जिस पाठ को आधार के रूप में लिया था वह गौड़ीय पाठ से काफी भिन्न है। असमीया रामायणी साहित्य के विशेषज्ञ केशदा महंत का दावा है कि "कामरूपीय कवि माधव कंदलि की रामायण का विस्तृत रूप से विश्लेषण करने के पश्चात ये लेखिका इस सिद्धान्त पर सहमत होती है कि वाल्मीकि रामायण का एक कामरूपीय पाठ भी था। विभिन्न विद्वान माधव कंदलि की रामायण का आधार वाल्मीकि रामायण के गौढ़ीय पाठ को ही मानते है, फिर भी ये लेखिका सन् 1990 में ही प्रकाशित इस पुस्तक में कंदलि कृत रामायण का आधार एक कामरूपीय पाठ को स्वीकार करती है।"[8]

चैतन्य देव के समकालीन वाल्मीकि रामायण के गौड़ीय पाठ के टीकाकार लोकनाथ ने वाल्मीकि रामायण की एक 'कामरूपीय पुस्तक' अर्थात् कामरूपीय पाठ के बारे में उल्लेख किया है। सुन्दरकाण्ड के एक श्लोक की व्याख्या में लोकनाथ ने लिखा है 'पद्यमिदगं कामरूपीय पुस्तके वर्तते इति वाख्यातम।' डॉ. अमरेश्वर ठाकुर और हेमन्त कुमार तर्कतीर्थ द्वारा सम्पादित 'वाल्मीकि रामायण' में गौड़ीय पाठ लोकनाथ टीका को सन्निविष्ट किया गया है।

असमीया रामायण के जनक माधव कंदलि के द्वारा रचित रामायण मौलिक न होकर वाल्मिकी रामायण का अनुवाद है, लेकिन उनका यह अनुवाद इतना निपुण और मनोरम है कि उससे मौलिक रचना का सा ही आनंद परिगणित होता है । यह केवल कवि कंदलि की विशिष्ट प्रतिभा के कारण ही संभव हो

पाया है। उन्होंने अपने अनुवाद के आदर्श के बारे में खुद ही कहा है कि –

"वाल्मीकि रचिला शास्त्र गद्य पद्य चन्दे।
ताहाक विचार आमि करिया प्रबन्धे।।74
आपोनार बुद्धि अर्थ जि मते बुझिलोँ।
संक्षेपे करिया ताक पद विरचिलोँ।।75
समस्त रसक कोने जानिवाक पारे।
पक्षी सब उरइ जेन पखा अनुसारे।।76
कवि सब निबन्धय लोक व्यवहारे।
कतो निज कतो लम्भा कथा अनुसारे।।77
देववाणी नुहि इटो लौकिक से कथा।
एतेके इहार दोष नलैवा सर्वथा।।78"[9]

(वाल्मीकि ने अपनी रामायण की रचना गद्य, पद्य आदि विभिन्न छन्दों में की थी। अत: उनकी रामायण के अध्ययन करने के पश्चात् मुझे अपने ज्ञान और बुद्धि के अनुसार जो समझ में आया उसे मैंने संक्षेप में प्रबन्ध काव्य के रूप में रूपान्तरित किया। अनुभूति का प्रकार असीम है। इसका रहस्य कभी कोई उद्घाटित नहीं कर सकता। पंख की शक्ति के अनुसार जिस तरह एक चिड़िया उड़ सकती है उसी तरह एक कवि भी अपनी प्रतिभा के बल पर दूसरों के ज्ञान से ज्ञान आहरण कर सकते हैं। मैंने इस राम कथा में कथा के अनुसार कुछ अपने तरफ से भी जोड़ दिया है। ये कथा लौकिक कथा मात्र है, भगवान की वाणी नहीं है। इसलिए आप सभी मुझे दोष मत देना।)

सभी श्रेष्ठ कवियों का यह लक्ष्य होता है कि जिनके लिए रचना की जा रही है उन लोगों की रूचिबोध का ध्यान रखा जाए। आदिकवि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण को माधव कंदली ने यथासंभव एक नया रूप देकर असमीया समाज के लिए उपयोगी बनाया है। उन्होंने वाल्मीकि रामायण के उन्हीं अंशों की विस्तृत रूप से व्याख्या की है जो असम के सहज सरल निरक्षर श्रोताओं को समझ में आता या आनंद प्रदान करता है। लोकसमाज की आवश्यकता को ध्यान में रखकर ही संभवतः उन्होंने आक्षरिक अनुवाद की ओर विशेष ध्यान न देकर, कुछ हद तक श्लोकानुवाद में और व्यापक रूप से भावानुवाद पर ही ज्यादा गुरूत्व आरोप किया। प्रयोजन अनुसार वाल्मीकि रामायण के कुछ अध्यायों की कहानी को उन्होंने छोड़ दिया और जहाँ उन्होंने अनुभव किया, वहाँ उन्होंने मूल से भी अधिक विस्तृत रूप से वर्णन किया। सर्गों की इस कटौती या बढ़ोत्तरी से काव्यिक सौन्दर्य में कोई बाधा उपस्थित नहीं हुई। कवि कंदलि की इस कुशलता पर मंतव्य करते हुए असमीया साहित्य के विद्वान शशि शर्मा का कहना है कि-

"कवि कंदलि एक महान कोशली थे। ऐसे तो उन्होंने यह घोषणा की थी कि वह अपनी रामायण में किसी प्रक्षिप्त घटना को स्थान नहीं देंगे, फिर भी जगह-जगह पर उन्होंने एक दो प्रक्षिप्त घटनाओं को जोड़ा

है। इस बात को उन्होने कुशलता से स्वीकार कर दोष खण्डन करके रखा है- 'महामाणिक्यक बोले काव्यरस किसो दिलों।', पर कंदलि द्वारा जोड़ी गई नई घटनाओं के कारण रामायण के मूल कहानी में कहीं से भी कोई विकृतता नहीं आई है।"[10]

राम राज्याभिषेक के प्रसंग में कंदली ने जो वर्णन किया है, वह लगभग वाल्मीकि रामायण के अनुरूप ही है। राम को युवराज बनाने के लिए प्रस्तुति 'फाल्गुन एरिया चेत प्रवेश', गुरु वशिष्ट को बुलाकर राम अभिषेक की प्रस्तुति का दायित्व अर्पण, सुमंत्रक द्वारा राम को बुलाकर विभिन्न राजनैतिक उपदेश देना, ये सभी प्रसंग मूल के अनुरूप होने से भी कंदलि ने अति संक्षिप्त रूप में अपनी रामायण में प्रस्तुत किए हैं।

कंदलि रामायण में ओर एक गुरूत्वपूर्ण बात यह है कि मंथरा के परामर्श लाभ करके आनंदित कैकेयी अपने द्वारा राम की अनिष्ट साधन पर खेद प्रकट किया है। कंदलि ने अपनी रामायण में कैकेयी के विमल स्वभाव के बारे में भी इंगित किया है। इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि कंदलि के मन में कैकेयी के प्रति सहानुभूति थी।

कंदलि ने अपनी रामायण में श्लोकानुवाद से ज्यादा भावानुवाद पर ही ध्यान दिया है। उन्होंने वाल्मीकि रामायण के 'अयोध्या काण्ड' के 119 सर्गो को असमीया संस्करण में 41 सर्गों में, अरण्य काण्ड के 75 सर्गों को 23 सर्गो में और लंका काण्ड के 128 सर्गों के कथा को 57 सर्गों में समाप्त किया है। सर्गों की इस कटौती या बढ़ोत्तरी से काव्यिक सौन्दर्य में कोई बाधा उपस्थित नहीं हुई है। असमीया जनसाधारण के मनोरंजन को ध्यान में रखते हुए ही कंदलि ने कुछ नयी कहानियों का संयोजन अपने रामायण में किया है। जैसे- मंथरा के मन में भरत के प्रति काम भावना, दशरथ के शोक में मूर्च्छित अवस्था में राम की दम्भोक्ति, वनवास के प्राक् मुहूर्त में सीता के देह सौन्दर्य के प्रति आकृष्ट राम आदि घटनाओं के इस प्रकार के चित्रण से कंदलि रामायण एक अनुवाद होते हुए भी कवि के मौलिक सृजन शक्ति का आभास दिलाती है।

सप्तकांड रामायण में कवि ने अपनी अद्भुत सृजन शक्ति द्वारा जो नए संयोजन किये है वह कहीं-कहीं मूल रामायण से भी अधिक आकर्षक बन पड़े हैं। कवि कंदलि के चित्रकूट वर्णन को देखने से हमें यह ज्ञात होता है कि जहाँ वाल्मीकि ने अति संक्षेप में चित्रकूट की शोभा वर्णित की थी, वहाँ कंदलि ने एक सुदक्ष चित्र शिल्पी की दृष्टि से चित्रकूट के नैसर्गिक प्राकृतिक सौंदर्य का सुंदर, मनमोहक एवं विस्तृत वर्णन किया है। इस तरह के वर्णन में उन्होंने सम्पूर्ण रूप से असम के प्राकृतिक सौंदर्य को ही केंद्र में रखा है। कंदलि ने जिन फूलों के नाम लिये है वह असम में ही खिलने वाले फूल हैं। प्रकृति की इस अद्भुत लीला के बीच में सीता का मन किस तरह से विचलित हुआ, उसका एक सुंदर उदाहरण द्रष्टव्य है-

"पक्षीगण रावे येन बाजे बाद्यभण्ड।

नागेश्वर फुल काम नृपतिर दण्ड।।63

गुजंरित रावे सवे भ्रमर लरिल।

केतकी कुसुमे येन कोण्डल गढ़िल।।64

कोकिल भ्रमर पक्षी मयूरर रावे।

काम व्याधि पीड़िया नसहे मोर गावे।।65"[11]

(सभी पक्षियों की आवाजें एक साथ मिलने से ऐसा प्रतीत होता है कि कहीं वाद्ययंत्र बज रहा है। नागेश्वर नामक पुष्प की सुगंध से राजा को भी काम भावना परेशान करती है। गुंजन करने वाले सभी पक्षियों के एक साथ भागने से ऐसा प्रतीत होता है कि केतेकी, कुसुम आदि फूलों से माला गूंथ दी गई है। कोयल पक्षी के संगीत के ताल में ताल मिलाकर मयूर नृत्य कर रही है और यह सब देखकर मेरे शरीर और मन में काम भावना इस तरह से कष्ट दे रही है कि सहन करना मेरे लिए असंभव हो रहा है।)

इसी क्रम में हम सुंदरकांड को भी देख सकते हैं। कंदलि ने अयोध्याकांड के चित्रकूट वर्णन की तरह ही सुंदरकांड में अशोक वाटिका का भी सुंदर और मनमोहक वर्णन किया है। पर्वत-पहाड़, सागर-नदी, नगर-गाँव, वन-अट्टालिका, के साथ-साथ नर-नारी, राक्षस-राक्षसी, ऋषि-मुनि, आदि सभी का संपूर्ण एवं जीवंत चित्रण कन्दलि ने अपनी रामायण में किया है। ऐसे तो माधव कंदलि ने मात्र 41 वर्गों में ही संपूर्ण सुंदरकांड को समाप्त किया है, फिर भी इसे पढ़ने से मालूम पड़ता है कि वाल्मीकि रामायण के कोई भी प्रसंग को कंदलि ने नहीं छोड़ा है। अयोध्या काण्ड के चित्रकूट वर्णन की तरह सुन्दरकाण्ड के भी वर्णन में उन्होंने सम्पूर्ण रूप से असम के प्राकृतिक सौंदर्य का ही चित्रण किया है। इसमें कवि की मौलिक निदर्शन शक्ति का आभास मिलता है। इस चित्रण में कवि जो फल-फूलों के बागों एवं उपवनों का उल्लेख किया है वह सम्पूर्ण रूप से असम प्रांत का ही मनोहारी प्राकृतिक दृश्य है-

"गुजंरित शबदे भ्रमर मधुपान।

पद्मिनी दीघी जलाशय रम्य थान।।13

सरल पियाल खर निखर खर्ज्जुर।

शाल ताल तमाल गमारि बिजपूर।।14

अश्वध्य कपिध्य बट नारंग बदर।

तेन्तेलि कण्टकि आम जाम नागेश्वर।।15

खाजुरि हारिठा आमलखि डहाफल।

छाटियाल गुवा नारिकल जे श्रीफल।।16"[12]

(जलाशय में खिले हुए पद्म में भ्रमर गुंजन से गूंजते हुए मधुपान करके रम्यभूमि में विचरण कर रहे हैं। सरल, खेजूर साल, ताल, गमारी आदि पेड़ यहां भरे हुए हैं। इमली, आम, नागेश्वर, खजूर, हरिठा, आंमला, दहा-फल, ताम्बुल, नारियल आदि पेड़ से लंकापूरी का सौन्दर्य मनमोहक बना हुआ है।)

वाल्मीकि रामायण के अनुसार भरत जब कैकेयी के पास जाता है तब मंथरा शुभ्र वस्त्र पहनकर, शरीर में चंदन लगाकर सिंहद्वार पर उपस्थित होती है। मंथरा को देखकर ही भरत ने अपने भाई शत्रुघ्न को कहा- जिसके कारण राम वनवास गए और मेरे पिता ने देह त्याग दिया, वह पापिस्त्ता मंथरा ये है। तुम इसकी

यथाविधि व्यवस्था करो। (वाल्मीकि रामायण- 2/77/1-7)

माधव कंदलि ने अपनी कल्पना के माध्यम से मंथरा के एक हास्यरस पूर्ण चरित्र का निर्माण किया है। कंदलि के अनुसार मंथरा को जब यह पता लगा कि भरत वापस आए हैं तो मंथरा के मन में भरत के प्रति कामभावना जाग्रत होती है और वह भरत को आकर्षित करने के लिए बत्तीस अलंकार परिधान करके सज धजकर कैकेयी के महल में पहुँचती है और वह भरत को देखकर कामुक होकर सोचती है-

"पिन्धिलेक हरिषे बत्रिश अलंकार।
मुकुट कुण्डल ग्रीवे सातेशरि हार।।2
बलय कंकन कांचि नुपुरर साजे।
हंसी केलि करे सरोवर माजे।।3"[13]

(मंथरा ने 32 प्रकार के अलंकारों का परिधान किया है। मुकुट, कुंडल, गले में हार और हाथों में कंगना आदि पहन लिया है। पैरों में नूपुर, कलाई में कंगना और सुंदर वस्त्र परिधान कर साज-सज्जा करके मंथरा यह सोच विचार रही है कि वह भरत के साथ सरोवर के मध्य बैठकर काम क्रिया कर रही है।)

दुष्ट मंथरा के मन में भरत के प्रति उपजी काम भावना से संबन्धित और एक उदाहरण यहाँ ले सकते हैं -

"बयसत मई बर भरतत करि।
काम वश भैले सिटो दोषक नधरि।।9
विदिते कुमारे जेबे लाज किछु करि।
गुप्तरूपे तथापितो हैवो पटेश्वरी।।10"[14]

(आयु में मैं भरत से बड़ी हूँ। भरत के साथ काम क्रिया में लिप्त होने से मुझे कोई ढाई दोष मत देना। मेरे साथ इस तरह के कार्य में लिप्त होकर कुमार को लज्जा तो आएगी, फिर भी मैं गुप्त रूप से कुमार की ही पसंदीदा स्त्री बनकर रहूँगी।)

अप्रमादी कवि माधव कंदलि ने रामायण की रचना असम के लोकसमाज को केंद्र में रखकर की थी। उन्होंने अपनी रामायण में लौकिकता को ही अत्याधिक प्रधान्य दिया है। वाल्मीकि कृत रामायण लौकिक होते हुए भी इस रामायण में शिष्टता को अत्याधिक महत्त्व दिया था। इसी कारण वाल्मीकि रामायण के राम, सीता, भरत आदि पात्रों में वाक् संयम को अत्याधिक मात्रा में गुरुत्व दिया है, किंतु कंदलि ने इन चरित्रों को लोकजीवन के स्वाभाविक चरित्र के रूप में चित्रित किया है। लोक-जीवन में युवक-युवतियों के चरित्रों में संयम से ज्यादा उच्छृंखलता ही देखने को मिलती है। कैकयी द्वारा दशरथ के सामने जब राम को बनवास भेजकर भरत को युवराज बनाने के लिए मनोभाव व्यक्त किया गया तब दशरथ का हृदय संपूर्ण रूप से दुःख सागर में डूब गया था। अपने पिता के दुःख और विषाद का अनुभव करते हुए कंदलि कृत रामायण में राम ने दशरथ को इस प्रकार से आश्वासन दिया हैं-

"बापर इन्द्रक प्रति भौल क्रोध मन।
बान्धिया आगत आनि दिवो एतिक्षण।।1
दश दिक पाल पुर खोजा नृपबर।
बश्य करि दिबो आजि धरि धनुशर।।2
पितृपुर पयान करिबो एकेश्वर।
बन्दि करि आनिबो यमर परिकर।।3
क्षत्र बीर यतेक आछय रबितले।
केहो नोहे शकत मोहोक बाहुबले।।4
काहको मारिबो काको कमरत धरि।
बापर आगत बान्धि दिबो जड़ करि।।5"[15]

(अर्थात्- पिता की दुखद मनःस्थिति को देखकर पुत्र राम का मन क्रोध से भर गया है। राम अपने पिता से कहते हैं कि जो भी व्यक्ति आपकी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है, उन्हें मैं एक ही क्षण में बंदी बनाकर आपके सामने प्रस्तुत करुंगा। आज में धनुष धारण करके दशों दिशा में ढूंढ़कर आपके दुश्मन को परास्त करूँगा। आज में एकेश्वर भगवान के सामने वचन देता हूँ कि जरूरत पड़ी तो यम के घर से भी दुश्मन को बंदी बनाकर लाऊँगा। कोई भी क्षेत्रीय वीर मुझे अपने बाहुबल से परास्त नहीं कर सकते। किसी को मारकर, किसी को कमर से पकड़कर घिघियाते हुए आपके सामने आपके दुश्मन को आज मैं प्रस्तुत करके ही रहूँगा।)

लोक जीवन में ज्यादातर स्त्रियाँ भी प्रतिवादिता युक्त होती हैं। अन्याय के विपक्ष में प्रतिवाद करने में प्रायः नारी कभी पीछे नहीं हटती। लंकाकांड में सीता के उद्धार के पश्चात् जब राम ने सीता को अपने सतीत्व रक्षा के प्रमाण स्वरूप अग्नि परीक्षा के लिए मनोभाव प्रकट करते हैं तब सीता ने उनका प्रतिवाद करते हुए कहा-

"दुब्बार बचने शाले शालिलेक हिए।
धीरे धीरे बुलिलन्त जनकर जीये।।53
उत्तम कुलत आमि जनम लभिलो।
महन्त कुलत मोक बापे बिहा दिल।।54
आमाक ईतर नारी सम देखिलाहा।
नटर नटनी जेन आनक विलाहा।।55"[16]

(राम की बात सुनकर सीता स्तब्ध हो जाती हैं। सीता का हृदय पीड़ा से दग्ध हो जाता है। जनक नंदिनी सीता धीरे धीरे बोलती हैं। उत्तम कुल में मैंने जन्म लिया है और पिता ने मेरा विवाह महंत (उच्च कुल)

कुल में किया है। तुम हमें नट-नटिनी की तरह समझकर मुझसे उन नारियों की तरह व्यवहार कर रहे हो।)

इन सभी विषयों को ध्यान में रखते हुए हम यह कह सकते है कि कंदलि ने केवल लोक-व्यवहार के लिए ही रामायण की रचना नहीं की थी। वास्तव में उन्होंने समकालीन समाज को भी अकृत्रिम रूप से अपनी रामायण में चित्रित किया है।

इस बात का उल्लेख पहले भी किया गया है कि माधव कंदलि ने अपनी रामायण में बहुत से स्थानों में एक कुशल कवि की भाँति ऐसे बहुत कुछ विषय का नया संयोजन किया है जो वाल्मीकि कृत रामायण में उपलब्ध नहीं है। उदाहरण के रूप में अयोध्याकाण्ड में संयोजित चित्रकूट वर्णन और सुंदरकाण्ड के रावण के मधुवन ध्वंस के चित्रण को ले सकते हैं। वाल्मीकि रामायण में भी इन सबका उल्लेख है किंतु कंदलि मूल से भी अधिक विस्तृत और सुंदर ढंग से इन प्रसंगों का वर्णन करने में सफल हुए । इस बात को ध्यान में रखकर ही उन्होंने हनुमान के चरित्र का चित्रण किया कि वह एक वानर है। कंदलि का यह मनोभाव हमें प्रायः उनके चित्रण में देखने को मिलता है। हनुमान द्वारा रावण के अशोक वन के ध्वंस लीला का एक सुंदर उदाहरण यहाँ ले सकते है-

"स्वर्गर सदृश थान, गन्धर्ब्ब भुवन सम,
रावणर मुख्य क्रिड़ा थान।
आजोर पिजोर करि, क्षत जे बिक्षत करि,
छन्न करिलन्त हनुमान।।29"[17]

(स्वर्ग के तरह सुंदर, गंधर्व लोक के समान मनमोहक, रावण के मुख्य मनोरंजन स्थान को हनुमान ने खींच-खींच कर, तोड़-फोड़कर छिन्न-भिन्न कर दिया है।)

असमीया रामायण साहित्य की परंपरा में माधव कंदलि की रामायण के पश्चात् महापुरूष शंकरदेव और माधवदेव के **'आदिकाण्ड'** और **'उत्तर काण्ड'**, रघुनाथ महंत की **'कथा रामायण', 'शत्रुजंय काव्य', 'अदभुत रामायण'**, अनन्त ठाकुर के **'श्री राम कीर्तन'**, दुर्गावर कायस्थ की **'गीतिरामायण'** और अनंत कंदलि की **'रामायण'** का नाम ले सकते हैं। इसके अलावा **'राम विजय नाट'**, विविध गीत, रामायण के विभिन्न आख्यानों का अनुवाद, रामकथा के सबंध में सृजित विभिन्न कहानियों में राम को नायक के रूप में चित्रित किया गया है। इन सभी रामायणों के बीच में सूर्य के समान माधव कंदलि का रामायण दैदिप्तमान है । यहाँ और एक बात कह सकते है कि ऊपर उल्लेखित सभी रामायणों में 'आदिकाण्ड' और 'उत्तरकाण्ड' का अभाव है।

महापुरूष श्रीमंत शंकरदेव द्वारा रचित 'उत्तरकाण्ड'-

महापुरूष श्रीमंत शंकरदेव(1449-1568) ने असम में वैष्णव धर्म की प्रतिष्ठा की थी। शंकरदेव के तत्कलीन असम में **शाक्त धर्म** के नाम पर व्याप्त धर्मान्धता से लोगों को मुक्ति दिलाने के लिए **एकशरण नाम धर्म** की स्थापना की थी। **एक देव एक सेव एकत बिने नाई केव** (ईश्वर एक ही है) सिद्धान्त को

शिरोधार्य करते हुए श्री शंकरदेव ने असमीया जाति के सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन को एक ही सूत्र में बाधने के लिए सदा तत्पर रहे। उन्होंने ऊँच-नीच के भेद भावों को हटाकर सभी जाति धर्म के लोगों को एक साथ बैठाकर भगवती धर्म का रस पान करने के लिए वैष्णव धर्म के द्वार सभी के लिए खोल दिए। सर्व वेदांत का सार **'श्रीमद् भागवत' एकशरण नाम धर्म** या **महापुरुषीया धर्म** के प्रधान प्रमाणिक ग्रंथ है। श्रीमंत शंकरदेव के द्वारा रचित ग्रंथ **कीर्तन** का आधार श्रीमद् भागवत ही है।

राम मर्यादा पुरुषोत्तम है। वह एक आदर्श पुत्र, आदर्श राजा, आर्दश भाई, आदर्श पति के रूप में लोक समाज में व्याप्त है। शंकरदेव ने विश्रृंखल समकालीन असम प्रांत को श्रृंखलाबद्ध करने के लिए राम के उदार चरित्र और उनके मानवीय मूल्यबोध को लोगों के सामने प्रतिष्ठित किया। राम के व्यक्तित्व से शंकरदेव इतने प्रभावित हुए कि एक कृष्ण भक्त कवि होते हुए भी उन्होंने अपनी वैष्णव धर्म की यात्रा में कृष्ण के साथ साथ राम को भी साथ लेकर आगे बढ़े। संभवतः संयोगवश ही शंकरदेव का पहला **बरगीत** और उनके अन्तिम रचना **'राम विजय'** नामक अंकिया नाट रामकथा पर ही आधारित है। उनका पहला बरगीत है-

"मन मेरो राम चरणहि लागू
इन देखना अंतक आगू
मन आयु क्षणे-क्षणे टूटे

देखु राम बिना गति न हे।"[18]

(अर्थात्, हे; मेरे मन, तू पूर्ण रूप से राम के चरणों में ही समर्पित हो जा। तुझे दिखाई नहीं दे रहा है क्या, मेरा मृत्यु का समय पास आ गया है? हे; मन, एक-एक क्षण में आयु खत्म होती जा रही है। अजगर साँप रूपी काल प्राण को निगलते जा रहे हैं। किसी भी समय मृत्यु आ सकती है। हे मन, माया-मोह त्यागकर राम की आराधना कर। राम ही हमें सद्गति का कोई उपाय बता सकते हैं।)

श्रीमंत शंकरदेव के उत्तरकाण्ड में लव-कुश के गीतों के विषय वस्तु के रूप में दशरथ के पुत्र प्राप्ति से प्रारंभ करके सीता के पुत्र लव-कुश को वाल्मीकि द्वारा रामायण के गान सीखाने तक की समस्त राम कथा का संक्षिप्त रूप में उत्तर कांड में वर्णन किया गया है।

उनके उत्तरकांड रामायण में राम-सीता के चरित्र को मानवीय रूप देकर साधारण नर नारी के रूप में चित्रित करने के बावजूद भी राम का ईश्वरीय तत्व स्पष्ट रूप से स्वीकृत हुआ है। उन्होंने उत्तरकांड रामायण की रचना का उद्देश्य वर्णित करते हुए कहा है कि-

"तुमिसब महागुणी   रामर चरित्र शुनि
करियो मनत महारति
कलित परम धर्म   नाहि राम नाम सम
आक नलै जाय अधोगति॥7"[19]

(अर्थात्- कलिकाल में आप सभी लोग राम कथा को सुनकर ही महाज्ञानी हो सकते हैं। राम नाम के समान इस काल में दूसरा कोई उत्कृष्ट धर्म ही नहीं है, जो व्यक्ति राम को स्मरण नहीं करेंगे वह अधोगति की ओर जाएँगे।)

महापुरुष माधवदेव द्वारा रचित 'आदिकाण्ड'

माधव कंदली के द्वारा रचित रामायण को पूर्णता प्रदान करने हेतु श्रीमंत शंकरदेव के निर्देशानुसार माधवदेव ने 'आदिकांड' की रचना की। उनके द्वारा रचित इस रचना का मूल उद्देश्य केवल काव्य सृजन न होकर वैष्णव धर्म प्रचार से भी जुड़ा हुआ है । आदिकांड रामायण के प्रारंभ में ही महापुरुष माधवदेव ने सबसे पहले उनके परम आराध्य श्रीकृष्ण की वंदना की है। इसके पश्चात् रघुकुल मणिराम की वंदना की है। आगे उन्होंने अपने गुरु शंकरदेव के चरण में नमस्कार करते हुए माधव कंदलि को प्रणाम किया है। इसी क्रम में उन्होंने महाऋषि वाल्मीकि को धन्यवाद दिया है क्योंकि उन्होंने लोगों को रामकथा रूपी अमृत उपलब्ध कराया है। माधवदेव के अनुसार –

"महाऋषि वाल्मीकिर निर्मल हृदय।
करिला लोकक महाकृपा कृपामय।।19
रामकथा अमृतक करि महादान।
साधिलन्त जगतर परम कल्याण ।।20"[20]

(अर्थात्- महान ऋषि वाल्मीकि का हृदय अत्यंत निर्मल होने के कारण ही उन्होंने रामायण की रचना करके जनता के ऊपर अत्यंत कृपा की है। उन्होंने राम कथा रूपी अमृत को जनता के लिए उपलब्ध करा कर जगत में परम कल्याण का साधन प्रदान किया है।)

माधवदेव के 'आदिकाण्ड' में वाल्मीकि रामायण, कालिदास के रघुवंश तथा बांग्ला के कृत्तिवास रामायण का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से देखा जाता है। माधवदेव के आदिकाण्ड में राम केवल एक आदर्श पुरुष के रूप में ही विभूषित नहीं, वरन समस्त जगत के लोकमंगल हेतु जन्मा विष्णु के अवतारी पुरुष हैं। आदिकाण्ड में राजा दशरथ के समृद्ध राज्य का भी वर्णन मिलता है। यहाँ अज और इंदुमति के पुत्र दशरथ का गुणगान करते हुए उन्हें श्रेष्ठ व्यक्तित्व का सम्मान दिया है। माधवदेव के **आदिकाण्ड रामायण** में किया गया अयोध्या का वर्णन वाल्मीकिकृत रामायण का हुबहू अनुवाद न होते हुए भी मूल विषयों से सम्पूर्ण रूप से सम्बन्ध रखता है। अयोध्या के वर्णन में कवि माधवदेव ने यह भी कहा है कि अयोध्या में दुराचार, हिंसा, मिथ्या आदि का स्थान नहीं हैं।

वाल्मीकि कृत रामायण में सुमित्रा के पिता के संबंध में किसी भी प्रकार का जिक्र नहीं हुआ है, परंतु माधवदेव अपनी रामायण में सुमित्रा को सिंहल राजा की कन्या के रूप में दर्शाते हैं तथा सुमित्रा को राजपुरोहितों द्वारा आमंत्रित कराकर दशरथ के हाथों दान करने की कथा कहते हैं। इस प्रकार अनेक प्रसंगों को समेटे माधवदेव के आदिकाण्ड रामायण का कथानक विस्तृत परिधि को लिए हुए है। माधवदेव के आदिकाण्ड में राम का मिथिला में प्रवेश का भी चित्रण मिलता है। साथ ही राम के प्रति सीता का पूर्वानुराग जन्म-जन्मान्तर, तथा जगत जननी लक्ष्मी ही सीता का नाम लेकर जनक राजा के घर पधारे है, आदि कथा

को दर्शाया है। दशरथ के राज्य में शनि का प्रकोप, दशरथ-जटायू के बीच मित्रता, अंध ऋषि का अभिशाप, इंद्र के आमंत्रण पर दशरथ का असुर विजय, कैकेयी का वर लाभ, पुत्र न होने का कारण दशरथ का विलाप, पुत्र प्राप्ति के कारण दशरथ का यज्ञ आयोजन, रावण की वर प्राप्ति, दशरथ रानियों का शुभ-स्वप्न दर्शन से लेकर राम और भाइयों के जन्म और नामाकरण, राम की गुह चांडाल से मित्रता, भारद्वाज के आश्रम में राम को दिव्य धनुष-बाण की प्राप्ति, विश्वामित्र का आगमन, सीता के जन्म की कथा, राम और लक्ष्मण को लेकर स्वामी विश्वामित्र की यात्रा, ताड़का वध, मारीच निग्रह, सीता-स्वयंवर, शिव धनुष वृत्तांत, दशरथ का दुःस्वप्न आदि अनेक कथाओं का वर्णन आदिकाण्ड रामायण में मिलता है।

निष्कर्ष-

विस्तृत अध्ययन के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्राकशंकर युग से ही असम में रामकथा की परंपरा शुरू होती है। असम भूमि में वैष्णव धर्म की प्रधानता होते हुए भी लगातार रामकथा की रचना हो रही है। असमीया में रामायण लिखने की परंपरा माधव कंदली से शुरू होती है। उनकी 'सप्तकाण्ड रामायण' वाल्मीकि रामायण के अनुवाद होते हुए भी मौलिक रचना का ही आनंद देती है। उन्होंने असम के लोक जीवन के साथ संगति रखते हुए ही अपनी रामायण की कथा को आगे बढ़ाया है। रामायण के जिस प्रसंग से असम के सहज सरल लोगों को मनोंरजन दिला सकते है, ऐसे प्रसंग को उन्होंने विस्तृत रूप से वर्णित किए हैं। वाल्मीकि कृत रामायण के ऐसे प्रसंग जिसके कारण कहानी में स्थिरता आयी है या अस्वाभाविकता प्रतीत होती है, ऐसे प्रसंगों को कंदली ने छोड़ दिया या संक्षेप में प्रस्तुत किया है। कंदली के इस प्रकार के कार्य से मूल रामायण की प्रतिष्ठा में कोई बाधा उपस्थित नहीं हुई है, वरन् मूल से भी अधिक सारगर्भित और लोक समाज के लिए उपयोगी बन गई है। मूल रामायण की कथा में विकृतता लाए बिना ही मौलिकता का समावेश करके एक प्रादेशिक भाषा में वाल्मीकि कृत रामायण का अनुवाद करना कोई आसान कार्य नहीं था। यह संभवत हो पाया है कवि कंदली की अद्भुत प्रतिभा शक्ति, अनुपम सौन्दर्य शक्ति और कल्पना शक्ति के कारण ही।

सप्तकांड रामायण में पाँच काण्ड ही उपलब्ध हैं, इसी अभाव की पूर्ति के लिए श्रीमंत शंकरदेव ने 'उत्तरकाण्ड' और उनके प्रिय शिष्य माधवदेव ने 'आदिकाण्ड' को रचकर पूर्णता प्रदत्त की। श्रीमंत शंकरदेव और माधव देव वैष्णव धर्म के प्रचारक होते हुए भी रामकथा पर भी अपने लेखनी चलाते रहे। मध्यकालीन भारतवर्ष के अशांतिमय सामाजिक परिस्थिति में राम नाम के पाठ से ही लोग उपयुक्त ज्ञान प्राप्त करके एक शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकते हैं इस ओर श्रीमन्त शंकरदेव ने बार-बार संकेत किए हैं। शंकरदेव के प्रिय शिष्य माधवदेव के आदिकाण्ड रामायण में भी यही दृष्टि देखने को मिलती है। इन दोनों महान कवियों के कई बरगीत और नाटकों में रामचरित्र की प्रधानता मिलती है। शंकरदेव और माधवदेव के आदिकाण्ड और उत्तरकाण्ड के अलावा रघुनाथ महन्त की 'कथा रामायण', शत्रुजंय काव्य, अदभुत रामायण, अनन्त ठाकुर के श्री रामकीर्तन, दुर्गावर कायस्थ की गीतिरामायण और अनन्त कन्दलि की रामायण का नाम ले सकते है। इसके अलावा राम विजय नाट, विविध गीत, रामायण के विभिन्न आख्यानों का अनुवाद, रामकथा के आलम में सृष्टि विभिन्न कहानियों का नाम ले सकते है। इन सभी रामायणों के बीच में सूर्य के समान उज्ज्वल रूप में उज्ज्वलित हैः माधव कन्दलि की रामायण।

इन सभी रामायणों की सबसे महत्त्वपूर्ण बात यही रहा कि राम का चरित्र एक आदर्श मानव का है। यह कथा मानव को नैतिक उत्थान की राह दिखाती है। राम कथा सभी जातियों की सभी अवस्थाओं के प्राणियों के हृदय पर मानवता के शाश्वत् मूल्य की छाप छोड़ती है। इसी कारण ऐसी महान कृति का अनुवाद भारत के हर एक भाषा के साहित्यकारों ने अपने अपने ढंग से निज जाति के उत्थान के लिए अपनी अपनी भाषा में अनुदित किया।

संदर्भ-ग्रंथ

1. डॉ. अनुशब्द (संपादक), भारतीय भाषाओं में रामकथा- असमीया भाषा, भाग-1, (2020), वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 73
2. गोस्वामी, डॉ. ईन्दिरा, हाजरिका, पार्थप्रतिम (अनुवादक), रामायण गंगार परा ब्रह्मपुत्रलै (2015), भवानी अफसेत एण्ड इमेइजिंग सिस्टेम्स प्राः लिः, गुवाहाटी, पृ-56
3. कन्दलि, माधव और श्री श्री शंकरदेव- श्री श्री माधवदेव बिरचित सप्तकाण्ड रामायण, बनलता, गुवाहाटी, पृ-418
4. उपरिवत्, पृ-440
5. उपरिवत्, पृ-469
6. गोस्वामी, डॉ. ईन्दिरा, हाजरिका, पार्थप्रतिम (अनुवादक), रामायण गंगार परा ब्रह्मपुत्रलै (2015), भवानी अफसेत एण्ड इमेइजिंग सिस्टेम्स प्राः लिः, गुवाहाटी, पृ-65
7. महन्त, केशदा, असमीया रामायणी साहित्य, कथावस्तुर आतिगुरि, (2008), भवानी अफसेत एण्ड इमेइजिंग सिस्टेम्स प्राः लिः, गुवाहाटी, पृ-13
8. उपरिवत्, पृ-06
9. कन्दलि, माधव और श्री श्री शंकरदेव- श्री श्री माधवदेव बिरचित सप्तकाण्ड रामायण, बनलता, गुवाहाटी, पृ-245
10. शर्मा, शशी, माधव कन्दलिर रामायण,(1987), जार्णाल एम्परियाम, गुवाहाटी, पृ-61
11. कन्दलि, माधव और श्री श्री शंकरदेव- श्री श्री माधवदेव बिरचित सप्तकाण्ड रामायण, बनलता, गुवाहाटी, पृ-127
12. उपरिवत्, पृ-252
13. उपरिवत्, पृ-139
14. उपरिवत्, पृ-139
15. उपरिवत्, पृ-102
16. उपरिवत्, पृ-404
17. उपरिवत्, पृ-268
18. महंत वापचन्द्र, श्रीमन्त शंकरदेव, बरगीत, पृ-
19. कंदलि, माधव और श्री श्री शंकरदेव- श्री श्री माधवदेव बिरचित सप्तकाण्ड रामायण, बनलता, गुवाहाटी, पृ-440
20. उपरिवत्, पृ- 1

❑❑❑

1. हिन्दी विभाग कॉटन विश्वविद्यालय गुवाहाटी-1फोन -9864753226

इंटरनेट के युग में लोकजीवन एवं युवाओं की सामाजिक चेतना

–डा. सुजीत कुमार
–डा. गौरव रंजन

अर्थात् सब मनुष्य भाई भाई हैं, उनमें कोई बड़ा नहीं, कोई छोटा नहीं। वे सब मिलकर सौभाग्य की वृद्धि के लिए उन्नतिशील हों। शक्ति संपन्न, सर्व रक्षक और सबको मर्यादा में रखने वाला परमेश्वर उनका पिता है और अनेक प्रकार के धन-धान्य देने वाली पृथ्वी उनकी माता है।

लोक शब्द का अर्थ पूरे भारतवर्ष में फैले उस जनसमूह से है, जिनका जीवन सरल एवं प्रकृति से सामंजस्यपूर्ण है और जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है। लोक का अभिप्राय उस सामान्य जनता से है जिसके पास पुस्तकीय ज्ञान न होते हुए भी अपनी संस्कृति को श्रमण के जरिए सदियों से बचाए रखने की क्षमता है। दरअसल लोक से ही संस्कृति की उपज होती है औऱ वही संस्कृति को परिभाषित भी करती है। लोक संस्कृति में लोक मानस की अभिव्यक्ति होती है, जिसमें लोकजीवन अपने सरलतम एवं नैसर्गिक रूप में विद्यमान होता है। स्मृति के सहारे जीवित रहने वाली लोक संस्कृति अनेक सदियों में बनती बिगड़ती एक सर्वमान्य लोक स्वीकृत आदर्शों एवं व्यवहार को गढ़ लेती है। लोक संस्कृति के वही आधार, परंपराएं एवं व्यवहार सामाजिक चेतना की जड़ होती है। लोक जीवन को बेहतर बनाने के लिए न सिर्फ हमें उन जड़ों को सींचने की जरूरत है बल्कि उन्हीं जड़ों को हमारी समूची सामाजिक चेतना का आधार बनाने की भी जरूरत है।

कबीर के दोहों में भी लोक की अभिव्यक्ति कुछ इस प्रकार हुई है:

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआं, भया न पंडित कोय,
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े जो पंडित होय।।

सामाजिक चेतना तब पैदा होती है जब हम किसी विशेष आदर्श से प्रभावित होते हैं और सामाजिक परिवर्तन या किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति को उद्धत होते हैं। समाज का अर्थ सिर्फ लोगों का समूह नहीं होता। वास्तव में जब सामूहिक आदर्श से प्रभावित होकर उस आदर्श की प्राप्ति के लिए हम आगे बढ़ते हैं तो वही समाज कहलाता है। सामाजिक चेतना का आधार एक साथ चलने एवं चिंतन करने में है, जहां इसका अभाव होता है वहां जीवन लक्ष्यविहीन हो जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि आज के इंटरनेट के युग में जब युवाओं की पहुंच पूरे विश्व के सांस्कृतिक मूल्यों, परंपराओं, जीवन

पद्धतियों एवं व्यवहारों से हो गया है तो ऐसे में उनकी सामाजिक चेतना का आधार क्या है? क्या हमारी युवा पीढ़ी पश्चिमी एकांगी विचारों से प्रभावित होकर लोक से दूर हो रहा है? और अगर दूर हो रहा है तो जिन सामाजिक चेतना से वह उदभूत है क्या वह राष्ट्र उत्थान के लिए उपयुक्त है? यह सारे प्रश्न 21वीं सदी में इसलिए महत्त्वपूर्ण हो गए हैं क्योंकि हमारा समाज एक ऐसे दौर से गुजर रहा है जिसके आदर्श और व्यवहार के बीच एक गहरी खाई है। यह खाई जितनी बड़ी और गहरी होगी उतना ही अधिक हमारा युवा किंकर्तव्यविमूढ़ अवस्था में होगा।

इंटरनेट के प्रभाव में आकर हमारा युवा ऐसे आदर्शों से प्रभावित हुआ है जिसका हमारे लोक संस्कृति से कोई संबंध नहीं है। इंटरनेट ने युवाओं को व्यक्तिवाद, भोगवाद एवं हिंसक प्रवृतियों से ग्रस्त कर दिया है। भारत का लोकजीवन हमेशा से सामूहिकता में विश्वास करता आय़ा है। शायद इसलिए परिवार को ही समाज का आधार माना गया है। ऋगवेद में भी 'कुल' अर्थात् परिवार को ही सबसे छोटी इकाई माना गया है। हमारा लोकजीवन व्यक्तिपरक नहीं है। उसी प्रकार हमारा लोकजीवन सादा जीवन उच्च विचार पर चलने वाला रहा है। वेदों में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है:

"अज्येष्ठासो अकिनष्ठासो एते सभ्रातरो वावृधुः सौभागाय।

युवा पिता त्वया रूद्र एषां सुदुधा पृथ्वी सुदिना रूदभ्यः।"

अर्थात् सब मनुष्य भाई भाई हैं, उनमें कोई बड़ा नहीं, कोई छोटा नहीं। वे सब मिलकर सौभाग्य की वृद्धि के लिए उन्नतिशील हों। शक्ति संपन्न, सर्व रक्षक और सबको मर्यादा में रखने वाला परमेश्वर उनका पिता है और अनेक प्रकार के धन-धान्य देने वाली पृथ्वी उनकी माता है। शायद इसलिए हमारी लोकसंस्कृति ने "साईं इतना दीजिए जावें कुंटंब समाए, मैं भी भूखा न रहूं साधु भी भूखा न जाए" जैसे आदर्शो को गढ़ा। जिस नारी को हमारा लोकजीवन पूजता आया है आज इंटरनेट के युग में आधुनिकता के रथ पर सवार हमरा युवा नारी को भोग की वस्तु समझने लगा है। जबकि हमारे लोकजीवन का आधार ही नारी शक्ति है। चाहे वह विद्या की देवी के रूप में सरस्वती हों, धन की देवी के रूप में लक्ष्मी हों या फिर शक्ति की देवी के रूप में दुर्गा हों। लोकजीवन में ऐसे असंख्य उदाहरण भरे पड़े हैं जो स्त्री को ऊंचा दर्जा देते हुए प्रतीत होते हैं।

वेद नारी को गरिमामय एवं उच्च स्थान प्रदान करते हैं। वेद में उन्हें घर की साम्राज्ञी कहा गया है तथा उसे देश की एवं पृथ्वी की शासक बनने का भी अधिकार दिया गया है। स्त्री का पूजनीय स्थान अथर्ववेद के उस श्लोक में मिलता है जहां कहा गया है:

हे स्त्री! तुम सभी कर्मों को जानती हो।

हे स्त्री! तुम हमें ऐश्वर्य और समृद्धि दो।।

उसी प्रकार भारतवर्ष के लोकजीवन का सत्य एवं अहिंसा में विश्वास कोई नई चीज नहीं है। यह सामाजिक मूल्य हमारे लोकजीवन का आधार है। ऋग्वेद में वर्णन आता है कि 'हे वरुण ! यदि हम लोगों ने उस व्यक्ति के प्रति अपराध किया हो जो हमें प्यार करता है यदि कोई गलती अपने मित्र या साथियों, पड़ोसी के प्रति की हो अथवा किसी अज्ञात व्यक्ति के प्रति अपराध किया हो तो हमारे अपराधों को क्षमा करो। मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह एक दूसरे की रक्षा करें।' यजुर्वेद में उल्लेख आता है कि 'मैं सभी

प्राणियों को मित्रवत देखूं , आपस में सभी एक दूसरे को मित्र सम्मान देखे।' इस तरह अथर्ववेद में कहा है- 'हम सभी एक साथ ऐसी प्रार्थना करें जिससे आपस में सुमति और सद्भावना का प्रसार हो।' इसी प्रकार सत्य बोलना एवं सत्य के रास्ते पर चलना भी हमारा महत्त्वपूर्ण सामाजिक मूल्य रहा है। कठोपनिषद से लिया गया 'सत्यमेव जयते' अर्थात् सत्य की ही जीत होती है, दर्शाता है कि हम मूलरूप से सत्य पर चलने वाला समाज रहे हैं। शायद इसलिए बुद्ध एवं महावीर की शिक्षा में भी इनपर जोर दिया गया है। आधुनिक काल में वेदांत को मानने वाले विवेकानंद एवं महात्मा गांधी ने भी इसी राह को माना एवं लोगों को चलने की सलाह दी।

लेकिन आज की युवा पीढ़ी किसी भी शर्त पर आगे बढ़ने में यकीन करता है। स्वयं के सुख को परिवार से ऊंचा मानता है। व्यक्तिवाद हमारे समाज पर इतना हावी हो गया है कि परिवार टूट रहे हैं। आज विकास का आधार सादा जीवन नहीं बल्कि अत्याधिक उपभोग है। जो जितना अधिक वस्तुओं एवं सेवाओं का उपभोग कर रहा है वह उतना ही विकसित है। विकास के जितने पैमाने अपनाए गए हैं सभी पश्चिमी देशों से लिए गए हैं, जो सिर्फ आर्थिक उन्नति को ही सबकुछ मान बैठा है। चाहे आर्थिक उन्नति के कितने भी नकारात्मक सामाजिक एवं सांस्कृतिक दुष्परिणाम क्यों न हों। चौंकाने वाला तथ्य यह है कि आज का युवा इन सभी नकारात्मक व्यवहारों को व्यवसायिकता (Professionalism) के नाम पर उचित साबित करने में लगा हुआ है। आज जिस प्रकार की सामाजिक एवं शारीरीक हिंसा की खबरें हम पढ़ते हैं वह चिंतनीय है। अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए हम कब सभ्य से असभ्य बन गए पता ही नहीं चला।

स्पष्ट है कि हमारे युवाओं की सामाजिक चेतना अपनी जड़ों अर्थात् लोकजीवन से दूर हो गई है। दूसरी संस्कृतियों के प्रभाव में आकर वह ऐसे लोक में विचरण कर रहा है जिसकी सामाजिक चेतना उसकी अपनी नहीं है, अपने सांस्कृतिक मूल्यों से जुड़ी हुई नहीं है और इसलिए वह अपने समाज से, अपनी संस्कृति से एवं लोकजीवन के मूल्यों से विलग भटक रहा है। उसे समझ ही नहीं आ रहा कि आखिर इसका कारण क्या है। आज युवाओं को यह समझने की जरूरत है कि इसका कारण लोकजीवन से भटकाव है। इसका कारण सामाजिक चेतना का आधार पश्चिमी विचारों का होना है। यह न सिर्फ उसके स्वयं के लिए घातक है बल्कि एक समाज के रूप में हमारे विकास को भी अवरुद्ध करता है।

समाज के आगे आज यही एक चुनौती है कि कैसे हम अपने युवाओं को लोकजीवन से जोड़ें एवं उनकी सामाजिक चेतना को लोकजीवन के मूल्यों पर आधारित करें। इसके लिए एक नवजागरण की जरूरत है, जिससे सामाजिक जागरूकता आएगी और तभी हमारा युवा अपनी जड़ों से जुड़कर सामाजिक उत्थान में अपनी भूमिका निभा पाएगा। आज के युवा को अपना सामूहिक आदर्श गढ़ना होगा एवं उन आदर्शों को प्राप्त करने के लिए सामूहिक प्रयास करना होगा। सामूहिक आदर्श लोकजीवन से जुड़ा हो यह आवश्यक है। ऐसा आदर्श ही समाज में अनुकरणीय होगा। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि लोक जीवन पर आधारित सामाजिक चेतना आज के भारत की जरूरत है, तभी वह विश्वगुरु के स्थान को दोबारा हासिल कर पाएगा।

❑❑❑

---

1. सहायक प्राध्यापक, दक्षिण बिहार केंद्रीय विश्वविद्यालय
2. शोधार्थी

पूर्वोत्तर की भाषाई विविधता और हिंदी उपन्यास

–बी आकाश राव

अगर हिंदी की बात करें तो पूर्वोत्तर में हिंदी का विकास बहुत तेजी से हुआ है। वर्तमान समय में पूर्वोत्तर के सभी राज्यों में हिंदी आसानी से बोली और समझी जाती है। इसका सबसे उत्कृष्ट उदहारण यह है कि अरुणाचल प्रदेश में मुख्य रूप से लगभग 26 जनजातियाँ निवास करती हैं और प्रत्येक की भाषा एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं।

शोध-सार : पूर्वोत्तर भारत विविध भाषाओं एवं संस्कृतियों का सघन भाग है, जहाँ अनेक भाषाएँ तथा जनजातीय समूह का वास है। पूर्वोत्तर में बोली जाने वाली भाषाएँ विभिन्न भाषा-परिवारों से सम्बद्ध है। हिंदी उपन्यासों में पूर्वोत्तर भारत की उपस्थिति उस रूप में दर्ज नहीं की गयी जिस रूप में होनी चाहिए, यद्यपि पूर्वोत्तर भारत को केंद्र में रखकर हिंदी में पर्याप्त उपन्यास लेखन हुआ है, जिससे हमें पूर्वोत्तर राज्यों की संस्कृति, इतिहास, समस्याएं आदि बखूबी समझने को मिलती है।

बीज शब्द : पूर्वोत्तर, जनजातियाँ, सांस्कृतिक, उपन्यास, संघर्ष, समस्याएं, अस्मिता, एलोपमेंट, प्रकरण, असंतोष, मातृसत्तात्मक।

मूल आलेख : भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र न केवल भारत का अभिन्न हिस्सा है बल्कि देश की विविध आदिम संस्कृतियों का केंद्र भी है। पूर्वोत्तर भारत में देश के आठ राज्य समाहित हैं, जिसमें असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मिज़ोरम, नागालैंड, मेघालय, त्रिपुरा (जिन्हें 'पूर्वोत्तर की सात बहनें' कहा जाता है) और सिक्किम शामिल है। इनमें सिक्किम वर्ष 2002 में पूर्वोत्तर का हिस्सा बना इसीलिए इसे 'पूर्वोत्तर की सात बहनों का एक भाई' कहा जाता है। "पूर्वोत्तर भारत अनेक धर्मों, जातियों, सभ्यताओं और संस्कृतियों का संगम स्थल है। पूर्वोत्तर में भारत और विश्व के विभिन्न क्षेत्रों से अलग-अलग मत और संस्कृति के लोग आए एवं इस समन्वयकारी संस्कृति में घुल-मिलकर एकरूप हो गए। विभिन्न कालखंडों में यहाँ आर्य, द्रविड़, तिब्बती, बर्मन आदि आए और यहाँ के लोकजीवन के अंग बन गए। इस क्षेत्र में लगभग 400 समुदायों के लोग रहते हैं और वे 220 से अधिक भाषाएँ बोलते हैं।"[1] अतः प्रत्येक की भाषा एक-दूसरे से नितांत भिन्न और विचित्र जान पड़ती है। चूंकि भौगोलिक दृष्टि से इस क्षेत्र की अंतर्राष्ट्रीय सीमाएं नेपाल, बांग्लादेश, भूटान, म्यांमार और चीन जैसे देशों से मिलती है, कदाचित यह भी एक कारण है कि पूर्वोत्तर भारत में हमें इतनी अधिक भाषाई और सांस्कृतिक विविधता देखने को मिलती है।

भाषाई दृष्टिकोण से पूर्वोत्तर काफी समृद्ध प्रांत है, "पूरे पूर्वोत्तर क्षेत्र में सैकड़ों जनजातियाँ, समूह और उनकी अलग-अलग भाषाएँ

प्रचलित हैं। इन भाषाओं को मुख्य रूप से तीन भाषा-परिवारों में विभाजित किया जाता है – 1. तिब्बती-चीनी परिवार, 2. आग्नेय परिवार और 3. भारतीय आर्य भाषा परिवार। इनमें तिब्बती-चीनी भाषा परिवार के तिब्बती-बर्मी उप-परिवार की भाषाएँ संख्या में सबसे अधिक हैं। इस क्षेत्र में प्रचलित भाषाओं को निम्नलिखित समूहों में रखा जा सकता है -1. हिमालयी या पूर्वी-तिब्बती समूह की भाषाएँ-लेपचा और मोनपा। 2. पूर्वोत्तर सीमान्त समूह की भाषाएँ-अक, डफला, आबोर, मीरी, आदी, मिश्मी, आपातानी, गालोंग आदि। 3.बोडो समूह की भाषाएँ-बोडो, त्रिपुरी, राभा, गारो, दिमासा, देउरी, लालुङ्, कार्बी या मिकिर, कछारी, कोच, जमातिया, रियाङ्, आदि। 4. नगा समूह की भाषाएँ-आओ, अंगामी, लोथा, सांङ्तम, यीमचुङर, माकबारे, रोंगमेङ्, ताङ्सा, वाङचो, बोङ्नी, सेमा, तिरखिर, जैमी, चांङ्फोंम, ताङ्खुल, लियाङ्मेई, चाक्री, खेजा, पोचुरी, खियाङ्गण, माओ, काबुई, कोन्यक चोखेसाङ् जेजिफेयाङ् आदि। 5. कुकी-चीनी समूह की भाषाएँ-कुकी, हमार, थाडो, पाइते, मणिपुरी, विष्णुप्रिया, लुशेइ, लखेर, वाइफे आदि। 6. बर्मी समूह की भाषाएँ। 7. काचिन समूह की भाषाएँ-सिङ्फो। 8. उत्तरी थाई समूह की भाषाएँ-खामती, अहोम आदि। 9. आग्नेय परिवार की भाषाएँ – खासी, जयन्तिया। 10. भारतीय आर्य भाषा परिवार की भाषाएँ – असमिया, बांग्ला आदि।"[2] इसके अतिरिक्त असमिया,नेपाली, मणिपुरी और बोडो ये चार भाषाएँ संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल हैं। इनमें प्रत्येक का अपना विपुल साहित्य और बहुसंख्यक प्रयोक्ता हैं।

अगर हिंदी की बात करें तो पूर्वोत्तर में हिंदी का विकास बहुत तेजी से हुआ है। वर्तमान समय में पूर्वोत्तर के सभी राज्यों में हिंदी आसानी से बोली और समझी जाती है। इसका सबसे उत्कृष्ट उदहारण यह है कि अरुणाचल प्रदेश में मुख्य रूप से लगभग 26 जनजातियाँ निवास करती हैं और प्रत्येक की भाषा एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। ऐसे में उन्होंने हिंदी को एक माध्यम भाषा के रूप में सहर्ष स्वीकारा है। जिसे अरुणाचली हिंदी कहा जाता है। वहीं जब बोडो भाषा के संरक्षण के लिए लिपि की आवश्यकता हुई तो उन्होंने देवनागरी को अपनाया। आज पूर्वोत्तर भारत में साहित्य की प्रायः सभी विधाओं में हिंदी में लेखन हो रहा है केवल उपन्यास जैसे प्रौढ़ विधा की बात करें तो मेरी जानकरी के अनुसार अबतक मूलतः हिंदी में पूर्वोत्तर भारत की पृष्ठभूमि से संबंधित लगभग 25 की संख्या में उपन्यास लिखे जा चुके हैं, जिनमें पूर्वोत्तर के आठों राज्यों से जुड़े उपन्यास शामिल हैं। इन उपन्यासों में पूर्वोत्तर भारत के इतिहास, भूगोल, समाज, संस्कृति, राजनीति, आध्यात्मिक, लोकजीवन तथा आंचलिकता आदि पहलुओं का विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। वस्तुतः हिंदी में पूर्वोत्तर पर अभी जो साहित्य प्राप्त है उससे किसी भी दृष्टिकोण से यह प्रतीत नहीं होता कि भारत का पूर्वोत्तर क्षेत्र हिंदीतर प्रांतों में गिना जाता है।

पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी उपन्यासों के विकास क्रम को देखें तो इस कड़ी में सर्वप्रथम देवेन्द्र सत्यार्थी का उपन्यास 'ब्रह्मपुत्र' वर्ष 1956 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में लेखक ने असम की लोक-संस्कृति का वर्णन करते मुख्य पात्र अतुल और देवकांत द्वारा स्वतंत्रता संग्राम में असम की भागीदारी, वहाँ का सामाजिक-राजनीतिक आदि परिदृश्य का चित्रण किया है। असम और असमिया जनमानस की चर्चा करते हुए देवेन्द्र सत्यार्थी लिखते हैं "असमिया यथासम्भव मर्यादा को नहीं छोड़ता है, पर यदि कहीं उसके आत्मसम्मान को ठेस लगी, तो वह बाढ़ के समय का ब्रह्मपुत्र बन जाता है। आथित्य में उसका जवाब नहीं। आज काम चल रहा है तो कल की चिन्ता क्यों की जाये? आने वाली विपत्ति आएगी तो देख लेंगे। बीते संकट का क्यों स्मरण किया जाये? पुरानी कहावत है- बाघ की सवारी करने वाले को बाघ से उतरने का गुर

नहीं आता, पग-पग पर अनुभव हुआ की असमिया को यह गुर भी आता है। ब्रह्मपुत्र गारा काटता हुआ और इधर को आयेगा तो दिसांगमुख और पीछे हट जायेगा।''[3] पूरे उपन्यास की कथावस्तु में कई प्रसंग, घटनाएं और पात्र शामिल है, उपन्यास के अंत में रानी गाईदिनल्यू भी नज़र आती है जिन्होंने देश की स्वाधीनता के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर दिया। ब्रह्मपुत्र इन सबकी कथाओं में अपने साथ लेकर चलता है और कथानायक बन जाता है। इसी प्रकार असम राज्य को केंद्र में रखकर लिखे गए अन्य उपन्यासों में 'राह और रोड़े'- छगनलाल जैन, 'जय आई असम'(1983)- नवारुण वर्मा, 'मुक्ति'(1999)- डॉ. महेन्द्रनाथ दुबे, 'उफ्फ'(2010) -प्रमोद कुमार तिवारी, 'लोहित'(2016)-अनिता सभरवाल, 'कामरूपा'(2018)-रमानाथ त्रिपाठी, 'नदी की टूट रही देह की आवाज'(2020)- श्रीप्रकाश मिश्र और प्रदीप सौरभ कृत 'देश भीतर देश'(2012) शामिल हैं। 'देश भीतर देश' की कथावस्तु इलाहबाद के एक युवक विनय और असम की युवती मिल्की डेका के इर्द-गिर्द घूमती है, जिनमें उपजा प्रेम जाती-धर्म के बंधनों से न टकराकर क्षेत्रीयता की सीमाओं से संघर्ष करता है। अपने ही देश में नस्लभेद के कारण पूर्वोत्तर वासियों को अस्मिता के संकट से जूझना, देश की मुख्यधारा में पूर्वोत्तर का स्थान नगण्य होना,असम के उग्रवादी संगठन और उससे निपटने हेतु भारतीय सेना द्वारा आम लोगों पर किए गए अत्याचारों जैसे मुद्दों से यह उपन्यास एक विचारोत्तेजक और समस्यामूलक उपन्यास बन जाता है। जिससे विनय को एक ही देश के भीतर दूसरे देश का आभास होने लगता है। उपन्यास के अंत में मिल्की द्वारा विनय को लिखा ख़त उपन्यास का सबसे त्रासद भाग है जहाँ वह लिखती है ''मैं कैसे विश्वास करूँ कि मेरा-तुम्हारा देश एक है। यदि ऐसा होता तो तुम्हारे ही देश का वासी पंजाबी कमांडो बनकर मेरे घर के भीतर नहीं घुसता। तुमने मेरे भीतर अनगिनत राग बजाये, लेकिन उन मीठे अहसासों से कहीं ज्यादा मुझे वो पंजा याद आता है, जिसने मेरे वक्षों को बेरहमी से दबाया था। मुझे नहीं भूलता है कि मेरे लोगों को तुम्हारे लोगों ने चाय के बदले नमक दिया। एक मीटर कपड़े को चारों तरफ से नाप कर चार मीटर की कीमत वसूली। हमारे जल, जंगल , जमीन को लूटा। हमारे बेगुनाह लोगों को तुम्हारी फ़ौज ने बेरहमी से शहर से लेकर जंगल तक मारा। लूट और लूट ही तुम्हारा सच है।''[4] 'देश भीतर देश' की यह पंक्तियाँ हमें पूर्वोत्तर भारत के एक दूसरे पहलू से भी परिचित कराती है जो बेहद विडंबनापूर्ण है।

देश के सबसे पूर्वी राज्य अरुणाचल प्रदेश में हिंदी की स्थिति काफी सशक्त है यहाँ बड़ी संख्या में हिंदी साहित्यकार निरंतर लेखन में सक्रिय है। औपन्यासिक दृष्टिकोण से अरुणाचल पर केंद्रित हिंदी उपन्यासों में जोराम यालाम का उपन्यास 'जंगली फूल'(2019) काफी चर्चित रहा। यह उपन्यास अरुणाचल प्रदेश की आबोतानी समुदाय पर केंद्रित है, इसमें लेखिका ने आबोतानी समाज के आदिपुरुष तानी की कथा को एक सिरे से विश्लेषित किया है। लेखिका लिखती है- ''जंगली होने का अर्थ मेरे लिए इस प्रकार है –प्रकृति से जुड़ना। उनके साथ स्वयं को अभिन्न अंग जानकर चलना।......जंगल पक्षपाती नहीं होता। उसमें जो जीवन है, वह तटस्थ है! वहां खिलने वाले फूलों की अपनी ही मर्जी और मौज होती है! न मोह, न आसक्ति और न त्याग! सभी तरह के बंधनों से मुक्त स्वतंत्रता का नाम जंगल है! वह स्वतंत्रता, जो परम अनुशासन से उत्पन्न होती है! मौत कदम से कदम मिलाकर चलती रहती है। सतर्कता का नाम जंगल है। चुनौती का नाम जंगल है। जो भटके हुए से लगते हैं, वही रास्ता ढूंढ सकते हैं। जंगल भटका सकता है। लेकिन वही जिंदा भी करता है। बचने का आनंद भी उसी में है।''[5] इसी प्रकार अरुणाचल केंद्रित अन्य उपन्यासों में 'सियांग के उस पार'(2018)- दयाराम वर्मा, 'उस रात की सुबह'(2018)-तुम्बम रीबा जोमो 'लिली', 'मिनाम'(2020)-

मोर्जुम लोयी, ‘प्रेमवल्लरी’(2019)-मलिक राजकुमार और ‘मेरी आवाज़ सुनो’(2021)-जुमसी सिराम ‘नीनो’ शामिल हैं। ‘मेरी आवाज़ सुनो’ अरुणाचल प्रदेश की गालो जनजाति पर केंद्रित उपन्यास है।

मणिपुर पर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों में सर्वप्रथम बलभद्र ठाकुर कृत ‘मुक्तावती’(1958) है। इसके अलावा अन्य उपन्यासों में ‘उत्तर पूर्व’(2002)- लाल बहादुर वर्मा तथा ‘आहुति’(2008)- श्रीधर पाण्डेय है। ‘उत्तर पूर्व’ उपन्यास लाल बहादुर वर्मा द्वारा उनके मणिपुर प्रवास पर लिखा गया उपन्यास है। जिसमें प्रो. बर्मन लेखक का प्रतिनिधि पात्र है। उपन्यास में प्रो. बर्मन यू.पी. से मणिपुर इतिहास के प्रोफेसर के रूप में जाता है। नई जगह के जीवन की रोचकता एवं कठिनाई उसे मणिपुर के विविध रूपों से परिचित कराती है। विश्वविद्यालयी परिसर, अकादमिक राग-द्वेष, स्थानीय राजनैतिक समस्याएं आदि बर्मन को बहुत विचलित करते हैं। ऐसे में इबोहल, इराबो, जूही, राधा, तनु जैसे संवेदनशील पात्र पाठकों के मन में मणिपुर को जानने-समझने के नए आयाम विकसित करते है। इबोहल जैसे मेधावी विद्यार्थी और इराबो जैसे प्रतिभाशाली निर्देशक का जीवन मणिपुर में लागू आर्म्ड फोर्सेस स्पेशल पॉवर एक्ट द्वारा सेना की मनमानियों के कारण बर्बाद हो जाता है। डॉ. बर्मन मणिपुर की संस्कृति में घुल-मिल जाता है पर वह अंततः कोई समाधान नहीं खोज पाता। ठीक इसी प्रकार श्रीधर पाण्डेय कृत ‘आहुति’ उपन्यास की कथा भी मणिपुर में बिहार से रोजगार के लिए गए युवक मनोज और एक मणिपुरी युवती चानु की प्रेमकथा है। मणिपुर का परिवेश उपन्यास में अपने समृद्ध अतीत, नैसर्गिक सौंदर्य, उग्रवादी गतिविधि जैसी घटनाओं से भरा पड़ा है। उपन्यास की मूल समस्या मणिपुर में बाहरी और भीतरी के संघर्ष की है जहाँ मणिपुर में रह रहे गैर-मणिपुरी भारतीयों को मणिपुर के उग्रवादी संगठनों द्वारा सताया जाता है। वहीं इसके फलस्वरूप भारतीय सेना की जवाबी कार्यवाही में मणिपुर के आम जनमानस को तकलीफ होती है। उपन्यास में मणिपुर में प्रचलित विवाह पद्धति में एलोपमेंट जैसी प्रथा पर विशेष चर्चा की है। जहाँ लड़की को पूरी छूट होती है कि वह अपने मर्ज़ी से किसी युवक के साथ शादी के लिए भाग जाए, जिसके बाद घरवाले उसे दो दिन तक ढूंढते है और फिर लड़की अपने नवविवाहित पति के साथ अपने घर वापस आ जाती है और घरवाले इस सम्बन्ध को स्वीकार कर लेते है। यद्यपि यह नियम स्त्रियों की स्वछंदता के लिए बने थे परंतु कालांतर में किसी पुरुष द्वारा जबरन किसी स्त्री के अपहरण कर लेने पर उस स्त्री को उसी पुरुष से शादी करनी पड़ती थी। स्त्रियों के आजादी के लिए बने यह नियम उसके पैरों की बेड़ियाँ बन गए। ऐसे में गैर-मणिपुरी मनोज और मणिपुरी युवती चानु की शादी का वहाँ के उग्रवादी संगठन विरोध करते हैं और गोलीबारी में चानु मारी जाती है। उपरोक्त दोनों उपन्यासों ‘उत्तर पूर्व’ और ‘आहुति’ में मणिपुर की जिस स्थानीय समस्या को दिखाया गया है वैसी घटनाएं अब नहीं के बराबर है और मणिपुर तथा शेष भारत के बीच किसी हाशिये और मुख्यधारा जैसा कोई प्रश्न नहीं बचा, परंतु इन उपन्यासों के मार्फत हमें पूर्वोत्तर भारत की समस्या की एक तस्वीर देखने को मिलती है जिसे हर पाठक को समझने का प्रयास करना चाहिए।

पूर्वोत्तर केन्द्रित अन्य उपन्यासों में श्रीप्रकाश मिश्र के दो उपन्यास ‘जहाँ बाँस फूलते हैं’(1996) और ‘रूपतिल्ली की कथा’(2006) शामिल है जो मिजोरम और मेघालय पर केन्द्रित है। ‘जहाँ बाँस फूलते हैं’ उपन्यास में मिज़ोरम के सैन्य विद्रोह और भारतीय प्रशासन की गतिविधियों के बीच वहाँ के जनजीवन की समस्या को दर्शाया गया है। ‘रूपतिल्ली की कथा’ उपन्यास की पृष्ठभूमि मेघालय पर केंद्रित है जिसमें खासी समाज की लोक-संस्कृति, मातृसत्तात्मक समाज की अवधारणा, मानव-बलि, अंग्रेज और खासी शासकों के बीच संघर्ष, ईसाई धर्म प्रचार जैसे प्रकरणों की चर्चा है जिससे मेघालय की स्थानीय और

सांस्कृतिक सन्दर्भों की जानकारी मिलती है। शेष राज्यों पर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों को देखें तो इनमें त्रिपुरा पर केंद्रित उपन्यास 'देवी माँ'(2000)-रमेन्द्र कुमार पाल, यह उपन्यास भारत-पाक विभाजन के दौरान त्रिपुरा में घटी घटनाओं पर केंद्रित है। कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्खु' का उपन्यास 'रक्तयात्रा'(1978) नागालैंड पर केंद्रित है, जिसमें नागा जनजातीय समुदाय और स्थानीय लोगों के असंतोष व उनके सैन्य विद्रोह की कथा है। सिक्किम पर केंद्रित हिंदी उपन्यासों में 'अरण्य रोदन'(1985)- सुवास दीपक, जिसमें सिक्किम के तत्कालीन स्कूली शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार पर व्यंग्य किया गया है तथा 'शिखर और सीमाएं'(1998)- शरत कुमार, इस उपन्यास में सिक्किम की प्राकृतिक सुंदरता और दीप्ति और समरेश नामक पात्रों के विवाहेतर संबंधों की चर्चा है।

इस प्रकार पूर्वोत्तर भारत पर केंद्रित इन हिंदी उपन्यासों में पूर्वोत्तर राज्यों की ऐतिहासिक, प्राकृतिक व भौगोलिक स्थिति, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, अस्मितामूलक संघर्ष, स्थानीय समस्याएं आदि की विस्तारपूर्वक जानकारी मिलती है जिससे पूर्वोत्तर भारत की यथास्थिति का परिचय मिलता है। पूर्वोत्तर भारत केंद्रित इन उपन्यासों में पात्र एवं घटनाओं की भरमार है, अधिंकाश स्त्री-पुरुष पात्र अपने अधिकार की रक्षा के लिए सक्रिय दिखाई पड़ते हैं। हर उपन्यास में स्थानीय भाषा के शब्दों एवं पर्व-त्योहारों की चर्चा से पूर्वोत्तर भारत के विविध पक्षों के दर्शन होते हैं। पूर्वोत्तर भारत की प्राकृतिक सुंदरता एवं वहाँ के लोगो की व्यवहार कुशलता ने उसके पर्यटन/तीर्थ क्षेत्र को काफी विकसित किया है लोग बतौर पर्यटक/तीर्थयात्री पूर्वोत्तर का भ्रमण तो करते हैं, परंतु वहाँ के जीवन और संस्कृति से एकाकार नहीं हो पाते ऐसे में साहित्य के माध्यम से इस आवश्यकता को पूर्ण किया जा सकता है।

निष्कर्ष : पूर्वोत्तर भारत की भाषिक विविधता और हिंदी साहित्य में उपन्यास जैसे प्रौढ़ एवं सशक्त विधा में लेखन के माध्यम से हिंदी ने पूर्वोत्तर और शेष भारत के बीच एक सेतु का कार्य किया है। उपन्यास में वर्णित प्रसंग, पात्र, घटनाएं सभी पूर्वोत्तर भारत के जीवन को समझने में सहायक सिद्ध होते हैं। पूर्वोत्तर भारत के लोगों का अन्य भारत के लोगों से संबंध, संघर्ष, शिकायतें उपन्यास के विषय इन सभी मुद्दों की पड़ताल करते हैं। ब्रह्मपुत्र, देश भीतर देश, जंगली फूल, उत्तर पूर्व, जहाँ बाँस फूलते हैं जैसे उपन्यास न केवल पूर्वोत्तर के इतिहास, सौंदर्य व संस्कृति ही नहीं अपितु उसकी समस्याओं को भी उजागर करते हैं। अतः पूर्वोत्तर क्षेत्र को जानने-समझने के लिए उपन्यास का माध्यम अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

संदर्भ :

1. परमार,वीरेंद्र.भूमिका,पृष्ठ सं. 7,*बहुआयामी पूर्वोत्तर भारत*, संपा.आलोक सिंह, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2021.
2. प्रो. माधवेन्द्र, पूर्वोत्तर भारत का भाषाई परिदृश्य, पृष्ठ सं, 19-20, *हिंदी और पूर्वोत्तर*, संपा. कृपाशंकर चौबे, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2018.
3. सत्यार्थी.देवेन्द्र, *ब्रह्मपुत्र*, पृष्ठ सं.11, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 1992.
4. सौरभ,प्रदीप.*देश भीतर देश*, पृष्ठ सं.166, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2012.
5. यालाम,जोराम.*जंगली फूल*, पृष्ठ सं.6,अनुज्ञा प्रकाशन,दिल्ली,2021.

❏❏❏

1. शोधार्थी, हिंदी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक. मो- 8942846259 ईमेल- akashr512@gmail.com

ब्रिटेन की चयनित प्रवासी हिन्दी कहानियों में स्वदेशभक्ति

–सिमरन

दिव्या माथुर की कहानी 'खोदा पहाड़ और...' कहानी में भारतीय भोजन के प्रति गोरों की दीवानगी दिखाई है "भारतीय भोजन के दीवाने हैं यह लोग। हमारे किसी भी रेस्टोरां में चले जाइए, वह शर्तिया गोरों से भरा होगा। एक ज़माना था कि यह गोरे हमें घर किराए पर नहीं देते थे कि हमारे बदन से अदरक-लहसुन की बदबू आती है और आज आलम यह है कि चिकन टिक्का मसाले को इंग्लैंड की नेशनल डिश घोषित कर दिया गया है।

शोध सार:

प्रवासी हिन्दी साहित्य आज अपनी एक विशेष पहचान स्थापित कर रहा है। इस साहित्य को लेकर यह प्रश्न उठाया जाता है कि किसे प्रवासी साहित्य माना जाना चाहिए और किसे नहीं? पहली पीढ़ी द्वारा लिखे गए साहित्य को या भारतवंशी (प्रवासियों की दूसरी और तीसरी पीढ़ी) द्वारा रचित साहित्य को। दूसरा प्रश्न यह है कि प्रवासी साहित्य भारत से कहीं दूर विदेशी धरती पर बस कर लिखे गए साहित्य को? या जो भारत से गए और वहाँ सजृन करके भारत वापस लौट आए या फिर भारत से प्रतिष्ठित होकर विदेश में जाकर अपना लेखन कार्य कर रहे है। प्रवासी साहित्य पढ़ने पर ज्ञात हुआ कि प्रवासी भारतीय अपनी भारतीय संस्कृति और देश भक्ति को जीवंत रखे हुए है। अपनी संस्कृति को विदेशों तक फैलाने का श्रेय भारतीय और प्रवासी लेखकों को जाता है। प्रवासियों को अपनी जन्मभूमि से बिछड़ने का दर्द, पीड़ा, टीस, कसक झलकती है। नॉस्टेलजिया इस साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता और समस्या भी है। कहानियों में धर्म, पूजा-पाठ, संस्कृति, त्योहार, पर्व, लोकगीत, लोकनृत्य, वेशभूषा आदि समाहित होते हैं। जिन त्यौहारों को आज भारत में आम समझा जाता है वही विदेशी भूमि पर हर्ष-उल्लास का कारण बनते हैं। रचनाकारों ने कहीं तो भारतवंशियों को इससे कटते हुए दिखाया है तो कहीं इसको भारतीय परंपरानुसार धारण करते हुए। संपूर्ण प्रवासी लेखकों ने भारत को याद करते हुए अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी स्वदेश भक्ति चित्रित की है।

बीज शब्द:- प्रवासी हिन्दी साहित्य, भारतवंशी, नॉस्टेलजिया, स्वदेश भक्ति, संस्कृति, परंपरा

प्रस्तावना:-

प्रवासी हिंदी साहित्य का अर्थ है वह साहित्य जो विदेशी भूमि पर हिंदी में रचा जा रहा है उसे प्रवासी हिंदी साहित्य कहा जा सकता

है। प्रवासी हिन्दी साहित्य हिंदी साहित्य की लगभग सभी विधाओं में विपुल मात्रा में रचा जा रहा है। दुनिया भर में भारतीयों के बसे होने के कारण प्रवासी साहित्य के माध्यम से हिंदी ने विश्व फलक पर अपनी पहचान बनाई है। भारतीय जब भारत से बाहर जाकर विदेशी भूमि पर अपनी जिंदगी की नई शुरुआत करते है तब उन्हें अपना देश बार-बार स्मरित होता रहता है। वह अपने देश, मातृभूमि को भूल ही नहीं पाते। सामान्यतः देशभक्ति की यदि बात की जाए तो अपने देश के लिए मर-मिट जाने वाली भावना ही देशभक्ति कहलाती है किंतु प्रवासी व्यक्ति के लिए देशभक्ति किसी से विद्रोह नहीं है और न ही देश की सीमा पर किसी जंग में अपनी मातृभूमि, अपने देश के लिए काम आना है। बॉर्डर पर अपने देश के लिए अपनी जान न्योछावर करना ही देश के प्रति अपनी भक्ति को दिखाना नहीं है बल्कि उसके लिए अपनी सुनहरी माटी से दूर रहकर उसके बिछोह में तड़प-तड़पकर उसे याद करते रहना, देश की संस्कृति, रीति-नीति तथा रीति-रिवाज को याद करना और अपने देश वापस लौट आने की ललक, पीड़ा, टीस, कसक, दर्द, जद्दोजहद, तथा उसे याद करते रहना ही उस प्रवासी व्यक्ति के लिए देशभक्ति है। यह भावना उसमें स्वतः ही प्रवाहित होती रहती है। जड़ों से कटने का दर्द प्रवासी व्यक्ति के लिए अपने देश के प्रति भक्ति की भावना को जागृत करता है। वह व्यक्ति अपनी इसी अनुभूति को कागज-कलम लेकर कैनवास पर उतार अपने देश के प्रति अपनी देशभक्ति दिखाता है।

पाश्चात्य देशों की सभ्यता और संस्कृति पर भारतीय संस्कृति के खान-पान और अध्यात्म की प्रसिद्धि दिखाई देती है। इस संदर्भ में अर्चना पेन्यूली लिखती है कि "भारतीय भोजन व अध्यात्म दोनों ने ही पश्चिमी देशों में बड़ी प्रसिद्धि पाई है। उदर की पूर्ति के लिए भोजन और आत्मा की शुद्धि के लिए अध्यात्म"

दिव्या माथुर की कहानी 'खोदा पहाड़ और...' कहानी में भारतीय भोजन के प्रति गोरों की दीवानगी दिखाई है "भारतीय भोजन के दीवाने हैं यह लोग। हमारे किसी भी रेस्टोरां में चले जाइए, वह शर्तिया गोरों से भरा होगा। एक ज़माना था कि यह गोरे हमें घर किराए पर नहीं देते थे कि हमारे बदन से अदरक-लहसुन की बदबू आती है और आज आलम यह है कि चिकन टिक्का मसाले को इंग्लैंड की नेशनल डिश घोषित कर दिया गया है। ब्रिटेन में रहने पर भी नायिका भारतीय मान्यताओं को अपने दिल से नहीं निकाल पाती। मरी हुई चुहिया को घर के बहार देखने पर वह सोचती है कि यह किसी अशुभ घड़ी का कोई संकेत तो नहीं है, आज का दिन न जाने कैसे गुजरेगा। जाने के लिए वैसे ही देर हो गई है उस पर सुबह सुबह ये मुसीबत। भारतीय अंधविश्वासों और मिथकों में उलझ जाती है। अपने देश, चाचा, दादी की बातों को याद करती है कि दादी कहती है सांप, कीड़े-मकोड़े और छपकलियाँ जैसे जीव बनना उनके बुरे कर्मों का फल होता है। वह सोचती है मुझे ऐसा कोइ कर्म न करना चाहिए जिससे चूहा या छिपकली बनना पड़े। किन्तु देर से ऑफिस पहुँचने पर भी बॉस से उसको मैनेजर का पद मिलता है, बॉस ने उसे अपना सहायक घोषित कर दिया और दूसरी तरफ माँ के फोन आने पर खबर मिली कि दस साल बाद भाभी ने बेटे को जन्म दिया है, भतीजे के पैदा होने कि ख़ुशख़बरी मिली। तो उसने अपने सहकर्मियों के साथ पब में पार्टी की। रात को घर वापस आने तक वह मरी हुई चुहिया भूल चुकी थी। वह प्रसन्न थी कि दिन अच्छा साबित हुआ और इस आशा में रोज निकलती कि मरी हुई चुहिया दिखे तो दिन अच्छा गुजरे। इस प्रकार नायिका का भारतीय मान्यताओं को याद करवाते हुए लेखिका ने अपनी स्वदेशभक्ति का चित्रण किया है।

दिव्या माथुर की कहानी 'पारिजात की पूजा' में पारिजात माँ के मर जाने के बाद अपने छुटपन को याद करता है। उसकी मां उसके छुटपन में नियमित रूप से देवी देवताओं की पूजा करती थी। पूर्णमासी के दिन सत्यनारायण की कथा करती है और दोनों बच्चों के जन्मदिन पर सुंदरकांड रामायण का पाठ करना नहीं भूलती थी। माँ की भगवान तथा देवी देवताओं पर अपार श्रद्धा थी। वह वही संस्कार अपने बच्चों को भी देना चाहती है किन्तु उसकी बेटी भगवान के प्रति कोई आस्था नहीं रखती और पारिजात धार्मिक संस्कार अपनाता है। इसलिए वह मां के अंतिम समय में माँ के स्वस्थ हो जाने के लिए मंदिर में बैठकर देवी देवताओं के हाथ-पाव जोड़ता है। कहानी में एक ओर तो पारिजात और मां की भारतीय धार्मिक आस्था और विश्वास दिखाया है तो दूसरी ओर उनकी बेटी को उतना ही अंधविश्वासी दिखाया है। लंदन में पले-बढ़े होने के कारण प्रवासियों की आने वाली पीढ़ी भरतवंशियों से धार्मिक और सांस्कृतिक संस्कार छुटते जा रहे है। भारत में तुलसी से संबंधित धार्मिक मान्यताएं है उनको विदेशी जमीन पर भी उतनी ही श्रद्धा से मानते है। माँ को बहुत नाज़ था कि इंग्लैंड की विदेशी धरती पर भी घर आंगन में तुलसी का पौधा लगाती है और उनकी यह धारणा है कि इंग्लैंड में तुलसी जी किसी-किसी के घर में ही फलती है और उनके घर में तुलसी खूब पनप गई थी। भारतीय धार्मिक आस्थाओं और मान्यताओं का प्रतीक है। पूजा-पाठ के माध्यम से अपनी देशभक्ति अभिव्यक्त की है।

शैल अग्रवाल की कहानी 'विसर्जन' में बंगाल से गए हुए प्रणव भास्कर बेनर्जी स्वयं को नास्तिक मानते थे। किन्तु बचपन में उन्हे माँ पर बहुत श्रद्धा थी। उन्हें माँ पर आस्था थी मगर बस अष्टमी के दिन बकरे या किसी भी प्रतिकात्मक दिए गए कुम्हड़े की बलि स्वीकार्य नहीं थी। किन्तु उनके नास्तिक हो जाने के बाद, ब्रिटेन में रहने पर माता कभी दुर्गा, कभी काली बनकर उनके सपने में आती है। उन्होंने –माँ जगत जननी दुर्गा, माँ सुख-समृद्धिदात्री लक्ष्मी, माँ आत्मसंतुष्टा, ज्ञान-वर्धिनी सरस्वती, माँ पाप-विनाशिनी महाकाली के रूप का दर्शन होता है। माँ गौरी, अंबा, दुर्गा, महाकाली, कभी माँ दुर्गा शेर पर आती तो कभी सुअर पर, कभी गधे पर, तो कभी भैंसें पर, कभी हंस, हाथी, मयूर पर चढ़कर अपना दर्शन देती है। उसको देवी माँ कृशकाय के रूप में भी दिखाई दी थी। माँ के इस रूप से उन्हें अनजाने अशुभ की आशंका होती है। माँ उसको सपनों में बार-बार दर्शन देती है। नवरात्रि का त्यौहार जैसी सभी व्यस्तताओं के पश्चात् भी उसका मन ह्दय अक्सर ही भारत में रमा रहता है। महालय का दिन मतलब हफ्ते भर में ही नवरात्रि शुरू हो जाती है। बंगाल ही क्या भारत का पंजाब और गुजरात भी माँ के स्वागत के रंग में रंग जाता है। उन्हें माँ की शरद ऋतु में आगमन की प्रथा बहुत प्यारी लगती है। शरद ऋतु की उस गुलाबी ठंड और पूजा का जोश और उत्साह बहुत प्यारा लगता है। माँ वर्ष में दो बार अश्विन और चैत्र में आती है। वे नवरात्रि के लिए भारत वापस आने का वादा स्वयं से और अपने भारत से भी करते हैं। इस त्योहार में नौ दिन माँ दुर्गा के बीस रूपों की भव्य पूजा की जाती है। तीन दिन दुर्गा माँ के अंदर के विकार नष्ट करने के लिए, अगले तीन दिन लक्ष्मी की पूजा कृपा और समृद्धि के लिए और अंतिम दिन माँ सरस्वती के ज्ञान अर्जन के लिए पूजा कि जाती है। फिर माँ की विदाई होती है। इस कहानी में माँ दुर्गा तथा उनके नौ रूपों के प्रति माध्यम से भारतीय त्योहार के प्रति आस्था, उत्साह और श्रद्धा का चित्रण किया है और इस माध्यम से अपनी देशभक्ति अभिव्यक्त की है।

शैल अग्रवाल की 'दिये की लौ' कहानी में कैंब्रिज विश्वविद्यालय में भारत की विभिन्न वेशभूषा में ब्रेकडांस, लोकनृत्य भांगड़ा किया जाता है। भारतीय हस्तकला, मेहंदी, चूड़ी और बिंदी की डिजाइन खरीदी जाती है। वहाँ दिवाली मेला लगाया जाता है। भारतीय व्यंजन जायकेदार छोले, पकौड़ियों और गुलाब जामुनओं की सोंधी-सोंधी महक आती है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति से नायिका पेरिस इतनी प्रभावित होती है कि वह अपनी बेटी का नाम भी काशी नगरी से प्रभावित होकर काशी ही रखना चाहती है। केम्ब्रिज और काशी की तुलना करती है कि गंगा के किनारे बसी हुई काशी भी इतनी ही सुन्दर है जितना कि कैमरिवर के किनारे बसा यह है केम्ब्रिज। कैमब्रिज एशियन एसोसियेशन का निर्माण किया गया है। जिसमें एक फैशन शो भी रखा जाता है। नायक अविक और उसके मित्र दिवाली पूजा करने के बाद दिवाली मेला देखने जाते है और वहाँ से जल्दी ऊब कर माँ के साथ दिवाली मनाने लंदन आते हैं क्योंकि उनको पारंपारिक भारतीय अंदाज में दिवाली मनानी थी। पेरिस भारतीय त्योहार विशेषकर दिवाली का बहुत ही गहराई से ज्ञान रखती है। दीपावली से संबंधित लोक प्रचलित कथा राम का चौदह वर्ष के बनवास काटने के बाद अयोध्या घर वापस लौट आना जैसी कथा दोहराती है जबकि भरतवंशियों को दिवाली से संबंधित लोककथाओं का ज्ञान नहीं रहता है। ऐसा नहीं है कि भारतवंशियों को भारत और भारतीयता के प्रति कोई आकर्षण नहीं है। बल्कि विदेशों में एक ओर तो माँ-बाप अपने बच्चों का भारतीय संस्कृति से जोड़कर रखना चाहते हैं वहीं दूसरी ओर यह भी देखने को मिलता है कि जीवन की आपाधापी में माता-पिता इतने डूब जाते है कि उनके पास इतना भी समय नहीं होता की दो मिनट पास बैठकर अपने बच्चों को भारत और भारतीय संस्कृति के बारे में बता पाए या समझा पाए। वे बच्चे बिचारे माँ-बाप के साथ बैठकर फुरसत और शांति से दो बात करना तो दूर, अक्सर उनके दर्शन तक को तरस जाते हैं, उनके दर्शन तक दुर्लभ हो जाते हैं, जिसकी वजह से अविक का मित्र भारतवंशी रूपम पेरिस के सामने अजीब सी शर्मिंदगी महसूस करता है। अविक के सभी भारतीय मित्रों का यही हाल रहता है। लंदन में एक नन्हा भारत बसा हुआ है। लंदन पहुँचने पर अविक और उसके तीनों मित्रों का माँ भारतीय तरीके से स्वागत करती है। अशोक के पत्तों में गूँथी हुई फेयरी लाइट और उनके बीच-बीच छोटी-छोटी घंटियाँ, नीचे करीने से माला-सी सजी दीयों कि लंबी कतार और सामने प्रवेश द्वार पर घूमती रंगोली के बीच कमल के आकार की दीप्त मोमबत्ती, लक्ष्मी के स्वागत में सजे सँवरे घर के बंदनवार से नन्ही-नन्ही घंटियों की गूँज से उनका स्वागत होता है। दरवाजे पर माँ हाथ में पूजा की थाली लेकर तथा माथे पर तिलक लगाकर स्वागत करती है। माँ उनको भारतीय संस्कार से अभिवादन करना सिखाती है कि भारत में तो बच्चे बड़ों के पैर छूते हैं सभी ने माँ के पैर छूए। पेरिस माँ के दिए हुए भारतीय परिधान पहनकर दिवाली की पूजा करती है। नए कपड़े पहन कर सबने मिलकर लक्ष्मी की मूर्ति को खील बताशे और फूल चढ़ाए। माँ बताती है कि भारत में घर भरके मिठाई बनती है, अगले दिन मिलने-जुलने और गरीबों में बांटी जाती है, अगले तीन-चार दिन गाना-बजाना, मिलना जुलना चलता रहता है। पहले धन-तेरस, फिर छोटीबड़ी दिवाली पाड़वा और भैया दूज, पूरे पाँच दिन का त्योहार मनाया जाता है। फिर सब मिलकर ताश के खेल में तीन पत्ती खेलते है। माँ बताती हैं कि दिवाली के दिन ताश का खेल खेलने का रिवाज केवल अगले साल का शुभ-अशुभ देखने के लिए होता है। लंदन में रह कर सभी

भारतीय परंपरा, सभ्यता और रीती-रिवाजों के साथ दिवाली मनाते है। इस तरह कहानी में दिवाली का त्योहार मनाते हुए देश के प्रति अपनी भक्ति को दर्शाया गया है।

निष्कर्ष:-

जितना भारतीय संस्कृति को प्रवासियों ने सँजो के रखा है, वह अविश्वशनीय है। अपनी भूमि से दूर रहकर भी उसमें ही जीना यह स्वदेशप्रेम तथा स्वदेशभक्ति है। यही उनकी भक्ति का माध्यम भी है। प्रवासी हिन्दी साहित्य अपने आप में ही एक समृद्ध साहित्य है। इसकी एक लोकप्रिय शाखा कहानी के अध्ययन के माध्यम से ज्ञात हुआ कि अपनी माटी को छोड़ के गया हुआ व्यक्ति कभी भी अपनी माटी से भावात्मक रूप से दूर नहीं हो पाता। रह-रह कर वह अपनी ही माटी की याद करता रहता है जिसकी झलक हमें इस साहित्य में मिलती है, कभी रीति-रिवाजों के माध्यम से, तो कभी तीज-त्योहारों के माध्यम से।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. संधु, डॉ.मधू.(2019). संस्कृति चित्रण, वैश्विक संवेदन-संसार और प्रवासी महिला कहानीकार एक अध्ययन, कानपुर: अमन प्रकाशन. पृ.सं.-38
2. माथुर, दिव्या.(2009). खोदा पहाड़ और..., पंगा तथा अन्य कहानियाँ, नवीन शाहदरा,दिल्ली: प्रकाशक-मेधा बुक्स, पृ.सं.-17
3. माथुर, दिव्या. (2013). पारिजात की पूजा, मैड इन इंडिया, नई दिल्ली: हिन्दी बुक सेंटर
4. अगरवाल, शैल(2020). विसर्जन
5. http://www.abhivyaktihindi.org/kahaniyan/vatan_se_door/2005/visarjan/visarjan1.htm
6. अगरवाल, शैल(N.D.).
7. http://www.abhivyakti-hindi.org/kahaniyan/2003/diyekilau/diyekilau1.htm
8. माथुर, दिव्या(2010). कथा सत्यनारायण की, पंगा तथा अन्य कहानियाँ, दिल्ली: नवीन शाहदरा, प्रकाशक-मेधा बुक्स
9. मंडल, केदार कुमार,(2016). प्रवासी हिन्दी कथा साहित्य, नई दिल्ली: ईशा ज्ञानदीप
10. गोयनका, कमल किशोर.(2019). हिन्दी का प्रवासी साहित्य, दरिया गंज, दिल्ली: स्वराज प्रकशन
11. संधु, डॉ. मधू.(2019). वैश्विक संवेदन-संसार और प्रवासी महिला कहानीकार एक अध्ययन, कानपुर: अमन प्रकाशन
12. देसाई, डॉ. बापूराव.(2020).प्रवासी साहित्य का इतिहास (सिद्धांत एवं विवेचन), कानपुर: पराग प्रकाशन,

❒❒❒

1. शोधार्थी: हिन्दी विभाग कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक simranphd20@gmail.com 7892704090
2. हिन्दी विभाग, कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक-585367

भाषा का प्रश्न एवं राष्ट्रीय शिक्षा नीति

–पूजा

आधुनिक भारत की शिक्षा प्रणाली एक सुदीर्घ परंपरा का वहन करते हुए विकसित हुई है। जिसमें प्रसिद्ध भारतीय चिंतकों स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गाँधी आदि ने बहुमूल्य योगदान दिया है। शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का विकास करना है। बालक के सर्वांगीण विकास में 'भाषा' अहम भूमिका निभाती है। भारत की समृद्ध धरोहर उसे 'अतुल्य ! भारत' बनाती है।

शोध-सार

राष्ट्र निर्माण का आधार शिक्षा है। विश्व में प्रौद्योगिकी, विज्ञान, तकनीक और शैक्षिक क्रांति के कारण आमूलचूल परिवर्तन दिखाई पड़ता है। वर्तमान समय की मूलभूत आवश्यकता एवं जिम्मेदारी को ध्यान में रखते हुए 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' देश की युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के साथ-साथ विश्व के साथ मिलकर चलने की ओर मील का पत्थर साबित होगी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, बालक के संज्ञानात्मक ज्ञान के साथ-साथ उसके सर्वांगीण विकास पर आधारित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि शिक्षा द्वारा भारतीय परंपराओं, भाषाओं एवं संस्कृति का विकास हो तथा बच्चे संस्कृति से जुड़कर बहुमुखी व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें।

आधुनिक भारत की शिक्षा प्रणाली एक सुदीर्घ परंपरा का वहन करते हुए विकसित हुई है। शिक्षा प्रणाली को एकीकृत करने के लिए स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधी, विनोबा, इत्यादि ने गहनता से विश्लेषण करके भावी शिक्षा प्रणाली की रूपरेखा तैयार की थी। शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का विकास करना है। बालक के सर्वांगीण विकास में भाषा अहम भूमिका निभाती है। स्वतंत्र भारत की सभी शिक्षा नीतियों में भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। भारत की वैविध्यपूर्ण संस्कृति, बहुभाषिकता एवं प्राचीन साहित्य को अनुवाद द्वारा वैश्विक स्तर पर पहुँचाया जा सकता है। प्रौद्योगिकी के उपयोग से भारतीय भाषाओं के संरक्षण एवं विकास संबंधी महत्त्वपूर्ण प्रावधान नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में किए गए हैं। यह मनोवैज्ञानिक सिद्धांत है कि बालक का शारीरिक, मानसिक, भावात्मक, नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक और व्यवसायिक विकास मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करके ही संभव है। भारतवर्ष में एकीकृत शिक्षा व्यवस्था के लिए 'शिक्षा का माध्यम' किस भाषा में हो यह हमेशा से ही एक विचारणीय बिंदु रहा है। भारत के विपुल ज्ञान भंडार

को विभिन्न भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही लोक-कल्याण एवं राष्ट्र-कल्याण के उपयोग में लाया जा सकता है।

बीज शब्द: भारतीय भाषा, संस्कृति, प्रौद्योगिकी, मातृभाषा, बहुभाषिकता।

शोध-आलेख

शिक्षा ही राष्ट्र के निर्माण का आधार है। विश्व भर में प्रौद्योगिकी व विज्ञान के कारण एक क्रांतिकारी परिवर्तन आया। अतः विश्व में अपनी पहचान बनाने व सबके साथ मिलकर चलने के लिए देश की युवा पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए एक नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की अत्यंत आवश्यकता थी। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, बालक के संज्ञानात्मक ज्ञान के साथ-साथ उसके सर्वांगीण विकास पर आधारित है। विषय ज्ञान के साथ-साथ विभिन्न जीवन कौशलों को बच्चों में विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। इस शिक्षा नीति में भारतीय परंपराओं व संस्कृति से जुड़ कर बालक का विकास हो ऐसा प्रावधान है।

21वीं सदी में भारत की यह पहली शिक्षा नीति है। इसरो प्रमुख डॉक्टर के० कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020' का गठन हुआ। 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020' बालक के संज्ञानात्मक ज्ञान के साथ-साथ उसके सर्वांगीण विकास पर आधारित है। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य है कि शिक्षा द्वारा भारतीय परंपराओं, भाषाओं एवं संस्कृति का विकास हो तथा बच्चे संस्कृति से जुड़कर बहुमुखी व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें। पूर्ववर्ती शिक्षा नीतियाँ इस प्रकार हैं। राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) की अनुशंसा पर 1968 में भारत की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति आई। कोठारी कमीशन के द्वारा यह नीति प्राथमिक शिक्षा से उच्च शिक्षा तक के सभी स्तरों के लिए बनाई गई थी। इस शिक्षा नीति (1968) में क्षेत्रीय भाषाओं के विकास पर बल दिया गया। माध्यमिक स्तर की कक्षाओं में त्रि-भाषा सूत्र प्रभावित रूप से कार्यान्वित किया गया। त्रि-भाषा सूत्र के माध्यम से हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करने में योगदान दिया। स्वतंत्र भारत की दूसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में आई। शिक्षा नीति में 'ऑपरेशन-ब्लैक बोर्ड' कार्यक्रम चलाया गया जिसके तहत सभी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा का मौलिक अधिकार प्रदान किया गया।

आधुनिक भारत की शिक्षा प्रणाली एक सुदीर्घ परंपरा का वहन करते हुए विकसित हुई है। जिसमें प्रसिद्ध भारतीय चिंतकों स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, रविंद्रनाथ टैगोर, महात्मा गाँधी आदि ने बहुमूल्य योगदान दिया है। शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का विकास करना है। बालक के सर्वांगीण विकास में 'भाषा' अहम भूमिका निभाती है। भारत की समृद्ध धरोहर उसे 'अतुल्य ! भारत' बनाती है। प्रत्येक देश की अस्मिता उसकी कला, साहित्यिक कृतियों, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्मारकों, प्राचीन-ग्रंथों, परंपराओं, भाषा की अभिव्यक्तियों, कलाकृतियों आदि से परिलक्षित होती है। भारत जैसे बहुलता सम्पन्न समाज एवं विस्तृत भू-प्रदेश की भाषा नीति का निर्धारण एक विकट समस्या है। भारतवर्ष में एकीकृत शिक्षा प्रणाली के लिए शिक्षा का माध्यम किस भाषा को कितना बनाया जाए सदैव विचारणीय बिंदु रहा है तथा एक ज्वलंत समस्या बनकर खड़ा है। वस्तुतः राजभाषा के साथ ही सम्बद्ध विषय है शिक्षा के माध्यम का। जब तक राजकाज में अंग्रेजी चलेगी तब तक शिक्षा भी अंग्रेजी में होगी। अतः राजकाज में

हिंदी का प्रयोग ही विद्यालय स्तर पर हिंदी में शिक्षा प्राप्ति को प्रोत्साहित कर सकता है। यह सर्वविदित है कि मनोवैज्ञानिक रूप से शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए। अब इतने बड़े राष्ट्र में किसी एक भाषा का सार्वदेशिक मातृभाषा होना संभव नहीं है। इसलिए हमारे यहाँ शिक्षा के माध्यम के संदर्भ में त्रि-भाषा सूत्र अस्तित्व में आया। मातृभाषा, राष्ट्रभाषा एवं संपर्क भाषा अर्थात् प्रादेशिक भाषा, हिंदी भाषा एवं अंग्रेजी भाषा का। अगला प्रश्न हमारे सम्मुख आता है कि किस स्तर तक किस भाषा का प्रयोग किया जाए। इस पर प्रसिद्ध विचारकों के विचार यहाँ प्रस्तुत हैं। श्रीमन् नारायण अग्रवाल की पुस्तक 'शिक्षा का माध्यम' की भूमिका में महात्मा गाँधी लिखते हैं- "भारतीय शिक्षा प्रणाली के अनेक दोषों में संभवतः सर्वदा सर्वाधिक दुखदायी और मूर्खतापूर्ण दोष है शिक्षा के माध्यम का विदेशी होना"[1] अर्थात् उनका मानना है कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए। महान साहित्यकार प्रेमचंद भी शिक्षा का माध्यम मातृभाषा चाहते थे। साथ ही वे मिली-जुली साहित्यिक भाषा 'हिंदुस्तानी' को लाने की बात भी करते थे। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक शिक्षा को राष्ट्र- उत्थान का महान साधन मानते थे। दिसंबर, 1905 में नागरी प्रचारिणी सभा के सम्मेलन को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा- "राष्ट्र के लिए एक जैसी लिपि राष्ट्रीय आंदोलन का भाग है। यदि तुम राष्ट्र को एकसूत्र में बाँधना चाहते हो, तो तुम्हें हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा देना होगा तभी देश को अन्य विकसित देशों के समकक्ष लाया जा सकता है।"[2] श्री अरविंद घोष ने 15 जनवरी 1908 को मुंबई में अपने एक सम्भाषण में राष्ट्रीय शिक्षा पर बोलते हुए कहा कि- "इसका लक्ष्य छात्रों में राष्ट्रीयता का भाव जागृत करना है। इसके लिए अपने पूर्वजों के साहसिक कार्यों पर गहराई से चिंतन करना आवश्यक होगा। शिक्षा को मातृभाषा में होना चाहिए ताकि यह अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके। अरविंदो ने इस बात पर भी बल दिया कि यद्यपि छात्रों को अपने मूल के साथ जुड़े रहना चाहिए फिर भी उनको आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारों तथा लोकप्रिय शासन व्यवस्था के संदर्भ में पश्चिमी देशों के अनुभव का भी भरपूर लाभ उठाना चाहिए इसके अतिरिक्त छात्रों को कोई हस्तकला भी सीखनी चाहिए ताकि वे स्कूल छोड़ने पर यथासंभव रोज़गार पा सकें।"[3]

'भारत की भाषा समस्या' नामक पुस्तक में डॉ रामविलास शर्मा लिखते हैं- "ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने अंग्रेजी को अनिवार्य राजभाषा के रूप में भारत पर इसलिए लादा कि वह जनता का शोषण कर सके। इस प्रकार उसने भारत की अनेक जातियों की भाषाओं की प्रगति में बाधा डाली। स्वाधीनता संग्राम के दौरान भारतीय जनता ने यह माँग बराबर पेश की कि शिक्षा- संस्थाओं, अदालतों, शासन-तंत्र आदि में अंग्रेजी की जगह उसकी भाषा का चलन हो। जातीय प्रदेशों में अंग्रेजी की जगह वहाँ की भाषाओं का व्यवहार हो। जनता के लिए यह अब भी ज्वलंत प्रश्न बना हुआ है और अगस्त, सन् 1947 के राजनीतिक परिवर्तनों के बाद यह समस्या अभी कहीं हल होती नहीं दिखाई देती।"[4] आगे वे लिखते हैं "भारतेंदु हरिश्चंद्र, सुब्रह्मण्यम भारती, वीरेशालिंगम्, वल्लत्तोल आदि साहित्यकारों ने जो संघर्ष आरंभ किया था, उसे तब तक जारी रखना चाहिए जब तक अंग्रेजी को हटाकर भारतीय भाषाओं को उनके उचित अधिकार न दिला दिए जाएँ। यह संघर्ष हमारे राष्ट्रीय चरित्र, राष्ट्रीय गौरव और आत्मसम्मान की सुरक्षा के लिए संघर्ष है, यह समानता और परस्पर सहयोग के आधार पर भारतीय जनता की एकता को दृढ़ करने के लिए संघर्ष है।"[5] मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षा मंत्री के रूप में पदभार सँभाला। मौलाना आज़ाद

स्वयं एक शिक्षक थे। अतः शिक्षा में उनकी विशेष रूचि थी। उन्होंने शिक्षा मंत्री के रूप में स्वतंत्र भारत की शिक्षा नीति की आधारशिला रखी। उस समय कई संस्थाएँ बनाई गई जैसे विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद्, उच्च टेक्नालॉजी संस्थान, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग। उन्होंने मानव शिक्षा के लिए ललित कलाओं के विकास पर भी विशेष बल दिया तथा साहित्य अकादेमी, संगीत नाटक अकादेमी, एवं ललित कला अकादेमी आदि राष्ट्रीय अकादमियों की स्थापना उनके मंत्रित्व काल में हुई। विनोबा भावे महान चिंतक और साधक थे। वे स्वयं संस्कृत और प्राचीन शास्त्रों के अधिकारी पंडित होने के साथ-साथ 16 भाषाओं के ज्ञाता थे। उनके शिक्षा प्रणाली में भाषा संबंधी विचार इस प्रकार है- "जनसेवा के लिए मातृभाषा का ज्ञान, देशभक्ति के लिए हिंदी भाषा ज्ञान और धर्म एवं तत्त्व ज्ञान के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक हो।"[6] उन्होंने जंगम विद्यापीठ में कहा था–"पाठशालाओं में शिक्षा का माध्यम उस प्रांत की प्रदेश भाषा ही होनी चाहिए।"[7] पं० दीनदयाल उपाध्याय भारत की शिक्षा व्यवस्था में भाषा के संबंध में लिखते है "भारत जैसे बहुभाषी देश के लिए प्रत्येक विद्यार्थी को देश की कम-से-कम दो भाषाओं का ज्ञान तो आवश्यक है ही। यदि इसे बोझ भी माना जाए तो एक बड़े देश के वासी होने के नाते हमें यह बोझ उठाना ही होगा। इन दो भाषाओं में एक हिन्दी है।"[8]

इस प्रकार प्रसिद्ध एवं महान शैक्षिक चिंतकों के विचार पर गहनता से विमर्श किया जाए तो शिक्षा के माध्यम से बालक के सर्वांगीण विकास में भाषा की अहम भूमिका रहती है। सभी चिंतकों का मानना है कि बालक की प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा या स्थानीय भाषा में होनी चाहिए ताकि बालक को स्वतंत्र चिंतन का अवसर मिल सके साथ ही वे भावी जीवन में राष्ट्र-निर्माण में सहयोगी बन सके। शिक्षा द्वारा आत्मनिर्भरता के लिए व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा का विकास अनिवार्य है। भारत की शिक्षा नीतियों में निरंतर तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षा पर बल दिया गया है। 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020' में निश्चित रूप से सभी प्रकार के शैक्षिक चिंतन का समावेश मिलता है। शिक्षा का माध्यम किस भाषा में होना चाहिए साथ ही अन्य भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को किस प्रकार भारतीय शिक्षा व्यवस्था में उपयोग में लाया जा सकता है, इन सभी से संबंधित प्रावधान किए गए हैं। 'नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' में सभी भारतीय भाषाओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। इस शिक्षा नीति में पूर्ववर्ती शिक्षा नीतियों की तुलना में बहुत अधिक विस्तार से चिंतन-मनन किया गया है। इस नीति के अध्याय-4, अध्याय-22 में भाषा पर मुख्य रूप से चिंतन-मनन किया गया है। मातृभाषा या स्थानीय भाषा को प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक और भावी शिक्षा के लिए भी यथासंभव भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए, ऐसा प्रावधान किया गया है। अध्याय-4 में 'बहुभाषावाद और भाषा की शक्ति' के अंतर्गत पाँचवी कक्षा तक संभव हो तो आठवीं कक्षा तक का माध्यम मातृभाषा या स्थानीय भाषा को ही निर्धारित किया गया है। देश भर की सभी क्षेत्रीय भाषा और विशेष रूप से संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित सभी भाषाओं के संवर्द्धन, संरक्षण एवं विकास पर बल दिया गया है। बहुभाषावाद, राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए त्रि-भाषा फार्मूला को लागू किया जाना चाहिए। भारत की राष्ट्रीय पहचान एवं समृद्ध धरोहर से परिचित कराने के लिए 'द लैंग्वेजेज ऑफ इंडिया', 'एक भारत-श्रेष्ठ भारत' जैसी गतिविधियों का आयोजन किया जाना चाहिए। इस शिक्षा नीति में भारत की शास्त्रीय भाषाओं संस्कृत, तमिल, तेलुगू, कन्नड़, मलयालम के साहित्य से

भी युवा पीढ़ी को परिचित कराने का प्रावधान है। साथ ही पालि, फारसी, प्राकृत आदि भाषाओं को भी विकल्प के रूप में सीखने का प्रावधान किया गया है। इसमें विभिन्न विदेशी भाषाओं अंग्रेज़ी, जापानी, फ्रेंच, जर्मन, कोरियाई आदि के अध्ययन पर ध्यान दिया गया है। अध्याय-22 में भारतीय भाषाओं, कला और संस्कृति के संवर्द्धन की बात कही गई है। भाषा संस्कृति से जुड़ी हुई है। संस्कृति हमारी भाषाओं में ही समाहित है। इस शिक्षा नीति में भाषा संबंधी विशेष प्रावधान किए गए हैं। शिक्षा के माध्यम से सभी समुदायों की कला संस्कृति एवं भाषा का संरक्षण, संवर्द्धन, प्रसार संभव है। यूनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को 'लुप्तप्राय' घोषित किया है। यह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है क्योंकि एक भाषा के विलुप्त होने का अभिप्राय है उस समाज की संस्कृति का समाप्त होना। शिक्षा नीति में भाषा, कला और संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए तथा बहुभाषिकता को प्रोत्साहन देने के लिए त्रि-भाषा सूत्र के क्रियान्वयन की बात की गई है। इस शिक्षा नीति में प्रथम बार भारत की विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध समृद्ध साहित्य को अनुवाद के माध्यम से लाभप्रद बनाने पर बल दिया गया है।

अतः उच्च प्रशासकीय, तकनीकी, वैज्ञानिक, व्यवसायिक शिक्षा के लिए भाषा का अत्यंत महत्त्व है। जीवकोपार्जन के लिए हिन्दी के प्रोक्ताओं में वृद्धि हो, इसके लिए इस शिक्षा नीति में प्रयास किया गया है। भारतीय संस्कृति एवं धरोहर की विश्व मंच पर पहचान अनुवाद के माध्यम से संभव है। इसके लिए 'इंस्टिट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन एंड इन्टरप्रिटेशन' की स्थापना की जाएगी। भारत की वैविध्यपूर्ण संस्कृति, बहुभाषिकता एवं प्राचीन साहित्य को भाषा के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा वैश्विक स्तर पर पहुँचाया जा सकता है।

संदर्भ:

1. श्रीमन् नारायण अग्रवाल, द्वितीय सं० 1947, शिक्षा का माध्यम, शिवलाल अग्रवाल एंड कं० लि० आगरा।
2. हरिराम जसटा, प्रथम सं० 1990, आधुनिक भारत में शैक्षिक चिंतन, परमेश्वरी प्रकाशन दिल्ली, पृ० 62।
3. हमारे अतीत-भाग 3, एनसीईआरटी, पृ० 88।
4. डॉ० रामविलास शर्मा, तृतीय सं० 2003, भारत की भाषा समस्या, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृ० 68।
5. डॉ० रामविलास शर्मा, तृतीय सं० 2003, भारत की भाषा समस्या, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृ० 104।
6. हरिराम जसटा, प्रथम सं० 1990, आधुनिक भारत में शैक्षिक चिंतन, परमेश्वरी प्रकाशन दिल्ली, पृ० 108।
7. वही।
8. डॉ० महेश चंद्र शर्मा, प्रथम सं० 1994, दीनदयाल उपाध्याय : कृतित्व एवं विचार, वसुधा पब्लिकेशन्स प्रा० लि० दिल्ली, पृ० 159।
9. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

❑❑❑

1. शोधार्थी (पीएच०डी०) हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय मो० 9582140775 ई-मेल: pooja.gehlot1985@gmail.com

भाषा का प्रश्न और पूर्वोत्तर का हिंदी साहित्य

–कुसुम सबलानिया

पूर्वोत्तर राज्य प्रचुर संसाधन एवं अलौकिक प्राकृतिक वैभव की अनूठी छटा से लबरेज हैं। वर्तमान में पूर्वोत्तर भारत में आठ राज्य शामिल हैं जिनमें सिक्किम के अतिरिक्त अन्य सात राज्यों को सात बहनों की उपमा प्रदान की गई है। वे सात राज्य अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा हैं।

शोध सार

अभिव्यक्ति का मूल भाषा है| भाषा के लिए असंख्य ऐसे प्रश्न होते हैं जो अनिवार्य हैं| एक भारतीय नागरिक के रूप में, मातृभूमि की भाषा के रूप में हिंदी का जो महत्त्व है वह अद्वितीय है, अनिर्वचनीय है| भारतेंदु जी का वह कथन,' निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति के मूल' सटीक साबित होता है| सामान्य भारतीय के बोल चाल की भाषा से लगाकर साहित्य की प्रमुख भाषा और राजभाषा तक स्थापित होने में हिंदी ने बहुत लम्बी यात्रा की है| इस शोध में, पूर्वोत्तर भारत में हिंदी साहित्य के विकास की यात्रा का उल्लेख करने का प्रयास है| पूर्वोत्तर के सभी राज्यों असम, अरूणाचल, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, नागालैण्ड, और सिक्किम में अपनी अपनी विविध बोलियाँ और भाषाएँ है जो सदियों से इनकी परम्परा भी रही हैं परन्तु जिन भाषाओं की लिपि देवनागरी है, वह भाषा हिंदी न होते हुए भी उस भाषा के जरिए हिंदी भाषा का प्रचार संभव हो सका है। उदाहरण के रूप में अरूणाचल में मोनपा, मिशि, और अका, असम में मिरि, मिसमि और बोड़ो, नगालैंड में अडागी, सेमा, लोथा, रेग्मा, चाखे तांग फोम तथा नेपाली, सिक्किम में नेपाली लेपचा, भड़पाली, लिम्बू आदि भाषाओं के लिए देवनागरी लिपि है। देवनागरी लिपि अधिकांश भारतीय लिपियों की जननी रही है। अत: इसके प्रचार-प्रसार से पूर्वोत्तर में हिंदी शिक्षा सुगम हो गयी| आज पूर्वोत्तर में हिंदी साहित्य दिन प्रति दिन उत्थान पर है।

बीज शब्द – भाषा का प्रश्न, हिंदी साहित्य, पूर्वोत्तर भारत

प्रस्तावना

भाषा ही अभिव्यक्ति का माध्यम है चाहे लिखित मौखिक या सांकेतिक हो| गैर हिंदी भाषी क्षेत्र के लिए भाषा का प्रश्न और महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्यों कि उस क्षेत्र की अपनी स्वयं की भाषाई विरासत इतनी मजबूत होती है जिसमे अन्य भाषा का प्रवेश होना तक संभव नहीं होता|

भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में पूर्वोत्तर की अपनी अस्मिता अस्तित्व और भाषा की पहचान रही है जिसको देश ने बहुत बाद में जाना| हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पूर्वोत्तर का महत्त्व कहीं भी कमतर आँका नहीं जा सकता, क्यों कि भले ही इस क्षेत्र के हिंदी साहित्य के प्रति योगदान को व्यापक स्वीकृति देर से मिली किन्तु हिंदी साहित्य के प्रति निष्ठा, प्रेम और उसको स्थापित करने के प्रयास में पूर्वोत्तर कभी पीछे नहीं रहा| भले ही आचार्य राम चन्द्र शुक्ल ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में यह प्रमाणिक रूप से भले ही स्वीकार न किया हो कि हिंदी काव्य का आरम्भ सातवी शताब्दी से इस पूर्वोत्तर से ही है|(1) परन्तु उन्होंने इस पुस्तक में स्वीकार किया कि, " अपभ्रंश या प्रक्रिताभास हिंदी के पद्यों का सबसे पुराना पता तांत्रिक और योगमार्गी बौद्धों की सांप्रदायिक रचनाओं के भीतर विक्रम की सातवीं सताब्दी के अंतिम चरण का लगता है|"

विश्लेषण -

पूर्वोत्तर राज्य प्रचुर संसाधन एवं अलौकिक प्राकृतिक वैभव की अनूठी छटा से लबरेज हैं। वर्तमान में पूर्वोत्तर भारत में आठ राज्य शामिल हैं जिनमें सिक्किम के अतिरिक्त अन्य सात राज्यों को सात बहनों की उपमा प्रदान की गई है। वे सात राज्य अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा हैं। पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी साहित्य की अधिकतर विधाओं में बहुत कार्य किया गया है और वह आज तक निरंतर चल रहा है| यदि विधाओं के विश्लेषण की चर्चा की जाये तो काव्य साहित्य बहुत पहले से इन क्षेत्रोंमें है फिर गद्य साहित्य में काफी विस्तार हुआ और उसके बाद गद्येत्तर साहित्य में हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं , हिंदी पत्रकारिता से सम्बंधित पत्रिकाओं, और यात्रा संस्मरणों ने पूर्वोत्तर के हिदी साहित्य को नयी ऊंचाई दी है| इसके साथ साथ इन क्षेत्रों में स्थापित की संस्थाओं और उच्च शिक्षण संस्थानों ने हिंदी विभाग को वरीयता दे कर उनका विकास कर पूर्वोत्तर में हिंदी के नए आयाम स्थापित किये हैं| पूर्वोत्तर राज्यों में विधा वार हिंदी साहित्य की यात्रा का विश्लेषण निम्नवत है|

पूर्वोत्तर का हिंदी काव्य साहित्य- डा.हरेराम पाठक अपने लेख' आसाम में हिंदी साहित्य लेखन का आरंभिक काल में लिखते हैं कि 'यदि पूर्वोत्तर का हिंदी काव्य साहित्य- आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार प्रमाणित हो कि, सिद्ध-नाथों के साहित्य केवल आंचलिक शिक्षा नहीं है और जीवन की सामान्य अनुभूतियों से वह सम्बद्ध है तो सबसे प्राचीन सिद्ध सरह (वि. सं.६९०) को हिंदी का प्रथम कवि कहा जा सकता है|' आज जब सिद्ध नाथों की रचनाएँ जब सामाजिक रूप से स्वीकृति प्राप्त कर चुकी हैं तो आसाम के सिद्ध,' सहरपा' को हिंदी का प्रथम कवि माना जा सकता है|(2) इनके अलावा और भी अन्य सिद्ध आचार्य हुए हैं जिनकी रचनाएँ केवल तात्कालिक जीवन दर्शन को ही नहीं दर्शातीं अपितु मानव जीवन के साथ वे गहराई से जुडी हुई हैं| ' सहरपा' सहर प्राच्य देश आसाम के रहने वाले क्रन्तिकारी कवि हुए| इन्होने बौद्ध धर्म के पाखंडों के विरुद्ध प्रचार किया| सहरपा का दर्शन परम्पराओं से मुक्त है| वे कहते हैं कि जन्म मरण, और संसार के विषय में केवल अंदाजा लगा सकते है और कुछ नहीं, वे कहते हैं, 'जैसो जाम मरन भी तैसो, जीवन ते मालें नहीं बिशेसो'| इनकी साधनात्मक सारणियों का आगे विकास हुआ जो आगे की संत परंपरा में परिलक्षित होता है| इनके बाद सिद्धाचार्य लुइपा,(लौहित्यापाद) की कविताओं में मध्य युगीन संत काव्य दिखाई देता है| इसके बाद दरिकपा,कारुपा, कुकुरीपा जैसे संत इस पूर्वोत्तर में हुए| इन सब की

तपस्थली कामाख्या रही है| पूर्वोत्तर भारत का भक्ति साहित्य इतिहास लेख में नीलम भागी ने भक्ति काल को ५ खण्डों में विभाजित कर और विस्तार पूर्वक व्याख्या की है, इनके अनुसार वैष्णव पूर्व काल(1200-1400ई.),वैष्णव काल(1400-1650ई.), गद्यबुरंजी काल(1650-1926ई), आधुनिक(1926-1947ई.) और स्वधीनोत्तर काल (1947 के बाद)|(3) वैष्णव काल में शंकर देव ने ,धर्म जागरण के नए युग का सूत्रपात किया, शंकरदेव की अधिकांश रचनाएं भागवत पुराण पर आधारित हैं। उनके मत को भागवती धर्म कहा जाता है। उनके साहित्य के कारण कुछ समीक्षक उनके व्यक्तित्व को केवल कवि के रुप में ही सीमित नहीं करना चाहते। वे मूलतः उन्हें धार्मिक सुधारक के रुप में मानते हैं| शंकर देव की भक्ति के मुख्य आश्रय थे श्रीकृष्ण। उनकी लगभग तीस रचनाएं हैं। जिनमें से 'कीर्तनघोष' उनकी सर्वोत्कृष्ट कृति है| इस परंपरा को उनके शिष्य कवि माधवदेव हुए | वे कवि होने के साथ साथ संस्कृत के विद्वान, नाटकार, संगीतकार और धर्मप्रचारक भी थे। 'नामघोषा इनकी विशिष्ट कृति है। इस युग में अनंत कंदली, श्रीधर कंदली तथा भट्टदेव विशेष रुप से उल्लेखनीय हैं। गद्य बुरंजी काल (1650-1926 ई) में कवियों ने आश्रयदाता राजाओं का यशवर्धन किया। राजाश्रय होने के कारण इसमें धर्मनिरपेक्षिता की प्रवृति स्पष्ट रुप से देखी जा सकती है। दो सूफी काव्यों कुतुबन की 'मृगावती' तथा मंझन की 'मधुमालती' के कथानको के आधार पर दो काव्य लिखे गये। बाद में ब्रिटिश हकूमत का प्रभाव पड़ा। भक्ति साहित्य की रचना कम होती गई।अंग्रेजों के समय में विदेशी मिशनरियों के यहाँ काम करने के कारण फिर से आंचलिक बोलियों में काम ज्यादा होने लगा पर इस समय तक पूर्वोत्तर की प्रकृति की मनोहारी छटा हिंदी कविता में दिखने लगी थी| वैसे तो अज्ञेय इस समय में हर विधा में पूर्वोत्तर को परिलक्षित कर रहे थे तो उनकी कविता भी इससे अलग कैसे रहती| उनकी पावस प्रात, शिलोंग और दूर्वांचल जैसी कवितायेँ, पूर्वोत्तर की अद्वितीय छटाओं को दिखाती हैं|(4) पूर्वोत्तर में हिदी कविता को विस्तार देने में वर्तमान युग में चिरंजीव लाल जैन, नवारुण वर्मा जैसे कवियों का भी योगदान है और पूर्वोत्तर में हिंदी की कई संस्थाएं स्थापित होने के बाद आज तक इसका उन्नयन जारी है|

पूर्वोत्तर का हिंदी गद्य साहित्य- पूर्वोत्तर भाग में शंकरदेव ने काव्य के इतर अपने उपन्यासों, नाटकों आदि में हिंदी को प्रमुखता दी जिसको आज सार्वभौमिक स्वीकृति मिल रही है| इसके अतिरिक्त १७९४ ई. के समय में श्रीकांत सुर्याविप्र, १८३२ ई. में यज्ञराम खारघरिया फुकन ने हिंदी सिखाने के लिए वृहद् अभियान चलाया| उसके बाद भुवन चन्द्र गईते जैसे साहित्यकारों ने हिंदी को पूर्वोत्तर में एक नयी दिशा दी| अज्ञेय, देवेन्द्र सत्यार्थी, श्री प्रकाश मिश्र, विष्णु चन्द्र शर्मा, श्रीधर पाण्डेय, रीतामणि वैश्य आदि ने हिदी गद्य में पूर्वोत्तर को सम्मिलित कर पूर्वोत्तर के हिंदी साहित्य को मजबूत करने का काम किया| अज्ञेय की जयदोल, नीली हंसी, हिली बोन की बतखें, मेजर चौधरी की वापसी और नगा पर्वत की घटना जैसी कहानियां पूर्वोत्तर को केंद्र में रख कर लिखी गयी हैं|(5) देवेंद्र सत्यार्थी के 'ब्रह्मपुत्र' से शुरू करके श्रीप्रकाश मिश्र के उपन्यास 'रूपतिल्ली की कथा' तक इन उपन्यासों में मणिपुर, मिजोरम, मेघालय और असम की बेहतरीन छवियाँ पूरी सहानुभूति के साथ उकेरी गई हैं. इन उपन्यासों में पूर्वोत्तर के अधुनिक इतिहास, लोकजीवन, भाषा, संस्कृति आदि को लोककथाओं के साथ गूँथकर बहुत ही रोचक ढंग से पेश किया गया है|

पूर्वोत्तर का गद्येत्तर साहित्य- पूर्वोत्तर क्षेत्र में हिदी साहित्य की उत्थान में हिदी कविता, उपन्यास, आदि के अतिरिक्त, पत्रिकाओं की महती भूमिका रही है| इसमें साहित्यिक पत्रिकाओं के साथ साथ हिदी पत्रकारिता की पत्रिकाएं भी महत्त्वपूर्ण साबित हुई हैं| इसके अलावा यात्रा वृतांतों ने पूर्वोत्तर को केवल बाकी देश से ही नहीं अपितु पूरे विश्व को पूर्वोत्तर की प्रकृति से जोड़ा है| अज्ञेय के यात्रा वृतांत,'अरे यायावर रहेगा याद (१९५३)' में पूर्वोत्तर की संस्कृति की अद्वितीय झलक दिखती है|(6) कृपा शंकर चौबे अपने लेख,'पूर्वोत्तर की भाषाओँ और हिंदी के सेतुबंध' में बहुत विस्तार से पत्रिकाओं की भूमिका की व्याख्या करते हैं| वे लिखते हैं कि, "पूर्वोत्तर की भाषाओं के साहित्य की हिंदी में जबर्दस्त उपेक्षा हुई है। इस उपेक्षा के खिलाफ जिन पत्रिकाओं ने पिछले दो-तीन दशकों के दौरान निरंतर रचनात्मक संघर्ष किया, वे हैं-उलुपी, महिप और समन्वय पूर्वोत्तर। वैसे उत्तरकाल, पूर्वांचल प्रहरी, सेंटिनल, प्रातः खबर और दैनिक पूर्वोदय भी यदा-कदा पूर्वोत्तर के साहित्य को हिंदी में अनूदित कर लाते रहे हैं, किंतु सुचिंतित तरीके से हिंदी और पूर्वोत्तर में भाषा सेतुबंधन का काम उलुपी, महिप और दैनिक पूर्वोत्तर आदि ने ही किया है"।(6) इसके अलावा मणिपुर हिंदी परिषद् की पत्रिका महिप, अरुण प्रभा, मेघालय दर्पण, असम प्रदीप का भी उल्लेखनीय योगदान है| पूर्वोत्तर के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाली संस्थाएं- पूर्वोत्तर में हिंदी साहित्य के विश्लेषण को, उन संस्थाओं के योगदान को याद किये बिना पूरा नहीं किया जा सकता जिन्होंने आधुनिक काल (१९२६) के समय से पूर्वोत्तर क्षेत्र में हिंदी को पुनर्जीवित किया है| जब सन १९३४ ई में 'अखिल भारतीय हरिजन सेवा संघ' की स्थापना हेतु महात्मा गांधी असम आए। उन्होंने जगह-जगह संबोधनों में असमिया को हिंदी से परिचित होने की बात कही थी, उनके प्रत्युत्तर में गड़ मुड़ सर्वाधिकार श्री श्री पीतांबर देव गोस्वामी ने सूचित किया था कि 'यहां हिंदी सिखाने वालों की कमी है। अत: यदि यह व्यवस्था हो जाए, तो हम हिंदी शिक्षा की व्यवस्था करेंगे।' इससे गांधी जी ने संतुष्ट होकर बाबा राघवदास को हिंदी प्रचारक के रूप में नियुक्त करके असम भेजा। उनके संतमय, तेजोमय तथा तपस्वी जीवन से पूर्वोत्तर सदा गौरवान्वित है।

पूर्वोत्तर में हिंदी साहित्य में योगदान करने वाली सस्थाएं - वर्तमान में पूर्वोत्तर भारत में आठ राज्य शामिल हैं जिनमें सिक्किम के अतिरिक्त अन्य सात राज्यों को सात बहनों की उपमा प्रदान की गई है। वे सात राज्य अरुणाचल प्रदेश, असम, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा हैं। इन आठ राज्यों के विकास के लिए सन् १९७१ में केन्द्रीय संस्था के रूप में पूर्वोत्तर परिषद के गठन के बाद से भारत सरकार ने इस क्षेत्र में हिंदी की प्रगति के लिए प्रभावी योजना बनाना आरम्भ किया। पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी के प्रचार एवं प्रसार में केन्द्रीय हिंदी संस्थान का योगदान भी उल्लेखनीय है| संस्थान के तीन केन्द्र गुवाहाटी, शिलांग तथा दीमापुर में स्थित हैं। ये तीनों केन्द्र अपने-अपने कार्य क्षेत्रों के राज्यों में हिंदी के प्रचार एवं प्रसार के विशेष कार्यक्रम चलाते हैं|हिंदी साहित्य सम्मेलन की ओर से, मणिपुर में , नागालैंड राष्ट्र भाषा प्रचार समिति की और से नागालैंड में, मिजोरम हिंदी प्रचार सभ द्वारा मिजोरम में , पूर्वोत्तर हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा मेघालय एवं त्रिपुरा में हिंदी का प्रचार प्रसार हुआ है| इसके अतिरिक्त , असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति गुवाहाटी एवं पूर्वोत्तर राज्यों में स्थापित केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के हिंदी विभाग भी बहुत

अद्वतीय कार्य कर रहे हैं|

शोध उद्देश्य और संभावनाएं- इस शोध पत्र का उद्देश्य पूर्वोत्तर राज्यों में हिंदी भाषा के लिए किये गए कार्यों को सामने लाना है जिससे पता चल सके कि कितने प्राचीन समय से ही भारत का यह भाग हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं को ले कर उन्नति करता रहा है| अंग्रजों के शासनकाल के बाद जो हिंदी भाषा कि अवनति पूर्वोत्तर में हुई है उसका भी उल्लेख किया गया है और तब से अभी तक इस क्षेत्र में हिदी साहित्य को बढ़ावा देने के लिए जो कार्य किये जा रहे हैं उनका भी उल्लेख है| परन्तु आज भी चुनौतियाँ कम नहीं हैं| पूर्वोत्तर में हिंदी सामान्य जन मानस में इसलिए नहीं पहुंची कि वो सर्व स्वीकार्य है अपितु इसलिए पहुंची कि हिंदी भाषी लोग वहां आजीविका के लिए , व्यापार इत्यादि के इन प्रदेशों में पहुंचे| आज आवश्यकता है है इन प्रदेशों में निवास करने वाले स्थानीय जन भी हिंदी साहित्य को अपना बनायें और हिंदी के क्षेत्र में अपने पूर्वोत्तर राज्यों को और देश को गौरवान्वित अनुभव करने का अवसर दें| निष्कर्ष – इस प्रकार यह निसंदेह कहा जा सकता है कि पूर्वोत्तर में हिंदी साहित्य की जड़ें बहुत गहरी हैं| हिंदी साहित्य के प्रारंभिक काल से लेकर आज तक पूर्वोत्तर में हिंदी साहित्य की समृद्ध परम्परा बनी हुई है| स्वतंत्र्य सघर्ष काल काल में भले ही हिदी साहित्य का वाट वृक्ष यहाँ थोडा सा मुरझाया हो परन्तु आज भी वही यथावत अपनी छाया में केवल हिंदी को ही नही अपितु आंचलिक भाषाओँ को भी स्वयं से जोड़ कर उनको पुष्पित और पल्लवित कर रहा है| वह दिन दूर नहीं जब पूर्वोत्तर के क्षेत्रीय भाषी साहित्यकार भी हिंदी की मुख्य धारा से जुड़ कर अपना मुख्य स्थान बनायेंगे|

सन्दर्भसूची

1. आचार्य राम चन्द्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास – (प्रकरण 1 – सामान्य परिचय)
2. डॉ. हरेराम पाठक – असम में हिंदी साहित्य लेखन का आरंभिक काल (शोध आलेख- कंचनजंघा- वर्ष -1 , अंक 2, जुलाई- दिसंबर 2020)
3. नीलम भागी भक्तिकालीन साहित्य का इतिहास (पूर्वोत्तर भारत का भक्ति साहित्य)
4. https://neelambhagi.blogspot.com/2019/11/blog-post.html
5. अज्ञेय, - सम्पूर्ण कहानियां (राजपाल $ संस- 2014 प्रष्ठ 21)
6. अज्ञेय, - सम्पूर्ण कहानियां (राजपाल $ संस- २०१४ प्रष्ठ 438 से 460 तक)
7. अज्ञेय – अरे यायावर रहेगा याद (राज कमल प्रकाशन प्रकाशित वर्ष 2019)
8. कृपा शंकर चौबे – पूर्वोत्तर की भाषाओँ और हिंदी के सेतुबंध- लेख https://www.amarujala.com/columns/opinion/bridge-between-northeast-language-and-hindi-hindi

❑❑❑

1. लेखिका शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय ईमेल- kusumsabal9@gmail.com संपर्क - 8802324084

भाषा का प्रश्न और हिंदी सिनेमा

–डॉ. भगवान गव्हाडे

जहाँ तक भारतीय सिनेमा का सवाल है, वहाँ हिंदी सिनेमा अधिक लोकप्रियता हासिल कर चुका है। दक्षिण भारत के (टॉलीवूड) सिनेमा की तुलना में मध्य और उत्तर भारत में (बॉलीवूड) सिनेमा का ही अधिक बोलबाला दिखाई देता है। यहीं नहीं पाश्चात्य देशों में निर्मित (हॉलीवूड) सिनेमाओं के मुकाबले बॉलिवूड के हिंदी सिनेमा को लोग अधिक मात्रा में पसंद करते हैं।

शोध सारांश:

भाषा मनुष्य के भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। भाषा के बिना मनुष्य के अंतर्बाह्य संवेदनाओं तथा व्यक्तित्व का विकास असंभव है। मनुष्य ने जिस अनुभव ज्ञान के आधार पर शोध-अनुसंधानपरक उपलब्धियाँ हासिल की है, उन उपलब्धियों ने भौतिक सुख-सुविधाओं में अपार श्री वृद्धि की है। जिससे हमारा जीवन अधिकाधिक आनंदमय हो गया है। समाज भाषा वैज्ञानिकों ने कहा है कि भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा और बहरा होता है। इसीलिए राष्ट्र की पहचान के लिए राष्ट्रभाषा की आवश्यकता होती है। भारत जैसे विशाल देश में बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक एवं बहुधार्मिक लोग निवास करते हैं। सभी की अपनी जातीय अस्मिता और अलग अस्तित्व है। फिर भी यहाँ अनेकता में एकता के दर्शन होते हैं। यह बात सर्वविदित है कि विभिन्न जाति-जनजातियों में विभाजित हमारा राष्ट्र एकता, अखंडता, समता, भाईचारा और सौहार्द्रपूर्ण शांतिमय जीवन जीता आया है।

विश्व में भाषा परिवारों की संख्या यद्यपि अभी तक अनिश्चित है, क्योंकि फ्रेडरिक, मूलर आदि विद्वान जहाँ 100 भाषा परिवारों की कल्पना करते हैं, वहाँ अन्य विद्वानों की कल्पना 250 परिवारों तक जा पहुँचती है। विश्व में चार भाषा परिवार विद्यमान हैं। उनमें भारोपीय भाषा परिवार, द्रविड भाषा परिवार, तिब्बत-चीनी भाषा परिवार और आस्ट्रिक भाषा परिवार का उल्लेख मिलता है। हमारे देश में भारोपीय भाषा व्यवहार और साहित्य की भाषा होने के कारण उसका दायरा बहुत व्यापक है।

भारत में 1961 की जनजगणना के अनुसार लगभग 1652 मातृभाषाएँ अर्थात् बोलियाँ प्राप्त हुई हैं। इन्ही बोलियों के योगदान से ही मुख्य भाषाएँ बनती हैं। भाषाओं के अंतर्गत समाहित बोलियों के शब्दों को निकाल दिया जाए तो भाषा की शक्ति, सामर्थ्य और प्रभाव धाराशाई हो जाएगा।

जहाँ तक भारतीय सिनेमा का सवाल है, वहाँ हिंदी सिनेमा अधिक लोकप्रियता हासिल कर चुका है। दक्षिण भारत के (टॉलीवूड) सिनेमा की तुलना में मध्य और उत्तर भारत में (बॉलीवूड) सिनेमा का ही अधिक बोलबाला दिखाई देता है। यहीं नहीं पाश्चात्य देशों में निर्मित (हॉलीवूड) सिनेमाओं के मुकाबले बॉलीवूड के हिंदी सिनेमा को लोग अधिक मात्रा में पसंद करते हैं। इसके बहुआयामी प्रस्तुतिकरण के कारण हिंदी सिनेमा प्रचंड लोकप्रियता के शिखर को छू रहा है। उसके बहुआयामी गीत, संगीत, रंग, रूप, प्रकाश संयोजन, पार्श्व संगीत,

अभिनय, निर्देशन, भौगोलिक स्थान निर्धारण, गाँव-शहर-महानगर तथा देश-विदेश के वातावरण के चित्राण के कारण यह सिनेमा सभी की पहली पसंद बन गया है। इन सभी बातों से भी अधिक मौलिक और महत्वपूर्ण बात तो यह है कि हिंदी सिनेमा ने अपनी भाषा और संवाद योजना में आमूलचूल लचिलापण लाकर सिर्फ भारत ही नहीं अपितु वैश्विक परिदृश्य को अपनी ओर आकर्षित किया है। यही कारण है कि आज विश्व के सौ से भी अधिक देशों के लोग हिंदी सिनेमा को बेहद पसंद करते हैं।

बीज शब्द: भाषा, भावाभिव्यक्ति का साधन, अस्मिता, बहुभाषिक राष्ट्र,हिंदी सिनेमा की लोकप्रियता, कलाओं का अंतर्संबध, लोकजागरण, बोलियों का योगदान, वैश्विक लोकप्रियता।

भूमिका:

मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं में रोटी, कपड़ा और मकान की आपूर्ति होने के पश्चात वह मनोरंजन की तरफ मुड़ता है। अपने जीवन स्तर को बढ़ाते हुए वह कला प्रेमी बनता है। शायद इसीलिए मनुष्य के सर्वांगिन व्यक्तित्व निर्माण और विकास में कलाओं का अनन्यसाधारण महत्व है। भारतीय ज्ञानशाखाओं में कला क्षेत्र का स्वतंत्र अस्तित्व है। चौंसठ कलाओं में जिस प्रकार साहित्य, संगीत, नृत्य, अभिनय, चित्रकला, गीत, मूर्तिकला, वाक्पटूता, हास्य-विनोद, बाह्य साज श्रृंगार आदि को वरियता दी गई है, उन सभी को ललित कलाओं के अंतर्गत रखा जाता है। भारतीय संस्कृत साहित्य में काव्यकला और नाट्यकला का प्राचीन स्वरूप, उद्भव और विकास सभी को ज्ञात है। भारतीय विद्वानों ने इसीलिए नाटक को पंचम वेद कहा है। क्योंकि नाटक में सभी ललित कलाओं का अंतर्संबंध परिलक्षित होता है। गीत, संगीत, संवाद, भाषा, साहित्य, अभिनय, प्रकाश संयोजन, नृत्य, हास्य-व्यंग्य आदि सभी कलाओं का मणिकांचन संयोग नाटक में प्राप्त होता है। रस, अलंकार, छंद, औचित्य, प्रतिक, बिंब एवं साधारणीकरण आदि का निरूपण इसी नाट्य विधा का महत्वपूर्ण विवेचन अंग है। कहने का तात्पर्य यह है कि सिनेमा ने नाटक के सभी अंग-प्रत्यंग का अनुसरण और अनुकरण करके अपने आप को विकसित और लोकप्रियता के शिखर पर पहुँचाया है। मैं तो यह कहना चाहूँगा कि नाटक से कई आगे का रास्ता सिनेमा ने तय किया है। नाटक का मंचन वीडियो रेकॉर्डिंग करने पर उसकी प्रभावात्मकता कम हो जाती है, लेकिन सिनेमा के माध्यम से हम उसकी प्रासंगिकता, उपादेयता और मौलिकता का जतन कर उसे कई सदियों तक संजोय रख सकते हैं। इसी क्रम में हमें उसकी 'भाषा' को केंद्र में रखकर विचार करना होगा। क्योंकि सहज, सुंदर, आलंकारिक तथा सौष्ठवपूर्ण भाषा के बिना नाटक हो या सिनेमा अपना प्राणतत्व खो देता है। सिनेमा के भाषा रूपी प्राणतत्व का महत्व अनन्यसाधारण होता है। जिस पर विस्तार के साथ यहाँ विचार करना होगा।

सिनेमा और कला:

पूरे विश्व में आधुनिक लोकप्रिय कला के रूप में सिनेमा की तरफ देखा जाता है। सिनेमा एक अद्भुत रोमांचक कला रूप है। अन्य कलाओं की तरह यह भी हमारे समय, समाज, संस्कृति और अर्थतंत्र की बुनियादी तथा अनिवार्य आवश्यकता है। भारतीय सिनेमा के माध्यम से हम अपने संस्कार, संस्कृति और जीवन दर्शन को दुनिया के सामने प्रस्तुत कर सकते हैं। सिनेमा हमारे विभिन्न सामाजिक प्रश्नों, चिंताओं, जिज्ञासाओं और भविष्यकालीन संभावनाओं को अपनी सृजनशीलता का एक अनिवार्य अंश बनाता रहा है। परंतु इसके लिए अनिवार्य शर्त यह भी है कि वह सिनेमा कला और जीवन को जोड़कर बनाया हुआ होना चाहिए। वर्तमान समय में अक्सर हम सिनेमा में अनर्गल, असंगत, अश्लिल तथा असभ्य भाषा के प्रयोग को देखते हैं, तो मन-मस्तिष्क व्यथित होता हुआ पाते हैं। इसलिए सिनेमा की भाषा सभ्य और कलात्मक होनी चाहिए। सिनेमा के संदर्भ में विनोद दास का कहना है कि - ''सिनेमा का तात्पर्य उस सबल चाक्षुष माध्यम से हैं जो स्वस्थ मनोरंजन के रूप में जीवन जगत के बुनियादी प्रश्नों की जहाँ हमें समझ और शक्ति देता है, वहीं गहरे आत्मान्वेषण के लिए उकसाते हुए हमारे मन को अनूठे और रचनात्मक आनंद से समृद्ध करता है।''1

भारतीय सिनेमा ने पूरे विश्व में अपनी अलग पहचान बनाई है। चाहे वह मुक सिनेमा हो, संगीत सिनेमा

हो या कृष्णधवल हो, अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए वह लोकप्रिय बना हुआ है। आधुनिक और उत्तराधुनिक काल में हॉलीवूड के साथ टक्कर देने में वह हमेशा सजग दिखाई देता है। भारतीय सिनेमा का एक और वैशिष्ट्य यह भी रहा है कि वह समय के साथ-साथ अपने आपको बदलता रहा है और भविष्य की संभावनाओं को भी भलिभाँति पहचानता है। कला जगत की यह अनुपम उपलब्धि कही जा सकती है। कला, संस्कृति और राष्ट्रभक्ति एक-दूसरे के परस्परपूरक उपादान है, जो हमारी स्वतंत्र पहचान को रेखांकित करते हैं। इस संदर्भ में सिनेमा के आलोचक अजय ब्रह्मात्मज का कहना है कि - ''बदलते समय के साथ सिनेमा का मिजाज बदलता रहा है। आजादी के पहले ही हिंदी फिल्मकारों ने राष्ट्रीय भावना से प्रेरित फिल्मों की शुरूआत की। गुलाम और शासित देश में आमतौर पर अतीत की शौर्यगाथाओं और विजय प्रसंगों को याद किया जाता है। साहित्य, नाटक और फिल्म जैसी विधाओं में अतीत के नायकों पर केंद्रित कहानियाँ बुनी जाती है। ये नायक हमारे अतीत के सांस्कृतिक और राजनीतिक प्रतिनिधि हो सकते हैं। तब पौराणिक और मिथकीय चरित्रों पर फिल्में बनाने का एक उद्देश्य अपनी महानता स्थापित करना भी था। मूक फिल्मों के साथ ही सवाक फिल्मों के आरंभिक दौर में ढेर सारे पौराणिक, ऐतिहासिक और मिथकीय चरित्रों पर फिल्मकारों ने फिल्में बनाई और अपनी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक अस्मिता रेखांकित की।''2 सिनेमा ने अपनी कलात्मकता को बनाए रखते हुए तत्कालीन राष्ट्रीय, सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष को भी महत्वपूर्ण मानकर अपनी प्रतिबद्धता का परिचय दिया है।

भाषा का प्रश्न और हिंदी सिनेमा:

भाषा के बिना मनुष्य का जीवन व्यर्थ है। भाषाओं की विविधता के कारण ही संपूर्ण संसार अनुगूंजित हो उठा है। जिस प्रकार प्रकृति पर बसनेवाले सजीव प्राणी, पंछी और कीट पतंग अपनी मधुर आवाज से आदान-प्रदान करते हैं, ठीक उसी प्रकार दुनिया के सभी देशों में बसनेवाले विभिन्न रंग, रूप, वंश, नस्ल, जाति, धर्म, संप्रदाय को माननेवाले मनुष्य अपनी वाणी द्वारा एक-दूसरे की भावना, विचार और अभिव्यक्ति को जानते हैं। 'भाषा' के बारे में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए वरिष्ठ भाषाविद् डॉ. राजमल बोरा का कहना है कि - ''भाषा अभिव्यक्ति का प्रधान साधन है। यों तो सारी अभिव्यक्तियां कलाओं के माध्यम से होती हैं, किन्तु कलाओं में भाषा की स्थिति विशेष होती है। भाषा में कलागत विशेषताएँ भी पायी जाती हैं। इसीलिए भाषा अपने आप में कला भी है।''3 भाषा में वे सारे तत्व मौजूद होते हैं, जिसे विज्ञान की कसौटी पर भी परखा जा सकता है। इसलिए कहना न होगा कि विश्व की सबसे अधिक प्रामाणिक, प्रमाणित, परिनिष्ठित और वैज्ञानिक भाषा सिर्फ हिंदी ही है। क्योंकि हिंदी में जैसा लिखा जाता है, वैसा ही बोला जाता है। यह कुशलता और मौलिकता किसी और भाषा में मिलना असंभव सा प्रतित होता है। कला होने के कारण भाषा नियमों से मुक्त होने का उपाय भी करती रही है।

यदि सिनेमा की भाषा पर ध्यान केंद्रित करते हैं, तो यह बात स्पष्ट रूप से दिखाई देती है कि भारतीय परिदृश्य में वहीं फिल्में लोकप्रिय रही है, जिनकी भाषा और संवादों में कमाल की मधुरता, सुंदरता और संवेदनशीलता के लक्षण हैं। दर्शकों ने उन्हीं फिल्मों को सराहा है जिसमें भारतीय जीवन मूल्यों को महत्व देकर फिल्मांकन किया है और उन फिल्मों को दरकिनार किया है जिसकी भाषा अश्लिल, अभद्र, द्वीअर्थी, असंगत तथा अप्रासंगिक रही है। इसलिए हिंदी सिनेमा के एक शताब्दि बितने के बाद भी भाषा का प्रश्न कभी उपस्थित नहीं हुआ है। फिल्में वहीं कालजयी ठहरती है, जिसमें जीवन का सार, प्रतिबिंब और भविष्य का सपना दिखाई देता हो। कुछ फिल्में ऐसी बनी हैं, जिसे देख-देख कर एक पूरी पीढ़ी ने अनुकरण करके प्रेरणा ग्रहण कर ली है। दूसरी ओर हमारे शिक्षा और साहित्य जगत से संबंधित लोग सिनेमा के बारे बिल्कुल ही गंभीर नहीं है। उनकी दृष्टि से सिनेमा के लिए गीत, कथा, पटकथा लिखना दोयम दर्जे का काम है। इस संदर्भ में वरिष्ठ साहित्यकार और फिल्म लेखक राही मासूम रज़ा का कहना है कि - ''मेरे विचार से फिल्म, साहित्य की सबसे सशक्त विधा और अभिव्यक्ति का माध्यम है। हमारे विश्वविद्यालय दूसरी और तीसरी श्रेणी की कविताओं और कहानियों पर शोध प्रबंध लिखवाते हैं लेकिन साहित्य के किसी विभाग में फिल्म पर ध्यान देने का कष्ट नहीं उठाया जाता।''4 यह बात सौ फ़ीसदी सही भी है कि हिंदी के नामचीन साहित्यकारों

और आलोचकों ने भी फिल्मी दुनिया की ओर ध्यान नहीं दिया, जिसके कारण साहित्य और सिनेमा का जो रिश्ता गहरा होना चाहिए था, वह नहीं हो पाया है। फिल्म को भारतीय समाज ने अनेक प्रतिष्ठित शायर दिए हैं, उनमें हसरत जयपुरी, गुलशन बावरा, आनंद बख्शी, वर्मा मलिक, खुदा बेहारी, राजेन्द्र कृष्ण, गुलज़ार, प्रदीप, बशीर बद्र, कैफ़ी आजमी, फ़िराक गोरखपुरी, फ़ैज अहमद फैज, निदा फाजली, दुष्यंत कुमार, शकील बदायूंनी आदि अनेकों ने फिल्मों की भाषा को समृद्ध करने का प्रयास किया है। फिल्मों की भाषा को सिर्फ संवाद योजना ही तय नहीं करती बल्कि उन फिल्मों के गाने भी चार चाँद लगाने का कार्य करते हैं। हमारे देश में आम तौर पर हिंदी साहित्य विधा की कहानियों और उपन्यासों पर फिल्म बनाने का रिवाज नहीं है। ऐसी स्थिति में हम किसकी ओर उम्मीद की नजरों से देखें? तीसरी कसम (मारे गए गुलफाम), आक्रोश, यही सच है, तिरिया चरित्र, रजनी गंधा, जीना यहाँ, शतरंज के खिलाड़ी, सद्गति, नौकर की कमीज, गोदान, सारा आकाश, आधे-अधूरे, तमस, हजार चौरासी की माँ, डाक बंगला, काली आंधी, मौमस, समय की धारा, चित्रलेखा, धर्मपुत्र आदि चालीस-पचास कथा, उपन्यासों को छोड़ दिया जाए तो ज्यादातर 'पॉकेट बुक्स' उपन्यासों पर फिल्में बनती है, जिनका कोई साहित्यिक सरोकार और योगदान नहीं होता है।

हिंदी सिनेमा में हिंदी साहित्य संस्कृति तो मिलेगी जरूर जिनमें कृष्ण चन्दर, इसमत चुगताई, यशपाल, अमृतलाल नागर, भैरव प्रसाद गुप्त, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मोहन राकेश, फणीश्वरनाथ रेणु, शानी, सुरेन्द्र प्रकाश, रामलाल, राही मासूम रज़ा और रजिआ सज्जाद जहीर की कहानियों में। लेकिन हिंदी साहित्य का संपूर्ण जगत हिंदी सिनेमा से कटा हुआ नज़र आता है। उसी प्रकार हिंदी सिनेमा को जिन महत्त्वपूर्ण निर्देशकों ने मौलिक योगदान दिया है, उनमें सत्यजीत राय, श्याम बेनेगल, गोविंद निहलानी, राज कपूर, बासु चटर्जी, बी. आर. चोपड़ा, यश चोपड़ा, करण जोहर, महेश भट्ट, संजय लीला भंसाली, प्रकाश झा, विशाल भारद्वाज, गुरूदत्त, सूरज बडजात्या, अनुराग कश्यप, चेतन आनंद, इस्माईल मर्चंट, बिमल राय आदि का नाम बड़े गौरव के साथ लिया जा सकता है।

वैसे तो साहित्य और साहित्यकारों का अपना कोई दायरा नहीं होता है, लेकिन वहीं पर सिनेमा और पटकथा लेखक के साथ ऐसी अनेक सीमाएँ होती है। इस संदर्भ में फिल्म गीतकार गुलजार का कहना है कि - ''किसी भी लिटरेरी वर्क को टोटली एडाप्ट नहीं किया जा सकता है। इसकी वजह यह है कि सिनेमा को एक बहुत बड़े दर्शक वर्ग को खुश करना होता है, जिसमें कम पढ़े-लिखे, अनपढ़, अमीर-गरीब, श्रमजीवी, बुद्धिजीवी सभी शामिल होते हैं । इन सबको एक साथ खुश करने की कोशिश में सिनेमा को साहित्य में मिलावट करनी ही पड़ती है।''5 साहित्यिक कृतियों की जो भाषा होती है वह निश्चित रूप से स्तरिय होती है। खास तौर से मुख्यधारा के साहित्य में यह भाषा का कलात्मक और रूमानी स्वरूप स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। लेकिन जहाँ तक बीसवीं सदी के अंतिम दशक और इक्कीसवीं सदी के प्रथम तथा द्वितीय दशक में साहित्यिक रचनाओं की भाषा में बहुत बड़ा विलक्षण बदलाव दिखाई देता है। उसकी भाषा में सिर्फ खुरदरापण ही नहीं है बल्कि तीखे तेवर भी नज़र आने लगे हैं। अस्मितामूलक साहित्य में यह बात विशेष तौर पर देखने को मिलती है। जाहिर सी बात तो यह है कि सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित, वंचित, शोषित, प्रताड़ित समुदाय अपने जीवन की भोगी हुई त्रासदी को बिना किसी लाग लपेट के जस का तस अभिव्यक्त करने लगा है। इसलिए हिंदी सिनेमा की भाषा में भी गजब का परिवर्तन आया है। इस संदर्भ में अभिषेक कुमार सिंह कहते हैं कि - ''फिल्मों में हिंदी, उर्दू, अरबी-फारसी के मिले जुले रूप भी देखे जा सकते हैं। कुछ ऐसी फिल्में जो किसान जीवन से जुड़ी रही हैं, जिन फिल्मों में गांव को दिखाया गया है, उन फिल्मों की भाषा में हिंदी का शुद्ध अथवा मानक स्थायी रूप न होकर क्षेत्रीय बोली के रूप में प्रयोग किया गया है । इस तरह की फिल्में हिंदी प्रदेश की क्षेत्रिय बोलियों को अपने में समेटे हुए दिखती है।''6 कहने का तात्पर्य यह है कि दक्षिण भारत की हजारों फिल्में हिंदी भाषा में डबिंग होकर भारत के साथ-साथ विदेशों में भी लोकप्रिय हो रही है। इसलिए भाषा का कोई प्रश्न ही नहीं है। सन 1990 के बाद भी कई फिल्में प्रदर्शित हुई, जिनमें भारत की कई क्षेत्रिय भाषाओं का प्रयोग किया गया था। पानसिंह तोमर, उड़ता पंजाब, तन्नू वेड्स मन्नू, गैंग्स ऑफ वासेपुर, मुन्नाभाई एम.बी.बी.एस, बाजीराव मस्तानी, लगान, कबीर सिंग जैसी

फिल्मों ने हिंदी सिनेमा के साथ ही क्षेत्रिय भाषाओं का भी उपयोग बड़ी सफलता के साथ किया है। स्तरिय भाषा के संदर्भ में विनोद दास लिखते हैं कि - ''विश्व सिनेमा के परिदृश्य में भारतीय सिनेमा को बहुत आदर और सम्मान के साथ देखा जाता है। भारतीय सिनेमा के हर समर्थ फिल्मकार के पास अपनी विशिष्ट फिल्म भाषा रही है, चाहे वे सत्यजीत राय हो या ऋत्त्विक घटक, मृणाल सेन या फिर श्याम बेनेगल अथवा मणि कौल या कुमार शाहनी।''7 इन महान फिल्म निर्देशकों का योगदान सदियों तक भूलाया नहीं जा सकता।

महत्त्वपूर्ण सूझाव:

- साहित्य की तरह फिल्मों को भी पाठ्यक्रम में शामिल करके इस दिशा में एक सार्थक पहल की जा सकती है।
- श्रेष्ठ सामाजिक फिल्मों को प्रोत्साहित-प्रेरित करके स्वस्थ समाज और संस्कृति का निर्माण किया जा सकता है। इसलिए साहित्यकारों ने फिल्मी दुनिया में आने की आवश्यकता है।
- विश्व भाषाओं में निर्मित विदेशी फिल्मों का हिंदी रूपांतर (डबिंग) करके भारत के लोगों को उपलब्ध किया जाना चाहिए।
- हिंदी सिनेमा को विश्व स्तर पर बड़े पैमाने पर पहुँचाना हो तो उसका भाषाई स्वरूप स्तरिय और लोकाभिमुख बनाने की आवश्यकता है।
- हिंदी सिनेमा अपने जन्मकाल से ही बहुविध और भाषागत सार्थकता को लेकर विकसित हुआ है, लेकिन कुछेक फूहड़, अभद्र, अश्लिल फिल्मों के कारण बदनाम हुआ है, इसलिए फिल्मी भाषाओं के लिए कठोर नियम (Censor) की आवश्यकता है।

निष्कर्ष:

मनुष्य जीवन में कला और मनोरंजन का विशिष्ट तथा अनन्यसाधारण महत्व है। रोजमर्रा की जिंदगी की एकरसता से उबरने के लिए हमें अपने मनपसंद मनोरंजन की नितांत आवश्कयता होती है। इसीलिए पुरातन काल में कथा, कविता, गीत-संगीत के साथ-साथ नाटकों का महत्व रहा है। उसी नाटक की जगह आज हिंदी सिनेमा ने ले ली है। कई कलाओं का समुच्चय अथवा अन्तर्संबंध सिनेमा में पाया जाता है। सिनेमा एक ऐसी विधा है जिसे शिक्षा - दीक्षा ग्रहण करने की कोई शर्त नहीं है। अनपढ़, गँवार, गूँगा-बहरा और अंधा व्यक्ति भी रस ग्रहण कर सकता है। इसीलिए वर्तमान समय में सिनेमा ने अपनी लोकप्रियता के शिखर को प्राप्त किया है। भाषाई लचिलापन और परिवर्तनशीलता हिंदी सिनेमा की सबसे बड़ी खासियत है। हिंदी सिनेमा उत्तरोत्तर पूरे विश्व में अपनी छाप छोड़ रहा है। इसलिए भाषाई प्रश्नों को नज़रअंदाज करके उसकी अच्छाईयों को परखना चाहिए।

संदर्भ सूची :

1. भारतीय सिनेमा का अंत:करण, विनोद दास, मेधा बुक्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली - 2003, पृ. 7
2. सिनेमा समकालीन सिनेमा, अजय ब्रह्मात्मज, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2006, पृ. 48
3. भाषा विज्ञान, संपादक डॉ. राजमल बोरा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दरियागंज, नई दिल्ली, 2007, पृ. 3
4. सिनेमा और संस्कृति, राही मासूम रज़ा, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2015, पृ. 44
5. साहित्य का सिनेमाई रूपांतरण, चरण सिंह अमी (मीडिया विमर्श, सिनेमा विशेषांक -2 मार्च, 2013), पृ. 61
6. हिंदी सिनेमा और साहित्य, अभिषेक कुमार सिंह, ओड़िशा राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, संबलपुर, पृ. 3
7. भारतीय सिनेमा का अंत:करण, विनोद दास, मेधा बुक्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली, 2003, पृ. 12

❐❐❐

1. सहयोगी प्राध्यापक, हिंदी विभाग, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) मो. 9511849810
ईमेल % bhagwangavhade632 @gmail.com

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एवं बहुभाषिकता

–दीपक सोराड़ी

फाउन्डेशनल स्तर से ही बिभिन्न भाषाओं में एक्स्पोजर- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में फाउन्डेशनल स्तर से ही मनोरंजक व संवादात्मक शैली में मातृभाषा में अधिक फोकस करते हुए बिभिन्न भाषाओं में एक्स्पोजर देने की बात कही गयी है

शोध सार

प्राचीन समय से ही भाषा अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम रहा है. भाषाई कौशल(सुनना,बोलना, पढ़ना, लिखना) अभिव्यक्ति एवम आपसी संचार में सहायक होते है.इन भाषाई कौशलों के विकास में शिक्षा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है. सरकार द्वारा समय समय पर शिक्षा क्षेत्र में आये बदलाव एवम सुधारों को अपनाने के लिए विभिन्न आयोगों का गठन एवम नीतियों को लागू किया जाता है. 1986 के बाद वर्तमान में 29 जुलाई 2020 को देश में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लागू की गयी है. जो शिक्षा में नए सुधारों की वकालत करता है. इसरो प्रमुख के.कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में तैयार इस नीति का प्रमुख लक्ष्य भारत को एक वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाना है। इस नीति में भाषा के संदर्भ में भी महत्त्वपूर्ण अनुसंशाये की गयी है. जिनमे मातृभाषा में शिक्षण कार्य विशेष रूप में प्राथमिक स्तर में, विद्यालयी शिक्षा में कम से कम तीन भाषा का प्रत्येक छात्र द्वारा अध्ययन, भाषा को संस्कृति से जोड़ना, भाषा संरक्षण, बहुभाषिकता को प्रोत्साहन,अनुवादएवम विवेचना से सम्बंधित प्रयासों में विस्तार, संस्कृत भाषा के लिए विशेष प्रयास, आठवीं अनुसूची की प्रत्येक भाषा के लिए भाषा अकादमी का निर्माण, अध्ययन हेतु छात्र वृतियों की व्यवस्था करने की सिफारिश की गयी है. यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित किया है. विगत 50 वर्षो में संरक्षण के अभाव में 220 भाषाओं को खोने को देखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बहुभाषिकता पर अधिक फोकस किया गया है.

बीज शब्द-राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, बहुभाषिकता, संचार

प्रस्तावना-

भाषा चाहै होय जो, गुन गन हैं जा माहिं।
ताहीं सो उपकार जग, सबै सराहहिं ताहि।।

सुधाकर दिवेदी

दिवेदी जी की ये पंक्तियाँ भाषा की महत्ता को दर्शाती है. भाषा आपसी संचार एवम अभिव्यक्ति का एक महत्त्वपूर्ण साधन है. भारत विविधताओं जैसे धर्म, जाति, बोली, भाषा आदि से भरा हुआ देश है.यहाँ एक कहावत प्रसिद्ध है कि 'कोस कोस में बदले पानी चार कोस में बानी' जो यह दर्शाता है की हमारा देश प्राचीन समय से ही एक बहुभाषी देश रहा है. यहाँ संस्कृत, हिंदी अवधी, तमिल, कन्नड़ बंगला उर्दू आदि भाषाएँ प्राचीन समय से ही फली फूली. शायद बहुभाषी राष्ट्र होने के कारण इसे विश्व गुरु की उपाधि मिली होगी क्योंकि प्राचीन समय से ही देश से ही नहीं अपितु विदेशी जैसे चीन, तिब्बत, जापान, कोरिया, जावा ,सुमात्रा, श्रीलंका आदि देशों के छात्र भी यहाँ नालंदा, तक्षसिला आदि विश्व-विद्यालयों में विद्यार्जन के लिए आये. आज भी विदेशी छात्र यहाँ ज्ञान प्राप्त करने यहाँ आते रहते है.

भाषाई कौशल(सुनना,बोलना, पढ़ना, लिखना) अभिव्यक्ति एवम आपसी संचार में सहायक होते है.इन भाषाई कौशलों के विकास में शिक्षा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है. सरकार द्वारा समय समय पर शिक्षा क्षेत्र में आये बदलाव एवम सुधारों को अपनाने के लिए विभिन्न आयोगों का गठन एवम नीतियों को लागू किया जाता है. 1986 के बाद लगभग 34 वर्षो के लम्बे अन्तराल के बाद भारत सरकार द्वारा वर्तमान में 29 जुलाई 2020 को देश में नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लागू की गयी है. जो शिक्षा में नए सुधारों की वकालत करती है. इसरो प्रमुख के.कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में तैयार इस नीति का प्रमुख लक्ष्य भारत को एक वैश्विक ज्ञान महाशक्ति बनाना है। इस नीति में भाषा के संदर्भ में भी महत्त्वपूर्ण अनुसंशाये की गयी है.जिसमे एक बहुभाषी राष्ट्र होने के नाते बहुभाषा के संदर्भ में की गयी अनुसंशाये अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी है

साहित्य सर्वेक्षण- बहुभाषिकता के संदर्भ में पूर्व के साहित्य का सर्वेक्षण निम्नवत है-

हागेन के अनुसार दो भाषाओं का ज्ञाता द्विभाषिक कहलाता है. सामान्यतया बहुभाषिक कई भाषाओं के जानने वालो को कहते है, किन्तु दो भाषाओं का जानकार द्विभाषिक के साथ ही बहुभाषिक भी कहलाता है.

ब्लूम फील्ड के अनुसार बहुभाषिकता ऐसी स्थिति को कहा जाता है जब व्यक्ति अपनी मातृभाषा वाले समूह से अलग भाषा बोलने वाले समूह में रहने पर उस समूह की भाषा को अपनी मातृभाषा के समान प्रयोग में कुशलता प्राप्त कर लेता है.

उद्देश्य- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बहुभाषिकता के संदर्भ की गयी अनुशंसाओं का अध्ययन करना.

रिसर्च मेथेडोलोजी- संबंधित शोध पत्र में द्वितीयक स्त्रोतों जैसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, सम्बंधित शोध पत्र आदि का प्रयोग किया जायेगा.

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बहुभाषिकता विषयक की गयी प्रमुख अनुसंशाये- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषा विशेषत: बहुभाषिकता पर विशेष फोकस करते हुए निम्न अनुसंशाये प्रमुख रूप से की है-

मातृभाषा में शिक्षण- यह बहुभासिकता की दिशा में की गयी सबसे महत्त्वपूर्ण अनुसंशा है. मातृभाषा

घर में या स्थानीय समुदाय द्वारा बोली जाने वाली भाषा है. यह माना जाता है कि मातृभाषा में शिक्षण प्रारंभिक स्तर में अवधारणाओं को तेजी से सीखने में, समझने में सहायक होता है क्योकि मातृभाषा का प्रयोग घर के प्रत्येक सदस्य द्वारा किया जाता है. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लागू होने के बाद कम से कम ग्रेड 5 तक व हो सके इससे आगे ग्रेड 8 या आगे के ग्रेड के लिए भी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त की जा सकेगी. इससे प्रत्येक को कम से कम एक से अधिक भाषाओं को सीखने के अवसर प्राप्त होंगे.

फाउन्डेशनल स्तर से ही बिभिन्न भाषाओं में एक्स्पोजर- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में फाउन्डेशनल स्तर से ही मनोरंजक व संवादात्मक शैली में मातृभाषा में अधिक फोकस करते हुए बिभिन्न भाषाओं में एक्स्पोजर देने की बात कही गयी है, क्योकि विभिन्न शोध दर्शाते है कि इस स्तर के बच्चे ज्यादा तीव्रता से भाषा सीखते है. इस स्तर में सीखा गया ज्ञान आजीवन उसके साथ बना रहता है.

त्रिभाषा फार्मूला- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में संवैधानिक प्रावधान, राष्ट्रीय एकता व बहुभाषा के दृष्टिगत त्रिभाषा फार्मूला को लचीलेपन व कुछ प्रावधानों के साथ जारी रखने की वकालत की गयी है. भाषा चयन हेतु राज्यों को स्वतंत्रता, तीन में से कम से कम दो भारतीय भाषाओं की अनिवार्यता, तीन भाषाओं में राज्य व क्षेत्र के अनुरूप छात्र के द्वारा स्वयं चयन, चुनी गयी भाषा में ग्रेड 6 या 7 में बदलाव आदि प्रावधान किये गये है.इसके माध्यम से वह कम से कम तीन भाषाओं में उपलब्ध साहित्य का अध्ययन करने में सक्षम बनेगा जिसका उपयोग उसके द्वारा देश के विकास में योगदान देने में किया जा सकता है.

द्विभाषा में अधिगम सामग्री एवं शिक्षण कार्य - विज्ञान व गणित में द्विभाषा में अधिगम सामग्री, पाठ्यपुस्तकों के निर्माण द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बहुभाषिकता को बढ़ाने की बात करती है. व्यवहारिक रूप में इसके लिए शिक्षको को द्विभाषी माध्यम का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना है.

युवा भारतीयों को अपने देश की भाषाओं के समृद्ध खजाने के लिए जागरूक करना- भाषा, संस्कृति व परम्पराओं का ज्ञान शैक्षिक, सामाजिक,तकनीकी प्रगति में सहायक मानते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 विश्व के सबसे समृद्ध प्राचीन व आधुनिक साहित्य जिसमे गद्य,पद्य,संगीत फिल्म आदि शामिल है के लिए भारतीय युवाओं में जागरूकता बढ़ाने का सुझाव भी बहुभाषिकता को बढ़ाने वाला है.

'द लैंग्वेज ऑफ़ इंडिया' प्रोजेक्ट- इसके अंतर्गत छात्रो को भाषा सम्बन्धी किसी न किसी प्रोजेक्ट में अनिवार्य रूप से प्रतिभाग किया जाना है. जैसे- एक भारत श्रेष्ठ भारत जिसमे एक राज्य को दुसरे राज्य की बोली, संस्कृति, विरासत, साहित्य आदि को जानना व इसको सीखने का प्रयास करना है. इस कड़ी में हमारे राज्य उत्तराखंड का सहयोगी राज्य कर्नाटक है.

विदेशी भाषाओं के ज्ञान को प्रोत्साहन- बहुभाषिकता का ज्ञान राष्ट्रीय एवम अंतराष्ट्रीय स्तर पर आपसी संचार हेतु महत्त्वपूर्ण उपकरण की भाँति है, अत: विद्यालयी शिक्षा के अंतर्गत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में त्रिभाषा फार्मूला के अंतर्गत सभी छात्रों को दो भारतीय भाषाओं के साथ साथ एक विदेशी भाषा जैसे अंग्रेजी, कोरियाई, थाई, फ्रेंच, रुसी, जर्मन,जापानी आदि को भी सिखाने की अनुशंसा की गयी है. इसका उद्देश्य छात्रो को देश विदेश में सैर सपाटे के साथ ही वहा की संस्कृति, साहित्य, विश्व धरोहर आदि

के बारे में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने में सहायता करना है. इसके साथ ही विदेशी भाषाओं का अध्ययन सम्बंधित देश विदेश में रोजगार जैसे- ट्रांसलेटर, पर्यटन क्षेत्र में गाइड आदि व वैश्विक ज्ञान की प्राप्ति में सहायक होगा.

संस्कृत ज्ञान प्रणालियों का उपयोग – विश्व की सबसे प्राचीन एवम हमारे संविधान की आठवी अनुसूची में शामिल भाषा संस्कृत के महत्त्व सुन्दरता व प्रशंगिकता को ध्यान में रखकर इसके ज्ञान को शिक्षा प्रणाली में बढ़ावा देने की अनुसंशा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में की गयी है. संस्कृत ज्ञान प्रणाली जिसमे गणित, दर्शन, विज्ञानं, व्याकरण वास्तुकला, धातुकर्म, संगीत, राजनीती, चिकित्सा आदि का समृद्ध साहित्य शामिल है में जीवन के सभी क्षेत्रो सामाजिक आर्थिक राजनितिक पृष्ठभूमि का अनुभव ज्ञान के रूप में समाहित है. अत: संस्कृत का ज्ञान संस्कृत ज्ञान प्रणालियों के साहित्य को समझने के लिए आवश्यक है. इसके साथ ही संस्कृत विश्वविद्यालयों को बहुविषयी संस्थान बनाने के साथ ही वहा अंतरविषयी शोधकार्य को प्रोत्साहन,संस्कृत के शिक्षकों के व्यव्सयिक विकास के लिए चार वर्षीय बहुविषयक बी.एड. डिग्री प्रदान की जाएगी.

भारतीय साइन लैंग्वेज का मानकीकरण- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बधिरों के लिए एक मानकीकृत साइन लैंग्वेज एवम पाठ्यक्रम को तैयार करने की बात की गयी है. इनको पढ़ाने के लिए स्थानिक संकेतों को भी शामिल करने की बात की गयी है. इसका लाभ यह होगा कि सम्पूर्ण देश में सभी बधिरों को एक सामान शिक्षा प्राप्त हो सकेगी व प्रत्येक व्यक्ति उनके संकेतों को समझकर व्यव्हार कर सकेगे.

भाषा सीखाने में तकनीकी का प्रयोग- वर्तमान समय तकनीकी का समय है. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इसका प्रयोग शिक्षा के प्रत्येक स्तर में व्यापक रूप से करने का सुझाव दिया गया है. भाषा भी इससे अछूता नहीं है. आज इन्टरनेट,सोशल मीडिया आदि के द्वारा विभिन्न भाषाओं को स्वयं सीखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है. यही कारण है की भाषा सीखने व सीखाने में तकनीकी का प्रयोग करने को नीति में कहा गया है. इसके लिए सम्बंधित भाषा का वेब आधारित प्लेटफ़ॉर्म, पोर्टल, विकिपीडिआ आदि माध्यमों से डॉक्यूमेंटेशन, भाषा से सम्बंधित सामग्री जैसे बुजुर्ग लोगों की आपसी बातचीत, लोक गायन, नाटक, कविता आदि का ऑडियो व विडिओ को प्रचारित व प्रसारित करना आदि कार्य किये जायेंगे.

भाषा अकादमियों की स्थापना- वर्तमान समय में संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाए शामिल है. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अनुसूची में शामिल हर भाषा व अधिक लोगों के द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं के लिए मूल भाषा बोलने वाले, सम्बंधित भाषा में श्रेष्ठ विद्वान युक्त एक अकादमी केंद्र/राज्य द्वारा स्थापित किया जाने का प्रस्ताव है. जिसके माध्यम से उस भाषा में नयी अवधारणाओं की सरलता के लिए शब्दकोष निर्माण, आम आदमियों के महत्त्वपूर्ण सुझावों का संकलन, अकादमियों में परस्पर समन्वयन, शब्दकोष का व्यापक प्रचार प्रसार ऑनलाइन माध्यमों का प्रयोग, साझे शब्दों का अंगीकरण किया जायेगा. भारतीय भाषाओँ के संरक्षण एवम विकास के लिए भारतीय अनुवाद और व्याख्या संस्थान जैसे राष्ट्रीय संस्थानों का विकास भी कए जाने की अनुशंषा की है.

भाषा में अध्ययन एवं प्रोत्साहन हेतू छात्रवृतियां व पुरुस्कार – भाषा में उच्च शिक्षा अध्ययन करने

के लिए विशेष छात्रवृतियां दी जायेंगी एवं अलग अलग स्तर पर जीवंत कविताओं उपन्यास पाठ्यपुस्तकों के निर्माण, पत्रकारिता आदि के रूप में गद्ध व पद्ध के संवर्धन, प्रचार, प्रोत्साहन स्वरूप पुरुस्कारों को दिए जाने की बात राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में की गयी है.

निष्कर्ष- यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित किया है. विगत 50 वर्षो में संरक्षण के अभाव में 220 भाषाओं को खोने को देखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में बहुभाषिकता के महत्त्व को धयान में रखते हुए इस पर अधिक फोकस किया गया है. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने किसी विशेष भाषा को महत्व न देते हुए सभी भाषाओं को सर्वागीण विकास का एक अंग माना है. बहुभाषिकता का ज्ञान राष्ट्रीय एवम अंतराष्ट्रीय स्तर पर आपसी संचार हेतु महत्त्वपूर्ण उपकरण की भाँति है, अत: विद्यालयी शिक्षा के अंतर्गत सभी छात्रों को दो भारतीय भाषाओं के साथ साथ एक विदेशी भाषा जैसे अंग्रेजी, कोरियाई, थाई, फ्रेंच, रुसी, जर्मन,जापानी आदि को भी सिखाने की अनुशंसा की गयी है. जबकि प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा से शिक्षण पर इस नीति में बल दिया गया है. बहुभाषी होने से छात्र न सिर्फ अपनी बल्कि वैश्विक स्तर की विरासत एवं संस्कृति के बारे में जान पाएंगे बल्कि इसके संरक्षण में भी अहम् भूमिका निभाएंगे. भाषाओं के समग्र विकास के लिए विभिन्न सुझाव राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में दिए गये है. अब देखना ये होगा कि भविष्य में इनमे से कितने सुझावों पर अमल किया जाता है और वे कितने प्रभावी होते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ड्राफ्ट
2. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf
3. https://www.hindi.sscadda.com/new-education-policy-2020-in-hindi/
4. https://hi.m.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AC%E0%A4%B9%E0%A5%81%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B7%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A4%A4%E0%A4%BE
5. https://www.hindwi.org/tags/language/anuwad
6. https://www.bednotesatoz.in/2022/02/blog-post.html
7. https://www.tribuneindia.com/news/schools/teaching-and-the-new-education-policy-240818
8. https://ijcrt.org/papers/IJCRT22A6852.pdf
9. https://www.researchgate.net/publication/357992569_NEP_2020_and_the_Language-in-Education_Policy_in_India_A_Critical_Assessment
10. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-news-analysis/national-education-policy-2020

❑❑❑

1. प्रवक्ता (सेवारत विभाग) जिला शिक्षा एवम प्रशिक्षण संस्थान लोहाघाट(चम्पावत) ई-मेल-sorari.deepak1@gmail.com 9719312336

वैश्विक पटल पर भाषा का प्रश्न

–डॉ. जय प्रताप सिंह

"राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन को संवैधानिक आधार प्राप्त है। बावजूद इस आधार के, सरकारी कार्यालयों में अपेक्षित अवस्था में हिंदी का प्रयोग नहीं हो पा रहा है। इस बिडम्बनापूर्ण स्थिति के लिए हमारी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, भाषिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था उत्तरदायी है।

शोध पत्र-

बीज शब्द- इक्कीसवीं सदी, वैश्विक, हिंदी भाषा, मीडिया।

भाषा मानव मन की भावनाओं को अभिव्यक्त करने का सशक्त साधन है। साथ ही एक-दूसरे को जोड़ने का माध्यम भी। परस्पर सुख-दुःख, आशा-आकांक्षा, आचार-विचार, वेषभूषा, ज्ञान-विज्ञान, कला, समस्त प्रकार की भाव संपदा, आध्यात्मिक विरासत, संस्कृति तथा समस्त चिंतन भाषा में निबद्ध होता है। भाषा भावों एवं विचारों को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है।हिंदी मात्र भाषा ही नहीं संस्कार भी है। हिंदी भाषा अनेकता में एकता को स्थापित करने की सूत्रधार है। किसी भी व्यक्ति के सोचने की प्रक्रिया अपनी मातृभाषा में ही होती है हिंदी भाषा हमारे देश की सभ्यता एवं संस्कृति का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति की उन्नति तथा राष्ट्र की उन्नति तभी संभव है, जब हिंदी भाषा की उन्नति होगी। 'नेल्सन मंडेला' ने कहा था कि यदि व्यक्ति से उसकी मातृभाषा में बात करें तो वह बात उसके दिल में पहुँचती है|

"राष्ट्रभाषा के अर्थ में अठारह भाषाएं जिन्हें संविधान में स्थान दिया गया है हमारी राष्ट्रभाषाएँ हैं। सभी का स्थान बराबर है। वास्तव में प्रश्न संपर्क भाषा का है। चूँकि हिंदी ही भारत की सर्वाधिक व्यापक रूप से जानी, समझी जाने वाली भाषा है। इसलिए हिंदी में ही संपर्क भाषा बनने के सर्वोच्च महत्त्व का गुण विद्यमान है।"1

आज हिंदी स्वतंत्र भारत की संविधान सम्मत राजभाषा है किंतु अंग्रेजी का वर्चस्व भस्मासुर की तरह निरंतर बढ़ता जा रहा है। स्वतन्त्रता पूर्व जिन क्षेत्रों में राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग एवं प्रसार व्यापक रूप में किया जाता था, आज वहा भी अंग्रेजी का बोलबाला है। भारतीय संविधान के आठवें अनुच्छेद में भारत में सर्वाधिक प्रयुक्त 18 भारतीय भाषाओं को अनुसूचित किया गया है, ऐसी स्थिति में राष्ट्रभाषा, राजभाषा, सहराजभाषा, द्वितीय राजभाषा, राज्यभाषा और संपर्क-भाषा के रूप में हिंदी की स्थिति पूरी तरह उलझी हुई दिखाई पड़ती है।

भारत और भारत से बाहर रहने वाले कई भारतीयों द्वारा यह मानकर चला जा रहा है कि हिंदी विश्वभाषा बन चुकी है। मेरे विचार से यह एक मिथक है कि हिंदी विश्व भाषा है। मेरे कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि उसमे विश्व भाषा होने की संभावना या सामर्थ्य नहीं है, परंतु जिस भाषा को राष्ट्रभाषा कहकर भी अपने राष्ट्र में पूरी जगह नहीं मिली वह विश्व में क्या जगह बना पाएगी|

शायद हिंदी के विश्वभाषा होने का मूलाधार यही है कि उपनिवेशवाद के परिणामस्वरूप भारतीय विश्व के कई देशों में जाकर बस गए हैं और माना यह जाता है कि जहां- जहां गए, वहाँ हिंदी भी चली गई और इस तरह एक विश्व भाषा बन गई। हम यह भूल जाते हैं कि उसका इस्तेमाल वही मुट्ठीभर भारतीय ही करते हैं और वे भी हिंदी भाषी भारतीय।

“मॉरीशस में 75 प्रतिशत लोग हिंदी मूल के हैं और वहां को लेकर हिंदी भाषी लोगों में बहुत गर्व है कि हिंदी बोली जाती है पर वहां के एक विद्वान का ही कहना है- मॉरीशस में हिंदी अध्ययन-शिक्षण की भाषा है, छात्र हिंदी चाव से पढ़ते है, परंतु कक्षा के बाहर हिंदी पढ़ रहे छात्र न के बराबर आपस में हिंदी बोलते हैं। घर में भी हिंदी बहुत कम बोली जाती है। अधिकतर लोग फ्रेंच से उत्पन्न क्रियोल बोली बोलते हैं। ‘समस्त प्रयासों के बाद भी मॉरीशस में हिंदी बोलने का वातावरण पैदा नहीं हो पाया है।"2

आगे चलकर यही लेखक कहते हैं- “पश्चिम का ‘सांस्कृतिक आक्रमण इतना प्रबल और प्रभावशाली है कि हिंदी मानसिकता उसका सामना नहीं कर पाती।"3

सवाल यह है कि भारत में ही स्थिति कौन-सी बेहतर है क्या पश्चिम की मानसिकता से भारत छुटकारा पा सका है? और जो भारतीय पश्चिम में आकर बस गए हैं, क्या उन्हीं के लिए इस मानसिकता से उबरना संभव है। सच तो यह है कि उपनिवेशवाद ने जिस मानसिक दासता की जंजीरों में हमारे मन और दिमाग को जकड़ा है, वह सदियों तक अपना असर दिखाती रहेगी। शिक्षित होने का मतलब ही भारत में अंग्रेजी पढ़ा-लिखा होना हो गया है।

हिंदी के साहित्यकार ‘निर्मल वर्मा’ ने कहा है "जो भाषा एक समय में भारत की स्वाधीन चेतना का प्रतिनिधित्व करती थी, स्वतंत्रता के पचास वर्ष बाद भी वह अपने को हीन भावना से ग्रस्त, उपेक्षित स्थिति में पाती है। कोई भाषा बहुत देर तक सरकारी अनुदानों और मौखिक आत्मप्रशंसाओं द्वारा जीवित नहीं रहती। उसकी संजीवनी शक्ति का स्रोत ऊपर से नहीं, नीचे से आता है।"4

“राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन को संवैधानिक आधार प्राप्त है। बावजूद इस आधार के, सरकारी कार्यालयों में अपेक्षित अवस्था में हिंदी का प्रयोग नहीं हो पा रहा है। इस बिडम्बनापूर्ण स्थिति के लिए हमारी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, भाषिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था उत्तरदायी है। जब तक इन सभी स्तरों पर आमूलचूल परिवर्तन नहीं आता तब तक संवैधानिक आधार मिलने के उपरांत भी राजभाषा हिंदी को उचित स्थान दिलवाने में बाधाएँ आती रहेंगी। इन व्यवस्थाओं में व्याप्त बाधक तत्वों को दूर करना अति आवश्यक है। इस संदर्भ में यह भी जरूरी है कि सरकार की नीति तथा भूमिका ठोस तथा स्पष्ट होनी चाहिए।“5

मूल बात यही है कि अपने घर में निरादृत होकर क्या हिंदी विश्व में कोई सम्माननीय स्थान पा सकती है? जब तक हम हिंदी को अपने बौदिक जीवन का हिस्सा नहीं बनाते, जब तक हमारे सोच- विचार का

प्रमुख माध्यम नहीं बनती और गंभीर सोच के लिए अंग्रेजी का ही सहारा लेती रहेगी, तब तक वह साधारण बोलचाल की भाषा बनकर लड़खड़ाती ही रहेगी।

आज इक्कीसवीं सदी में हिंदी भाषा अब किसी एक क्षेत्र- विशेष की भाषा नहीं रह गई है। वह वैश्विक होकर तकनीकी कार्यों में प्रवेश कर रोजगार की भाषा बन रही है। भूमण्डलीकरण एवं वैश्वीकरण के इस दौर में भारत में व्यापार और बाजार को बढ़ावा देने के लिए, हिंदी भाषा का ज्ञान आवश्यक हो गया है। आज हिंदी भाषा का दृश्य और श्रव्य माध्यम कंप्यूटर, इंटरनेट और सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा सर्वत्र व्यापक रूप ग्रहण करने में सफल हो रही है। मीडिया के माध्यम से आज हिंदी भाषा वैश्विक स्तर पर विराजमान हो रही है। जिसमें पत्रकारिता, जनसंचार माध्यम, सिनेमा, विज्ञापन, न्यू मीडिया आदि शामिल हैं।

इक्कीसवीं सदी में हिंदी का अंतरराष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ है। हिंदी एशिया के व्यापारिक जगत् में धीरे- धीरे अपना स्वरूप विंबित कर विश्व की अग्रणी भाषा के रूप में स्वयं को स्थापित कर रही है। विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार के क्षेत्र में हिंदी भाषा की मांग तेजी से बढ़ी हैं। विदेशों में पच्चीस से अधिक पत्र-पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिंदी में प्रकाशित हो रही है। वैश्विक मंच पर इंटरनेट की दुनिया में हिंदी के साइबर जगत की स्थिति संतोषजनक है।

हिंदी भाषा का संस्कार कई शताब्दियों से होता रहा है और अपने उदारवादी स्वभाव के कारण वह भारत ही नहीं, भारत से बाहर विश्व के अनेक देशों में बोली और समझी जाने लगी है। भारत में वह लोक भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। भारत को राजनैतिक, भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से एक सूत्र में बांधने वाली हिंदी भाषा ने समूचे भारत में अपना राष्ट्रीय गौरव प्राप्त कर लिया है। इसी के साथ-साथ इसने विश्व के लगभग सभी देशों में अपनी पताका भी फहरा दी है। भूमंडलीकरण एवं वैश्वीकरण के युग में यह महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है और विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओ मे हिंदी भाषा का तीसरा स्थान है। यही इसका वैश्विक अभिप्राय है। विश्व की शीर्ष दस कारोबारी भाषाओं में हिंदी भाषा भी शामिल हैं। दुनिया के दस सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले अखबारों में शीर्ष पर छः हिंदी भाषी अखबार है।

हिंदी आज विश्व की प्रमुख भाषाओ में अपना स्थान बना रही है। जनसंचार के विभिन्न माध्यमो में हिंदी भाषा का प्रयोग इसका प्रमाण है। विश्व के कई देशों में लाखों प्रवासी भारतीय रहते है, जो सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिता, के लिए हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं और इनमें से कुछ व्यक्ति उच्च स्तर पर हिंदी में शिक्षा भी प्राप्त करते हैं। अनेक देशों के लोगों में हिंदी के प्रति रुचि बढ़ रही है और वे उसका उच्च अध्ययन या शोध कार्य कर रहे हैं। आज वैश्विक स्तर पर हिंदी को एक प्रकार से मान्यता प्राप्त हो चुकी है। दूतावासों के माध्यम से ही नहीं अनेक विश्वविद्यालयो में हिंदी के पठन-पाठन तथा अनुसंधान की व्यवस्था हो चुकी है। आज विश्व में लगभग 175 विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। भारत के आलावा मारीशस,फिजी,सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद, एवं टोबैगो और नेपाल में भी हिंदी बोली जाती है। अमरीका, कनाडा, ब्रिटेन आदि कई देशों में भी साहित्य-सृजन के साथ-साथ साहित्यिक पत्रिकाएँ मुद्रित और इंटरनेट पर उपलब्ध होने लगी है। इस दृष्टि से हिंदी ने विश्व में अपनी पहचान बना ली है। जहां तक भाषा या हिंदी भाषा की लिपि का प्रश्न है, जिसका संबंध मुख्य रूप से हिंदी भाषा के अस्तित्व और पहचान

से जुड़ा है। आरम्भिक दौर में जब हिंदी 'फॉण्ट' का विकास नहीं हुआ था उस समय हिंदी रोमन लिपि में लिखी जाती थी और रोमन में ही हिंदी सामग्री भी इंटरनेट पर डाली जाती थी। उस समय तक देवनागरी लिपि हिंदी के लिए फॉण्ट की समस्या थी। लेकिन वर्तमान में न्यू मीडिया की क्रांति ने इस समस्या को भी दूर कर दिया है। गूगल ट्रांसलेशन सॉफ्टवेयर के आ जाने से 'यूनीकोड फॉण्ट' ने हिंदी भाषा के और दूसरे अन्य भाषाओं की दुनिया में क्रांति ला दी है।

विदेशों में हिंदी को स्थापित करने तथा उसके उत्थान के निम्न उपाय हो सकते हैं- 1. प्रत्येक परिवार में माता-पिता या अभिभावक अपनी मातृभाषा या हिंदी में ही बातचीत करें और बच्चों के साथ घर में सदैव हिंदी में ही बोलें अर्थात् हिंदी का वातावरण बनाए रखें।2. प्रवासी भारतीय विदेशों में जहां भी रहे जिस स्थिति में भी रहे. भारतीय संस्कृति के आदर्शों तथा मूल्यों से पूर्ण साहित्य का पठन-पाठन करें और कराएं।3. विदेशों में बच्चों के लिए हिंदी पाठशालाओं में हिंदी पढ़ाने का प्रबंध कराएं। चाहे द्वितीय या तृतीय भाषा के रूप में ही क्यों न हो, पाठ्यक्रम में स्थान दिलाएं।4. बहुल भारतीय नगरों, शहरों व कस्बों में हिंदी ग्रंथालय तथा वाचनालय स्थापित करें। प्रमुख पत्रिकाएं मंगवाकर सबको सुलभ कराएं। हिंदी में रचित उत्तम साहित्य तथा विज्ञान संबंधी पुस्तकें मंगवाएं अथवा दूतावास के माध्यम से उपलब्ध कराएं। 5. भारतीय पर्व व त्यौहार अवश्य निष्ठापूर्वक मनाकर उनके महत्त्व पर व्याख्यानों का आयोजन करें।6. हिंदी की विविध विधाओं पर प्रतियोगिताएं चलाएं तथा विजेताओं को पदक, पुरस्कार प्रदान कर प्रोत्साहित करें।7. समय-समय पर गोष्ठियों, परिसंवादों, समारोहों, सम्मेलनों तथा सभाओं का आयोजन करके अपने ज्ञान की वृद्धि करें और हिंदी के प्रति ममत्व, आकर्षण तथा श्रद्धा भाव पैदा करें।8. विभिन्न भारतीय भाषाओं तथा साहित्यों के आदान- प्रदान इत्यादि का प्रबंध हो ताकि विभिन्न भाषा- 'भाषी भारतीयों के बीच सद्भाव, सौमनस्य एवं सौजन्य के अंकुर फूटे।9. पिकनिक, सांस्कृतिक कार्यक्रम भी संगीत, नृत्य,नाटक एवं चित्रकलाओं के प्रदर्शन भी हिंदी के उत्थान में सहायक हो सकते है।10. इन सबसे बढ़कर महत्त्वपूर्ण कार्य यह होना चाहिए कि दादी-नानी के माध्यम से ही नहीं, माता-पिता तथा भारतीय समाज के लोग भारतीय साहित्य, कला-वैभव, इतिहास आदि का बच्चों को बोध कराएं जिससे मातृभूमि के प्रति श्रद्धा भक्ति उनके हृदय में जीवित हो सकें।

विदेशों में बसे भारतीयों को भावनात्मक रूप से तथा भारत आने वाले विदेशियों को व्यावहारिक रूप से हिंदी से जोड़ने के सार्थक प्रयास करने होंगे। विदेशों में सामाजिक-पारिवारिक जीवन में हिंदी अपनाने वालों की पहचान और सम्मान के लिए प्रोत्साहन देने की योजना बनाई जानी चाहिए। ध्यान रहे भाषा का विकास व्यावहारिक नज़रिए से ही। होता है। विश्व के लोगों को भारत आने, भारत को जानने, भारतीय आध्यात्म और संस्कृति को समझने का माध्यम हिंदी बनेगी तो विश्व में हिंदी का फलक विस्तृत होगा।

सरकारी प्रयासों को परे रखकर साठ करोड़ हिंदी भाषियों को अपनी भाषा की समृद्धि के लिए प्रयास करने होंगे। दुर्भाग्यपूर्ण है कि हिंदी को लेकर सबसे अधिक हीन भावना हिंदी भाषी समाज में ही है। जब तक हिंदी भाषी समाज में अपनी हिंदी भाषा पर गर्व का भाव पैदा नहीं होगा तब तक हिंदी ज्ञान-विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में व्यवहृत और सम्मानित नहीं हो सकेगी।

हिंदी भाषा को किस तरह वैश्विक रूप में प्रतिष्ठित किया जाए, यह प्रश्न आजादी के अमृत काल में भी हमारे सामने मौजूद है। जब तक हिंदी भाषा को अनिवार्य रूप से राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं मिलेगा तब

तक भाषा का प्रश्न सदैव भारतीय जनमानस में जीवंत रहेगा। हिंदी भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं में एक-दूसरे के प्रति विरोध का भाव न होकर एकता का भाव होना चाहिए। हिंदी भाषा को केन्द्र में रखकर अन्य भारतीय भाषाओं को पल्लवित एवं पुष्पित होना चाहिए। भारत की सभी भारतीय भाषाओं में परस्पर पोष्य-पोषक संबंध होना चाहिए। तब जाकर भारत बोध से विश्व बोध की यात्रा सार्थक एवं सफल होगी। एक भारत श्रेष्ठ भारत की कल्पना को साकार करने के लिए निश्चित रूप से आपको एक श्रेष्ठ भाषा के रूप में हिंदी भाषा की महत्ता व गुणवत्ता को स्वीकार करना होगा।

विगत कुछ वर्षो में बदलते भारत में हिंदी भाषा के प्रति सकारात्मक बदलाव आया है देश में पहली बार मध्य प्रदेश में हिंदी में मेडिकल शिक्षा की शुरुआत हो गई है। अभी हाल ही में सुप्रीम कोर्ट के मुख्य-यायाधीश जस्टिस डीवाई चंद्रचूड़ ने कहा कि शीर्ष अदालत के निर्णयों का अब चारों भाषाओं में अनुवाद किया जाएगा। इनमें हिंदी, गुजराती, उड़िया और तमिल - भाषा शामिल हैं। उन्होंने कहा कि अभी सभी फैसले अंग्रेजी में होते है इसलिए 99% नागरिक समझ नहीं पाते।

राष्ट्रीय पटल पर हिंदी भाषा को एक बड़े वृक्ष के रूप में और अन्य भारतीय भाषाओं को उसकी शाखा बनकर हिंदी भाषा को पोषित करना होगा। तब कहीं जाकर वैश्विक पटल पर हिंदी भाषा रूपी पुष्प खिल सकेगा और आजादी के शताब्दी वर्ष में हमारा विश्व गुरु बनने का सपना साकार होगा।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में भाषा पर पड़ रहे अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से इंकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन पुन: हिंदी भाषा अपना एक रूप बदलकर वैश्विक रूप में विकसित हो रही है। विश्व की भाषा' बनने के सभी गुण हिंदी भाषा में विद्यमान है नई सदी के बदलते भारत में हिंदी भाषा विश्व भाषा की ओर निरंतर अग्रसर हो रही है। इक्कीसवीं सदी में हिंदी भाषा वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय हो रही है। जिसमें बाजार, सूचना एवं तकनीक, सिनेमा, विज्ञापन तथा जन-संचार माध्यमों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वैश्वीकरण के दौर में हिंदी भाषा का वैश्विक स्वरूप देखा जा सकता है। हिंदी भाषा अब किसी क्षेत्र विशेष की भाषा न रहकर विश्व स्तर की भाषा बन रही है। वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा की स्थिति संतोषजनक है लेकिन हमें अभी और अधिक प्रयास करने होंगे।

संदर्भ सूची-

1. पाण्डेय, ले. श्यामकृष्ण (1979)। संपर्क भाषा के रूप में हिंदी की प्रतिष्ठा कराएं, राष्ट्रभाषा संदेश, अंक-20,पृष्ठ-7
2. सिंह, वीरसेन जागा (जुलाई- सितम्बर, 2004)। मॉरिशस में हिंदी:एक सिंहावलोकन, गगनांचल, नई दिल्ली, पृष्ठ-84
3. सिंह, वीरसेन जागा (जुलाई- सितम्बर, 2004)। मॉरिशस में हिंदी:एक सिंहावलोकन, गगनांचल, नई दिल्ली, पृष्ठ-85
4. वर्मा, निर्मल,नंदन, कन्हैयालाल (2007)। हिन्दी का आत्मसंघर्ष, हिन्दी उत्सव ग्रन्थ, पृष्ठ-98
5. वासवानी, डॉ.किशोर(2019)। राजभाषा हिन्दी विवेचन और प्रयुक्ति, नई दिल्ली,वाणी प्रकाशन, पृष्ठ-256

❐❐❐

1. असि. प्रोफेसर (हिंदी विभाग) एस.एस.वी.पी.जी. कॉलेज हापुड़ (उ० प्र०) ईमेल:- babujpsingh@gmail.com मोबाइल नं.- 7376590449.

हिंदी भाषा का समाजभाषिक अध्ययन

हिंदी का समाजभाषिक अध्ययन करना इस शोध प्रपत्र का प्रमुख उद्देश्य है।दक्षिण एशिया को समाज भाषा विज्ञान की वैश्विक प्रयोगशाला माना जाता रहा है| यहाँ बहुभाषिकता एवं भाषा के विभिन्न प्रयोग स्तरों को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है| समाजभाषा विज्ञान भाषा विज्ञान का वह क्षेत्र है जो भाषा और समाज के बीच पाए जाने वाले हर प्रकार के संबंधों का अध्ययन करता है।

भाषा मानव की श्रेठतम उपलब्धि है। जिसमें वह अपने भावों को व्यक्त करता है। भारत भाषाई विविधता का देश है। हिंदी भारत के लगभग हर प्रांत में बोली और समझी जाती है। बिहार, छतीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उतराखंड, जम्मू और कश्मीर,उत्तर प्रदेश और दिल्ली की आधिकारिक भाषा हिंदी है। समाजभाषा विज्ञान के अंतर्गत समाज का भाषा पर एवं भाषा का समाज पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। प्रस्तुत शोध प्रपत्र के अंतर्गत हिंदी भाषा का समाज पर और समाज का हिंदी भाषा पर क्या प्रभाव क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका अध्ययन किया गया है । भाषा,समाज सापेक्ष प्रतीक व्यवस्था है और इस प्रतीक व्यवस्था के मूल में सामाजिक तत्व निहित हैं हमारे भाषाई व्यवहार पर हमारे वर्ग,लिंग, जाति का प्रभाव पड़ता है। स्त्री की भाषिक अभिव्यक्तियाँ पुरुष की भाषाई अभिव्यक्तियों से भिन्न हो सकती हैं। हमारी भाषा पर हमारे परिवेश,हमारी मित्र मंडली,समाज,परिवार,धर्म,हमारे सामाजीकरण, का प्रभाव पड़ता है। गाली गलौच की शब्दावली का अपना एक समाज शास्त्र है। हिंदी की अपनी एक समृद्ध परंपरा और इतिहास रहा है। जिसमें भारतीय बहुभाषिकता के प्रभावों को भी देखा जा सकता है। हिंदी बोलने वालों पर मातृभाषा का प्रभाव और उसके द्वारा चुने गए शब्द उसके परिवेश को इंगित करते हैं। प्रस्तुत विषय में उन सब पक्षों का अध्ययन किया गया है जिनके कारण हमारा भाषिक व्यवहार प्रभावित होता है।

अध्ययन के मुख्य बिन्दु

भाषा पर समाज का प्रभाव किस रूप में पड़ता है?

हिंदी भाषा प्रयोक्ताओं की भाषिक अभिव्यक्तियों पर उनके वर्ग,जाति,लिंग ,मातृभाषा का प्रभाव किस रूप में पड़ता है ?

हिंदी भाषा प्रयोक्ताओं के भाषिक व्यवहार में क्या भिन्नता है?

हिंदी भाषी प्रयोक्ताओं के भाषिक व्यवहार पर किन किन कारणों का प्रभाव पड़ता है?

भारतीय सामाजिक सरंचना में किन बातों का प्रभाव प्रयोक्ताओं की भाषा पर पड़ता है?

हिंदी भाषी प्रदेशों और गैर हिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी के कौन

कौन से रूप प्रचलित हैं इन रूपों पर भाषा प्रयोक्ता की अपनी सामाजिक सरंचना का क्या प्रभाव पड़ता है?

बीज़ शब्द : भाषाई व्यवहार, सामाजिक प्रतीक, संप्रेषण, शाब्दिक घटना, संपूर्ण भाषा, वार्तालाप, मानक भाषा, विभिन्न बोलियों, प्रयुक्तियों, भाषा मिश्रण, क्रियोल

आलेख :

हिंदी का समाजभाषिक अध्ययन करना इस शोध प्रपत्र का प्रमुख उद्देश्य है। दक्षिण एशिया को समाज भाषा विज्ञान की वैश्विक प्रयोगशाला माना जाता रहा है| यहाँ बहुभाषिकता एवं भाषा के विभिन्न प्रयोग स्तरों को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है| समाजभाषा विज्ञान भाषा विज्ञान का वह क्षेत्र है जो भाषा और समाज के बीच पाए जाने वाले हर प्रकार के संबंधों का अध्ययन करता है। समाजभाषा विज्ञान की सर्वप्रथम धारणा लेबाव ने प्रस्तुत की थी। समाजभाषाविज्ञान सामाजिक प्रतीक, संप्रेषण, शाब्दिक घटना, संपूर्ण भाषा, वार्तालाप तथा भूमिका आधारित होती है। समाज भाषा विज्ञानियों का मानना है कि भाषा और समाज के संबंधों को भाषाविज्ञान के संदर्भ से अलग नहीं किया जा सकता। भाषा स्वंय में एक सामाजिक वस्तु है, अत: उसकी मूल प्रकृति में ही सामाजिक तत्व अन्तर्भूत होते हैं। ये ही तत्व भाषा को विषमरूपी और विकल्पनयुक्त बनाते हैं। भाषा व्यवहार में प्राप्त इन विकल्पनों का अध्ययन भाषा की वास्तविक प्रकृति का उद्घाटन करता है। लेबाब का यह मानना है कि समाज भाषा विज्ञान ही भाषाविज्ञान है। अत: समाज भाषाविज्ञान भाषा की सरंचना और प्रयोग के उन सभी पक्षों का अध्ययन करता है जिनका संबंध सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रकार्य के साथ होता है। अत: इसके अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत सामाजिक वर्गों की भाषिक अस्मिता, भाषा के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण एवं अभिवृति, भाषा की शैलियाँ, बहुभाषिकता का सामाजिक आधार, भाषा नियोजन आदि संदर्भ आते हैं। इस प्रपत्र के अंतर्गत समाजभाषा विज्ञान के उन बिन्दुओं का अध्ययन किया गया है, जिनका संबंध मनुष्य के भाषिक व्यवहार से है। भाषा केवल मौखिक रूप से ही समाज को प्रभावित नहीं करती लिखित भाषा की भी अपनी शक्ति होती है। डेविड क्रिस्टल का कहना है कि ईश्वर, देवी-देवताओं, शैतानों, आत्माओं, वस्तुओं और अन्य भौतिक शक्तियों की विभिन्न प्रार्थनाएं और मंत्र आदि भाषा के अत्यधिक विशिष्ट रूप होते हैं"। सामाजिक कारक प्रत्येक व्यक्ति की निज भाषा के निर्धारक होते हैं। भाषा के सामाजिक अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में, कई संदर्भों में हम क्या बोलते हैं? कैसे बोलते हैं? यह बहुत हद तक वर्ग और लैंगिकता और हमारी संस्कृति को निर्धारित करता है। समाजभाषा विज्ञान कही हुई बात में प्रयुक्त मानक भाषा, विभिन्न बोलियों, प्रयुक्तियों, भाषा मिश्रण, क्रियोल के उपयोग के साथ-साथ वक्ता के सामाजिक परिवेश के बारे में भी जानकारी देती है। समाज भाषाविज्ञान किस तरह हमारे भाषिक व्यवहार को उल्लेखित करता है।भाषा प्रयोक्ताओं की सामाजिक स्थिति के आधार पर प्रयोक्ताओं को बांटा जाएगा और उनके भाषिक व्यवहार को अध्ययन का विषय बनाया गया है। हिंदी भारत के लगभग हर प्रांत में बोली और समझी जाती है। इस दृष्टि से हिंदी का फ़लक काफी विस्तृत है। एक व्यक्ति के बोलने का तरीका दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है जिस पर उसके सामाजिक, आर्थिक स्थिति, धार्मिक स्थिति, वर्ग, जाति, लिंग का प्रभाव पड़ता है। महिला वक्ता और पुरुष वक्ता की भाषा में प्रयाप्त अंतर होता है। स्त्रियों की भाषा पर उनके सामाजीकरण की प्रक्रिया का प्रभाव पड़ता है। स्त्री लेखन और पुरुष लेखन में भी पात्रों के गढ़न और उनकी भाषा में अंतर देखा गया है। यहाँ तक की स्त्री अनुवादक भी पुरुष अनुवादकों से भिन्न भाषा शैली का प्रयोग करती हैं। गाली गलौच की शब्दावली का प्रयोग अमूमन स्त्रियाँ नहीं करती क्योंकि गाली गलौच के अधिकतर शब्द महिलाओं की योनिकता से संबन्धित होते हैं। इस दृष्टि से देखा जाये तो यह अध्ययन इस संबंधी आंकड़े प्रस्तुत करेगा की कहाँ कहाँ भाषाई व्यवहार में इस तरह के वर्ग, लिंग, जाति, आयु का प्रभाव पड़ता है। कैसे एक प्रयोक्ता दूसरे प्रयोक्ता से भिन्न भाषाई अभिव्यक्तियों का प्रयोग करता है। पूरी सामाजिक व्यवस्था में कौन-कौनसे कारक हैं जो भाषा शैली पर

प्रभाव डालते हैं। हिंदी के संदर्भ में यह अध्ययन और अधिक उपयोगी होगा क्योंकि हिंदी की अपनी ही बहुत सी बोलियाँ हैं। हिंदी भाषा के बदल रहे स्वरूप को समाज भाषा वैज्ञानिक की दृष्टि से देखना हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाए हुए है भाषा में कोड मिश्रण, कोड परिवर्तन,अर्थापकर्ष,अर्थोपकर्ष के सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक कारणों का विश्लेषण भी इस अध्ययन का एक पक्ष है इस दृष्टि से हिंदी का यह अध्ययन ट्रांस डीसीप्लिनरी उपयोगिता निर्धारित करता है। हर क्षेत्र में भाषा की अपनी प्रयुक्तियाँ हैं उन प्रयुक्तियों पर समाज का क्या प्रभाव पड़ा है। और प्रयुक्तियों का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है यह इस अध्ययन के केंद्रीय पक्ष हैं जो अध्ययन की नवीन दिशा निर्धारित करते हैं। हिंदी भाषा की बोलियों का अपना एक संसार है यहाँ समान सूचक शब्दावली,गाली गलौच की शब्दावली ,लोकगीतों की शब्दावली,उलाहने,खीझ,उकताहट, प्रेम,घृणा आदि की शब्दावली का विस्तृत फ़लक है। ऐसे में हिंदी का समाजभाषा विज्ञान की दृष्टि से अध्ययन करना हिंदी के एतिहासिक विकास क्रम की यात्रा को एतिहासिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में चिन्हित करना इस अध्ययन को नवाचारों से जोड़ता है। क्योंकि बोलचाल की हिंदी में ग्रामीण और नगरीय समाज की प्रयुक्तियों में भिन्नता,भाषा पर बदलते समाज के प्रभाव,संयुक्त परिवारों से एकांकी परिवारों के रहन- सहन पारिवारिक और सामाजिक ढांचे में परिवर्तन ने हमारे भाषाई व्यवहार को प्रभावित किया है। सोशल मीडिया ने कई तरह के कोड मिश्रण के माध्यम से हमारी अभिव्यक्तियों को प्रभावित किया है। गाली गलौच की शब्दावली,भाषा के लैंगिक आधार, वर्ग,जाति,धर्म यह सब आधार एक विशेष दिशा की तरफ ले जाते हैं लेकिन जब भाषा में दिन प्रतिदिन जुड़ाव-घटाव चल रहा हो तब यह अध्ययन और अधिक प्रासंगिक और नवीन हो जाता है।

हिन्दी में धर्म एवं दर्शन की शब्दावली
समाज से संबन्धित शब्दावली
जाति,स्थान,गोत्र संबन्धी बहुविकल्पीय शब्दावली
विभिन्न व्यवसायों से संबन्धित शब्दावली
रिश्ते नाते की शब्दावली
विनम्रता एवं शिष्टाचार से संबन्धित शब्दावली
रहन-सहन,खान पान एवं आवासीय शब्दावली
के आधार पर समाजभाषिक अध्ययन को विश्लेषित किया जा सकता है|

संदर्भ ग्रंथ

1. Algeo, John, 1975. Syncope and the phonotactics of English. General Linguistics 15: 71-78.
2. Bhat, Rakesh, 1996. On the grammar of code-switching. World Englishes 10: 369-375.
3. Bhatia, Tej K., 1995. Grammatical traditions. The Book Review 19(8): 21-22.
4. Bhatia, Tej K. and William C. Ritchie, 1996. Bilingual language mixing, universal grammar, and second language acquisition. In:
5. W. Ritchie and T. Bhatia, eds., Handbook of second language acquisition, 627-682. San Diego, CA: Academic Press.

❑❑❑

1. असि. प्रोफेसर (हिंदी विभाग) एस.एस.वी.पी.जी. कॉलेज हापुड़ (उ० प्र०) ईमेल:- babujpsingh@gmail.com मोबाइल नं.- 7376590449.

हिंदी भाषा एवं गद्य का उद्भव और विकास

–नीरज

हिंदुस्तान में गद्य साहित्य का इतिहास बहुत पुराना है, जिसके प्रमाण के रूप में संस्कृत एवं तमिल आदि भाषाओं के साहित्य को देखा जा सकता है। हिंदी जैसी आधुनिक और अपेक्षाकृत नवीन भाषाओं में गद्य बहुत बाद में लिखा जाने लगा। हिंदी का प्राचीनतम गद्य पं. दामोदर शर्मा कृत 'उक्तिव्यक्ति प्रकरण'(12 शताब्दी) को माना जाता है, जो एक व्याकरण ग्रंथ है। यद्यपि आचार्य शुक्ल ने रामप्रसाद निरंजनी कृत 'भाषायोगवशिष्ठ'(1741) को परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक माना है। हिंदी गद्य के उद्भव- विकास में 'दक्खिनी हिंदी' का भी अहम योगदान है। जिसके प्रमुख लेखकों में ख्वाजा नेवाज गेसू दराज़(1318- 1422), मुल्ला वजही(1530-1582), क़ुली क़ुतुब शाह(1565- 1612) और हुसैन अली खान आदि शामिल है। जिन्होंने हिंदी-उर्दू के प्रारम्भिक गद्य की शुरुआत की। किंतु हिंदी के जिस 'खडी बोली गद्य' की बात की जाती है, उसकी वास्तविक शुरुआत फ़ोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद ही हुई। जहाँ स्वतंत्र रूप से हिंदुस्तानी(हिंदी+उर्दू) विभाग की स्थापना की गयी, जिसमें हिंदी गद्य की अनेकों पुस्तकें छपीं। रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते है, "फ़ोर्ट विलियम कॉलेज का जो भी योगदान है वह आधुनिक खड़ी बोली गद्य की आरम्भिक रचनाओं के क्षेत्र में है।" साथ ही इस प्रक्रिया में नवजागरण की भी अहम भूमिका रही, जब पूरे देश में बड़े पैमाने पर छापेखाने खुलने लगे। विभिन्न पत्र- पत्रिकाएँ छपने लगी।

सामान्य तौर पर, आधुनिक हिंदी साहित्य का बहुत बड़ा हिस्सा पश्चिमी साहित्य एवं समाज से प्रभावित रहा है। साथ ही हिंदी गद्य के विकास में भी पश्चिम के साहित्य- समाज की भी अहम भूमिका रही है। इसलिए हिंदी गद्य के विकास को समझने के लिए पश्चिम साहित्य-समाज को समझना आवश्यक जान पड़ता है। दरअसल, जब किसी भी समाज के आर्थिक-सामाजिक सम्बंध बदलते है तब मनुष्य की चेतना में भी परिवर्तन घटित होता है। आधुनिक भाव बोध

अब कपोल- कल्पित धर्म(स्वर्ग आदि) की मान्यताओं को चुनौती मिलने लगी थी। गुप्त ने ही साकेत की भूमिका में भी लिखा— 'राम यदि तुम ईश्वर होते तो मैं तुम्हारी कथा कहने की कोशिश नहीं करता। तुम्हारी कथा इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि तुम मनुष्य हो।' इस प्रकार आधुनिक भावबोध के कारण ईश्वर का भी मानवीकरण किया गया। ईश्वर की चर्चा तो हुई किंतु ईश्वरत्व को छोड़कर!

से गद्य का गहरा सम्बंध है। मध्यकालीन समाज के केंद्र में जहाँ धर्म तथा दर्शन थे, तो वहीं आधुनिक काल के समाज के केंद्र में राजनीति एवं अर्थ आ गए। आस्था का स्थान तर्क ने तथा अलौकिकता का स्थान लौकिकता ने ले लिया। साथ ही आधुनिक काल में कुछ ऐसे विचारक हुए जिन्होंने आधुनिक भावाबोध एवं गद्य को संभव बनाया। इनमें डार्विन(1809-1882), कार्ल मार्क्स(1818-1883), फ्रायड(1856-1939), नित्शे(1844-1900), देकार्त(1596-1650) आदि का नाम लिया जा सकता है। डार्विन ने पहली बार ईश्वर, धर्म एवं दर्शन(मध्यकालीन समाज का आधार) की भूमिका को नकारते हुए 'servival of the fittest' का सिद्धांत दिया। कहा कि हम किसी ईश्वर की अनुकंपा से नहीं, बल्कि शक्तिशाली है- इसलिए जीवित है। देकार्त ने बहुत पहले ही कहा था कि 'मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ'(I think therefore I am)। बाद में नित्शे ने कहा कि 'ईश्वर मर गया है'। मार्क्स ने पूरे चिंतन को बदलते हुए कहा कि मानव का सारा इतिहास, 'वर्ग संघर्ष' का इतिहास है, किसी धर्म या दर्शन आदि का नहीं। दुनिया में दो वर्ग हमेशा से रहे है —शोषक एवं शोषित । इसी तरह फ्रायड ने भी मानव इतिहास में पहली बार मनुष्य को उसके मन के आधार पर समझने की कोशिश की। उनके अनुसार 'सत्य' कहीं बाहर नहीं बल्कि मानव मन के अंदर ही कहीं मौजूद है। इन सभी सिद्धांतों ने तमाम भाषाओं के साहित्य एवं मानव चिंतन को दूर तक प्रभावित किया। परिणामतः इसका असर हिंदी साहित्य पर भी हुआ।

भारत में जब नवजागरण आया तो यहाँ के लोगों का परिचय पश्चिम के ज्ञान से हुआ। यह प्रक्रिया क्रमशः बंगाल, महाराष्ट्र और फिर हिंदी क्षेत्र में हुई। बच्चन सिंह अपने इतिहास में लिखते है— "जिस प्रकार भक्ति-आंदोलन सारे देश में एक साथ नहीं फैला उसी प्रकार नवजागरण भी देश के किसी अंचल में पहले आया और किसी अंचल में बाद में। सबसे पहले उसका अरुणोदय बंगाल के क्षितिज पर हुआ।" इसी दौर में इतिहास की भी पुनर्व्याख्या हुई, विभिन समाजों(ब्रह्म समाज, आर्य समाज, सत्यशोधक समाज आदि) की स्थापनाएँ हुई। सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ बदली। स्त्री-पुरुष सम्बंध बदलने के साथ ही सोचने के तरीक़े में भी अब बदलाव आया। इस प्रकार सम्पूर्ण हिंदी समाज एक मंथन की प्रक्रिया से गुज़रा। जिसने साहित्य की भाषा को भी प्रभावित किया। अब साहित्य(प्रमुखत: काव्य) में कल्पना, आकांक्षा एवं सपनों की जगह— विचार, जीवन के संघर्ष एवं उसकी परिस्थितियों की भी अभिव्यक्ति होने लगी। इसके लिए साहित्य में 'पद्य' के स्थान पर 'गद्य' का इस्तेमाल किया जाने लगा। इसी समय हिंदी में गद्य की तमाम विधाओं का सूत्रपात हुआ। जिनमे नाटक, निबंध, पत्र-पत्रिकाएँ, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, यात्रा-वृतांत एवं व्यंग्य आदि शामिल है।

आधुनिक भाव बोध एवं नवजागरण ने गद्य को किस प्रकार सम्भव बनाया, इसके प्रमाण के लिए हिंदी के प्रथम उपन्यास(अंग्रेज़ी ढंग के) 'परीक्षागुरु' को देखा जाता सकता है। इस उपन्यास की प्रमुख चिंता प्रामाणिक मनुष्य की खोज है, किसी राजा या ईश्वर की नहीं। मनुष्य की प्रामाणिकता का आधार कोई धर्म या समाज नहीं है बल्कि यही लौकिक समाज है, जिसमें वह साँस ले रहा है। इसे आगे चलकर मैथिलीशरण गुप्त ने कविता में भी लिखा—

संदेश यहाँ पर नहीं स्वर्ग का लाया

धरती को ही स्वर्ग बनाने आया।

अब कपोल- कल्पित धर्म(स्वर्ग आदि) की मान्यताओं को चुनौती मिलने लगी थी। गुप्त ने ही साकेत की भूमिका में भी लिखा— 'राम यदि तुम ईश्वर होते तो मैं तुम्हारी कथा कहने की कोशिश नहीं करता। तुम्हारी कथा इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि तुम मनुष्य हो।' इस प्रकार आधुनिक भावबोध के कारण ईश्वर का भी मानवीकरण किया गया। ईश्वर की चर्चा तो हुई किंतु ईश्वरत्व को छोड़कर!

आचार्य शुक्ल अपने इतिहास में लिखते है, "विलक्षण बात यह है कि आधुनिक गद्य- साहित्य की परम्परा का प्रवर्तन नाटकों से हुआ।" सम्भवत: ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि नवीन विचारों को जनता तक पहुँचाने का सबसे तीव्र एवं प्रभावी माध्यम नाटक ही था। उल्लेखनीय यह है कि इन नाटकों में संस्कृत-नाटकों की तरह काव्यात्मक भाषा का नहीं बल्कि भाषा के गद्य रूप का प्रयोग किया गया था। नवीन विचारों को जनता तक पहुँचाने का दूसरा बड़ा माध्यम पत्र-पत्रिकाएँ थी। भारतेंदु युग को देखने पर हम पाते है, कि उस युग का प्रत्येक बड़ा रचनाकार किसी न किसी पत्र- पत्रिका से भी जुडा था। इनसे हिंदी गद्य के विकास में बड़ी सहायता पहुँची। स्वयं भारतेंदु ने गद्य के विभिन्न रूपों(निबंध, अनुवाद,नाटक, इतिहास, आत्मकथा, इतिहास, यात्रा- वर्णन आदि) में अपनी लेखनी चलाई।

इसके अतिरिक्त हिंदी गद्य के विकास में जिन परिघटनाओं की प्रमुख भूमिका रही उनमें, अदालती भाषा के रूप में- फ़ारसी भाषा के स्थान पर स्थानीय भाषाओं को प्रयोग में लाने की बहस शामिल है। कम्पनी सरकार ने 1836 में एक इश्तिहार निकाला जिसके अनुसार अदालतों में फारसी के स्थान पर देशी भाषाओं का इस्तेमाल होने लगा। जिसने हिंदी भाषा में आम जन को लिखने-पढ़ने के लिए प्रेरित किया। इसी क्रम में, नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना(1893) को भी देखा जा सकता है। जिसने हिंदी जाति के भाषाई संगठन को मजबूत किया। हिंदी सहित्य में खड़ी बोली एवं उसके गद्य को बढ़ावा देने में अयोध्या प्रसाद खत्री का नाम भी उल्लेखनीय है। उन्होंने क्रमशः 'खडी बोली का आंदोलन'(1888) तथा 'खड़ी बोली का पद्य'(1889) नामक दो पुस्तकें लिखी। जिसने हिंदी के साहित्य जगत में एक नई बहस को जन्म दिया। जिसका अंत आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती(स्थापना वर्ष 1900) के माध्यम से किया । इस पत्रिका के प्रकाशन के बाद खड़ी बोली में गद्य के साथ-साथ पद्य भी लिखा जाने लगा। एक अन्य कारण पर विचार करते हुए शांतिस्वरूप गुप्त लिखते हैं— "हिंदी भाषा के आरम्भिक विकास में ईसाई मिशनरियों, यूरोपीय विद्वानों और उनके द्वारा स्थापित शिक्षा संस्थानों और प्रकाशित पत्र- पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान है।"

आगे चलकर, हिंदी साहित्य में विभिन्न गद्य विधाओं का विकास हुआ जिन्होंने अपने ढंग से हिंदी गद्य के विकास में अपना योगदान दिया। जिनमें प्रमुख रूप से नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध, आलोचना, संस्मरण, रिपोर्ताज, यात्रा-वृत्त आदि शामिल है।आगे हिंदीसाहित्य की कुछ प्रमुख गद्य विधाओं की चर्चा

की जा रही है—

उपन्यास- आधुनिक काल की तमाम गद्य विधाओं में उपन्यास सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण विधा है। न केवल भारत में बल्कि विश्वभर में इसकी स्वीकार्यता और प्रसिद्धि व्याप्त रही है। 'उपन्यास का उदय' नामक अपनी पुस्तक में स्पेंग्लर का उल्लेख करते हुए आयन वॉट लिखते हैं कि "यह अति ऐतिहासिक आधुनिक मानव की ऐसी साहित्यिक विधा है जो जटिल जीवन की सम्पूर्णता में चर्चा करने में सक्षम है।" उपन्यास विधा के महत्त्व और आधुनिक क़ालीन विधाओं पर पड़ने वाले उसके प्रभावों को देखते हुए विजमोहन सिंह ने ठीक ही कहा है कि, "वस्तुतः उपन्यास के विकास को गद्य के विकास के रूप में ही देखना चाहिए।" इसलिए यह अनायास नहीं था कि हिंदी की गद्य विधाओं में भी सम्भवत: 'उपन्यास' का सूत्रपात सर्वप्रथम हुआ। हिंदी में 'अंग्रेज़ी ढंग' का पहला उपन्यास परीक्षागुरु नाम से 1882 में लाला श्रीनिवासदास ने लिखा। यह भारत में नवजागरण का दौर था। इस समय समाज में कई नए वर्गों का उदय हो रहा था। बच्चन सिंह लिखते है, "इस काल में व्यापारियों और पढ़े लिखे लोगों का एक मध्य वर्ग पैदा हो रहा था। उपन्यास का आविर्भाव मध्यवर्गीय आकांक्षाओं और समस्याओं को लेकर हुआ।" इस दौर में प्रवृत्ति की दृष्टि से सामाजिक, तिलस्मी-जासूसी और एतिहासिक ढंग के उपन्यास लिखे गए। इस समय के प्रमुख उपन्यासकार लाला श्रीनिवास दास , बालकृष्ण भट्ट, बाबू देवकीनन्दन खत्री, ठाकुर जगमोहन सिंह आदि हैं।

इसके बाद हिंदी उपन्यास में 'प्रेमचंद युग' आता है। इस समय भारतीय स्वाधीनता आंदोलन और समाज सुधार अपने चरम पर था। भारतीय राजनीति में गांधी का भी उद्भव हो चुका था। इन सब परिघटनाओं की छवि इस दौर के उपन्यासों में भी देखने को मिलती है। इस युग के सबसे बड़े उपन्यासकार प्रेमचंद है, जिनके नाम से इस युग को पहचाना जाता है। प्रेमचंद के उपन्यासों में आदर्शवाद से यथार्थवाद तक की एक लम्बी यात्रा दिखाई देती है। इस युग के दूसरे बड़े उपन्यासकार जयशंकर प्रसाद है। जिन्हें हिंदी में मनोवैज्ञानिक ढंग के उपन्यासों का जनक माना जाता है। इनके अतिरिक्त इस युग के प्रमुख उपन्यासकार विशंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', राधिकारमण सिंह, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', सियारामशरण गुप्त आदि हैं।

इसके बाद हिंदी उपन्यास में अनेकों युग आए जिनमें तरह-तरह की प्रवृतियाँ विकसित होती गयी। आगे के प्रमुख उपन्यासकारों में अज्ञेय, जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, धर्मवीर भारती, वृंदावनलाल वर्मा, हजारी प्रासाद द्विवेदी, भगवतीचरण वर्मा, यशपाल, भीष्म साहनी, रेणु, निर्मल वर्मा, श्रीलाल शुक्ल, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग और पंकज बिष्ट आदि प्रमुख है।

कहानी- ऐसा कोई समाज ढूँढना बेहद मुश्किल होगा जहाँ आरम्भ से कहानियों को कहने और सुनने की परम्परा न रही हो। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। हमारे यहाँ भी कहानी कहने की कला बेहद प्राचीन समय से रही है। उसकी अनेक शैलियाँ भी रही हैं। किंतु आधुनिक हिंदी गद्य विधाओं के संदर्भ में हम जिस कहानी की बात करते हैं उसका सूत्रपात 20वीं शताब्दी के आरम्भ से होता है। इसके उद्भव के संदर्भ में

मधुरेश लिखते हैं, “यह ठीक है कि गद्य-विधाओं के विकास की दृष्टि से कहानी भारतेंदु-युग की उपज उस रूप में नहीं है जैसे उपन्यास और निबंध आदि हैं। लेकिन तत्कालीन निबंधों और अन्य गद्य रूपों में जिन विभिन्न शैलियों का आविर्भाव हो था था; उनमें कहानी के तत्व अवश्य सक्रिय थे; जो आगे चलकर एक जीवंत विधा के रूप में कहानी की उपस्थिति को सम्भव बनाते हैं।” यद्यपि हिंदी की पहली कहानी को लेकर विद्वानों में मतभेद की स्थिति है। किंतु इसकी शुरुआत सन 1900 के आस- पास से मानी जाती है। आरम्भिक युग में भारतीय परम्परा और आदर्शवादी भावना से प्रेरित कहानियाँ लिखी जा रही थी। इस युग के प्रमुख कहानीकार माधवराव सप्रे, बंग महिला, मास्टर भगवानदास, रामचंद्र शुक्ल और गुलेरी आदि है।

इसके बाद हिंदी कहानी में ‘प्रेमचंद युग’ का आगमन होता है। प्रेमचंद युग हिंदी कहानी का वह प्रस्थान बिंदु है जहाँ से अनेक दिशाओं में हिंदी कहानी के मार्ग खुलते हैं। हिंदी कहानी में कथ्य और शैली के स्तर पर वैविध्य आने लगता है। इसके बाद कालांतर में हिंदी कहानी में अनेक युग देखें, जिनमें अनेक नई प्रवृतियों का विकास हुआ। हिंदी केअन्य प्रमुख कहानीकारों में जयशंकर प्रसाद, पांडेय बेचन शर्मा ‘उग्र’, चतुरसेन शास्त्री और हृदयेश, यशपाल, अज्ञेय, भैरवप्रसाद गुप्त, जैनेंद्र, इलचंद्र जोशी, मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, कमलेश्वर, उषा प्रियम्बदा, मन्नू भंडारी, रेणु, अमरकान्त, निर्मल वर्मा, राजकमल चौधरी, ममता कालिया, गंगाप्रसाद विमल, अमृतराय, उदय प्रकाश और स्वयं प्रकाश आदि का नाम शामिल है।

नाटक- आचार्य शुक्ल की मान्यता है कि आधुनिक काल की शुरुआत नाटकों से हुई। यह अकारण नहीं था, बल्कि नाटक उस समय की ज़रूरत थी। नाटक विधा अपने संघटन में ही एक सामाजिक विधा है। नाटक की भाषा और संवादभी बहुत संक्षिप्त, चुटीली और अससरदार होते हैं। श्यामसुन्दर दास इस सम्बंध में लिखते हैं, “प्रायः कहानी या उपन्यास आदि में किसी विषय की व्याख्या या स्पष्टीकरण आदि के लिए कथोपकथन आदि का ही सहारा लिया जाता है; पर नाटकों में तो लेखक को अपनी और से कुछ कहने या टीका- टिप्पणी आदि करने का कोई अधिकार ही नहीं होता; इसलिए व्याख्या या टीकाकार आदि का सारा काम केवल कथोपकथन से ही लिया जाता है।” इस दृष्टि से नाटक की भाषा बहुत सशक्त होती है। अतः निश्चित रूप से नाटकों की भाषा ने हिंदी गद्य को विकसित करने में अहम भूमिका निभाई है। हिंदी नाटक की शुरुआत ‘भारतेंदु युग’ से मानी जाती है। पहले नाटक को लेकर विद्वानों में मतभेद की स्थिति है। शुरुआती नाटककारों में गिरिधर दास, भारतेंदु हरीशचंद्र, राधाचरण गोस्वामी, आगाहश्र कश्मीरी, राधेश्याम कथावचक और नारायण प्रसाद ‘बेताब’ आदि प्रमुख है।

इसके बाद प्रसाद युग आता है जिसके बड़े नाटककार जयशंकर प्रसाद है। इस युग में ऐतिहासिक नाटक बड़ी संख्या में लिखे गए। जिनके माध्यम से भारतीय इतिहास के उन स्वर्णिम अध्यायों को आम जनता के समक्ष लाया गया जिनसे उनके मनोबल में वृद्धि होती हो। प्रसाद युग के बाद हिंदी नाटक में अनेकों युग और प्रवृतियाँ आयीं। जिनमे महानगरीय बोध से लेकर आधुनिक समस्या, विसंगति, मोहभंग और जनवादी नाटक तक लिखे गए। इन समय के प्रमुख नाटककारों में उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश, विष्णु प्रभाकर, भीष्म साहनी, जगदीश चंद्र माथुर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, सुरेंद्र वर्मा,

विपिन कुमार अग्रवाल, मुद्रा राक्षस, स्वदेश दीपक, धर्मवीर भारती, रामकुमार वर्मा और भुवनेश्वर आदि है।

उपन्यास, कहानी और नाटक की तरह ही साहित्य की अन्य गद्य विधाओं ने भी हिंदी गद्य को विकसित करने में अहम भूमिका निभाई है। जिनमें निबंध, आलोचना, जीवनी, यात्रा-वृतांत, संस्मरण रेखाचित्र और व्यंग्य आदि प्रमुख है। समय के साथ हिंदी की तमाम विधाओं में गद्य की विभिन्न शैलियाँ विकसित हुई। इनमें समास शैली, वर्णनात्मक शैली, मनोवैज्ञानिक शैली, यथार्थपरक शैली तथा आदर्शात्मक शैली प्रमुख है। आज हमारे सामने हिंदी गद्य का जो रूप मौजूद है, उसमें इन सभी विधाओं और उनके रचनाकारों की भी भूमिका किसी न किसी रूप में मौजूद है।

संदर्भ

1. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिंदी साहित्य और संवेदना का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, 2015,पृ. सं.81
2. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण पेपरबैक, 2017, पृ. सं.277
3. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रकाशन संस्थान, 2013,पृ. सं. 306
4. शांतिस्वरूप गुप्त, भारतीय भाषाओं में गद्य साहित्य का आविर्भाव(लेख), भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास(सं.- डॉ. नगेंद्र), हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2009, पृ. सं.575
5. आयन वॉट, उपन्यास का उदय, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, 1990, पृ. सं.18
6. विजयमोहन सिंह, बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य, राजकमल प्रकाशन, 2005, पृ. सं. 81
7. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण पेपरबैक, 2017, पृ. सं. 301
8. मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास, लोकभारती प्रकाशन, 2018, पृ. सं.11
9. श्यामसुंदर दास, सहित्यलोचन, लोकभारती प्रकाशन, 2017, पृ. सं. 93

❒❒❒

1. पी०एचडी० शोधार्थी, हिंदी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय मो. - 9716632367 ईमेल- neerajkr520@gmail.com
पता- म.न. 3, गली नं. 4, न्यू कालोनी सन्नोठ, घोगा मोड़, नरेला, दिल्ली- 40.

Portrayal of a Tribal Woman's Life as seen in Mahasweta Devi's *Rudali*

–[1]S. Gangaiamaran
–[2]Dr. K. Sindhu

Sanichari ran across Bikhni, her childhood friend, at the same moment, she made her aware of her own helplessness. After having three girls, she gave birth to a son, whose father passed away years ago, and she was the one who raised him. Later, she started bringing in calves for rearing, and over time, she maintained her own herd of four cows and two she-goats.

Abstract

Tribal literature is unique when compared to other literatures. Tribal literature focuses on culture, custom, tradition, lifestyle, agony, and challenges faced by the native people of the woods. Mahasweta most of her literary works discussed the important issues of caste, class, gender discrimination, social, and economical hierarchies. Mahasweta Devi, a pan-Indian writer addresses a nationwide reader through the works to raise the national conscience about the plight of the lowest segments of Indian society. Her fiction is an amalgamation of different registers of language, idioms with localized flavours, tribal dialect, history, myth, folklore. The tribals of India are the poorest of the poor who are underprivileged and deemed even their basic rights by exploitive society. Mahasweta Devi most of her literary works discussed the important issues of caste, class, gender discrimination, social, and economical hierarchies. But, Mahasweta Devi fought against all injustices for the welfare of tribal people, and wanted to liberate them, because they are still marginalised within the society, they could not live peacefully, and could not mingle with other people even in the twenty first century. This research paper tries to reinstate liberty, equality, and fraternity equally in the society as Mahasweta Devi has emphasized in her works.

Key words: Humanity, compassion, justice, liberty, equality, fraternity, and women empowerment

Indian culture is a mixture of social classes,

landowners, landless people, patriarchal males, and marginalised women. In India, unequal privilege allocation is the major cause of the prevailing casteism. Lower class individuals were denied the privileges that the higher class enjoyed. The caste system disadvantages the oppressed and drives them into exploitation, violence, and poverty. As a result, the tribal people were completely barred to participate in public life and were unable to attend schools or other educational institutions, which lead to their social isolation. Casteism, which is imposed by the upper class, has an impact on indigenous culture and religious practices. Obviously, caste, class, and gender discrimination are to be blamed for the marginalisation of indigenous people. The indigenous people are also politically, culturally, economically, and socially estranged.

The distinction of caste, class hierarchy, oppression, and gender discrimination were clarified by Mahasweta Devi in *Rudali.* Through her words, she blatantly highlighted all inhumane types of exploitation of their everyday life. The tribal people were divided as a result of the disparity in caste and class systems. The author of *Rudali* also emphases the physical aspects of labour, the battle for existence, the brutal realities of poverty, exploitation, and fatalities, along with all the degrading effects that go along with them. Ganjus and Dushads predominate in the Tahad village. Sanichari, the main character and a ganju by caste, experienced several issues as a result of poverty. Poverty made the life of all the villagers miserable. The economic crisis forced them to be satisfied with some sour curd, sugar, and coarsely parched rice. The position of each individual was determined by their caste, religion, and sub-caste throughout the entire nation. Sanichari would make amends with Mohanlal, the village priest, when she returned because she had offended him by following Tohri Brahman. She became indebted due to her poverty, and as she was unable to repay her loan, she was forced to work for the next five years as a bonded labourer. Sanichari and her relatives were unable to pay off the obligation. Sanichari struggled mightily to provide her little boy, and she sweated out on the field of Ramavater following the completion of the burial rites. Everyone eventually received their earnings for their labour, but Sanichari would only receive a little amount of sattu because she was working so hard to pay off the loan. Sanichari's heart had already been hardened by sadness, and being the slave of Ramavatar only further hardened it.

Sanichari's son Budhua grew up and adopted poverty as his own; he then married and had a son. Despite being in poverty, they managed to meet their daily necessities. The withering fever and hacking cough of tuberculosis struck Budhua as he was moving wheat bags for Ramavatar's son Lachman.

The fever began to rise at night, and by daylight it broke out in a sweat. Later, as he coughed, there was blood. Sanichari felt as though the flames of the funeral pyre were blazing within her and she felt the searing heat blowing around her day and night. The dark shadows were beneath his eyes due to poverty. Sanichari discovered that her aspirations of erecting a light around Budhua would never come true at the same time that she realised her kid was going to die due to poverty.

Although her husband was not ready to permit her to work, the dire circumstances of the family drove her to do so. She needed to work in order to provide for the family. Sanichari was happy to be with her kid because they were unable to secure her husband due to their poverty and could see the signals of death on his face, so she and her son knew she would not heed to their commands. "Both mother and son knew that she would never be content with an ailing husband, a poverty-stricken existence. Sanichari told her, he hasn't long to live. Signs of death on his face" (79) Mahasweta Devi spoke of the actual condition of those who were unable to protect themselves from the disease and the next lines elucidate the condition of the woman. "Annoyed, he snapped at her, You lower castes have no patience, no ability to bear up. If the boy's condition is so serious, why is his wife on her way to the marketplace? Your son must be okay"(79).

Later, Sanichari discovered her son had passed away, her daughter-in-law had left the room, and her grandson was sobbing. She busied herself with cremating her son while holding her grandson in her arms and dodging questions about her grandson since she was aware that her son and daughter-in-law would never come back. She was aware that her life's true circumstances stemmed from poverty. Her son would not have passed away and would still be living, and her daughter-in-law would not have moved out if she had a secure financial situation.

Haroa was kept alive during this vital time by the nursing of Dhatua's wife. Sanichari did not have to cook while she was working because Dulan's wife gave her roti and achar meals via Dulan. However, there were some debts that Sanichari would never be able to pay back in her lifetime. With the help of the character Sanichari, Mahasweta Devi eloquently described the miserable state of women. The class divide significantly influenced the way of life of the individuals.

> Moreover, Sanichari knows from experience that the people of the village would shun her totally. Which would make it impossible for her to live in the village. In order to survive, the poor and oppressed

> need the support of the other poor and oppressed. Without that support, it is impossible to live in the village even on milk and ghee provided by the malik. (82)

Lachman Singh used bodyguards to maintain order among the peasants, lower castes, and labourers. Ramavatar thrashed them with his slipper and kicked them. Lachman Singh tended to maintain his distance from them, but when he was in a good mood, he would also converse with them. People from lower castes had to suffer greatly just to survive, and as a result, they had to put up with even the upper class's kicking and stomping on them with their slippers. Low caste women are the worst exploited among the members of the community. The family, workplace and the society contains to exploit them physically, and economically. Mahasweta Devi was acutely aware of how class prejudice affected society and how it had a significant influence on human existence.

Sanichari ran across Bikhni, her childhood friend, at the same moment, she made her aware of her own helplessness. After having three girls, she gave birth to a son, whose father passed away years ago, and she was the one who raised him. Later, she started bringing in calves for rearing, and over time, she maintained her own herd of four cows and two she-goats. Following a loan from the mahajan, her son was married and she was able to eat. Her son was moving in with his in-laws, and he was now going to claim her house as payment. Since his father-in-law was without boys, her son would reside there with his in-laws. She said that they would sell the cows to pay off the mahajan's debt, but instead her son took the cows and calf to his in-laws. She was forced to sell her two goats at the market and received twenty rupees. She was prepared to beg at a station even though she had no idea where she was going.

Bikhni was welcomed by Sanichari to stay in her two-room hut, one of which was vacant. Even though these two women came from different social strata, Mahasweta Devi highlighted how they both experienced financial difficulties. Due to debt, the son of Bikhni moved in with his mother-in-law's household and worked as their servant. He would have been responsible for paying back the loan to the mahajans as a son, but he evaded capture and disregarded even his mother with ease.

For a few days, the two of them wasted Bikhni's money. Sanichari felt as if the heavens had fallen on her head when the money ran out. Sanichari would take control of her financial situation and solve her own difficulties. They then encountered Dulan, who advised them not to starve to death and demonstrated the existence of numerous ready-made means of subsistence.

They might exist for malik-mahajans, but dushads and ganjus did not. They had to use money to create their own opportunities.

Then, he informed her that a significant individual had passed away and that the cost to mourn him was merely three rupees or at least five rupees each person. They would have wanted to tip her for doing such a terrific job. On the advice of Dulan, an intelligent person in the whole of the village of Tahad, Sanichari and Bikhni took up the job of 'rudalis' or professional mourners and their business flock holed. Dulan explains, "Amongst us, when someone dies, we all mourn. Amongst the rich, family members are too busy trying to find the keys to the safe. They forget all about tears... They need rudalis to wail over the corpse" (90). Lachman Singh asked for ten, twenty, or how much ever amount was necessary, but he wanted high-quality rudalis. Finally, a budget of two hundred rupees had been set aside for weeping. They were both accepted. The two senior village women at first received no notice from the randis. However, Sanichari and Bikhni's loud sobs and well-chosen song lyrics in favour of Bhairav Singh forced the market randis to concede defeat. They sobbed the entire way there and returned from the cremation site. For wailing, they earned five rupees and two and half sacks of rice only but their fixed wage was two hundred. Bachchan deceived them. At the kriya, they got clothes and feasted, and they packed their portion home. Sanichari shared some with the wife of Dulan. Dulan, listened to all their news at the time, and accused Bachchan for his worst behaviour. "He cursed, That bastard Bachchan was allotted two hundred rupees for this job, and he got away with spending only twenty" (93). Sanichari and Bikhni were still exploited by Bachchan and were dragged again to face the sufferings in the economical level. Dulan said:

> The lower castes live in settlements of decrepit mud huts roofed with battered earthen tiles. The tribal settlements look equally poor. In the midst of these are the towering mansions of the maliks. There may be litigations and ill will between the maliks, but they have certain things in common. Except for salt, kerosene and postcards, they don't need to buy anything. They have elephants, horses, livestock, illegitimate children, kept women, venereal disease and a philosophy that he who owns the gun owns the land (95).

Sanichari and Bikhni nodded, and realized that for them, nothing had ever come easily and just the daily struggle for a little maize gruel and salt was exhausting. They remembered:

> Through motherhood and widowhood they're tied to the moneylender. While those people spend huge sums of money on

> death ceremonies, just to gain prestige. Let some of that money come into Sanichari's home! So Sanichari and Bikhni fought on. Everything in this life is a battle (95).

Sanichari was so disgusted and disappointed with the upper class society, she said:

> These people can't summon up tears even at the death of their own brothers and fathers, won't they count their *kriya* costs? Do you know that Gangadhar Singh, a rich man like him, was stingy enough to use dalda instead of pure ghee on the funeral pyre of his uncle? (98).

Researchers could talk about the distinction between the upper-class and lower-class people. The upper class people used dalda rather than pure ghee to maintain their social position and were willing to spend a lot of money on the burial, but were not willing to cry for their fathers and brothers. Despite having everything in life, people of the upper class were unable to shed even a single tear for their own family members. Sanichari and Bikhni were pleading for food, clothing, or money in order to survive. The lower class individuals were overly devoted to people rather than wealth and demonstrated the presence of humanity in the community, whereas the upper class people placed more value on their riches than their family ties.

Sanichari was stunned to get the news of the passing away of Bikhni. She was afraid, because it would impair her ability to support herself and her career. She was getting older as well. Growing older meant losing the ability to work, which meant passing away. She did not want to pass away from sadness. Due to poverty and sadness, the deaths in her family hardened her heart and made her wish to avoid dying like others. Sanichari had endured a great deal of sorrow; she would also endure the loss of Bikhni. Although she was heartbroken, she resisted crying. Sanichari observed that the tears in this scenario were crying since they were unable to obtain money, food, or new clothing in exchange.

Sanichari went to see Dulan, who immediately saw the seriousness of the issue and advised her not to give up her profession of funeral weeping, because it was like her country. He also warned her that as they passed away one by one, she would start crying, and that they were taking the pomp and circumstance of the funeral very seriously. For instance, Gambhir Singh could have easily called the doctor and had been healed, but he chose to plan a lavish funeral instead. She must thus practise her trade of funeral weeping in her own country.

Dulan affirmed, "It's wrong to give up one's land, and your profession of funeral wailing is like your land, you mustn't give it up" (114). Sanichari, at the end of the story rises like a phoenix from a victim to an empowered state. She makes up her mind to turn the tables to her benefit and so goes to the market to call all the whores to become rudalis. Sanichari enters the place where the body of Gambhir Singh was kept for mourning with a hundred rudalis and starts wailing while hitting their heads. The relatives of Gambhir Singh are shocked as they had to pay all the wailing rudalis.

> The randi rudalis surrounded his (Gambhir Singh) swollen corpse and started wailing, hitting their heads on the ground. The gomastha began to weep tears of sorrow. Nothing will be left! Cunning Sanichari! Hitting their heads meant they had to be paid double! He and the nephew were reduced to helpless onlookers (117).

Mahasweta Devi battled against injustice and sought to liberate the pain of those from lower social classes via her work *Rudali*. She desired the emancipation of women in order to end all misery. The tribal people, especially the tribal women, can eventually be freed from their misery and lead a tranquil existence in civilization. Mahasweta Devi exemplified the caste system in India, which divided tribal people and caused the lower classes to suffer. Even in the twenty-first century, women who are deemed to be a goddess representation still exploited and mistreated. A woman experiences gender and class marginalisation throughout her life.

The story describes an ironic ending of the socio-economic system in the Indian society. By analyzing this story *Rudali*, the researcher finds out some important concepts, based upon death, funeral rites, sufferings, feminism, racism, and marginalisation especially, the tribal women. Through her thoughts and ideas, Mahasweta Devi wants to give resurrection to her remarkable characters, and Mahasweta Devi was considered as the savior of tribal people.

References

1. Devi, Mahasweta. *Rudali*. Translated by Anjum Katyal, Seagull Books, 1997.
2. Bagchi, Jas..odhara, ed. *Indian Women: Myth and Reality*. Sangam Books (India) Private Limited, 1995
3. Chakravorty, Radha. Mahasweta Devi: *A Luminous Anger in Feminism and Contemporary Women Writers: Rethinking Subjectivity*. New Delhi: Routledge, 2008.
4. Partha, Chatterjee. "Caste and Subaltern Consciousness" *Subaltern Studies VI: Writings and Society.* Edited by Ranajit Guha, Oxford University Press.1992.

---

1. Ph. D. Research Scholar, Department of English, Periyar University Salem-11
2. Assistant Professor, Department of English, Periyar University Salem -11

Research Article

Women's Liberationist Outlook in Manju Kapur's Novels

–[1]P. KUMAR.

–[2]Dr. K. Dharaniswari

Virmati signifies the struggle for independence on the expertise level. She parades her defiant nature against the conventional agreement of morality, especially for a girl. She permits the journey leading to one's individuality but then again for her, it throws in the midway with no achievement. But her image retains a woman unfettered.

Abstract

Indian English writers and specifically women writers are so greatly prejudiced by the trend that Indian English Literature has a diverse branch of Women's libber writers. Manju Kapur is one of the true proponents of Women's movement in Modern Indian English Fiction who has outlined her fame through her first five novels-Difficult Daughters, A Married Woman, Home, The Immigrant, and Custody. She is in confederation with those women writers who highpoint the plight of women and cover the varied faces of feminism including the psychological impost of their women characters. The purpose of the present paper is to study Manju Kapur's novels in the well-lit of women's liberation and to see how her vision as a feminist is dissimilar from the motto of Western feminism and even from her fashionable sister writers. The term 'feminism' originates from the Latin word 'Femina' meaning 'woman' referring to the encouragement of women's rights and status at equality with a man on the grounds of 'fairness of sexes'. The term became popular from the early 20th century and later from the socio-political movement for women's liberation from male-controlled oppression. Recent Indian English Fiction by women represents the constraints of women in society and highlights women's psychological, social, cultural, familial, and spiritual quest for identity. Indian women novelists in English who have endeavored to project a modern Indian woman harassed to proclaim her identity and independence. Their women characters are solid people who fight the age-old traditions.

Keywords: diverse, proponents, confederation, dissimilar, constraints

Introduction

Women's liberation emerged as a very powerful movement to secure the rights of women and to give equal opportunities to the fair sex. This movement gave her the power to struggle for her recognition and survival and made them realize that the time has come when they can break the chain of slavery and should stop suffering silently in helplessness.

The presence of a novelist Manju Kapur has allocated with present-day problems. Her novels highlight the significant aspects of being and survival of women in the middle-class society of India. The whole fictional world of Manju Kapur is conquered by the female characters whereas the male characters are disregarded. They occur only as groups and performers of subaltern characters. Men appear to be insignificant, meanwhile, there is an emphasis on women. Women are displayed as superior to their male equivalents. If they prove lower in some cases, they attempt to catch their identity to be as equal as to men. In other words, it is the woman in Manju Kapur's works who grips all the outdo greetings card. She becomes an exploiter whose clever strategy looks outside the male comprehension. She can be defeated or grassed but she can stun herself from the longings and outplay all her male counterparts. In this regard, Manju Kapur's woman is a new woman.

My life and my freedom

Manju Kapur reflects the different aspects of a woman's life and describes a variety of women and this brings out the different ways the women are subjected to male supremacy. In every novel, she concentrations on the relegation of women in Indian 146 society. It is recognized that the majority of women in contemporary times are satisfied with their lot of reduction in the home and society. Being a woman, Manju Kapur through some of her women characters shows very rich pictures of the difference between men and women. In the present society, she appeals our attention to women's abuse and insight. It is noteworthy that women are preserved with double standards in the male-dominated society.

In the era of the twentieth century, there are many women novelists who have improved Indian English literature. Among them, a prominent writer is Manju Kapur. She has presented the difficulties of the Indian women in a joint family in a male-controlled society. She has assumed a new dream of Indian women in her fiction. Manju Kapur"s first novel, *Difficult Daughters*

(1998) was awarded the Commonwealth Writers Prize for the Best First Book in 1999. In her novel, *Difficult Daughters*, she discovers her women characters, some of them who are modern in their viewpoint. „The main protagonist of this novel is Virmati who is a traditional woman but her cousin Shakuntala is totally different from her. She is a westernized lady. Virmati is stimulated by Swami Dayanand's concept of women‟s education. Manju Kapur discloses the outdated idea of marriage which is vital for every woman. So, she portrays consciously the characters of Virmati and Shakuntala having two different insolences. The former is of the traditional view and the latter is of modern outlook. She is a bright independent modern and cultured girl who does not trust the concept of marriage and responds strongly to this traditional idea. She expresses to Virmati with the following words "but women are still supposed to marry and do nothing else". She recommends her to live like a free bird and says "times are altering and women are moving out of the house, so why not you?" This reaction of Shakuntala displays her approach towards marriage. Therefore, Manju Kapur represents this woman character as her own spokeswoman and contributes importance to freedom and education for Indian women.

Though, the novelist highpoints her notions of women and their relationship with others, women‟s sexuality, love, passion, jealousy, marriage, gender roles, self-discovery, and various other problems. We bargain that Virmati is a bold and more uttered character and aware of the rights for education and economic independence. Through the character of Virmati, Kapur illustrations the difficulties of modern women, their sufferings, problems faced, etc. She is undecided between family duty, wishes for education, and unlawful love with the professor who is already married with two children. She dearests her parents, family, education, and romantic professor. As a modern woman, she thinks that "Study means emerging the mind for the value of the family" because "a girl lives

Virmati signifies the struggle for independence on the expertise level. She parades her defiant nature against the conventional agreement of morality, especially for a girl. She permits the journey leading to one's individuality but then again for her, it throws in the midway with no achievement. But her image retains a woman unfettered. The third group, Virmati's daughter Ida, is the creation of the post-independence period and establishes herself as an independent woman. She commences her travel to find a perception into her mother's and objectors against her ways and idiocies. The novel stresses the search for freedom and identity, her farewell for a space of her personal to study. Her request to lodging the substitute motherhood is

imposed on her. And the one source for Virmati's prevention is her mother's continuous breeding. She is never reserved for free. She desires affection from her mother many times.

This difference is of course apparent in early socialization but it persists and enters into higher education as well. Allen and Barbara in their essay, "why men don't listen& women can't read maps" say all things are not equal, men and women are different, not better or worse -different. Simone de Beauvoir also gives voice to her view on man – woman nexus and says that " man represents both the positive and the neutral, as is indicated by the common use of the man to designate human beings in general, whereas woman represents only the negative, defined limiting criteria without reciprocity ". She can never be regarded as an autonomous being since she has always been assigned a subordinate and relative position:

Man can think of himself without the woman. She cannot think of herself without a man. And she is simply what man decrees- she appears essentially to the male as a sexual being. For him she is sex … absolute sex, no less she is defined and differentiated with reference to man and not he with reference to her, She is the incidental the inessential as opposed to the essential. Over, Manju Kapur hates to call herself a feminist but in a novel, she has tried to divulge the various ways in which patriarchy relegates women to the periphery. She has portrayed the numerous schemes developed by the patriarchs to curb female freedom and independence. Almost all her novels like *Home, Difficult Daughters*, *A married Women, Custody,* and *The immigrant* deal with feminist concerns She is well aware of the fact that the personal lives of women are so difficult and she poses a question don't you think?" She does hold the opinion that education for a daughter is seen as an alternate option of marriage. Thus, marriage is the ultimate institution where all women should enter after the successful completion of education. In an interview Manju Kapur says. "Literature by women, about families, always has this larger consideration, with years of studying texts, it becomes almost second nature to look beneath the surface.

Conclusion

Manju Kapur's novels empower us to get an idea of the feminist struggle against biases. While reading her novels, one can acquire the impression that women‟s life is just like the sweetheart of a nation which is fleeting through various prosecutions and problems. By and large, the Indian women novelist have portrayed women and their stories with the consciousness of the injustice being meted out to women by society. These novels have a feminist

undercurrent. Usually, these novels have a woman as the central character. Manju Kapur throws light on the social concern by saying that women are born to live their own life as they wish like men in the world. In no way they should be expected to be submissive, suffering, and sacrificing.

Works cited:

1. Singh, K, K., A Critical Companion to ''Manj Kapur,s Novels'' (Jaipur Aadi Publishers,2015)
2. Kapur Manju, The Immigrant (New Delhi: Random House India,2008)
3. De Beauvoir Simon. The Second sex. Trans & ed., H.M. Parshley. Harmondsworth; Penguin, 1983.
4. Kapur, Manju. *Difficult Daughters*. New Delhi: Penguin, 1998.
5. Showalter, Elaine. *The New Feminist Criticism*: Essay on Women Literature and Theory: New York. Pantheons Books, 1985.
6. Sing Sushila. *Indian Novel in English*. New Delhi: Arnold Heinemann, 1980.
7. Allen, Walter. *The English Novel*: A Short History. London: Penguin book Ltd.1970
8. Kapur Manju., 1998. Difficult Daughters. New Delhi: Penguin Books
9. Kapur Manju., 2002 A Married Woman. New Delhi: India Ink
10. Kapur Manju., 2006.Home.New Delhi: Random House India
11. Kapur Manju., 2008.The Immigrant.New Delhi: Random House
12. Kapur Manju., 2011. Custody. Faber & Faber Arhti S., 2010 "A Feminist Analysis of Manju Kapur"s Novel Home" in Carmelight, 7 1- 10 2010
13. Sahai Dipika., "Self Assertiveness Leading to Defiance in Manju Kapur's Difficult Daughters

---

1. Ph.D. Scholar, Assistant Professor, Department of English, Government Arts and Science Mettur, Salem. Tamil Nadu.
2. Research Supervisor, Department of English, Government Arts and Science Mettur, Salem. Tamil Nadu.

Research Article

Emancipation of Woman in Gayle Jones's *Healing*

–[1]R .Vijayarani

The event catches Jonathan's attention, an undutiful pursuit of "Publicity"; he takes along a news paper photographer to visit her in the hospital. Their conversation has the sense of inadvertence and the crossing of lonely purpose that characterizes all the novel's relationships, including the eventual short-lived marriage of Jonathan and Eagleton.

Abstract

Gayle Jones is one of the foremost literary figures who appeared in African fiction, after the Second World War. She is extensively much-admired as one of the most proficient stylists and inspired writers of her generation showing outstanding resourcefulness and assortment. Jones's novels are concerned with the intricacies of family relationships and the isolation of the individual within the family set. In her novels, she discusses the importance of family relationship, and for Jones, families clearly provide not only her major sources for learning about the world as a child, but also a fertile ground for studying how people adapt themselves and endure the pain of loss and disappointment of life, and how they adjust living with others, and yet continue to live and love.

Key Works: Isolation, Struggle for Independence and Identity

Introduction: Jones's novels portray the barrenness of familial relationship, the existential themes of the individual isolation and struggle for independence and identity as well as the lack of meaningful communication among people living together. All the major conflicts and central themes of her novels evolve from this concern for the family, the individual isolation, and relationship to the community. Also, Jones's early isolation and struggle for identity provide both style and material for her fiction.

The Prime Perspectives: Despite praise for the truth of her characterizations and her eye for details. *Healing*. Her novels have been published and translated into Russian, Danish, French, German, and Italian languages. The African and other academic critical communities have been eager to appreciate Jones's works. With her novel, Jones returns to the existential themes of the individual's isolation and struggle for independence and identity as well as the lack of meaningful communication among people living together. *Healing* is the first of Jones's novels to portray the bareness of familial relationships in a culture dominated by television and rock music. But unlike the earlier novels and *Healing*, chronicles one full year in the life of the protagonist Harlan Eagleton, a fat, dowdy and unattractive teenage girl. At home and at the society, Eagleton is a lonely and isolated figure, her mother having died by giving birth to her only child. Her father Joan, is a vague gentleman, who assumes wrongly that Eagleton would manage just fine wherever she is. Most often, he is unsuspecting of his daughter's loneliness and pains. One of the most telling points about his relationship with Eagleton is that he never knows how she spends her evenings alone, Joan being oblivious to it all. He treats his daughter politely, gently, giving her freedom, but ignoring her pain and suffering.

The novel *Healing* traces Eagleton's sterile interaction with her father, her only living relative and the development and dissolution of her relationship with a local rock singer, namely, Jonathan. In each case, Eagleton seeks the intimacy and guidance lacking in her relationship with her father. Ironically she often replicates the distance between herself and her father. She is the only child faced with growing up alone in a dark, stifling environment, and burdened with creating an identity without the companionship of siblings or communicative parents but in another way, she faces silence and loneliness at home, and of the outside world she has little knowledge and no one from whom to gain information. Eagleton thrusts herself painfully into this world by attempting to reach a man much colder than her father. Eagleton's isolation is evident from the opening pages of the novel, as Jones writes:

> Eagleton "walked most of the places alone" carrying "her books clutched to her chest, rounding her shoulders" in a gesture of submission and hopelessness. Her classmates barely notice her, they never speak to her. Their conversations concern subjects, Eagleton knows nothing about dates with boys, rock music and singing groups; Eagleton has never had a date and she is totally

unmusical (12).

Jones speaks of as essential the loving familial relationships. Her comments are insightful yet never compassionate. *Healing* evinces Jones's brave stepping forth in the selection and presentation of themes. Her novels clearly evince the interest in the dynamics of the individual and the family man's incapacity to communicate his responses to change and passing time, and his search for meaningful patterns in life. Jones seems more willing in her third novel to examine their complexity, their sources, and their inter connectedness. In particular, she takes an uncompromising look at the socializing function of popular culture, the nature of marriage as an institution, and the capacity of popular culture and marriage either to nurture or to thwart the development of a healthy sense of self. To her credit, Jones is able to probe these complex and problematical issues using a relatively straightforward narration and to conclude her novel with an ending that is affirmative without being either facile or sentimental.

Eagleton is first attracted to Jonathan local rock singer, when she hears him interviewed on the radio; the program is called, "Sweet heart Time", and indeed it is time for Eagleton, at seventeen to be interested in a man, whether or not the world around her feels, she is attractive enough to deserve him. Sweetheart time is hosted by Herbert, who like Eagleton's father seems literally on another wavelength; he does not understand the teenage rituals of dedicating records and can barely carry on a conversation with Jonathan. The reluctant interviewee, able only to hear him, Eagleton seems drawn instinctively to yet another person who cannot communicate with a father figure, while being unable to visualize him enables her to respond more completely to the person, Jonathan has so carefully cultivated, the ultra-cool rock star. He seems mysteriously creative, laconic; superior in short, the personification of sexuality as that aspect of popular culture understands it geared to teenagers. Eagleton is smitten. She tracks him down at rock show in the star dust movie theater, and then the unicorn road house, where one fateful night, she carves his name on her forehead with a fingernail scissors.

The event catches Jonathan's attention, an undutiful pursuit of "Publicity"; he takes along a news paper photographer to visit her in the hospital. Their conversation has the sense of inadvertence and the crossing of lonely purpose that characterizes all the novel's relationships, including the eventual short-lived marriage of Jonathan and Eagleton.

> What you go and cut it backwards for? “He asked her, worked out that way”, said, Eagleton “It Just”
> “Worked out that way, how do you mean?” “I don’t know, that’s just the way it happened can’t you read it? “Sure, I can read it. “Now I can see that it’s uneven, “Eagleton Said, “I know that’s going to bother me. Every time I look in a mirror. I’ll think why I let them ‘y’ droop. Why did I shake on the ‘c’?” “Why did you make it’ Jonathan?” Jonathan Said, She stared, mistaking his meaning she thought he had asked the only question she minded answering “Why not my first name?” He asked”. There’re thousands of Jonathan’s around” “What Drum String? I don’t have that big of a forehead”.” Drum, he said “Nobody says the whole thing, for lord’s sake (17).

It is a rare instance of violence for Jones’s novel, but it is extremity and sensationalism that should not overshadow the fact that it is for its era, understandable as an expression of affection. The popular culture of the 1960s, frequently linked violence with romance, particularly, in such successful musical recording as “Tell Laura I love her”. “Teen Angel”, and “ ode to Billy Joe”, young love seemed to lead answering to car wrecks and drowning, according to popular music of the early and mid 1960s while the acid rock and hard rock of the late 1960s movement of which Jonathan seems to be in the vanguard retains while omitting the earlier music’s cloying sentimentality. Eagleton’s self mutilation based on an actual incident in which as Texas teen slashed her forehead with “Eagleton’s is thus much in keeping with the bizarre norm conveyed by teen-targeted media. And yet seems an unnatural act, so much so that the emergency room physician questions. Eagleton’s sanity to an earlier society, it would appear to be Jones’s intent in presenting Jonathan as a figure as old as literature itself, the demon lover:

> Certainly, he looks the part repeatedly termed ‘dark’. Jonathan dresses all in black denim. Instead of walking like a snake, he is said to “guide”, or “slide”. He wears reflective sunglasses made of a silvery black that mirrored Eagleton perfectly and turned his face, what you could of it, into something as hard and as opaque as the glasses themselves. Jonathan’s unorthodox singing style is called ‘talking out’ or ‘speaking out’, seems to be conveying a secret message. “Is he saying something? Is there something underneath it? Is he speaking in code? (35).

Also like a true devil, Jonathan seems enveloped in an unnatural circle of

chilly air and he mysteriously leaves no physical imprint on the cushions of the porch swing on which he sleeps. He seems sexy, alluring, and powerful; and Clotelia, the house maid of Joan, articulates what Eagleton cannot: that she hoped hers demon lover "Would come riding up and spirit her away "that summer (63). His failure to do so suggests that Jones has chosen to develop to the motif of the rock star cum demon lover only up to a certain point. Beyond that point, she exposes it for what is it is; a farcically inappropriate, but nonetheless potentially destructive charade.

For on the most basic level, Jonathan, contrary to the customary practice of the demon lover, does not pursue the girl's, affection. Jonathan interested in Eagleton only until he establishes that she is not a "New paper Lady" (52), unlike devils, would be rock star need publicity and he, takes no responsibility for or pleasure in, her mutilation. Indeed he is actually annoyed not that she did it, but that she carved his last name instead of "Drum" after all. "There are thousands of Jonathan's around" (54). In addition "Instead of pandemonium, he lives in a faded Victorian house with his parents and he derives the battered family Dodge with his "bony scraped' wrists nicotine – stained fingers" (129), and rich warranted bouts of professional insecurity. Jonathan quickly emerges as what his slick is looking kid with a shallow gimmick and little talent.

Eagleton is aware of most of this, when she leaves suddenly with him, just as he is well aware that she has nothing in common with the 1960s adolescent understanding of what constitutes a desirable girl friend or wife. This apparent two fold rejection of the powerful media based idea of romance points, at least on Eagleton's part, to a spark of originality and individuality one that will enable her to emerge from her failed marriage unscathed, even empower by experience. But before she can reach this state, Eagleton must endure the painful rite of passage of marriage that has been doomed before it began.

Indeed without pressing the matter too much, Jones suggests that the ineffectual Jonathan has minimal input into the big event. The decision to have a child is entirely Eagleton's: flying in the face of all logical objections, she yearns for motherhood, visualizing it as "a shaft of yellow light through her mind, like a door opening" (170-171). Jonathan knows nothing of this, falling asleep oblivious to his wife's urges. Significantly, Eagleton already looks pregnant as indeed she has looks for her entire life- obesity. Even before she articulates her dream that "She wanted to get pregnant" (170), she instinctively takes a job in the library appropriately quite, sedentary occupation which

requires that she wears a 'Blue Smock' an outfit curiously reminiscent of maternity clothes. And not long after she secures the ideal job for a mother to be, she is almost as if by her own force of will, decidedly pregnant. When she finally gets around to mentioning the baby to Jonathan, it is not a happy announcement but a statement of fact, which, Eagleton feels, should have a major impetus in their move to her childhood home, left to her upon the sudden death of her father. When the fact of impending parenthood does not convince Jonathan to leave the tarpaper shack, Eagleton walks out on him. Eagleton Decker Jonathan, Proto-feminist has taken what she needed from a husband, a socially accepted married name what she is doing requires courage and a strong sense of self, qualities which are not evident in the opening of the novel. Indeed she seems to have undergone a complex inversion by the novel's end. But that impression is not quite accurate. Those admirable qualities have always been within her; but her oval fingernails and narrow nose, somehow have been over looked in a world which posits overweight teens as lacking in character and will power. But the same heaviness that is so undesirable in an adolescent is just fine for a pregnant matron, whom society treats with remarkable respect and different social norms derived from popular culture have shifted far more than Eagleton herself and the only real inversion to occur on her part is her perception of herself and the world in carving Jonathan's name in reverse.

Eagleton does seem to confirm that, at the stage; she is looking at matters keenly; as Mary Ellen Brook, argues, that "It is as though she sees people and situations backwards, like the letters on her forehead"(12). But by the end of the novel she, Fay-jean Jonathan' sees situations, and the rest of her world rightly. It enables her to slam the door on her friend and to leave her husband without a moment of hesitation, more importantly, Eagleton sees herself rightly and that would lend credence to the argument of several critics that the baby she is carrying the true Eagleton in effect, she "gives birth to herself" (13). Almost as if to confirm this, she goes so far as to say that "I didn't cut my fore head. Someone else did" (220), that 'someone else is not as she maintains another teen but rather her earlier self now dead**.**

Conclusion: At the eventual part of the novel *Healing* is thus an affirmative one. Essentially it is a parable of the evaluation of one woman's strong, healthy sense of identity and the novel does not end on an "inconclusive", note, nor is it quite accurate to say that it "underscores" the passivity and shallowness of Eagleton's and Jonathan's lives"(14). For though Jonathan

admittedly is more passive and shallow than ever at the end of the novel, Eagleton has moved beyond juvenile angst and "slipped down into (a) life" of adult responsibility"(15). If it is not a flawless vision and even Jones herself "has subsequently confessed to a desire to know how Eagleton Decker's baby turned out" (16), it is nonetheless meant to be a positive one. From this time onwards, strong women able to raise their families alone and dealing with the crises and impediments of daily life will be the salient feature of Gayle Jones's novel.

Works Cited

1. Levenback, Karen. "Philosophical Reverberations" in Gayle Jones's_Novels. South Carolina: U of South Carolina P, 1997.
2. - - -. "From Detachment to Involvement" in Gayle Jones's *Healing*, South Persing, Papadimas Julius. "Africa Jones Style: Surrogate Families and Transiency."*Journal of African Culture 15, No. 3*(Fall 1998): 45-51.
3. Shafer, Aileen Chris. "*Gayle Jones*'s 'The Geologist Maid': 'Till Human Voices Wake Us and Drown.'" *Studies in Short Fiction 27, No. 1*(Winter 1999):65-71.
4. Zahlan, Anne Ricketson. Finally Return to the Home: A Psychological Approach of Gayle Jones's *Healing*. Mississippi: UP of Mississippi, 1999.

---

1. Assistant Professor of English, Salem Sowdeswari College for Women Kondalampatty, Salem, 10 – Tamilnadu

Research Article

Assumption of Ethnicity and Change of Modern Materialism in Kurt Vonnegut's *Slaughter House Five*

–[1]R. Gopiram,
–[2]Dr. J. Jayakumar

So in reclaiming their past, these protagonists return to their own human condition. Kurt Vonnegut not only equates Americanness with humanity, but identifies one's choice of his essential human self with the moral and good, its denial with the destructive and bad. Edinbro is a very powerful example of this double equation.

Abstract

Kurt Vonnegut is generally considered one of our most important contemporary writers, and his reputation is not only enormous but also international. Whether or not he desires it, he has on the task not only of shaping present literature but of supplying the wish nothing more than to begin at the beginning, with this impossible. In any survey of the contemporary literary work for a variety of reasons, the critic despairs of finding the actual grounds of his appeal. The hub of the problem is precisely his "Americanisms". (In reading some of Kurt Vonnegut's critics, one suspects that it is less his art than his subject which is the center of interest.) Too often, here is the uneasy sensation that the subject is not really a writer who happens also to be a Jew but a Jew who happens also to be a writer. In any case, one must in part rescue Kurt Vonnegut from many of the conditions of his fame; and one is obliged to do so at the point where his particularly literary concerns carry over into wider and more ambiguous social concerns.

Key Words: Americanisms, Human Vanity and Ethnicity and Materialism

Introduction: To isolate the "real" Kurt Vonnegut with any precision, however, carries its own dangers. In retreat from the "accidents" of history, one tends to deny history altogether, to rest content with some variation of Kurt Vonnegut's own statement that he writes of American materials

"because I know it" (4). But, if such statements are refreshingly straightforward, they tend to impoverish a perfectly reasonable interpretative approach which only the excessiveness of sociological criticism has called into doubt. The fact that Vonnegut writes of Modern American is at best only interesting; but the fact that his imaginative understanding of American issues is shared by a host of fellow writers, and that together they have struck a deep reaction in the contemporary consciousness, argues that "history" is implicated in Vonnegut's American materials. Indeed, the fact that an entire generation of American-American writers has managed in the space of ten or fifteen years to have lost the status of "special cases" and create for themselves a central place in American culture, argues for Isaac Rosenfeld's old claim "that whatever contributions American writers may make to American literature will depend on matters beyond their control as writers (5).

Major Perception: Vonnegut's uprooted protagonist sometimes seek forgetfulness or separation, through cultural metamorphosis. Anderson arrives in New York to become a critic of Renaissance art. His first chapter on Giotto having been stolen away by Susskind, he tries to write a second chapter from his notes, "but it had come to nothing. Always Anderson needed something solid behind him before he could advance some worthwhile accomplishment upon which to build another" (30). The phrase, "something solid behind him", refers to his American past, the particularities of which have shaped his self, despite his assimilation into American life. So whether it is through socio-economic prosperity or cultural transformation, the abandonment of the past is a denial of life, of the possibility of growth. To be is to be in time. Jason Roy, Yakovenis , Leman et al escape the awareness of time either out of fear of it, or because of their self-love. Success only adds to their self-love. Dublin Kingsman initially is proud of the success of his H.D. Thoreau.

The phase of initiation ends with the protagonist's return to himself, to his community, to the world. He is now purged of egotism, and can look back on his adventures with a discerning eye. In hitting a homer to save the life of a sick protagonist, Roy reclaims his humanity, his solidarity with the human community. Clitoris throws away his revolver into a sewer, thereby putting an end to his criminal career. The five other American protagonists, similarly, return to their essential Americanism which for Kurt Vonnegut is a metaphor for their fundamental humanness, their authentic being. Levine is told by Paulina that his face in the photograph resembled that of a American boy

she knew in the past, for which she selected him. Levinskin's reply indicates his acceptance of his ironical predicament in history. So does Samson's acceptance of his wife's illegitimate son. Anderson climbs the staircase and sees his sister in death-bed, sees, that is, his own American fate. Harris begins to hate the place recognizing, however vaguely, the needs of his American landlord, Billy. Each is led towards an awareness of his natural condition, of his being rooted in time, by a symbolic agent of history as it were and Dublin Kingsman by no other than his wife, Kitty, who despite being a gentile, has suffered much, beginning with the loss of her husband at a young age to her present alienation from her husband and children.

So in reclaiming their past, these protagonists return to their own human condition. Kurt Vonnegut not only equates Americanness with humanity, but identifies one's choice of his essential human self with the moral and good, its denial with the destructive and bad. Edinbro is a very powerful example of this double equation. At his funeral, the rabbi says emphatically, 'Yes, Edinbro was to me a true Jew because he lived in the American experience, which he remembered, and with a American heart". Edinbro's Americanness did not need the sanction of rituals; he ignored the formal tradition, for which the rabbi would not excuse him, but he continues, "he (Edinbro) was true to the spirit of our life-to want for others that which he wants also for himself. He followed the Law… He suffered, endured, but with hope" (20). To be a Jew is to be human, and to be human is to lead a moral life, to run, as Edinbro did, "two blocks in the snow to give back to a poor Italian lady a nickel that she forgot on the counter" (22). Edinbro's life, as he describes it to Franklin, parallels his assistant's: struggle, strife, even deception, and finally, after many failures, life in a sinking Landlord's store. But his acceptance of all these has a beautiful sanity about it, the only sanity in a mad world.

This then is the "American experience" in which Edinbro lived, and which Kurt Vonnegut dramatizes in his plot, and throws his protagonist into it. The experience which is also Iris Lemon's, has two important categories. It recognizes the limitations of the human condition and the reality of suffering as the only reality there can be to life. Secondly, life being what it is, man must learn to endure it, acquiesces in it but with hope. Endurance presupposes acceptance of suffering in one's own life and in others', of the mutuality of suffering, of the common human predicament. The only morality is that one must suffer with the hope that others will suffer less.

Edinbro's experience in its first category is in fact the experience of most, almost all the characters who populate Kurt Vonnegut's world in *Slaughterhouse Five*; Anna-Maria, Esmeralda, and the pimps in *Pictures of Anderson*; Mary Kettlesmith, Willie, and Billy in the *Slaughterhouse Five.*

Kurt Vonnegut's emphasis on suffering finds expression in the metaphor of snow which is recurrent in his fiction. When Roy is in the maternity hospital after gorging at the huge feast dead mentor, Sam to take him back home. Sam replies that they cannot go back because it is snowing baseballs. Roy is already in time, and cannot escape the consequences of being in it. Edinbro last act is his attempt to shovel the snow outside his failing shop, for the benefit of his customers. But kindness in the Kurt Vonnegut universe can lead also to suffering. The old Landlord catches pneumonia and dies. The discomfort of snow is not got rid of by moving to warmer climates. Kurt Vonnegut's characters continually face the temptation to flee the torments of winter. Helena runs from it, hides in the house. She meets Glittoris in the public library where she comes often to escape the cold; the threat of intimacy frightens her. Walking home with him under a cloudless sky, she expresses her growing sense of vulnerability: "It feels like snow'". Helena's fear is that love will draw her into history. Related to this, yet different in its import, is the story of St. Francis in which he makes a family out of the snow. Franklin senses the significance of the act, the importance of the regimen of responsibility in the context of time and history. Levinskin, tormented by his first love-experience with Paulina, warns himself. He thinks of putting on armour against love, against responsibility, but Kurt Vonnegut tells us: "It snowed heavily" (189).

Samson's history begins when he rescues the Anti-Semitic Russian lying drunk in the snow. At the close of the novel, he rides through flurries of snow towards his trial. He has by now learnt to live in full recognition of the reality of suffering, although he tells the Tsar in a reverie that suffering has taught him only that it is useless. But it is also inescapable; once you are out you are in the snow, caught in the winter of your discontent. So he tells himself in the prison. Susskind seeks the warmth and protection of Anderson's friendship and charity in demanding the coat, against the approaching winter, on his recognition of the American beggar's need. He last himself as "December ferryman", ferrying strangers across the Grand Canal. Harris, in seeing "yesterday's snow standing seven stiff inches on the white street", cannot

really see himself as shut off from the world. His attempts to seek connections with others end in his meeting Willie, "One winter's night… on the frigid stairs" (223). During this meeting, love is paid back in Willie's hate. Dublin Kingsman, losing his way in the blizzard, comes to realize: "The wild begins where you least expects it, one step off your daily course. He had changed his black inner world for the white outer, equally perilous-man's fate in varying degrees; though some were more fated than others. Those who were concerned with fate were fated" (149). Dublin Kingsman sees himself as more fated than others.

Therefore, the Kurt Vonnegut protagonist returns to an awareness of himself as man in history, he does so with a growing awareness of it snowing all around. He returns, that is, with a deepening sense of failure and suffering, in whose defining context his initial success looks superficial and immoral too. Roy's success looks superficial and immoral too. Roy's success in the baseball diamond ends in his awareness of its futility, of its inherent corruption. Glittoris usurps Edinbro in the store, but only to continue with the dead Landlord's routine of poverty and humiliation. Levineis discharged from Cascadia College after his defeat in the election for the departmental chairmanship. He leaves with a woman he no longer loves. Samson is taken for his long-awaited trial. But he stands a mute witness to the irrational killing of Kopikon, and during the ride, to the loss of a leg of the young Cossack rider in a bomb explosion. Anderson must leave Italy in whose history he exulted as an artist. Harris loses his friend, his love, and is left with the oppressive sense of incompletion of his book and of his life. Similarly, Dublin Kingsman is alienated from his family and friends, and is yet to complete his life of Lawrence.

Conclusion: Thus, the gentile protagonist's human identity is defined by his knowledge of the world in which everybody suffers. His journey begins in failure and ends in failure. The question, however, is: why does not his suffering from which he seeks separation initially, yield this awareness of his being human? It is because suffering then lacks perspective, a referent in the protagonist's consciousness. This explains the initial passivity of the protagonist. Roy is being led by Sam Simpson to Chicago; Franklin acquiesces in Ward Minogue's desire to rob Edinbro. For quite some time in Cascadia, Levine remains in the hands of Gerald and Paulina Gilley. Samson is more driven than driving. Anderson hesitantly gives in to Susskind, and Harris to

Willie Spearmint. Dublin Kingsman, despite his willfulness of which he is so proud, succumbs to Fanny's temptations. But gradually, they move through the phase of initiation; each protagonist measures his failures in relation to his hope for a better life. That is to say, suffering gains in perspective, in however limited a manner, in the protagonist's assumption of the ethic of change.

Works Cited

1. Bradbury, Malcolm. *A Critical view of Modern American Novels*. London: Oxford Univ. Press, 1983.
2. Bryant, Jerry H. *An Open Decision on the Contemporary American Novel and its Intellectual Background*. New York: Free Press, 1970.
3. Burgess, Anthony. *Process of Writing Novels: A Guide to Contemporary Fiction*. New York: Norton, 1967.
4. Chase, Richard. *The Modern American Life and its Tradition*. London: G.Bell and Sons, 1978.
5. Clifford, James and George E. Marcus. *Writing Culture*: *The Novels and Politics of Ethnography***.** Berkeley*:* Univ. of California Press, 1986.

1. Ph.D Research Scholar in English PG& Research Department of English, Government Arts College (Autonomous) Salem-Tamil Nadu - 636007
2. Assistant Professor PG& Research Department of English Government Arts College (Autonomous) Salem-Tamil Nadu - 636007

Woman as a Symbol of Sacrifice in Kamala Markandaya's Novel Nectar in a sieve

–[1]C.Athiyaman
–[2]Dr. V. Radhakrishnan

Indian English writing has been developed from a sapling to a solid established tree in a full sprout. Indians anyway didn't begin writing in English in a day. It took a few verifiable occasions and recognized characters to get Indian composing English to its present distinction. English gave a window to Indian erudite people to view the wide world's outer surface.

Abstract

Kamala Markandaya portrayal of life in the little villages and big cities of Indian rips open the sordid, the pathetic and the tragic side of life its perpetual fight against starvation in the pre and post Independent India. Her novels thus become faithful records of the means and ways of exploitation in various forms. An interesting aspect of modernity is the creative release of feminine sensibility. Women in modern India have not only played exciting and dangerous roles in the struggles for Independence but are also touched and toned by the consciousness of cultural changes. Kamala Markandaya's novels seem to be fully reflective of the awakened feminine sensibility in modern India as she attempts to project the image of the changing traditional society. Women have always assessed themselves by the parameters marked by men. This accounts for the complacency in women as subalterns. They have been passive and submissive because this was the feminine stereotype that was accorded to them. It is incredible that even after sixty four years of freedom, Women's empowerment is still in its nascent stage. Experience thus forms a vital ingredient in all women's writings and this in turn serves to connect to the feminine world. Shared experiences become the basis of solving issues. The protagonists reflect common concerns and provide possible answers.

Keywords: Pathetic, sensibility, tradition, parameter, stereotype, issues, concern.

The social acquaintances among India and England in any event which were brought to the fore by political relations were never uneven. As we state that the Romans thought they were the champions and had a lot to gain from the Greek who were the triumph. Also Indians offered to the British a colorful display of life and multicolored prototypes of customs, habits, conventions, a rich well off of theory dependent on its antiquated social legacy. There has been a consistent increment in the study of Indian English. However as a subject of scholastic exploration of Indian English writing has for quite some time been ignored.

Indian English writing has been developed from a sapling to a solid established tree in a full sprout. Indians anyway didn't begin writing in English in a day. It took a few verifiable occasions and recognized characters to get Indian composing English to its present distinction. English gave a window to Indian erudite people to view the wide world's outer surface. It not just outfitted a connection among India and the western countries but it gave a typical vehicle of correspondence among learned Indians of various areas in Indian. The greater part of the youthful instructed individuals were attempting to impersonate the bosses and accomplish Standard English intonation. There were a few who examined English with commitment and constancy and had simultaneously a comprehension of and regard for their own social legacy. Such individuals were very few and yet subjectively their achievements in different fields were of a high request.

Usually it is for a female to express grief but however the standard of conduct intended for the Indian woman by the man centric culture is questionable to the general partiality. She is mentored to be a dormant beneficiary. The Indian woman happens to be the most exceedingly sufferer of the social standards and ethical codes. Kamala Markandaya is one of the most acclaimed writer that she wanted to reveal the ambiguity.

The time of females being cared as deities has met its conclusion in the Prehistoric period itself and what residues is the disposition of being treated as slipper mats. Kamala markandaya says that,

> Sense of involvement in the social life of India, her keen observation combined with critical acumen and the feminine sensibility brought her international fame with the very first novel. (34)

The entire range of understanding that female experienced to discover a scope in Kamala Markandaya's writings. The central character of her first novel is Rukmani the support and the upholder of the family bond. The book brings extinct social shades of malice and acts of neglect pervasive society to light and shows how they degenerate the virtues and corrupt and decay the status of Indian woman. Kamala Markandaya centers on dowry framework leads the aching of a male issue. The fruitlessness of a lady and the unavoidable yearning that prompts human corruption.

The fiction starts with Rukmani the speaker as an elderly person thinking about her past. Rukmani reveals to us that she is presently settled in spite of the fact that things have not generally been so. After quickly referencing those essential to her she starts to recount to an amazing narrative. As a youngster living in a provincial Indian town, Rukmani had enormous dreams of extravagant wedding. Her three more established sisters had continuously less sumptuous weddings. And Rukmani's mom was left to think about what might befall her last daughter, Rukmani, who might have very less dowry for marriage. Rukmani trusted her dad's situation as town headman would give less care to his spouse. She is uncertain how to undergo when her sibling reveals to her the town headman is at present of little significance in marital life. With no cash for dowry he seems to be diminutive in the manner of looks. Rukmani's family is compelled to wed her to a marginalized farmer whom she tells,

> Hope and fear, Twin Forces that tugged us first in one direction and then in another, and which one was stronger no one could say….. . Fear, constatnt companion of the peasant… fear of the dark future; fear of the blackness of death. (2)

It is this paradigm of steadying of morale after introductory ascent and fall, a close to harmony after outrageous motions, similar to that of a needle on a gauging scale that swings to one side and the left various occasions before steadying itself in the middle. The example functions admirably in the entire novel as well as inside sections, and at times inside a similar

passage. The example we have found in the prior section is rehashed on a bigger scale following Rukmani's marriage. Her sense to disgrace on feeling debilitated and the dread of living it down, the mud cottage and the wreath of dry mango leaves make her so apprehensive that she sinks down with a spasm in her leg. Understanding that her spirits are excessively low, and that she is scared, Nathan infuses an overwhelming portion of expectation that inside a couple of years they could purchase a house, for example, her dad had. The portion of expectation steadies her spirits and she understands "It suits me quite well to live here" (10).

Related with the mud cottage is the land on which her expectation and satisfaction depends. At all time Rukmani's spirits are hanging and Nathan raises from them again by helping her to remember the fruitful land and its produce and consequently the assistance of nature as though the human office has not been satisfactory to direct this intermittent portion of expectation and relief in a real existence punctuated by dread and sadness. Hence the land converges into nature to turn into a solid indication of some unoriginal power to make her upbeat or hopeless, to excite expectation or fears as it wishes. Here the delightful land, green fields and the aging grains come helpful to Nathan to reassure her "Such harvests as this and you shall not want for anything" (10).

In Nectar in a Sieve the bond among father and girl is somewhat not the same as that in other Indian writings in English. Nathan is profoundly worried about the welfare of Ira that is the reason Ira is brought home when she is left by her better half on the grounds of fruitlessness. No Indian dad would do that. A regular Indian dad would endeavor to bring a fix up among a couple in such setting. Further, Nathan awards Ira a lot of opportunity during Ira's post-separated from life. Ira resorts to prostitution to help the family and secure her feeble sibling. Ira's dad does not keep her from doing as such. Nathan appears some neediness over his little girl's inadmissible conduct however later on he goes to the degree of tolerating the unlawful offspring of Ira.

The new changes have delivered new women. The women today are described by clashing feelings about the qualities, culture and the conventional ethos of Indian culture. The new powers at work request the women to

follow the existence dependent on Western way of thinking of opportunity and freedom while the conventional self in them expects them to stick to and submit to the deep rooted traditions and standards. The outcome is that the majority of woman's have built up a sort of hesitant conduct. They are neither ready to follow the well established custom nor are they sufficiently brave to champion themselves, in the society which is to a great extent overwhelmed by the men.

Work Cited

1. Markandaya, Kamala. *Nectar in a Sieve*. 1954; rpt. Bombay: Jaico, 1978.
2. Das, Bijay Kumar. Kamala Markandaya's A Handful of Rice. Bareilly: Prakash Book Depot.
3. Jha, Rekha. The Novels of Kamala Markandaya and Ruth Jhabvala. New Delhi: Prestige Books, 1990.
4. Naik, M. K. Studies in Indian English Literature. New Delhi: Sterling Publishers, 1987
5. Srivastava, Ramesh.The Novels of Kamala Markandaya: A Critical Study. Amritsar: Gurunanakdev University, 1998.
6. Parameshwaran, Uma. A Study of Representative Indo-English Novelists. New Delhi: Vikas Publishing House, 1976.

1. PhD Research scholar Department of English K.S Rangasamy College of Arts and Science, Tiruchengode
2. Associate Professor & Head Department of English K.S Rangasamy College of Arts and Science, Tiruchengode

A Psychological Study of the Struggle between Love and Ambition of a Catholic Priest in Colleen Mccullough's *The Thorn Birds*.

–[1]S. S. Uma Sundara Sood

–[2]Dr. P. Mythily

The vow of chastity is one he long struggles with, repeatedly pushing Meggie aside. She repeatedly tempts him, partly from her first naïve belief that he can stop being a priest and partly from the depths of her obsessive love.

Abstract

The Priesthood is the office of the minister of religion, who have been ordained with the holy orders of the Catholic Church. The Catholic Church has different rules for priests in the Latin Church. Notably, Priests in the Latin Church must take a vow of celibacy. The Roman Catholic Church is based upon seven sacraments. The duty of the priest is to carry out these sacraments. In Colleen McCullough's *The Thorn Birds*, Ralph, a Roman Catholic priest, who is ambitious with a powerful desire to rise within the Church struggles between religious faith and worldly pleasure. His trail of life is characterized by the extended disharmony between love and ambition. This paper analyses the struggles faced by the churchman and offers insights into human nature using Maslow's theory of hierarchy of needs.

Keywords: Religious faith, The Thorn Birds, Roman Catholic priest

Colleen McCullough is a remarkable Australian writer. Her novels are inflated with human predicaments that prompt her male and female characters to confront and extricate themselves from those predicaments. Colleen McCullough was born in the year 1937 in a catholic family in Wellington, New South Wales. She spent most of her childhood days in places outside her hometown as her family moved about a great deal. McCullough's *The Thorn Birds* is a voluminous conventional masterpiece. The title of the book

refers to a mythical bird in an old Celtic legend. *The Thorn Birds* sold well, indicating its strong appeal to a mass female audience. The showing of a television miniseries, which became a major event in 1983, renewed its sales and created a new controversy. The miniseries, starring Richard Chamberlain as Ralph and Rachel Ward as Meggie, began airing on Palm Sunday, causing protests from the Roman Catholic hierarchy.

McCullough, in her *The Thorn Birds* has depicted the character of Father Ralph as an ambitious person. Father Ralph de Bricassart, a Roman Catholic priest, is sent from his native Ireland to Gillanbone, the village near Drogheda, before the Cleary family arrive there. He is deservedly popular with every member of his flock, rich or poor. If his remote parishioners could not get into Gillanbone to see him, he went to them, and until Mary Carson, a rich widow had given him his car he had gone on horseback. His patience and kindness had brought him liking from all. He loves God deeply. He is also ambitious, with a powerful desire to rise within the Church. Ambition and love of Father Ralph in the novel is corresponding to self-actualization and love and belonging in Maslow's human needs.

Abraham Harold Maslow is an American humanistic psychologist who created Maslow's hierarchy of needs, a theory of psychological health predicated on fulfilling innate human needs in priority, culminating in self-actualization. Maslow's hierarchy of needs is a motivational theory in psychology comprising a five-tier model of human needs, often depicted as hierarchical levels within a pyramid. Needs lower down in the hierarchy must be satisfied before individuals can attend to needs higher up. From the bottom of the hierarchy upwards, the needs are: physiological, safety, love and belonging, esteem and self-actualization. He describes the pattern that human motivations generally move through with the most fundamental levels of needs at the bottom and the need for self-actualization at the top. Mascow's basic needs appeal to our instincts and his theory is very practical which describes many realities of human experiences and is widely accepted.

Maslow describes self-actualization as

"a person's need to be and do that which the person was born to do" (*Motivation and personality,1954*) When Mary Carson, who lusts for Father Ralph questions him about leaving the priesthood in order to utilize his talent and become powerful and rich he says,

"My dear Mrs Carson, you're a Catholic. You know my vows are sacred. Until my death I remain a priest. I cannot deny it. I was brought up from my cradle to be a priest, but it's far more than that. How can I explain it to a

woman? I am a vessel, Mrs Carson, and at times I'm filled with God. If I were a better priest, there would be no periods of emptiness at all. And that filling, that oneness with God, isn't a function of place. Whether I'm in Gillanbone or a bishop's palace, it occurs. But to define it is difficult, because even to priests it's a great mystery. A divine possession, which other men can never know. That's it, perhaps. Abandon it? I couldn't." (*The Thorn Birds 1977*).

The determined priest, while pursuing his ambition falls in love with an innocent girl. It is true that some priests fall in love the way most of us think about that. They meet someone to whom they are drawn. In the normal world, this is generally a happy series of events. But in the celibate world, it may be constrained by the watchful eyes of parishioners and superiors. If this experience leads to leave the priesthood and marry, there is no psychological problem. But Ralph fears God and considers the love of woman as a forbidden desire. He loves Meggie when she was a little girl, but out of the fear of God, he devotes his heart and soul to God as his vows dictate. All he can tell Meggie is

"you're my rose, the beautiful human image and thought in my life" (*The Thorn Birds 1977*).

He repeats many times to Meggie "ashes of roses" (*The Thorn Birds 1977*), which he explains as the "dying of an idea which has no right to be born, let alone nurtured" (*The Thorn Birds 1977*).

The disharmony between love and ambition runs throughout Ralph's whole life, frequently ambition gets the superior while love takes preference over ambition at rare times. In Mascow's hierarchy the need for love and belonging stands lower than self-actualization. Ambition governs Ralph's life, but love is a more basic and instant need. He presses down his love and desires in the beginning. When love becomes hindrance to his fulfillment of ambition, he does not dither to sell his love. In becoming a priest, Ralph had taken the three vows of obedience, chastity and poverty. He broke the vow of obedience by insulting a bishop in the burst of youthful temper earlier in Ireland for which he regrets. He also breaks the other two vows of chastity and poverty within the plot. The vow of property is broken in principle when he accepts the terms of Mary Carson's will. "Thirteen million pounds. The chance of getting out of Gillanbone and perpetual obscurity, the chance to take his place within the hierarchy of church administration, the assured goodwill of his peer and superiors" (*The Thorn Birds 1977*).

Mary has cleverly foreseen that Ralph will be tempted by his ambition to produce the new will, thus cutting Meggie and her family out of their

rightful inheritance but ensuring his own rise to power within the church. Mary understands exactly to what degree the warring sides of Ralph's nature has power over his behaviour.

Maslow points out as to the relations among the human needs, "hierarchies are interrelated rather than sharply separated, and a certain need dominates the human organism instead of stating that the individual focuses on a certain need at any given time" (*Motivation and personality,1954*). He also acknowledges the likelihood that the different levels of motivation could occur at any time in the human mind. Despite of his suppression of his love to Meggie, he frequently thinks of her in his lonely and dull life, although he has a promising career to embrace.

The vow of chastity is one he long struggles with, repeatedly pushing Meggie aside. She repeatedly tempts him, partly from her first naïve belief that he can stop being a priest and partly from the depths of her obsessive love. She deeply resents the church's requirement for the celibacy of priests, and blames the church for ruining her life, for making her marry Luke because she could not marry Ralph. When they both meet at Matlock Island, a sudden realization of the depth of his passion for her as an adult woman, not the child he had unconsciously seen her as, leads to his taking her. Love predominates ambition this time and, in the meantime, he realizes that

"God is a trick, a phantom, a jest; he loves her more than he does God, and the life in search of Godhead is a delusion" (*The Thorn Birds 1977*).

Still, he proceeds with his ambition by returning to his religious duties. However, he can never approach his priestly duties in the same way. Long before their love is effectuated, Ralph is given the assignment of telling a young priest of his punishment for an affair with a woman he loves deeply. Ralph is firm and clear as he lectures the young priest on his sin in breaking his vow of chastity and on the shame, he has brought on himself and on the church. More painful is the punishment he gets. He is exiled to a remote parish with no chance to say goodbye to the young woman he loves. Ralph feels more painful as he applies this to his own situation. This scene has the function of reinforcing the full import of Ralph's vocation and position in the church and the impossibility of his ever becoming free to marry.

The growth of self-actualization refers to the need for personal growth and discovery that is present throughout a person's life. For Maslow, a person is always becoming and never remains static in these terms. He believes self-actualization could be measured through the concept of peak experiences. Ralph is very successful in his consecutive climbing of the hierarchy of the

church. He does have many advantages, and he knows how to give them a full play where he uses his brain and his talent for language. In the long service to his superior, he learns how to deal with the checks put forward by him. When the superior questions him suspiciously of his secret love, he deflected the smooth question with deceiving honesty. He says, "of a love as pure as that I bear my God….it was for the church I forsook her, that I always will forsake her. I've gone so far beyond her, and I can never go back again" (*The Thorn Birds 1977*). He hides his secret well from his superior.

Ralph understands his ambition, attains what he endeavors for throughout his life by becoming an honorable, reputable and influential dignitary in Vatican. Eventually he becomes the Cardinal de Bricassart and is one of the few men energetically concerned in determination of papal policy. As a churchman he possesses all the needs of a man as indicated in Maslow's theory of hierarchy of needs. From the track of Ralph's life, we can see how he has achieved the pursuit of power, wealth and love. All these needs cannot be satisfied simultaneously. Apart from being successful in his ambition, Ralph thinks of his relationship with Meggie as being divine. The divinity may be defined as tangible symbols of spiritual realities. Thus, in her he tries to unify the man and the priest and reconcile the struggle within himself.

Ralph's character can be compared to Arthur Dimmesdale's in *The Scarlet Letter* written by Nathaniel Hawthorne, a renowned American author. *The Scarlet Letter* is a romantic fiction, which says the story of Hester Prynne and her daughter Pearl and their difficulties in the puritan setting of Boston in 1660s. Hester Prynne has been taken in adultery and her companion in sin is the minister of the church, Arthur Dimmesdale. Though the two books, *The Thorn Birds* and *The Scarlet Letter* are quite seemingly different, the central theme of ambition and love among the male characters Ralph and Dimmesdale are closely related. Both Ralph and Dimmesdale are devoted to God and passionate in their religion. Both of them are respected by their fellow ministers and the public. They both are handsome and their physical appearance is beautifully described by their authors. Their secret sin leads to guilt and pain. Ralph struggles between the love of his life and the ambition towards his religious duties. Similarly, Dimmesdale is twisted by his inner conflict with his cowardice and inability to admit his sin publicly. Ralph struggles emotionally and Dimmesdale struggles physically by hurting himself.

Many a time a choice has to be made between two treasured things and it causes too much pain to make decisions. These choices establish and create

our life. In creating life choices, we at times significantly place a thorn in our breasts. Ralph in *The Thorn Birds* and Dimmesdale in *The Scarlet Letter* create their own thorns. The persistent struggle between ambition and love is the foundation of their pain. Love and Ambition are major features of human life and are combined as indispensable elements into Maslow's hierarchy of needs.

References:

1. McCullough, Colleen. The Thorn Birds, Australia: Harper Collins Publishers, 1977
2. DeMarr, Mary Jean. Colleen Mc Cullough- A critical Companion: Greenwood
3. Publishers, 1996
4. Maslow, A. (1954). Motivation and personality. Newyork: Harper & Row publishers, inc.
5. https://en.wikipedia.org/wiki/Priesthood_in_the_Catholic_Church
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Abraham_Maslow
7. https://study.com/learn/lesson/arthur-dimmesdale-the-scarlet-letter-overview-character-analysis.html

1. Ph.D Research Scholar, PG & Research Dept. of English,Thiruvalluvar Govt. Arts College, Rasipuram. Mail: ssumasundarasood@gmail.com
2. Associate Professor of English, PG & Research Dept. of English, Thiruvalluvar Govt. Arts College, Rasipuram. Mail: mythusadha@gmail.com

Hunger for Power and Emancipation in Nuruddin Farah's Sweet And Sour Milk

–[1]Mrs. J. JEBILA
–[2]Dr. S. Briolgith Jusbell

This country was a Marxist-Leninist in which all means of production and natural resources belonged to the entire society. National products should be distributed to all according to the contribution of the individual. Somalia had no history of class conflict in the Marxist sense. It possessed no proletariat, working or bourgeous, middle classes.

Abstract

Nuruddin Farah is one of the most significant and widely known Somalian writers who was born in Baidoa, Italian Somaliland somalia now in 1945. He is noted for his rich imagination and fortuitous use of his adopted language English. His father Aleeli Fadeena is also a Somali poet. Fara was educated in Ethiopia where he learnt different languages such as Somali, Amharia, Arabia, English and Itali. He studied literature and philosophy in Punjab University, Chandigarh, India and there he wrote his first novel From a Crooked Rib in 1970. He portrayed the determination of a woman who struggles to maintain her dignity in a society which believes God created woman from a crooked rib, and anyone who tried to straighten it, break out it, In Naked Needle (1971) Farah used interracial and cross cultural love to reveal a lurid picture of post-revolutionary Somalia life in the mid 1970s. His trilogy Sweet and Sour portray. The African dictatorship para depiets the tribal people's hardships, struggle to survive in the society and the longing of the tribal people for emancipation from the dictatorship rule of Britain and Italy.

Keywords: Emancipation, Proletariat, Bourgeous, Rampant nepotism, Discrimination

Introduction:

Farah's Sweet and Sour Milk describes the battle of Somalia and Ethiopia for the control of Ogden region. Soviet supported Ethiopia and cutoff all aids Barre regime. The decline of human rights is more important than the scientific socialist

idealogy. After the 1986 revolution the youthful Green Guards parade through the streels of Ugandan. They are modelled on the Victory Pioneers and they maintained law and order. The organization was formed on a similar Soviet organization known as Komsomal. The Victory Pioneers ensored that the revoloution was with in the sanctioned sounds and the people participated in volunteer works like the Brooms Revolution in the novel. Victory Pioneers women branches conducted family welfare programmes and community services.

In Sweet and Sour Milk Baree fostered the growth of religious groups. He called himself the victorious leader and displayed portrait, Marx and Lenin in the Streets during his public ceremonied. Baree issued a little book with his epigrams and advice to the people like the Chinese leader Mao Tse-Tung and the Lib yan leader Mohammad Quaddafi.

This last insight is important in understanding the political strife in Somalia at the time of the novel. The central irony is that Barre had, singled out triablism as the root of all evils in Somali culture. In 1970 when Sweet and Sour Milk was written he himself had succumbed to the temptation of installing his relatives in power because the Somalis are pastoral people. The Somalis language was untill quite recently an oral one. It developed a poetic style and expressive diction and has produced a vast oral literature including folktales, fables, poetry and literary genres. Somali culture is infused with poetry, and it influences public and private life.

In 1969, on October 21st Major General Mohammed Siyad Barre led a bloodless coup and seized Somali Government. Three years later, in 1972 Barre declared Latin as the official script of the Somali language. This enabled barre's regine to tackle the problem of illiteracy. In 1974, Illiteracy had almost disappeared in urban Somalia. However, Somalia is not an urban dominated nation till 1978 just before Sweet and Sour was published.

His mother Aleeli Faduma Farah, was an efficient poet and he learne how poetry can enter political debates in sophisticated ways. Much of his early knowledge and appreciation for his oral culture where revealed in Farah's later writing. Each chapter in Sweet and Sour Milk begins with the short prose poem that used natural and pastoral metaphores.

Somalia Colonial history is important in understanding the rich linguistic milieu in which Nuruddin Farah developed. Sweet and Sour milk reflects the culural diversity of Farah. Though the novel was written in English Farah constantly employed Somali proverbs, Italian phrases and his knowledge in Arabic language. This let to richness of this novel and Somali linguistic and

cultural history.

In 1960 when Farah was 15 years old Somalia gained independence from Britain and Italy. The new country incorporated the two former colonial territorists of British and Somali land and the Trust Territory of Somalia under Italian administration. Its boundaries were delineated by Britan, Italy, Ethiopia which possessed Somali speaking Ogaden area and France retained claim to a small territory and the gulf of Aden known as French Somali land. A democratic parliamentary government and a national constitution was written and ratified in 1961. Historians cite rampant repotism (tribalism) waste and corruption as the causes of what came next.

This country was a Marxist-Leninist in which all means of production and natural resources belonged to the entire society. National products should be distributed to all according to the contribution of the individual. Somalia had no history of class conflict in the Marxist sense. It possessed no proletariat, working or bourgeous, middle classes. Barre substituted tribalism and somalia' s socialgoal became selfliberation from distinctions imposed by lineage group affiliation. The official idealogy was composed of three parts. Barre's own consumption of community that Somalia should be self-relient, a society based of Marxist principle and Islam was in complete accord with its idealogy.

Though Barre proclaimed socialism as the national idealogy he was pragmatic in its application. He regarded socialism not as an religion but as a political principle for organizing government and managing production. The "Appointments" for the first time in the republic history were not carefully scrutinized according to clan affiliation, Merit appeared to the order of the day (p.79) However this should not long last. In 1970s Somalia was in center of Cold War tensions, interested keeping a military base on the Indian Ocean and access to the Red Sea, The Soviets had established a presence in northest Africa, in Egypt and Sudan Some historians speculate that the Soviets had sponsord Barre's Coup to counter pro-American tendency in this area. The Soviet presence was threatened in 1971 for various reasons. Somalia stepped in and offered help to Soviets to consolidate their position. The Russian figher plans that roar across the sky are the points in Sweet and Sour Milk, All these novel elements are firmly rooted in historical facts.

After 1969, 60 leaders of the previous governent, businessmen, lawyers and senior military personnels who did not support coup were arrested and tried by the National Security Counsel. And they were charged of disruption of peace or a crime punishable of death. On Soviet's advice, Barre's regim

sought control on political opponents through arrest and imprisonment for broadly defined crimes. By the mid of 1970s Barre's popularity began to decline and his revolution stagnated. The regim devoted more time and energy to internal security Somali intellectual and artists, businessmen lawyers were increasingly subject to arbitary arrests and torture. A number of the intelligenstsia fled from the country. The corruption and tribalism that the regime had set out to eradicate now became an integral part of its politics. While the government had established written language and boasted a number of other achievements, in the minds of many people none of these compensated for the loss of the individual rights and personal freedoms.

As Sweet and Sour Milk opens, Soyaan Keynaan lies ill in bed, His mother Qumman attends on him Soyaan fell ill after dining with a government minster at the home of his father's second wife Beydan. Qumman speaks of the possibility that he has been poisoned or bewitched by an unnamed woman. She urges upon her son's traditional remedies and refuses to hand over the medicine of the doctor Ahmed Wellie. He briefly regards a recent day which he spent with his lover who was the mistress of a powerful government official. They speak obliquely of a 'strong political statement that he has written and that she has recovered, a statement that will reappear throughout the novel' Sweet and Sour Milk (p-7). The novel returns to Soyaan's sickbed, where he is visited by the Shaykh and his father Keynaan, whom he dislikes. Keynaan is a domestic tyrant, a murderer and a government informer. They disagree on national politics; Soyaan protests the Soviest presence in Somalia and the restriction of civil rights, but Keynaan wants him away from protest for his own good. Ladan, Soyaan youngest sister is introduced, she is sensitive, intelligent and worried about her brother's political connections and the trouble they have brought him. He recalls somehow; these injections though he himself, how they pained, also in his fever he mutters "obscentities about the General" (p-12) the family is made complete with the return of Soyaan's twin brother, Loyaan the rural health official. He calls Loyaan name thrice, and dies. Loyaan decides to investigate the cause of his twin brother Soyaan.

Conclusion:

Sweet and Sour Milk presents the revolution of the people, the emancipation of Somalia from Britan and Italy and the claim of Ogaden area by France. It portrays the democratic government established in 1961. The parliamentary system was framed on western style. The Government tried to demolish Triabalism. It implemented Marxist Leninst idealogy. The country had no history of class conflicts in Marxist sense, a pre industrial, and pastoral

nation. It possessed no working class or middle classes in the society. Somalia socialist goal is self-liberation from discrimination imposed by group affiliation. The novel is packed with historical facts and the hunger of the people for power and emancipation from dictatorship Nurudeen Farah has depicted the historical, social and the political struggles of the people for power and emancipation from Britain and Italy in this novel.

Works Cited:

1. Ahmed, Ali Jimal, ed. THe Invention of Somalia Lawrenceville, N.J.: Red Sea Press, 1995.
2. Alden, Patricio, Nurrudin Farah and his Post Modern Approach. New York: Twayne, 1999.
3. Jussawalla, Feroza, Nuruddin Farah. Writers of the Post-Colonial World, Jackson: UP of Mississippi, 1992.

---

1. (Ph.D Research Scholar) Research Department of English Lakshmipuram College of Arts & Science (Affiliated to Manonmaniam Sundarnar University Abishekpatti - Tirunelveli - Tamilnadu - 627012.
2. Assistant Professor & Research Supervisor Research Department of English Lakshmipuram College of Arts & Science (Affiliated to Manonmaniam Sundaranar University) Abishekpatti - Tirunelveli - Tamilnadu - 627012.

Research Article

Feminine Sensitivity in Chitra Banerjee Divakaruni's The Palace of Illusion

–[1]Ms. R. Sakthi Priya.
–[2]Dr. R. Sheela Banu

In Divakaruni's novels, there are no straightforward allegories made but one can depict equivalent with the mythological and legendary women in her works. In Sister of my Heart Sunil's father enjoys by proclaiming offensive passages about women from the Hindu scriptures. In India her protagonists are anticipated to go behind the footsteps of the legendary women figures.

Abstract

In the 20th and 21st Century women writers in India are moving forward with their strong and sure strides, matching the pace of the world. One may see them bursting out in full bloom spreading their own individual fragrances. They are recognized for their originality, versatility and the indigenous flavor of the soil that they bring to their work. Yes, they are our women writers. The voice of new Indian women writers through their writings, published in between 1980s and 1990s, has ushered in a literary renaissance is the third generation of women Indian English writers

The early history of Indian English literature began with the works of Henry Louis Vivian Derozio and Michael Madhusudan Dutt followed by Rabindranath Tagore and R. K. Narayan, Mulk Raj Anand and Raja Rao like Nayantara Sehgal, Anita Desai, Arundhati Roy, Shashi Desh Pande, Gita Mehta, Bharathi Mukherjee,Citra Banerjee Divakaruni and Jhumpha Lahiri contributed to the growth and popularity of Indian English fiction in the 1930s. It is also associated, in some cases, with the works of members of the Indian diaspora who subsequently compose works in English. Chitra Banerjee Divakaruni›s fictional art radiates the various dimension and shades of the existence of woman in male dominated social order. Her world of feminine experiences is complex, delicate and dynamic inhabited by the women twisting in the

contradictory shades of tradition and modernity sharing the burden of the practices of Oriental and Occidental simultaneously. In Divakaruni's fictional world women can be appreciated in four distinctive categories — (a) Woman in context of social order, (b) Woman in context of cultural constraints, (c) Woman in context of their own feminine sensibility, (d) Woman and the new paradigms of man and woman relationship. In all these four spheres, the emotional intensity, exceptional human sensitivity coupled with infinite zest for life with the undertone of protest and resistance marks, a distinction in the world of Chitra Banerjee Divakaruni.

Key Words: Feminine Sensibility, Emancipation and Paradigms of Man and Woman Relationship.

Introduction: In *Palace of Illusions*, Divakaruni ventures to expose the annals of female subjugation with Draupadi as the chief narrator. Here history and myth goes in the background and female voices assume central spaces with unconventional dimensions. The obsessive concern with the predicament of women in Indian society, gives a new direction to her consciousness to synthesize past and present. All the stories of oppression are narrated in modern social context with the conclusion that 'silence' and 'subjugation' have been common predicament of women in all ages and all cultures. The feminist mood coupled with the idea of reconstruction of myths shifts and Divakaruni explores the possibilities of unfolding the layers of forgotten past to strengthen the will of characters caught in the whirlwind of adverse conditions. The earthquake, the danger of life n voyage becomes a background to explore and to expose the earthquakes taking place within the consciousness of characters. The controlling of narrative at two levels becomes almost dramatic to visualize the realities associated with the life of these characters. For each novel, Divakaruni selects a new narrative mechanism to cope up with her rambling imagination. This approach breaks the myth of "confined imagination" of women writers. With the expansion of the frontiers and breaking of boundaries in global era, women writers shattering the bonds of domestic spaces on moving in the direction of global perception of human conditions, is the cardinal core of the narrative creed of Divakaruni.

Main Concept: Among the novels of Citra Banerjee Divakaruni the well acclaimed novels *The Palace of Illusion* Draupadi is one who was born

to shape history. It is only a matter of how that unravels in the novel. It's written in first person form from Draupadi's perspective. Hence, the life of a renowned woman character of ancient India, Draupadi, comes in close proximity to the modern times. It is the energy and fire in Draupadi plus the strength to fight for discrimination. Her multifaceted quality makes her the most majestic and mysterious women for all ages. The novel begins with her fanatical interest of life.

The manifold narration of her own life's story offers Draupadi's character with a critical insight into her story. She not only acts in response to the events narrated but also critical views other people's responses to the actions or events of her life. As a result, Divakaruni used this technique very well by narrating the story of her protagonists through their own words. We can usually find a first person narrative in her works where the protagonist tells us about her own life, inner feeling, experiences, etc. The author has created wonderful female characters. She always gave focus on her female figures like Anju, Sudha, Tilo, Rakhi, Mrs. Gupta, and so on.

Even in her novel *The Mistress of Spices*, Chitra Banerjee quotes by her heroine about who is she and what her significance as a mistress of spices in the opening of her novel.

Thus, Draupadi's character is meticulously presented with a critical insight into her story, her novels are usually written in first person form and thoroughly hold the reader. The chapters in Divakaruni's novels are named after the central characters. In *Sister of My Heart* and *Vine of Desire* the chapters are alternatively named after Anju and Sudha. This is a very exclusive pattern of writing which evidently brings out the internal feelings of the protagonists. Even in *Queen of Dreams* the chapters are separated between the 'Form the Dream journals'-the diary of Rakhi's mother and Rakhi. The journals are read by Rakhi and her father. These dream journals are the disclosure of Ms. Gupta's life as a dream teller. Further in her novel *Mistress of Spices* she has chosen yet another different way. She has named the chapters of the novel on the names of spices. It is written with a fusion of poetry and prose.

The Palace of Illusions fulfills this criteria and Divakarum's portrayal of the character of Panchali is no lesser than that of Aristotle's Greek hero as she

is from a royal family, the princess of Paanchali and she is strong, dominant and independent. Out of her own choice, she invites her destiny, claiming pride and vengeance to be two fatal flaws in her character. The readers identify with the travails of the character as a human being and more of a woman. The character stirs the feelings of the reader:; throughout their reading and thus the narrative is captivating and enthralling. Panchali remains with the readers forever, though they finish the reading of the novel

In Divakaruni's novels satire is more apparent. Her female protagonists who are trying to understand their country of acceptance face ironical situation. In *Sister of Heart* Sudha comes to America with the purpose that she would be having an innate capacity to bring up her daughter Dayita better life but she has no idea that this would mess up her bond with her sister of heart Anju. Further, In Queen of Dreams the main protagonist Rakhi and her friends are second age group Indians, they think that America is the only country that they fit in. But their individuality is also questioned during the attacks of September 11. Irony is enormously well-known in the works of Divakaruni. The writer makes use of myths to improve the imaginative consequence of the novel. Indian writers in English have derived encouragement from the wealth of matter available in the appearance of stories from the Mahabharata, the Ramanaya, and the Puranas plus local folklore and legends. The most regularly used figures from Indian legends is of course Sita, who is well thought-out as the model woman.

In Divakaruni's novels, there are no straightforward allegories made but one can depict equivalent with the mythological and legendary women in her works. In Sister of my Heart Sunil's father enjoys by proclaiming offensive passages about women from the Hindu scriptures. In India her protagonists are anticipated to go behind the footsteps of the legendary women figures. Divakaruni's latest novel *Palace of Illusions* is also predicated on the mythological character Draupadi. In this novel Divakaruni has illustrated The Mahabharata from Draupadi's point of view. Amusingly, even though education and the power of the feminist movement, many prejudices opposite of women still persevere. For the contemporary human being, the past becomes obsolete or if it subsists, it no longer exhibits itself as it was. For this reason, the past must be defined again according to the understanding of each human

being. Chtira Banerjee endeavors to come to stipulations with the past in the Ecoian way: “The past since it cannot really be destroyed must be revisited; but with irony, not innocently” (67) Thus, the novelist cross-examines the practice of mind emblazoned by the past.

In the novel *The Palace of Illusions* the brothers built and the only place where Panchaali felt at home and also refers to the Hindu concept of Maya. It also explores Panchaali’s lifelong secret attraction for Karna, an enemy of the Pandavas. Manivannan says about the work that it is an ‘’ambitious project, and not without predecessors, choosing as its medium one of world mythology’s most idiosyncratic women” (33). The novel has prediction, love, revenge, passion and feminine internal struggle for identity. The reviewer Hoyden rightly says that the novel highlights a ‘’crucial relation established between womanhood and vengeance. It displays the struggle for identity in a mythological context, which is distinctly Indian, yet transcends cultural borders, all the while showing the illusionary nature of those imposed by history and gender “(2). The plot, indeed, remains true to the original but the writer Divakaruni offers a vivid and creative companion to the famous poem. She has given a rich tale of passion, love and lust, honour, respect and humiliation of female characters. The novel has been appropriately titled *The Palace of Illusions* based on the renowned palace that the Pandavas built for her. It opens with three narrator Panchaali, her brother, and her nurse. It presents dissimilar versions of the tale of Panchaali’s birth and fate. Her life as a child, her pride, her resentment, her expectations, her love, her passions, her dreams and her inquisitiveness are obviously explained by the writer. She declares that she does not want to support the men around her.

Conclusion: Divakaruni’s women, however, face a different situation. They love their men, or believe they do, and they suffer agonies of jealousy and misery when they feel they have been betrayed by friend with husband: but they quickly realize that surpasses all other relationship. It is in her *Sister of My Heart* that Divakaruni most obviously explores this theme. Even after marriage sudha is the most important person in Anju’s life not Sunil, her to abort her baby because the prenatal sex-determination test has shown it is female, in spite of Sunil’s evident disapproval she urges her to leave her husband and go to her mother in Calcutta apparently Sudha’s mother is not

sufficiently supportive to start a new life there, promising herself that she would somehow bright her cousin over to America no matter what the cost to her, financially and emotionally.

Similarly Chitra Banerjee Divakaruni retells the life of Panchali, from the ancient Indian epic The Mahabharata and renders it in her feminist narrative *The Palace of Illusions*. She presents a humane version of the fiery Panchali, also known as Draupadi, who was often portrayed negatively in earlier versions of the epic.With sixteen works to her credit, which include *The Mistress of Spices*, *Sister of My Heart*, *Arranged Marriage*, *Oleander Girl* and *The Palace of Illusions*, Chitra Banerjee Divakaruni is an award-winning author, poet, activist and teacher. She deals with the major themes of her creative work like Indian immigrant experience; women, history, myth and multiculturalism. She broadens her interpretation of the epic and presents first-person narrative through Panchali's eyes.

The epic deals with gods, demigods, kings, princes, warriors, and other noble men. Divakaruni's *The Palace of Illusions* provides humanistic touch to the epic and makes it more realistic and relatable. It refers to the gorgeous fortress that the five brothers built and the only place where Panchaali felt at home and also refers to the Hindu concept of Maya. It also explores Panchaali's lifelong secret attraction for Karna, an enemy of the Pandavas. Manivannan- says about the work that it is an "ambitious project, and not without predecessors, choosing as its medium one of world mythology's most idiosyncratic women" (3). The novel has prediction, love, revenge, passion and feminine internal struggle for identity. The reviewer Hyoids' rightly says that the novel highlights a "crucial relation established between womanhood and vengeance. It displays the struggle for identity in a mythological context, which is distinctly Indian, yet transcends cultural borders, all the while showing the illusionary nature of those imposed by history and gender." (2) The plot, in- deed, remains true to the original but the writer Divakaruni offers a vivid and creative companion to the famous poem. She has given a rich tale of passion, love and lust, honour, respect and humiliation of female characters.

The novel has been appropriately titled as *The Palace of Illusions* based on the renowned palace that the Pandavas built for her. It opens with three

narrators—Panchaali, her brother, and her nurse. It presents dissimilar versions of the tale of Panchaali's birth and fate. Her life as a child, her pride, her resentment, her expectations, her love, her passions, her dreams and her inquisitiveness are obviously explained by the writer. She declares that she does not want to support the men around her. Vyasa Rishi warns her that she will not be able to control anything in the future.

Divakaruni holds that women are as equal as men in the society. She shows them to be more than just daughters, mothers and wives of great heroes of the epic Mahabharata. Although the story happened three thousand years ago, similar incidents have appeared in the society and there is no change in treating women as slaves in the present scenario. 'Draupadi who is known as Panchali is a powerful, strong and independent woman. She is very silent and mute character. She is seen as a victim of patriarchy. When Panchali's husband loses everything, he and his brothers gamble her. His opponents try to harass her by removing her sari. No one in the court tries to save her from this act of sexual harassment but she is saved by God. The comparable episodes recur in many places. After so many years, women are still suppressed by the male dominated society. There are hundreds of rapes and sexual harassments happening today. Suppression and oppression of women are very common in these days as in those days. Technically Indians are advanced and innovative for many things.

Works Cited

1. Bhabha, Homi. The Location of Culture. Oxon: Routledge, 2004.
2. Bharathi, C. and S. Kalamani. "A Study of Family Relationships in Chitra Banerjee
3. Brah, Avtar. Cartographies of Diaspora: Contesting Identities. London: Routledge, 1996.
4. Divakaruni Banerjee Chitra, *The Palace of Illusions*, Picador, London. Das, Gurucharan 2009.

---

1. (Research Supervisor) (P/T), Research Scholar, PG& Research Department of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-7
2. Associate Professor, PG& Research Department of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-7

Research Article

Bond and Beyond: Portrayal of Women and Nature in Anita Desai's Fire on the Mountain

[1]N. Priyadharshini
–[2]Dr.B.Visalakshi

There is a further elaboration of how the old woman has been persuaded by her surroundings and her every action with holds her psyche that has been influenced by the nature and could be readily understood by anyone. Thus, these chief characters in Fire on the Mountain, enables one to find the relationship between the nature and woman, and the reputation of nature in the merging material world.

Abstract

Eco feminism is a shortly yet well-established genre in literary research. It ensures the bond between women and nature and how female psyche is soothe by nature and the importance of nature in the materialistic, modern, lifestyle. It proceeds as a world wild perspective and could fit easily into the works of many contemporary female writer around the globe. This paper narrates the bond between female and nature as a part of Eco feminist study. The paper is limited to the study of novel *Fire on the Mountain* by Anita Desai.

Key Words: Eco Feminism, nature, heal, female Psyche, ecology, environment, novels.

The interest developed due to eagerness in understanding the relationship of feminism and environmentalism or the so-called Ecology result in the arise of Eco feminism. It is the result of upholding the feminine value to that of men and developing of interest towards nature than that of respecting culture. Thus, the movement initiates the new way of thought in relating to nature and women pertaining to female body and psyche.

Ecofeminism discusses the difficulties those prevail in the patriarchal society in the name of exploitation and supremacy. As a moment that evolved in the early 1970's, in the American continent, the Eco feminist movement brought into lime light how women were frustrated with the standard ecological development and tried to make more mindfulness among women activist about the issues of ecology.

The development of the Agrarian and Industrial

Revolution, the development of science and machineries, and objective standpoint has caused a utilitarian methodology towards human life. All that which is less promising as far as material headway has been sidelined and were also, underestimated. Man has dismissed nature thinking about it as isolate, crude, boorish, and barbaric. He has changed his track as well as has authorized his prevalence over nature that led over infringement and double-dealing of the normal life.

The ecocritics' upheaval against the objective methods of the world drew in the women's activist psyche extraordinarily whose defiance is against the equivalent framework which is reasonably and intelligently coordinated to structure a man centric restraining infrastructure. Along these lines, a rivalry of reasonable viewpoint turns into a shared conviction for ecocriticism and woman's rights, consequently giving way to the development of ecofeminism.

Anita Desai is a well-known literary genius who started her career as a writer even in her 20's. As a woman of mixed culture, she could clearly estimate the difference between the superstition that exist behind the name of religion and culture and spirituality that has been developed by building the bond among women and nature. Her works uncover her unequal perspective, and yet affirm to the current propensities in present day fiction. Her books are specialized advancements which join elements of both novel and melodious verse and shift the peruser's consideration from men and occasions to a formal plan.

Anita Desai's is a delicate human that she is not only cognizant about the state of female in the public eye yet in addition she was also aware of the state of mother earth in the contemporary period. Desai's bond towards her environment is expressed when she shows concern and anxiety towards her environment in a large number of her works. She is one of the recognised female writers of the post-colonial India who in a work establishes nature as a lead character.

Anita Desai's skill of observation enables her to write in a remarkable manner without allowing the spirit to fall apart. She delineates what she captures, in a stylistic manner. In the course of her writing, she does not allow even the breath of air to spill off from her perception. In her novel *Fire in the Mountain,* she brings out the bond between women and nature in reconciling way.

The novel is a beautiful story that focuses on two elderly women who relaxes at Carignano, spending their old age in a spotless tidy house on a hilltop in Kasauli. Raka is an uninvited guest, the great grand daughter of

one of the old woman Nanda Kaul, who stays with them for a short while. The story revolves around these three protagonists and the happenings in their life in the isolated small hilltop.

One day Nanda Kaul receives a letter from her from her light-hearted and egoistic daughter Asha, that elaborates that Raka has just recovered from typhoid and there is a need of car and rest. She also should dwell in a healthy atmosphere for a speedy recovery. As Bombay his highly polluted and over heat climatically Asha feels Carignano to be the best place for Raka. As Tara, Raka's mother is leaving Geneva, with her diplomatic drunker husband there is no one to take care of Raka.

The uniqueness of Nanda Kaul's personality makes her more forlorn and alienated. She prepares herself after quite a while to get delight from the harmony and magnificence of the solitary spot, Kasauli. She wishes to withdraw to her little house with nature. Yet, Raka meddles her peace and happiness. Because of absence of consideration and warmth from her spouse and family, she wants just to be left unaccompanied to seek after her solitude among the stones and pines of Kasauli. However, there is no finished break from the past recollections as Nanda additionally flops in her endeavours. Albeit an occupied and ideal wife, before, she played out the entirety of her obligations without any frown on her face. Her husband and children never worried about her cravings which constrained her to want for isolation. Her narration of the fake life stories to her great granddaughter Raka brings out her hidden agonies in a very sarcastic manner.

> … my father he was adventurous Raka adventurous he did not like being in the house at all even when he had to do some paper work- and normally lift it to his over seer- he would have a stable and chat taken out under the walnut trees, near the well. He could keep as Eyes on the estate from there are not feel confined. He was happy travelling, exploring. His interest where so much wider, and is collections reflect them. (103)

What Nanda Kaul and Raka possessed similarly was "… one thing, one ambition-to be left alone and pursue her own secrets of life among the rocks and pines of Kasauli" (Pandey 38).

Illa Das is a cherished, childhood companion of Nanda Kaul. She has been characterised as a woman of a piercing and boisterous voice with club foot. Thus, she had become a focus of giggling and mockery where ever she goes. She and her sister have been to be brought up with a glorious and sophisticated childhood but her spoiled brother has wasted all the family

wealth in speculation and has passed on leaving these two sisters being struck by destitution.

Illa is to be appreciated for bearing a kind heart and is benevolent and dedicated in spite of her poverty. She creates sympathy when the school boys teases her and she could do nothing except to feel helpless and self-pity.

> Alas, the spikes were broken. The umbrella squeaked in protest. Boys fell upon it, brought it down into the dust and it bowled along the gravel, kicked helpfully on by them to the side of the road. If there hadn't been a fence there, it would have gone over the age and rolled down, down, down to the bitter bottom of the khud- a sad balloon inflated with Illa Das's dreary past. Roaring in joyous expectation, the boys tried to help it through the rails but it struck fast, protesting like a lady in hoop- skirts at their uncouth sport.
> Illa Das squeaked and shrilled like an agitated shrew, her little eyes blinking tearfully behind the spectacles.
> 'Hooligans,' she hiccuped, her voice breaking. 'I'll go straight to the Principal. I will report to the police...' (118-119)

Illa Das functions as a government assistance official in a town in Kasauli. She agaist social evils including child marriage. She once stops a seven years old child getting married to a old man. The child's father Sheer Singh turns angry towards her. She voices against a Priest who cheats people in the name of God and prevents them in taking proper medicine. She is worried that many young lives are lost because of the villager's blind belief in the words of the Priest. Thus, the Priest revenges her by initiating Sheer Singh against Illa who in turn rapes and murders her.

Raka is the astra of Anita Desai's to unfold the reality of Nanda Kaul. Both Asha and Tara, Raka grandmother and mother respectively are victims of male chauvinism. Raka has witnessed her mother being a mute victim who has been beaten and ill-treated by her drunken father. As a result, she has lost trust in family bond and belongings, where she parallel with her great grandmother Nanda Kaul. Both the great granddaughter and great grandmother belong alien to each other. But once Nanda starts to interfere into the secret life of Raka she begins to realise the reality of her life.

Once Raka arrives at Carignano she begins to explore the place. To her astonishment she comes across many new things such as the factory and the club which she has never encountered ever before. From Ramlal, the cook, she comes to know that it is a Pasteur Institute where animals are being used to experiment for producing serum for mad dogs. He wants her not explore

those areas and stay away from there, as there are jackals those prowls over the corpus of the animals and the place seems to be haunted. Still, she is excited about the things around there and secretly explores the bones, blood, stains and other residues thrown by the institute in the ravine.

Though Raka's disappearance into the cliff hours together annoys Nanda in the beginning later Nanda parallels the activities her great granddaughter with that of her's which results in the development of admiration of Nanda towards Raka. She is very conscious that she never reveals any of the incidence relating to her exploration to neither cook nor her great grandmother. She comes back home bitten by insects and animals, scratched and wound with bruise, muddy and dirty but neither reveals anything to anyone at home.

The emotional bonds of human being are juxtaposed with their environment along with their action by the writer in the novel. The very opening paragraph of the novel cults out a brilliant picture of Kausauli a part of the Shimla Hills and the rustic life over there. Kausauli, the place where the great grandmother Nanda Kaul, the chief protagonist, dedicates her unsurpassed part of her life in spite of being a mere submissive wife of a vice chancellor; describes the relationship of the old women with that of everything around her as a part of nature.

There is a further elaboration of how the old woman has been persuaded by her surroundings and her every action with holds her psyche that has been influenced by the nature and could be readily understood by anyone. Thus, these chief characters in *Fire on the Mountain,* enables one to find the relationship between the nature and woman, and the reputation of nature in the merging material world.

The very title of the novel stands symbolising nature. The top most involvement of the writer pertaining to the environment and atmosphere, the settings and the background, and the total drawing of the rural Indian picture are the components those lead the story. The part of nature, everything such as the trees, season, birds, mountains, gardens, the blooming of the lily after the rain all symbolize the grim reality of life and survival, uniqueness and originality, trust and hope, and above all liveliness and freshness.

Anita Desai has composed this novel in a special way with the emblematic translation. The nature is utilized as a theme as she mixes the nature and characters. This novel is prosperous with the pictures of female ecology interrelatedness. Here is the proof of it like the themes and symbolism - Fire, Ocean, Gorge, Mountains, Raka as a bug, Nurseries are utilized to introduce the internal conflict and outrage of the three characters. By utilizing the illustrations of bugs and creatures like mosquitoes, reptiles, and jackals, Anita Desai draws consideration on how her female characters detest the silliness of their reality.

The report of her dear friend Ila Das' shocking demise is communicated to Nanda Kaul through the call very much like her introduction in the opening of the novel. By hearing it, she is awfully paralyzed, stunned, and broke. She cannot really accept that that her companion would wind up this way. It is horrendous and more awful. Nanda separates and needs to cry yet can't utter a sound. By not welcoming Ila to move with her, Nanda turns into the genuine offender for the assault on her companion. She admits as she wanted them all to be a lie.

> No, no, it is a lie! No it cannot be. it was a lie- Illa was not raped, nor dead. it was all a lie, all. She had lied to Raka, lied about everything. Her father had never been to Tibet-he had bought the little Buddha from a travelling pedlar. They have not had bears and leopards in their home, nothing but overfed dogs and bad-tempered parrots. Nor had her husband loved and cherished her and kept her like a queen- he had only done enough to keep her quite while he carried on a lifelong affair with Miss David, the mathematics mistress, whom he had not married because she was a Christian but whom you had loved, all his life loved. And her children- the children where all alien to her nature. She neither understood nor loved them. She did not live here alone by choice- she lived here alone because that was what she was forced to do, reduced to doing.

Nanda Kaul is discouraged and stifled in her heart by the stunning insight about her companion's assault and demise which drives her too towards being passed away. At that exact instant, Raka gets back, energetically announces her about the setting regarding the fire to the woods. , "Look nani, I have set the forest on fire. Look Nani look - the forest is on fire." (158) Here fire features the psychological injury of Nanda Kaul and Raka.

> R.S. Sharma opines that:
>
> The fire consumes the fictive world of Nanda Kaul and leaves the reader smouldering under the impact of a tragic awareness that he had never anticipated. The only reality of fire symbolizes the funeral pyre - the ultimate consummation. Apparently, Raka is only survivor of this three woman story and she is identified with the triumphant knowledge. (145)

This fire, the productive and damaging power, represents the characters of Raka and Nanda Kaul. Ila Das represents serious areas of strength for a simultaneously a purifier. The terrifying demise of IlaDas who was assaulted and killed, set fire in Nanda's heart. By setting a fire all that will be obliterated. So Nanda Kaul likewise needs to burn down her life and needs to track down

another life.

Right now, Anita Desai relates that Nanda kaul is an image of Mountain or Timberland that Raka has set fire. She investigates the ideal illustration of misfortune by introducing the three honourable characters. Nanda Kaul with her lack of approachability and frustration, Ila Das with her adaptability and hostile to social and shrieking voice, and Raka with her autonomy violate the assumptions for womanliness that is guardian and reliance. They endure and forfeit not just as a result of their own imperfection or need but since of social constraints, and inability to perceive the value of woman.

Work cited:

1. Desai, Anita. *Fire on the Mountain. London: Penguin Book, 1977.*
2. Pandey, Mithilesh K. *Writing the Female: Akademi Awarded Novels in English*. Sarup & Sons, 2004.
3. Sharma, R.S. *Anita Desai*. Allied publishers, New Delhi, 1979.

---

1. Research Scholar, E.R.K Arts and Science College, Erumiyampatti, Dharmapuri.
2. Assistant Professor, E.R.K Arts and Science College, Erumiyampatti, Dharmapuri.

Research Article

Challenges Faced by First Generation Undergraduate Learners in Second Language Acquisition

–[1]A. Arockiyaraj
–[2]Dr. S. Diravidamani

The learners face many difficulties in producing proper sentences on their conversations. Even Subject, Verb arrangement is also a problem. They find difficult with the use of gender as well contrast between singular and plural, etc. They face difficulties in using tenses appropriately. Choice of adjectives and adverbs also is difficult for them.

Abstract

Since English is not the mother tongue of first generation learners who come from poor family background, they have to face many challenges in English language acquisition. Though English is essential for all to communicate worldwide people, there is lack of awareness among the first generation learners of English. Teachers as well as students follow the traditional method instead of practical method. Though there are lots of differences between traditional methods and practical methods, there has been a misunderstanding between them always. If the gap between these two methods is reduced, then the teachers and the learners can achieve their goals. I hear and I forgot; I see and I believe; I do and I understand said by Confucius. Hence the learners must practice English in their day- to-day conversations. As the professional English language teachers today have a good knowledge in various techniques and innovative approaches, they know and understand the origin and evolution of teaching methodologies. The modern teachers use a variety of methodologies and approaches according to the learning context and objectives. There is no doubt if there is involvement and continuous practice in learning, even the first generation learners can speak English better than the native speakers. This paper reveals some challenges faced by first generation second language learners in acquiring competence.

Key words: Challenges, English, first Generation, misunderstanding, modern,

understanding.

Introduction

This research study is aimed at analysing the challenges faced by first generation undergraduate learners in rural area. Two broad influencing factors with respect to students' challenges have been identified as parental support and teacher intervention. The study makes certain common challenges faced by the entire sample size of students. With several similarities among the contexts and challenges faced by our respondents, through better teacher intervention and exposure to several co-curricular activities the degree of challenges faced by the students of rural students are marginally lesser than those of the second generation students.

The term 'first generation learners' (FGL) here refers to the students who are the first one in their entire generation to go to college and receive education or whose parents have attended the formal education up to primary level of schooling. These learners face problems academically, psychologically, socio-economically and culturally. They have to meet out some academic challenges in terms of classroom challenges related to course content, method of teaching etc. For this study, first generation learners are considered those children whose parents have either no education or dropped out. Most of these learners are children of agricultural labourers, bonded labourers with no educational background. These learners do not have any parental support as their parents are illiterate or have received only basic education. English is being spoken almost all over the world and plays a vital role in the minds and hearts of people especially even the first generation English learners whose medium of instruction up to 12th standard is in their mother tongue Tamil.

Even though it is a second language, it has to be learnt for getting job opportunities and to communicate with the people of other states and countries. English language is a vehicle on which we can travel all over the world. Well beginning is a half success. The field of English language teaching is dynamic and changing in the modern era. Knowing the level of English language proficiency of students and utilizing successful ways to teach English language effectively is a problem-solving mission. Situational learning is one of the best methods of learning English. The biggest challenge of teachers is capturing the attention of students and putting the ideas of learning language in the way that it stays in their mind long after they have left the classroom. To make this happen, classroom experience should be redefined with innovative techniques which make the learners learn enthusiastically. To

make the students proficient, the way of teaching should be more practical with interaction between teacher and students. There should not be any compromise in speaking English when the mother tongue interferes.

Problems faced in second language teaching to First Generation Learners

Though English is an inevitable language today, students concentrate only on scoring marks in the examinations instead of language acquisition. They are taught English for about six hours per week in the duration of the respective degree courses, but they do not know how to speak English at least with some mistakes even they don't try to speak English. It is not only the part of students but also teachers'. At present, there are 72 students in a UG class. Due to these over-crowded classrooms, teachers could not concentrate on each individual. To solve this problem, students and teacher ratio may be modified as at least 35:1.When the teachers teach lessons in English, students listen and follow them. Hence, the role of the teachers in the classroom is very important. By listening to the speech of the teachers, students become familiar with some unknown words and they will also able to use the learnt vocabularies in their conversations. It is our hope if the teachers involve wholeheartedly, English language teaching process will absolutely get success.

1.1. Problems in Speaking

- 1.1.1. Production of sounds (expressing sounds of the words accurately)
- 1.1.2. Fluency
- 1.1.3. Choice of words and phrases
- 1.1.4. Constructing sentence in a proper structure

Communication problems may affect the learners' speaking and understanding ability. To avoid the problem proper training should be given in the classroom.

1.1. Problems in writing

- 1.1.1. Committing mistakes in spelling
- 1.1.2. Using poor vocabularies
- 1.1.3. Difficulty with sentence structure and word order
- 1.1.4. Failing to structure ideas effectively

Challenges faced by first generation learners (FGL)

The challenges faced by the learners have been operationalized in terms of students' confidence. Some factors that are very challenging for the first generation learners like distance of the college, not availing like-minded peers, content of study, method of teaching, over-crowded classroom. Interaction with peers and teachers is normal that there is an exclusion of FGLs and college is an alien entity but apart from academics FGLs don't seem to face any problems. In fact, the teachers take remedial classes for these children to make them competent in English proficiency. The teachers point out that these students' homework mostly remains incomplete suggesting the possible challenges one might face to do so. First generation learners in colleges face more difficulty in mastering English. We need to emphasise that there are quite a few college lecturers who are also first generation learners but have succeeded completing their studies and have begun their career as lecturers etc. They also continue to aim at improving their English skills to meet the demands of classroom teaching. The term first generation learner has a deeper meaning when it is applied to the students of Tamil Nadu and their socio-economic status is an important factor here. First generation learners may be not only first learners at college level, but also they might have been first generation learners in the entire formal schooling system. Hence, there is no heavy competition among the learners and also there is no proper guidance and encouragement from parent side. The students' socio-economic situation could make the situation much worse and pathetic. Inferiority complex, leading on to lack of participation, unwillingness and hesitation to be part of a group, internal conflict, satisfied with low level performance, ultimate defeat and self-destruction, etc. Having adequate language skills in reading and writing in their mother tongue (Tamil), the performance of first generation learners in using English may be somewhat less impressive.

The learners face many difficulties in producing proper sentences on their conversations. Even Subject, Verb arrangement is also a problem. They find difficult with the use of gender as well contrast between singular and plural, etc. They face difficulties in using tenses appropriately. Choice of adjectives and adverbs also is difficult for them. Their difficulties are noticed even in those students from families with past college level education. But the level of performance of the first generation learners may be significantly lower than the performance of the group. While rural students in general may face difficulty, first generation learners from rural parts and from cities face greater difficulty in handling English language textbooks and most see memorisation as the best way to score marks. It is important that extensive empirical studies are undertaken to specify the lack of skills and other feature in detail so that

we may be able to device suitable remedial steps.

In the beginning level we need to conduct an entry level test to know the current status of English competence of students. It should be conducted based on the required competence of college students in English. Some of the sections of the test subsections for all the four language skills, a section for identifying the mastery of word, mastery of basic grammatical process, sentence construction, mastery of different types of sentences. Through this research the researcher finds the difficulties of the first generation students in learning English language and finds remedy to improve their English language competence. The reason for selecting the topic about first generation learners of English is the researcher himself is a first generation learner. As the researcher knows the difficulties of the students, he focuses on them.

Task Based Practical Learning-A Remedy

Students may be given tasks like reading newspaper loudly, listening to English news, showing English movies and cartoon serials to listen with subtitles, telling short stories, describing things, involving in model interviews and participating in dialogues to enrich their speaking skill. When they complete their tasks, they overcome from crowd fear and get confidence to speak English anywhere. Now the duty of the teachers in classroom is listening to the speech of the learners and simultaneously correcting their mistakes with positive appreciations. If the process continues further, then the students will be able to speak fluent English within the minimum period. Finally students should prepare a short oral or written report summarising the classroom happenings during their tasks. Then they may be given time to present their report in the classroom itself.

Let's see how a text can be utilised to acquire the basic skills of second language learning:

First a text from syllabus should be selected it may be a short story, novel, play, poem, essay or anything else. Here our concern is with the short story. We'll understand how the basic skills of English language can be highlightened while teaching a short story:

Listening

Listening is passive or receptive skill which is very important in language acquisition but often neglected in the classrooms. If there is no proper listening and understanding, it is not possible to acquire English language easily. Listening skill has three elements such as: input (utterance), processing (understanding the utterance and re-structuring it), and response (another

utterance from the listener). Learners should listen to a good speech or reading and try to understand it. It should be a purposive listening not merely hearing. It creates a platform for speaking creatively. To build the listening skill among the students, the following steps should be implemented in the classroom:

i. Before starting to teach the short story, it should be related to the present situation by asking simple relevant questions to the students. Make them to be curious by appealing their imagination. Consider their responses and relate them to the story.

ii. One or two paragraphs can be read as a model or sample. Then dived the story into many parts and make the students read one by one. The remaining students should be instructed to listen to the story carefully to focus on listening skill.

iii. If the audio/audio-visual version is available for the short story, it will be more beneficial to the learners to comprehend easily. Play the audio before the students and make them to listen to it.

iv. After the listening activity is over, check comprehension of the students by asking some questions on the story like, did you like the story? What is the story about? Who is the protagonist and how many characters are there? What did you understand from the story? etc.

v. Inspire them to answer the question eagerly. The instant result of listening is speaking of the students. They should be given proper directions to the entire activity to acquire the listening skill properly.

Speaking:

Speaking is productive or active skill which has a great significance in the face to face communication. It is a common fact that most of the students lack oral expression skill due to hesitation and fear; there are only a few students who speak in the classroom and they try to grasp the entire activity. Sometimes, such students inspire the mute students by their presentations. The teacher can measure the teaching whether he is going in the right direction from the responses received from the students. The following activities can be a right method for developing Speaking skill:

i. Before and after listening to the story, learners are asked some questions; it is very essential to take response of the students. Inspire them to speak voluntarily in the classroom.

ii. Form some groups and make them discuss the story on different levels: meaning, theme, characters, plot, beginning and end of the story, style

of writing, the author etc. Or these points may be distributed among the groups and each group is to be given one or two points.

iii. Arrange one minute talk on the story. Make each student to speak for one minute in front of the other students. This activity will help to construct and reformulate the understanding of the story.

iv. Tell them to chit-chat on the story among their friends outside of the classroom. This will provide them an opportunity to speak in the informal situation without any hesitation.

v. Build their confidence by involving them in all the activities in the classroom. More the exposure, more the learning of English. Continuous practice will make them speak confidently.

Reading

Reading is passive or receptive skill which is very essential to acquire the second language. The story can be divided into three reading parts such as: pre-reading, actual reading and post-reading. As we have already talked about the process of reading in the listening activity, we have to integrate these skills. Reading can be done in different kinds like extensive reading, intensive reading; skimming, scanning and purposive reading. Attempting all these kinds of reading would be more helpful to the learners. Explain the importance of silent and aloud reading for different purposes. The following points will be more helpful to acquire better reading skill:

i. Teacher should instruct the students to read the story aloud at the first attempt. Divide the story as we did in the in the listening activity and make the students read the story one by one.

ii. Form some questions on their first reading and check their comprehension. Try to know their ideas about the story to check their ability in learning process.

iii. After aloud reading, ask them to read silently for better understanding. Now ask the same questions and find out the differences in the answers.

iv. Guide them while reading the story. Maintain a good reading speed to complete understanding of the story. Reading a lot gives more and more exposure to develop language skills.

Writing

Writing is passive or productive skill which is the last but more significant skill to gain mastery over English. Most of the times, writing is the result of

learners understanding of the text and it is an expression of other three skills. Writing is dominated by speaking and reading. Writing is the most essential requirement of our examination system as almost all examinations are in the form of writing. Most of the students take interest in writing than speaking or reading aloud. It is teacher's duty to construct and shape the writing skill of all the students in the class; after all they have to write answers in their final examinations. The activity can be built to acquire writing skill as following:

i. Ask the students to write their responses on the paper that they have already responded orally. Give them time to write with answer limit such as one paragraph, two paragraphs or five or ten sentences or more.

ii. Frame short or paragraph questions from the story and comment on the theme, characterisation, character sketch of the protagonist, point of view on the story, rewrite the story on your own words, etc. some more questions may be given as their homework.

iii. After checking their answers, corrections can be made if needed to make the writing accurate, concise and perfect. Check coherence and cohesion in their writings.

iv. Instruct the students to avoid the mistakes which they committed in their previous writings and follow the steps for better result in writing.

Conclusion

The literature on first-generation undergraduate students largely focuses on the challenges and barriers they may experience in college. Yet, we do not have a clear understanding of who these students are as learners. To address this gap, this systematic review examines how scholars study and conceptualize first-generation college students as learners. We found the majority of the literature we reviewed conceptualized them as learners based on their academic performance and the influence of cultures on their learning. As there is no support and encouragement from parents and friends, the first generation second language learners feel abandoned and they have to come up in their life with their self-confidence. They may not know the pronunciation of certain words. They have defective pronunciation which makes them feel shy to speak in English in the classroom. They use poor vocabularies in conveying their ideas. Their communication skill can be developed through proper guidance. Involvement of the learners in regular practice decides success. Even though they face many challenges in second language acquisition, everything can be rectified with continuous practices. Determination in the minds of the learners will make them proficient in

English.

References :

1. Aggarwal, Shalini. " Essential Communication Skills", New Delhi: Anne Books Pvt. Ltd., 2009.
2. Banerjee, A.K. "Teaching English as a Foreign Language", Jaipur: Pointer publication, 2006.
3. Brown, H.D. "Teaching by principles", New York : Pearson Longman, 1954.
4. Print.
5. John, Seely. "Oxford Guide to Effective Writing and Speaking", New York: Oxford University Press, 2010.
6. Patil, Z.N. "Innovations in English Language Teaching: Voices from the Indian Class room", Orient Black Swan, Hyderabad, 2012. Print.
7. Ravi Shelly. "Learning and Teaching English in India", New Delhi: Sage Publications, 2006.
8. Sasikumar, V., P.Kiranmai Dutt and Geetha Rajan. "A Course in Listening and Speaking", New York: Cambridge University, 2005.
9. Tickoo, M.I. "ELT in India", New Delhi: Orient Langman, 2004. Print.

1. PhD Research Scholar, Periyar University College of Arts and Science, Mettur Dam, Tamilnadu, India arockiya210@gmail.com
2. Assistant Professor of English, Periyar University College of Arts and Science, Mettur Dam, Tamilnadu, India mani.diravi@gmail.com

Research Article

A Phenomenon of Second Language Spelling: A Study at Undergraduate Level

–[1]D. Eswaran

–[2]Dr. S. Diravidamani

In "Investigating Factors Contributing to Grade Nine Students' Spelling Errors at Don Bosco High and Preparatory School in Batu", Miressa and Dumessa (2011) were concluded that origin of English words was the cause of lack of accuracy. Similar origin from Anglo Saxon, Scandinavian, Greek, Latin, and Roman were easy and accurate among Ethiopian learners.

Abstract

The study has explored that whether there are prominent differentiation between disposition of acquisition and drastic commitment towards spelling in language among second language learners at undergraduate level. It is too hard to know that committing errors and having poor interest to take part in gradual practices of language studies with the global technological feasibilities at the hands of most of the aspirants in a language learning environment on the one hand. Whereas pupil hard to meet hand to mouth background, studied at low fundamental level schools where women are denied to continue studies at school level besides certainly at college level, have exposed English as a second language correspondingly perpetrate intention towards learning. Research on spelling issues has been undertaking in various states of the nation, yet it delivered phenomenal results and suggestions in the process of language learning and teaching, it is an evergreen challenge to the efforts of researchers. The study has aimed at age and gender bias besides arts and science, in addition demolishing de-motivational motives such as fear, desire/interest, and necessity in second language acquisition.

Key words: spelling, intention, demotivation, fear, spell-check, second language.

Introduction:

Despite the fact that proficiency of a language is needed to communicate effectively at fundamental four kills and its subdivisions. When it comes to a second language, difficulty is increased especially

for second language learners (Ellis 1994). It is strongly believed that a second language is acquire through the basic learning skills of first language, anyhow the same process is being an obstacle for the most difficult skill i.e. writing and its subdivision spelling. Mastering of a language is known or understood through an individual's excellence in writing skills. It is measured through apt vocabulary, structure of sentence, cohesion, coherence and sequence of ideas, punctuation, interjection, preposition, and conjunction. All the elements of language are governed by the correct spelling. It might be remembered to create words, as misspelled or wrong spelling definitely gives wrong meaning and shows low language competency and earns shame/ irrespective to the writer. So it is mandatory to know about accurate spelling for each word in source and target languages. Accuracy of any language comes through gradual practice which is governed by intrinsic motivation Dornyei (2001), Hadfield (2013), Raj (2016).

Since decades, spelling error is an unresolved issue in the field of language learning and teaching especially in second language acquisition among undergraduate level learners of Tamil Nadu which is one of the states of a developing and digitalizing in science, technology, engineering, economic, bureaucratic, and education country the India. Spelling error is a global problem (Nyamasyo, 2009) etc. it is easily understood that pupil could commit errors at primary education with lack of exposure in language but it is continued at undergraduate level. This leads the researchers to construct the research questions for the study.

Review of Literature

In the process of learning and writing, it is common among learners that committing mistakes especially spelling definitely close the doors at fundamental level in "Spelling Errors" (1970), respondents committed at least a mistake in each test. The largest mistakes were done in omission, insertion and substitution. Their teachers had agreed that spelling mistakes were affected the process of learning. It evidently reveals that learning is not a product.

Pronunciation has played an effective role in the outcry of an individual's proficiency of language, as it could make anybody to understand without any flaw. Whereas mispronunciation or wrong pronunciation with mother tongues influence might affect one's acquisition of language which led to spelling mistakes (Nyamasyo, 2009).

Omission, addition, substitution and transposition of letters were rested on

pronunciation of a language had strongly agreed. The researcher concluded above ideas with major five classifications: (1) non-identical pronunciation, non-existent English word; (2) non-identical pronunciation, confusion of existing words; (3) identical pronunciation, English spelling rules broken; (4) identical pronunciation, confusion of homophones; (5) identical pronunciation (Hakan, 1977).

Bebout's (1985) revealed that there was less significant differentiation between Spanish and English speakers. It was identified that both speakers had uniqueness in pronunciation i.e. Spanish speakers were stressed on stressed vowels but not by English.

Esther (2015) found out a remarkable conclusion in her study that students were not ready to go through their manuscript after writing in order to check their mistakes. It evidently brought into the notice of readers that self-interest of the learners was played much to take up mistakes rather than external influences.

Huesca and Zyzik (2019) found out that Spanish people were using "c" spelled words rather than "s" spelled words.

They were very much fond of Spanish-English cognates and bilingual influence affected much of the words in English.

Aloglah (2018) identified that there were strong significant differentiation between vowel and consonant alphabet pronunciation among Arab learners that followed to unaware of spelling errors and sound patterns of monosyllabic words even after having years of experience for non-native speakers.

Hammed (2016) agreed with mother tongue interference had affected non-native speakers' spelling errors in English, as same spelling has various pronunciation as well as differentiation between morpheme and phoneme of target language certainly perplexed.

Kusuran (2016) postulated that effective communication required proper spelling, learners' commitment towards spelling proficiency had been growing since first year to third year but lacunae remain in particular words.

Learners were found difficult to spell exactly at vowels and pronunciation of words. They work hardly to give accurate spelling with the wide combination of vowel and consonants which resulted into wrong spelling with the influence of mother tongue interference lead to internalised of languge had advocated by Alhaisoni (2015) and others in their study on "Analysis of Spelling Errors of Saudi Beginner Learners of English Enrolled in an Intensive English Language Program."

Tesdell's (1982) study revealed that non-native speakers were committed much mistakes than native speakers which has rested on their proficiency, like that they did more habitual errors than slips, in "ESL Spelling Errors: A Taxonomy."

In "Spelling Errors in English Writing Committed by English-Major Students at BAU", Al-Oudat (2017) advocated that difference between the writing system of two languages were the causes of errors and mistakes. Alhmed (2017) also agreed that dissimilarity of target and source language had caused errors in writing; he concluded this with the results of eight components in a study entitled, "Different Types of Spelling Errors Made by Kurdish EFL Learners and Their Potential Causes."

There were strong relationship between reading and production of spelling in second language, propagated by Al Jayousi (2011), in the study "Spelling Errors of Arab Students: Types, Causes, and Teachers' Responses."

In "Investigating Factors Contributing to Grade Nine Students' Spelling Errors at Don Bosco High and Preparatory School in Batu", Miressa and Dumessa (2011) were concluded that origin of English words was the cause of lack of accuracy. Similar origin from Anglo Saxon, Scandinavian, Greek, Latin, and Roman were easy and accurate among Ethiopian learners.

Okeke.C et al. (2014) were identified that a greater percentage of the spelling-pronunciation errors discovered in students' speech are not based on mother-tongue interference; rather, they are based on graphological irregularities prevalent in the English language(i.e., based on the lack of one-to-one correspondence between the English letters of the alphabet and the phonetic symbols).

According Sari, learners' write as what they have heard in second language particularly unrecognized and substitution, linguistic differentiation has a role on it.

Subhi and Yasin (2015) were put frothed that there might be changes in the curriculum of Malaysian syllabus such as writing and speaking in order to improve the writing proficiency of learners.

Altamimi and Rashid (2019) were found out that that negative impacts of education system and syllabus, where the syllabus ignores the importance of spelling rules and techniques, and the interference between English and Arabic language when the learners refer to their mother tongue while writing in the English language, students lack knowledge of spelling rules and techniques had affected language proficiency.

Area of Study and Participants

The study conducted among undergraduate level learners of arts and science whose first language were Tamil and had Tamil medium studies till higher secondary at rural government schools of Tamil Nadu, India. These respondents have complete English language exposure at college campus alone. English was just a subject in their school studies.

The study conducted at Sri Vidya College of Arts and Science, Virudhunagar, Tamil Nadu, which is located around 50km away from the big city Madurai. As the study delimits, there were thirty respondents selected for further study, after the pilot study which had fifty five students of undergraduate level.

Research Questions

Why do the undergraduate level learners committing spelling errors?

Is there any significant relation between the undergraduate level learner's intension towards writing and spelling errors?

Objectives

To identify that whether the learners like to write essays.

To identify that whether the spelling errors mitigate learner's interest.

Data collection

The required data for the study was collected through the research instrument that questionnaire copies were delivered to fifty five participants at first phase, on the analysis of data; it was fixed for thirty respondents in next phases. The gathered data were updated in statistical software SPSS 21.0 for windows version for further analysis.

Data Analysis

Figure-1

The above chart depicts about the mean variation between selected respondents' response towards the questionnaire that is mainly classified into arts and science. Both respondents were equally reacted to question number 13, i.e. they were not happy about writing on the other hand very much fond of speaking. In the same manner their response with question number 11 was too poor in comparison with other questions, i.e. undergraduate level learners had lack of interest in "taking note" which lead to a question "whether the second language learners like to listen or not" further they were completely depending on either a note or material for clarification. It would mitigate their critical thinking. Their performance for questions 2, 6, 8 & 15 were correspondingly revealed that second language undergraduate level learners had low proficiency in writing skills for the same reasons of poor reading and listening skills. Besides, their anxiety towards a second language acquisition even after twelve years of compulsory study at schools from primary to higher secondary of state board curriculum. It equally shows that undergraduate level learners are in need of motivation and gradual practice to overcome these obstacles in second language learning environment.

Pared Samples Test

	Paired Differences							
	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean	95%Confidence Interval of Difference		f	df	Sig (2-tailed)
				Lower Upper				
Age-Gender	.50000	.97379	.17779	.13638	.86362	2.812	29	.009

Table-1

Table-1 illustrates that P value (.009) is less than 0.05, so it evidently shows that there are significant difference between language skills of the respondents. Age and gender are remarkable factors to improve a learner's language skills. Similarly between arts and science learners' acquisition of a second language is varied and their level of understanding and committing spelling errors also distinguished. It is identified that female learners were committed less errors than male learners. Like that arts learners were committed much errors than science learners among Tamil as a first language as well as medium of instruction at school studies.

	Mean values		
Question	EIGHTEEN	NINETEEN	TWENTY
Q1	**2.70**	**3.60**	**3.50**
Q2	**5.00**	**4.10**	**4.80**
Q3	**3.20**	**2.60**	**2.80**
Q4	**4.40**	**3.90**	**4.00**
Q5	**2.70**	**3.10**	**2.50**
Q6	**4.00**	**4.30**	**5.00**
Q7	**4.50**	**4.40**	**3.90**
Q8	**5.00**	**4.40**	**4.20**
Q9	**4.20**	**4.10**	**4.40**
Q10	**3.10**	**3.00**	**2.60**
Q11	**1.90**	**1.80**	**2.30**
Q12	**3.10**	**2.20**	**3.20**
Q13	**4.00**	**4.00**	**3.40**
Q14	**3.20**	**3.70**	**3.70**
Q15	**4.30**	**4.40**	**4.30**

Table-2

From the Table-2, it is understood that age has played an important role in the process of second language learning

whereas committing mistakes are in the similar manner of reading. Moreover elder learners were aware about their spelling errors in the same reason for not using full spelling while rendering a word but younger learners were trying to use full spelling while creating words. In comparison with these learners middle aged were much better. As the young learners were unsure about correct spelling, correspondingly their usages of spell check had been growing up which become too hard to remember the particular words in future usages whereas they never afraid of writing with the help of a supporter. Eventually all the participants were wholeheartedly happy with oral communication.

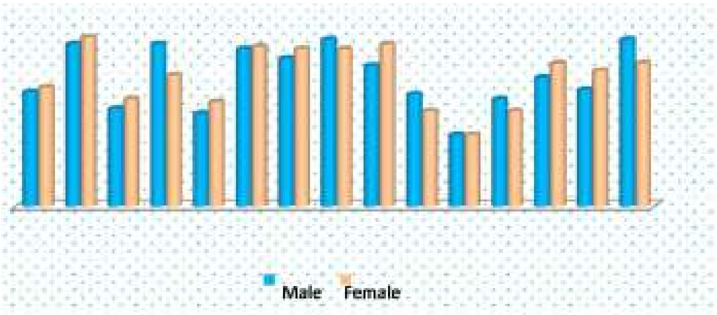

The figure-2 interprets that there are much difference between male and female learners among undergraduate level second language learners' acquisition about spelling and English as a subject in their curriculum. Despite the fact that women are using more number of words than men in regular oral communication, they never be partial with writing skills. In contrast with their anti-counterpart men are not showing full interest to wiring, in addition that do interdependent on extra sources like spelling detector to secure his written communication. It is understood that male learners are like to see video notifications rather than text. This evidently shows that men are unconsciously avoiding text messages which results to misspelling.

	Q1	Q2	Q3	Q4	Q5	Q6	Q7	Q8	Q9	Q10	Q11	Q12	Q13	Q14	Q15
F	2.433	2.116	2.172	.273	2.191	1.612	.500	1.950	.134	.887	1.783	5.087	1.976	.708	.018
P	.107	.140	.133	.763	.131	.218	.612	.162	.875	.423	.187	.013	.158	.502	.982

Table-3

As the p value .013 is less than 0.05, there are plenty of significant difference between learners' interest on studies and outcome. It is identified that undergraduate level learners ought not be prepared own essays or materials for studies, it evidently revealed that they might have lack of interest in second language with some affecting factors such as mother tongue influence, substitution, mispronunciation, and omission, as it is traceable at most of the studies were undertaken especially for spelling errors/mistakes. Here the problems were laid at three stages: fear, desire/interest, and necessity. Naturally fear comes through demotivation which is the result of previous unsuccessful experience that closes all the doors of desires which governs the learners' disposition towards appreciation and achievements subsequently affects the natural process of learning, storing and memorizing. Desire is the outcome of necessity which covers up with reachable things on the one hand, when the requirement is fulfilled with either tangible or intangible rewards, aspiration has come to an end. Essentiality has excluded that all other elements were not significant in comparison among other questions.

Conclusion

The study has put forth efforts on noteworthy modification in the phenomena of recognizing spelling errors/mistakes in second language learning among

undergraduate level learners in a homogenous environment of quantitative and qualitative in nature where the statistical report shows that there have been remarkable changes between arts and science learners as well as male and female respondents in the aspiration of second language learning.

References

1. Ahmed, I, A. (2017). Different Types of Spelling Errors Made by Kurdish EFL Learners and Their Potential Causes. *International Journal of Kurdish Studies, 3,* (2), 93-110.
2. Alhaisoni, E, M., Al-Zuoud, K, M., & Gaudel, D, R. (2015). Analysis of Spelling Errors of Saudi Beginner Learners of English Enrolled in an Intensive English Language Program. *Canadian Center of Science and Education, 8,* (3), 185-192.
3. Al Jayousi, M.T. (2011). Spelling Errors of Arab Students: Types, Causes, and Teachers' Responses. American University, Sharjah.

---

1. PhD Research Scholar, Periyar University College of Arts and Science, Mettur Dam, Tamilnadu, India eswaran5816@gmail.com
2. Assistant Professor in English, Periyar University College of Arts and Science, Mettur Dam, Tamilnadu, India mani.diravi@gmail.com

Research Article

Social Background Exposes Distinctiveness in Namita Gokhale's Gods, Graves & Grandmother & Rohinton Mistry's A Fine Balance.

–[1]Dr. M. Leena
–[2]Dr. N. Kavitha,

Then, Gudiya's identity struggle took her to the Pandit, who assessed her future with her horoscope. He said the name and fame will follow Gudiya, but she has a secret enemy who would try to harm her. The identity crisis of Gudiya is visible even in the last part of the novel when a pretty girl sits next to Kalki in the railway station and gives him an interested glance, Gudiya feels jealous.

Abstract:

This paper focus on the status of the women characters in the select novels of the authors Namita Gokhale and Rohinton Mistry. It is in fact a very difficult task for an individual to attain a recognizable status in this competitive world. No matter to which gender group an individual belongs it is challenging for all to create an identity. Amidst such a prevailing situation in the society when it comes to a woman the chore becomes more tedious. Playing different roles in the family and simultaneously striving to get an identity in the society which imposes cultural values on women is the most complement scenario for women since ages. These are the key points that are focused in this paper. It reveals how Gokhale and Rohinton portray their women characters and how they finally create their own identity.

Key words: Identity, Self realisation, Behaviourism, Desires, Motives.

Introduction:

Literature serves as the basis to know the history of mankind and the various cultures that are being followed in different parts of the world. It also helps a person to develop a unique style of writing. While going through the literary texts, one will be able to identify different styles used by the writers and get accustomed to a specific writing style on their own. The unique aspect of literature is that it addresses humanity directly. Therefore, it enables one to understand the human nature and their behaviour. They indeed serve as a tool to create awareness about the various ongoing issues.

This paper brings out the parallels in the themes of an Indian writer and a Indian born Canadian writer. An analysis is made on the select novels of Namita Gokhale and Rohinton Mistry. Namita Gokhale was born in 1956) is an Indian writer, editor, festival director, and publisher. Her family belongs to the regions of Kumaon in the Himalayas and she spent her childhood life in New Delhi and Nainital for the most part. This serves as the main reason for the influence of the regions of the Kumaon and the Himalayas in her works. Her debut novel, Paro: Dreams of Passion was released in 1984, and she has since written fiction and nonfiction, and edited nonfiction collections. She is not only a writer but is multifaceted such as she had hosted around hundred episodes Kitaabnama: Books and Beyond, a multilingual book-showin Doordarshan , the founder of Jaipur Literature Festival.

Namita Gokhale plays a prominent role among the contemporary Indian English literary writers. She was grown up by her grandmother, under whose nurturing she enjoyed the fruits of liberty. She had fascination towards reading books in her young age and this serves as the root cause for her fascination towards writing and publishing. She ended her collegiate education abruptly when she found that the curriculum of Indian Literature to be biased. She married Rajiv Gokhale at the age of eighteen. Her family is highly influenced by politics since many of her family members have a political back ground. Gokhale was diagnosed with uterus cancer in the 1980s and this influenced her writings. Her miseries then followed in the form of the demise of her husband when she was 35 years old. Her literary career started in 1970s.She has written twenty books including nine novels. Gokhale is also known for her passion towards publication services.

Indian English writers made it mandatory that all their works to reflect the prevailing situation in their country. This of course make the readers to understand on how to face the problems that they face in the society. Revelation of one’s personality motivates them to attain distinctiveness in the society. On the other hand it is the social background makes the people to face various situations and problems in their life which obviously leads them to achieve their individuality. Gokhale’s setting of optimal cultural environment as a back ground of her plots allows her to highlight the identity of the characters precisely.

Rohinton Mistry was born in 1952 is an Indian-born Canadian writer. He has been the recipient of many awards including the Neustadt International Prize for Literature in 2012. Each of his first three novels were shortlisted for the Booker Prize. His novels to date have been set in India, told from

the perspective of Parsis, and explore themes of family life, poverty, discrimination, and the corrupting influence of society. Mistry has become one of the outstanding writers of the post colonialist writing movement. Though he now lives in Toronto, he concentrates on the social background of his native place, Bombay. He describes elegantly presents the Indian scenario in his novels. He often explores the pathetic status of poor people in India. He not only aims on their tragic situation but also certainly elucidates how the poor people balance their sorrows and try to feel the happiness in their simple life. Critics have praised Mistry's growth as a writer and his transparent style. His writings give a glimpse into the life of the people of his community and their experiences as a minority in a highly diverse society. The characters of his novel are ordinary men and women whom can be seen in everyday life.

Search for self is one the features found in both Namita Gokhale & Rohinton Mistry's works. Identity is ultimately made by the characters of these two authors towards the end of their plot. It is the social background that forces the characters to overcome their miserable situations in their life. It is only through the cultural values that are imposed on them by the society helps in creating an identity of their self. Women characters like Grandmother, Gudiya, Phoolwati, Roxanne strives from the beginning of the novel to attain a place in the society. Though they were unable to achieve as they dreamt still somehow, they make themselves to have a satisfied life with what they had in their life. As it is already discussed that search for the self is yet another feature found in Mistry's works. *A Fine Balance* is evidence for this, where he gives a vital role to a woman character Dina. It is seen in his novel very well that how he projects a female's status of mind, expectation, struggle and her longing for self-identity. It is seen in his novel very well that how he projects a female's status of mind, expectation, struggle and her longing for self-identity. For one thing, the novel is set in the mid-1990s, and while the world through which the characters pass is rich enough, the background isn't as naturally dramatic as it was with *A Fine Balance*'s depiction of the emergency. And if in the previous novel Mistry took up with poor, dispossessed characters through whom he could explore, in his phrase, "history from the bottom up," in the new one he settles in with 79-year-old Nariman Vakeel, a former professor of English slowed increasingly by age and the onset of Parkinson's. For the first part of the novel, he lives with two of his adult stepchildren, Jal and Coomy, in an apartment building called Chateau Felicity. Of course it's neither a chateau nor particularly felicitous, least of all for Nariman. Poverty is also one the causes for the women characters in Gohkale's *Gods, Graves and Grandmother* & Rohinton Mistry's *A Fine Balance*.

Gokhale in her novel Gods*, Graves and Grandmother*, when Gudiya's grandmother managed their poor situation by creating a new temple near their house, money started pouring in. This gave them a new identity and felt some hope for the rest of their life. Soon their temple became popular and a number of devotees started visiting the temple on a regular basis. To achieve success, Ammi had to face a number of problems right from the beginning. She had to tackle people like Sundar Pahalwan to continue to stay in the place. She gave him the money on the first week, and when he comes the next week, the entire scenario changed. It was Sundar who left the amount of eleven rupees in Ammi's temple. "Similarly, when the man from the Municipal Corporation comes with the demolition order for the 'pucca cement structure' which now houses Ammi and Gudiya, he falls at Ammi's feet and begs her forgiveness for the 'blasphemy'" (Srivastava 113).

When Saboo buried Shambhu in the thickets behind the temple, the grandmother was with him. Though the grandmother was arrested during Shambus's death still her popularity among her devotees brought her out of prison with ease. Her identity with Kailash Shastry is visible with his statement that "I can sense that she is an extra-ordinary woman with remarkable siddhis" (qtd. in Srivastava 114).

After the loss of the grandmother, Gudiya was unable to take any firm decisions. Most things including the grandmother's cremation took place without any consultation with her. She felt that her life is always filled with "a haphazard and unreal quality" and the death of her Ammi marks detachment of her last link with reality. She was already aware of the fact that the grandmother is no more her Ammi and this has been clearly indicated by the grandmother through her long silences and lack of involvement in engaging Gudiya. After all, she felt that she has to continue her life even without her grandmother. Therefore, she moved to stay with Phoolwati. Gudiya felt comfortable with her new home and felt safe with her company. She thought that Phoolwati serves the role of her Ammi to a great extent.

> "First outburst of her readiness to lead a carefree life is seen when she angrily retorts to her teacher Malvika Mehta. She becomes the new woman who is independent and confident enough to become what she likes without the excessive over brooding help or guidance from anyone. She develops a totally new identity—her transformation is from Gudiya, which means doll, to a well-matured woman Pooja, who wants to 'break out into a new life'" (Achankunju 79-80).

This made Gudiya feel that she has to revamp her identity as an individual. She felt that her present state under the care of Phoolwati is not convincing and she wanted to create a new identity as a rich person for her—"I resolved to change my name, my identity, my very self. I became a creature of possibilities, unfettered by a past, totally involved in the process of becoming. All I lacked was a name" (Grandmother 127). Consequently, she changed her name to 'Pooja', her favourite film star, and waited to find a suitable surname. She felt that being unaware about her father, she has a wide scope to add any surname of her choice. Finally, she settled with her new identity as 'Pooja Abhimanyu Singh'. Creation of her new identity did not stop with her name. She started preparing herself with all the qualities as the name suggests. As a first step, she practiced the signatures and started creating some clues and signs of her new identity. To mould her identity and behaviour, she changed her daily habits to a great extent. Pop music, dangling earrings and a regal look became a part of her daily life. With the help of Phoolwati, she took an old photograph of a noble man from a junk shop and the person in the photograph was to be identified as her father.

Then, Gudiya's identity struggle took her to the Pandit, who assessed her future with her horoscope. He said the name and fame will follow Gudiya, but she has a secret enemy who would try to harm her. The identity crisis of Gudiya is visible even in the last part of the novel when a pretty girl sits next to Kalki in the railway station and gives him an interested glance, Gudiya feels jealous. Within a short duration, she questions herself whether her love for Kalki is still the same as earlier. Then, when the train arrived and Kalki left to Bombay, she felt lonely. Then she started questioning about her identity. She has never known her father and has not learnt any lessons to be dependent on a man for anything. With this knowledge, she had a series of questions in front of her—"Why had I been so afraid of Kalki? Why had I let him beat and abuse me as I had done?" (Grandmother 224). She thought that his absence is an opportunity for her to grow and to escape from assaults. She went to Phoolwati's house where Sundar was killed in front of his house. Kalki too did not write to Gudiya from Bombay and she was not sure about his whereabouts. This made Gudiya and Phoolwati to stay together. Gudiya's daughter was named Mallika and she resembled the grandmother in all manners. In the last few lines of the novel, Gudiya realizes that most of them are dead but the world is limitless—"Grandmother is dead, Roxanne is dead, Sundar is dead. Even Kalki is gone, but the end of the world is nowhere in sight" (Grandmother 240).

Similarly Rohinton Mistry in his novel, "*A Fine Balance*", Rohinton

Mistry has portrayed a galaxy of characters efficiently and elegantly. By portraying a cross section of Indian society especially those who called riff-raff, the writers draw the real picture of India. There are four protagonists Dina Dalal, Ishvar, Om Prakash and Maneck Kohlah in this novel. The other leading characters are beggar master, Rajaram, the hair collector. Thakur Dharmasi, Vasantra Valmik, Ibrahim the rent-collector, Shaker- the beggar, Ashraf chacha, Mumtaz Chachi, Dukhi Mochi, his wife Rupa, Mrs. Gupta Narayan, Radha, Rustom Nussawan, Ruby, Monkey Man, Jeevan, the tailor and others.

In "*A Fine Balance*", however falls victim to enforce sterilization, indicating the socio-political environment in India during 1975-77 Emergency. His characters, for example, experience the everyday trials of human condition such as the death of family members and friends, financial despair and common disagreements that occur between husbands and wives. In a review of "AFine Balance", Linda Revie points out that while Mistry does include several depictions of male sexual desire and power. He also expresses the despair and indignities of the human experience-when all is said and done. Mistry creates '*A Fine Balance*' between the sexes. In another review, John Ball observes that Dina, the main character in the novel emerges as a woman of rich complexity and strength. Mistry's portrayal of Behroze, an emancipated parsi girl in 'Tales From Firozsha Baag" explores a new generation of young women who despite the mistrust of conservative parents, are willing to play "a lead role in seeking intimacy with boys of their age group".

The four main characters converge in Dina's apartment as refugees from contracting caste, gender or social roles. They each live in an unimportant position in the context of India. They are transferred by the community and try to center their own individuality. The apartment is viewed as the worldly site of individuals in a troublesome society. Their life in Bombay is contrary to their expectations and symbolizes the anguish, pain, anxiety and restlessness of people cut of from their native villages. Dina fights for her independence and individuality but she faces the continuous Failures and threats by society. Finally she loses her flat and forced to her brother's home as a servant.

Rohinton Mistry highlights crucial events in the country's chronicle by depicting the background of each protagonist. "*A Fine Balance*" illustrates the deeper insight of political, nativity and struggle of suffering people. It always focuses on the deep structure of the individual's existences of human life. "*A Fine Balance*" is taken up for analyzing the human sufferings in which Rohinton Mistry ultimately gives a space of endless sufferings of

the individuals. Dina, chooses to be displaced her home, because she wants to assert her individuality and sense of self. She has grown up in Bombay, but her sense of independence after her husband's accidental death keeps her away from her family. She resolves to restructure her life without being economically dependent on a man. For her, life is a series of emotional upheavals and relocations of emotional bonds. Emergency made both Dina and Manech fail in their attempt. In the name of poverty alleviation and civic beautification, beggars are carried away and made to be slaves in labour camps.

Conclusion:

Both Namita Gokhale & Rohinton Mistry have highlighted how women protagonists in their works face the society and get an identity. They reveal their individuality. It also highlights the creative energies and the destructive energies that exist in people and the process of attaining the individuality. Finally, overcoming all the hindrances they expose their distinctiveness in this society.

References:

1. Gokhale, Namita. *Gods, Graves, and Grandmother*. Penguin Books India, 2001.
2. Mistry, Rohinton. *A Fine Balance.* Faber and Faber 1996. Print
3. Mistry, Rohinton. *Such a Long Journey,* Penguin Books in Association with Faber and Faber,1991.
4. Achankunju, Chaithanya Elsa. "Women and Power in *Gods, Graves and Grandmother*." *Mapping Territories: Critical Insights into Post-Independence Indian Writing in English*, edited by Felix Moses and S. Samuel Rufus, PG and Research Dept. of English, Madras Christian College, 2012, pp. 74-83.
5. Srivastava, Sharad. *The New Woman in Indian English Fiction: A Study of Kamala Markandaya, Anita Desai, Namita Gokhale and Shobha De*. Creative Books, 1996.
6. Goel, Savitha. "Diasporic Consciousness and Sense of Displacement in the Selected
7. Works of Rohinton Mistry" *Parsi Fiction Vol.2.* ed. Novy Kapadia. New Delhi:
8. Prestige Books, 2001. Print.
9. Barucha, Nilufer E. *"South Asian Novelists in Canada: Nrratives of Dislocations and*
10. *Relocations*. "The Literary Criterian 34.1 and 2 (1997): 13-22. Print.
11. **Shortened** *Grandmother* **Title** *Gods, Graves, and Grandmother*

1. Chandrika, Assistant Professor (Selection Grade), Sri Ramakrishna Engineering College, Coimbatore – 641022, Tamilnadu , India, leena.mahalingam@srec.ac.in
2. Associate Professor, Department of English, Sri Eshwar College of Engineering, Coimbatore,Tamilnadu,India, kavithavarthanan@sece.ac.in.

Struggle and Success of Women in Rohinton Mistry's novel *A Fine Balance*

–[1]Dr. K. Kannadasan

Roopa and Dukhi were pleased with their boys' progress in learning to sew to their delight. Ishvar made his folks some new outfits. Ishvar enthusiastically described how they picked and matched fabric scraps for clients' requests. They purchased their father a waistcoat and their mother a shirt. Roopa broke down in tears of joy.

Abstract

Women in general are known for their tolerance and sacrifice. Women are given equal rights by the constitution in this independent India. Government takes many steps for the development of the women in the country. But still they are considered as weaker sex. Most of the people have the freedom to make choices in their life. But many times this freedom of making a choice was denied to women. Mistry only scratches the surface of the broad range of females; he has created in his fiction. Mistry focus on the wives, widows, mothers and single women in each of his books. This paper attempts to make a study on how women are suppressed by the society and how they overcome the Through the character Roopa in *A Fine Balance*, Rohinton Mistry depicts the oppression faced by the woman for their existence in a male dominated society.

Key words: tolerance, sacrifice, constitution, oppression, existence, domination

Struggle and Success of Women in Rohinton Mistry's novel *A Fine Balance*

Introduction

Rohinton Mistry's writings have a great affinity for Parsis and their culture. Despite the fact that Mistry resides in Canada, he writes virtually little about the country. Instead, he concentrates nearly entirely on India and the Parsi community's place in Indian culture. Even in his short stories about Canada, he frequently depicts the migrated land as the site of a Parsi Diaspora, where the immigrant

Parsi searches for his identity. In his works, he depicts the existence of the Parsi community and its battle for survival.

Mistry investigates the challenges, concerns, and wretched plights of women immigrants when settling down in a new environment in a foreign nation, particularly in the works of Rohinton Mistry, in light of the current sociopolitical situation. Rohinton Mistry has established himself as one of Canada's most critically praised writers in recent years. In the field of literature, he has amassed enormous acclaim. The Parsi Community, whose identity has been historically questioned, is represented through Mistry's characters. It is a progressive community with a bleak future and a wonderful history. Wherever he has the chance in his novels, Mistry tries to include facts about the Parsis' lifestyles and culture.

Rohinton Mistry's literature has gained tremendous praise but he has been chastised for his depiction of women. The female characters in Rohinton Mistry are one-dimensional and restricted, according to critics. They are considered as housebound, seldom leaving their flats or complexes, whereas their male counterparts travel often, not just in and around Bombay, but even to destinations like Delhi. This analysis examines the ways Mistry interprets women's situations their experiences, histories, and responsibilities as wives, widows, mothers, and single women within the cultural rubric of Parsi India by looking at the social contexts of his female characters' lives from a feminist perspective.

A Fine Balance is Rohinton Mistry's second novel, which was released in 1995. This novel was nominated for four awards in 1996, including the Los Angeles Times Book Prize, and was shortlisted for the Booker Prize. This work primarily focuses on the challenges that middle-class people encounter, and it vividly shows rural India as a place of injustice, brutality, and hardship. The characters in this tale are folks who live on the outside of society rather than at the centre.

Women's wishes are not appropriately addressed because of marginalization. Mistry depicts gender equality as a figment of the imagination. The majority of the women characters in Mistry's works are shown in their own homes. The key components intertwined together in a woman's life are a lack of self-confidence, dependency, and lack of knowledge. The lack of education, according to Mistry's work, is the cause of women's oppression. Women are denied an education not just by society, but also by their family.

In the novel, *A Fine Balance*, Roopa, a poor Chamaar girl, takes tremendous care to raise her children despite her poverty. Roopa married Dukhi Mochi

and had three children with him. In the next six years, she plans to have two daughters. But none of them made it. Her family was overjoyed when she gave birth to a boy later. Ishvar was the child's name, and Roopa guarded him with an unique zeal and love. She always made sure he had plenty to eat. She happily gave up her own meals for the sake of the youngster, and she didn't think twice about stealing. Roopa began paying midnight visits to the cows of various landowners after the milk had dried up. She snuck out of the hut with a little brass vessel somewhere between midnight and cock-crow as Dukhi and the infant slept. She only milks each cow a bit at a time so the owner doesn't notice a drop in the output.

Roopa began paying weekly visits to orchards in season and ready for harvest after Ishvar lost his teeth. Before picking the fruit, her fingertips touched it for ripeness in the darkness. She limited herself to a handful from each tree once more, hoping that her absence would go unnoticed. She takes stuff at night in order to provide a healthy environment for her child. She has stolen not just for her children, but also for her husband. Dukhi once snuck out to steal butter to put to the welts formed in her husband's back and shoulders after he was thrashed for allowing goats to stray onto a neighbor's farm. Roopa was quite concerned about her sons' future. She wished for them to have a prosperous future. She didn't want them to go through what she and Dukhi had gone through at the hands of upper- class people. Dukhi battled with her husband when she took Ishvar to work at the age of seven. When the point of a buffalo's horn touched Ishvar's cheek, he was severely damaged.

> Roopa bathed the gash and wrapped the dark-green ointment over it. Afterwards, when she was calmer, her fury at Dukhi subsided. She tied protective amulets to her children's arms, reasoning that it was the evil eye of the Brahmin women that had hurt Ishvar. (AFB 103)

Roopa spent her entire life worrying about her husband and two boys, Ishvar and Narayan. Because the villagers had been unkind to Dukhi's family, he chose to move to town and work to help support his family. Because of their birth, even the children were refused an education in school. The school administrators thrashed them to their core. Roopa was suspected of taking butter for the children's wound once more. Dukhi took them to his friend's house in the town to study tailoring when they grew older. They stayed for months to learn how to sew. Roopa was missing them a lot at the moment. They returned to meet their parents after three months. Roopa stole some butter once more to offer her children some delicious and nutritious food. She desired for her children to be healthy as they grew older. When they

were living in a stranger's home, she expected the same thing. She shared the embarrassment as well as a mixture of joy and grief.

Roopa and Dukhi were pleased with their boys' progress in learning to sew to their delight. Ishvar made his folks some new outfits. Ishvar enthusiastically described how they picked and matched fabric scraps for clients' requests. They purchased their father a waistcoat and their mother a shirt. Roopa broke down in tears of joy. "Roopa burst into tears as soon as she put on the blouse. Ishvar and Narayan looked at their father in alarm who said she was crying because she was happy." (AFB 120-121) She hugged them both, beaming with joy. She proudly displayed her new attire to her neighbours. For the next week, they both wore the clothing. Roopa then cleaned and dried the clothes before putting them in sacking and securing the bundle with a thread. Roopa was instrumental in the formation of a happy family. Even though they were poor, they shared happiness, because a happy house is a happy home.

As Jaydipsinh points out: through an intensely meaningful portrayal of women characters in this novel Rohinton Mistry has globalized the theme of contemporary complexity inferring that in the modern society beset by dynamics of culture, confused by cultural by cultural cross fertilization, marred by religious fanaticism and converging on inner fracture, the system gets protected from the ultimate fragmentation by one women or the other.

Conclusion

Mistry has achieved a delicate balance between death and bigotry, familial care and control in his work. In a single work, Mistry has described diverse female characters as kind, affectionate, rude, bashful, and independent. Women have room inside themselves, even if they climb to great heights with academic degrees and economic freedom. Relationships should be revitalized to maintain life's equilibrium then only a healthy and happy man-woman connection will grow. According to feminist standpoint theories, the process of getting knowledge begins when viewpoints emerge. They develop when people who are excluded and essentially invisible to the epistemically privileged become conscious of their social dilemma in terms of socio-political systems of oppression, and they begin to speak out. The revolutionary spirit of female characters of Mistry was examined in this chapter using Standpoint Theory. Despite the fact that she suffers from the effects of her past, she never abandons his objectives and goals. She is adamant about her viewpoint and wants to show that she is capable. She comes to a halt in her quest for freedom from the clutches of her family members, and she successfully achieves her emancipation by confrontation with her alienation.

Work Cited

1. Mistry, Rohinton. *A Fine Balance*, USA: Vintage International, 1997.Print.
2. Basantani, Vinita. *Representations of Identity: A Critique- Rohinton Mistry*. Authors P,
3. 2016.Print.
4. Bhautoo, Nandini. *Contemporary Indian Writers in English*. Cambridge UP, 2007.Print.
5. Bhabha, Homi K. The Location of Culture. London: Routledge, 1994. Print.
6. Dodiya, Jaydipsinh. *Perspectiveson the Novels of Rohinton Mistry*. Sarup & Sons, 2006. Print.
7. Haldar, Santwana, Ed. *Rohinton Mistry's Such a Long Journey: A Critical Study*.Asia Book Club, 2006. Print.
8. Jain, Jasbir, ed. *Writers of the Indian Diaspora. Theory and Practice*. Jaipur: Rawat Publications, 1998. Print.
9. Rizi, Peter. *Rohinton Mistry*. Manchester University Press, 2004. Print.
10. Williams, Raymond. *Resources of Hope: Culture, Democracy, Socialism*. Londan: Verso, PP.3-4.1989.Print.

---

1. Assistant Professor Department of English Mahendra Arts & Science College (Autonomous) Kalippatti, Namakkal

Research Article

Defocalization and the Magical Realist Text

–[1]Indusoodan I

Magical realism necessitates extensive reading and comprehension that is not constrained to a specific geographical location or people. When borders are skipped or blurred, magical realism is at its best. The components associated with European realism and fabulism are woven together which results in the merging phenomenon.

Abstract

This research paper intends to comprehend the traits of magical realist texts in the vein of Wendy B. Faris' 'defocalization'. Magical realism is essentially employed to describe the howabouts of the amalgamation of magic with mundane. Under this canopy, in addition to the general investigation of common features that help in the making of 'the genre', the following dualities such as magic-myth, history-reality, past-present, natural-supernatural are also explored in works of art. The researcher using the critique of Faris as the theoretical framework, conducts an analysis of the features of magical realist writing through this study.

Key Words: Magical Realism, Defocalization, Defamiliarization, Postcolonialism, Postmodernism

Defocalization and the Magical Realist Text

Despite the fact that magical realism has the ability to be utilised as a literary theory, it still primarily relies on a variety of reading approaches in addition to narratological standpoints. The situations in these writings typically have a tendency to be presented in a manner that is unfamiliar to the reader. In other words, the readers will have different experiences of the scenarios since the familiar worlds or entities have been presented in an unusual manner.

The magical realist mode of literary narrative defamiliarizes representations of reality in ways that are unique from other schools of non-realist genres that emerged in the 20th century. These schools

include surrealism, fabulism, and others. The ability of a literary piece to make the everyday world seem unfamiliar is, in a sense, the defining characteristic of magic realist fiction. In magical realist fiction, defamiliarization occurs not just as a result of the supernaturalization of events, but also as a result of the realistic description of these events. Naturalization and supernaturalization are strategies that operate on the same plane in magical realist texts.

Magical realism necessitates extensive reading and comprehension that is not constrained to a specific geographical location or people. When borders are skipped or blurred, magical realism is at its best. The components associated with European realism and fabulism are woven together which results in the merging phenomenon. As a literary movement within post-colonialism, it is opposed to the naturalism and realism prevalent in European thought. In addition to providing unusual reading experiences, there is also a growing demand for hybridity as a method for the study of different cultures.

Wendy B. Faris suggests in the book Magical Realism: Theory, History, Community that the effects of magical realism are accomplished on two separate fronts. The first is an epistemological one, and it entails making the perception of a character outstanding. The second is an ontological one, and it entails making the setting into a fantastic one.

Faris, in her book Ordinary Enchantments: Magical Realism and the Remystification of Narrative, finds that the magical realist genre demonstrating instances of 'defocalization' when evaluating magical occurrences within the context of realistic modes of storytelling (43-59). She provides more explanation of the term 'defocalization' by describing it as an effect that broadens the perceptions of things that cannot be explained but can only be experienced. In addition to this, she goes into great detail into the factors that contribute to this effect and how it is accomplished in the texts. Postmodernism is at the heart of Faris's criticism, and her strategy for developing this idea is based not so much on narratology as it is on concerns of poetics and genre. The following is a list of the five primary traits that can be found in magical realist texts:

i) Faris writes that in magical realism, realistic and fantastic are held together in a fashion that the elements of magic grow naturally out of the reality. The presence of irreducible element(s)/the elements of magic is the first distinguishing feature of this mode of writing. The incomprehensible nature of the occurrences is largely because of the irreducibility of the text. These occurrences defy all known principles that govern the universe and cannot be explained (7). In the works of magical realism, Faris asserts that

‘magical occurrences actually do happen’ (8). Faris also differentiates between several different facets of the ‘irreducibility’ of magic and how the magical interacts with the real. In magical realism, the magical and irreducible aspects are in pursuit of the unconscious beyond what is logical. Yet, these elements fetch concealed situations of an individual to the postmodern discussion of the text (33).

ii) The second primary characteristic is the solid existence of the phenomenal world. The creation of a fictitious universe relies on descriptions that are accurate representations of the real world (14). Due to the fact that an overwhelming amount of realistic details are used, the fictitious universe does not appear to be very different from the real world. Texts that fall under the category of magical realism are characterised by the presence of both actual particulars of a sensory nature and interesting mystical subtleties.

iii) The third component is the fact that the readers swing or stuck between two distinct interpretations of the real world. In tandem with disquieting uncertainties, the writings facilitate a variety of interpretations of the events that took place (17).

iv) The coming together of two different realms is the fourth significant quality. When two different universes are brought into contact with one another, there is little to differentiate them from one another (21).

v) Other questions pertaining to time, location, and identity are beginning to surface as well which is the fifth interesting point in magical realist texts. To put it another way, timelessness of time- past, present and the future is an exclusive feature in texts; space is frequently contested; identity is occasionally lost (23). The term ‘magical realism’ refers to a literary genre that does not necessarily depict historical events accurately but rather reimagines them in a way that is extremely alluring. In the writings, historical problems are discussed, and attempts at healing historical scars are made as well.

In addition to the characteristics listed above, magical realist writing also contains the secondary characteristics listed below such as, (a) the presentation of metafiction gloss that adds to the blurring effect (12), and towards this same images and metaphors are used abundantly; (b) the reader is able to experience the verbal magic; (c) a narrative style which is primitive and of fresh outlook but is tolerated by everyone; d) the use of both repetition and mirror reversals; (e) transformations; (f) the subversion of established social order through the employment of magic; (g) the underpinning of old belief and local lore; and (h) the attribution of magic to a mysterious sense of communal relatedness.

In most cases, the following characteristics can be identified in works of magical realism literature: a blurry sense of time and location, as well as the presence of fantastical or mythological beings. Because no two writers are the same, the inclination naturally fluctuates from one writer to the next and from age to age in order to account for all of these typical and atypical characteristics in the texts. It is a joy to delve into the magical realist genre's otherworldly, scary, and breathtakingly beautiful world. The reader will have a deeper comprehension of both the theoretical and the practical aspects. The readers' preconceived perceptions of the universe are challenged by this particular genre. There is an increased sense of mystique, which is another essential component of works of magical realism. The author successfully alters his audience's perspective of the world around them without ever revealing the secrets behind his magic. In the genre of magical realism, the supernatural and the everyday are weaved together in a seamless fashion. To enhance the genuine quality of the literature, the characters, including humans and their circumstances, are cloaked in mystery.

Other aspects that define magical realism include hybridity and the critique of political systems. Magical realist writers employ tactics that have been associated with hybridity, as is discussed in the book Magical Realism: Theory, History, and Community. Magical realism is best displayed in environments that are incongruous with one another, such as those that juxtapose cities and pastoral or occidental and oriental surroundings. The narratives of this genre frequently comprise crossing borders, blending identities besides undergoing transformations. The authors create such works to show one of the most essential purposes of magic realism, which is to reveal a reality that is profound and genuine than what ever can exist in reality.

A subtextual critique of society, particularly of the elite, can also be found within works of magic realism. The magical realist genre attempts to mend the broken reality of common notions. Literature that adheres to the magic realist genre is inherently radical and rebellious due to its opposition to socially dominant forces. Magical realist writing has grown increasingly common down the twentieth and twenty-first centuries. It continues to be a promising area offering vast scope for critiquing and comparison.

Work Cited

1. Abrams, M. H and Geoffrey Galt Harpham. A Glossary of Literary Terms. 10th ed.
2. Wadsworth Cengage Learning, 2012.
3. Bowers, Maggie Ann. Magic(Al) Realism. Routledge, 2004.
4. Faris, Wendy B. Ordinary Enchantments: Magical Realism and the Remystification of

Narrative. Nashville: Vanderbilt UP, 2004.

5. Hegerfeldt, Anne C. Lies That Tell the Truth: Magic Realism Seen through Contemporary Fiction from Britain. Rodopi, 2005.
6. Zamora, Lois Parkinson and Wendy B. Faris. Ed. Magical Realism: Theory, History, Community. Durham: Duke UP, 1995.
7. https://mexington.wordpress.com/2015/06/03/defocalizing-defocalization-critiquing-fariss-defocalization-in-narrative-analysis-of-magical-realism/

---

1. Assistant Professor Department of English Sri Ramakrishna Engineering College, Coimbatore Email ID: indusoodan@gmail.com

Research Article

The Pursuit of Justice in Arthur Conan Doyle's Sherlock Holmes Stories

–[1]Dr. S. Maheswari

Sherlock Holmes and his sidekick Dr Watson of 221B Baker Street, London, were introduced in A Study in Scarlet, a tale of murder and revenge, appeared in Beaton's Christmas Annual in 1887, and the second, The Sign of the Four, in Lippincott's Monthly Magazine in 1890. He continued to publish his Sherlock Holmes stories in the Strand Magazine.

Abstract

Crime is despised by the world and whenever a crime takes place, justice is expected. Criminal justice takes many forms according to a region and culture. But the detective fiction has its own system of criminal justice. Arthur Conan Doyle has a deep sense of justice which he has executed in many circumstances not only in his fiction, but also in reality. Doyle makes his everlasting detective Sherlock Holmes mete out justice in various forms. Holmes is completely different from police and he believes in poetic justice rather than in legislative justice. Holmes frees some criminals upon checking their clean conscience which cannot be expected from the police. The police establish justice in their own terms by collecting evidence against the culprit and then proving it in the court to fetch legislative punishment for the accused. But Conan Doyle's justice system believes more in morality than in law. He wants to establish morally right social order rather than legal order.

Keywords: Detective Fiction, Crime, Justice, Social Order, Legal Order

Crime and justice are the two inevitable sides of detective fiction, which is strongly bound to moral issues and social well-being. At the end of each detective story, the wrongdoer is punished and justice is established. When a crime occurs, the morality and law insist to punish the culprit. Elizabeth A. Martin says in *The Oxford Dictionary of Law*:

Justice is a moral ideal that the law seeks to

uphold in the protection of rights and punishment of wrongs. Justice is not synonymous with law – it is possible for a law to be called unjust. However, English law closely identifies with justice and the word is frequently used in the legal system; for example, in justice of the peace, Royal Courts of Justice, and administration of justice. (15)

The justice system presented in the detective fiction is multidimensional and multilayered.

The opinions on crime and criminal justice differ from person to person and police to detective. The sole responsibility of the police is to arrest the accused and provide him or her in front the law. Bringing the culprit under the clutches of legislation is the only aim of the cops. However, the detectives have their own standards of justice that prompts them to act upon the criminals. The detectives may insist on retribution and rehabilitation. When Sherlock Holmes was brought to public in 1887, London was a burrow of criminals; people had low confidence on Scotland Yard due to a scandal on them. London was a city of prosperity and modernity as well as of obscurity and deterioration. Holmes was introduced in time to kindle the interest of the people by Conan Doyle and to reap the benefits. Ever after the introduction of Holmes in Beaton's *Christmas Annual* in 1887, there is no downfall for him.

Doyle wrote fifty six short stories and four novels featuring Sherlock Holmes, who was the first scientific detective of the world. Holmes is the epitome of the Victorian and imperial values of Great Britain. Lehan says:

> Sherlock Holmes embodies the system that he comes to protect. He is the man of reason, of science, of technology; he is from the upper class and was educated at Oxford; he eventually becomes rich; and he frequents best city clubs and other haunts of the gentleman. (84)

Sherlock Holmes and his sidekick Dr Watson of 221B Baker Street, London, were introduced in *A Study in Scarlet*, a tale of murder and revenge, appeared in Beaton's *Christmas Annual* in 1887, and the second, *The Sign of the Four*, in Lippincott's *Monthly Magazine* in 1890. He continued to publish his Sherlock Holmes stories in the *Strand Magazine*.

According to Doyle's projection, police are dull and uninteresting conventionalists with their routine and heavy procedure. They care only for evidences to arrest the culprit and have least botheration for justice in its true form. In *The Sign of Four*, Athelney Jones, the Scotland Yard detective, is introduced as very stout, portly man in a grey suit…red-faced, burly, and plethoric, with a pair of very small twinkling eyes which looked keenly out from between swollen and puffy pouches. (Doyle 1: 162)

He lacks Holmes' eccentric and brilliant personality. His physique stands in stark contrast to the master detective's towering, powerful, and alluring features. Jones announces the murder of Bartholomew Sholto as "Bad business! Bad business! Stern facts here – no room for theories" (Doyle 1: 163), but soon he revises his decision and arrests Thaddeus Sholto for murdering his brother. He is too quick in forming theories and thus clearing way for Holmes to set his own track.

Doyle prefers to play on the fear of his middle and upper-middle class readers for their safety. Stephen Knight observes that often the threat for security came "from within the family, not from enemy criminals" (370). Watson points out that many of Holmes's earlier stories don't contain any legal wrongdoing. In "The Blue Carbuncle," one of his stories, Watson sees Holmes, who appears to be engaged, which leads Watson to believe there has been a severe crime. In the following dialogue, Holmes demonstrates his higher level of emotional and intellectual maturity:

> "No, no. No crime," said Sherlock Holmes, laughing. "Only one of those whimsical little incidents which will happen when you have four million human beings all jostling each other within the space of a few square miles. Amid the action and reaction of so dense a swarm of humanity, every possible combination of events may be expected to take place, and many a little problem will be presented which may be striking and bizarre without being criminal. We have already had the experience of such."
>
> "So much so," I remarked, "that of the last six cases which I have added to my notes, three have been entirely free of any legal crime." (Doyle 1: 376)

Holmes decides which cases to embark on depending on their peculiarity and the level of mental effort needed to solve them. Holmes typically deals with emotional crimes, such as blackmail, retaliation, jealousy, thirst for money, and theft, which commonly involve famous, wealthy, and royal people. In his earlier writings, he seldom ever mentions murder, but in later ones, he does. Doyle emphasises crimes and Sherlock Holmes, the harbinger of justice, rather than the offender or the victim. In solving the crimes, as Christopher Clausen says, Holmes not only establishes justice, but he "single-handedly defends an entire social order whose relatively fortunate members feel it to be deeply threatened by forces that only he is capable of overcoming" (112).

In Doyle's stories, social order is always preferred to legal order. Holmes allows the criminal to escape in many of his stories when he feels that

forgiveness will be better than punishment. He upholds his due respect for human values in "The Blue carbuncle". He allows the thief to pass after confirming his clean heart and says, "I suppose that I am commuting a felony, but it is just possible that I am saving a soul" (Doyle 1: 396). Holmes is emotionally stable enough to recognise the distinction between impulsive and organised crime. He possesses the main components of emotional intelligence as described by American psychologist and emotional intelligence teacher Daniel Goleman. His definition relates to four elements of EI: relationship management, social awareness, self-management, and self-awareness (11). Holmes flaunts all these characteristics of EI as belonging to a single, though fictional, human being. He is not a "logical thinking machine" or heartless.

He feels that finding the offender is more crucial than catching them. Yet, in some instances, such as in "The Speckled Band," Holmes decides to pass harsh judgement on the offender when he believes that the offender will pose a threat to social harmony. He willfully turns the snake upon its master and explains "I am no doubt indirectly responsible for Dr Grimesby Roylott's death, and I cannot say that it is likely to weigh very heavily upon my conscience" (Doyle 1: 422).

Justice is the essential element in Sherlock Holmes stories, and it also serves as the foundation for Arthur Conan Doyle's life. Conan Doyle has consistently supported the underdog. He was effective in his fight against injustices. He ran a prolonged battle to protect the half-Indian, half-British lawyer George Edalji, who was charged with animal abuse. In addition, Conan Doyle worked to free Oscar Slater, a German Jew from Upper Silesia, who was charged with killing an elderly woman in Glasgow. As Doyle uncovered flaws in the police investigation, Slater was eventually let free. Doyle does not emphasise human law in his writings; instead, he speaks of a heavenly justice that is beyond description and always follows its own course. It functions like a mythonarative that simultaneously teaches people about humanity, complex society, in-depth philosophy, spirituality, interpersonal relationships, and everyday existence. It has a deeper meaning, serves more purposes, and is more crucial to society.

To understand the art, it is vital to understand the artist also. Doyle was once heard telling "the doll and the maker are never identical" (qd. in Lycett 372). Nevertheless, his doll, Sherlock Holmes, is the mouthpiece for conscience of the maker, Doyle. All his works exhibit Doyle's 'steel true, blade straight' system of policy that he held fast. Michael Dirda says in his article "A Doyle Man":

> Conan Doyle once named “unaffectedness” as his own favorite virtue, then listed “manliness” as his favorite virtue in another man; “work” as his favorite occupation; “time well filled” as his ideal of happiness; “men who do their duty” as his favorite heroes in real life; and “affectation and conceit” as his pet aversions. It should thus come as no surprise that Conan Doyle’s books are all fairly transparent endorsements of chivalric ideals of honor, duty, courage, and greatness of heart.

Doyle was a true gentleman of the majestic English tradition adoring verity, courage, and British sportsmanship.

In *The Study in Scarlet*, Sherlock Holmes’s first published case, he faces off against an unidentified killer who is seeking retribution on his victims. Holmes learns that the killer is a London cab driver named Jefferson Hope who wants to exact retribution for the deaths of his beloved Lucy Ferrier and her father John Ferrier. Holmes examines the crime scene, measures it with a tape measure, gathers information, and uses his renowned magnifying glass to examine surfaces. He surpasses the police, who struggle to connect the loose ends, in this way. While Hope is in custody, Holmes gives him the opportunity to tell his side of the story, which explains why Joseph Strangerson and Enoch Drebber were brutally murdered. Unlike law enforcement officials, Holmes takes his time implementing the official justice system against criminals. He takes the time to hear their stories and consider the best course of action. He is more concerned with social order than with the rule of law. He sees himself as the forerunner of poetic justice and believes in it.

In “The Red-Headed League,” Holmes sets off on an adventure to solve the puzzle of Wilson’s peculiar and distressing work experience at Red Headed League. Watson is bewildered when he learns about Vincent Spaulding’s cunning plan to rob a bank close to Wilson’s home. Nonetheless, he keeps this information to himself. When Holmes taps the sidewalk and asks Vincent Spaulding for directions, Watson is perplexed. By cleverly ejecting Wilson from his business, he has already found the solution to the puzzle that Spaulding is creating an underground passage between Wilson’s pawnshop and the bank. By checking Spaulding’s pants and listening for ground hollows, Holmes is able to confirm his suspicions. He only arranges for the criminal’s arrest after verifying the robbery’s scheduled timing. Holmes never makes rash decisions and always gives the crooks adequate chance to change their ways.

The story “The Adventure of the Speckled Band” features Holmes passing

judgement on the offender. He meticulously analyses and resolves Julia's death mystery. Dr. Roylott uses a deadly adder to murder Julia, his stepdaughter, in order to benefit from her money. The second daughter Helen is the target of the same approach. Holmes manages to save her by leading the snake to its dead master. It is nice to see the offender receive justice for his wicked actions in the climax. Doyle describes the final agony of the criminal:

> His chin was cocked upward and his eyes were fixed in a dreadful, rigid stare at the corner of the ceiling. Round his brow he had a peculiar yellow band, with brownish speckles, which seemed to be bound tightly round his head. (Doyle 1: 355)

It is certainly poetic justice that Dr. Grimesby Roylott becomes the victim to his own evil plot.

Sherlock Holmes stories are rich in divine justice. Doyle's world is better than the real world, where justice is established and the criminal is either punished or acquitted based on their level of criminality. To make the stories more realistic, Doyle does not completely rule out the existence of evil. Justice in Sherlockian universe does not advocate the removal of evil by the supernatural power within a wink of an eye. There evolves a natural struggle between good and evil and finally the balance is brought back by allowing the ineffable force of good to flourish. However, Sherlock Holmes stories are not fairy tales, where the incarnations of good fight back with the incarnations of evil. Doyle does not make Holmes, the champion of justice, to defeat the evil directly. He brings in the ordinary humanistic elements to uproot the villainy. In majority of the cases, Holmes works to prove an accused person's innocence and thus saving him or her from the injustice. In some cases, he lets the criminal free upon confirming the clean conscience of the culprit. But all the stories couch upon justice as the major concentration.

Works Cited

1. Clausen, Christopher. "Sherlock Holmes, Order, and the Late-Victorian Mind." *Georgia Review*, vol 38, 1984, p.112.
2. Dirda, Michael. "A Doyle Man." *Theparisreview*, 21 Sep. 2011, https://www.theparisreview.org/blog/2011/09/21/a-doyle-man/.
3. Doyle, A.D. *The Complete Sherlock Holmes: All 4 Novels and 56 Short Stories*. Vol. 1. Bantam Classics, 1986.
4. *The Complete Sherlock Holmes: All 4 Novels and 56 Short Stories*. Vol. 2. Bantam Classics, 1986.
5. Elizabeth A. Martin, ed. *Oxford Dictionary of Law.* 5th ed. Oxford: Oxford University Press, 2002.
6. Goleman, D. *Emotional Intelligence*. Bantam Books, 1995.

7. Knight, Stephen. "The Case of the Great Detective in Conan Doyle, Arthur." Ed. Hodgson, John A. *Sherlock Holmes: The Major Stories with Contemporary Critical Essays.* Bedford/St. Martins, 1994.
8. Lehan, Richard Daniel. *Realism and Naturalism: The Novel in the Age of Transition*. University of Wisconsin Press, 2005.
9. Lycett, Andrew. *Conan Doyle: The Man Who Created Sherlock Holmes*. Weidenfeld and Nicholson, 2007.

---

1. Assistant Professor of English Sri Sarada College for Women (Autonomous) Salem, Tamil Nadu-636016

Research Article

Feminist Ambivalent Ideas in Kamala Markandaya and Angela Carter Novels.

–[1]Mrs.Y.ILAVARASI
–[2]Dr. B. Kavitha

This is the primary distinction that exists between how men and women are perceived in society, as well as the manner in which authors have highlighted the sex inequality and objectification of females. In the book, there is a female police officer who is also a radical and she wants to end men's dominance over women.

Abstract

The idea of ambivalence is often explored in fiction, as it is a fundamental aspect of the human experience. In literature, ambivalence may be explored through the lens of characters who are struggling to make a decision, or are pulled in opposite directions by competing desires. It may also be explored through the use of irony, in which a character says or does one thing, but the reader is aware that the character actually feels the opposite. Similarly in both the novels, *A Handful of Rice*, and *Passion of New Eve* such ambivalence can be found.

Introduction

Literature examines reality critically. Literature demonstrates what is true as well as how things fit together. Art exists and serves a role in the real world because it is the negative knowledge of the real world. There is historical evidence of Indian literature written in English. It is the consequence of collaboration between India and the United Kingdom in business, culture, and literature. It is not reasonable to presume that critics and historians of various generations will interpret and comprehend the same historical facts. The fact that there is so much Indian literature demonstrates that the writers' ingenuity and experience have left a lasting impression. However, English literature began with the Saxons centuries ago.

Ambivalence

Women's authors typically address issues concerning the feminine gender in society and at home. The majority of female writers in English literature struggle with masculinity and criticise patriarchal culture for hindering their development. Feminism is a notion that refers to the act of assisting women in achieving equality in both the private and public arenas. However, some women are fixated with taking an intentionally anti-male posture, rather than standing out for oppressed women in society. Though there are grounds to reject patriarchal culture, these opposing features can occasionally be taken too far. Political and social events have an impact on both men and women, as well as children and the elderly. Many female authors are depressed as a result of the tragic issues they contemplate or argue over. Female authors are expected to spread their ideas through works that primarily focus on male-female interaction. This can lead to a clearer understanding of patriarchy's role in society and how it is maintained through literature.

In her book A Handful of Rice, the author describes both traditional and unorthodox ladies. Even one character can play two parts at the same time. In certain circumstances, several of the characters exhibit extreme behaviour that contradicts common norms. It can also work the opposite way around. Ambivalence arises when a person, community, or organisation is solely regarded as being in a difficult situation or as having two opposed sides. Ambivalence is a common feeling that people have when trying to make a decision. It is a tough and perplexing emotion to deal with because it can leave people feeling trapped.

A person's experience of conflicting feelings may be the result of a number of different circumstances. For instance, people might be given a tough option for which there is no obviously "right" solution to choose from. Alternately, it's likely that they are attempting to accommodate the requirements of a number of different individuals all at the same time. Ambivalence frequently has its origin in an internal conflict between two competing values held by the individual. For instance, a person may value their independence while yet harbouring the desire to form a love connection with another individual. They may also be enthusiastic in starting a family yet experience conflicted emotions while contemplating the possibility of becoming parents. One of

the potential underlying causes of ambivalence in certain people is a concern about engaging in new experiences. It's possible, for example, that someone wants to leave their current job but is conflicted about the future opportunities that await them. It is essential to bear in mind that experiencing ambivalence from time to time is perfectly normal, despite the fact that dealing with this feeling can be challenging. Ambivalence is quite natural. The process of attempting to make a decision is never easy, but at some time, one will have to make a decision about what steps to take next and then carry them out. In "A Handful of Rice," the portrayal of women is fraught with ambiguity on multiple levels. The main character has no idea where they should go, how they should act, or what they should do. As the story progresses, the characters will face challenges such as these as the plot develops. The patriarchal power structure is something that women dislike, and Markandaya makes an effort to demonstrate the bravery of women as well as how strong they are and how they are opposed to traditional male ideals in this novel. In a society in which women are expected to do things like washing clothes and cleaning the house, have children, and stay at home, she fights against these expectations. This is something that everyone does the same way. However, it is more relevant in India because literature is a reflection of society, and Kamala Markandaya, who is a social writer, unquestionably brings attention to these concerns in her work. Due to the perception that men are in authority, women are devalued. The majority of the time, this results in their individuality being disregarded, and they are rather treated as if they were merely an item. On the other hand, men are considered to be subjects who are thought to have their own identities. This unfair treatment is clearly seen in Markandaya's novel, Nectar in a Sieve, as her female protagonist undergoes several injustices from male authority figures throughout the novel.

This is the primary distinction that exists between how men and women are perceived in society, as well as the manner in which authors have highlighted the sex inequality and objectification of females. In the book, there is a female police officer who is also a radical and she wants to end men's dominance over women. It appears that she is someone who takes their work very seriously. The Indian system, with very few notable exceptions, is governed by a society that is predominately male and that tolerates the elevation of men while

demeaning women. The man holds the primary position, and the woman is expected to be content with a subordinate function. As a result, the woman is expected to remain in the background, and her voice is not heard. She is expected to change who she is in order to conform to the form of the family she has joined by her husband, as well as to combine her own personality with that of her husband's. She transforms herself into a shadow of her husband and travels through life with him. It is expected of her that she will support him through any storm by standing by his side and contributing her own resilience to his. Because her partner is more to her than an idol, she speaks to him in the bedroom with respect because she adores him so much. Because the wife's commitment to her husband is so strong, she appreciates the choices that her husband makes and she happily abides by the restrictions that he establishes.

The idea of ambivalence is brought up once more by the fact that she demonstrates that she has two distinct personalities. She conveys the message that while she loves and respects her husband, she is not content with their relationship or their life together. She reflects on her life with Apu and the kind of man he is as the memories flood back. "Your father was a good man, and I apologise if I ever treated him wrong, but he was an elderly man, and even when we got married, he seemed ancient to me. He passed away when you were young. Whatever the case, it is finished " (HFR 238). Therefore, these are the thoughts that keep going through her head. On the other hand, she has been reminiscing about the activities that she and him used to like doing together. When they got married, she said that he was already an elderly man, which he took as a personal attack. According to the previous sentences, it also demonstrates that she was dissatisfied with her husband. She was quite frightened when she was married at such a young age, and she just desired to be with other young men. "Apu had never once raised his hand to her in all the years that they had been married, but then, she thought, with the faint scorn she now bore her husband, which even his death had not eradicated, in that way Apu had never been much of a man" (HFR 220). During all of the years that they had been married, Apu had never once struck his wife with his hand. However, when she gave it some more thinking, she realised that even after he had passed away, she harboured some lingering animosity

for him. These lines demonstrate that she despises her previous husband, yet she is forced to remain with him and their children since that is the only way she can live according to the expectations that society has placed upon her. And she is forced to put up with him in this fashion in order to survive. She is determined to do whatever it takes to have a more truthful life. And she hasn't accomplished what she wants since the norms of society prevent her from doing things like that. On the surface, she appears to adore her husband. Apu and Jayamma are not really connected to one another in any way. Even though Apu is legally her husband, the two of them never express their feelings of affection and concern for one another to one another. She did not provide Apu with the necessary level of attention when he was ill. This is a common issue that almost all of the couples in India have to deal with at some point. At this point in time, Markandaya adds that "She nursed him with an assiduity that the doctor required, devotedly as a wife should, out of a deep sense of responsibility, but without love" (148-149). It is abundantly evident that the only reason she nurses as well is to demonstrate that she is a wife, and not for any other reason. This is mostly driven by cultural pressure rather than any other factor. In the event that she does not, people will discuss her and the manner in which she has been behaving. It's not out of love that she does it. It is something she feels obligated to do. That is the overarching idea at play here. The accuracy of the portrayal of women shows how women have been programmed to do what the culture demands rather than what the women themselves desire to do. She does not do it for love Ravi approaches up to Jayamma when he gets home and looks for his wife, but he does not find her there. Jayamma tells him to "Now take your hands off of me." "No," he replied, laughing at her as he did so. "Why on earth should I? You've been wanting it for a number of months, maybe even years. Every time you went to bed, you slept next to your husband. Every time you glanced in my direction. A Ruffian or a Thug.' She was having a hard time. While he was holding her, his excitement mounted with her motions; her arms and breasts were soft and pulpy while he was touching them. (NFR 261)

The idea of ambivalence is brought up once more by the fact that she demonstrates that she has two distinct personalities. She conveys the message that while she loves and respects her husband, she is not content with their

relationship or their life together. She reflects on her life with Apu and the kind of man he is as the memories flood back. "Your father was a good man, and I apologise if I ever treated him wrong, but he was an elderly man, and even when we got married, he seemed ancient to me. He passed away when you were young. Whatever the case, it is finished " (HFR 238). Therefore, these are the thoughts that keep going through her head. On the other hand, she has been reminiscing about the activities that she and him used to like doing together. When they got married, she said that he was already an elderly man, which he took as a personal attack. According to the previous sentences, it also demonstrates that she was dissatisfied with her husband. She was quite frightened when she was married at such a young age, and she just desired to be with other young men. "Apu had never once raised his hand to her in all the years that they had been married, but then, she thought, with the faint scorn she now bore her husband, which even his death had not eradicated, in that way Apu had never been much of a man" (HFR 220).

During all of the years that they had been married, Apu had never once struck his wife with his hand. However, when she gave it some more thinking, she realised that even after he had passed away, she harboured some lingering animosity for him. These lines demonstrate that she despises her previous husband, yet she is forced to remain with him and their children since that is the only way she can live according to the expectations that society has placed upon her. And she is forced to put up with him in this fashion in order to survive. She is determined to do whatever it takes to have a more truthful life. And she hasn't accomplished what she wants since the norms of society prevent her from doing things like that. On the surface, she appears to adore her husband. Apu and Jayamma are not really connected to one another in any way.

Even though Apu is legally her husband, the two of them never express their feelings of affection and concern for one another to one another. She did not provide Apu with the necessary level of attention when he was ill. This is a common issue that almost all of the couples in India have to deal with at some point. At this point in time, Markandaya adds that "She nursed him with an assiduity that the doctor required, devotedly as a wife should, out of a deep sense of responsibility, but without love" (148-149). It is abundantly

evident that the only reason she nurses as well is to demonstrate that she is a wife, and not for any other reason. This is mostly driven by cultural pressure rather than any other factor. In the event that she does not, people will discuss her and the manner in which she has been behaving. It's not out of love that she does it. It is something she feels obligated to do. That is the overarching idea at play here.

The accuracy of the portrayal of women shows how women have been programmed to do what the culture demands rather than what the women themselves desire to do. She does not do it for love Ravi approaches up to Jayamma when he gets home and looks for his wife, but he does not find her there. Jayamma tells him to "Now take your hands off of me." "No," he replied, laughing at her as he did so. "Why on earth should I? You've been wanting it for a number of months, maybe even years. Every time you went to bed, you slept next to your husband. Every time you glanced in my direction. A Ruffian or a Thug.' She was having a hard time. While he was holding her, his excitement mounted with her motions; her arms and breasts were soft and pulpy while he was touching them. (NFR 261)

Thus in both the novels ambivalence can be seen in the women writers and their characters.

Reference:

1. Markandaya, Kamala. *A Handful of Rice*. New English Library, 1968.
2. Carter, Angela. *The Passion of New Eve*. Virago Press, 1992. *Bowker*, https://doi.org/10.1604/9780860683414.

1. Ph.D. Research Scholar, Department of English and Research Centre, Seethalakshmi Achi College for Women, Pallathur, Sivagangai.
2. Assistant Professor of English, Department of English and Research Centre, Seethalakshmi Achi College for Women, Pallathur, Sivagangai.

Research Article

The Portrayal of Slave Narratives and Racism in the Select Novels of Ishmael Reed

–[1]C. Jeeva
–[2]Dr. C. Govindaraj

"Racism: A Short History" is one of the best books to know the history of racism. George M. Frderickson, a historian, but he could not take any keen interest to write about the racism for twenty five years but once he and his colleague went to as a faculty member to Northwestern where he has learned many things about the black and their sufferings and then he had written the book "Racism: A Short History".

Abstract

Ishmael Reed is a novelist, poet, essayist, and activist in African-American literature. He was born in Chattanooga, Tennessee, on February 22, 1938. When he was a little boy, his family relocated to Buffalo. He had begun writing when he was quite young. He has written numerous novels and poetry anthologies. He is considered as an original satirist and an experimental factionary writer. He used playful languages in his works. His every works deal the different kinds of themes. He is considered as a black aesthetic. His most of the novels talk about the suffering of the blacks. His some of the novels deal the Voodoo rituals and some of the novels deal the suffering of the slaves and some of them are dealt the western civilization also. This Article deals the slave narratives and racism in *Flight to Canada*, and *Reckless Eyeballing.*

Key Words: Aesthetic, Voodoo, Culture, Identity, Narrative

Introduction

The term "African-American literature" refers to writing that generally focuses on the topics of unique problems faced by black Americans. Additionally, it represents what it means to be an American as well as the roles that African Americans play in the greater American community. It should be noted that African-American literature frequently addresses the same concerns of liberty, equality, justice, and humanity that black people in the United States were denied. The socio-historical, socio-cultural, and socio-psychological

facets of American culture are reflected in the African-American novel. One of the most well-known writers in the history of literature is Ishmael Scoot Reed. His writings and other works play a key role in elevating the status of the African American fiction genre. His novels are centred on the themes of racial politics, cultural politics, black aesthetic, and hoodooism.

The literary genre known as the slave narrative includes the (written) autobiographical stories of Africans who were held as slaves, primarily in the Americas. Slavery had an impact on Black Americans in the social, economic, and political spheres. The slave narrative is a potent vein of American literature that has been drawing increasing attention from academics and educators in African-American literature. It also arose directly from instances of social persecution throughout American history and played a crucial role in applying knowledge to the socio-political situation in order to reform society.

Slavery was the impulse that leads African - American to create a shared cultural aid, in the form of literature to combat oppressive conditions. Although, the institution of slavery was exercised for centuries before white Americans introduced it to the antebellum south, this was the first example of slavery that classified a group of people as sub-human. Some of the oldest recognized forms of writing in the African-American community, known as the Slave Narrative, were basic narratives that provided insight into the everyday routines and experiences of being a slave. This literary genre was the first of its kind in American literature and was an extremely powerful sophisticated document. Slave narrative supplied the chance for African Americans to prove the problems and issues that slavery created, and to declaim the issue of social dearth and the lost sense of personhood. As George Rawick emphasizes that: the African Slaves community were conscious and viable individuals who had identifiable cultures, values, languages, community ties, musical heritages, kinship circles and age-old traditions who essentially 'made themselves' out of a rich heritage which was, in turn effected and influenced by systematic subordination they experienced day to day (Rawick 11-12).

In *Flight to Canada*, Arthur swille says to Robin about the escape of Raven,

> "Ravan was the first one of Swille's slaves to read, the first to write and the first to run away. Master Hugh, the banr of Frederick Douglass said,If you give a nigger an inch, he'll take an ell. if you teach him how to read , he 'll want to know how to write. And this accomplished, he'll be running away with himself"(14)

Racism is a powerful tool in the Afro-American literature. Most of the black writers have written in their works about racism. According to Ali Rattansi,

> “Racism is not easy to define for reasons that will become clear” and he extend that “although racism is a multidimensional phenomenon, it has suffered from formulaic and clichéd thinking from all sides of the political spectrum”(1).

“Racism: A Short History” is one of the best books to know the history of racism. George M. Frderickson, a historian, but he could not take any keen interest to write about the racism for twenty five years but once he and his colleague went to as a faculty member to Northwestern where he has learned many things about the black and their sufferings and then he had written the book “Racism: A Short History”. In this work he described the suffering of the blacks, their culture, the white supremacy in Atlantic and origin of the racial thought in an elaborate manner. For his effort, he was awarded Ralph Waldo Emerson and also the Pulitzer Prize in 1982. There were many ethnic groups in the United States. According to him there were four ethnic groups which have related one another such as Ethnic hierarchy, Cultural Pluralism, One way assimilation and Group Separatism.

In 1790, the first immigrant law was passed by Congress in which the white immigrants were eligible for naturalization. By passed this law, the revolution began between the blacks, whites, and other immigrants. In the mean time, the Irish potato famine fled in Ireland in 1840 where as the Irish people also migrated from Ireland to United States. After the Irish came to United States, they also began to dominate the blacks. George Fredrickson described that not only the whites but also Protestants and Anglo-Saxon dominated the blacks. By the continuation of migration, the mass of Europeans migrated from Europe to the Unites States at the end of the 19thcentury and beginning of the 20thcentury.

Later the immigrants have formed a new law for their own shake. The immigrants gradually improved and have planned to develop their political involvement, in that way some European groups have planned to dominate others and made them weaken. Later, they passed a law that was The civil Rights Acts of 1964 and 1965 which brought to an end to the racial segregation and also implemented the voting rights to the blacks. The blacks and whites segregation started at first in San Francisco Bay Area in the 20 th century. Lake Providence is a famous city in Louisiana, in which one of the famous magazines *Time* once called that the town Louisiana was a “poorest place in

America". Richard Rothstein shared his experience in his work that he met one of the persons Mr.Stevension in Louisiana town where he described how the blacks treated in schools and in working places. In schools, the teachers were more concentrated on the whites not care on the blacks.

> " They did not care too much whether you were going to school or not, if you were black…while school would be continued, but they would turn the black school out because they wanted the kids to go to work on the farm…..Lots of times these white guys would …come to my dad and asks him to let us work for them one or two days of the week"(1).

By the color of black, the whites dominated the blacks in all the fields. The blacks are working in all the fields such as teachers, professors and others also but they have a burden when compare with the whites. The police officers and judges also supported to the whites. The lawyers pretended to support the blacks but they got some amount from the whites and degraded the blacks. For more than a century, African American families have lived in a racial system. The racial system made difficult to live in the region.

The black husband and wife were denied employment. They suffered to lead their day today life. In the population of America, the majority of the people were blacks in that more than four million blacks were living in United States in 1860. More than 89 percent of the blacks were slave at that time. They were provided less food, shelter and no wages for their works. In that time the slave owners made a law against the blacks that the owners had a right to beat the blacks with whip. They treated them in a cruel manner where as the blacks' migrated to different strange places. The free blacks also worked hard but they did not own anything accept the poverty. Most of the blacks were illiterate and could not read and write.

Summing Up

In the analysis of Ishmael Reed's novels, the study has considered the views of the critics regarding slavery, problems of freedom, justice, racism, satire and Neo-HooDooism. In addition, the principal themes of Ishmael Reed's novels—inequality, repression, persecution, mistreatment, non-recognition of black rights, injustice, and oppression can be viewed as a response to what African Americans experienced in American culture Reed makes his future

vision for African Americans and all Americans stand out through his works. Reed talks of the themes racial discrimination, slave narrative in his novels in a proper manner. His *Flight to Canada* describes the slave narrative theme in a strong manner. The protagonist Raven escaped from the vision of Swille but he has planed and spent much amount to bring again as a slave. In his another novel *Reckless Eyeballing*, Reed describes not only the suffering of blacks and also the suffering of Jews. This paper also made an attempt to explore the slave system of African-Americans.

Works cited

Primary Source:

1. Reed, Ishmael. *Flight To Canada,* Scribner, New York, 1976-print
2. ….. *Mumbo Jumbo.* New York: (Scribner) Simon & Schuster,1988.
3. ….. Reckless Eyeballing. New York: Dalkey Archive, 1986.
4. ….. *The Free-Lance Pallbearers*. Garden City, New York: Doubleday & Company, Inc., 1967.

Secondary Source:

5. Rattansi, Ali, Racism- A Very Short Introduction, Oxford University Press, Newyork, 2007.
6. Rawick, George. From Sundown to Sunup: The Making of the Black Community. Green Wood: U of Michigan, 1972.

1. Ph.D Research Scholar (P/T - English), Department of English, Periyar University Centre for Post Graduate and Research Studies, Dharmapuri-636701
2. Professor & Head, Department of English, Periyar University Centre for Post Graduate and Research Studies, Dharmapuri-636701

Research Article

The Portrayal of Feministic Elements in Jamaica Kincaid's Select Novels: A View

–[1]S. Senthil Kumar
–[2]Dr. C. Govindaraj

The present article, entitled "The Portrayal of Feministic Elements in Jamaica Kincaid's Select Novels: A View closely examines Kincaid's novels: Annie John (1985), Lucy (1990), and The Autobiography of My Mother (1996). It would seem that a critical spotlight has been forced to delineate the various nuances of characterization and communication in Kincaid's novels.

Abstract

Literature serves as social commentary. It captures some of the issues that were prevalent at the time they were created. The literature of Caribbean women is unique in that it focuses on the bonds between black women, which is seen in how black women writers depict the bonds between sisters, friends, and, in particular, mothers and daughters, including grandmothers and granddaughters. Feminism in the Caribbean is a set of movements with the purpose of defining, establishing, and defending political and socio-economic rights and equal opportunities for Caribbean women. Jamaica Kincaid is one of the most powerful Caribbean-born American novelists, and her novels offer an incisive analysis of the characters' responses to the enigmatic world both within and without. As a female writer, Kincaid focuses on feminist ideas in her works. Her works portray feministic perspectives through her characters. The term "feminism" has numerous definitions and maxims. Feminism is the oppressed and demoralized woman's voice. Womanhood includes the emotions of unease, repugnance, and dullness. This suggests improving the way that people perceive the women's movement as it develops in response to the works of renowned Caribbean-born American female novelists. Kincaid's Works, which features both a strong mother lead and a strong daughter lead, has the potential to appeal to, and therefore influence a large group of viewers. The current paper concentrates on the existence, identity, and distinctiveness of feminism's components in

patriarchal societies.

Keywords: Caribbean, Feminism, Perspective, Oppressed, Potential

Introduction

One is not born, but rather becomes, a woman.

-Simone de Beauvoir*, the Second Sex*

The present article, entitled "The Portrayal of Feministic Elements in Jamaica Kincaid's Select Novels: A View closely examines Kincaid's novels: *Annie John* (1985), *Lucy* (1990), and *The Autobiography of My Mother* (1996). It would seem that a critical spotlight has been forced to delineate the various nuances of characterization and communication in Kincaid's novels. Kincaid's works have addressed the experiences and roles of black women in a racist and male-dominated society. Feminism's fourfold focus is an effort to make women a self-conscious category, a force to generate a rational sensible attitude towards women, an approach to viewing women in their own positions, and an approach to viewing women through their own perspectives. Feminism is fundamentally the idea that women should have complete social, economic, and political equality. Robert Webb defines feminism in the following terms: "Feminism isn't about hating men." "It's about challenging the absurd gender distinctions that boys and girls learn from childhood and carry into their adult lives." (1)

Feministic Elements in Kincaid's *Annie John and Lucy*

> I detest the masculine point of view. I am bored by his heroism, virtue, and honour. I think the best these men can do is not talk about themselves anymore.

-Virginia Woolf, the Pargiters

Kincaid is a representative feminist writer. The themes prevalent in most of her novels make them highly absorbing, confessional, and feminist. Through their writing, contemporary women's writers advance the cause of womanhood. In her writings, Kincaid challenges patriarchal society's presumption of dominance. Her novel focuses on topics like mother-daughter relationships, lacking in love, sexual exploitation, and betrayal. She depicts a loveless relationship as oppressive and painful. Kincaid's first novel, *Annie John* (1985), centers on the intense emotional bonds between mother and daughter. The mystery of daily existence is the novel's central theme. The novel is well known for its central character, Annie, and her struggle in male-dominated surroundings. There are other female characters that have

significant roles in the novel, but Annie holds a special position in it. Annie John confirms Kincaid's status as a subtle observer of girlhood. Like Kincaid herself, the heroine grows up in one of the most prosperous of the Caribbean islands, Antigua. Indeed, if ever a child has inherited heaven on earth, it is Annie John. Her carpenter father provides his family with an ample living, and ten year old Annie enjoys a mutually adoring relationship with her mother. But in spite of those advantages, Annie becomes intensely unhappy. Kincaid's great triumph is that she imbues Annie's fall from grace with a mysterious inevitability. Kincaid exposes the patriarchal prejudice of a male-dominated society by portraying the indifference of men to women's miseries in her novel *Annie John*.

I have chosen to no longer be apologetic for my femininity. And I want to be respected in all my femaleness. (Adichie, 15)

In Kincaid's novels *Annie John* (1985) and *Lucy (*1990), mother-daughter relationships are revealed to have a stronger bond than father-daughter relationships. Jamaica Kincaid expresses the dominance of men over women in her novels. Because of the domination, after a certain period of time, the protagonists in the novels feel much more protected by their mothers than by their fathers. Being women in a patriarchal society, the protagonists of the novels feel that their mothers are their source of love and care. And they consider their father a "male chauvinist' who is trying to take control over them. And so the mother-daughter relationship is better bonded than the father-daughter relationship in patriarchal society.

The gender norms applied to women are discussed in Jamaica Kincaid's novel "*Annie John."* The narrator feels that she is always treated less favorably than the other gender, which she dislikes, and she no longer wants to remain in this position, as can be observed by the passage's descriptiveness and tone. This is important because it reflects how the narrator feels about the gender stereotypes she has to go through, which essentially shape her into the person she will become. "Of course, in all the games we played, I was always given the lesser part. If we played knight and dragon, I was the dragon" (95–96). The tone the narrator uses to show that she is given a lesser role shows that this is a big problem for her. Understanding the reason why she is always given the lesser part shows that this does have an impact on her life, and is something in her life that she cannot avoid, telling her what she has to become.

There is no gate, no lock, no bolt that you can set upon the freedom of my mind. (Woolf, 76)

All of Kincaid's fictional works touch on a different facet of women's adolescence. In her second novel, *Lucy* (1990), the main character does not show the caring side of her mother. Lucy only depicts the domineering and uncaring character of a woman who forwent her own intelligence in favour of the security of a marriage to an older man. The protagonist of the novel, who works as an au pair, She is a character of extremes, having conflicting feelings of both homesickness and wanting to escape the influence of her mother and Caribbean motherland. Lucy is, however, preoccupied with stripping away the elements that constructed her post-colonial self-family, community, education-and is determined not to put in its place an American self. Lucy is known as the girl from what is assumed to be Antigua, who has spent her entire life in mental and physical bondage because of the cultural norms that her society imposed on her gender. Lucy enjoys her mother's love during her childhood days but when she was nine years old, her mother bears male children and Lucy finds her mother does not love her anymore. Lucy feels betrayed by her mother because she identifies herself to her mother. It doesn't bother her when her father cared for her brothers but when her mother neglected her she almost felt heartbroken. Lucy's anger at her mother, however, goes beyond a disagreement about life choices and principles. Lucy calls her mother the great love of her life, and much of her temper is derived from what she sees as her mother's rejection of that love with the birth of her brothers.

Women within Caribbean societies are compelled to take on domesticated careers such as nursing. This influences Lucy's decision to stop attending school to become a nurse. She states "Whatever my future held, nursing would not be a part of it...I was not good at taking orders from anyone, not good at waiting on other people." (92) 'That is to say Lucy's understanding of her femininity through her mother as they are identical influences a desire to break away from her mother's uncompromising standards of life. She feels humiliated when her mother says why she has been named 'Lucy'. Though her mother says in anger when she keeps on asking about her name Lucy and asks her mother to change her name. she imagines the possibilities of other names-Emily, Charlotte, Jane and Enid. Lucy is also taught to behave well by her parents but she hates that kind of life when her mother cares more for her brothers than for her. She moves away from them and works as a maid in Lewis and Mariah family taking care of their four children. . Lucy's mother says when Lucy is leaving to a western country thus: "You can run away; but you cannot escape the fact that I am your mother, my blood runs in you, I carried you for nine months inside me." (90) Lucy still longs for her mother's love. She is still the child painfully separated from her mother by something

that seems to have nothing to do with either of them. Kincaid is inscribing the mother-daughter relationship in the larger context of colonialism. Happiness is as far from Lucy's reach as it is from the reach of all people in the third world doomed to cope with "too little". (87)

Feministic Elements in Kincaid's *the Autobiography of My Mother*

"*The Autobiography of My Mother"* story tells us that in a man-dominated society, a woman should strive for everything. The basic rights of women in the world are decency and dignity. In the face of hardships in life, a courageous woman should be brave enough to battle against them. Jamaica Kincaid's *The Autobiography of My Mother* with a special reference to the use of language in the narrative discourse as a powerful tool to subvert the colonizer's power. Kincaid deals directly with feminist narratology to show how a woman writes her past experiences in life. The point of this exploration paper is to look at the expression of women's activist narration and its basic qualities in sexual orientation development. Feminist elements of Jamaica Kincaid's *the Autobiography of My Mother* message as far as Free Indirect Discourse and the treatment of Female Plot and its impact on linearity, conclusion, and reiteration.

There are numerous printed pointers that demonstrate the storyteller as a female. Here, Xuela is the narrator of the story. She narrates everything about her life. This is clear when Xuela talks about her sexuality with Monsieur Jacques LaBatte. Her investigation into her sexuality started amid her adolescent years when she was fifteen years of age. In her memory about this sexual occurrence, she finds her capacity as a lady. She aced the craft of exposing men to the administration of her pleasure. Her sexuality is amazing and startling. Xuela is effectively searching for her pleasure instead of being the object of somebody's longing. As a colonized lady, she utilizes her sexuality as a weapon to corrupt her white spouse. She is a functioning chief in this sexual relationship.

In *The Autobiography of My Mother*, Kincaid also criticizes the traditional gender roles in the family. Kincaid also points out the Gender inequality of girl students at school. "Xuela is the only girl in her class and her teacher, also a woman, sees her as an intruder" (14). The girl is very intelligent and learns extraordinarily quickly. The teacher thinks that it is abnormal for a girl to be so bright and she explains to the class that Xuela is possessed, because her mother was a Carib Indian. In other words, the teacher, trained in a patriarchal way, denies the possibility that an ordinary girl could be as bright as a boy. She searches for an excuse for this "abnormal phenomenon,"

which is something negative in her eyes.

Summing Up

Black feminism has a history of innovators, including Toni Morrison and Alice Walker. In this order, Kincaid also deals with the theme of feminism in her works. Kincaid is a renowned female novelist in Caribbean-born American literature. She is known for writing novels that, among other things, address the struggles and oppressions faced by women in a culture that is predominately male. Most of her female characters are seen as being preoccupied with preserving their existence, identity, and uniqueness.

> I am too intelligent, too demanding, and too resourceful for anyone to be able to take charge of me entirely. No one knows me or loves me completely. I have only myself. — Simone de Beauvoir

Men always suppress women because they want women to be under their control. Men usually can't take it if women come in a higher position than them. Male domination in all societies is their weakness. The dominating attitude of men shows they are afraid of women. Kincaid's novel focuses on various themes, but in all her novels she brings out the suffering of women in Caribbean society.

Works Cited

Primary Source

1. Kincaid, Jamaica. Annie John. New York: Noonday Press. 1983.
2. --- Lucy. New York: Farrar, Straus, Giroux. 1990.
3. ---The Autobiography of My Mother. New York: Plume. 1997.

Secondary Sources

4. Adichie, Chimamanda Ngozi. *We Should All Be Feminists*. Vintage Books. 2014. PDF.
5. Woolf, Virginia. *A Room of One's Own*. Mariner Books. 2005. PDF.

Web Sources:

1. **https://www.brainyquote.com/topics/feminism**
2. **References:**

---

1. Ph.D Research Scholar (P/T - English), Department of English, Periyar University Centre for Post Graduate and Research Studies, Dharmapuri-636701
2. Professor & Head, Department of English, Periyar University Centre for Post Graduate and Research Studies, Dharmapuri-636701

❑❑❑

Failure of the State: Nation Right after the Independence Through the Eyes Khushwant Singh

–[1]Dr Inderjeet Singh

Nation has become the reality of the modern world, every individual associates himself in one way or the other to a particular nation, and seldom do we come across any exceptions. Despite this fact, thinkers are unable to agree upon set definitions or characteristics.

Abstract

Ever since the rise of human civilization, human beings, with their evolved mind and intelligence, have developed a deep-rooted sense of belongingness and a need to interact in social groups to build a stronger bond amongst themselves to fight against any danger that may confront them. These social groupings can be short as well as long depending on the viability. Many of these through times have become a part of the collective consciousness of the human existence.

Social, physical, historical and political boundaries of these societies dictate the behavior of its individuals towards others. What is Utopian for one might just be the opposite for the other. Authors are no different in this regard, they have their own set of ideas about their perfect society, and digressions usually become the topic of critique in their narratives. Their critique aids in this process of division and entails the process of inclusion and exclusion all at the same time. A particular set of individuals might feel the sense of inclusion with one and a sense of exclusion with the other. Institutions like family, caste, class, religion, ethnicity etc play a major role in one's life and it is very difficult to assign meaning to life without them. They create multiple levels of narratives that drive the psycho-social journey of individuals all their life.

Index Terms: Nation, Independence, India, Unity, Diversity.

Our consciousness is carved out of the environment we are raised in. Similarly, to

understand nation, we need to factor in the cultural strings based on identity, the contexts (both spatial and temporal), the socio-historic placement of the individuals, the evolution of the narratives; the social, economic, political realities and prevalent ideologies amongst the subjects and the constant fight between the sub-cultures to assert their dominance in the mainstream narrative. Scholars and thinkers from various streams of study have put their thoughts into conceptualizing the finer aspects of nationhood, but with their own differing point of views regarding the evolution, definition and constituent elements of the concept.

Nation has become the reality of the modern world, every individual associates himself in one way or the other to a particular nation, and seldom do we come across any exceptions. Despite this fact, thinkers are unable to agree upon set definitions or characteristics. The concept dives into multiple fields of study and finds a connection with all of them, be it Sociology, History, Linguistics, Postcolonial Studies, Political Science or Cultural Studies, every field has its own importance in the concept. Due to its multidisciplinary nature and the number of paradoxes it entails, the task of defining it becomes even more complicated and intense. The concept is fluid and constantly evolving with the socio-political conditions of different regions around the world.

With the emergence of freedom struggles around the world against the tyrannical rule of the European rulers, the set ideas of the concept of 'nation' seem to lose their edge and new insights originate out of these. These forms all the more confusing situation as to what constitutes a nation and why it enjoys so much importance amongst the masses. More challenges in forming a popular viewpoint of the definition of nation originate out of the mass globalization of the present age. With the rise in trade amongst countries, formation of multi-national corporations, intertwining of economies, emergence of cosmopolitanism and multiculturalism the importance of national identity is being posed by new questions every day.

There is a constant tussle between theorists to define the concept of nation and its origins. The modernists believe nationalism is a recent and modern occurrence. But theorists like Philip S. Gorski and Diana Muir Appelbaum believed organizations such as the Dutch Republic were the first ever modern nations, and question the modernists. Liah Greenfield was of the view that nationalism is a British invention and that England is arguably, "the first nation in the world" (14). However, the concept of Nation in its current form

has gained a lot of nuances through the history of humankind therefore it adheres to a completely new set of human rules and thoughts. Ernest Renan opined that:

> Nations... are something fairly new in history. Antiquity was unfamiliar with them: Egypt, China, and ancient Chaldea were in no sense nation. They were herds led by a child of the Sun or of the Sky. They were no Egyptian citizens, no more than there were Chinese ones … There were never any Assyrian patriots; the Persian Empire was one great fief. Not a single nation finds its origins in Alexander's colossal adventure, otherwise so rich in consequences for the general history of civilization." (9)

While talking about the new nationalisms that have emerged in the third world countries it can be said that on the one side they have accepted the fact of them being backward when compared to the global standards of development put forth by these Western nations. On the other hand, they also realize that these standards originate from a culture alien to them, and their own culture is not quipped enough to realize the same standards of progress. They realized that they cannot simply copy the west, because it would mean giving up their own distinctive identity altogether, hence they need to find a balance between progress and their distinctiveness in order to recreate a national culture which pushes them forward from their said 'backwardness' (34)

Although the concept of nation is a colonial legacy, it takes its own maneuvers in the Indian context, referred to even as 'Rashtra'. Till date, Indians appear to be in a limbo as to how to move forward and be successful without compromising with their cultural heritage. In most other cases, we see a state being formed out of a group of people related to each other through sharing a common territory, or they have common history, traditions, language, ethnic linkage, political institutions or any other way of association. But, when it comes to nations like India with their pluri-ethnic, multi-cultural, multi-lingual society, we cannot pertain to these set rules of 'unity in uniformity' and we see new models of development altogether. The unique Indian identity puts forth a different model of the concept of nation all together, achieved through a set of understanding between different constituents to respect each other's diverse cultural intricacies.

JawaharLal Nehru commented regarding the Indian nationhood that "There

seemed to me something unique about the continuity of a cultural tradition through five thousand years of history, of invasion and upheaval, a tradition which was widespread among the masses and powerfully influenced them" (43-44). Nehru's viewpoint is reflected in Abid Husain's statement that "when we look at the cultural history of India, we find that in spite of the multifarious differences, there is basic unity in the thinking, feeling and living of Indians which waxes and wanes with the changing political constellation but never ceases" (6). There is no doubt that the case of Indian nationalism is a peculiar one and rejects the standards set by the west for the rest of the world. India is carved out of the concept of 'Unity in Diversity', a motto given by our great leaders. This sense of diversity has led to the success of the Indian nation as one of the most successful democracies in the world, which is a great example of India's strong base as a nation. While many nations, formed during the same period and out of similar circumstances as India, have failed to develop; India has, despite its many challenges, come across as one of the strongest nations of the world.

Indian diversity defies formulations. It isn't just about the massive number of castes and sub-castes that live and worship an even more enormous list of Gods and Goddesses, but all other religions, Sikhs, Muslims, Christians, Buddhists etc. are free to follow their own religious diversities.

Khushwant Singh spent his childhood living in the Punjab province of Pakistan and migrated to India during partition with his family, and therefore has a firsthand experience of the partition. Through his novel *Train to Pakistan* he questions the validity of the widespread violence in the name of nation and religion. He tries to chalk out the reasons for hatred amongst communities that lead to riots during partition of India. He has also highlighted the incompetence of the corrupt system of the newly formed state of India to control the disastrous effects of partition in the psyche of general population caused by the divide and rule policy of the British and their interference with composite culture and social structure of India.

Khushwant Singh provides the details of lifestyle of both the communities living in harmony in the border village of Mano Majra for a better understanding of the situation before and after the announcement of partition. It is not just a political novel; which provides a human dimension to the narrative and this fact gives a sense of authenticity and believability to the whole novel. The

novel provides details of the lifestyles and practices of both Sikh as well as Muslim community with equal level of refinement.

The novelist tries to point out how people with vested interests had injected the poison of misinformation regarding the history of Mughal period to instil hatred in the minds of Indians. Misrepresentation of history by a few people led to dilution of any reasoning left amongst the people of the Mano Majra. Naturally the consequences were bound to be disastrous. Khushwant Singh humorously wrote, "Logic was never a strong point with Sikhs; when they were aroused, logic did not matter at all" (121). In a very short period of time the whole village was engulfed by communal tensions. Sikhs became skeptical of the presence of the Muslims in the village and the Muslims of the village were astonished to see the sudden animosity amongst the Sikhs.

Train to Pakistan deals with the themes of democracy, tolerance and nation. Characters in their projected image of the nation are openly critical of Nehruvian dream of a nation and the political activities of the Gandhains and other politicians. The concept of India as a nation emerged very clearly during the freedom struggle. It was supposedly all-inclusive with an aim to mobilize every possible segment of the population for a common cause.

The limited scope of cultural-nationalism actually hinders our progress and it is as relevant now as it was during the years *Train to Pakistan* was formulated by Khushwant Singh. We often see that the leaders and citizens of the country, instead of addressing the socio-economic problems, such as poverty, cleanliness, lack of education, etc. plaguing the country, get stuck in the maze of the upsurge of cultural-nationalistic tendencies. The base on which the India nationhood stands, the concept of 'unity in diversity' meant accommodation of differences. But the concept remains only in slogans, and no real steps are taken to actually eliminate the differences or disparities amongst different social groups.

The characters of Jugga, Iqbal, Bhai Meet Singh, Hukum Chand, and the nameless Sub-inspector provide us with pulsating descriptions of real life characters that were present during the period. Juggat Singh aka Jagga is the village goon and son of a dacoit. He is the only person who wants to stop the killings. He is not a real goon, but is deliberately turned into one by the corrupt system and acts as an anti-hero in the progression of the novel. He ends his life trying to save a train full of Muslim refugees at the end of the

novel. Jugga acts as a true Gandhian nationalist, who doesn't scare away from the ultimate sacrifice of his life in order to serve the right.

Another character Iqbal is an educated individual sent to the village to create awareness regarding recent land reforms in India. He inspires to become a political leader, but when the time for him to become a true leader arrives, he turns his back to the people. His character is similar to many educated leaders of the country who cared for their personal gains rather than actual goodwill of the people. *Train to Pakistan* highlights on many levels the corrupt and incompetent nature of the newly formed government and already rotten bureaucracy of the country through the mismanagement at the hands of leaders and officers in charge alike.

The novel also provides us with a complete picture of the rural lifestyle of India, in its simplistic living patters, inadequate possessions, natural landscape and other familiar sights, especially typical to those of a border village. Importance of railways for Indian masses is constantly realized in the narrative through different activities being associated to the timings of the passing trains from the village railway station. The natural beauty of river and its impact in the lives of agrarian villages due to proximity is also realized in the narrative. The loyalty to one's village and its people is similar to the kind of loyalty envisioned by Gandhi and other leaders in the formation of Indian nationhood.

Conclusion:

Through *Train To Pakistan* we can easily deduce the characteristics of Indian nationalism during of its initial formation as well as the failure of the administration to stop the widespread violence that resulted after the tumultuous period that resulted into independence.

Khushwant Singh has written in the backdrop of the newly formed sense of nationness amongst the people of India. Khushwant Singh has shown the more human side of the things. *Train to Pakistan* highlights on many levels the corrupt and incompetent nature of the newly formed government and already rotten bureaucracy of the country through the mismanagement at the hands of leaders and officers-in-charge of the situation alike as against the innocent common man who was not even aware of partition. The narrative takes place in the backdrop of the typical rural imagery of India and both the villages become a microcosm of the various elements of the national scene.

Works Cited

1. Anderson, Benedict.*Imagined Communities: Reflections on the Origin and Spread of Nationalism,* London, Verso, 2006.
2. Bhabha, Homi K., ed. *Nation and Narration*. London, Cambridge, 1990.
3. Chatterjee, Partha. "Whose Imagined Communities?" *The Nation and its Fragments: Colonial and Postcolonial Histories*, New Jersey, Princeton University Press, 1993, pp. 3-13.
4. Gandhi, Mohandas Karamchand. *Hind Swaraj or Indian Home Rule*, Ahmedabad, Navjivan Publishing House, 2003.
5. ---. *Words of Freedom: Ideas of a Nation*. New Delhi, Penguin Books, 2010.
6. *Gellner, Ernest. Thought and Change. University of Chicago Press, 1964.*
7. *---. Nations and Nationalism.Oxford, Blackwell Publishers, 1983.*
8. *Hobsbawm, Eric J. Nations and Nationalism since 1780: Programme, Myth Reality, 2nd ed., Delhi, Cambridge UP, 1990.*
9. *Husain, S. Abid.The National Culture of India.New Delhi, National Book Trust, 1978.*
10. *Kumar, Sudhir."Nation VersusNativisim." Nativism: Essays in Criticism, New Delhi, Sahitya Academy, 1977, pp. 113-28.*
11. Nehru, Jawaharlal. *The Discovery of India*. New Delhi, Pearson, 2008.
12. Plamenatz, John. "The Two Types of Nationalism."*Nationalism: The Nature and Evolution of an Idea*, edited by Eugene Kamenka, Canberra,
13. Australian, National University Press, 1973, pp 22-37.
14. Ramani, Srinivasan. "Nationalism That's Progressive." *The Hindu*, February 25, 2016, https://www.thehindu.com/opinion/lead/Nationalism- that%E2%80%99s-progressive/article14097866.ece. Accessed on 28 January 2020.
15. Renan, Ernest. "What is a Nation?" *Nation and Narration*, edited by Homi K. Bhabha, London, Routledge, 1990, pp. 8-22.

---

1. Guest Faculty, Dept of Applied Science (English) CRSSIET, JHAJJAR (inderjeet.rs.eng@mdurohtak.ac.in)

Environmental Racism: A Reading of Richard Wright's *Eight Men*

–[1]Rananjayaa Singh

The next story, "The Man Who Saw the Flood," begins with the sentence: "A black father, a black mother, and a black child tramped through muddy fields…the ground was covered with flood silt… the flood water had been more than eight feet high here…" (102-103). This little Black family was returning home after a wrecking flood. Their house had perished in the disaster "because it sat in a slight depression".

Environmental racism is the disproportionate burden of a minority neighbourhood, especially the ones housing people of colour and/or those belonging to lower socioeconomic backgrounds, in close proximity to garbage dumps, toxic waste production and disposal, chemical works facilities, biowaste dumps, and other such sources that are hazardous to human health and well-being. These facilities produce foul smells and toxic substances that are spilt around or are absorbed by land, water, or air further contaminating them. Living in the vicinity of such establishments significantly lowers human life expectancy and makes survival not just extremely hard but also severely insulting. 'Environmental Racism' was coined in 1981 by Reverend Dr Benjamin Chavis Jr. of the United Church of Christ (UCC) Commission for Racial Justice. Robert D. Bullard added to the definition in 1990 in *Dumping in Dixie* calling it "any policy, practice or directive that differentially affects or disadvantages (whether intended or unintended) individuals, groups or communities based on race." Eric Jantz furthers this in his 2017 article stating that it "refers to a disparate environmental pollution distribution, where low-income communities and communities of colour bear the pollution burdens of industrial development and waste disposal more often than affluent white communities" (Jantz 248).

Communities of colour have historically been segregated in America and have been marginalized even within the environment. Race is often found to be the better predictor of exposure to environmental ills. According to

Luke Cole and Sheila Forster's book *From the Ground Up*, this unequal exposure of racial minorities to a degenerated environment "occurs whether the community is wealthy or poor" (57). People of colour are often subject to housing discrimination and discriminatory zoning, which leads minority neighbourhoods to disproportionately host undesirable land uses such as polluting industries. The burden of American waste and pollution has been shoved into the hands of racial minorities by Whites.

Blacks in America were pushed to the societal sidelines and practically forced to take up menial jobs for sustenance. They cooked and cleaned White houses, swept roads and other public spaces, picked-up the garbage, mowed lawns, cleaned sewers, etc. Even when Blacks were responsible for all possible cleaning jobs, they were themselves branded as 'dirty'. Carl Zimring describes this practice through the metaphor of "clean and white" in his book *Clean and White.* While white skin was classified as hygienic and clean, black skin was stamped as dirty, and was associated with filth and muck. All White neighbourhoods were neat, spacious, and sanitary—with parks, gardens, airy homes, healthcare, entertainment establishments, etc. The Black Belts, on the other hand, were unkempt, cramped, unsanitary, and indecent. Blacks were compelled to live and eat like vermin.

This paper focuses on how the well-known African-American writer Richard Wright addressed the issue of environmental racism in his book *Eight Men*, which is a collection of eight short stories. These eight stories—titled "The Man Who was Almost a Man", "The Man Who Lived Underground", "Big Black Good Man", "The Man Who Saw the Flood", "Man of All Work", "Man, God Ain't Like That…", "The Man Who Killed a Shadow", and "The Man Who Went to Chicago"—subtly touch and engage with environmental injustice against Blacks in the United States. The first story is about Dave, a seventeen-year-old boy, who somehow obtains a gun but ends up in a terrible situation because of it. He buys the pistol from Joe's store in their settlement. It appears to be one of the only prominent shops around the area and has been described as a dim-lit place with just a "yellow lantern" on the porch in the front. It heavily smelled of "coal oil and mackerel fish" (Wright 4). There were no electrical connections in the town or any other amenities as such. Dave was rebuked by his mother for not properly washing up before sitting down for supper. She asked him to "git up from there and git to the well n wash yoself! Ah ain feedin no hogs in mah house!" (6). Dave's family did not have a prescribed washing area in their small house, or luxurious soaps and bath oils, but they did have a well outside and it served their purpose of washing and cleaning. Just like Zimring, "Americans with dark skin had the

same concerns about dirt…as Whites…" (100). But their White counterparts refused to acknowledge this.

Frantz Fanon in the Introduction to his *Black Skin, White Masks* mentioned that "The white man is sealed in his whiteness. The black man in his blackness" (11). This very distinction is also carried forward in the treatment of nature and the environment in relation to race. Fanon also said that there exists only one destiny for black men: "And it is white" (12). This is the premise of the next story by Wright, "The Man Who Lived Underground," where a Black man wrongly accused of murder by white policemen goes to hell and comes back to land to prove his worth—but is pushed back into the same hell by the same policemen by shooting in the chest. Fred Daniels manages to escape police custody and plunges down into the sewers of the city to hide. Since he has no other place to go, he is forced to live the life of a sewer rat. The author does complete justice in the description of the sewers with heinous but truthful terms, like— "watery darkness," "black depths," "a wild forest filled with death," "world of dark light," "the dark heart of the earth," etc. (Wright 20). Daniels calls the sewer "the underground." Luke Cole and Sheila Forster, in their book *From the Ground Up*, have demonstrated with real-life examples, how people of colour in the U.S.A. bear a greater share of environmental hazards and pollution. This story takes up the repercussions of the same inequitable distribution of the worse side of the environment. Fred Daniels and his underground life are literal representations of what happens to all Black folk, both physically and mentally when environmental injustice is forced upon them by the power structures. Most African American characters in literature can be found comparing their world with that of the Whites. Like Bigger in Wright's *Native Son* marvels at the Dalton household and compares it with his own one-room apartment in the Black Belt. He is in awe of their soft carpets, the abundance of clean and healthy food, their spacious well-lit houses, etc. The same reason why Bigger felt out of place in the Dalton household, Daniels feels at home in the sewers. It does not take him long to get accustomed to the "odour of rot," or the "blueish-purple" scum that he had to wade through to go forward. It was not as horrible for him because his life above ground was not very different from the one down there. The struggle for clean drinking water, fresh food, and breathable air was as much a reality underground as it was aboveground for Daniels and his like. If the underground was "a wild forest filled with death" (54), the aboveground living conditions of Blacks also sentenced them "to early, systemic, and intergenerational death" (Cleere 1).

The next story, "Big Black Good Man," is set in a lodging hostel with

a rickety man named Olaf Jenson as the protagonist. Olaf was White and believed in the same presumption of Black skin being equated to dirty and unkempt. One night, he receives a huge Black man, named Jim, looking for lodging. Olaf was taken aback when he noticed that "the ebony giant was well dressed, carried a wonderful new suitcase, and wore black shoes that gleamed despite the raindrops that peppered their toes" (88). It was arduous for him to digest that a Black man could be well-turned-out, well-spoken, could own good quality belongings, was clean, and was neat in his way of life.

The next story, "The Man Who Saw the Flood," begins with the sentence: "A black father, a black mother, and a black child tramped through muddy fields…the ground was covered with flood silt…the flood water had been more than eight feet high here…" (102-103). This little Black family was returning home after a wrecking flood. Their house had perished in the disaster "because it sat in a slight depression" (103). The ground around their cabin was "soft and slimy" because of water retention. Zimring, Cole and Forster, and Bullard have claimed in their books by showing examples that the people in power knowingly push Blacks into residential areas which are geographically disadvantaged. They are either situated near toxic landfills like Warren County PCB dump, hazardous waste facilities like Love Canal in New York, and commercial waste sites like Chester in Pennsylvania or are low-lying and prone to floods, like the one in this story. As Rickie Cleere says, environmentally racist forces "have separated the environments inhabited by white people and those inhabited by people of color" (2). The Black family had not had proper food or water to drink for a very long time at that point, and when they tried their pump only "yellow water" trickled from it. Only upon heavy pumping were they able to get some clear water, but it still was not potable and had to be boiled first. There seems to be no aid provided by the state. If this were a White settlement, there would have been base camps, doctors, proper food and fresh water supplies for the people. This story reminds one of Zora N. Hurston's *Their Eyes Were Watching God* that mentions another similar instance of Black folk coping with floods and its aftermath.

The White protagonists of the next story, "Man, God Ain't Like That…"—John, and his wife Elsie—hit a Black man named Babu with their car. The reader now gets to see the regressive side of environmental racism. Babu was embarrassed, rather than being furious. He apologized to the "Massa" because he felt that his blood dirtied up his "fine car" (Wright 158). Black skin always equated to dirty skin for Whites, even if it were profusely bleeding red-colored. Some Black folks, like Babu, had this notion so ingrained in

their minds that they could not help but feel dirty in themselves.

The next story, "Man Who Killed a Shadow" takes us to Saul Sanders, near Washington. Saul knew that the world that he was born in "was split in two, a white world and a black one, the white one being separated from the black by a million…miles" (185). He felt like his people have been forced to live on a "black island" that is surrounded by the "white world." A big chemical company had once hired him as an exterminator because they "found that there was something in his nature that made him like going from house to house and putting down poison for rats and mice and roaches" (189). He was thus deemed fit to work with toxic chemicals because of his skin color. Rodents and mice have somewhat of a connection with Wright's Black characters.

The last story of this book, "The Man Who Went to Chicago," is about a man who leaves the Black Belt in search of a job. He arrived at a store where a porter was wanted and noticed from their accents that his employers were Jewish. He immediately thought to himself that "though English was [his] native tongue and America [his] native land, she, an alien, could operate a store and earn a living in a neighbourhood where [he] could not even live" (204). Blacks had no right to build a life on the other side of the Black Belt—a place where they could have a healthy life. The protagonist introspected yet again— "Accepting my environment at its face value, trapped by my own emotions, I kept asking myself what had black people done to bring this crazy world upon them?" (204).

It is asserted in *Eight Men* that "the essence of the irony of the plight of the Negro in America, to [him], is that he is doomed to live in isolation…" (214). This is an isolation from the environment, the society, and the culture. The Black man in America is a representation of a paradox: "Though he is an organic part of the nation, he is excluded by the entire tide and direction of American culture" (211). White Americans knew that without the help of their Black employees, their lives would crumble. They would no longer have cooks, cleaners, housekeepers, janitors, dishwashers, butlers, and the list goes on. But they still required Blacks to be shut inside the filthy corners of the city that were prescribed to them.

Environmental Justice Movement emerged out of many real-life examples of environmental racism from far-off American towns. African Americans came together to rise and fight the system that researchers like Luke Cole, Sheila Forster, and Robert Bullard have thoroughly reviewed. As Cleere has stated in her thesis, "pollution and waste, the main environmental externalities of industrial capitalism, continue to fall on those sections of society that can

least resist them—poor communities of color" (33). Literature and academia also play a great role in sensitising the common reader about serious causes like environmental racism. Richard Wright was a writer way ahead of his time. He addressed many issues that his contemporaries dared not, including the theme of environmental racism. Through his writing, Wright raises awareness about the issue of environmental racism and its impact on the lives of Black people in America. He highlights the need for social and political change to address the environmental injustices faced by marginalized communities.

Works Cited

1. Bullard, Robert D. *Dumping in Dixie: Race, Class, and Environmental Quality*. Westview Press, 2000, en.bookfi.net/book/1148932. Accessed 12 October 2022.
2. Cleere, Rickie. *Environmental Racism and the Movement for Black Lives: Grassroots Power in the 21st Century*. 2016. Pomona Senior Theses, scholarship.claremont.edu/Pomona_theses/140.
3. Cole, Luke W., and Sheila R. Foster. *From the Ground Up: Environmental Racism and the Rise of the Environmental Justice Movement*. New York UP, 2001.
4. Commission for Racial Justice United Church of Christ. *Toxic Wastes and Race in the United States: A National Report on the Racial and Socio-Economic Characteristics of Communities with Hazardous Waste Sites*. CRJUCC, 1987.
5. Fanon, Frantz. *Black Skin, White Masks*. Pluto Press, 1986.
6. Hurston, Zora Neale. *Their Eyes Were Watching God*. 1st Perennial Classics edition, Perennial Classics, 1998.
7. Jantz, Eric. "Environmental Racism with a Faint Green Glow." *National Resources Journal*, vol. 58, no. 2, 2017, pp. 247-277, digitalrepository.unm.edu/nrj/vol58/iss2/12/.
8. Wright, Richard. *Eight Men*. HarperCollins Publishers, 2008.
9. *Native Son*. Vintage. 2000.
10. Zimring, Carl A. *Clean and White: A History of Environmental Racism in the United States*. New York UP, 2015.

---

1. Research Scholar, University School of Humanities and Social Sciences Guru Gobind Singh Indraprastha University, New Delhi, India (rananjayaasingh@gmail.com)

Research Article

Study of Relatedness of Occupational Aspiration and Home Environment of Adolescents with Respect to Some Demographical Variables

–[1]Dr. Mandeep Kaur

Occupation plays a very important role in the life of a person. Initial right choice of occupation is very essential. But in India, it is observed that students make career choices without having the complete knowledge about a career or occupation. They fall prey to the pressures of parents and suggestions from friends.

Abstract

Dreams, thoughts, desires, passion and expectations that an individual possesses for their future occupation called occupational aspiration. Setting an appropriate level of occupational aspiration depends upon many factors. Home Environment is one of these factors. In the present study correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents has been studied with respect to gender, locale and stream. Survey method has been used. A disproportionate stratified random sample of 150 adolescents of 11th class has been drawn from various senior secondary schools of Fazilka district of Punjab keeping in mind the demographical variables. Karl Pearson's product moment co-efficient of correlations have been computed. Fisher's Z –transformation has been employed to find out significance of difference between correlations. Significant positive correlation has been found between occupational aspiration and home environment for whole sample, adolescent girls, urban adolescents and stream. Study also revealed no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescents with respect to gender, locale and stream.

Introduction

Occupation plays a very important role in the life of a person. Initial right choice of occupation is very essential. But in India, it is observed that students make career choices without having the complete knowledge about a career or occupation. They fall prey to the pressures of parents and suggestions from friends. Thus make unrealistic choices, resulting in failure and dissatisfaction in the selected occupation. This may lead to switching from one occupation to other. Success in an occupation depends upon initial right choice and initial right choice depends upon

occupational aspiration. Occupational aspiration refers to the desire of a person to choose particular occupation which he would like to pursue as a means of his livelihood. It refers to awareness needed, an active desire for accurate and valid occupational choice. "Occupational aspiration, desired work related goals, given ideal circumstances, are preferences about work that reflect information about self-concept, perceived opportunities, and interest and hopes" (Rojewski, 2005). Occupational aspiration depends upon many factors. Home environment is one of these factors. Home environment has an influential space in child's life. He lives in family, gets satisfaction and security and forgets all types of worries. Home environment consists of elements of freedom, attention, submission, acceptance, trust, warmth, fair involvement and economic conditions. All these elements go a long way in making himself reliant, confident and making his own choices.

Review of Related Studies

Sunaina (2016) found significant difference in the level of occupational aspirations of adolescent boys and girls. Insignificant difference has been found in the level of self concept of adolescent boys and girls. Insignificant relationship has been found between occupational aspirations and self concept of adolescents. Gupta and Kumari (2017) found that majority of the students have moderate levels of occupational aspirations and self-confidence. Significant correlation was found between occupational aspirations and self-confidence of students. Occupational aspirations of male students were higher than the females while female students were having higher self-confidence than the males. Lalrintluangi and Lalthanpuii (2019) revealed that most of the respondents (71.17%) have average occupational aspiration, and there is evidence that parental education has positive influence on the youth career preferences. Bahrani, Allawati, Shindi and Bakkar (2020) revealed that females have higher scores on career aspiration than males. Students who study pure maths in their career path have higher score on career aspiration than those with applied maths. Results also show significant effects of parents' educational level and grade point average on adolescents' career aspiration. Priyanka and Sharma (2021) revealed no significant difference in the occupational aspiration and the idealistic expression of occupational aspiration between orphanage reared and home reared secondary school students.

Objectives

1. To study relatedness between occupational aspiration and home environment of adolescents.
2. To study relatedness between occupational aspiration and home environment of adolescents with respect to gender (boys & girls), locale (urban & rural) and stream (Science & Arts).
3. To compare the relatedness between occupational aspiration and home environment of adolescents with respect to gender (boys & girls), locale

(urban & rural) and stream (Science & Arts).

Hypotheses

1. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents.
2. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent boys.
3. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent girls.
4. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of urban adolescents.
5. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of rural adolescents.
6. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Science stream.
7. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Arts stream.
8. There exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescent boys and girls.
9. There exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of urban and rural adolescents.
10. There exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescents of Science and Arts stream.

Significance of the Study

Adolescence is a period where they have to make educational and vocational decisions. Decisions at this stage pave the way for future decisions to be taken by an individual in the world of work. Any wrong decision taken under the pressure of parents and friends can trammel their growth and development. One of the most important decisions a young adolescent has to take is the selection of occupation. Today a variety of occupations are available. The initial right choice is becoming very difficult in these days. Occupational aspiration and home environment are the factors that will help them to make wise choices regarding the choice of occupation and future success in that occupation. Therefore it is relevant to study relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescents. Significance of the study lies in the fact that it will provide clear understanding about the variables under study. It will help the school system, parents and other stakeholders to help the adolescents to achieve an appropriate level of occupational aspiration. It will also help parents to provide a congenial home environment to adolescents

Design of the Study

Descriptive survey method has been used to study the relationship between occupational aspiration and home environment. Three demographical variables – Gender (Boys & Girls), Locale (Urban & Rural) and Stream (Science & Arts) have been used to form different subgroups. Karl Pearson's Product - Moment Co-efficient of Correlation has been calculated between different subgroups. Fisher's Z-transformation has been employed to find out significance of difference between correlations.

Sample of the Study

A disproportionate stratified random sample of 150 adolescents of 11th class has been drawn from various senior secondary schools of Fazilka district of Punjab keeping in mind the demographical variables.

Tools Used

1. Occupational Aspiration Scale by Dr. J.S. Grewal
2. Home Environment Inventory by Dr. Karuna Shankar Mishra

Statistical Techniques Used

1. Karl Pearson's product moment co-efficient of correlations have been computed.
2. Fisher's Z–transformation has been employed to find out significance of difference between correlations.

Analysis and Interpretation of the results

Table 1

Correlation between Occupational Aspiration and Home Environment of Adolescents (Total & Gender)

Variable	N	r
Occupational Aspiration	150	0.29**
Home Environment	150	
Occupational Aspiration(Boys)	75	0.21NS
Home Environment (Boys)	75	
Occupational Aspiration(Girls)	75	0.37**
Home Environment (Girls)	75	

***Significant at 0.01 level of significance ; NS-not Significant*

for df =148, $r_{0.05} = 0.160$ *and* $r_{0.01} = 0.210$ (Table 25, 201, Garrett, 1985)

for df =73, $r_{0.05} = 0.227$ and $r_{0.01} = 0.296$ (Table 25, 201, Garrett, 1985)

Table-1 reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.29) between occupational aspiration and home environment of adolescents

for whole sample is positive and greater than the table values of coefficient of correlation (for df = 148, $r_{0.05}$ = 0.160 and $r_{0.01}$ = 0.210). Therefore, observed correlation value r=0.29 is significant at 0.01 level of significance. This implies that there exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents. Hence, we reject the null hypothesis H_1.

Table-1 also reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.21) between occupational aspiration and home environment of adolescents boys is positive and less than the table values of coefficient of correlation (for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296). Therefore, observed correlation value r=0.21 is not significant. This implies that there exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent boys. Hence, we accept the null hypothesis H_2.

Table-1 further reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.37) between occupational aspiration and home environment of adolescent girls is positive and greater than the table values of coefficient of correlation (for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296). Therefore, observed correlation value r=0.37 is significant at 0.01 level of significance. This implies that there exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent girls. Hence, we reject the null hypothesis H_3.

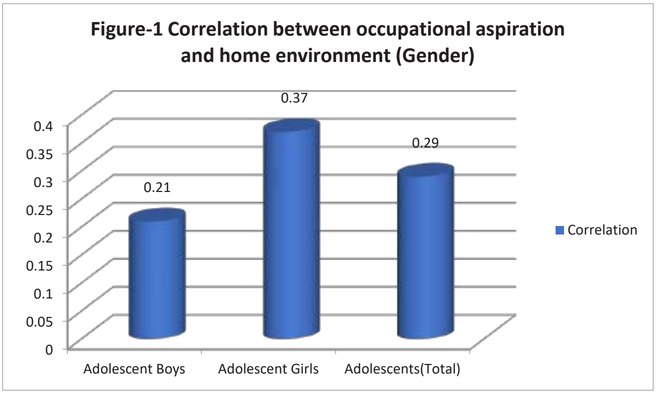

Table 2

Correlation between Occupational Aspiration and Home Environment of Adolescents (Locale)

Variable	N	r
Occupational Aspiration (Urban)	75	0.46 **
Home Environment (Urban)	75	
Occupational Aspiration (Rural)	75	0.19 NS
Home Environment (Rural)	75	

***Significant at 0.01 level of significance ;* NS- *not significance*

for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296 (Table 25, 201, Garrett, 1985)

Table 2 reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.46) between occupational aspiration and home environment of urban adolescents is positive and greater than the table values of coefficient of correlation (for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296) at 0.01 level. Therefore, observed correlation value r=0.46 is significant at 0.01 level of significance. This implies that there exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of urban adolescents. Hence, we reject the null hypothesis H_4.

Table-2 also reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.19) between occupational aspiration and home environment of rural adolescents is positive and less than the table values of coefficient of correlation (for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296). Therefore, observed correlation value r=0.19 is not significant. This implies that there exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of rural adolescents. Hence, we accept the null hypothesis H_5.

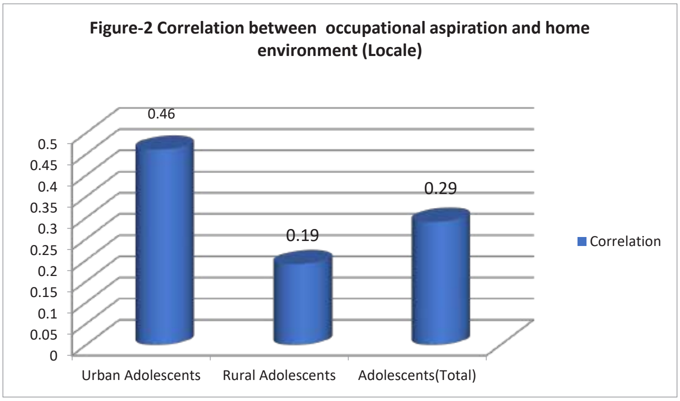

Table-3 Correlation between Occupational Aspiration and Home Environment of Adolescents (Stream)

Variable	N	r
Occupational Aspiration (Science)	75	0.24 *
Home Environment (Science)	75	
Occupational Aspiration (Arts)	75	0.33**
Home Environment (Arts)	75	

***Significant at 0.01 level of significance ; *Significant at 0.05 level of significance* for df=73, $r_{0.05}$=0.227 and $r_{0.01}$=0.296 (Table 25, 201, Garrett, 1985)

Table-3 reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.24) between occupational aspiration and home environment of adolescents of Science stream is positive and greater than the table value of coefficient of correlation (for df=73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296) at 0.05 level of significant.

Therefore, observed correlation value r=0.24 is significant at 0.05 level of significance. This implies that there exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Science stream. Hence, we reject the null hypothesis H_6.

Table 3 also reveals that the calculated value of coefficient of correlation (r = 0.33) between occupational aspiration and home environment of adolescents of Arts stream is positive and greater than the table values of coefficient of correlation (for df =73, $r_{0.05}$ = 0.227 and $r_{0.01}$ = 0.296). Therefore, observed correlation value r=0.33 is significant at 0.01 level of significance. This implies that there exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Arts stream. Hence, we reject the null hypothesis H_7.

Figure-3 Correlation between occupational aspiration and home environment(Stream)

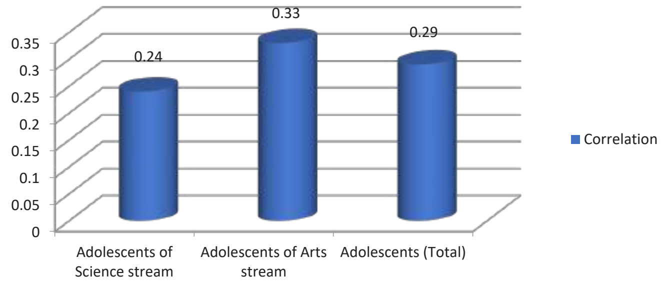

Table-4 Comparison of correlations between Occupational Aspiration and Home Environment across demographical variables

Variables	Group	N	Pearson's r	Fisher's Z		CR
Occupational Aspiration & Home Environment	Boys	75	0.21	0.21	0.17	1.05 NS
	Girls	75	0.37	0.39		
	Urban	75	0.46	0.50	0.17	1.82 NS
	Rural	75	0.19	0.19		
	Science	75	0.24	0.24	0.17	0.59 NS
	Arts	75	0.33	0.34		

NS- not significant

Table-4 reveals that the values of correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent boys and girls are 0.21 and 0.37 respectively. The converted Z values are 0.21 and 0.39 respectively (Table C, Garrett, 1985). The observed value of CR=1.05, is less than 1.96

and 2.58. Therefore, observed value of CR = 1.05, is not significant at both the levels of significance. Thus, there exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescent boys and girls. Hence, we accept the null hypothesis H_8.

Table-4 also reveals that the values of correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of urban and rural are 0.46 and 0.19 respectively. The converted Z values are 0.50 and 0.19 respectively (Table C, Garrett, 1985). The observed value of CR=1.82, is less than 1.96 and 2.58. Therefore, observed value of CR = 1.82, is not significant at both the levels of significance. Thus, there exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of urban and rural adolescents. Hence, we accept the null hypothesis H_9.

Table-4 further reveals that the values of correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Science and Arts stream are 0.24 and 0.33 respectively. The converted Z values are 0.24 and 0.34 respectively (Table C, Garrett, 1985). The observed value of CR=0.59, is less than 1.96 and 2.58. Therefore, observed value of CR = 0.59, is not significant at both the levels of significance. Thus, there exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescents of Science and Arts stream. Hence, we accept the null hypothesis H_{10}.

Summary of Results

1. There exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents.
2. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent boys.
3. There exists significant positive correlation between occupational aspiration and home environment of adolescent girls.
4. There exists significant correlation between occupational aspiration and home environment of urban adolescents.
5. There exists no significant correlation between occupational aspiration and home environment of rural adolescents.
6. There exists significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Science stream.
7. There exists significant correlation between occupational aspiration and home environment of adolescents of Arts stream.
8. There exists no significant difference between the relatedness of occupational aspiration and home environment of adolescent with respect to gender, locale and stream.

Educational Implications

The results of the study revealed significant positive correlation between

occupational aspiration and home environment for whole sample, adolescent girls, urban adolescents and stream. Therefore parents should provide congenial environment specially to girls for developing a proper level of occupational aspiration. For this parents should be very much aware about different occupational opportunities and occupational interests of their wards. Career and guidance cell of school can help parents regarding this. Career and guidance cell should make aware the parents regarding importance of congenial home environment through lectures and counseling sessions. They should be provided up to date information about different occupational opportunities. For this career talks, seminars, conferences and group discussion should be organized for adolescents and parents. This will help adolescents to set a proper level of occupational aspiration and utilize their energy in right direction.

Conclusion

Occupation aspiration is one of the important factors for making wise career choice. Occupational aspiration and home environment are found to be significantly correlated. Therefore, all efforts should be done to provide congenial home environment to adolescents and set appropriate level of occupational aspiration among adolescents. This will help wisely the adolescents to select, prepare, entre and progress in an occupation.

References

1. Bahrani, M. A. A., Allawati, S. M., Shindi, Y. A. A., & Bakkar, B. S. (2020). Career aspiration and related contextual variables. *International Journal of Adolescence and Youth, 25*(1), 703-711. Retrieved from DOI: 10.1080/02673843.2020.1730201
2. Garrett, H. E. (1985). *Statistics in Psychology and Education*. Bombay: Vakils Feffer and Simson Ltd.
3. Gupta, S., & Kumari, S. (2017). Occupational aspirations of secondary school students in relation to their self-confidence. *International Journal of Research and Analytical Reviews, 4*(3). Retrieved from https://ijrar.com/upload_issue/ijrar_issue_437.pdf
4. Lalrintluangi., & Lalthanpuii, S. (2019). A study of occupational aspiration level of higher secondary school students of Aizawl district in relation to parental education and gender. *IOSR Journal of Humanities and Social Science, 24*(6). DOI: 10.9790/0837-2406060812
5. Priyanka., & Sharma, M. (2021). Comparison of the occupational aspiration among orphanage reared and home reared secondary school students. *Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, 8*(7). Retrieved from https://www.jetir.org/papers/JETIR2107020.pdf
6. Rojewski, J. W. (2005). Occupational aspiration: Constructs, meaning, and application. In S.D.Brown & R.W.Lent (Eds), Career development and counseling: putting theory and research to work (pp.131-154). Hoboken, NJ: John Wiley.
7. Sunaina. (2016). Occupational aspirations of adolescents in relation to their self concept. *Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies, 4*(37). Retrieved from https://doi.org/10.21922/srjis.v4i37.10595

1. Assistant Professor, DAV College of Education, Abohar (mandeepaneja.kaur22@gmail.com)

Research Article

Examining the Stereotypes of Religion and Faith: A Reading of William Dalrymple's *Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India*

–[1]Harshita Rathee
–[2]Prof. Sujata Rana

Abstract

Each time when history is re-written, a new representation arises because of the constant connection and sometimes conflict between the past and the present which is also called historiography. This new interpretation is a reflection of re-analysis of past records in the light of some newly emerged social, political, religious and economic factors and fragmentary recollections of the past and responses to the present. William Dalrymple's travel writing *Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India* (2009), which has been acclaimed as one of the exceptional works in the field of travel literature. This is done by attempting to narrate a number of Indian tales of religious and cultural nature complemented by modern responses to them. This book addresses some principal issues like class, ethnic origin and gender in the situations found in contemporary and historical India through experiences of nine characters. This paper examines William Dalrymple's understanding of faith and religion in India through his travelogue. It aims to investigate whether Dalrymple's account is unbiased, objective, and unprejudiced or if it reinforces existing stereotypes held by foreigners.

Keywords: Travel, culture, religion, stereotypes, India

William dalrymple attempts to recount personal stories objectively but his biases are evident in his narrative. He portrays India as a culturally diverse yet socially oppressive and hierarchical country.

William Dalrymple's *Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India* is a travel book that explores the lives of nine people from the Indian subcontinent and the cultural issues they face. Through the stories of these individuals, Dalrymple addresses class, gender, caste, religion, and political systems without bias or prejudice by

simply ret-telling their stories. In his book, Dalrymple seeks to represent the disadvantaged members of Indian society and give them a voice. Through meaningful communication with them, he allows them to share their stories and challenge the preconceived notions, ideas and beliefs about India and its values. However, representation is not unbiased, and prejudice reinforces partialities based on social understanding.

In Dalrymple's work, all but two out of nine men and women are residents of India. However, these two non-residents of India have some connection with India, as one was born in India but resides in Sindh area of Pakistan and the other was born and bought up in Tibet but resided in India for years. These nine persons include a Sufi Fakir (who literally has disowned the world), a Jain nun (who abandoned her family and sacrificed joys of material life to become one), a devadasi (God's servant), a theyyam dancer (sometimes a deity of God, sometimes a poor, untouchable Dalit), a bhopa (a singer and healer), a Buddhist monk, an idol craftsman, a tantric and a Baul-singer; all of them narrating their life stories in detailed manner. Dalrymple is passionate about exploring the diversity and spiritual orientations of the rapidly changing Indian society. His work focuses on the life stories of the underprivileged in India, exploring how they navigate their spiritual struggles.

The writer attempts to recount personal stories objectively but his biases are evident in his narrative. He portrays India as a culturally diverse yet socially oppressive and hierarchical country. Dalrymple is not an exception as in most of such tales of a multi-cultural country narrated by a foreigner, there is an irresistible tendency to be swayed by one's prejudices and perceptions. He also seems to be validating a pattern of stereotyping when he highlights some aspects of India's culture that look not only self-contradictory but also nonsensical and intriguing to them. Building his opinion on the basis of his response to the tales of nine characters, he finds India's religious and cultural values and beliefs fascinating as well as conservative. One feels like agreeing to Melanie K. Smith observations that even tourism contributes, directly and indirectly, to strengthening of neo-colonialism. She conveys that tourism is "dominated by Western developed nations, rendering host nations dependent and subservient to its needs" (Smith 2009). And such travel writings, of course, tend to reinforce such prejudices about the host nations, amongst the potential tourists from foreign soils. The majority of life stories involve social and class stereotypes. For example, Prasannamati Mataji and Lal Peri's lives were based on strong religious beliefs and their quest for the divine. Others, like Bhopa singers, Idol makers of Chola and the Devadasis, live simply, relying on basic sustenance and forgoing normal pleasures due to their dedication to

the spiritual world. On the other hand, Hari Das seeks respect and acceptance from society, and thus looks to faith and holy devotion as a way to gain it.

Hari Das, a Dalit, is often mistreated by those of higher castes. He works as a weekend guard in a jail and digs wells to support his family. However, during the months of December through February, he is seen as a god in the form of a Theyyam dancer. This traditional dance style from Kerala's Malabar region is a blend of dance, mime, and music, with its foundations in tribal religions that venerate gods and ancestors. It is incredibly captivating to witness, with the traditional social structures being flipped in these three months wherein Hari Das is revered and feared as the divine being he embodies. This event takes place from twilight to dawn in front of small shrines. Dalrymple uses Hari Das's story to illustrate the warped nature of the caste system and the practices of caste discrimination. He is perplexed by the fact that people will so readily accept an unfathomable system in which a single person can be seen as untouchable one moment and then a god the next, based solely on the convenience of those in higher castes, "Though we are all Dalits even the most bigoted and casteist Namboodiri Brahmins worship us, and queue up to touch our feet." (Dalrymple 2009).

Rani Bai's story is full of outdated sexist stereotypes, patriarchal beliefs, economic deprivation and class discrepancies. She is a devadasi, a woman devoted to serving a temple or deity for life. Sadly, in the 21st century, devadasis face mistreatment and exploitation by patriarchy. To achieve the devadasi status, parents pledge their young daughters in marriage to a temple or God, usually a female deity. This custom still persists in some parts of India, despite being prohibited in 1988. Initially, devadasis were seen as devoted individuals with great spiritual strength and moral principles. They were honoured and supported by the aristocracy and royalty. However, when the British colonizers took control, they were reduced to little more than sex workers. It is tragic that some of them die from communicable diseases and unwanted pregnancies. This system, which revolves around the devadasis, is now considered a social evil that feeds off the abuse and exploitation of young girls and women. Rani Bai's parents had to give her up to the temple of Goddess Yellama since they could not afford to support her. She was then sold in Mumbai and forced into a brothel. Her story is a poignant example of how money, gender, religion, caste, and illness can combine to cause immense suffering. The author, Dalrymple, is appalled as he listens to her tale, and is stunned by the pseudo-religious customs in India.

Mohan Bhopa, a nomad from the Nayak caste who is positioned at the

bottom of the caste system hierarchy, and his wife, recite the 4000-line epic of Pabuji, a local mythological hero, in various places. Similarly to Hari Das, the Theyyam Dancer, Mohan Bhopa's work provides him with a steady income and respect which he would not have gained from any other occupation. The focus of the story is on his social status, which is depicted in a negative light, with members of the Nayak caste succumbing to poverty, lack of knowledge, and being unable to access aid. Manisha Ma and the Tantra also demonstrate the stark contrast between the good and bad, as a result of their conflicting practices between the pious and the devilish, "at the shifting threshold between the divine and demonic, violating approved social values and customs" (Dalrymple 2009). Being a victim of harassment and oppression, she decides to abandon her house and three daughters in search of respect and freedom. She feel enclined to search and pray for goddess Tara, in which she succeeds eventually. Now Goddess Tara mysteriously, comes to possess her regularly whenever she is with her violent, abusive husband. It can be said that it is one of her liberating acts to feel more powerful than her husband or any other male. She feels blessed with affection, admiration and contentment in the midst of the cremation grounds, something she had been deprived all through her life.

The life story of Red Fairy is a captivating one, concerning a girl's journey from a rural area of Bihar, India to Sindh, Pakistan during a time of immense communal tension in India. Muslims, especially those belonging to minorities, were the worst affected by the Hindu rage, Lal Peri's family included. They were forced to leave their home in the middle of the night and seek refuge in Pakistan. Not long after, the Indo-Pak War occurred, leading to the partition of Pakistan and the creation of Bangladesh. There, they had to start from scratch. Eventually, Red Fairy had to leave her home due to increasing abuse from her brother's widow, and she chose to pursue the path of a Sufi Fakir in a shrine - feeling secure and respected. This story illustrates the devastating repercussions of religious disharmony on ordinary people and highlights the spread of Wahhabism's and the growing intolerance of it, resulting in the destruction of many Sufi shrines in Pakistan.

'The Song of the Blind Minstrel' is the story of Kanai, a Baul singer. Kanai, from a poor family and blind since childhood, was forced to take his father's place as a labourer in the fields when his father died. Desperate for a way to support his family, he found a mentor to train him to become a Baul singer, a wandering group of musicians who oppose norms, traditions and caste systems but search for the divine through their musical compositions. Although their acts may be seen as controversial or repulsive, Baul singers remain peaceful

and non-violent, earning the respect of those in rural and backward areas who may relate to their performances, even more than the educated urbanites.

The tales which are most interesting because of their uniqueness need special mention here. The stories of three individuals demonstrate the influence of religion in life, such as Prasannamati Mataji, a Jain nun who left her family and home at a young age due to her strong interest in Jainism and its teachings. She chose to live a life of austerity and dedication, despite the comfort of her home. Passang, a Buddhist monk from Tibet, was forced to fight communists using guns, resulting in a life of guilt for taking lives. Lastly, Srikanda Stpathy, an idol sculptor from the Chola dynasty in Southern India, reveals the struggles of caste-ridden Indian society. As Stpathy is not entitled to learn Sanskrit because of his profession and work, he takes pride in craftsmanship saying, " The gods created man…….but here we are so blessed that we- simple men as we are- help to create the gods"(Dalrymple 2009). The author-narrator finds it puzzling that those who create exquisite idols of gods are denied the opportunity to learn and understand Sanskrit, which is supposedly only meant to be studied by individuals from the upper caste.

In this book, Dalrymple analyses his journeys to some of India's most far-flung and isolated areas, giving readers an insight into the country's culture, history and mythology. He narrates the struggles of the marginalized, who are often mistreated in the name of religion, culture, and tradition. Throughout the nine stories, he shows the integral role these people play in the spiritual life of their society, despite being kept on its fringes. While the authors main purpose is to provide context to the stories, his writing style may inadvertently contribute to reinforcing existing stereotypes.

William Dalrymple's narration of the multiple forms of devotion he observed evinces a certain level of surprise and caution, as he refrains from branding it as simple superstition or blind faith. From a native point of view, it is the unwavering faith, strong religious sentiments and firm convictions of the devotees that ties them together, but from Dalrymple's perspective, it is a result of conservative and inflexible thought. It is reflected in his observation on how the idols made of clay metamorphose into omnipotent, "Without faith, of course, it is just a sculpture. It's the faith of devotees that turns it into a god." (Dalrymple 2009). Dalrymple's search for the divine is basically this faith, which he constantly doubts. The frequent comparison of contemporary rural India to Middle Ages on one hand and to England on the other, reinforces Dalrymple's stereotyped portrayal of India in the pages of his travel book. But it certainly remains one of the best travelogues on India, being " a glorious mixture of journalism,

anthropology, history, and history of religious" (Doniger 2016) while precisely talking about India and faith. Dalrymple's book portrays the story of nine people from different religious backgrounds, each trying to find meaning and purpose in their lives. Through his distinctive style, Dalrymple invites readers to journey with these people and learn more about the lives of Baul singers, idol makers, folk singers of Rajasthan, and Theyyam dancers of Kerala.

Although a " compelling and poignant"(Dalrymple 2009) work, the book refrains from challenging and questioning the mindset which promotes and encourages the tendencies of masses in South Asian territories to be the frogs in the well blinding believing in and unconsciously perpetuating the exploitation, discrimination and abuse in the name of religion and faith. This book is a collection of biographies about nine characters whose lives have been destroyed by certain unknown and unspecified social, religious or political issues. It shows how faith and religion can sometimes help in resuscitating these lives. It is also a subtle critique of the politics behind the events that devastate the lives of thousands of people. The work is also said to be "the very finest travel writing"(Nicoll, 2016). The postcolonial reading of the book also paves the way for looking at it as the portrayal of and commentary on migration and globalization, affecting lives of million, positively as well negatively.

References:-

1. Dalrymple, William. *Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India*. London. Bloomsbury Publishing. 7 October 2009
2. Dalrymple, William. "Nine Lives: In search of the Sacred in Modern India by William Dalrymple" *The Guardian.* 23 October 2009 <https://www.theguardian.com/books/2009/oct/24/nine-lives-william-dalrymple-review>
3. Doniger, Wordy. "Book review: *Nine Lives – In search of the Sacred in Modern India* by William Dalrymple" *Namaste new Delhi.* 7 December 2016. <https://namastenewdelhi.wordpress.com/2016/12/07/dalrymple-nine-lines-in-search-of-the-sacred-in-modern-india-by-william-dalrymple/>
4. Nicoll, Ruaridh. "Nine lives by William Dalrymple" *The Guardian*. 3 October 2009.<https://www.theguardian.com/books/2009/oct/04/nine-lives-william-dalrymple-review>
5. "Representation." *Merriam-Webster.com*. Merriam-Webster, n.d. Web. 23 April 2017.
6. Smith, Melanie K. *Issues in Cultural Tourism Studies*. New York. Routledge, 2009.

1. Research Scholar (NET-JRF), Dept. of Humanities Deenbandhu Chhotu Ram University of Science and Technology, Murthal, Haryana
2. Dept. of Humanities Deenbandhu Chhotu Ram University of Science and Technology, Murthal, Haryana

Research Article

Religion as a medium for Social Change: Ambedkar's Perspective

–Konsam Romabati

This paper will examine Ambedkar's understanding of religion which is a reinterpretation of Buddhism called as Neo- Buddhism. It will assess how he used religion to bring social change and deconstruct the hierarchical order of society for the betterment of all. It will throw light on how he raised the important role played by religion in social life.

Abstract

B.R. Ambedkar defines religion as an indefinite word with no fixed meaning. It is one word with many meanings. He aimed to uplift the social status of society's most oppressed class or untouchables by adopting Buddhism as his religion. However, as a man of the highest intellect and wisdom, he critically examined Buddhism before his adoption. The reinterpreted Buddhism is Neo- Buddhism or Navayana. This paper will examine the novel and rational aspect of Neo- Buddhism, look into the philosophical implication of this perspective, and explores the various reasons why this version was the choice for Ambedkar. It will analyze the concept of Dhamma and justify how Ambedkar's version of Buddhism, a religion, is based on the universal virtue of understanding and love with a democratic and egalitarian ideal. Also, the paper will highlight how free choice was a crucial point in his conversion to Neo- Buddhism.

Keywords: Neo- Buddhism, Dhamma, Religion, Untouchables, Choice

Introduction

Religion is an integral part of human society. The Concise Oxford Dictionary describes religion as "human recognition of a superhuman controlling power, especially of a personal God or gods entitled to obedience and worship".There are multiple definitions of religion. Hick quotes the various interpretative meaning of religion, such as the psychological definition – "the feelings or acts

and experience of individual men, in their solitude so far as they apprehend themselves to stand in relation to whatever they consider it divine(William James). Others are sociological, as the definition given by Talcott Parsons 'a set of beliefs, practices, and institutions which man has evolved in various societies". There are also naturalistic definitions, as given by Salomon Reinach, as "a body of scruples which impede the free exercise of our faculties." There are also religious definitions of religion as given by Spencer "religion is the recognition that all things are manifestations of a power which transcends our knowledge"(2012:2). These varieties of definitions indicate that there cannot be one fixed definition of religion. Thus Hick asserts, "Perhaps a more realistic view is the word 'religion' does not have a single correct meaning but that the many different phenomena subsumed under it are related in the way that the philosopher Ludwig Wittgenstein has characterized as family resemblance" (ibid.2). The family model resemblance, when applied to religion, allows for the differences in definitions to exist together and not contradict one another. This paper will examine Ambedkar's understanding of religion which is a reinterpretation of Buddhism called as Neo- Buddhism. It will assess how he used religion to bring social change and deconstruct the hierarchical order of society for the betterment of all. It will throw light on how he raised the important role played by religion in social life.

Neo- Buddhism

Buddhism as a religious doctrine has persisted for about 2500 years and has undergone profound change. The reinterpretation by B.R. Ambedkar is a radical change in modernizing and reformulating the religion as reflected in his book the Buddha and his Dhamma (henceforth B.D.), where he explicitly discusses his idea of religion intending to make Buddhism relevant to modern society. As Verma expressed that "The B.D., as well as Ambedkar's numerous articles and books, have captivated an entire generation of academia, social activists, and policymakers(2010:56).

Ambedkar, at Yeola in 1935, declared that despite being born a Hindu, he had no desire to die a Hindu. His search for an alternative religion went on for about two decades, in which he examined Christianity, Islam, and Sikhism, but from relatively early on, his choice was Buddhism. Buddhism was a religion of the land even though it was virtually extinct in its land of origin for centuries as Dirks pointed out that as a religion "that could be conceived as rational, ethical and unburdened by a sacerdotal hierarchy"(Dirks 2001:271). The lifelong search resulted in Ambedkar's public adoption of Buddhism at

a conversion ceremony held in Nagpur on October 14, 1956. A large number of his followers followed the conversion. His Buddhism is Neo- Buddhism or Navayana, which is different from Hinayana and Mahayana, Buddhism's two religious and established orders. As Sangharakshita observes in *Ambedkar and Buddhism* that "after years of unsuccessful struggle for the basic human rights of his people, he was a force to recognize that there was going to be no change of heart on the part of the caste Hindus: if the Dalits wanted to rid themselves of their age-old disabilities, they had no alternative but to renounce the religion into which they had been born"(2006:59).

Following Ambedkar's conversion, the BD almost became the Bible of the Indian Buddhists. It makes a scientific and logical examination of the myths of Buddhism, and where he discusses the ideas of Neo Buddhism, which defies many core doctrines of Buddhism. He chose Buddhism after examining various religions to understand the suitability of each to help uplift the social status of the marginalized community. In support of his choice, Fuchs in *India's Religion* reaffirms that Buddhism as a religion was based on reason and not on revelation. (2024:253). Also, in comparison to other religious doctrines, it was the character of "worldly rationality, the emphasis on the will and judgment of the individual that Ambedkar believed could provide the basis for a renewed moral code in the society" (Tejani 2007:63). The Neo-Buddhism is an ideological and intellectual challenge to the dominant social and political ideas of the Hindus.

Reinterpretation of Buddhism

Ambedkar desired to free Buddhism from the corrupted practice brought about by Hindu ritualism. He wanted to focus on the social message which has been neglected. The BD is one such attempt by Ambedkar, where he makes a scientific investigation of Buddhism and criticizes many fraudulent and pessimistic aspects of Buddhism.

In the introduction to BD, Ambedkar claims that the first problem is related to the main event in the Buddha's life, Parivraja (going forth). Ambedkar rejected the traditional claim that it was the sight of the three events of a dead person, a sick person, and an old man as unreasonable. Instead, he highlights the political exigencies and the strength of the social conscience during a conflict over water rights between the Sakya and Koliyas (BD:49-55).

The second problem of Buddhism for Ambedkar is the Four Aryan truths on the existence, origination, and cessation of pain and suffering. He questions

whether they are the original teachings of Buddha or not, as he expresses that these four Aryan truths deny hope to humanity. These claims make "the gospel of Buddha the gospel of pessimism" (BD:19). They are a significant stumbling block in how non-Buddhists accept the gospel of Buddhism. Dukkha, the origin of sorrow, is caused by human's attachment to the illusions of the world. This explanation of blaming the victims as the cause of suffering would likely be very offensive to the people who suffered face-to-face oppression or social subordination.

The third problem is related to the soul, karma, and rebirth. Ambedkar interprets Buddha's teaching as denying the existence of a soul while teaching the doctrine of rebirth and the doctrine of past karma. There is a contradiction that he resolves in his reinterpretation. Ambedkar's interpretation differs from the Hindu belief in a soul that relies on past deeds. The Buddhist law of karma is not based on the soul. There is no soul in Buddhism, so there is no question of transmigration of the soul based on your past deeds and actions, as the brahminical claims. He rejects the Brahmanical claim of past deeds having an impression on the soul as Verma highlights that 'Unlike Bhraminism Buddhism rejects caste distinctions and the karma theory of a reborn and predestined soul to live out a life determined by its previous action.A person's value is measured by his or her current actions and not by the caste into which she or he is born. This negates the idea that current social injustices are a result of past misdeeds'. Thus it gives a sense of hope for the achievement of social justice for the oppressed class.

Finally, the fourth reinterpretation is related to the objective of Buddha to create a Bhikku(those who live on alms). Ambedkar claims that the Bhikku should be devoting their life as social servants, working as their friends, philosopher, and guide. Buddhism's future depends on Bhikkhu's objectives, giving a sense of optimism to society. Ambedkar expressed that a Bhikkhu leaves his home. But he does not retire from the world. He leaves home so that he may have the freedom and the opportunity to serve those who are attached to their homes but whose life is full of sorrow, misery, and unhappiness and who cannot help themselves (BD:19,374,382).

Further in BD, Ambedkar writes, " A Bhikkhu who is indifferent to the woes of mankind, however perfect in self-culture, is not at all a Bhikkhu. He may be something else, but he is not a Bhikkhu."

Thus the reinterpretations of Buddhism by Ambedkar revealed the social message of the religion and used it as a form of social teaching directed at

the oppressed section of society.

Dhamma and Religion

Dhamma is the core of Neo Buddhism. Dhamma differed fundamentally from what was called religion at that time. The Book IV of BD., Ambedkar discusses the relationship between Dhamma and religion. Buddha's Dhamma was based on doctrines that were rationally possible, and it differed fundamentally from what was religion at that time. In no other religion at the values of knowledge and evil of ignorance so much insisted upon as they are in Buddhism, asserts Justice R.R Bhole. Further, in the book's forward, R.R Bhole adds that the book's writing was a labor of love to Dr. Ambedkar, who came under the compelling influence of Siddharth, the apostle of reason.

Ambedkar holds that Dhamma has nothing to do with the soul and God. He argues that "what the Buddha calls Dhamma differs fundamentally from what is called religion". While religion is primarily personal, Dhamma is fundamentally social. Unlike religion, Dhamma is not interested in explaining the world but in reconstructing it. In Dhamma, the concept of God is replaced by a sacred and universal morality. Dhamma is righteousness which means the correct relationship between man and man in all spheres of life. Society cannot do without Dhamma. A society without Dhamma will collapse into anarchy and dictatorship. Moreover, in such a society, there is no liberty. Thus for Ambedkar, those who want liberty must have Dhamma. He explains the center of religion lay not in man's relation to god. It lies in the relationship between man and man. The purpose of religion is to teach a man how to behave towards other men so that all men may be happy (BD:274-279).

Moreover, Dhamma is characterized by two essential features of Prajna and Karuna. Prajna is understanding, and Karuna is love. For Ambedkar, Buddha made Prajna one of the two cornerstones of his Dhamma because he did not wish to leave any room for superstition. And Karuna, without it, society can neither live nor grow (BD:274). Thus for Ambedkar, Neo-Buddhism is based on understanding and love, which is such a unique and original perspective on religion.

Further, Ambedkar also expresses that morality has no place in religion. The content of religion has to do with God, the soul, prayers, worship, rituals, ceremonies, and sacrifices. Morality comes in only when a man comes in relation to a man. Morality comes in religion as a side wind to maintain peace and order. Every religion preaches morality, but morality is not the root of

religion. It is a wagon attached to it which is attached and detached as the occasion requires. Morality, therefore, is not effective in religion.

On the contrary, morality is Dhamma and Dhamma is morality. Morality takes the place of God in Dhamma, although there is no God. Dhamma has no place for prayers, pilgrimages, rituals, ceremonies, or sacrifices. Morality is the essence of Dhamma. Without it, there is no Dhamma. Morality in Dhamma arises from the immediate necessity for man to love man. It does not require the sanction of God. It is not to please God that man has to be moral. It is for his own good that man has to love man. This idea of morality for Ambedkar is sacred and universal. It has to safeguard the growth of the individuals. Ambedkar brings his ideal of Liberty, Fraternity, and Equality through this conception of morality. He holds that to make the concept of liberty and equality to be available to all, it is required to make fraternity universally effective. Fraternity is defined by Ambedkar as "another name for the brotherhood of men, which is another name for morality" (BD:283). This is why the Buddha preached that Dhamma is morality and as Dhamma is scared, so is morality. Thus Dhamma is in affirmation of the principles of liberty, equality, and fraternity that guided him throughout Ambedkar's life.

Ahimsa is also an integral part of Buddhism. Ahimsa means loving all so that we may wish not to kill any. This is a positive way of stating the principle of Ahimsa. Buddha did not make Ahimsa a matter of rule. He enunciated it as a matter of principle or a way of life. A principal leaves the freedom to act. A rule does not. Rule either breaks the individual or the individual break the rule (BD:300-01).

From Ambedkar's advocacy of Dhamma, it is evident that religious identity should be a matter of choice and not a fact of destiny, as it was widely accepted. This perspective of religious identity as a matter of one's exercise of choice was revolting enough for that time. His conversion was indeed a matter of exercising free choice. As Ayyar states, " Ambedkar left the Hindu fold not under any influence or because of vendetta, revenge, and impulsiveness. Instead, his conversion was the final step in addressing his ethical loneliness shared with the caste-oppressed people" (H.T., October 2022).

Conclusion

Dhammachakra Pravartan Diwas is celebrated every year in India on October 14 to remember Ambedkar's conversion. Following his conversion, about half a million Ambedkarites followed his footsteps and changed

their religion. Further, it inspired the conversion of around 5000 Tamils of Myanmar in Rangoon on October 28, 1956, under the leadership of Chan Htoon, the Justice of the Supreme Court of the Union of Burma, on 28th . Unfortunately, the movement lost intensity with Ambedkar's death shortly after the conversion. It is necessary to assess its relevance and impact after 66 years of this mass conversion. The movement that emerged as a promise of hope and new life to the oppressed class of the country failed to serve its purpose, making Ambedkar's hopes still need to be fulfilled. Today, the Buddhist population in India is one of the smallest minorities. To quote Wankhede-

> A large majority (close to 80%) of Indian Buddhists reside in Maharashtra. The neo- Buddhists have established social and educational institutions, initiated cultural movements, and organized popular public festivals to make Buddhism a visible force in Maharashtra's public sphere. However, it is mainly the Mahar caste and, recently, smaller sections within the Matang and the Maratha castes which have identified themselves as neo-Buddhists. Other socially marginalized groups are still defined by Hindu caste nomenclatures and traditional occupations. The Dalit socio-political movements in states including Uttar Pradesh and Bihar. Tamil Nadu and Karnataka have also promoted conversion to Buddhism."

This indicates the lack of enthusiasm among the Dalits to use religious conversion as means of mitigating caste-based oppression. This reflects a sense of restraint among them in adopting neo –Buddhism to challenge their social location.

Conclusively it can be observed that using neo-Buddhism to mitigate the social status of the oppressed class has limitations. There is also a need for non-religious measures, including political involvement, or else it remains voluntary and fragmented. This is not to ignore the fact that according to Ambedkar, the purpose of religion is to teach a man how he should behave towards other men so that all men may be happy. He made his best attempt to offer his Neo- Buddhism as a means of engaging and intervening in the hierarchical social order, giving visibility and a sense of identity and respect to the weak and vulnerable section of the society. It had the potential to deliver much-needed social justice.

Works Cited

1. Ambedkar, B R. *Buddha and His Dhamma.*http:/ycis.ac.in/CEGF%20Library/ English/ Buddha%20and%20His%20Dhamm
2. Ayyar, Varsha. Tracing Ambedkar's Journey to Buddhism, *Hindustan Times*. 2021, October 12. https://www.hindustantimes.com/oinion/tracing-ambedkars-journey–to Buddhism-101666361181919-amp.html
3. Dirks, N. *Castes of Mind; Colonialism and Making of Modern India.* Princeton and Oxford: Princeton University Press, 2001.
4. Fuchs, Martin. "Ambedkar's Buddhism" in T N Madan (ed.), *India's Religion*, New Delhi: OUP, 2004: 307-25.
5. Hick, John H . *Philosophy of Religion*, New Delhi: PHI Learning Private Limited, 2012.
6. Lynch, Owen. Dr. Ambedkar, "Myth and Charisma", *The Politics of Untouchability*, New York: University Columbia Press, 1969.
7. Queen, C. Dr. Ambedkar and the Hermeneutics of Buddhist Liberation, ed. Christopher S Queen and Sallie B. *Engaged Buddhism*: *Buddhist Liberation Movement in Asia.* Albany: State University of New York Press, 1996.
8. Sangharakshita. *Ambedkar and Buddhism.*New Delhi: Motilal Banarasidas Publishers, 2006.
9. Tejani, Shabnum. "Reflections on the Category of Secularism in India: Gandhi, Ambedkar and the Ethics of Communal Representation". ed. Anuradha D Needham and Rajeswari S Rajan. *The Crisis of Secularism in India*, New Delhi: Permanent Black, 2007.
10. Verma, V. Reinterpreting Buddhism: Ambedkar on the Politics of Social Action, *Economic and Political Weekly,* December 4, Vol XLV, No.49, 2010. https://www.researchgate.net/publication/322530054_Reinterpreting_Buddhism_Ambedkar_on_the _politics_ of_ social_ action Wankhede, Harish S. The Political Context of Religious Conversion in Orissa, *Economic and Political Weekly*, April 11, Vol. 64, no.15, 2009.

1. Assistant Professor Department of Philosophy Manipur University, Canchipur

Research Article

Relevance of Integral Education in the 21st-Century Indian Context

–Dr. NEENA .T S

Abstract

Famous Indian philosopher, poet, patriot, and educator Sri Aurobindo opposed the type of educational system that the British colonial authority in India instituted. He said that the best education is the kind that encourages a child's interests, creativity, morality, and aesthetic sense, ultimately leading to the growth of his spiritual abilities. It is a holistic approach to education. Integral education can only be referred to as holistic if it is based on five unique pillars: the physical, the vital, the mental, the psychic, and the spiritual. It is extremely possible to successfully meet the needs of students in the twenty-first century through integral education.

Key Words: Integral Education, Sri Aurobindo, The Mother, Student.

Introduction

Sri Aurobindo, a well-known Indian philosopher, poet, patriot, and educator, holds a significant place among contemporary Indian educational philosophers. He has extensive knowledge of both eastern and western educational systems, both ancient and modern. He focused his studies on the Advaita and Yoga schools of ancient Indian philosophy but primarily relied on his insight, reflection, and reason.

The philosophy of Sri Aurobindo may aptly be described as integral nondualism or Purna-advaita, integral idealism or Purna-vijnana, simply integralism,or Purnavada, as Haridas Chodhary

An individual becomes integrated when all three facets of their personality—cognitive or knowledge, conative or skills, and affective or attitudes and values—develop in a balanced and harmonious manner.

noted[1]. Because it acknowledges and transcends the contradiction between the lower and higher natures, or between matter and spirit, this concept is known as 'integral'. Matter and spirit, in Aurobindo's view, are like two sides of the same coin. If matter is to ascend to the spirit, there must be a proportionate descent of the spirit into matter. Even if the matter needs to be spiritualized, it must be given some status and actuality because it cannot be wholly false[2]. He attempts to develop an integrated viewpoint that gives both spirit and matter their place. The idea of consciousness evolution serves as his guiding principle of his philosophy. All of his ideas must be viewed in light of the theory of evolution[3].

Aurobindo was opposed to the kind of educational system put in place by the British colonial authorities in India. Even after the nation gained its independence, the system still needed improvement. According to Sri Aurobindo, modern education has rendered man only interested in materialistic pursuits, emphasising the inculcation of skills and knowledge connected to acquiring materialistic pursuits and, in a sense, neglecting the development of wisdom. Such academic programmes do not embody freedom and national independence. Nobody was concerned about the child's development. Man is now interested in keeping up with the competition of the industrialised society according to modern principles. Aurobindo believes that comfort is the most important necessity for a civilised society. To provide the children with an education that would improve their intellectual capabilities and make them spiritually sensitive and receptive, many more innovations were needed. According to him, true education is that which fosters the child's interests, creativity, mental, moral, and aesthetic sense, and ultimately results in the development of his spiritual powers[4].

Integral education: an overview

Integral education is a holistic approach to education that fosters the growth of not just the cognitive mind but also the physical, vital, spiritual, and psychic components of personality. According to Sri Aurobindo and The Mother (Mirra Alfassa), who was his spiritual companion, integral education treats each child as a developing soul and encourages them to bring out their innermost, strongest selves. It aids in the child's personality development on all levels and awakens his latent potential. The Mother has provided a systematised five-fold education that fully embodies the fundamental ideas of real education that Sri Aurbindo had formulated in both his unfinished work, 'A System of National Education', as well as in his writings on 'A

Preface to National Education.[5]' Here, the term 'integral education' refers to a two-dimensional approach. Integral in the first connotation refers to teaching the five facets of the individual being—physical, mental, spiritual, vital, and psyche—while integral in the second sense refers to education for the advancement of the nation and ultimately of humanity rather than the individual. Integral, in a broader sense, refers to advancing the idea of unity in diversity and the growth of humanity.

Integral education is the type of education that unites the human body, mind, and intellect to create an extraordinary powerhouse. He defines integral education as helping someone realise their full potential, preparing them for the fullness of life's purpose and possibilities, and assisting them in developing healthy relationships with the life, mind, and soul of the group to which they belong as well as with the larger community of humanity, of which they are both a part and an inseparable part. He has so far mentioned two pillars for integrated education, namely, that humanity is one and that each individual is unique and whole.

An individual becomes integrated when all three facets of their personality—cognitive or knowledge, conative or skills, and affective or attitudes and values—develop in a balanced and harmonious manner. The various facets of his personality, including his intellectual, ethical, practical, artistic, bodily, and other elements, have served as the powers of a 'self' that expresses itself through them, even though they do not all constitute the 'self'.

Only when integral education is founded on five distinct aspects—the physical, the vital, the mental, the psychic, and the spiritual—can it be said to be holistic. These are the five phases of integral education in relation to the principal human activities. For the individual's development, the five stages of integral education follow one another chronologically. But until the end of life, the five stages must continue and complement one another.

Physical education

The essential co-relationship between the mind and body is significant in gaining and producing true knowledge. The development of a mind-body connection within a whole-person framework is frequently overlooked in our current educational system. Physical discipline is needed to govern the body's numerous systems and achieve disease-free status in order for the body to develop completely harmoniously and holistically. It is therefore recommended that the appropriate development of the physical aspect be

sensitive to circumstance and capable of creative adaptability. Sports, dancing, martial arts, and other embodied activities can help us expand the fields of knowledge that are influenced by our distinct physical intelligences. These intelligences are crucial for students' health, wellbeing, and creativity, all of which have an impact on their sense of self-efficacy.

Vital Education

A vital education aims to promote thought, self-examination, and an open assessment of one's internal, energetic, and emotional processes. Our vital being is, in the words of the Mother, "the seat of impulses and desires, of enthusiasm and violence, of dynamic energy and desperate depressions, of passions and revolts.[6]" The observation of human impulses, energies, and desires is emphasised in vital education. The students thus get the chance to comprehend both their own inner world and the outside world.

Two things have made vital education for students so important: i) it promotes the growth and functionality of the sensory organs, and ii) through it, one can gradually master his character, leading to transformation and assisting in the acquisition of knowledge. Therefore, it is important to cultivate the senses of sight, hearing, smell, touch, taste, and mind. One should give up negative habits and create human behaviours, emotions, and their correlations in order to receive instruction in becoming an aesthetic personality. There is the source of the various emotions, impulses, sentiments, desires, and feelings that make up his unique character.

Children can access a range of perceptual and contemplative information through these two categories: sense organs, which one uses to get information from the world, and reflective self-examination, which one uses to think about one's own responses, thoughts, and experiences. This allows for a more thorough and completes engagement with lived experience. Students were instructed by the vital education to restrain their emotions and desires in the vital sphere. Children should be taught to understand our motivations for choosing a path from an early age. They become self-aware and capable of managing their own lives as a consequence.

Mental education

True mental education consists of five main phases that will equip a person for a higher level of existence[7]. These five stages are summarised as follows:

(1) Development of the ability to concentrate and pay attention

(2) Growth of the capacity for expanding richness and complexity

(3) Arranging one's thoughts around a fundamental notion, a higher and better aspiration, or a tremendously brilliant idea that will serve as a compass for life.

(4) The ability to regulate one's ideas, rejects unfavourable thoughts, and only thinks what and when one desires.

(5) The advent of quietness in the mind, complete calm, and an increasing degree of entire openness to inspirations originating from higher parts of the self.

All mental faculties, including memory, thinking, reasoning, imagination, discrimination, specific relationships, and generalisation, are considered to be parts of mental growth. A balanced development of these talents is the goal of education.

Gathering old knowledge, learning new knowledge, and building the ability to use and apply the knowledge learned are the three main goals of mental education. Through the use of his knowledge, the student grows in cognition, ideas, intelligence, and mental perspectives[8]. Therefore, one obtains a larger capacity for addressing deficiencies by obtaining a sufficient understanding of the relationship between vital processes, physiological responses and behaviours, and mental reflectivity. The practise of ideal ways of being, whether observed or created, supports and strengthens this ability.

Psychic education

The three lines of education mentioned above are concerned with ways to develop personality, lift a person out of an undifferentiated subconscious mass, and transform him into a clearly unique self-conscious being. With psychic education, questions about the real purpose of life, the reason for existing, the realisation to which this existence must lead, and the fulfilment of that realization—that is, the person's devotion to his eternal principle—all arise[9]. Integral education places a strong emphasis on understanding and caring about the specific and distinctive contribution that each person has to offer.

One can contend that the creation of a unique individual is the outcome of one of the innumerable possibilities hidden in the supreme origin of all manifestations being projected in time and space. Through the means of one and universal awareness, this possibility takes the form of an individual's law or truth, and through a process of advancement, it also takes the form of his

soul or psychic being[10]. The truth of a person's being and his circumstances are in contact with each other through this psychic presence. To achieve this mastery and become aware of the psychic presence, a psychic education is required.[11]. In order to go toward a spiritual way of life, one must become completely unselfish. This is dependent upon the psychic's presence in one's life. Therefore, it is possible to define the psychic life as eternal life, unbounded time and space, perpetual change, and uninterrupted continuity in the realm of forms. According to The Mother, "to become conscious of your psychic being and to live a psychic life, you must abolish all egoism; but to live a spiritual life, you must no longer have an ego"[12].

Liberation from all forms and identification with that which is beyond forms are not possible to maintain in an absolute sense since doing so would cause the material form to dissolve on its own[13]. The ultimate form of emancipation is this merging into the formless, which is what people seek in order to get away from a life that no longer appeals to them. Thus, psychic education allows a person to perceive their soul and supports their personal growth in accordance with their true selves. It fosters a person's vital, physical, and mental well-being so that they can understand life and themselves[14].

Spiritual education.

The ultimate aim of integral education is the spiritual being's development and enlightenment. In order to eventually allow one's spirit to fully facilitate his or its mature and multifaceted self, this awakening is developed through the educational process. This education will ensure eternal happiness. The highest level of education is what is referred to as super mental education. One reaches this stage after developing their bodily, vital, cerebral, and psychic components.

Integral education includes spiritual education, which tries to help students understand their eternal existence. It guides in discovering the depths of being—that which is eternal, unlimited, and dispersed. Thus, the student's spiritual development is at the advanced level they reached through the proper and balanced instruction they received from an ideal teacher. The ideal condition is thought to be the spiritualization of society[15]. According to the Mother, when we reach the level of perfection that is our ultimate aim, we will realise that the truth we pursue is made up of four basic elements: love, knowledge, power, and beauty. These four characteristics of the truth will naturally manifest in our existence. The body will represent perfect harmony

and beauty, the mind will be the source of unfailing knowledge, the vital will exude unbreakable power, and the psychic will be the bearer of pure love[16].

Relevance of Integral education in the 21st century

The beginning of the twenty-first century has brought about a number of changes in our civilization, including scientific and technological advancements, privatisation, the information age, urbanisation, knowledge expansion, liberalisation, rapid industrialization, and globalisation, as well as the influence of western culture. As a result, today's society is very dynamic. The shortcomings of such technology are not addressed by our educational system. In COVID-19 circumstances, the majority of children have been attending online lessons using their mobile smart phones. They are facing serious mental and physical health issues as a result of using such electronic devices. In light of the numerous awful instances of indiscipline, riots, and even murder that have happened, these typically cause escalating unrest among students. Naturally, given these circumstances, a distinct skill set is needed to help a person handle the difficulties of everyday life and succeed in doing so, advancing him holistically. According to CBSC, the term '21st Century Skills'[17] simply refers to the abilities needed to meet the problems of a world that is internationally engaged, digitally evolving, jointly moving forward, creatively progressing, seeking qualified human resources, and quick to embrace changes.

Integral education deals with a human being in his entirety and throughout his entire life, making it a comprehensive educational system. It facilitates the child's personality development on all levels and awakens his latent potential. Along with cognitive mind development, it fosters the growth of physical, psychic, spiritual, and vital components of personality. In all facets of humanity, it fosters a sense of integrity, beauty, and harmony. Through methodical training, integral education awakens the vast potentials that are latent. Students are given a variety of skills and abilities that they can utilise in their daily lives with the help of activity-based learning and innovative teaching methods. Through integral education, the needs of students in the twenty-first century can be very successfully addressed.

Conclusion

The growth and advancement of the student's material embodiment is necessary in order to invite the spirit into full involvement, which is the desired objective and encouraged outcome for student learners as they go

forward into society at large. The child's integral development is a lifelong process that provides life with its true significance. It is essential to instil in children traits like sincerity, honesty, forthrightness, bravery, selflessness, self-control, persistence, and peace. The increased growth of latent faculties with total transformation can result from nurturing them with love, wisdom, and dignity.

References

1. Choudhary, Haridas, Ed.,(1960),The Integral Philosophy of Sri Aurobindo, George Allen and Unwin Ltd,London, P. 19
2. Lal B K,(1973), Contemporary Indian Philosophy,(Delhi: Motilal Banarsidass Publishers private Ltd, P.162
3. Reddy, Ananda.(2005). Evolving Education: In the Light of Sri Aurobindo. In Swami Prabhananda(Eds.). In Search of our Nationalist roots for a Philosophy of Education, The Ramakrishna Mission Institute of Culcutta, P .67
4. Samuel Ravi, S.,(2015),Education in Emerging India,PHI Learning Private Limited, Delhi, P.217
5. Evolving Education: In the Light of Sri Aurobindo by Ananda Reddy, In Search of our Nationalist roots for a Philosophy of Education,(2005), The Ramakrishna Mission Institute of Culcutta, P. 76
6. The Mother,(1972),On Education,Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry ,P. 6
7. Ibid., P. 24-25
8. Samuel Ravi, S., (2015), Education in Emerging India, PHI Learning Private Limited, Delhi, ,P. 280
9. The Mother, (1972),On Education,Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry ,P.30-31
10. Ibid., P.31
11. Ibid., P. 32
12. Ibid.,P .35-36
13. Ibid.,P. 37
14. Samuel Ravi, S., (2015)Education in Emerging India, PHI Learning Private Limited, Delhi, ,P.280
15. Kishore, Kaushal,(2016), The Life and Times of Sri. Aurobindo Ghosh,. Ocean Books Pvt. Ltd.,New Delhi, P.129
16. The Mother,(1972),On Education,Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry ,P.8
17. CBSE, (2020),21st Century Skills: A hand Book,Delhi, 2020 P.14

---

1. Associate Professor Post-Graduate and Research Department of Philosophy Maharaja's College (Government Autonomous) Ernakulam – 692021 Kerala

Research Article

Everending Waves of Female Struggle in Chitra Banerjee Divakaruni's "The Last Queen".

A. Akthar Parveen
Dr. P. Kumaresan

Rani Jindan, the queen of Punjab is a symbol of grace, wit and honour. The Last Queen showcases the deep devotion of Rani Jindan had for her family, her religion and her country. This historical fiction is a timeless tale of a lady that showcases a spirit of patriotism and bravery.

Abstract:

Not many people know the heroic, awe-inspiring story of **Rani Jindan Kaur**, the youngest queen of the greatest Sikh ruler, Maharaja Ranjit Singh. Bestselling author Chitra Banerjee Divakaruni's latest book *The Last Queen* (HarperCollins India, 2021) is the subject of Jindan's captivating story. There are forgotten histories that need to be known widely, and Rani Jindan's is undoubtedly one of them. In the absence of a definitive biography, Banerjee Divakaruni's novel seems like an apt place to start. Jindan was a rare queen who manoeuvred through politics of the zenana, stood up to the onslaught of British colonisation and lived as an exiled freedom fighter before going to England in her later years to reclaim her son. The Last Queen maps her journey as she confronted the British while braving two daunting tasks — staying relevant for the king lest she plummet the zenana's hierarchical ladder, and securing her son's heritage from the onslaught of Britain's colonisation of India. . The Last Queen humanizes her larger than life character, and portrays her struggles in a way that we can relate to, while we appreciate the momentous tasks she had to undertake to preserve her Empire. Rani Jindan's story is compelling and hard to ignore, and Chitra Banerjee ensures that in this fascinating novel. Our paper is a sincere attempt to explore the struggle of the last queen of Punjab and fearless fight against British.

Key Words: Feminist struggle, Historic fiction, Freedom struggle.

Historical novel is bound to begin with preconceptions based on known and circulated

history. However, what is known can never be absolute because, like every story, history is a perspective, a story told by a story-teller. Chitra Banerjee Divakaruni uses Chinua Achebe to hint at this understanding of perspective when she begins the story of Rani Jindan Kaur in *The Last Queen*. The tale of a woman told by a woman enlivens the vastly unknown story of Jindan by intriguingly **blending fact and fiction** into an unputdownable novel, *The Last Queen*, which narrates the journey of a simple village girl to becoming the last queen of Maharaja Ranjit Singh**. An exquisite love story of a king and a commoner, a cautionary tale about loyalty and betrayal, a powerful parable of the indestructible bond between mother and child, and an inspiration for our times, Chitra Banerjee Divakaruni's novel brings alive one of the most fearless women of the nineteenth century, one whose story cries out to be told.** The Last Queen gives emotions to history and each chapter makes to feel the struggle of a woman . The author had clearly showed the feelings of the last queen to make the readers to feel the sorrow and also **with pride on our heritage**.

Rani Jindan, the queen of Punjab is a symbol of grace, wit and honour. The Last Queen showcases the deep devotion of Rani Jindan had for her family, her religion and her country. This historical fiction is a timeless tale of a lady that showcases a spirit of patriotism and bravery. The Last Queen is divided into four sections that chronicle the most important phases of her life in detail: Girl (1826–1834), Bride (1835–1839), Queen (1840–1849) and Rebel (1860–1863). Divakaruni deftly weaves Jindan's life with earthliness that allows us to befriend Jindan empathetically. Divakaruni's blends in Jindan the attributes of a girl-next-door and a magnanimous queen who is rooted, intelligent, beautiful, feisty, who bows to no external force but her passionate love for her dear ones and her Punjab. As the writer and the reader engage in dynamically creating Jindan, she might seem unimpressive to the modern woman whose awareness of her rights and dealings is acute and almost normalised. But to realise that we bear the legacy of a mid-nineteenth century independent spirit might allow us to contemplate the many Jindans who questioned conventions and unregrettably lived a life they chose, making us aware of possibilities today.

The Last Queen is the struggle of the lioness of Punjab to protect her Cub from British; It is the Struggle of the Lioness of Punjab to protect her motherland; It is the struggle of the Lioness of Punjab to protect her heritage and religion when her son forgets all those roots because he is abducted to Britain in the name of adoption . Her life bears witness to the fact that being a feminist is a way of life and Jindan can be every woman, while also being outside the lot. This simple narrative of a woman, who dreams, believes, achieves, falters, loses, but never allows life to dictate her, points at what

we have inherited, and must propagate sensitively – a strategic commingling of compliance and contestation, setting the rules of the game by playing it.

Her sense of freedom is most palpable in the first section of the novel – ‘Girl’ In fact the entire novel stands as an alibi to her strangeness, her defiance which makes her both human and phenomenal, carving her name in history. Sharp-eyed, stubborn, and passionate, Jindan was known for her beauty. When she caught the eye of **Maharaja Ranjit Singh, she was elevated to royalty, becoming his youngest and last queen--and his** favourite. Soon, Jindan becomes the king’s dearest queen and is showered with gifts. When her son, Dalip, is born, the king gifts the queen a haveli named after her.Even though the king had twenty queens he loved Jindan Kaur more hence he did not marry anymore. Hence the **title The Last Queen**. **The life of a queen is not a fairytale; it’s a life of sacrifice; it’s a life of struggle.** Rani Jindan kaur rose from commoner to become the last queen of Sikh Empire. She is quick to learn courtly manners, but does not care to fit in anywhere, except in Sarkar’s heart. He is her solace, as is Punjab, her motherland. But when she loses Sarkar, she is quick to access the foreboding danger and manipulates Dhyan Singh to help her flee to Jammu with Dalip, her infant son, and Mangla, her trusted maid. When ‘Queen’ opens Jindan is riding *Toofani* amidst the blue shades of Jammu hills. Although her boisterousness seems mellowed in exile, she still likes speed. Confined to a golden cage, her only solace is her growing son, her trusted maid, and *Fakir’s* letters which bring her comfort and counsel. She is terrified by the political conspiracies raging in Lahore and wishes to stay away. But she is forced to return soon and pulled into the vortex of intrigues, murders and betrayals. **The first person narrative allows the reader to navigate the alleys and sidewalks of a stronger, intelligent, brave, impudent woman, almost other-ing her from convenient womanhood of the period.** When the king’s heirs are all killed and murdered one by one, fate pushes Dalip close to the throne. When young Dalip is finally summoned to become the king, Jindan is made the queen regent until he reaches adulthood. In her new role, she fights hard against the British as well as her own treacherous courtiers.

‘Your kismet has already spoken. You are not only a wife and a mother, but a queen as well. And a queen who is a mother must play the royal game more skillfully because she has more to lose’ (The Last Queen 2021). In such a treacherous atmosphere**, five-year-old Dalip ascends the throne of Punjab** and Jindan becomes ***Mai*** Jindan, mother of Punjab. However, the narrative never loses sight of the humane Jindan who encounters an unprecedented tussle in her life as Queen Regent, a mother, the widow of a great king, and a young woman who is yearning for love. Fearless and unconventional, she

listens to the call of love, tears herself from her crying child at night to meet her lover, speaks explicitly to her dear ones of her womanly desires, bravely bears an abortion and unveils her pox-marked face to ensure her fidelity to her kingdom. But she falters to subdue her ego, loses her visionary sense, pushes her Khalsa army into a self-defeating fight against the British, and loses her all. The British, meanwhile, spread many lies about her and even name her the 'Messalina of the Punjab. Separated from her son by the conspiring British, she reaches Nepal to seek both asylum and rest in order to prepare herself to strike harder. Defying tradition, she stepped out of the zenana, cast aside the veil, and conducted state business in public, inspiring her subjects in two wars. Her power and influence were so formidable that the British, fearing an uprising, robbed the rebel queen of everything she had, but nothing crushed her indomitable will. All these are female struggle.

As The Last Queen is a historic friction, we could see the instances of **sati** in many places. Sati is a practice of burning the wife of a deceased male alive which was practiced widely in India before independence. Raja Ram Mohan Roy fought against this system later it was banned. Even though she sees her close associate burning alive but she didn't do that. This is The Last Queen's **social struggle.**

In her special signature style, Divakaruni manages to breathe life into the character of this enigmatic historical figure, making her seem more real and human than any book ever has. Widowed at the age of twenty-one, a lonely Jindan also gives into her desires and miraculously finds love again in Lal Singh, a nobleman in the Lahore court. Wise beyond her years, she finds reasons for her actions: "Many of the nobles have several wives — and mistresses, too. Their liaisons are accepted. Am I sinner, just because I'm a woman?.This is her own eternal struggle. "Something wild inside me makes me throw back my veil and look into Lal's eyes. This is the first time I've knowingly enticed a man."(The Last Queen,2021) **It is her choices, her mistakes and decisions which she takes full responsibility for, that make Jindan the fearless, strong woman she is.**

"After the death of Maharaja Ranjit Singh in 1839, Duleep Singh lived quietly with his mother, Jind Kaur Aulakh, at Jammu ruled by Gulab Singh, under the protection of the Vizier, Raja Dhian Singh. He and his mother were recalled to Lahore in 1843 after the assassinations of Maharaja Sher Singh and Dhian Singh, and on 16 September, at the age of five, Duleep Singh was proclaimed Maharaja of the Sikh Empire, with Maharani Jind Kaur as Regent,On 13 December 1845 the British declared war on the Sikhs and, after winning the First Anglo-Sikh War, retained the Maharaja as nominal ruler, but replaced the Maharani by a Council of Regency and later imprisoned and exiled her. Over thirteen years

passed before Duleep Singh was permitted to see his mother again.

After the close of the Second Anglo-Sikh War and the subsequent annexation of the Punjab on 29 March 1849,he was deposed at the age of ten and was put into the care of Dr John Login and sent from Lahore to Fatehgarh on 21 December 1849, with tight restrictions on who he was allowed to meet. No Indians, except trusted servants, could meet him in private. As a matter of British policy, he was to be culturally anglicised in every possible aspect. His health was reportedly poor and he was often sent to the hill station of Landour near Mussoorie in the Lower Himalaya for convalescence, at the time about 4 days› journey. He would remain for weeks at a time in Landour at a grand hilltop building called The Castle, which had been lavishly furnished to accommodate him. ". (Wikipedia-Duleep Singh".) This history is clearly depicted in the rebel part of The Last Queen. The real history of Jindan Kaur and Dalip Singh is picturised by Chitra Banerjee Divakaruni. Hence The Last Queen is the historic fiction.

Many seminal events like the Anglo- Sikh War and the peace treaties, annexation of Punjab, the infamous policies of Lord Dalhousie and the revolt of 1857 are chronicled through the protagonist's eyes. As the novel recreates some striking visuals of the Anglo-Sikh wars and the Revolt of The novel turns poignant during Jindan's reunion with her son Dalip wherein it unravels the impact of colonisation not only on Indians but also on the expatriates in England. Herein, the historical account metamorphoses into a coming-of-age novel, with Jindan as a reflective and contemplative mother treading an emotional minefield with her son who is now a converted Christian ensconced in England. Her resilience to rescue Dalip from the clutches of the English's deceit contributes most significantly to the artistic merit of this work and makes it the fulcrum on which rests this book's worth. A story of politics, nostalgia and courage, The Last Queen retrieves Rani Jindan from the forgotten annals of history**. History how our Kohinoor was snatched from us by the Britishers is picturised by Divakaruni.**

After being estranged from her son for a period of fourteen years, she is reunited with him once again in Calcutta, and they live the last few years of her life together in London. Known as the "Black Prince", Dalip had neither the strength of character nor the stubborn focus that his father possessed. Filled with fantastical plans and extravagant ideas, he was fickle and confused between his loyalty to India and the British. Before she died, Jindan reminded Dalip of his heritage, asking him to conduct her last rites in India and place her ashes next to her husband's. Unfortunately**, it took the British a whole year to give Dalip permission to bring her body back to India from England.**

The Women Who Ruled India (2019) by Archana Garodia Gupta threw light on the lives of several queens from India ,in which Jindan kaur's history can also be seen. **Navtej Sarna's *The Exile*** *Based on the Life of Maharaja Duleep Singh* traced the life of her son who lost his kingdom at just eight. Anita Anand's 2016 work**, *Kohinoor* –** books that Banerjee Divakaruni cites as invaluable resources in her acknowledgement. **Navtej Sarna's *The Exile:*** *A Novel Based on the Life of Maharaja Duleep Singh* traced the life of her son who lost his kingdom at just eight. And one of the few non-fiction works to briefly cover Rani Jindan has been William Dalrymple and Anita Anand's 2016 work**, *Kohinoor*** – both books that Banerjee Divakaruni cites as invaluable resources in her acknowledgement.

In **an interview to Hindustan Times** Chitra Banerjee Divakaruni says the reason for writing about a lady whose story is less told even though she fought against British and was brave till her last breath. Chitra Banerjee Divakaruni says," Rani Jindan Kaur's story resonated with me because she was a very strong and charismatic woman who rose to power and battled against great odds, and I felt she would be an inspiration to women today. She fought tirelessly against the British until her dying day. And yet people know so little about her! I felt the story of this indomitable, patriotic woman and loving mother deserved a novel dedicated totally to her". The Last Queen gives emotions to history and each chapter makes to feel the struggle of a woman . The author had clearly showed the eternal struggle of the last queen to make the readers to feel the sorrow and also with pride on our heritage**. The Last Queen is the struggle of Lioness of Punjab to protect her cub from British which brings tear and freedom struggle of the Lioness which kindles the patriotism. Hence The Last Queen is a historic fiction which shows the ever ending eternal waves of feminist struggle.**

References:

1. Divakaruni,Chitra Banerjee. **The Last Queen: HarperCollins,2021**
2. Chatterjee,Priyanka: feminisminindia.com book review :The Last Queen Feb.23,2021
3. Tata,Huzan, Scroll.in; The Last Queen:Chitra Banerjee Divakaruni's novel resurrects the history of Jindan Kaur of Punjab Feb.7,2021.
4. HINDUSTAN TIMES:15 Jan,2021 Interview: Chitra Banerjee Divakaruni, Author, The Last Queen

1. PhD Research Scholar, P.G and Research Department of English, Sudharsan college of Arts and Science, Perumandu-622104 (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli)
2. Associate professor& Research Advisor, Sudharsan college of Arts and Science, Perumandu-622104 (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli)

Research Article

Exploring the Tribal History of Jharkhand Through Ethnography

–Saurabh Mishra

Abstract

Interdisciplinary approach in research has broadened the scope of conventional subjects of humanities beyond their core area. History writing also makes use of various other auxiliary disciplines, one of them is ethnography. This paper highlights the correlation between ethnography and history esp. tribal history. This paper shows how ethnography can be used to explore various facets of tribal culture by taking into consideration the example of various ethnographical accounts written on the tribes of Chotanagpur in colonial and post- colonial India.

Anthropology has played a significant political role in India, both deliberate and unintentional. From the earliest ethnological writings of British administrators and European missionaries to the work of the Archaeological Survey of India and the Tribal Research Institutes, anthropological understandings of the people of India have shaped or influenced, in diverse ways, governing practices of the state, the formation of cultural identities, and political and social movements (Upadhya, 2011, p.266).

Ethnography is a particular way of doing fieldwork which has been characteristically associated with the discipline of anthropology. Ethnography and ethnology tend to refer to the observable aspects of a society encountered by the anthropologist in the field, the basic data are observed by them which are later synthesized and combined with theory to produce a rounded

The Ranchi District Gazetteers prepared by the efforts of T.S. Macpherson and M.G. Hallett throws light on physical aspects, history and people of Chotanagpur and also give necessary statistical accounts.

anthropology (Gosden, 1999, p.3). In other words Ethnography is the scientific description of the history, traditions and mutual differences of the various races, tribes and castes. Ethnographic fieldwork has three basic elements: long-term residence in the field, linguistic interactions with the tribe under study and most essentially participant observation.

An ethnographer is believed to do fieldwork in a faraway place, ideally amongst a close community or a village where he or she would spend a considerable length of time interacting with the people, collecting information from them, minutely looking at their ways of life and picking up various anecdotes, incidents, events and occurrences. It is through such intricate details that a comprehensive account of people's lives is documented (Mukhopadhyay, 2019, p.44).

History makes use of various other ancillary or auxiliary disciplines. Like history, the other social sciences, whether sociology, anthropology, political science or economics, study man in society and they do deal with the problem of change (Sreedharan, 2018, p.4). Ethnography may also enrich tribal history. Richard Lee, a social anthropologist writes in this regard: 'if every African pre-historian spent a field season working with the Kalahari Bushmen (or the Australian Aborigines), this experience would immeasurably enrich his understandings of all levels of African pre-history' (Lee, 1968, p.345). Herodotus, who is considered as the father of history, laid the foundation of ethnographic study in Greece. He travelled to different places and described the culture of its inhabitants.

Earlier it was believed that tribal people do not have a history, and if at all they have, its sense is shallow. When the colonial people encountered them for the first time, they could not delve into the history of these people whom they labeled as tribes, aborigines, etc. Because of their ignorance of the history of tribal people, they narrowed down the scope of history and chained it within the confinement of so- called scientific approach. Not only that, they rejected oral sources as unscientific and did not think it wise to work on an alternative approach to construct the history of these preliterate people. In doing so, they ignored the role of tribal past in the making of human history (Behera, 2019).

Ethnographic Accounts on the Tribes of Jharkhand:

1. **Studies by colonial Ethnographers and Administrators**

   The earliest writings on tribes of Jharkhand were those of nineteenth

century British administrators whose attention was drawn to tribal societies by the recurring tribal revolts. The tribal world, therefore, figured in official perceptions mainly as an adjunct to the counter-insurgency measures of the state. The perception gradually changed due to on improved understanding of tribal society (Gupta, 2001). Tribes were then recognized as a worthwhile subject of study. In the 19th century a few British Administrators evinced keen interest in the ethnography and anthropology of tribal areas. W.W. Hunter (1868) in his *'Annals of Rural Bengal'* wrote about the tribes of Beerbhum and Santhal Paragana. Other important works included Col. E.T. Dalton's *'Descriptive Ethnology of Bengal*" (1872); H.S. Risley's '*Tribes and Castes of Bengal*' (1891); and G. Archer's *'The Santhal Rebellion*' (1945). F.B. Bradley–Birt in 1903 wrote *'Chotanagpur: A Little-known Province of the Empire'* which is a detailed description of social, cultural and economic life of the various tribes residing in Chotanagpur plateau.

The *Ranchi District Gazetteers* prepared by the efforts of T.S. Macpherson and M.G. Hallett throws light on physical aspects, history and people of Chotanagpur and also give necessary statistical accounts. W.W.Hunter in vol. XVII of *Statistical Account of Bengal* had given a detailed description about aboriginal tribes of Chotanagpur and Singhbhum district viz. the Kols, the Hos and the Mundas.

The early British administrators had their own prejudices against the tribals. They looked at the problems of the tribals with western standards and values. Hutton had therefore, rightly remarked that in the early days of the British rule the policy of the British administrators was detrimental to a great extent to the economic conditions of the tribes. Out of sheer ignorance the British neglected their rights and customs. Treating the tribals and non-tribals of India as a homogenous unit the British did not try to create institutions, rules and regulations for the tribals on a different basis (Mathur, 2004, p.170). Reactionary and ill conceived legislations like Criminal Tribes Act, 1871 made the conditions of Adivasis worse. This Act stated many communities of craftsmen, traders and pastoralists to be criminal tribes by nature and birth. After the enforcement of this act, these tribes were supposed to live in notified village settlements and were not allowed to move out without a permit. The village police kept a continuous watch on them and many officials prepared notes and description about the activities of such tribes.

Notable works in this regard are of E.J. Gunthorpe '*Notes on Criminal Tribes Residing in or frequenting the Bombay Presidency, Berar and the Central Provinces'* (1882); G.W.Gayer '*Lectures on some Criminal Tribes of India and Religious Mendicants'* (1910); F.S.Mullaly *'Note on Criminal Classes of the Madras Presidency'* (1912); M. Paupa Rao Naidu *'The Criminal Tribes of India*' (1905) and M. Kennedy '*The Criminal Classes in India'* (1908) etc.

Gradually they realized their folly and adopted the concept of the protection of tribal ethnicity. Denzil Ibbetson writes in this regard: 'Our ignorance of the customs and beliefs of the people among whom we dwell is surely in some respects a reproach to us; for not only does that ignorance deprive European science of material which it greatly needs, but it also involves a distinct loss of administrative power to ourselves.'[1]

2. The Role of Christian Missionaries:

The Charter Act of 1813 allowed the Christian missionaries to conduct their activities freely in areas under its control. Missionaries undertook activities of education, health services and attempted to convert the tribes into Christians. Missionary work in Chotanagpur owes its origin to Johannes Gossner, a scholarly Bavarian priest who in 1844 sent 4 young missionaries to work in Ranchi district. In 1855, first Christian Church was established in Chotanagpur. Two Missionary Schools the Roman Catholic Mission (under Father Constant Lievens) and the Gossner Lutheran Mission – continued working side by side in Chotanagpur. (Sahay, 1968)

Mass conversions took place among the tribals of the Chotanagpur Adivasi belt. For the missionaries the translation of the Bible in the local languages was an urgent need for evangelization. In 1868, Rev Hahn prepared a Kuruk Grammar and Dictionary. The Gossner Mission started a printing press in Ranchi in 1882. Dr. Alfred Nottrot's Translation of the Bible in Mundari in 1876 was a pioneering contribution to the Mundari language and literature.

The concerns of the missionaries were not exclusively conversion of souls. Aware of the root cause of the Adivasi rebellions, "The Chotanagpur Tenancy Act" (1908), empowering to prevent land alienation of the tribal land by non-tribals, was drafted by Fr. J.B. Hoffmann and was entirely enacted by the British Govt. This act was later extended to the land ownership of the tribals even after Indian independence. He also established "Catholic Mission

1 Quoted in Crispin Bates (1995) 'Race, Caste and Tribe in Central India: The Early Origins of Indian Anthropometry' in Peter Robb (ed.) *The Concept of Race in South Asia* p.228

Cooperative Credit Society of Chotanagpur" (1906) and "Chotanagpur Cooperative Stores" (1913). A large number of families became beneficiaries and escaped the clutches of the landlords and the moneylenders. The Catholic Sabha founded in 1928 gradually evolved into Adivasi Mahasabha in 1938, covering the whole of Chotanagpur. It put the foundation of the Jharkhand movement and the creation of the state in 2000. (Kanjamala, 2014, pp.118-22) He is also the celebrated author of the 16 volumes of '*Encyclopedia Mundarika*' (1924-1938) encompassing in its pages the whole culture and civilization of the Munda people.

The Norwegian L.O.Skrefsrud (1840-1910) of the Gossner Lutheran Mission who arrived in India in 1863 toiled in the Santhal Paragana for half a century. He is one of the pioneers who powerfully argued for the preservation of the local culture and indigenization the Santhal Church. His many publications included *The Grammar of the Santhal language* (1873) and the translation of the New Testament in Santhali (1880). The society for the propagation of the Gossner started work in Ranchi in 1869. The Dublin University Mission entered Hazaribagh in 1892 and it started the first Degree College, St. Columba's College in 1899. (Mahto, 1971)

Therefore, the entry of Christian Missionaries resulted in documentation of tribal life and history.

3. Ethnographic Survey of India –

The decennial census of India since 1881 and the publication of district gazetteers prepared the ground for an ethnographic survey of India. In August 1882, the Census Commissioner suggested that an Ethnographic survey of the customs and occupations of all important tribes and castes throughout British India should be undertaken. Therefore, an anthropometric inquiry was conducted to describe the distinctive characteristics of selected tribes and castes in Bengal according to the methods prescribed by the French anthropologists Broca and Topinard. The results of these inquiries were recorded in the four volumes of *The Tribes and Castes of Bengal (1891)* prepared by the efforts of Herbert Hope Risley.

In December 1899, when the preliminary arrangements for the census of 1901 were under consideration, the British Association for the Advancement of Science recommended to the Secretary of State, that certain ethnographic investigations should be undertaken in connection with the census operation. Sir Arthur Godley's in his letter dated 16 January 1900 admits that 'the native

conduct of individuals are largely determined by the rules of the group to which they belong. For the purposes of legislation, of judicial procedure, of famine relief, of sanitation and dealings with epidemic disease, and of almost every form of executive action an ethnographic survey of India, and a record of the customs of the people is as necessary an incident of good administration as a cadastral survey of the land and a record of the rights of its tenants.'[2]

The scheme was sanctioned in 1901 and a Superintendent of Ethnography was appointed for each province. Consequently R.V. Russell and Rai Bahadur Hira Lal conducted ethnographic survey in Central Provinces and Berar; W. Crooke in North-West Provinces and Oudh; R.E. Enthoven and Sir James Campbell in Bombay; and E. Thurston in South India. W.H.R. Rivers studied and published monograph on the Todas of Nilgiri hills (in Tamil Nadu) in 1906 and his student Radcliff Brown conducted ethnographic fieldwork in Andaman and Nicobar islands. Brown's book '*The Andaman Islanders*' was published in 1922.[3]

4. Studies by Indian Ethnographers -

The 19th century British historians played a crucial role in provoking a nationalist reaction of writing tribal history. Sarat Chandra Roy, who is known as father of India ethnography, published many books on tribes of Chotanagpur such as '*The Mundas and Their Country*' (1912), '*The Oraons of Chotanagpur*' (1915) etc. Kali Kinkar Datta's *'Santal Insurrection*' (1940) was one of the earliest discussions of tribal uprisings.

The importance of history for modern India is reflected in the eagerness with which, soon after independence in 1947, state-sponsored projects for writing the history of freedom struggle were launched. During colonial rule, Indian ethnographers had sometimes felt restricted in their research. This was not only due to technical or administrative problems (access to archives, funding of institutions, realization of excavation projects, and so on) but also to the general feeling of insufficiency and backwardness created by colonial historiography, esp. with regard to their assessment as a political community

---

2 Quoted in Crispin Bates (1995) 'Race, Caste and Tribe in Central India: The Early Origins of Indian Anthropometry

3 See R.V. Russell and Hira Lal, The Castes and Tribes of the Central Provinces, (London, 1916); W. Crooke, The Tribes and Castes of the North-West Provinces and Oudh, 4 vols., (Calcutta, 1896); R.E. Enthoven, The Tribes and Castes of Bombay, (Bombay, 1920); E. Thurston, The Tribes and Castes of South India, 7 vols.(Madras, 1909).

(Gottlob, 2011).

K.K. Datta dealt with the tribal rebellions such as the Kol (that is the Munda and Larka Ho) uprising of 1831, the Santhal Hul of 1855 and Birsa Munda's Ulgulan revolt (1898-99) in detail in his *History of the Freedom Movement in Bihar* (1957) which has been published in 3 volumes. Datta considered the chief reason behind the rebellion to be the economic grievances of the people against their oppression and exploitation by the moneylenders and merchants. Dhirendranath Baske [*'Saontal Ganasangramer Itihas*, 1976] is another prominent ethnographer who tried to change the image of Santhal tribes evolved by British. These ethnographers sought to disprove the notion of Oriental Despotism by demonstrating the existence of republican form of government among Indian aborigines.

Following in K.K. Datta's footsteps, three of his students, J.C. Jha, S.P. Sinha and K.S. Singh published monographs on similar movements in Chotanagpur (Gupta, 2001, p.81-82). In his work *'The Kol Insurrection'* (1964), Jha reiterated the argument that 'the tribal unrest of 1831-2 was a crude form of protest against the changes and the outside influences- a gesture of despair.' (Jha, 1964, p.1) Jha says that the consequence of the revolt was the introduction of relief measures through Regulation XIII of 1833 whereby special rules were framed for the area which eased conflicts within tribal societies. Similarly he wrote in '*The Bhumij Revolt 1832-33*' the Bhumij revolt was 'a millenary or populist movement aimed at creating an ideal world' in which men would receive justice. (Jha, 1964, p. 187)

S.P. Sinha ('*Life and Times of Birsa Bhagwan*') and K.S. Singh ('*The Dust Storm and the Hanging Mist: A Study of Birsa Munda and his movement in Chota Nagpur, 1874-1971*') are a few studies dealing with Birsaite movements. Sinha argued that the tribal world, economically subordinate, was culturally inferior to that of the Hindus and Christians. Birsa Munda therefore had to borrow elements of the dominant culture to raise the status of the subordinate group. K.S. Singh, on the other hand, laid emphasis on economic issues, which undermined tribal agrarian structure (Gupta, 2001, p.81-82). He observed, 'the transformation of the Mundari agrarian system into non- communal, feudal, zamindari or individual tenures was the key to agrarian disorders that climaxed into religious-political movements of Birsa' (Singh, 1966, p.1). Three volumes on *Tribal Movements in India* edited by K.S.Singh are important contributions to the relatively scant literature on the subject. The first volume deals with the northeast frontier tribes, the second

volume focuses on central and south India and the third volume confines itself to a survey of literature on tribal movements in different parts of the country.

Conclusion

Therefore ethnographic study, using colonial accounts and archival documents as well as non- traditional source materials like literature, oral testimonies and folklore will help historians to explore tribal history of India. Moreover earlier accounts reflect a biased outlook towards the tribes. The colonial accounts treated them as barbaric.

Therefore a re-evaluation of tribal history dealing with their settlement patterns, economic activities, social and political organization, dressing and food habits, beliefs, practices, rituals and customs hold out possibilities of interesting future research. On the contrary, the fact that tribal issues are apparently relevant in many parts of the country would call for more ethnographic, comparative and analytical efforts than has hitherto been the case (Berger & Heidemann, 2013, pp.1-10). It is in the light of these developments that history is increasingly viewed as being complementary to ethnography. Ethnographic fieldwork cannot simply be looked at in a synchronic fashion (as snap shot, unhistorical) but rather as a diachronic encounter. (Mukhopadhyay, 2019)

References

1. Bates, C. (1995). Race, Caste and Tribe in Central India: The Early Origins of Indian Anthropometry. In Peter Robb (ed.) *The Concept of Race in South Asia* (pp 219-259) Delhi
2. Behera, M.C. (2019) Tribal Studies: Emerging Perspectives from History, Archaeology and Ethnography. In M.C. Behera (ed.) *Tribal Studies in India* (pp.1-31). Retrieved from https://doi.org/10.1007/978-981-32-9026-6
3. Berger, P., & Heidemann, F. (Eds.) (2013). *The Modern Anthropology of India: Ethnography, themes and theory.* New York: Routledge.
4. Bradley-Birt, F.B. (1903) *Chotanagpur: A Little known Province of the Empire*, London.
5. Datta, K.K. (1957) *History of the Freedom Movement in Bihar* in 3 vols., Patna
6. doi: 10.4324/9780367810344-4
7. Gosden, C. (1999) *Anthropology and Archaeology: A changing Relationship*. London: Routledge.
8. Gottlob, M. (2011) *History and Politics in Post-Colonial India*. New Delhi: Oxford University Press.
9. Gupta, S.D. (2001) Peasant and Tribal Movements in colonial Bengal: A Historiographic Overview. In S. Bandyopadhyay (ed.) *Bengal: Rethinking History* (pp.65-92) New Delhi: Manohar Publishers.

10. Hallett, M.G. (1917) '*Bihar and Orissa District Gazetteers: Ranchi*', Patna.
11. Hunter, W.W. (1868) *Annals of Rural Bengal*. New York
12. Hunter, W.W. (1877) *Statistical Account of Bengal*, vol. XVII, London.
13. Jha J.C. (1964) '*The Kol Insurrection'*. Calcutta
14. Jha J.C. (1965) '*The Bhumij Revolt*'. Calcutta
15. Kanjamala, A. (2014). *The Future of Christian Missions in Chotanagpur since 1845*. Eugene: Pickwick Publication
16. Lee, R.B. (1968) Comments. In S.R. Binford and L.R. Binford (eds.) *New Perspectives in Archaeology* (pp.343-346) Chicago: Aldine Publishing Company.
17. Mahto, S. (1971) *Hundred Years of Christian Missions in Chotanagpur since 1845*, Ranchi.
18. Mathur, L.P (2004) *Tribal Revolts in India under British Raj*. Jaipur: Aavishkar Publishers.
19. Mukhopadhyay, A. (2019) Ethnographic Fieldwork: The predicaments and possibilities. In R. Acharyya and N. Bhattacharya (ed.) *Research Methodology for Social Sciences* (pp.44-56).
20. Sahay, K.N. (1968) Impact of Christianity on the Uraon of the Chainpur Belt in Chotanagpur: An Analysis of its Cultural Processes. *American Anthropologist*, vol. 70, pp.923-42
21. Singh K.S. (2006) *Tribal Movement in India*, in 3 vols. Delhi: Lordson Publishers.
22. Singh K.S.(1966) '*The Dust Storm and the Hanging Mist: A study of Birsa Munda and his movement in Chotanagpur, 1874-1901*', Calcutta
23. Sinha, S.P. (1964) *Life and Times of Birsa Bhagwan*, Ranchi
24. Sreedharan, E. (2018) *A Textbook of Historiography*. New Delhi: Orient Blackswan.
25. Upadhya, C. (2011) Colonial Anthropology, Law and Adivasi Struggles: The case of Jharkhand. In S. Patel (ed.) *Doing Sociology in India: Genealogies, Locations and Practices* (pp. 266-289). New Delhi: Oxford University Press.

---

1. (Research Scholar, Department of Medieval and Modern Indian History, University of Lucknow, Lucknow, U.P, India) Address for Correspondence- 6/481 Vineet Khand, Gomti Nagar, Lucknow, U.P., Pin code- 226010 E-mail- saumishra2@gmail.com Mobile no. 9473595235

Impairment undergone by Women in their Shattered Identities; A critical Study on Alice Walker's Select Works

–A. Pearlin synthia
–Dr P. Kumaresan

The Color Purple is a thirty-year-long violent narrative set to Georgia of the early 1900s. Walker delineates her heroine Celie's emotional and physical status through letters she writes to none other than GOD.

Abstract

Throughout the history, African American women have faced discrimination. They have been regarded as the least valuable members of their own community. These women have been ostracized in society and regarded as slaves; they face prejudice based on class, colour, and gender. African American women were portrayed as members of the subjugated class, which has long been a victim of male dominance. In many ways, they are oppressed, and they are also misunderstood in society. African-American literature is written by Africans who migrated to the United States. Alice Walker, like other African American writers, wrote about their experiences as slaves in the United States. This research article highlights the trauma undergone by African women irrespective of their place of dwelling due to the actions that fracture them physically and psychologically. The aim of this paper is to show how Alice walker's women are traumatized and fractured in the name of tradition and culture.

Keywords: victimization, womanhood, oppression, subjugation, feminist, Gender discrimination, sexual identity, subjugation, oppression, awakening, female circumcision.

Introduction:

Fundamental rights including social, economic, and political rights were denied to African American women. Their plight got exacerbated by the fact that they are both black and female.

White Americans established racism to maintain their autonomy, just as men invented sexism to govern women. Women have been socialized to expect to be shunned or thrown out, forcing them to lose sight of their own values. These mentally fractured women needed to be set free.

African American women authors voiced against these racial and gender equalities and fought patriarchal conventions heroically through their literature where self-esteem, self-realization, and urge to regain one's rights were major themes of their works. Alice Walker is a well-known American author from the twentieth century. In the history of African American literature, she is the only woman to receive both the Pulitzer Prize and the National Book Award for her novel *The Color Purple*. She is one of current generation's most well-known Afro-American black female novelists. She understood the power of words as a writer, and she utilized writing as a tool and platform to bring patriarchal concerns to light.

The Color Purple is a thirty-year-long violent narrative set to Georgia of the early 1900s. Walker delineates her heroine Celie's emotional and physical status through letters she writes to none other than GOD. Alice conjures up images of Afro-American slavery. Celie faces many challenges as a black woman growing up in Deep South during 1940s.

Throughout the narrative, walker portrays Celie to be at the bottom of the social ladder. White people discriminate against her, while all black males in her life, including her stepfather and husband, abuse her. Celie is a fourteen-year-old girl who is self-conscious about her appearance. She shares her personal tale of sexual assault and suffering. She survives at the hands of her own Pa, who tells her not to speak up; pa's deceptive warnings about the benefits of her silence come before her first letter to god. Pa continues to sexually attack Celie since Celie's mother is ill and unable to meet her husband's sexual needs. She became pregnant as a result, and she is unable to move owing to her girth. Celie is sold to a widower as a commodity Mr. A Pa who is informed that Celie would serve him like a cow. Celie's dissatisfaction is exacerbated by the fact that her post-marriage spouse is of the same awful ilk as Celie's Pa. His manhood is determined by his ability to thrash his wife and kids.

Celie, a whore, is further persecuted as she is exploited and tormented like a slave. Despite the lengthy history of racial prejudice in black society, violence against women, whether sexual or domestic, is not new. Wife violence is condoned and encouraged in patriarchal culture, aggravating her plight. This

type of brutality is permitted in every civilisation on the planet. Celie, like the best of burdens, is worthless and obstinate since a woman has no authority over sexual colonialism, and she suffers from a type of stoicism and tolerates her husband's brutality. Her only priority turns into staying alive as fighting back does not appear to be a possibility. Celie is a human being who wants to be loved and cared for.

Walker's silence is documented in letters to God and later to her younger sister, Nettie. Through her letters, Nettie reclaims her lost sense of self. Shug Avery is the agent who helps her achieve independence. Her husband's blues singer's mistress. Celie's change is being driven by her. Sugh Avery saves Celie from her hazardous circumstances by teaching her to love and respect her body. Celie's damaged sense of non-entity had compelled her to conform to patriarchal cultural norms by acting like a conventional female. Harpo's wife, Sophia, also ties a sisterhood knot with Celie. Sophia, who is educated, liberated, and self-sufficient, refuses to succumb to Harpo's control and demands. Celie admires her daughter-in-law and picks up defiance and protest terminology as she helps her through her transformation.

In *The Temple of My Familiar*, walker depicts racism in the society. It takes the reader on a journey across Africa's countries as well as through the streets of America. Slavery and racism made black people miserable. Slavery is experienced by almost all of the characters in the narrative in some way or another. Alice covers a wide range of topics and concepts. According to Ursula K. LeGuin,

> ***"The richness of The Temple of My Familiar is amazing, overwhelming. A hundred themes and subjects spin through it, dozens of characters....like Dostoyvesky's characters relentlessly raising the great moral questions and pushing one another toward self-knowledge, honesty, engagement"***(San Franchico Review,22).

Alice Walker portrays racism and the slave trade in her novel. Racism is one of the most heinous crimes of the modern era, and it served as a basis for supremacy over other ethnic groups or religions. It refers to prejudice, injustice, and atrocities perpetrated by members of another social class against a certain part or group of people. The primary distinction is the skin colour. Whites began to oppress and rule black people.

African Americans were people who were transported from Africa against their will by the Americans. They suffered greatly on their estates at the hands of Americans. They were physically and emotionally harmed. They fought

for their independence and wanted their identities to be acknowledged in the United States. Walker chronicles many instances of racism via the experiences of various persons, both past and contemporary. They did, however, think that they will be granted freedom in the future.

In The Temple of My Familiar, there are three couples: the elderly man Hal, a painter, and his estranged wife, Lissie; Arvedya, a musician, and his wife Carlotta, a Women's literature professor; and Suwelo, a History professor, and his wife Fanny, a Women's studies teacher. Mr. Hal and Lissie recall a number of events from their history. They remember the Blacks' sorrows, the battle to end slavery, and the sufferings of women and children, to name a few. The life of Carlotta's mother, Zede, is a perfect example of the slave trade. The black people were imported as slaves and forced to labour in the whites' farms. They had to fight for millennia to gain their independence. Almost every character in the narrative is subjected to oppression. Zede's story of the slave trade illuminates their plight

> "....a long chain connecting us by the feet along one row, inverting... there was no movement uncontested by one's neighbours, lack of sufficient food, lack of air and exercise-never had any of us been away from air and light." (Temple, 69).

Zede as a slave recalls:

> ***"the guards forced the women to mate with them, and before long each guard were chosen his favourite slave "wife"...." (Temple73).***

Alice Walker tells the story of Lissie Lyles, a black lady who had numerous children of diverse colours and ages. While discussing the slave trade, Lissie describes how slavery was practised in the past. Lis-father sie's died of a heart attack when she was two years old, and her uncle was in charge of her brothers and sisters, as well as their moms

> ***". . . lived in a poor little hut off by itself and out of sight of my uncle's compound. There were four huge men squatting at the edge of the okra patch . . ." (61 - 62).***

He had numerous wives and children, as well as slaves, as a Mohametan. He couldn't retain them since he couldn't afford to. As a result, he decided to sell them. Lissie was put to the Orka porch while her mother returned the guards who had been caught and disciplined. In order to protect her, her mother pleaded and wept to him,

> ***"My mother was just begging and pleading and calling for mercy, because she knew about the slavers, but these brutes had no ears" (62).***

This figure embodied the narrative of tens of thousands of lives. Kasrinath Ranveer emphasises Lissie's tens of thousands of life experiences

> ***"... the story of her life is the story of thousands of lives, each one touched by the double concern of race and gender"(Black Feminist,83).***

She recalls the hardships of crossing the Atlantic, rape, and brutalization. She feels that no tale is full and true without the inclusion of a black woman's story. Lissie uses her mother's tale to demonstrate how they were shunned by Whites and suffered as a result of racism. Walker puts it thus way:

> ***"To sell woman and children for whom you no longer wished to assume responsibility or to sell those who were mentally infirm or who had in some way offended you, became a new tradition, an ac-cepted way of life."(Temple, 64).***

Fanny's estranged husband, Suwelo, views her as a racist victim. Fanny was able to notice racism everywhere, he observes. But she had a chance to prevent racial oppression before it began in her own life. When she tells her therapist about her dislike towards white people, she replies,,

> ***"I won't be a racist....I won't be a murderer. I won't do to them what they've done to black people. I'll die first" (Temple, 302)***.

When compared to their male counterparts, black women suffered three times as much. They were mistreated by their own males in the family, and as a black person, especially as a black woman, they suffered in society. Their mistreatment was unrestricted. The African-American quest for independence came after a long period of struggle. When Fanny travels to Africa, she feels at ease and finds tranquilly. After hearing Lissie's story, Suwelo had a change of heart as well. The healer, Lissie, has the ability to restore peace and harmony into their lives. They were able to bear each other and hope that their children would live in peace in the future, despite the fact that they were not totally transformed. Suwelo aspires to be ***"we'd have a future, that our children would see freedom."(Temple, 304).***

Miss Lissie's speeches express the key ideas of racism. Black women have been referred to as the "mule of the world" and "slave of a slave" for generations, and they have held the title of "wretched of the earth." Women

of colour want to recover their humanity and Womanhood. “Slavery is bad for males, but it is considerably more dreadful for women,” Linda Brent adds. “Supper is added to the load common to everyone, they have wrongs, and misery and mortification are specifically theirs.” The term “black” relates to a person’s colour, whereas “feminist” refers to someone who recognizes patriarchal hegemony as a source of women’s exploitation.

Walker’s works have a particular voice, that of a lady buried in her darkness. Racism and the slave trade are two topics she discusses in the novel. African women were humbled by the limits placed on them based on their ethnicity and sex. By virtue of their colour, black people were condemned to the underclass. They were subjected to a wide range of racial and sexual prejudice, as well as a plethora of societal constraints. Lissie, for example, claims that she and other slaves were carried to a ship. They were pushed on to the ship bald and naked at the plank that went onto the deck, their final surviving clothing, a piece of cotton around their hips.

In Oppression of Men Over Women, Walker casts women in typically male roles, with the intention of providing stories with role models that may assist women overcome patriarchal culture’s gender stereotypes. Walker describes the history of women since the dawn of human civilization and explains how a society founded on egalitarian principles evolved into a society dominated by men. Based on this perspective, she projects her own vision of a harmonious and healthy body and expansive soul in The temple of my familiar, which positions her as a leader of the black race. Women were denied space and forced to labour long hours in the fields. They were continually abused physically and mentally and they would not have been able to tolerate their torturous lives.

> “Fanny comes to know men’s oppression of women which she herself feels in her own life. She also gives insights into the oppression of women, black women by black men, who should have….“(259-60).

Tashi, the protagonist of *Possessing the Secret of Joy* undergoes female circumcision which affects her physically and psychologically. Tashi is presented to the reader as a young girl who, thankfully, avoided circumcision throughout her upbringing. Tashi is shown by Walker as an Olympian tribal girl who, as part of the African culture, likes to follow her homeland’s customs and devotes herself to African traditional practise. Despite the fact that she is married to an American named Adam, her desire is to follow the native

culture, which forces her to return to her homeland. Unfortunately, she suffered psychologically as a result of her decision. Tashi actively devotes herself to the ancient practise while being unaware of the hardships and sufferings associated with it.

According to Olinka tradition, every woman should be circumcised, notwithstanding Tashi's feelings of being incomplete as a result of the pain and anguish. There is a belief among the Olinka tribe that women who are not circumcised are filthy and unsatisfied as women. Tashi is first seen as a youngster, wailing uncontrollably at her sister Dura's death. When she subsequently decides to be circumcised as part of her tribal tradition, she does so in defiance of colonial power and missionary instruction, but she has also forgotten or rather suppressed the fact that she had witnessed her sister's death in the same initiation ceremony when she was a very small kid. Walker strikes a fine balance between portraying sexually scarred women as victims on the one hand and survivors who decide to fight for their own rights on the other. Tashi's childhood friend Olivia warned her not to participate in the rite, but Tashi responded that by doing so, she is deemed an African lady.

Melissa, a traditional circumciser, began performing the ritual process. Tashi has had a lot of troubles after her circumcision. She can't move as freely as she used to and she finds it difficult to sit on the floor. She has been physically damaged, and she appears to be boring and miserable. Tashi believed that by performing this ceremony, she would become a full lady, but after the circumcision, she lost her calm and happiness. Not only has she been physically hurt, but she has also been psychologically traumatised. It even has an impact on her marriage; she has a strained relationship with her spouse. Tashi becomes physically and emotionally ill as a result of this infibulation.

It also affects her when she gives birth since the baby's head was too huge to come out of the infibulated, causing the baby's brain to be crushed throughout the pregnancy, causing the infant to appear light yellow. She has been mentally impacted as a result of this experience. She suffered a nightmare every night while sleeping, which caused her emotional anguish. Tashi was transported to a psychiatric facility for treatment. Tashi's psychotherapy experience, which follows her journey from madwoman to warrior, brings the story into balance. She seeks the help of psychologist Carl Jung to begin remembering her African upbringing and to uncover the pain that would lead to her recovery. Tashi is able to confront the recollection of what it was like to be entire and eager to have sexual pleasure thanks to Jung's technique. Tashi

gradually heals herself via dreamwork and art. Tashi sums it up as follows:

> ***I painted I remembered, as if a lid lifted off my brain, the day I crept, hidden in the elephant grass, to the isolated hut from which came howls of pain and terror. Underneath a tree, on the bare ground outside the hut, lay a dozen rows of little girls, though to me they seemed not so little. They were all a few years older than me. Dura, however, was not among them; and I knew instinctively that it was Dura being held down and tortured inside the hut. Dura who mad those inhuman shrieks that rent the air and chilled my heart. Abruptly, inside, there was silence. (70).***

Tashi begins to see herself as an unfinished black woman whose life has been damaged, rather than a whole woman. Tashi is said to have been in possession of the joy secret before she misplaced it. Tashi's healing process is only complete when other women join her in her protest, and it is a completeness that comes at the cost of her death, ironically. In this situation, the African tradition serves as an intellectual tool of torture rather than a vehicle for the transmission of a great cultural legacy. Walker here defies two pillars of Afrocentric feminist philosophy in one fell swoop: first, the oral tradition is a source of alternative information; and Second, moms are constantly looking out for their daughters' best interests. Walker expresses a strong sense of the need to fight tyranny in this story.

Tashi suffers from mental trauma as a result of her decision to sacrifice herself, and she seeks to seek vengeance on the subjugated society. She starts remembering her childhood with her sister Dura after she regains consciousness. Her sister Dura's murder, as well as the pain she has experienced, has driven her to seek vengeance on the woman who performs the rite on her. She intends to assassinate M'lissa, the lady who was cruel enough to perform female circumcision on all of the Olinka tribe's young females and Tashi as planned kills M'lissa and saves millions of future African women. Though she is executed, she wins millions of heart.

Summary:

Alice Walker is widely regarded as one of the most divisive African American female writers, with literary reviewers from all over the world debating her work. She is always seen as an artist who captures the actual essence of history. Walker has authored a large number of poems, short tales, and novels throughout the course of her writing career, all of which focus

on the lives of one of the most disadvantaged and overlooked social groups, African American women. Walker may have included so many personal notions in the work since she hails from the same neighbourhood.

Walker focuses on the interaction between men and women in the black community rather than the racial divide. Walker's books reintroduce general black themes in order to breathe fresh vitality into society. Her works contributed to the resurgence of African-American culture and history. In her work Possessing the Secret of Joy, she is the first African American woman writer to discuss female genital mutilation. According to Walker cultural relativism is a kind of torture it is no culture. Walker depicted the problems and traumas suffered by African women in the practice of culture via the figure of Tashi. She raises awareness among the readers by expressing the trauma, sorrow, and anguish via the character.

Walker presents the pains of women in the name of cultural ritual, as suggested by Jung, "culture stands outside the aim of nature." In short, the African American men regard women as possessions, property, assets and sexual objects to gratify the male lust and give birth to children. The conservative men blindly follow the sexist myths of the patriarchy and treat women worse.

Walker's African American and white men who are educated and non-educated thus, follow the sexist notions of women's suppression and contribute substantially in their discrimination, subjugation, oppression and pathetic conditions to maintain the hierarchy in gender relations.

Thus, Walker addresses women's issues seriously and invites the attention of the intellectuals, academicians, politicians and the readers to the problems of African American women with the intention to bring transformation in conservative society and implement the laws to safeguard women's fundamental human rights to impart justice and also to bring them in the mainstream of the society which is must for the betterment of entire human civilization.

Works Cited

1. Alice.Walker, Pratibha Parmar.,'Warrior Marks: Female Genital Mutilation and the Sexual Blinding of Women'.New York: A Harvest Book, Harcourt Brace & Company,1996,p. Barbara Christian. Black Women Novelists: The Development of a Tradition.1892-1976. Westport: Greenwood Press, 1980.
2. Braxton, Joanne M. Black Women Writing Autobiography: A TraditionWithin a Tradition.US: Signet Classic, 2001.Print.

3. Brush, Paula S. The Influence of Social Movements on Articulation of Race and Gender in Black Women's Autobiographies.New Delhi: Penguin Book House, 1999.
4. Christian, Barbara T. Black Feminist Criticism. New York: Pergamon,1985.
5. Dieke, Ikenna Critical Essays on Alice Walker.Greenwood:1999.
6. Frank, Katherine, Women Without men, The Feminist Novel in Africa in women in African Literature Today, vol.15.1987
7. Frank, Katherine, Women Without men, The Feminist Novel in Africa in women in African Literature Today, vol.15.1987
8. Hurston, Zora Neale. Their Eyes Were Watching God. 1937. New York: Harper Perennial, 1990.
9. Renaissance to the Black Nationalist Revolt: Sociology of Literature Perspective. Chicago: Roman & Littlefield, 2001.
10. Shukla,Bhaskara. A.Feminism and Female Writers. Jaipur: Book Enclave Publication, 2007.
11. Singh, Amrithit,'The Novels of the Harlem Renaissance'. United States of America.1976.
12. The concise Oxford companion to African American literature by Oxford university press. www.britannica.com/ African American literature. www.americaforbeginners.wordpress.com/ analysis of temple of my familiar. Chapter 10.
13. Walker Alice. Possessing the Secret of Joy. New York: Pocket Books, 1992.
14. Walker, Alice. The Color Purple. Great Britain: The Women's Press, 2014. Print. Washington, Robert E. The ideologies of African American literature:From the Harlem Walker, Melissa. 'Down from the Mountaintop: Black
15. Women's Novels in the Wake of Civil Right Movement, 1966-1989'. 1991.
16. Yolanda.D. Encyclopedia of African- American Women Writers. US: Greenwood Press, 2007.

---

1. Pearlin synthia.A ia a Ph.D. Research scholar in the Department of English, Sudharsan Arts and Science College, affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirapalli, Tamilnadu. Her research focus is Existential Elements in Trauma Studies of African American Literature.E Mail: pearlin718@gmail.com
2. Dr. P. Kumaresan, Research Supervisor, Associate Professor & Research Advisor, Sudharsan College of Arts and Science ,Perumanadu, Pudukkottai (Affliated to Bharathidasan University Trichirappalli) Tamilnadu, India. Email: drpkenglish@gmail.com

Research Article

Gynocentrism in Langston Hughes' Selected Poetic Works

–R. Prathap Chandran
–Dr. P. Kumaresan

In his poem Mother to Son, he represents black womanish power through the mother. The black mother's lyrics are a share of her experiences with her son. She advises him on handling hurdles in life. Despite being in bad shape financially, she attempts to impart values and self-assurance in her son.

Abstract:

Gynocentrism is an approach that centers exclusively on women, both in theory and practice, focusing on the female perspective. Langston Hughes explored the intersections of race and gender in the lives of Black people through various forms of literature, including poetry, short stories, dramas, and novels. In his works, Hughes delves into themes such as love, nature, romantic struggles, mother-daughter relationships, friendship, and silence, all from the perspective of Black women. By doing so, Hughes sheds light on the identities and experiences of Black women in his works. Hughes discusses black female identities and their experiences in his works. He expresses the interdependence of genders and racial identities in his representations of Black women and hence can be dubbed as gender racial. Langston Hughes challenges gender and racial stereotypes by engaging in frank discussions about controversial topics, ultimately providing an alternative perspective to oppressive social norms. He combines thought-provoking ideas with sensory descriptions to create a rich and imaginative vision of the world. This paper examines the portrayals of African-Black women in the works of Langston Hughes.

Keywords: Langston Hughes, gender racial, Gynocentrism, Black Women, identities, Poetry

Conflicts of Interest: The author declares no conflict of interest.

Introduction

The 1902 born, renowned Afro-American poet, Langston Hughes was from Missouri. His parents divorced, resulting in his father's migration to Mexico. Following his high school graduation, his father paid for him to attend Columbia University in New York. Hughes liked writing even from his early school years, when he was named the class poet in the seventh grade. His writing included poems, short stories, dramas and novels.

Hughes was predominantly a poet. Hughes' acceptance to the exclusive Ivy league institution in upper Manhattan as a "coloured" student was exceptional. Hughes' inspirations for writing undoubtedly stemmed at this institution during Jim Crow era. Langston Hughes poems examine intersections of races and genders in the lives of Black women, challenging binary identity conceptions and investigating social transformations. His works cover women's love, nature, romantic dilemmas, mother-daughter relationships, friendships, and silence.

Hughes discusses Black male and female identities while addressing experiences. He writes in a gender-racial style, highlighting the intertwining of genders and racial identities. When a young Negro remarked he did not wish to be Negro poet**,** a disappointed Langston said: "I was sorry the young man said that, for no great poet has ever been afraid of being himself. And I doubted then, that, with his desire to run away spiritually from his race, this boy would ever be a great poet" ((Hughes et al., *The Collected Works of Langston Hughes* 32)

Hughes believed identities are inextricably linked to artistic expressions. His works were bolstered by lyrical visions that pervaded the minds of people of all backgrounds. His imagery may be distressing at times, but also reassure sadness and joy that were strongly linked Black identities and was a poet who listened to the voices of all. This paper explores Gynocentrism found in his poems.

Gynocentrism

In his poem *Mother to Son*, he represents black womanish power through the mother. The black mother's lyrics are a share of her experiences with her son. She advises him on handling hurdles in life. Despite being in bad shape financially, she attempts to impart values and self-assurance in her son. The mother does cry for being victimized but instead reinforces on her accomplishments. "Life for me ain't been no crystal stair./It's had tacks in it,/

And splinters,/And boards torn up,/And places with no carpet on the floor-/ Bare…/And sometimes goin' in the dark/Where there ain't been no light./ So boy, don't you turn back. (Hughes The Collected Poems of Langston Hughes 30)

Her words express triumph over incompetence and failures. Langston saw women as formidable forces capable of conquering life's challenges. Hughes explicitly portrays black women as tough with implausible power that assists them in their achievements. Throughout the poem, Hughes uses analogies to illustrate their resolve and strength. The narrator uses metaphors to represent both happiness and terrible moments of her life. The poet stresses on the hardships women face through the narrator's struggles. The lines said to a son for inspiring him express the poem's topic and reflect the mother's everyday efforts. The poet suggests that it is important for people to listen to Black women, and the narrator's son takes this advice to heart. Despite facing challenges in her life, the narrator speaks with honesty and assurance as she encourages her son to be as resilient as she is. Her words are commanding and persuasive, and she makes her points succinctly. After informing her kid about her own life experiences, she remarks: "So boy, don't you turn back/ Don't you set down on the steps/'Cause you finds it's kinder hard./Don't you fall now—/For I'se still goin', honey,I'se still climbin',/And life for me ain't been no crystal stair. (30). The poet visualizes black mothers as strong, tough and powerful women and puts his views across subtly in the mother's narrations.

Mothers can inspire their daughters based on their personal experiences. Langston's *Mama and Daughter* are a poetic version of the conversations between black mothers and their adolescent daughters who start feeling the emotions of love for the first time. Hughes blends youth and love in the poem. Though ideas look misaligned, a feeling of shared experiences can be found in the talks between the mother and daughter. The daughter asks her mother to dust off her coat before going to meet the boy she likes: "Mama, please brush off my coat/I'm going down the street/where's you going, daughter? To see my sugar-sweet" (Hughes 356-357)

Langston ascertains relationships between youth and love or youthful love. The mother's bad experiences with youthful love help her comprehend young love's appeal without participating in it in the poem. The poem makes one realize that love can be understood and appreciated only by those who are young and naïve. Realizations occur in humans only when the young grow,

and love isn't always as lively as young people believe it to be. Stormy events can also mark love. Langston uses the poem to address significant societal issues where young individuals of all cultures romanticize love without knowing that they need to persist through adversities in love.

The poet draws a cautionary tone to youngsters who are typically ignorant about love while their elders might have experienced both good and bad. He emphasizes desertions that occur in love when the mother uses her personal interactions with her husband to try and influence her daughter when she expresses her first love. A cynical mother reacts: "Daughter, once upon a time/let me brush the hem/ your, father, yes, he was the one! I felt like that about him/But many a long year ago/he up and went his way" (356-357). The poem also highlights males abandoning women, a globally widespread issue. Single moms are very common today as many males desert their families. Hughes's poem explicitly highlights this aspect of society. Mother expresses her beloved's abandonment through her speeches: "I hope that wild young son-of-a-gun, rots in hell today" (356-357). The poet uses the mother to indicate the incident that left her with resentment and bitterness, and she transmits her inner feeling unintentionally to her daughter.

The poet illustrates the characters of mother-daughter connections as they have fervid relationships, and mothers influence daughters while addressing sensitive issues. This is illustrated by the daughter's eagerness to tell her mother about her adored lover: "He is that young man, mama; I can't get off my mind" (356-357). Instead of seeing young men in secrecy, Langston's daughters inform their mothers of their plans and even request mothers for assistance in getting prepared. The relationships between mothers and daughters are always tightly bound. Mothers share their own stories and experiences when they were young with their daughters. Langston encourages this openness, as seen by the overall pleasantness of the dialogues in the poem. The mother expresses herself and subtly warns her daughter about love. Hughes demonstrates the power of black women that could influence youngsters. The mother in the poem doesn't punish or stop her daughter from seeing her lover. Instead, she helps her daughter get ready for her visit while also warning her about the potential pitfalls of love.

Mother's approach towards treating her daughter is excellent, and she backs it up with a personal narrative about her husband and an explanation of how her father abandoned her when she was a child: "He was young yesterday" (356-357). The poem centers around the mother's bond with

her daughters and attempts to highlight relationships between mothers and daughters which determine women's degrees of influence in life. The poem expresses youthful love and abandonment in women, forcing mothers to educate their daughters to be cautious in love with men.

The Negro Mother, is one of Langston Hughes' most powerful poems and inspires a multitude of feelings in people of black descent. The narrator recollects her experiences as an enslaved person. The poet utilizes women's voices to describe persecutions, fortitudes, and perseverance as enslaved persons from Africa and their yearnings for freedom of descendants. The poem highlights the central issue of the enslavement of blacks. The narrator relates her servitude with her ancestress, speaking figuratively of the experiences of enslaved Africans: "I am the child they stole from the sand/three hundred years ago in Africa's land" (155-156). The first act of oppression for the narrator was her forced abduction to a distant land where she served as a slave for Whites: "I am the one who labored as a slave/ beaten and mistreated for the work […] no safety, no love, no respect was I due" (155-156). Slavery's harshness is plainly expressed in the woman's voice and words. To her, it was a place that arbitrarily divided families. The narrator's voice has strength because she portrays the horrors of slavery in a way that readers can comprehend and empathize.

Hughes, on the other hand, demonstrates courage and perseverance through the narrator amidst brutal slavery: "Sometimes, the valley was filled with tears/but I kept trudging on through the lonely years/sometimes, the road was hot with sun; but I had to keep on till my work was on; I had to keep on! No stopping for me" (155-156). Hughes, in the poem, *The Negro Mother* stresses on hope. Hope is central to the narration and guides her tone throughout the poem. Even though the woman describes tyranny, she is not discouraged. She quickly returns to optimistic views though she experiences sorrow: "I am the dark girl who crossed the wide sea/ carrying in my body the seed of the free" (155*)*. She feels her wards should lead better lives than what she he had lived. Despite her problems, the woman remains optimistic about the future: "I nourished the dream that nothing could smother" (155). Her inner ache for freedom can be evidenced all through the verses. Enslaved people have only one thing in mind, to be set free. The narrator dreams of getting liberated along with her people: "Stand like free men supporting my trust/ believe in the right, let none push you back" (155).

In many ways, the poem elicits multiple contradictory emotions. Though

the reader aligns with the narrator for future generations, they are forced to accept the sadness of current scenarios equally, since the narrator is a slave with minimal prospect of being liberated. Langston also portrays the future and people who will live to see it: “Now through my children... young and free…I realize the blessings denied to me” (155-156). The lady reminds her grandchildren of their great lineage to instil in them fortitude and endurance and the drive to survive that their forefathers possessed over the years: “For I will be with you till no white brother /dares keep down the children of the Negro mother” (155-156). This poem encompasses one of Hughes’ most dramatic endings as he deals with the terrible themes of slavery. The narrator, an enslaved lady, addresses her offspring, asking them to remember and be inspired by their ancestors. Her aim is for her children to find and never lose their independence.

Conclusion

Langston Hughes’ poetry effectively reflects American black women’s hopes. Jim Crow in the South existed when Hughes wrote his poetry. Northern Afro- Americans faced discrimination in housing and academics. Hughes wrote his poems at a time when many blacks who had directly experienced slavery were alive. South Americans enslaved and exploited Afro-Americans for almost three centuries. After the Civil War ended and after America was reconstructed, Afro- Americans still faced legal inequalities. Governments in the south created legislation classifying African-Americans as second-class citizens, denying them access to schools, not allowing them to vote, and forcing them to rely on separate resources. The goal was to establish a racial hierarchy that favoured whites over African-Americans.

Langston Hughes was a key part of Harlem Renaissance. Through his poetry, he showed Afro- Americans living in a discriminative society. In the United States, Harlem Renaissance was an important cultural and artistic movement for obtaining blacks freedom. An artist’s task, according to Hughes, is to accentuate and cover all facets of existence. Giving Afro-Americans who faced racial and gender discriminations a voice. Hughes advocated an ideology in which women were lauded as taking charge of their destiny despite having racial and gender limits by portraying them as more complicated, more human, and less as symbols of sexuality. He did not portray black femininity as attractive, but he did portray them as powerful. Hughes stated, at a period when racism and segregation were rampant, that African American women were not only remarkable, but also human and needed to be respected for

what they were.

References

1. Best, Wallace D. *Langston's Salvation: American Religion and the Bard of Harlem*. New York, New York University Press, 2019.
2. Bloom, Harold. *The Harlem Renaissance*. Philadelphia, Chelsea House Publishers, 2004.
3. Carr, Danielle. She Voices Them: Evidence of Black Feminism in Black Women's Harlem Renaissance Literature. *CUNY Academic Works*, 2016.
4. De, Christopher C. *Langston Hughes: A Documentary Volume*. Detroit, Thomson Gale, 2005.
5. Farebrother, Rachel. *The Collage Aesthetic in the Harlem Renaissance*. Routledge, 5 Dec. 2016.
6. Hughes, Langston, et al. The Collected Works of Langston Hughes. Columbia, University Of Missouri Press, 2001.
7. Hughes, Langston. *The Collected Poems of Langston Hughes*. Vintage, 1995.
8. R. Baxter Miller. Black American Literature and Humanism. University Press of Kentucky, 17 Mar. 2021.
9. Rampersad, Arnold. The Life of Langston Hughes: Volume I: 1902-1941, I, Too, Sing America. OUP USA, 2002.

---

1. Research Scholar, P.G and Research Department of English, Sudharsan College of Arts and Science (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli), Perumanadu, Pudukkottai, Tamilnadu.622104, Email: prathapcdc@gmail.com
2. Associate Professor of English, Sudharsan College of Arts and Science (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli), Perumanadu, Pudukkottai, Tamilnadu.622104 Email: drpkenglish@gmail.com

Folk Narratives in the Age of Digitalization in Manipur

–Dr. Ph. Jayalaxmi

If we persistently lay emphasis on folklore as part of the unyielding tradition which is something primitive and dead and which cannot take place simultaneously with the changing time, then it will cease to survive. T.S. Eliot while talking about tradition in his essay "Tradition and Individual Talent" avows that "the existing monuments form an ideal order among themselves, which is modified by the introduction of the new (the really new) work of art among them" (1948:15).

In the age of digitization and mass media, the traditional lore which has been in the oral form since ages has been replaced by the digital formats. Mass media has become an important communication tool and acts as the medium of transmission and dissemination of folktales. Stith Thompson considers "the cinema, especially the animated cartoon" as "the most successful of all mediums for the presentation of fairytale. Creatures of the folk imagination can be constructed with ease and given lifelike qualities." He encourages the dissemination of tale via cinema to rediscover the folktales. With the changing time, the traditional way of disseminating folktales has ceased. Children are more interested in watching folktales which are visually and digitally available to them. The questions that arise are how far the visually accessible tales are in tangible form and how far the changing formats of story-telling effectively communicate the meanings ingrained in the traditional lore. Folklore dissemination is mainly oral, but in the current period, the oral narrative is hardly feasible as people are more inclined towards the mass media like television, the internets, etc. This paper will study the folktale narration available in mass media and the effectiveness of such visually accessible narrative to the masses especially the children in the context of Manipur.

Keywords: Mass Media and digitization, Folklore, Meitei Folktales,

Introduction

Folklorists' concern with traditions is a well-known fact. Tradition is always assumed as something which is not mutable. While talking about tradition, there is always a proclamation from the traditionalist that tradition cannot be compromised and negotiated and it should remain as it is in its unchangeable form with its values remaining intact. But in actuality, tradition needs reassessment, and it should constantly apprise the changing time. Regarding the reassessment of tradition, Richard M. Dorson quotes Survivalist Hartland who says, "…Tradition is always created anew, and that traditions of modern origin wherever found are as much within our province as ancient ones" (1978:23). Recent trends in folklore studies have witnessed the restructuring of folk narratives, thereby opposing the classic study of folklore to acclimatize to the conditions under which folklore is produced and generated. Alan Dundes does not consider tradition "as a relic of the past" but also shows that folklore is "very much part of the modern technological world". He says, "Folklore is an artistic process rather than a dusty artefact, since, in his words, it is 'something alive and dynamic' rather than 'dead and static' (Bronner 2007: 1).

If we persistently lay emphasis on folklore as part of the unyielding tradition which is something primitive and dead and which cannot take place simultaneously with the changing time, then it will cease to survive. T.S. Eliot while talking about tradition in his essay "Tradition and Individual Talent" avows that "the existing monuments form an ideal order among themselves, which is modified by the introduction of the new (the really new) work of art among them" (1948:15). The past guides the present, and the present modifies the past. It is of paramount importance to study folklore in the present context of society which has its proclivity towards the mass media. In the age of digitization and mass media, the traditional lore which has been in the oral form for ages has been replaced by digital formats and print publication. In general, the term 'mass media' comprises:

> …all those institutions of society which make use of copying technologies to disseminate communication. This means principally books, magazines and newspapers manufactured by the printing press, but also all kinds of photographic or electronic copying procedures… the dissemination of communication via broadcasting… (Luhmann 2000: 2)

Mass media has become a vital instrument of communication and acts as the medium of folktales' transmission and dissemination. Stith Thompson

considers "the cinema, especially the animated cartoon", as "the most successful of all mediums for the presentation of fairytale. Creatures of the folk imagination can be constructed with ease and given lifelike qualities". He encourages the dissemination of tales via cinema to rediscover the folktales. He marvelled at the fact that one single text could reach so many people simultaneously (qtd. in Koven 2003: 177). Despite recognizing the ubiquitous manifestation of mass media in folklore narratives, there is a constant fear of substituting the traditional narratives with visual or print versions.

With the rapidly changing world of technology and mass media, the oral transmission for which spoken words are of supreme significance has been destroyed by the print media and the electronic means of communication like radio, cinema, television and the internet. Children are more captivated by watching folktales which are visually and digitally available to them. The questions that arise are how far the visually accessible tales are in actual form and how far the changing formats of story-telling are effective in communicating the meanings ingrained in the traditional lore.

The growth of the mass media with its information systems and the flow of information in the global age has given a profound impact on the cultural practices which are prevalent in our lives. Technology is entrenched in everything in our lives and it has transformed the very meaning of our existence. The power of technology is so intense that the virtual world has controlled every aspect of our lives. With this new trend, folk transmission has also included various technologies from print media, movies, the internets, etc. Simon J. Bronner has written about the rise of various communication technologies which he called the transgressive folk web that emerged in the twentieth century and has altered the way information is spread. Among the mass media, he considers the emergence of the internet as an essential tool of everyday life; it is also distinguished by being envisioned as a separate location or space in which traditions arise and is constituted (Blank 2009: 22). Even in the internet there is an interaction of people who "message, connect and link, if not talk, to one another, and hence incorporate the symbolic and projective functions that folklore distinctively provides" (ibid. 25).

Folklore studies has been ignoring the significance of studying folklore in the age of internet and technology for the simple reason that "folklore theory holds that folkloric expression is reflective and serves as a 'mirror' of societal and cultural values; folklorists should therefore use this mirror to analyze society and culture." There is also an apprehension as highlighted by Richard

Dorson, the permeance of "fakelore". Another reason may be what Ben Amos's definition of folklore, which says, " 'folklore communication takes place in a situation in which people confront each other face to face and relate to each directly' " (Blank 2009: 4). Thus, it is difficult to define the folklore available to the technology as there is no direct communication among people and there is no direct transmission from generation to generation.

Regardless of the criticism on the medium of transmission via mass media, it is also substantial to note that "narration is ageless", as Linda Dégh has expounded that the dissemination of folktales in any medium will need to adapt to the changing climate—local and social climate. There should be the impulse to tell a story and the need to listen to it which have made narrative the natural companion of man throughout the history of civilization. Folk narratives contain persistent and yet continually reinterpreted ideas (Dégh 1972: 53). Folklore, according to Dégh, is the product of an ongoing historical process that consolidates the interaction of literary and oral, professional and nonprofessional, formal and informal, constructed and improvised creativity. With the advent of mass production—book printing and audiovisual reproduction—the earlier harmonious give and take between oral and nonoral folklore ceased to exist, and technical reproductivity dictated a different pace for folklore communication through new media (1994: 1).

As the intent of the present paper is to study the changing trends in folk narratives in the age of digitization in the context of Manipur, it becomes pertinent to study the interpolation of mass media into the folklore narration which in the present context is quite at a nascent stage. The challenge that we have is to analyze the infusion of mass media in the folktale narration and the effectiveness of such visually accessible narratives to the masses, especially the children in the context of Manipur. Traditionally in Manipur, folktales are narrated near a hearth, which is why it is called funga (hearth) and wari (stories). The children encircled the grandfather or grandmother and he/she narrated the folktales. When the narration was in process, the children imagined the characters in their minds, which enhanced the creative faculty of children. With visual movies, children fail to comprehend the environments of story-telling situation and the location in which the story has been told. They fail to envisage the situation in which the story has been narrated. Such a practice of story-telling dispossesses the imaginative credibility of the children. In the earlier time, children enjoyed being in their folk group. They have their traditional games, rhymes, riddles, and tales which they had

shared among the group. However, with the advent of mass media, children's interaction level has lessened.

Manipur has witnessed the rise of print publications focussing on folklore—folktales, myths, legends, customs, beliefs, traditional rituals, epics, etc. There is a sudden outpouring of research and translation going on to explore the cultural tradition of Manipur. Many of the folktales are published in the Manipuri language. However, with the rising interest in folklore studies many tales are translated into English and available on websites like E-pao and Kangla-online. The translation available on these web portals are randomly translated by the folklore enthusiasts. Many researchers rely on these print publications for their research on folklore studies. In Manipur, folktales have manifested in diverse forms—in oral narrative, literary narratives, theatre, internet, cartoons, films, etc. Diverting from the fascination on the oral tradition, exploring the potentiality of folklore narratives in different genres becomes indispensable. After the print publication, another genre that has become quite popular recently is the animated version of folktales available in the web portals.

Animation of Folktales in Manipur

In Manipur, folktales have been modified and readjusted for various categories and media, including theatre, animation, film, television, graphic books, etc. For children, the adaption of animation has become one of the popular genres. Despite the availability of our animated versions of folktales, children in Manipur are obsessed with Walt Disney's adaptation of classic fairy tales which has become an indispensable source of entertainment for children in the living room. Television becomes a constant company for children in Manipur. Through television, they are introduced to the classic tales of Snow White, Cinderella, Frozen, Rapunzel, etc., which cultivate western values rather than the indigenous values entrenched in our traditional lore. Another challenge we have with us is that folktales available in animated forms are lacking in quality and content despite the struggle of the people behind the production to make them more viable and acceptable to the masses. The conflict area is how far the production houses are concerned with the efficiency of any particular folktale circulated on the internet or television and to what extent such recreation of folktales in mass media is research-oriented.

In the mass media production, the main target is always the audience and by audience we mean "a large number of unidentifiable people, usually

united by their participation in media use" (Hartley 2002: 11). In the case of Manipur, the animated series are produced with a particular audience in mind especially children. Thus, the animations are patterned in a particular way by restructuring the images and transforming them into something which is visually palatable to the young audience. In order to meet the target audience, the animated stories are artistically enhanced to lure them into watching those movies. Such production is influenced by what Horkheimer and Adorno called the "consumer-oriented culture industry" (qtd. in Dégh 1994:1). In the culture industry, products are tailored for consumption by the masses and are manufactured according to plan. The very word mass media is honed for the culture industry, which neither gives primary importance to the masses nor of the techniques of communication as such, but of the spirit which sufflates them, their master's voice. The entire practice of the culture industry transfers the profit motive naked onto cultural forms. Thus, the autonomy of art ceases to exist in an entirely pure form as it is eliminated by the culture industry, with or without the conscious will of those in control (Adorno 2010: 98-99).

The problematical issue of merging folklore narration with mass media, the transmission of folklore in mass media has unintentionally become an unavoidable component of the culture industry. While taking active participation in this culture industry, the audience, in the case Manipur, especially the children, unknowingly participate in this culture business as consumers and subsequently they fail to decode the implicit meanings in the folktales which should be the main objective of any folk genre. They are entrapped in the fantastic world. In such dissemination, the audience becomes mute spectators or dummies without thinking power. Adorno and Horkheimer propound that "the culture industry was growing into an all-powerful force which was gradually stunting the audiences' capacity for individual thought or imagination and thus was successful in reproducing the conditions of its own production" (Gupta 2014: 14). The media operates in such a way that its objective is to catch the consumers and "it is rare to see or hear the views of the audience 'itself" (Hartley 2002: 12). The culture industry claims that as masses participate in it, it produces according to the consumers' needs thus there is little resistance on the part of the consumers.

In Manipur, numerous folktales like Sandrembi Chaisra, Lai Khutsangbi, Tapta, Keibu Keioiba, Eta Thaomei, Hanubi Hentak, Henjunaha, etc., are recreated, modified and restructured in animation films. The perplexing part on the animation version in Manipur is that most of the narratives have not

succeeded in producing the desire result that is to evoke the children to consider it as the repository of tradition and culture. Many animated versions have omitted many crucial episodes which are in the oral variant. For instance, in the animated version of Sandrembi Chaisra (a famous folktale of Manipur), the creator overlooked some of the significant episodes like— Sandrembi's mother coming to her dream and telling her to wrap her bones so that she could transform into a human form, the conspiracy of her stepmother and stepsister to kill Sandrembi, the death of Sandrembi, the transformation of Sandrembi into a dove after her death, coming of Chaisra to the palace in the guise of Sandrembi, killing of a dove by Chaisra, transforming of Sandrembi from a dove to a mango, and transforming of Sandrembi from a mango to a beautiful woman on the eighth day in the end. All these essential parts are ignored in the animated narration. Thus, the question is to what extent the creators are cognizant of the functions of such an important tale categorized as *Cinderella Tale Type* in its functions depending upon the motifs found in the tale. Such inadvertency on the part of creators will disrupt a logical connection that a tale attempts to convey. The creators should also not overlook that actors and actions in a particular tale are represented symbolically. Such a formulaic structure of the folktale reflects the specific pattern of human emotions in society.

Problems with Media-based Narration

In Manipur, media-based production has not succeeded in cultivating the traditional values associated with folktales. The importance is given more on the entertainment business, creating a picture-perfect of desire and wish fulfilment for the consumers. Though folklore claims the existence of similar stories found within different genres, the problem is whether the tales circulated on mass media serve the same purpose imparted by the traditional method. Folk narratives can be accommodated to essential changes depending on the situation but should stick to their functions. The problem with the stories narrated in mass media like TV and the internet is that messages are encoded in the tales and the audience has to decode the intended messages. If the audience fails to decode the messages, the moral and instructive messages will never reach the audience.

The detriment of such version of folktale narration is that there is a possibility of replacing the oral variants of traditional story-telling by mass-mediated versions. Children will use the digital versions instead of listening to the traditional method of story-telling thereby overshadowing traditional

narration. Tucker is of opinion that "…we should keep an eye on children's involvement with VCRs, we needn't be too concerned about creativity wiped out by repeated viewings of stories on videotape… Although both the mass-mediated and the orally transmitted narrative were currently able to survive concurrently, such coexistence was temporary" (qtd. in Koven 2003: 179).

Representation

Another challenge that we have is the question of representation. Is there any change in the representation of tradition in mass media? For the traditional folklorists, mass media is always an enemy as sharing through the mass media attracts the mass culture and there is a chance of distortion of meanings and moral values entrenched in the transmission process. The traditional method mainly focuses on the purpose of the folklore which is to deliver some social and cultural values through the medium of oral transmission. And there is also a possibility of losing the essence of folklore with its specificity and details which the traditional folklorists take labour to narrate or recite. Most of the stories available in the media are in animated forms which is to entice young children. They are interested in these tales not as some institutions circulating moral values or something which has to do with culture but they have perceived it as something pleasing their minds without serving the purpose of folklore.

The mass media operates in a linear model where many elements are involved in communicating messages and meanings. It involves:

> Senders (authors, producers, and organizations) transmit messages (programs, texts, images, sounds, and ads) through a mass media channel (newspapers, books, magazines, radio, television, or the internet) to large groups of receivers (readers, viewers, and consumers). In the process, gatekeepers (news editors, executive producers, and other media managers) function as message filters. Media gatekeepers make decisions about what messages actually get produced for particular receivers. (Campbell *et al*. 20011: 13)

Thus, the mass media model has gone through different levels, generating messages to the audience. It gives diverse meanings and messages that the audience is forced to accept as passive receivers. The mass media's audience is always consumers rather than folk audience.

In the context of Manipur, the society has been dominated by Eurocentric ideologies and not only that there is also the interpellation of Hinduism and

its ethical values into the social fabric of culture. The consequence of such disruption is that the focus of mass-mediated versions is still Western and Indian oriented. The western adaption of fairy tales and cartoons is very much part of children's consciousness in Manipur. Along with the western folktales, the children are engrossed in the mythological themes and stories found in the two great epics*, Ramayana* and *Mahabharata.* The children are more engaged in Indian cartoons like Chota Bheem, Motu Patlu, Roll No. 21 (which is the contemporary edition of lord Krishna and his mighty uncle King Kansa), etc. In conjunction with the Western and Indian-based tales, there is the intrusion of other cultural elements in the forms of cartoons like Doraemon, Ninja Hattori-kun, Hagemaru, etc. The consequence of rising global market is that there is an interference of the global culture on the local culture which comes through the intervention of mass media like television and the internet. The chances of survival of local tales seem to be very bleak and depressing in Manipur.

Though we cannot ignore the production on mass media as a reflection of society, we also cannot deny such agency's ideological and dominant-hegemonic position. The media-generated meanings can also influence the masses if the meanings within it have some cultural values that the folklorist desires to promote. Otherwise, it will only problematize the issue of cultural identity which a particular community wants to convey through its oral tradition. There is a possibility of distortion of meanings and the audience will become familiar with the media-generated versions which will spoil the genuineness and legitimacy of the oral versions.

Conclusion

The growing mass mediated versions of folklore tend to take over the local cultures and regional variations embedded in the social fabric of a community. Mass media production may have hidden ideological and political values which often go unnoticed by the masses. Can mass media and technology fill in the gap of the nuances found in the oral tradition? Although the interactive digital platform may have bridged the oral tradition and technology together, such collaboration may miss the interaction element essential to a traditional story-telling environment.

Sticking to the traditional means of circulation would also mean restricting the expansion of folklore to the emergent trend in mass media. The problems of interlacing folklore and mass media will persist as in the mass media the

emphasis will be on the relationship between the producers and the consumers. If the folktale is produced as some kind of products, there is a possibility of the destruction of the real quintessence for which folklore is thriving. Over and above, mass media only targets the audience which is a one-way process and this will mislead the very definition of folklore as a genre which is solely a transmission of items from word of mouth which involves the performer and the audience. Once folktales enter the public domain, the researcher should handle the problem area meticulously in order to serve the functions of folklore. The folklorists should strategically analyze the reproduction of folklore in the mass media. They should also contemplate where and how we could intervene such dissemination so as to retain the cultural, social and educational values of folklore.

Works Cited

1. Adorno, Theodor W. *The Culture Industry: Selected Essays on Mass Culture*. Ed. & Intro. J. M. Bernstein. 1991. London: Routledge, 2010. Indian Reprint.
2. Blank, Trevor J, ed. *Folklore and the Internet: Vernacular Expression in a Digital World.* Logan: Utah State University Press, 2009.
3. Bronner, Simon J, ed. & intro. *Folklore: The Analytical Essays of Alan Dundes*. Logan: Utah State University Press, 2007.
4. Campbell, Richard, Christopher R. Martin, and Bettina G. Fabos. *Media and Culture: An Introduction to Mass Communication*. 8th edition. Boston: BedForth/ St. Martin's, 2011.
5. Dégh, Linda. "Oral Folklore: Folk Narrative." *Folklore and Folklife: An Introduction*. Ed. Richard Dorson. Chicago: The University of Chicago Press. 1972.
6. *American Folklore and the Mass Media.* Bloomington: Indiana University Press, 1994.
7. Dorson, Richard M. *Folklore in the Modern World*. Paris: Mouton Publishers, 1978.
8. Eliot, T.S. *Selected Essays*. London: Faber and Faber, 1948.
9. Gupta, Nilanjana, ed. *Cultural Studies.* Delhi: Worldview Publications, 2014.
10. Hartley, John. *Communication, Cultural and Media Studies: The Key Concepts*. Routledge, 2002.
11. Luhmann, Niklas. *The REality of the Mass Media*. trans. Kathleen Cross. California: Stanford University Press. 2000.
12. Koven, Mikel J. "Folklore Studies and Popular Film and Television: A Necessary Critical Survey." *The Journal of American Folklore.* Vol. 116. No. 460 (Spring, 2003), pp. 176-195. Accessed 15 Nov 2018. https: //www.jstor.org/stable/4137897.

1. Assistant Professor Department of English and Cultural Studies Manipur University 8974045267

Research Article

Spiritual Realization and Cultural Identity through Music and Dance in Paulo Coelho's The Witch of Portobello

–P. Jaya Prabha
–Dr. T . Alagarasan

Coelho pays his verbal tribute in a daily mail to Music that everything in the world moves to a rhythm, the cavemen looked at this movement formerly with fear, later with devotion. He started imitating the noises around him with devotion and found the way of communicating with the superior beings and thus dancing and music were born.

Abstract

Of all the works of Paulo Coelho, *The Witch of Portobello* assumes a special significance because of its Music and Dance. Music and Dance are inseparable art forms of any traditional culture. Those have been a way for people to socialize, get exercise and express their joy of living. In this novel, Paulo Coelho exposes the divine part of the female character Athena, with the theme of searching for one's true self and opening to the energies of the world. Cultural identity is important for people's sense of self and that is how people relate to symbols, language, norms, values and artifacts are. Culture is a pattern of behavior shared by a society or a group of people. There are numerous factors that make up a society's culture. These things include food, language, clothing, tools, music, arts, customs, beliefs and religion.

Athena, in the novel, feels that dance perceives her to be a free spirit. She also feels the touch of an angel, while playing the guitar and singing hymns in praise of the Holy Virgin in church. Music and Dance not only enable her to reach God but also pacify her. Music inspires feelings of movements. The movements in dance bring her in contact with herself. Coelho integrates the leisure activity and spiritual journey into his writings. In this novel, he shows an integrative approach in combining Music and Dance with the spiritual search. He glorifies music that bridges the human soul and the divine spark. The spiritual side in a human can be awakened by music. Music and Dance accomplish individual's goals, manage stress, promote wellness, enhance memory, alleviate

pain, express feelings and promote physical rehabilitation. This paper aims at analyzing Coelho's attempts to present a woman who endeavors to seek God through Music and Dance. "When you dance, you can enjoy the luxury of being you"(Paulo Coelho)

Key Words: Rehabilitation, Integrative, Endeavour, Pacify, Virgin

Cultural identity is strongly connected to how individuals construct meaning in life and at work, which are again related to how healthy and energetic an individual feels. The author adapts dance, music as the guiding principle to seek cultural identity. Cultural identity takes many forms and can change depending on the geographical location of the people. Society and culture are reflected through the people. Culture plays a major role in shaping the life of human beings. Human life is not only destined how they dress and appear but also the way how they think and behave. Culture plays an important role in shaping the identity of individuals. Culture can teach about ourselves, others and the global community. Researches show that cultural identity is a potential factor which is the mental and physical health resource that can support individuals to be healthy and construct meaning in life and work.

Coelho describes, that he always experienced a rebirth of his own identity when he travelled. Through the new experiences of his travels, such as not knowing the language, walking new streets, using a new currency, he learnt that your old 'I' along with everything, they feel committed to them and understand themselves by this commitment. Coelho's cultural identity describes that being and feeling at home contributes to its forms. Being sure of one's cultural identity is heterogeneous. It consists of multiple aspects, adapting to new situations and helping to recreate one's self in the context of holistic wellness. The more we love, the closer we come to the spiritual experience. Those souls which are truly illuminated by love, have been able to sing, to laugh, to pray out loud and they have danced and shared their joy with no fear of loss.

Culture is the basis of society. It has many facets i.e., religion, family, rituals, ethics, morals, super naturals, myths, legends etc. It plays its own role in sustaining society and its individual components. There are some sections of society which come together on the basis of certain similarities. Their existence may not be too evident but they have a certain role to play and sometimes they even control the destiny of people. Culture can mean different thing to different people. It is a natural growth and may be general body of arts. The novels of Coelho represent society and ultimately its culture. People are shaped by their culture and their culture are in turn shaped by them. Coelho's novels are unique in its depiction of society. The society and the environment

construct the outer behaviour of an individual but the culture constructs psyche, conscious, and unconscious minds. Culture is the way of life of a society. The culture of a society is not depicted by the outer appearances of the people but by the inner self. Our inner self is significant. If you are strong inside, you are balanced outside, but outside culture is controlled by manners and fashions.

Coelho pays his verbal tribute in a daily mail to Music that everything in the world moves to a rhythm, the cavemen looked at this movement formerly with fear, later with devotion. He started imitating the noises around him with devotion and found the way of communicating with the superior beings and thus dancing and music were born. In Indian culture, the goddess Kali dances on a cremation ground the devotee lovingly witnesses it and prayes in his\her heart.

Dryden in his ode, *'A Song for St.Cecilias Day'* poses a rhetoric question about the power of music- "what passion cannot Music rouse and quell". (stanza 2)Here Dryden explains about the tremendous impact of music on human passion. According to him the whole universe was created by the power of music and the universe obeys to the command of the music. All types of feelings like happiness, love, anger, pain, fear, and hope are aroused through music. According to the poet, music has the power to raise and quell all types of emotions in human heart.

One of the major arguments that Anand Coomaraswamy makes with regard to dance in *'The Dance of Shiva'* is that dance relates to its cosmic significance, that is symbolizing the creation, maintenance, and destruction of the universe and ultimately its rejuvenation. The ananda or bliss of Shiva's dance is to meditate upon the destruction of maya and free the soul from the bonds of karma. He emphasis that the essential significance and the purpose of Shiva's dance is to release the countless souls of men from the snare of illusion. Dance, whether cosmic dance of Shiva or human dance, if we understand them rightly, we see they lead to freedom.

In India, every state and its culture has its dance forms. It also confirms that the choice of these dance forms is appropriate for understanding the whole country and its heritage. Every aspect of nature man, bird, beast, insect, trees, wind, waves, stars etc display a dance pattern which is collectively called the Daily Dance.

The Witch of Portobello is the story of Sherine Khalil who was born as an illegitimate child in Transylvania to a Romani mother. After left as an orphan, Sherine, who names herself Athena, is adopted by a wealthy Lebanese couple and grown up in Beirut. When a war breaks out, her foster parents move with her to London. She goes into a London University to pursue Engineering at

the age of nineteen, but soon she drops out of her college. Then she marries Lukas at the age of nineteen and gives birth to a son, Nabi Alaihal. They get divorced due to immaturity and economic problems. She then works as a bank employee and adopts dance at her workplace to increase the output. The significance of Dance and Music probes and grips her life to another level. The mesmerizing blend of music and dance bring transformations that are graded and firmly rooted in her life, weaving a sensuous web of novelty. Athena remarks

> "*When I come here to praise the Virgin with my music. I'm not bothered about what other people might think. I'm simply my feeling with her. And that's how it's always been, ever since I was old enough to think for myself .I'm a vessel in which the divine energy can make itself manifest. And that energy is asking me now to have a child, so that I can give it what my birth mother never gave me: protection and security*.(*The Witch of Portobello 41)*.

In the novel (WOP),Athena with great courage revolts against the strict and traditional rules of the society imposed upon the individuals. During her visit to Transylvania, her motherland, she drinks alcohol. Athena fights though she is treated as a forbidden among the gypsy women. She wants to convey the message to her motherland that every female should be free and live her life as she wishes. The tool she uses for this purpose is dance. Athena's foster parents did not permit her at the beginning. But she travels to the strange land which is ironically where she was born. She wants to discover her biological mother and her roots.

In this novel, music and dance are the pivotal in the development of Athena's character. She finds herself connecting to her spiritual self through music and dance. After getting divorced from Lucas she rents a house in an apartment where the owner of the apartment, Pavel holds a dancing ritual at night.

Dance throughout the world is known as a part of rituals, or ceremonies. Pavel tells Athena how the dance originated with cave people, and when they understood the rhythm and the music, it has become their way to commune with the Superior Beings. In the hope of reciprocating that communication they started imitating the sounds and movements around them, and thus, dance and music were born. Athena becomes curious about dance and regularly attend the dance session of Pavel. The flow of dance keeps her creating and dissolving herself. This dance ritual in this novel is the key for the magical transformation of Athena's life. Whenever Athena has performed such

ritualistic dance, she could develop a connection with the Mother Goddess. Lukas says,

"As I watched Athena dance during her pregnancy and listened to her play the guitar to calm the baby and make him feel that he was loved,I began to allow her way of seeing the world to affect my life too."(44)

This introduction to dance prepares readers for the special significance for the upcoming story. Through her dance Athena has tried to fill all the blank spaces she came across occasionally. She hopes to find a more inclusive and harmonius understanding of her spiritual longing. Athena's dance therapy is based on the assumption that all human beings have an unknown ability, which may probably remain unknown forever. If it is utilized in a positive sense, that ability will be helpful to us. The one hour dance before going to work stimulates the body and mind, which in turn arouses a certain degree of creativity that could be channeled for a better performance at work. This dance therapy developed a lot of confidence in Athena, giving rise in her a sense of recognition of her objective in life, thus directing her odyssey in the right direction. Slowly but steadily, she is developing patience in herself. Athena's physical and spiritual journey has been going hand in hand; as the wish and opportunities are also going hand in hand. It is obvious that certain things like a physical activity, a creative work or a social engagement give a positive effect on emotional wellness. Pavel says,

"*Dance only to the sound of percussion; repeat the process everyday; know that. at a certain moment your eyes will, quite naturally, close and you will begin to see a light that comes from within ,a light that answers your questions and develops your hidden powers*."(64)

In this novel, Coelho glorifies dance that bridges the human soul and the divine spark. He exposes the divine part of the feminine character with the theme of searching for one's true self and opening to the energies of the world. In *The Witch of Portobello*, Athena, perceives things from different angles. Beyond the unbearable sufferings of human, she finds bonding herself to her spiritual self through music and dance. She understands her biological mother through the cultural values. Coelho projects the travel of the female character, Athena, into the hidden power of life, as he infuses philosophy, cultural values, religious miracle and moral parables. The spiritual side of an individual can be awakened by music. Athena never bothers about the people around. When she comes to the Church, she praises and prays Virgin Mary with her music. She also shares experience of getting into trance as soon as the music is played at church. It gives an appealing scene of paradise to the

viewers. Athena asks "When you dance, do you feel desire? Do you feel as if you were summoning up a greater energy? When you dance, are there moments when you cease to be yourself?"(173)

Athena has a special gift not only for music but also for dance. The movement in dance brings her in contact with herself. She feels complete in dance, and feels a need to dancing always. It is an universal truth that while dancing one completely forget everything, let oneself to dance and find the hidden secrets. Dance perceives Athena to be a free spirit that takes her to sublime height, contemplates the present, divines the future, which is finally transformed into pure energy and that gives her enormous pleasure, joy that goes far beyond everything. She comes to know her capability, her gift of connecting herself with the mother goddess through dance. This connection in turn makes her understand the unknown problems of people and suggest them relative remedies. The desire of fulfillment completes Athena to undertake a physical journey from one place to another in order to realize her dream. Athena finds dance and music as trustworthy and empathetic creative work to experience God as a natural life event. Thus, Athena believes and affirms that dance and music lead to god when they are performed with passion.

Works Cited

1. Coelho, P, and Jull Costa, M. *The Witch of Portobello*. New York: HarperCollins Publishers, 2007.
2. Coelho, P. *The Alchemist*. London: HarperCollins, 1992.
3. Coomaraswamy, Ananda K. *The dance of Shiva: fourteen Indian essays*. Revised Ed., New York: The Noonday Press, 1957.
4. Dryden, J. "A Song for St Cecilia's Day". *Poetry foundation*, 1687, https://www.poetryfoundation.org /poems/ 44185/a-song-for-st-cecilias-day-1687.
5. Hasanah, L. "Decision Making in Paulo "The Alchemist"". *StudyLib*, 2008, https://studylib.net/doc/8272357/decision-making-in-paulo-coelho-s-%E2%80%9Cthe-alchemist%E2%80%9D-a.
6. Rich, A, and Biss, E. *Of Woman Born: Motherhood as Experience and Institution*. New York: W. W. Norton, 1976.
7. Scott, H. "A Song for St Cecilia's Day". *Harper's Magazine*, 23 Nov 2007, https://harpers.org /2007/11/a-song-for-st-cecilias-day/.
8. Trammell, J. "A Song for Saint Cecilia's Day". *The Literary Encyclopedia*, 21 Feb 2003, https://www.litencyc.com/php/sworks.php?rec=true&UID=6970.

1. Ph .D.,Research Scholar (Part time), PG and Research Department of English, Government Arts College (Autonomous), Salem-636007 Contact: +91 9791225050 Email: Jayaprabhamay1980@gmail.com
2. Associate Professor, PG and Research Department of English Government Arts College(Autonomous), Salem-636007 Email:t.alagarasan2324@gmail.com

Easterine Kire's portrayal of the multi-conflict struggle of Nagas for identity

–Rajni
–Dr. Manjit Kaur

In the novel 'Son of Thundercloud', the issue of corroding culture, in the face of outer malevolent forces, bringing the community to the extent of perdition has been subtly and beautifully dealt with. The novel won Bal Sahitya Puraskar in the year 2018.

Abstract

Easterine Kire is an important writer from Nagaland, who has written various novels, stories and poems about her native culture. She lives in Norway, yet the turmoil in her native community is all the more present in her works. The Nagas, and some other long-abiding communities of East-India, have been registering their protest against the loss of identity through various means. It has resulted in a chaotic struggle in their lives. Kire has keenly supplied her works with such truthful, touching lives. She weaves the stories in such a way as to bring many aspects of the community to the notice of the reader. The struggle has been a part of the way of life, since the time of kings. During the British Raj the struggle for access to natural resources continued. Even during the history of free India the struggle to have more say in the political decisions has continued till the very present. And, as everywhere, there has been a struggle of women in a heavily patriarchal society. All these struggles are what Easterine Kire weaves in her stories to put forth, like a seasoned thinker, the lesson for her society, and humanity in general, to be learnt from all that suffering.

Keywords: Nagaland, Community, British Raj, Political, Patriarchal, Society, Humanity

Introduction

Easterine Kire Iralu has been the author of the first novel and first poetry collection in English from a native Naga writer. All her thinking has been moulded in the Naga tribe's heart, and this is what most of her writing deals with. The core

beliefs of society find place as part of a charming tapestry in her works. She has recorded the many these facets: the beliefs in supernatural, the traditional values' conflict with outworldly modern ones, the history of struggle of women, struggle to avoid the corrosion of natural world, the tense environment affecting and shaping the lives, and many more. The perpetuation of violence in her land since many decades has been one of the main factors controlling most of her characters' destinies. Even in a story involving supernatural, the evil political tyrants have been referred to as the evil forces which killed all the story tellers of old. The storytellers were the moral and spiritual guides of the soceity, without whom it goes astray to degradation. This can also be inferred to be the environmental degradation caused by greed-blinded tycoons and magnates. The sacrifice offered by the women in the great task of preserving the identity is emphatically dealt with in her oeuvre. She has been awarded many times for the finesse of her works. Bal Sahitya Puraskar, The Hindu Literary Prize, Free Voice Award are among the imprtant ones.

In the novel 'Son of Thundercloud', the issue of corroding culture, in the face of outer malevolent forces, bringing the community to the extent of perdition has been subtly and beautifully dealt with. The novel won Bal Sahitya Puraskar in the year 2018. The storytellers of old have been wiped out by the detrimental forces, and this leads to people thinking only about subsistence. Kire shows how stories carry the traditions and values of a culture, and they are the main agents which educate individuals about life. In their absence, new generation will find no knowledge to guide their lives. It severes one's roots. And the message of struggle and hope against these evil forces is what makes this novel valuable, like the old stories. (Reference to the novel.) The factors bringing a breach in the harmony of the society are symbolised as a potent, supernatural power. But the mere hope of the sisters, Rhalie and Pele is able to wield them with enough counter-force. The death of Rhalie can be a symbol at many levels. It can mean the price a good person has to pay in the hostile world; it can mean the irreparable damage caused to the culture by outer political forces.

In the novel 'Sky Is My Father', there is meticulous description of British's torture of the native Nagas. The descriptive geographical accounts relate the importance of nature in Nagas' lives, and the further fiction serves to highlight the significance of customs, rituals, beliefs in their lives. The children growing on the battle tales for land find daily inspiration for the day's tasks in their abiding love for their native culture. Yet, the British Imperial Army, out of greed for the land's resources, lays siege around the village. But the power of unadulterated love for land is so powerful that a tiny village is able to

hold off the army for more than four months. Yet, there are sacrifices made in the face of outsiders' greed, and the harmonious lives are filled with turmoil and tension. Even in the very recent times, in the face of disastrous natural depletion, women were exhorted by the government officials to yet again serve as 'the seed keepers' to preserve the diverse plant genetic resources of the land. The encroachment of war upon the Angami tribe brings upheavals in the harvest schedule, in the roles of each member of the community. The first half of the novel portrays in detail the life of Angamis in the early nineteenth century. Yet, it is also shown that this is a culture which keeps itself ready for war, because there is bloody strife ongoing even among the communities, villages and human and nature. The men and women both are brave, and their readiness to fight can be interpreted from this appropriate line: "A real man does not need to roar to show that he is a man." Such lines show, more than the character of an individual, the social environment which fosters such individuals. This is a novel where the place, its customs and rituals are more of a character than the characters themselves. This serves to highlight how rooted the people of Nagaland are in their ancient culture. There is the innocence, the familial ties which invoke the individual feel in the universal landscapes of politics and war.

"Who is honest, you are honest. Who is honest, I am honest. We will compete with each other in honesty."

Levi's life serves to show the individual hardships at the scale of families and their emotional reactions to the bloodbathing war outside.

In her new novel 'Spirit Nights', Kire has shown the consequences of greed, pride, jealousy, and of breaching the respect for the community by bypassing the taboos. These consequences allegorise as an elemental, fearful darkness which engulfs even the noons. The author researched extensively the folklore of the state to compose this novel. This novel is an addition to her oeuvre, serving to complete the other novels by supplying the reader with the fundamental knowledge of first-hand knowledge of the communities. The Rengma and Cheng folklore, in a magical realist strain of fiction, serves to accentuate before the reader the possible darkness in human hearts. This level of core values' being embedded in the characters' behaviours connects to their fury in defending their world in other novels. The title itself suggests the environment of the novel. There is much hostility from the part of spirits, and no light has been spared to rend in the land a perpetual night.

"This blackness had eclipsed anything resembling light, man-made or natural. It drove them to despair and robbed them of all energy."

Still, it is their culture's tenets which the people wield to fight this darkness. When Namu eagerly asks his grandmother, Tola, to stay in the fields for some more time, she corrects him immediately by asking a relevant question. Namu likes the prospect of staying there even after evening. She says,

"And what are you going to do with the dark when it comes?"

Tola is a wise woman amid a patriarchal society. This fact never leaves its reality from her life. Perhaps it makes her wiser, because she guides many men's morales, quoting time and again the ancient sayings from her culture. These apt sayings hold true also for people outside of the North-East region. There is history of a great struggle, and, consequentially, there is great knowledge for anyone to take.

The title of the novel "Bitter Wormwood" is pretty symbolic of the struggle the community shares in its fate. In Bible, (Revelation 8: 10 - 11) the third of the angels blows at his trumpet, and a star falls down in waters. It makes the water bitter. The star is called 'Wormwood'. The freedom of India from the British can be termed as the 'star' which shone in the sky and made the waters of Naga society bitter by the subsequent placing of army battalions in the hilly panorama. The bitter authorities dissolve a poison in the environment, to which Mose and many like him react. Even when Mose is leading a peaceful life as a shopkeeper, the army lists him as a dangerous undercover insurgent. When all the attempts of the natives are thwarted by unwanted army personnel, the circle becomes vicious, so that many generations grow up into old age as having been violent men. This is a necessary yet painful sacrifice. The native tribes assert their right to shape their identity, they physical death instead of a cultural or spiritual one. Easterine Kire paints with deft colours the mutilation by army of bodies and destinies of the self-contained tribes. The separation of Nagaland into a different state did not bring the expected freedom to the people. The innocent humans perished under the effect of bitterness brought by a star falling through sky. Yet, there is a native connotation to the words 'bitter wormwood'. It is a small plant that is supposed to have ability to ward off evil spirits. This is a symbol for what Mose and people like him in his society need. Before the coming of radio to Mose's home, the story is painted as that of a serene, peaceful way of life. The natives' lives are yet unadulterated from the influence of colonisers and post-colonisers. Yet, the generation of Mose has to leap into the battle for independence, for identity. This peaceful way of life has in the present times become so remote that a critic, Paul Pimono, writes of the writer as a keeper of memories of early, peaceful times of her society:

“Easterine Kire is the keeper of her people’s memory, their griot. She is a master of the unadorned language that moves because of the power of its evocative simplicity.” (7)

The women in Kire’s works are spellbinding characters who are great by their sacrifices for the society. In the novel ‘Son of Thundercloud’, the three sisters suffer for centuries waiting for that which will benefit society, and not them. The two sisters die soon after Rhalie enters puberty, having been hungry and thirsty for centuries before his birth and the rains. His mother is happy in his presence, but she knows all along that Rhalie will be killed in the end. There is a shadow of this future always lurking in her heart. She dies soon after wailing heart-rendingly at her son’s dead body, pierced by umpteen spears. In the novel ‘When the River Sleeps’, the women find no consolation as they travel to find the sage and later. Though the men have no better lot, yet the women suffer and do good. They are brave enough, but the patriarchy challanges them, besides many other worries. They live under many burdens, even under that of the worry for well-being of those men who don’t understand their value. Yet, despite all that they are rather brave of character. Mari is a great example where the bitterness of other humans tests one person’s tolerance and endurance. How a war climate brungs about a thwarted love-life, the separation of close ones, the helplessness in living out the present relying on the nostalgic memories of past is very well presented by Easterine Kire.

The novel ‘A Terrible Matriarchy’ is the story of a girl who has to face discrimination from her own family for being a girl. There is much woe for her in store, which is filled by many causative factors. A prejudice against girls for being of lesser value than boys is the first which affects her personality. She sees her brother being treated better by her grandmother. His education is more focused on, he has much more freedom, all of which can be said as he is much favoured over her. The modes of patriarchy turn the gentle matriarchy to a terrible one. Despite such restrictive expectations from her, she retains her hopes for herself. Easterine Kire’s treatment of her native stories is in the vain of Victor Hugo’s Les Miserables, and her relevance can be understood by what Hugo said centuries ago:

“So long as there shall exist, by virtue of law and custom, decrees of damnation pronounced by society, artificially creating hells amid the civilization of earth,... ...so long as social asphyxia is possible in any part of the world;... ...books of the nature of Les Miserables cannot fail to be of use.”

The ongoing war also takes its toll on the little girl’s life as the environment

becomes much more fearful. How the narrow attitude begun by men goes on being accepted, integrated and supported by women themselves is the most palpable theme, which is also suggested by the title. The women have been so conditioned as to believe being oppressed as their duty. Vibano, Dielieno's grandmother, believes behaving with the girl strictly and allowing her no freedom will make her stronger, as the girl will learn to submit to men and play the role of dutiful housewife. But Lieno is more intelligent than that, and she senses her grandmother's own suffering behind such attitude. She understands her grandmother has been acting honestly, but under the force of a viciousness perpetuated by men. She is intelligent in this case because of her vitality that draws her to intelligence. She wants to live so much, that she observes much and comes to realisations. Kire writes of her:

"I was the youngest in a family of five children. I sometimes felt I was an afterthought, and maybe Father and Mother didn't quite know what to do with me. Also, because I was a girl after four boys they never seemed to be sure whether to buy me girls' clothing or let me wear leftover boys' clothing."

The persons who suffered under some evil have the possibility of turning evil themselves, even if it is for revenge. How revenge affects a person, how it banishes pity from the heart, how it concentrates so much bile there, that people turn their lives in assiduous searches for the means to be capable of having the revenge. Zote and Ate, the kirhepfumia or occult power bearers, after many years of toilsome search, happen on Villie having the heart stone. They steal the stone and wreak hell on the village that had wronged them. They take the revenge upon the whole village, indiscriminately of the guilty and the innocent. Villie too is corrupted by the lust for power. He spends his life in overcoming fiery obstacles to get the heart stone from the sleeping river, while he could have accepted his incompleteness and lived happily like good humans. The path that led to power as so led to isolation and barrenness of heart. Kire provides an intensely human treatment of a story delving in highly supernatural elements, and demanding, at places, suspension of disbelief.

Conclusion

The ambience in Nagaland has been being stained with blood for decades, and the cost has been borne mostly by the simple people determined to lead their lives in their own way. The portrayal of the stories of individuals or a group of related people is bound to touch many readers' hearts, as has been done by the works of Easterine Kire. Kire's works elucidate finely the world of tribal people of Nagaland. The genuine strife taking its toll on the mass of lives has been given proper dimensions by the author. The sacrifices, like

that of Pele in 'Son of Thundercloud', have been given their due praise and acceptance, which is equivalent to honouring the great martyrs from a world-level stage. The prolifically produced canon deals with many of the burning issues of the state during the present times. The tribe-characteristic respect for nature and art, for customs and rituals recommended by the ancestors of old, the way of life of accepting one's role in the massive processes of nature is all there behind the war-torn minds of the characters. Easterine Kire has been lauded and awarded for her conscientious works for her culture. She has been deemed, like all good artists, a preserver of her culture and the memories of her people. Those who are old at present time would find their memories of transition from peace to turmoil clad in beautifully appropriate words in her works, and in some of her peer writers' works from her land. The extent of her success in enunciating the history of conflicts of a society can be fathomed by the fact that she is considered at the helm of the writers from Nagaland writing in English. Her works have been translated in many languages to great critical acclaim. The work she does conveys live-experience of life from her culture, it informs the readers of the ideals toward which her culture has been striving. This transferring of the core values of a culture to its each generation is one of the most important works, as she says in the novel 'Son of Thundercloud':

"No, I'm talking about the famine of stories and songs. They killed all the storytellers who tried to tell them about the Son of the Thundercloud. They killed hope."

It is the Easterine Kire's, and writers' and poets', work to give hope to her people engulfed in the tornado of violence.

Work Cited

1. Kire, Easterine. Mari, New Delhi, Harper Collins, 2010
2. Kire, Easterine. Son of Thundercloud, Speaking Tiger, 2016.
3. Hugo, Victor. Les Miserables, 1985, Penguin Classics.
4. Kire, Easterine. Bitter Wormwood, Zubaan Books, 2013.
5. Kire, Easterine. A Terrible Matriarchy, Zubaan Books, 2007.
6. Kire, Easterine. When the River Sleeps, Zubaan Books, 2014.
7. https://barbicanpress.com/contributor/easterine-kire

1. Research Scholar, Department of English & Foreign Languages, Maharshi Dayanand University, Rohtak
2. Assistant Professor of English, UIET, Maharshi Dayanand University, Rohtak

Research Article

Impact of Social Media Influencers on Generation Z

–Amanjyoti Kaur

Social Media Influencers are a unique kind of celeb that includes vloggers and 'Instafamous' figures who have established a significant following via their passionate creation of content on topics such as beauty, workouts, food, fashion and lifestyle.

Abstract

Generation Z is the digital native of the global village. They are living in the virtual castle called social media; with interactions done amid hashtags, traveling via vlogs and purchasing over unboxings. Social media has fundamentally changed the way generations have been evolving so far. The present study aims at deconstructing the role of social media influencers (SMIs) in impacting the lifestyle, mental mapping and buying behavior of the young people. With *Forbes* coming up with the Top influencers list in 2017, a new platform as emerged for anyone to get famous other than the tradition movie stars and television celebrities. 'Instafamous' has swiftly become a lucrative career option for the generation Z with several SMIs becoming multimillionaires. Methodological triangulation has been used in this study combining survey with 200 young people aging between 18-25 years and 30 in-depth interviews with aspiring influencers. A study based in the region of Punjab.

Keywords: Social Media Influencers (SMIs), Social Media, Generation Z

Introduction

Social Media Influencers referred as SMIs in this study are a new kind of third-party endorsers who impact audience perceptions through blogs, tweets, and other forms of social media platforms. Although some researchers tend to regard SMIs as adversarial voices while others see the value of partnering with SMIs to promote their business

and organization (*Freberg et al.,2011*). SMIs are a subgroup of online content providers distinguished by their strong online following, distinct brand personality, and pattern of economic sponsorship connections. To generate money, they promote branded goods and services to their followers or subscribers through information, guidance, and inspiration. Since influencers include brand endorsements into their preexisting arsenals of audiovisual, textual and narrative content, their persuading communication is frequently perceived as more genuine or organic than other traditional sponsored advertising methods. Against this context, it's probably unsurprising that influencer marketing has exploded in popularity over the last several years (*Duffy, 2020*).

Social Media Influencers are a unique kind of celeb that includes vloggers and 'Instafamous' figures who have established a significant following via their passionate creation of content on topics such as beauty, workouts, food, fashion and lifestyle. The social media influencers use personal social media handles such as Instagram, Snapchat, Facebook, Twitter, and YouTube to make references to well-known brands and advertise commercial items. They have achieved celebrity status by effectively marketing themselves as tech, beauty or fitness gurus on digital platforms (*Hassan et al.,2021*).

Since commercial companies continue to renounce conventional advertising, marketers are looking for alternative ways to communicate their branding goals. Influencers are picking up steam as marketing intermediates and brand endorsers as they have collected viewership and audience connectivity in the form of followers and subscribers. Thus, Influencers are increasingly producing endorsements on blogs and social media handles in return for remuneration or sponsored ties with various companies. As a result, SMIs have contractual partnerships with product sponsors, either directly or indirectly via different organizations and agencies (*Abidin & Ots, 2016*)

Influencers are a powerful tool for connecting with prospective consumers. They can be a good source for increasing the pace of gaining new customers. People are increasingly using social media to obtain information in the forms of product reviews and unboxings. In order to make sensible purchasing decisions customers look forward for a opinion from the SMIs. Opinion leaders are have been shown to be a reliable source of information for those seeking expert assistance with their purchase choice. (Rai & Verma, *Impact of social media influencers on consumers' buying decisons* 2021)

The market has also developed the new vernacular for categorizing the influencers on the basis of the number of their followers. (*Influencer Tiers*

for the Influencer Marketing Industry 2021)

Instagram Influencer Tiers

- **Nano Influencers:** Nano Influencers roughly have 1,000- 10,000 users following them.
- **Micro Influencers:** Micro Influencers roughly have 10,000- 50,000 users following them.
- **Mid Tier Influencers**: Mid Tier roughly have 50,000- 500,000 users following them.
- **Macro Influencers:** Macro Influencers roughly have 500,000- 1000,000 users following.
- **Mega Influencers**: Mega Influencers roughly have 1000,000+ users following them

Marketing via influencers is the digital version of word-of-mouth advertising. The influencer marketing relies on SMIs to promote and spread a particular brand message to the broader audience. Additionally, it has been argued that it is comparable to opinion leadership. Here influencers tend to be trusted by their followers and are influential enough to create brand image. The majority of influencer campaigns include promotional content that is shared on the influencers' personal social media handles. Social Media Influencers are considered relatively more trustworthy than other sponsored commercials. The authenticity that their message contains results in less susceptibility to the information being delivered. The perspective of the SMIs is deemed significant in specific areas like beauty, fashion etc; the followers hence allow the influencers to lead their opinions further influencing their buying decisions (*Thilina, D. K. 2021*).

It is indispensible to discuss the psychological blow that is associated with the social media. The majority of the research has concentrated on comprehending the FOMO experience, the elements that contribute to it, and its repercussions. The association between usage of social media and health has been ambiguous in the past. Heavy social media consumption has been associated with a variety of adverse affective outcomes, including increased stress, anxiety, depression, decreased self-esteem, decreased relationship quality, and decreased sleep quality. Human psychology is impacted increasing the suicidal ideation and suicide events amongst young people (*Roberts, J. A., & David, M. E., 2019*). On social media, the fear of

missing out (FOMO) refers to the anxiety that online material and connections from others may go unnoticed and unreacted to in a timely manner. FOMO may develop into a problem, resulting in anxiety, disrupted sleep, loss of attention, and an unhealthy reliance on social media for fulfillment (*Alutaybi et al., 2020*).

The growth of the vlogging venture has garnered substantial coverage in the worldwide media. Influencers are making headlines all over. The celebrity vloggers are making millions for pursuing their passion of producing content. The popularity of vlogging is portrayed as being something that anyone and everyone can do. YouTube providing a platform where one can give expression to his/her creativity while earning a living. Although the notion that anybody can become famous and make a good career is widespread; one has to consider that only a few succeed in making a significant recognition (Ashton, D. et al. 2018). With forbes releasing its Top Influencers category, SMIs are getting enormous presence marked globally in various categories like pets, food, fashion, parenting, travel, beauty, kids and fitness (*Forbes, 2017*).

Literature Review

SMIs are unquestionably a creation of the digital era. Their tactics date all the way back to one of the earliest kinds of marketing that is word of mouth advertising. In the early twentieth century, community-based marketing methods had developed a distinct shape. It had merchants attempting to capitalise on the supposed trustworthiness of regular citizen-consumers and in parrticulary focu women. Contemporary promotional tactics like over-the-counter brand endorsement, sometimes use a primarily female sales force to integrate sociality and sales. (Duffy, 2020)

Filters, selfies, reels and stories have been embedded into daily lives and the reason is social media giant Instagram, which began in the year 2010. Leaver, T., Highfield, T., & Abidin, C. in their book named *Instagram: Visual Social Media Cultures,* examine how Instagram has evolved as a revolutionary platform and a cultural phenomenon. Additionally, they examine how Instagram users have changed their behaviour and how they've responded to the network's increasing features over time, as well as elements such as the growth of SMIs. Instagram has become an important tool for many subcultural groups throughout the globe, and the book explores the ways in which cultural institutions like museums, restaurants, and public places are attempting to be "Insta-worthy." Instagram has changed more than simply the way people connect and share their memories; it has also sparked novel

strategies to advertising, marketing, politics, and the architecture of physical environments. There are many instances from all around the globe, from baby images to funeral selfies, that make Instagram a must-read for media and communication students and experts. (*Leaver, T. et al, 2020*).

Marketers are seeking for new methods to express their branding aims as commercial firms continue to reject traditional advertising. Brand endorsers and marketing intermediaries rely on influencers since they have built up a following and audience connection. In exchange for payment or sponsored links with different firms, Influencers are increasingly providing endorsements on blogs and social media accounts. Thus, SMIs have contractual agreements with product sponsors, either directly or indirectly via various organisations and agencies. (Abidin & Ots, 2016).

New third-party endorsers, referred to in this research as SMIs, are influencing audience impressions via blogs, tweets, and other kinds of social media platforms such as Facebook. Researchers who see SMIs as antagonistic tend to overlook the benefits of working with SMIs to promote their businesses and organisations (Freberg et al.,2011). Online content producers that have a large online following, a particular brand identity, and a regular pattern of commercial sponsorship relationships are known as SMIs.. They use knowledge, advice, and inspiration to market branded products and services to their followers or subscribers in order to make money. It is sometimes regarded as more authentic or organic since influencers include brand endorsements into their established arsenals of audiovisual, textual, and narrative material, rather than typical sponsored advertising tactics. In light of this, the recent explosion in popularity of influencer marketing is certainly no surprise (Duffy, 2020).

Word-of-mouth advertising in the internet world is a kind of influencer marketing. To get a message out to a larger audience, influencer marketing uses SMIs to help promote and distribute a brand's message. There is also the argument that opinion leadership is similar to this. Influencers have the ability to shape a brand's image since their followers trust them. Personal social media accounts of influential people are often used to promote causes. Sponsored advertisements using Social Media Influencers are more trustworthy than those featuring other types of ads. Lessened sensitivity to information is due to their message's validity. Those who follow SMIs are able to rely on the influencers' thoughts to guide their purchasing choices in specialised sectors, such as beauty, fashion, and so on (Thilina, D. K. 2021).

Objectives of the study:

- To examine the position of social media in influencing the buying behavior of the youth.
- To examine the role social media in creating mental concerns like anxiety and FOMO (Fear of missing out).
- To analyze the role of social media influencers in impacting the lifestyle of the young people.
- To study social media influencers as a career option for Generation Z.
- To know the most preferred social media platform amongst youth.

Metodology

Survey method with the use of questionnaire was applied in this study to collect data quantitatively. In-depth interviews were also conducted to collect data qualitatively. The questionnaire for the survey contained close-ended questions only. In-depth interviews were also conducted amongst 40 heavy social media users which had aspirants for becoming social media influencers. In-depth questions were helpful in getting much wider response and different shades of opinion for the study. A sample size of 200 young people was taken aging between 18-25 years. The present study is based in the region of Punjab.

Data Analysis and Interpretation

- Responses about social media platform used by the respondents:

Option Given	Result in Numbers	Result in Percentage
Facebook	102/200	51 %
Instagram	186/200	93 %
Youtube	134/200	67 %
Snapchat	86/200	43 %
Twitter	52/200	26 %
MX Takatak	30/200	15 %
Moj	28/200	14 %
All of the above	4/200	2 %
other	4/200	2 %

- Responses about following Social Media Influencers

Options Given	Results(in numbers)	Results (in percentage)
Yes	144	72%
No	30	15%
Rarely	26	13%

- Responses about their favorite social media platform to follow influencers

Options Given	Results (in numbers)	Results(in percentage)
Facebook	58/200	29%
Instagram	168/200	84%
Youtube	106/200	53%
Moj/Mx Takatak	32/200	16%
Snapchat	18/200	9%
Others	4/200	2%

- Responses about purchasing any product promoted by social media influences:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Yes	104	52%
No	76	38%
Rarely	18	9%

- Responses about how much trust does respondents have on the products promoted by the social media influencers:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Somewhat	134	67%
Not at all	42	21%
A lot	24	12%

- Responses about whether sponsored content by social media influencers decrease their trust in that endorsed product:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
It doesn't matter	114	57%
No it's same	24	12%
definitely yes	62	31%

- Responses about promotions done by social media influencers affecting their choices while buying products like clothes etc:

Options	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Yes a lot	90	45%
Not much	86	43%
No not at all	24	12%

- Responses about what do they think about the reviews done by the social media influencers are genuine or not:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Sometimes	120	60%
Always Paid	50	25%
Can't Say	22	11%
No, they are not paid	8	4%

- Responses about getting inspired by the social media influencers with a lot of followers and likes on their posts:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Sometimes	88	44%
Always	82	41%
Never	30	15%

- How Respondents feel when they get good likes and comments on their posts:

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
It feels good	148	74%
Doesn't matter to me	36	18%
It's a neutral feeling	12	6%
I do not post	4	2%

- Responses about "Do you feel anxious when you get low response on your social media posts":

Options Given	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Sometimes	94	47%
Always	52	26%
Never	54	27%

- Responses about have the respondents ever thought of becoming a social media influencer:

Options	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Yes	86	43%
No	72	36%
Sometimes	42	21%

- Responses about do they take SMIs as good career option or not:

Options	Results (in numbers)	Results (in Percentage)
Yes	120	60%
No	20	10%
Maybe	60	30%

Conclusion and Findings

Social media has fundamentally transformed the way our generations have been developing since centuries. Social media has revolutionized many aspects of our lives. Especially generation Z and their association with social media are indispensible. The current study focuses on the impact of social media and notable findings are observed during the study. Social media gave birth to social media influencers who have a significant role in the way our generation Z is approaching their lifestyles. SMIs play an important role in persuading the young audiences and their promotional activities have significant effect in shaping the choices made by the young people in terms of fashion and lifestyle. The recommendations made by SMIs are duly considered by the young people before they make any decision about buying a new product. Influencer marketing has given a tough challenge to the tradition forms of advertising. Social media influencers are playing their part in establishing brands and creating recognition in the market. Endorsements done by SMIs are subtle and more convincing than regular advertisements because of its personal tough. SMIs have notable number of people following them and are considered inspirational by their followers. Hence, the followers like to use the product their favorite influencer is using in the promotional content making the influencer marketing work vividly.

References

1. Freberg, K., Mcgaughey, K., & Freberg, L. A. (2011, March).'*Who Are the Social Media Influencers? A Study Of Public Perceptions Of Personality'*. ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/251582746_Who_are_the_social_media_influencers_A_study_of_public_perceptions_of_personality.
2. Duffy, B. E. (2020, July). *(PDF) Social Media Influencers.* ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/342800736_Social_Media_Influencers.

3. Hassan, S. H., Teo, S. Z., Ramayah, T., & Al-Kumaim, N. H. (2021, January 1). *[PDF] The Credibility Of Social Media Beauty Gurus In Young Millennials' Cosmetic Product Choice | Semantic Scholar*. https://www.semanticscholar.org/paper/The-credibility-of-social-media-beauty-gurus-in-Hassan-Teo/bbc2544576a49945e2efd64925ad5245b56eae02.
4. Abidin, C., & Ots, M. (2016, January). *(PDF) Influencers Tell All? Unravelling Authenticity And Credibility In a Brand Scandal.* Researchgate. https://www.researchgate.net/publication/336022493_Influencers_tell_all_Unravelling_Authenticity_and_Credibility_in_a_Brand_Scandal.
5. Leaver, T., Highfield, T., & Abidin, C. (2020). *Instagram: Visual Social Media Cultures. Publisher: John Wiley & Sons.*
6. Thilina, D. K. (2021). Conceptual Review Of Social Influencer Marketing On Purchase Intention; Dynamics In Fashion Retail Industry. *Sri Lanka Journal Of Marketing*.
7. Deniz, Maden. *The Role of Digital Influencers in the Diffusion of New Products*. 25 Dec. 2018, https://dergipark.org.tr/tr/download/article-file/624659.
8. Roberts, J. A., & David, M. E. (2019, July 26). *(PDF) The Social Media Party: Fear Of Missing Out (FoMO), Social Media Intensity, Connection, And Well-Being.* ResearchGate. https://www.researchgate.net/publication/334717933_The_Social_Media_Party_Fear_of_Missing_Out_FoMO_Social_Media_Intensity_Connection_and_Well-Being.
9. Alutaybi, A., Al-Thani, D., & McAlaney, J. (2020, August 23). *Int J Environ Res Public Health.* Int J Environ Res Public Health. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC7504117/
10. Ashton, D., & Patel, K. (2018). Vlogging careers: Everyday expertise, collaboration and authenticity. In S. Taylor & S. Luckman (Eds.), *The new normal of woeking lives (*pp. 147-169). Cham, Switzerland: Palgrave Macmillan.
11. *Forbes*. (2017). Top Influencers of 2017. Retrieved from https://www.forbes.com/sites/clareoconnor/2017/09/26/forbes-top-influencers-fashion-pets-parenting/?sh=8184bf27683a
12. Mediakix.,(*Influencer Tiers for the Influencer Marketing Industry* 2021) Retrieved from https://mediakix.com/influencer-marketing-resources/influencer-tiers/
13. Dirnhuber, J. (2017, May 22). The Sun. https://www.thesun.co.uk/news/3617062/children-turn-backs-on-traditional-careers-in-favour-of-internet-fame-study-finds/.
14. Senft, T. M. (2013). Microcelebrity and the branded self. In J. Hartley, J. Burgess, & B. Bruns (Eds.), A companion to new media dynamics (pp. 346–354). Hoboken, NJ: Wiley-Blackwell.
15. Serazio, M., & Duffy, B. E. (2018). Social media marketing. In J. Burgess, A. Marwick, & T. Poell (Eds.),"e Sage handbook of social media (pp. 481–496).thousand Oaks, CA: Sage.
16. Weiss, G. (2017). #e most desired career among young people today is "YouTuber"(study). Tubefilter. Retrieved from http://www.tube"lter.com/2017/05/24/most-desiredcareer-young-people-youtube

---

1. Assistant Professor, Department of Mass Communication Guru Nanak Dev University, Amritsar kaur.amanjyoti@gmail.com +91- 9888466190

Parched : Story of Women Empowerment through Cinema

–Dr. Yuki Azaad Tomar

Abstract

Role of women actors in Indian Hindi Cinema kept changing based on the social climate of the time. The current research paper studies how contemporary Indian Hindi cinema has portrayed woman characters as empowered individuals.

For the purpose of the research women-oriented film Parched has been analysed. Storylines of two film and in-depth analysis of important women characters are done to understand the concept of women empowerment in the films.

Film is analysed to understand the empowerment on seven variables; Economic independence, Decision making power for future, Knowledge and usage of technology, Control over own body, Reaction to violence and humiliation, sexually awakened and Women supporting women

Key words: Empowerment, Hindi Cinema, portrayal of women,

Introduction

Empowerment has become a vital part of feminist theory and, as such, seeks to increase the personal, interpersonal and political power of oppressed and marginalized populations for individual and collective transformation (Lee, 2001). The ideas of empowerment and feminist theory are transmitted to society via diverse works of art, such as songs, poems, and films. In the discourse of French philosopher Michel Foucault technologies mean discourses of power where conjuncture of power (technos) and knowledge (logos), he named it as 'technology of power'.

There are various definitions of women empowerment. The Cambridge Advanced Learner's Dictionary defines empowerment as the process of gaining freedom and power to do what you want or to control what happens to you.

In this paper, contemporary Bollywood films are examined as a tool for transferring the ideas of empowerment and feminist theory to society. The first section of the paper discusses about the concept of empowerment based on feminist theories and second section analysis the role of women in relation to empowerment in contemporary Bollywood films. The selection of films is based on the basis of Claire Johnson's (1973) concept of counter cinema, which challenges the stereotypical representation of female roles in cinema and argues for a cinema that challenges such narrow Conventions but which will also be entertaining. 'It is probably true to say that despite the enormous emphasis placed on woman as spectacle in the cinema, woman as woman is largely absent' (Nelmes, 1996).

Since the arrival of India's first film, 'Raja Harishchandra' cinema has been dominated by the male characters. Raja Harshchandra has one female character as Harishchandra's wife who too was played by male actor. For several years female roles were played by men. Devika Rani was the first female actor of Indian cinema. When it comes to Indian cinema, the character of women has been largely based on the social climate of the times.

Female leads in Bollywood during Golden Era' 1950s-60s is considered to be a more idealistic portrayal of society. The themes of this time's cinema were largely on social issues such as poverty, class divide and inequalities One standout movie of the era, Mother India (1957), captures the essence of the identity of female characters of this period. But Bollywood couldn't sustain it. While female characters were an important part of the narrative, they were often portrayed through a patriarchal lens. In the 1980's women characters are shown as obedient, submissive, loyal, dutiful, enduring mothers. The 90s saw economic liberalisation and the advent of big-budget action movies. While male characters showcased their fighting valour, women were relegated to being damsels-in-distress.

However, in Bollywood roles are approved or disapproved of by society. Due to this a monotonous pattern is present in the depiction of Indian women. Roles which are ideal to the definition of Indian women are approved by society, hence female roles lack diversity. This is because Women in Indian cinema have been exhibited by three specific stereotypes as defined by 'Shushila Rathore' in her study 'Portrayal of females in Indian English Feminist fiction and Hindi parallel cinema during (1975-2005)' In her paper she has talked about the limited depiction of women in Bollywood. One of her categorizations is of the 'elite wife' who is royal and loyal. Later on, she talks regarding the self-sacrificing mother. The third classification is of the

women who are highly influenced by western culture, and often shown in bad light. She argues that the female characters who don't follow the Sita model turn out to be 'westernised and sexually violent, leading the men towards ruin'

This study discusses the powerful representation of female protagonists in contemporary Bollywood cinema, in addition it analyzes the actions of empowerment, taken by the protagonists in the movie.

Concept of Empowerment

There are various definitions of women empowerment. The Cambridge Advanced Learner's Dictionary defines empowerment as the process of gaining freedom and power to do what you want or to control what happens to you. "The geneses of empowerment approach are originated from the emergent feminist writings and practice based understandings of grassroots organization of many Third World women" (Moser 1989). Though the empowerment approach acknowledges inequalities and subservient status of women in the family, it also emphasises that women experience oppression is also related to oppressive structures and situations at different levels such as race, class, colonial history and current position in the international economic order (Moser, 1993).

The literature proposes a variety of definitions of empowerment including control over decision making and ability to control resources required to achieve a desired outcome (Kabeer 1999) Anita Vaidyanathan (2013) defines empowerment as "women's ability to negotiate strategies, manipulate and rebel against events, situations". Empowerment is also seen as the ability, based on education and skills development, to advocate for improved quality of life (Sen 1990).

The empowerment approach that many feminist theorists and practitioners embraced is seen by some as the 'restoration of individuals to a sense of their own value and strength and their own capacity to handle life's obstacles' (Handy & Kassam, 2006). Moser (1989) says that the empowerment defines power "as the right to determine choices in life and to influence the direction of change through the ability to gain control over crucial material and nonmaterial resources"

Based on various discourses on women empowerment for the purpose of the current study researchers have divides the concept of empowerment in following sections:

a) Economic independence

b) Decision making power for future
c) Knowledge and usage of technology
d) Control over own body
e) Reaction to violence and humiliation
f) Sexually awakened
g) Women supporting women

Analysis

The study analyzes film on two viewpoints, first on the basis of plot and other is based on characterisation of female characters to under the elements of empowerment in them.

Analysis of Film Plot

Parched (2016); Directed by Leena Yadav

Set in a rural village, Parched is a story of four women whose lives are entwined by traditional setup consisting of conformity, patriarchy and struggles. The film shows issues like child marriage, financial difficulties,, marital and familial rape, abusive marriages. It holds a mirror to the deep seated power struggles within society. Rani, who has been a widow for half her life, is trying her best to get her son married to a beautiful girl, Janaki from a neighbouring village. She is mortgaging her future to arrange for a hefty price of dowry that has to be paid to the bride's family. Lajjo, is Rani's friend and deals with the ill treatment from her alcoholic husband each night. She is ridiculed for not being able to conceive a child. Rani and Lajjo are skilled and work for a local entrepreneur. Bijli is a local dancer, takes pride in her ability to charm men who get weak by desire. She is not welcomed on auspicious occasions. The men of the village fear the empowerment of women and want to resort to the old traditional lifestyle led by their forefathers.

Description of female characters selected for the purpose of this study and Analysis of Empowerment on basis of variables

Female characters:

Rani (Tannishtha Chatterjee) is a widow who is preparing to marry her son to a girl from a neighbouring village. She is mortgaging her future to arrange for dowry as a trend in the society she lives.

Lajjo (Radhika Apte) is Rani's best friend. She longs to have a child but

can't conceive. Her marriage is abusive.

Bijli (Surveen Chawla) is a local dancer. She performs in a dancing troupe nightly and entertains clients.

Janaki (Leher Khan) is a young girl from a neighbouring village.

Economic independence

Rani is shown as a sole bread earner in a family of three members. She is a skilled worker who is considered as top weavers, working with Kisan. Her economic independence is emphasised in many scenes showcasing her authority to use her own money. As the custom of buying a daughter in law prevails in their society, she arranges some money along with her savings and buys a daughter-in-law named Janaki for her son. When Janaki's father proposed to raise the dowry from three to four lakh, Rani managed to do that. She is also capable of arranging money when she has to release Gulab from pimps. She uses her economic control and sells the house and gives money to her daughter-in-law.

Lajjo is also a top weaver in Kisan's business. However there is no scene emphasising that she has the authority to use that hard earned money on herself.

Bijli is one of the most economically empowered. She is the top stage dancer of Ramjas dance company. She is a prostitute and earns enough for herself. She is the most desired woman in the area. She is popularly known as *'Bijli Chasme Wali.'* In her profession, she appeals to a wide range of audience from all economic backgrounds.

Janki is one of the youngest characters in the film. She is a victim of child marriage. She could not complete her education and is unemployed. Her duties are confined to domestic chores. She harbours a desire to complete her education and gain employment. Her marriage has been proven to be a setback for her.

Decision making power for future

Rani assumes this is all that life has to offer and goes on living until one day she receives a call from a secret caller. She aspires to meet him someday. She has small goals such as marrying off her son and living with her daughter-in-law. As the film unfolds, we see a transformative journey she takes. She breaks free and runs away leaving behind bondages and her abusive son. She musters courage to carve a life for herself.

Rani was married at the age of fourteen and lost her husband when her son was two. Being in the locale where child marriage is usual, she decides to marry her son off, even after his constant disapproval. She is determined to make decisions for herself and for her son Gulab. Initially she needs to seek validation from her mother-in-law and after her death, Gulab tries to rule.

Lajjo dreams of having a child someday. She longs to get pregnant and get approval of her husband and society. She assumes herself to be an infertile woman. She claims that she doesn't want a child for anyone but for herself. She is good at her work and has been awarded with the title of 'best worker' and an offer to a permanent job.

She does not hold any decision making power. However she goes out with Rani quite often. There is a scene when Lajjo is reminded by her husband that she can't roam around. She should remain at home and confined to her duty as a housewife. She slowly gathers courage and decides to go and meet another man and see if she can get pregnant.

Bijli is ambitious and self-willed. She aspires to go to Mumbai and to proceed with her career as a dancer. She always threatens her pimp that someday she will run away. She even proposes to him to run away with her.

Her wilful behaviour allows her to decide her customer herself. Prostitution is her own choice. She is empowered to make her own decisions and at the same time very proud of her dancing skills. She even drives trucks and roams around with girls whenever she wants to. Bijli rejects patriarchy and questions societal norms. In one of the sequels she questions *'why all the cuss words centered around females?'*

Jananki dates one of her schoolmates and plans to marry her. But her parents set up her marriage with Gulab. At the time of her marriage she cuts her hair off to resist the decision of marriage. Even after her marriage, her lover keeps visiting her. He also makes a full attempt to take her away, if she agrees.

Being the youngest character, she does not hold any power to make decisions. It is her elders who decide for her. At the same time she does not silently accept what happens to her, she shows resistance in her actions.

Knowledge and usage of technology

Rani owns a phone of her own, pink in colour and with a ringtone of a Bollywood item song.

Lajjo does not have authority over any technology, she doesn't have any

mobile phone. But she has access to cinema because she knows who Shrarukh Khan is and shares with Rani that she has seen his film.

Bijli has access to mobile phones. She often drives a truck. Her income empowers her to have a sense of independence and mobility.

Janaki She does not have access to any technology.

Control over own body

Rani is a widow, black is the only color she is allowed to wear. She does not protest against the injustice. She is ageing, her hair is turning grey, and her eyes are weak too. She shares with Lajjo that "*Last night I didn't recognize myself in the mirror*" This statement stresses upon the fact that she used to be beautiful. Absence of a husband in her life takes away her right to dress up and look beautiful. Her black clothes symbolises her fate as dark, after the death of her husband. Her friend Bijli introduces her to Multani mitti, which amazes her. In the last scene the ladies cut their hair off which is used as a metaphor for breaking free from the shackles of the stereotypical norms of society.

Lajjo is a girl with a dusky complexion. She does not always pay attention to how she looks. She wants to look good as she applies multani mitti after the recommendation of her friend Bijli. When she plans to tell her husband about her pregnancy, she dresses up well but receives bashing by him.

Lajjo andrani assert their right on their bodies in a carnal desires scene between them where Rani describes Lajjo's body thus, "your mouth is like luscious berries. I want to suck juice from them. Accused of infertile womb, booze has drowned all the love inside you"

Bijli exerts control over her body. She is shown beautifying herself. She is the one who is a regular user of makeup products. This is because of the fact that she is dealing with men all the time. And for that matter she must look attractive. Dressing up is a part of her daily routine. Dressing up and doing makeup is seen as her being empowered. However, despite the fact she cuts her hair in the end.

Just because she has cut her own hair to show resistance, now she has become ugly. While going back with the bride, Janaki, her pallu falls accidently and everyone in the bus sees her hair.Now she has become a source of joke . She is attributed different words. Gulab is being shamed because of her short hair, emphasising that she wanted her with long hair. He condemns her because she is not able to fit his beauty standards.

Reaction to violence and humiliation

Rani is not very reactive towards violence, as she has been a victim of domestic violence. When the action of violence is done by her own son, she shows her rejection and saves her daughter in law.

Lajjo initially accepts violence thinking it is her fate. Towards the end when she's aware that it is not herself but her husband who is impotent, she resists it

Bijli has not been a victim of anytype of violence to the scene when her pimp disrespects her, deceives her. On that night she is subjected to sexual violence and she simply do not resists it, thinking of it as her destiny.

Janaki is the one who resists being dominated. She doesn't just accept what is being done but expresses resilience through her actions.

Sexually awakened

Rani has not been into any sexual activity in years. As she informs her secret caller,that she has not been touched by a man in years. She doesn't have anyone to explore her sexuality with. When her secret lover calls her *'Gulabo',* slowly she starts feeling special. She doesn't put a stop to the daily conversation, because she also longs for a relationship. Rani express

es her sexual desire to her imaginary lover Shahrukh Khan. Being a widow for 15 years, she has those powerful sexual instincts that disclose to her imaginary lover. She says, "Tell me Shahrukh Khan where and when you want to meet?"

Lajjo is made to feel ashamed due to her inability to conceive. She is too naive to understand that men can be impotetn too. For her intercourse has always been forecul. When she gathers courage to meet a man outside her marriage and try to get her desire of having a child fulfilled, she assumes that act as another forceful event. She spreads her leg and clinches her feet, but to her surprise the man touches her feet and greets her with his hands joined. This encounter changes her perception that sex can be enjoyable too.

Bijli is the one who is most aware about her sexual desires. She has the courage to explore . She shares with Lajjo about one of her most gratifying sexual experiences. She tells about the man whom she enjoys with and persuades Lajjo to meet him.

Janaki She is a child who has been trapped in the curse of child marriage. She is not deply aware of her right to sexulaity. Gulab has been very violent with her

Women supporting women

The film has several instances of women supporting each other.

Rani finds her company in Lajjo, her friend, who is a victim of severe domestic violence. She consoles her best friend Lajjo. When Rani realises that her daughter in law is also subjected to face violence by her son, Gulab, she takes a stand and supports Janaki.

The strong bond of friendship between Rani and Bijli is a symbol of women supporting each other .

Lajjo is supportive and also receives assistance from other female characters. Rani is the closest friend. This act is proven by the scene when she applies her homemade medicines after Lajjo came all bruised up by her husband. When Rani and Lajjo return after fixing Gulab's marriage , Rani asks Lajjo *'Do I look like a woman.'* Lajjo praises her eyes and assures that she is beautiful.

Bijli is Rani's best friend. Despite being the relationship between Rani and Bijli, both of them choose friendship over any relation. Bijli is too supporting Rani.

Janaki is empathetic towards others. The scene where Lajjo comes all bruised up seeking Rani but does not find her. She consoles Lajjo, wipes her tears and applies the paste of haldi, similar to the way Rani used to do it. In the last scene the ladies cut their hair off which is used as a metaphor for breaking free from the shackles of the stereotypical norms of society.

Conclusion

After analysing Indian Hindi film Parched it is found that film is directed by female directors and have very sensitively and minutely dealt with the empowerment of each female character. It depicted how the women are subjugated by their own family. Story line and the journey of female characters clearly depicts that they are not submissive, they deserve their freedom of expression, their desires and their needs.

Parched is set up in a rural setting showcasing the background of the village is no more hindrance to their empowerment. By analysing the movie through the perspectives of the Feminist and empowerment Theory focusing on women's way of surviving patriarchy, the reality of womanhood has been unfolded. In the journey of the film female characters break the social, economical and cultural boundaries. Parched' dealt with, Lesbianism or ownership of the female body is perhaps the most important one. Still today,

Indian society, especially patriarchy, is not mature enough to deal with the subject of Lesbianism. Nevertheless, the movie touches the issue and tries to underline women's right on her body and sex.

Cinema has the power to initiate discussions on sensitive and essential topics. This study will allow readers to have a second thought on the standpoint of women in the patriarchal setting and have looked at empowerment of women in a larger perspective. Further research can be conducted to study how empowerment is shown in mainstream cinema.

References

1. Caroline O.N. Moser. 1989. Gender planning in the Third World: Meeting Practical and Strategic Gender Needs. World Development, Vol.17, No.11.pp 1799-1825.
2. Caroline O.N. Moser. 1993. Gender Planning and Development: Theory, Practice and Training, Routledge. London
3. Johnston, C. (1979). Women's Cinema as Counter Cinema. Sexual Stratagems: The World of Women in Film. Patricia Erens, ed. New York: Horizon Press
4. Gupta Sukanya (2015) Kahaani, Gulaab Gang and Queen: Remaking the queens of Bollywood, South Asian Popular Culture, 13:2, 107-123, DOI: 10.1080/14746689.2015.1087107
5. Hartsock, Nancy. 1983. Money, Sex and Power. London: Longman.
6. Kabeer N. Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment. *Development and Change.* 1999;30(3):435–464. doi: 10.1111/1467-7660.00125.
7. Lee J. (2001) The Empowerment Approach to Social Work Practice: Building the Beloved Community Columbia University Press: New York.
8. Hayward, Clarissa Rile (2000) De-facing Power, Cambridge: Cambridge University Press
9. Handy Femida, Kassam Meenaz (2006) Practice What You Preach? The Role of Rural NGOs in Women's Empowerment Journal of Community Practice
10. Nelmes, J. (1996). Introduction to Film Studies, London: Routledge
11. *Sibal Vatika (2018) STEREOTYPING WOMEN IN INDIAN CINEMA*. Available from: https://www.researchgate.net/publication/323786469_STEREOTYPING_WOMEN_IN_INDIAN_CINEMA [accessed Jul 25 2022].
12. Neuman, WL. 2003. Social research methods: qualitative and quantitative approaches. 5th edition. Boston: Allyn and Bacon.
13. Sen AK. Gender and cooperative conflict. In: Tinker I, editor. *Persistent inequalities: Women and world development.* New York: Oxford University Press; 1990. pp. 123–49.

1. Associate Professor Institute of Home Economics University of Delhi

Research Article

Pitfalls of Prosperity in John Steinbeck's The Pearl

–Mrs.P.Nirmala Rani
–Dr.P.Kumaresan

Abstract

The author, John Steinbeck's, The Pearl made colourful word choices to tell the story of ayoung family that was destroyed by sudden wealth. He used various forms of figurative language to help readers form pictures in their minds and made the story come to life.

Figurative language is used to describe people, events, settings and actions through the use of expressions that create visualization for the reader. Kino was content with his wife, Juana and their child before he got the pearl. He felt lucky to have such a cheerful cooperative wife.

Before Kino found the pearl, his canoe was the one thing of value he owned in the world. Thecanoe was a gift passed down from his family. Kino was filled with rage when the canoe was vandalized. The murder of a man was not so evil as the murder of a boat. A wounded boat didnot heal, it could not protect itself and it did not have sons. When the boat was destroyed by the greed that the pearl had caused, it indicated the break between the past and future of the Kino's which he had chosen by refusing to give up the evil object. Kino, Juana and Coyotito lived a peaceful life until one day, a scorpion changed everything. This unexpected evil thing came after the young, innocent Coyotito. In the same way, the evil of the pearl came to Coyotito's father. This illustrates how unexpected events might come into one's life and change everything.

Key Words: Symbolism, Poverty, Suspicious, traditional, forgiving, destructive and greed.

Juana tried to suck the poison out of his shoulder, but she was unsure. Coyotito was her only child and her entire world. So, she insisted that they take him to a doctor, even though their poverty-stricken community. When the doctor refused to see him without money, she cured him using brown seaweed. For Coyotito's medical care, his father Kino dived for pearls.

Introduction

In John Steinbeck's The Pearl, Coyotito had no dialogue. He was a baby. However, his parents had protective feelings for him. They hoped for his future. In the beginning of the story, Coyotito's parents were happy and content with each other and with him. He slept in a hangingbasket in the brush house that they lived in. One day, their happiness was destroyed when a scorpion began to move down the rope where the basket was hanged. In that basket, Coyotito was resting. Kino started towards the scorpion Juana muttered a combination of prayers and black magic. But Coyotito did not understand the danger. In the hanging box, he laughed and reached up his hand towards it. The scorpion fell and stung Coyotito's shoulder. It left him streaming in pain.

Coyotito's Vulnerability

Juana tried to suck the poison out of his shoulder, but she was unsure. Coyotito was her only child and her entire world. So, she insisted that they take him to a doctor, even though their poverty-stricken community. When the doctor refused to see him without money, she cured him using brown seaweed. For Coyotito's medical care, his father Kino dived for pearls. Coyotito never got the stomach cramps that came with scorpion stings, whether it was because of the seaweed or because his mother sucked out enough of the poison or both.

After Kino found the pearl, the greedy doctor saw Coyotito to get some of the money. He toldKino that the poison had gone internal. So Coyotito needed treatment. After giving him a pill that made him sick. So that the doctor provided Coyotito with another remedy made him better.Although Coyotito's parents were suspicious, Kino did not trust his own instincts because of his lack of training and education. So Kino decided to send Coyotito to school by using the money from pearl. One night Kino must run away with his family, because some attackers attacked him. But they were being pursued by men. Just as Kino was about to kill the men whowere tracking them, Coyotito made a sound. Coyotito was killed by the tracker who shouted towards the sound.

Strong, Vulnerable and Protective

Juana was represented as the traditional loving, obedient and forgiving wife. Her strong point came from her love for her family. She made every decision in the best interest of her husbandKino and her son Coyotito even when Kino did not agree. She was imagined as the perfect spouse. Kino could

not be more grateful for his wife, at the beginning of 'The Pearl'. When Kino woke up each morning, Juana was already awake and watching him sleep. He was so grateful that he had a wife who was so loving, beautiful and happy to be with him. She tendedto the baby and prepared breakfast for Kino without complaint before eating her own.

Kino was amazed at her ability to be both strong and vulnerable. Juana was obedient and respectful and cheerful and patient, and could beard physical pain with hardly a cry. She couldhave stood fatigue and hunger almost better than Kino himself. In the canoe she looked like a strong man. Juana never expected much for herself, so it surprised everyone when her baby, Coyotito was stung by a scorpion and she demanded that he be seen by a doctor. She sucked as much of the poison out as she could but she was not sure it was enough.

Juana prayed for Kino to find a pearl that would enable them to afford medical care for their child. But it didn't take long for Juana to see that the pearl was bringing them more problems than joy. But Kino did not listen to her, after he was attacked again, she decided to get up in the middle of the night to throw it out. When Juana tried to throw the pearl into the sea, Kino stopped her and struck her in the face. She thought that he would kill her but she was not afraid.

She had accepted it and would not resist or even protest. She dragged herself out of the water'sedge and cleaned her face and thought about her relationship with him.

Tomas Offers Advice

Juan Tomas was Kino's brother who truly wanted the best for Kino besides Juana. He remindedKino that, if he left their own town, he would lose the support of his friends and family. Kino'scanoe was destroyed by vandals and his house was burned by an attacker. So, he killed him and told to Juan Tomas about committing murder. Juan Tomas blamed the pearl that there was a devil in that pearl. So, he advised him to sell it and pass it on to the devil. The theme of the destructive power of greed is explored as the characters navigate their personal desires, destinyand racism by John Steinbeck in 'The Pearl'. We would explore the devastating effect of Kino'ssudden change from being poor but happy, to possibly instantly wealthy.

The Pearl by John Steinbeck was a parable that demonstrates the destructive force of greed. The characters in the story began as poverty-stricken, but

happy. By the end of the story, theyhad been destroyed by their own greed. It began when Coyotito Kino and Juana's son was stung by a deadly scorpion. But the doctor refused to treat him because the family was Indian and had no money. Kino dived for pearls to make money to help his son. By the time he cameupon a large magnificent pearl, Coyotito's health had improved. Kino began to think how he could live better off himself and his family, but the greedy pearl buyers tried to cheat him. Thegreed that creeped into the entire city and turned friends into enemies. Kino lost everything forthe sake of the pearl. Kino had continued to remain grateful for his blessings rather than pursuing more, the pearl would have lost its power to destroy him. The theme of destiny and racism against the poor people by the European colonists are also addressed.

Kino was content with his wife, Juana and their child. He reflected on how lucky he felt to havesuch a cheerful and cooperative wife. As long as he had his canoe, he felt like he could provide for his family. The only reason he wanted the pearl was so that he could get medical treatmentfor his son, but after his son healed, Kino began thinking about other things he might buy. Hisfriends and neighbours could no longer be trusted as even the priest tried to figure out how to get a share of the profit. When Juana saw that the greed surrounding the pearl was destroying them. She tried to get rid of it. Once Kino valued Juana as his most valued asset, but because of his greed, she became the target of his disgust to the point that he beat her.

The canoe was only the one thing of value that Kino owned in the world before he found the pearl. More than that, the canoe was a gift passed down from his grandfather and his father that provided a guarantee for Kino to feed his family. When the canoe was vandalized, Kino was filled with rage. The killing of a man was not so evil as the killing of a boat. When the boat was destroyed by the greed that the pearl had caused, it indicated the break between Kino's past and the future he had chosen by refusing to give up the evil object.

Kino's Fortune

When Kino dived for the pearl, it was with the best intentions of finding a way to save his son'slife. Kino lifted the flesh; there he saw a great pearl which was as perfect as the moon. It was as large as a sea gull's egg. It was the greatest pearl in the world. In 'the pearl' the author usedvarious forms of figurative language to help readers to form pictures in their minds and make

the story come to life. Here we learn more about figurative language from 'The Pearl'. Figurative language is used to describe people, events, settings and actions through the use ofexpressions that create visualizations for the reader.

In the pearl, the doctor was not presented as a healer, but as a greedy, self-absorbed and incompetent racist. Let's learn more about the doctor in The Pearl'. The townspeople came toknow the doctor's ignorance, cruelty, avarice, appetites and his sins. They knew his clumsy abortions and the little brown pennies he gave sparingly for alms. They had seen his corpses go into the church. No one expected very much from the fat, lazy doctor.

Kino hesitated about seeking help from the doctor. Because he was from a race that had oppressed the indigent people for hundreds of years. In this situation, Kino's helplessness madehim angry and afraid. He could kill the doctor more easily than he could talk to him, for all ofthe doctor's race spoke to all of Kino's race as though they were simple animals. Despite all ofthe emotion that was welling in him, Kino removed his hat out of respect and knocked on the door. The doctor missed the days when he lived in 'civilized' France and could eat in nice restaurants. The doctor demanded to treat Coyotito, because his parents never had money.

Juana's remedy of seaweed was just as effective at drawing the poison out of Coyotito's shoulder as anything the doctor could have done. But she didn't trust its power. The remedy lacked his authority because it was simple and didn't cost anything. Once Kino found the valuable pearl, news spread of his fortune throughout the town and to the doctor. The doctor had visions of finding his way back to Paris where he would drink wine in restaurants. The doctor went to Kino's house and told him that he had come to see the baby at the first chance.

Kino worried that he didn't have enough knowledge to take a chance with Coyotito's life. Juanadidn't trust the doctor, but she deferred to Kino. After examining Coyotito briefly, the doctor said that the poison had gone inwards and it would strike soon. The doctor showed blue underCoyotito's eyelid. Unsure whether or not eyelids were always a little blue, Kino agreed to treatment. The doctor gave Coyotito a pill and an alcoholic drink to wash it down. John Steinbeck used symbolism to deliver his thoughts about fate, greed, hope and evil. Symbolismis the use of objects to represent an idea in a literary work. Here look at some of the symbolismin The Pearl including the pearl, the canoe and the scorpion.

Wealth Brings Sin

Kino, Juana and Coyotito lived a peaceful existence until one day, a scorpion changed everything. A scorpion is an arachnid with a venomous stinger at the tip of its tail. Some scorpions have fatal stings and are particularly dangerous to children, the elderly and those with other illnesses. Coyotito's parents understood the inherent danger of a scorpion. But Coyotito seemed like a plaything. When Coyotito saw the scorpion, he reached for it and shook the rope and the scorpion fell. That unexpected evil thing came after the young, innocent Coyotito in much the same way that the evil of the pearl came to Coyotito's father. The messagewas don't mess with things you know nothing about. Also, the scorpion illustrates how unexpected events may come into your life and change everything.

The canoe was the one thing of value he owned in the world, before Kino found the pearl. Thecanoe was a gift passed down from his grandfather and his father that provided a guarantee forKino to feed his family. When the canoe was vandalized, Kino was filled with rage. The killingof a man was not so evil as the killing of a boat. A boat did not have sons and could not protectitself and a wounded boat did not heal. The canoe's symbolism goes beyond its ability to provide sustenance and even beyond the link to Kino's heritage. When the boat was destroyed by the greed that the pearl had caused, it indicates the break between Kino's past and the futurehe had chosen by refusing to give up the evil object.

More striking is the shallowness of Steinbeck's characterization. Frequently, when he writes about the evil doctor denying to help Kino. The Pearl buyers are interchangeable each beady- eyed buyer denies Kino a fair deal. Steinbeck uses the doctor, the money-lender, and Kino to show the demoralizing influence of wealth on all mankind. Apolonia, Juan Thomas's wife andthe mother of four children. Like her husband Apolonia was sympathetic to Kino and Juana's plight, and she agreed to give them shelter in their time of need. The doctor, a small-time colonial who dreams of returning to a bourgeois European lifestyle. Initially he refused to treatCoyotito but changed his mind after knowing that Kino had found a great Pearl. He representsthe arrogant, condescension and greed at the heart of Colonial society.

Kino and Juana travelled that night, and rested during the day. When Kino believed that he wasbeing followed, the two hid and Kino saw several bighorn sheep trackers who passed by him. Kino and Juana escaped into the mountains and hid in the cave. The trackers thought that Coyotito was crying and shot

in that direction. Kino attacked the three trackers and killed them,but he heard the cry of death and realized that Coyotito was dead from the first shot. Juana andKino returned to La Paz. Kino carried the rifle stolen from the trackers while Juana carried thedead Coyotito. The two approached the Gulf, Kino saw the image of Coyotito with his head blown off in the Pearl, and threw it into the ocean.

Conclusion

On the surface, The Pearl resembles a novella. Its length, its attention to a protagonist's innerlife, and its occasional moments of lyricism are hallmarks of that literary form. On the other hand, Steinbeck's style is often conversional and bland. His characters have little depth, each showing a remarkably consistent pattern of good or evil actions, each illustrating Steinbeck's idea that wealth is a source of corruption. Steinbeck creates an awkward hybrid that lacks the finer qualities of either genre. The Pearl has some superficial aspects of a novella yet large portions of Steinbeck's writing are colourless or monotonous. Kino held the great Pearl in hishand, and it was warm and alive. Kino looked into his Pearl, and Juna cast her eyelashes down.The flatness of his style recalls the plain, repetitive language of a parable.

References:

1. Steinbeck, John and Josel Clemente Orozco. The Pearl. Penguin Books, 2017.
2. Meyers, Michael(1 March 2004). "Wavering Shadows: A New Jungian Perspective in Steinbeck's The Pearl". Steinbeck Review. 1: 132.
3. Reed, Arthea.J.S. "A Teacher's Guide to the Penguin Edition of John Steinbeck"The Pearl'. Penguin:1-5.
4. Meyers, Michael(2005). "Diamond in the Rough: Steinbeck's Multifaceted Pearl". Steinbeck Review. 2(2): 42-56.
5. Benzon, Jackson. J. (1990). The Short Novels of John Steinbeck: Critical Essays With a Checklist to Steinbeck Criticism. Duke University Press. pp. 143-ISBN 9780822309949. Retrieved 30 January 2013.

---

1. Research Scholar, P.G and Research Department of English, Sudharsan College of Arts and Science (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli), Perumanadu, Pudukkottai, Tamilnadu, India.
2. Associate Professor in English, P.G and Research Department of English, Sudharsan College of Arts and Science (Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli), Perumanadu, Pudukkottai, Tamilnadu, India.

Research Article

Re-interpreting the Nationalistic Discourses in Raja Rao's *Kanthapura*

–Dr. Ramyabrata Chakraborty

The problematising potential of the novel extends to anti-colonial nationalism too. In order to examine this let us turn to another dimension of the novel. The emergence of novel as a genre in 19th century India raises the question of whether it is derivative. While there is a debate on this issue, the novel's role in enabling the notion of nation-state to take shape is an important one.

Abstract:

Raja Rao's *Kanthapura* (1938) enacts some of the motifs of nationhood and post-colonialism. It portrays Pre-Independent India in all its realistic fervour. The novel revolves around the lives of the people of Kanthapura and their effective participation in the freedom struggle. The British Government is pictured as evil and the culture based folk tales and epics are interspersed with the atrocities of the British. The famous practice of Hari katha is one such feature which is utilised to attack the British rule. The novel traces the start of freedom movement in a small village Kanthapura which later on gathers momentum and spreads all over the nation. Hindu traditional practices with respect to their various beliefs are beautifully shown in the novel. Keeping these in view, the present study will try to re-interpret the nationalistic discourses of the novel.

Keywords: Raja Rao, nationalistic discourse, Hari katha, post-colonialism.

Introduction:

Raja Rao's novel, *Kanthapura*, is in the form of a story narrated by Achakka, an old woman of the village of Kanthapura. The village is a scenic beauty in the state of Karnataka. The village has clear cut class distinctions even in the very setting. There are different quarters occupied by different community people like the Brahmin quarter, the Sudra quarter, the potters, the pariah lane etc. The novel revolves around the lives of the people of Kanthapura and their effective participation in the freedom struggle. Moorthy, the village Gandhi

spearheads the movement. They ardently follow Gandhian principles of Ahimsa or non violence. The villagers slowly get united and the uniting force is their fight for free India. The women with the leadership of Rangamma and later Ratna emerge as the true *satyagrahis*. The British Government is pictured as evil and the culture based folk tales and epics are interspersed with the atrocities of the British. The famous practice of Hari katha is one such feature which is utilised to attack the British rule. The novel traces the start of freedom movement in a small village Kanthapura which later on gathers momentum and spreads all over the nation. Hindu traditional practices with respect to their various beliefs are beautifully shown in the novel. The police in the hands of the British Empire unleash terror in the village finally destroying the whole village. Many men, women and children die in the various scuffles. Gandhi's ideologies slowly but steadily spreads itself and the whole nation is seen waking up from its slumber against the British Empire's tyrannies. The novel traces genuinely the growth of the Independence struggle in India with Gandhi at the background influence.

DISCUSSION OF THE PROBLEM:

In *Kanthapura*, Raja Rao created a living microcosm of rural India awakened by the Gandhian impact in terms of the story of the Gandhi-man, Moorthy. The well-ordered, peaceful life of the village came under the influence of Gandhian ideas of social change, of moral regeneration, and above all, of political liberation through Moorthy. Moorthy, the central protagonist of the story was a young man of the village educated in the city. As mentioned earlier, Moorthy was a follower of Gandhian ideals. The message of the 'Gandhian Civil Disobedience Movement' came to the remote scheduled village Kanthapura when Moorthy came from the city. Moorthy was loved by all except a few reactionary elements of religious orthodoxy, represented by a man like Bhatta. Bhatta has nothing personal against Moorthy, but what irks him is Moorthy's pariah business, the Gandhi affair.

The vision of Gandhi converts Moorthy into a Gandhian, a *Satyagrahi* whose mission is to stir the sleeping people of Kanthapura. It is seen that Moorthy goes from door to door, even in the pariah quarters of the village and explains to the villagers the significance of Gandhi's struggle for independence. He inspires them to take to charka-spinning and weaving their own cloths. In spite of obstructions created by the religious orthodox people of the village, the Gandhian thoughts and ideas take root slowly in the minds of a vast majority of the people of the village. Of course, these people misinterpret the movement in the light of their traditional wisdom derived from the ancient scriptures and traditions. They realize that there is no real dichotomy between Gandhism and Hinduism.

However, Bhatta, the orthodox Brahmin, apprehends danger to his vested interests in religion, in what is being propagated by Moorthy and his men in the name of Gandhi. So to check Moorthy and his men he devises a plan. He tries to frighten Narasamma, the widowed mother of Moorthy, with the threat that Swami who is the ultimate authority in matters of religion might excommunicate Moorthy and his men if he continues to visit the pariah street and eat their food. Moorthy, naturally, ignores such threats and continues his work among them with the courage of his convictions. Would a Brahmin lose his Brahminhood if he touches a pariah? Or, if a pariah touches a Brahmin, what would happen to the pariah and the Brahmin? Like Anand's *Untouchable*, in this novel Raja Rao has raised these questions. Moorthy, the central character in *Kanthapura* cannot change his holy thread everyday and cannot wash himself with the Ganges water because he has taken upon himself the task of spreading the gospel of Gandhi, which dissolves all castes into one caste. In this respect, Moorthy's opponent is Bhatta, the Brahmin money-lender, who opposes any truck with the pariahs.

Not only do the Brahmins oppose the pariahs, but they rebuke Moorthy for his familiarity with Ratna, because Ratna is a young widow and her place is in the kitchen. When the Congress Committee is formed in Kanthapura, Moorthy is nominated the President and Range Gowde, Rangamma and Rachanna are members. In the task of organizing the freedom movement in the village Moorthy is helped by that Ratna, the young lady of progressive and enlightened views. As we read the narrative, we notice the Brahmin orthodoxy slowly but steadily loses ground and the spirit of Gandhi's gospel gains the upper hand.The British Government on its part began taking prompt steps to counter the movement of the Gandhimen and to restrain the movement. Policeman Bade Khan is posted in the village and he is actively helped and supported by Bhatta and Swami. But, on the whole, the people remains undaunted and firm in their support to the Gandhi Movement. In the meantime, report regarding the historical 'Dandi March' of the Mahatma to break the 'Salt Law' and the ardent zeal it has evoked throughout the country, reaches the village. At this the villagers feel new spirit and do much to boost the public morale. Soon there is *Satyagraha* and picketing—under the leadership of Moorthy.

There are police lathicharge and many are wounded and hurt seriously. Even large numbers are arrested. Moorthy is also arrested to a long term imprisonment. In his absence Ratna takes the charge of the Congress-work in the village. When the *Satyagraha* movement is in full swing, Ratna's place in society as a freedom fighter is fully acknowledged, and all the

women of Kanthapura, make her as their chief. As *Satyagrahis,* the women of Kanthapura break the age-old restrictions and taboos and become one. The villagers influenced by Gandhism raise a brave resistance at first but ultimately they are compelled to flee. The people of Kanthapura are defeated, no doubt, but in their very defeat lay their victory. Their brave resistance has given a jerk to the British Government who ultimately has to leave the country. This is due to the distant but potent influence of Gandhiji, who, to the people of Kanthapura, is not a man or god, but "the Sahyadri Mountain, blue, high, wide" (Rao 127), and they, "pilgrims of the mountain" (Rao 127). Moorthy, though smaller, was also an impressive mountain to them. The people of Kanthapura feel safe and secure because they "knew there were the Small Mountain and the Big Mountain to protect us" (Rao 127).

The problematising potential of the novel extends to anti-colonial nationalism too. In order to examine this let us turn to another dimension of the novel. The emergence of novel as a genre in 19th century India raises the question of whether it is derivative. While there is a debate on this issue, the novel's role in enabling the notion of nation-state to take shape is an important one. Benedict Anderson has argued that novel is partly responsible for a community to imagine itself as a nation. The novels written in 19th century and even beyond in India may be used to support this claim. While in *Kanthapura*, the action is restricted to the village itself with none of the characters venturing too far out, yet the village is not insulated against the happenings in other places. In fact, the stimulation for action is not local. The grand events that form the focal points of the novel take place in response to events elsewhere – Lahore, Bengal, Gujarat, etc. The village community moves from an insulated identity towards a national identity. In one sense, *Kanthapura* chronicles the formation of a national identity within a remote village. This thematic is also supported by the manner in which the village becomes a kind of a microcosm of the nation. The narrative tends towards mythicizing. For example Moorthy's fast, Ramakrishnayya's death, the receding of the flood, and nationalist struggle itself are mythicized. The narrative takes recourse to Vedantic texts and Puranas and inserts nationalist struggle into them. For example, in a harikatha, Jayaramachar brings in an allegory between Siva, Parvati and the nation. The three eyed Siva stands for *Swaraj*. Later Rangamma standing in as the commentator of Vedanta after the death of her father reads the Puranas allegorically, interpreting hell as the foreign rule, soul as India and so on. Shall we claim that the nation is thus constructed hermeneutically?

The process of imagining a community–of imagining nationhood – also underlines the homogenising tendency of nationalism (Anderson, 1991). The

congress workers, who so vehemently are *swadeshi* and give up anything foreign, unwittingly embrace the European model of nation. This notion requires a nation state to have a singular form. A nation is a community of people who have a common language etc. Thus in Kanthapura, Congressmen including Moorthy follow the same model of the nation-state. Sankaru epitomises this: his insistence on speaking Hindi even to his mother instead of the local language Kannada; his fanatic resistance to the use of English and so on. This conception of the nation informs everyone: e.g. the narrator visualises Moorthy (when in prison) to be wearing kurta pyjama instead of dhoti. The Hindi teacher is not from any Hindi speaking region but a Malayali (Surya Menon). Thus, the very conception of 'Nation', which is conceived after the European model of the nation-state, undermines the *swadeshi* spirit of nationalism. Any pure form of nationhood untouched by colonialism is seriously questioned.

Another problem arises when this novel is read as a record of a nation-in-the-making. It would seem to exemplify Jameson's argument that third world literature is necessarily a national allegory (Chakraborty, 2013). When we keep in mind Benedict Anderson's thesis about the emergence of nation-state is a work on the emergence of nation-state in Europe, Jameson's argument seems to put third world literature in the past of European literature. This only re-enacts the familiar theme that comes across in the colonialist historiography of Indian nationalism: that Indian nationalism is a learning process as has been pointed out by Ranajit Guha. This particular view of nationalism characterises Indian nationalism as a response to the stimulus of colonial administration. The view of the history of the colonised society as a march towards the teleological goal of becoming ultimately 'Europe' places them always at a past time in relation to the colonisers present time. The denial of coevalness of time is a necessity in the discourse of colonialism (Guha, 1982). The description of the village life is as a timeless continuum in the form of *Sthalapurana* or the *Harikatha* wherein nationalist figures become mythical; whereas, colonialism disrupts the narratives of the community and introduces 'history'. In as far as the change in the narrative technique, which becomes more linear while narrating the freedom struggle in Kanthapura, history really begins with Europe inhabiting *Kanthapura*. This is most clearly suggested in the loss of mythicizing tendency of the narrative in the later part when the arrival of newspapers, novels and pamphlets has exposed the first person narrator to techniques of historicizing. This whole reading of the novel harps back upon the exchange between the coloniser and the colonised. The interesting insights offered by the novel are about the immense complications and violence that attend the arrival of colonial modernity in India.

CONCLUSION:

The novel highlights with no subtlety the collusion between colonialism and Brahmanism. The manner in which Moorthy becomes an outcaste in the Brahmin quarters with his campaign against untouchability indicates the tension between Brahmanism and nationalism. For Brahmanism, the colonial ruler is not the enemy but Gandhi's anti-untouchable movement is. The collusion between Brahmanism and colonialism is suggested through the alliance between Bhatta, Bade Khan the policeman and the Sahib of the Estate. Swami, who is waging a war against 'caste pollution due to this pariah business', sees British rulers as protectors of the ancient ways of Dharma. Swami receives a large amount from the govt as Rajadakshina and is promised that he would receive moral and material support in his war against caste pollution.

The discourse of nationalism meets the discourse of religion at different levels in the novel. While Bhatta, Swami and their followers (who have often material motives such as Venkamma) resist Gandhism in the name of religion, in *Kanthapura*, the nationalists increasingly employ the religious discourse and customs and symbols for nationalist purposes. Religious resources are mobilised for the politicisation of the people. But the customs, rituals and symbols that become tools of nationalist mobilisation are primarily Brahminic: *arthi*, *puja*, conches, bells, Vedanta, *bhajan* etc. They do not include the cultural practices of the lower castes though their participation is prominent.

Therefore, it is found that *Kanthapura* very ably reflects much of the nationalistic themes including the patronising attitude towards the lower caste society. The novel, much like hegemonic Indian nationalists, deploys anti-caste postures to dissemble the projection of brahminical culture as the legitimate national culture.

References:

1. Anderson, Benedict. (1991). Imagined Communities: Reflections on the Origin and Spread of Nationalism. Rev. ed. Verso.
2. Chakraborty, Ramyabrata. (2013). R.K. Narayan and the Idea of the Nation [Doctoral Dissertaion, Assam University]. Shodhganga. http://hdl.handle.net/10603/93331
3. Chakraborty, R. (2019). Nation and it's Narration: A Re-reading of R. K. Narayan's Novels. Scholars' Press.
4. Guha, Ranajit.(1982). "On Some Aspects of the Historiography of Colonial India". Subaltern Studies: Writings on South Asian History and Society. Vol 1. Ed. Ranajit Guha. Delhi: Oxford University Press, Rao, Raja. (1970). *Kanthapura*. New Delhi: Orient Paperback, 1970.

1. Assistant Professor & Head Department of English Srikishan Sarda College, Hailakandi, Assam Email: ramyabrata1@gmail.com, ramyabrata@sscollegehkd.ac.in

Research Article

Effect of Learning and Thinking Style on Academic Achievement of CBSE and ICSE Board Students Using ICT: A Comparative Study

–Dr. Shinam Batra
–Dr. Sunil Kumar

Innovative learning and thinking is having highly valued today. All learning exist in the brain. Brain is a composite of grey matter that function as a whole, though its functions are very particular on the basis of left and right hemispheres.

Abstract

Innovative learning and thinking is having highly valued today. By working with certain mental exercises as a conscious part of one's day to day life can increase their potential to amalgamate left brain (logical), right brain (creative) and thinking patterns into a mix that give rise to more productive and innovative thinking.

- It is concluded that correlation between learning and thinking style and academic achievement of CBSE & ICSE Board students is very low. However, it is found that left and whole hemisphere of CBSE and ICSE board students are significantly varying from board to board (non significant), so null hypothesis are accepted. It is also observed that nearly 4% variation in the academic performance of male respondent is caused by independent variables i.e. learning and thinking style. Whereas, the left hemisphere is having most significant contribution to the academic performance in respect of CBSE & ICSE Board male students. So the null hypothesis in case of left hemisphere is no accepted (rejected). On right hemisphere CBSE & ICSE female students are having significant contribution on academic achievement, So here the null hypothesis is non

accepted, While on whole and left hemisphere there is no significant contribution on academic achievement of CBSE and ICSE Board female students, so null hypothesis is accepted. It is also found that shows that the left hemisphere scores are independent of the board, while the right hemisphere and whole hemisphere is sensitive to the board. It is concluded that left hemisphere scores are independent of the board,while the right hemisphere and whole hemisphere is sensitive to the board. Hence, it is concluded that the right and whole hemisphere depends on the type of Board student studying in, while the left-hemisphere is independent of the type of Board. There is stronger relationship between learning and thinking style and academic achievement of ICSE board students as the correlation value is high. The positive correlation in ICSE board is 0.21 in comparison to .12 of CBSE Board.

- ***Key Words: CBSE, ICSE, Left Hemisphere, Right Hemisphere***

Introduction

Innovative learning and thinking is having highly valued today. All learning exist in the brain. Brain is a composite of grey matter that function as a whole, though its functions are very particular on the basis of left and right hemispheres. All cognitive processes goes through the brain. Cognition means the processing of the information about the environment that is received through the senses. In other words, cognition refers to the processes through which information coming from the senses is transformed, reduced, elaborated, recovered, and used (Ausburn,1978). Learners are intrinsically and extrinsically different and have different preferred learning styles. A style is a skill in particular form for completion of particular task. Student's use their styles to achieve the goal they require, and their learning and thinking is strongly influenced by experiences and other digitized resources. If, therefore, the intention of the student is to go with deep level of understanding of the subject or profession, an environment is to be created by self which supports a deep approach of learning in a variety of ways because everyone perceives and process information according to his potential and attitude. Cognitive abilities or Cognitive capacities, all are brain based like acquisition of information, thinking, reasoning, problem solving, manipulation and decision making may be considered as some of the qualities which differentiates humans from one other. As someone likes to focus on single task and other can perform multi-

tasking. One individual focus on abstract ideas whereas other can focus on concrete ideas. So all humans are different and think differently in different ways. So thinking and learning style of all individuals differ as per attitude and aptitude which they possess. (Williams,1990)

Need and Significance

Academic achievement of a student measures his/her ability of success in gaining and implementing knowledge in achieving career goals up to a certain degree. Thus, the academic achievement is very important in a student's life. It is very important to understand that what are different parameters that affect the academic performance of a child. One of the major factors that impact the academic performance of a student is his/her learning and thinking style. The way a student learns the concept and the way the particular student prospectively thinks about the particular concept plays an important role in his/her academic achievement. The learning and thinking style of an individual can be conceptualized by the biological utilization of brain. A student who uses more of left hemisphere of the brain may have a different learning and thinking style in comparison to a student who is using his right hemisphere or entire brain for learning and thinking. As we know that student who is more towards his/her left hemisphere of the brain will be more logical comparatively. A student having left hemisphere comparatively more active is prone to solve tasks related to logical subjects such as science and mathematics. While a student with higher activation of right hemisphere ensures a student to be more artistic and creative comparatively. A student whose entire brain function as a whole i.e. the left and right hemisphere may be having a right blend of creativity, artistic and logic. The school education system of India also takes care of this learning and thinking style of a student and the evaluation is designed in accordance. Now a days students are equipped with multimedia gadgets and becoming digital users by using gadgets like Cell Phones, Internet, Computers, Print media and Digital applications of android phones. It has become a social problem as they are addicted towards multimedia gadgets and it is affecting their learning and thinking styles. They direct their learning strategies to achieve the grades they require, which is strongly influenced by exposure which they are getting through multimedia, print media and android resources. By using the results of the analysis, the evaluator will be able to design a mechanism that will be more justified and efficient for all the students.

Statement of the Problem

"Effect of learning and thinking style on Academic achievement of CBSE and ICSE Board students using ICT: A Comparative Study"

Operational definition of the terms

1. **Learning and thinking** Style refers to styles of learning and thinking of individual through they learn, think and act accordingly in different environment and different situations.
2. **Academic Achievement** refers to percentage of marks obtained in 10^{th} Examination.
3. **CBSE:** Central Board of Secondary Education is a National Level Board of Education in India. It gives affiliation to school and affiliated schools follow only NCERT curriculum. It has also the responsibility to take examination of board classes.
4. **ICSE:** Indian Certificate of Secondary Education is a private board of school education in India.
5. **ICT:** Information Communication Technology is unified communication and integration of telecommunications, computers as well as multimedia, which students use in their study for content, projects, homework etc.

Objectives of the Study

1. To study relationship between 'learning and thinking style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) students using ICT.
2. To study relationship between 'learning and thinking style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) male students using ICT.
3. To study relationship between 'learning and thinking style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) female students using ICT.
4. To study the effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of CBSE (male/ female board) students using ICT.
5. To study the effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of ICSE (male/ female board) students using ICT.
6. To study the effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) male students using ICT.
7. To study the effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) female students using ICT.

1.11 Hypotheses of the Study

1. H_{01}: There is no significant relationship between 'learning and thinking style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) students using ICT.
2. H_{02}: There is no significant relationship between 'learning and thinking

style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) male students using ICT.

3. H_{03}: There is no significant relationship between 'learning and thinking style' and 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) female students using ICT.
4. H_{04}: There is no significant effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of CBSE (male/ female board) students using ICT.
5. H_{05}: There is no significant effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of ICSE (male/ female board) students using ICT.
6. H_{06}: There is no significant effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) male students using ICT.
7. H_{07}: There is no significant effect of 'learning and thinking style' on 'academic achievement' of (CBSE & ICSE board) female students using ICT.

1.12 Delimitations of the Study

The study was delimited to:

- Secondary School Students: The students who study in 11th Class.
- Academic Achievement of 10th Class: The students scored marks in 10th class final examination and promoted to secondary (11th) class.
- Only Students using ICT in their project work, home work or in their learning upgradation etc. were taken.
- Sample is limited to 800 Secondary Students only.
- Only Govt. of National Capital Territory (NCT) of Delhi was taken.

Research Sample

A sample is a small proportion of the population selected for observation and analysis (Best, 2011). Here the sample consists of Eight hundred students from forty schools of standard XI in Government and Private schools from 600 students from CBSE and 200 students from ICSE Boards of NCT of Delhi.

Table 1.1 Board wise Sample Size

Board	N	%
CBSE	600	75.0
ICSE	200	25.0
Total	800	100.0

Tools used

Following tools were used to collect the data.

- Style of Learning and Thinking (SOLAT) by Venketraman (1989)
- Subjective Information Inventory to collect data (Using ICT Resources)

STATISTICAL TECHNIQUE: Coorelation, t-ratio, ANOVA and Chi Square

Summary of Results

- It is concluded that correlation between learning and thinking style and academic achievement of CBSE & ICSE Board students is very low. However, it is found that left and whole hemisphere of CBSE and ICSE board students are significantly varying from board to board (non significant), so null hypothesis are accepted and in case of right hemisphere CBSE and ICSE board students are not varying from board to board(significant), so null hypothesis are non accepted (rejected).(Reference Objective & Hypothesis No.1)
- It can be concluded that the correlation between learning and thinking style and academic achievement of CBSE & ICSE Board male students is moderate. It is also observed that nearly 4% variation in the academic performance of male respondent is caused by independent variables i.e. learning and thinking style. Whereas, the left hemisphere is having most significant contribution to the academic performance in respect of CBSE & ICSE Board male students. So the null hypothesis in case of left hemisphere is no accepted (rejected) and on right and whole hemisphere there is no significant impact of style of learning and thinking on academic achievement so null hypothesis is accepted.

(Reference Objective & Hypothesis No.2)

- So it is concluded that there is positive correlation between left, right and whole hemisphere and academic achievement of CBSE & ICSE Board female students. On right hemisphere CBSE & ICSE female students are having significant contribution

on academic achievement, So here the null hypothesis is non accepted, While on whole and left hemisphere there is no significant contribution on academic achievement of CBSE and ICSE Board female students, so null hypothesis is accepted. (Reference Objective & Hypothesis No.3)

- It is found that shows that the left hemisphere scores are independent of the board, while the right hemisphere and whole hemisphere is sensitive to the board. Hence, it is concluded that the right and whole hemisphere depends on the type of Board student studying in, while the left-hemisphere is independent of the type of Board.
- It is concluded that left hemisphere scores are independent of the board,while the right hemisphere and whole hemisphere is sensitive to the board. Hence, it is concluded that the right and whole hemisphere depends on the type of Board student studying in, while the left-hemisphere is independent of the type of Board.
- There is a positive relationship between style of learning and thinking and academic achievement in respect of CBSE Board students. But the impact of learning and thinking style is very low on academic performance.

Left hemisphere is significantly impacting the academic achievement of CBSE Board students. (Reference Objectives & Hypotheses No. 4 & 5)

- There is stronger relationship between learning and thinking style and academic achievement of ICSE board students as the correlation value is high. The positive correlation in ICSE board is 0.21 in comparison to .12 of CBSE Board.
- So there is no significant difference between of right and left hemisphere on academic achievement of ICSE Board students, whereas there is significant difference between whole hemisphere and academic achievement of ICSE Board students

Whereas, ICSE board students have significant impact on whole hemisphere with respect to academic achievement.(Reference Objectives & Hypotheses No. 6 & 7)

Educational Implications

The following are some of the Educational Implications of the study.

1. It is very useful to make students aware about their learning and thinking style.
2. It is important for the students to get to know about their brain dominance.
3. Students can choose subjects/courses of their interest when they are promoting in higher education.
4. Students can regulate their cognitive development according to their brain dominance.
5. Student's academic potential according to their brain dominance can be channelized

References

1. **Aggarwal, J.C. (2004).** History of Modern Indian Education. (5th ed.), New Delhi: Vikas Publishing House.
2. **Aggarwal, K. (1966).** Statistical Methods Concept, Application and Computation. New Delhi: Sterling Publishers, Green Park Extension.
3. **Andrew, D., Pheiffer, G., Green, M., & Holley, D. (2002).** The use of learning styles: beyond the matching hypotheses.
4. **Annie Isaballa, (2004).** Academic achievement of the B.Ed student teachers in relation to their socio-economic status. Indian Educational Abstracts, 7(1), pg.16-18.
5. **Chauhan, (2004).** Learning - styles of high school students in the context of their adjustment, extroversion and introversion. Indian Educational Abstracts 19, 3(2), pg. 67-70.
6. **Crean, William (2012).** Leadership capacity in California elementary title I academic achievement award schools. Dissertation Abstracts International, 8(1), 1203-A.
7. **Humera, (2015).** A study of hemispheric dominance and Mathematics achievement of Xth standard students of Aurangabad city. Research Journal Humanities and Social Sciences, 5(12), 176-179.
8. **Pandey, K.P., (1988).** Advanced Educational Psychology. New Delhi. Konark Publishers.
9. **Pannu, (2013).** Academic achievement in relation to cognitive styles, Location and gender of adolescent students. Edutracks, 12(5), pg.33-38.
10. **Parvinder Singh, (2016).** Study of Academic achievement in mathematics in relation to brain hemispheric dominance. Research and Reflections on Education, 8(4), pg.17-23.
11. **Yadav, (2013).** Academic achievement among high and low parental encouragement group of students. Research and Reflections on Education, 10(9), pg.13-17.

1. Assistant Professor District Institute of Education and Training(NE) Bhola Nath Nagar, Shahdara Email: shinambatra@gmail.com
2. Assistant Professor District Institute of Education and Training(NE) Bhola Nath Nagar, Shahdara Email: sktet2010@gmail.com

Research Article

Saiva Dharma as Depicted in the Icons of Kumaun Himalaya

–Madan Mohan Joshi,

The description of different forms of Siva can be seen in Puranas and in the other religious literatures. On the archaeological and literary basis, it can be said that Siva is mostly worshipped in his linga form. Linga-Puja is mentioned in Rigveda also. Linga-Puja continuously prevailed during historical period. Apart from lingas, the other icons of Siva were also sculptured during the historical period. These icons depict the different forms of Siva.

Abstract

Saiva dharma was a popular and practicing dharma in Kumaun Himalayas since 2nd BCE as per the archaeological evidences. There were two reasons for this popularity; one was the inclination of the local ruler towards the Saiva dharma and the other was Lord Siva Himself being a resident of the Himalayas. Local kings throughout the historical times not only given patronage to this religion but also adopted the various names related to Lord Siva. Many icons related to Saiva dharma are found here, Saiva worship was done mainly in the form of *lingas*. These *lingas* are made according to the prescribed norms of religious scriptures. Sources related to Saiva religion are found in the religious places, museums, libraries etc.Different types of *lingas* and statues are discussed in the present study. Some statues are also special in context of Indian Art.

KEY WORDS: Shiva dharma, lingas, icons, Kumaun Himalaya, kuninda coins

Introduction

Present state of Uttarakhand is situated between 28^0 44' & $31^0$25' north latitude and $77^0$45' & $81^0$1' east longitude. 80% of this area is mountainous. Uttarakhand state is divided into two commissionerate namely Kumaun and Garwal, mythologically which are named *Manasakhand* and *Kedarakhand*.

Dev bhoomi Uttarakhand has been a sacred place in respect of religion since time immemorial.

Temples associated with different Gods and Goddesses and *Ashramas* and *Mathas* associated with different Saints and Seers were present here in the past. Saiva dharma is considered to be the oldest religion in the World. As far as Uttarakhand is concerned, the numismatic sources trace back the presence of Saiva dharma till 2nd century BCE (Joshi 1989). Presence of Saiva temples is found from 7th century CE onwards (Tiwari 1982). In the 8th Century CE Adi Guru Shankaracharya founded four *Mathas* in four directions of India; his *Samadhi* (burial) is situated in Kedarnath premises in Uttarakhand.

Some ancient rulers of Uttarakhand have also shown their respect for Saiva dharma. Katyuri king Bhudeo Deo's Bageshwar temple rock edict (Princep 1938) of 9th century CE shows his affection to *Saiva dharma* and animosity towards Buddhism. There is hearsay about the Katyuri Kings that they ate food only after making a temple from dawn to dusk. Perhaps this is why maximum number of temples in Uttarakhand is associated with Katyuri period (8th century CE to 12th century CE). Majority of *Saiva* temples of historical period are situated on the slopes of Shivalik ranges or valleys or near Hindu cremation grounds.

Manasakhand (Ed. Gopal Datt 2007) and *Kedarakhand*(Maheshanand 1910) of *Skanda Purana* shed ample light on many *Saiva* temples of Uttarakhand. In *Manasakhand* description of *Vyaghreshwar* (Bageshwar) temple is found. It is said that this temple is situated on the confluence of Saryu and Gomati rivers. This temple is located in Bageshwar city. Presently the main temple *Vyaghreshwa* is found made in *Fasana* style and many other smaller temples are also found. Mention of famous *Jageshwar* temple is also found in *Manasakhand. Jageshwar* temple is situated 3 kilometer from *Artola* situated on the Almora-Danya-Pithoragarh motor road, 30 kilometer from Almora. Presently group of *Jageshwar* temples consist of about 21 small and big temples which are dated between 8th century CE to 12th century CE. Among important temples, *Jagnath* temple, *Mrityunjaya* temple, *Pushti Devi* temple, *Nava Devi* temple, *Chandika* temple, *Baleshwar* temple, *Kedara* temple, *Lakulisa* temples are included. On the walls of *Mrityunjaya* temple, *Panchaliga* temple and small *Siva* temple inscriptions in Brhami script of 8th century CE are found. These inscriptions clearly mention that pilgrims from *Purvi desa* (here Eastern India) used to visit this place to pay their homage.

Like other parts of India, *Saiva dharma* was also a popular and practicing dharma in Uttarakhand. There were two reasons for this popularity; one was the special inclination of the local ruler towards the Saiva dharma and the

other was Lord Siva Himself being a resident of the Himalayas. The study of *Manasakhand* and *Kedarakhand* shows that the grace of lord Siva is in every part of Uttarakhand.

In *Manasakhand* the whole of Kumaun is divided in to 20 peaks along with different valleys. Different places of this area are associated with different Gods and holy places. Some of them are *Jageshwar, Bageshwar, Baijnath, Patal Bhuvaneshwar* etc. In *Kedarakhand* five special places associated with lord Siva are mentioned as *pancha kedaras – Kedarnath, Madmaheshwar, Tungnath, Rudranath* and *Kalpnath* which are situated between the heights of 8,000 feet to 12,000 feet.

AREA OF STUDY

There are six districts in Kumaun Himalayas, namely Almora, Bageshwar, Pithoragarh, Champawat, Nainital and Udham Singh Nagar. In these districts Siva temples are mainly found in the valleys or the near Hindu cremation grounds. Saiva icons are either found in these temples or are found conserved in different museums in these districts. State or central archaeological departments have also made museums at various temple groups of Kumaun. Such museums can be seen at *Jageshwar, Bageshwar, Baijnath, Champawat* etc.

METHODOLOGY

For the study of Saiva icons, various temples and museums were visited and icons were studied, many libraries were also consulted and religious scriptures specially *Agam* literature and Vishnu Dharmottar Puran, Brahmand Puran, Markandya Puran,Matsya Puran, Rigved etc were consulted for iconographic features. Development of Hindu Iconography by J.N Benerjea and Elements of Hindu Iconography by Rao were also very useful.

SOURCES

Religious scriptures throw ample light on the pious places associated with lord Siva in Uttarakhand. Archaeologically the worship of lord Siva can be traced back at least till 2nd century BCE, when the Kunindas were ruling in this area. In the obverse of *Chatreshwar* type of Kuninda coins (Joshi 1989) an inscription *'Bhagwat Chatreshwar Mahatman'* is found inscribed. It is said that once in 3rd century CE Kunindas had dedicated their Empire to lord Siva (Joshi 1989). In *Chatreshwar* type of coins a male figure with two hands having *parashu-trishula* (halberd-trident) is found, this figure is related with

lord Siva (Joshi 1989). In *Almora* type of kuninda coins, many rulers' names like- *Shivadatt, Hardatt, Shivapalita, Shivarakshita*- are found, these names establish *Shiva* worship in Uttarakhand during Kuninda period.

After the Kuninda rulers, the traces of worship of lord *Siva* are found in the inscriptions, edicts, temples, icons etc. Many rock edicts, copper plate grants and temples of Katyuri rulers clearly show their faith in *Saiva* religion. After the Katyuri rulers, Chanda rulers and Panwar rulers also showed their devoutness towards *Shiva* dharma and made many temples and icons related with *Saiva* religion.

SAIVA ICONS

The description of different forms of *Siva* can be seen in *Puranas* and in the other religious literatures. On the archaeological and literary basis, it can be said that *Siva* is mostly worshipped in his *linga* form. *Linga-Puja* is mentioned in *Rigveda* also. *Linga-Puja* continuously prevailed during historical period. Apart from *lingas*, the other icons of *Siva* were also sculptured during the historical period. These icons depict the different forms of *Siva*.

LINGAS

On the basis of *Saivagamas*, different kind of *linga*s are described (RAO 1916:II,75-99). The *Makutagama* classifies the *Sthir lingas* into four classes, the *Daivika*, the *Arasaka*, the *Ganapa* and the *Manusa*, whereas the *Kamikagama* groups them under six heads the *Svayambhav*, the *Daivika*, the *Arsaka,* the *Ganapatya,* the *Manusa* and the *Banalinga*.

The *manusa lingas* are grouped under various heads on the basis of different criteria. One method is based on the measurement of the three sections of the emblems, the names varying as their proportions differ: some of these names are *Sarvasama, Vardhmana, Swastika, Sarvadesika, Trairsika* etc. *Sivalingas* are distinguished by the names as *Dharlinga, Astottaralinga* or *Sahastralinga* chiefly on the basis of the different ways of modeling their *Rudrabhaga*. Among *Manusa lingas,* some common *lingas, Sahastralingas, Mukhalingas* have been found in Almora. *Siva lingas* found at *Adityathan (Lamgara*), *Neelachaura* and *Sitoli* (*Katyur Ghati)* are very important. The emblems of *ashthakamal* are marked on its uppermost part (*Rudrabhag*). Apart from these, *Sahastralingas* have been found at *Jageshwar, Bageshwar, Baijnath, Khoont* etc.

MUKHA LINGAS

Mukhalingas are another class of *Manusalin*gas. They contain one or more human faces on their *Rudra* or *Puja-Bhags.* According to *Karanagama*, the face should be 13.5 angulas in length, and the number of faces should be 5, 4, 3 or 1 (Benerjea 1974: 460). Some *Mukhalingas* have been found at Almora district also. The *ekamukha* type of linga found at *Almora* consists of third eye placed on the centre of the forehead, *Jatajute, Karnakundal* and has worn the garland. The *Ekmukha* lingas found at *Jageshwar, Bageshwar, Gananath, Narayankali* etc. are also well made.

A *Chaturmukhi Linga* is found at the *garbhagraha* of *Pashupatinath Temple* (Survey report 1981-82-83:15). The height of this *Linga* is 33 cm. and its circumference is about 88 cm. According to *Shivagamas*, the *Vishnu Bhag* of this *linga* is octangular and its *Rudrabhag* is cylindrical. Its *Rudrabhag* exhibits four faces of *Siva*. The face on the western direction is of *Sadyojat*, on northern direction is of *Vamdeva,* in southern direction, it is of *Aghora* and on the eastern direction, it is of *Tatpurush*. A *Chaturmukhi Linga* found at *Bageshwar* resembles this icon. Besides *Chaturmukhi Linga, a Panchmukhi Linga* is also found at *Bageshwar*. This *linga* possesses some special features like *Jatajut, Kanthahar, Karnakundal* and long *dhoti* are worth mentioning. Its four faces are sculptured in all the four directions and the fifth face is directed towards the sky or the *Ishana Kona*.

SIVA TRIMURTIS

Rao has described these *tri-murthis* as *Mahesh murtis* and has linked its three faces with that of the generation, protection and destruction activities of *Siva* (RAO 1916: II ; 382- 85). Stella Kramrisch appears to have accepted Rao's identification though she described it as "*the Mahadeva of Elephanta Island with dvarpalas",* the central, right and left faces were named by her as *Tatpurusa, Vamadeva* and *Aghora* respectively (Ancient India, NO. II ;1946, PP.4-8).Some *Siva-Trimurtis* have been found at *Jageshwar, Bageshwar, Kapileshwar, Bamansuyal* etc. of *Almora* district.

SIVA DAKSHINA MURTIS

The description of *Dakshinamurtis* has been given in *Saivgamas* and *Shastras*. Rao has given the reason of calling these *murthis* as *Dakshinamurties* because *Siva* was seated, facing Southward when he taught the sages *Yoga* and *Gyana*, that is why he came to be known as *Dakshinamurtis* (Rao 1916: II .278). Moreover, he pointed out that *Dakshinamurti* is viewed in four ditferent aspects i.e as a teacher of *Yoga*, of *Gyana*, of *Vina* and also an exponent of other *Sastras* (also called *Vyakhyana Dakshinamurti*). The dancing images of this God may also be grouped under this head, for as, 'the king of dancers' (*Nataraj*), He was the greatest exponent of the science and art of dancing (Banerjea 1974: 470).

The *Vyakhyana Dakshinamurti* found at *Dunagiri* temple of *Dwarahat is* important. This *Dakshinamurti* has got four arms and is sitting on bull with His face in the South direction. The two-armed *Uma* is sitting on His left leg. *Uma* and *Siva*, both are wearing *Kundala, Kanthahar, Bajubandh, Kangan,* etc. *Ganesha* is shown as sitting on the right side of this statue while *Kartikeya* is shown as sitting on the left side and *Bhringi* is shown sitting in the midst of these two. From artistic point of view, this *murti* seems to have been sculptured during 9th-10th century. Other important sculptures of this kind are found at *Jageshwar, Baijnath, Dwarahat, Chauna, Narayankali* etc. The special features of *Dakshinamurtis* found in *Almora* are that *Siva* is always shown with *Uma* in every *Dakshinamurti* and that is why, they are also called "*Uma Sahit Vyakhyana Dakshinamurtis"*.

VEENADHAR SIVA MURTIS

As a great teacher of music. both, instrumental and vocal, *Siva* is worshipped in the form of *Vinadhara dakshinamurtis.* The description of this kind of *Sivamurtis* is given in Kamikagam, the *Amsumedhagam* and in *Karanagam*. The *Amsumedhagama* states that the left leg should be kept in the *Utkutika* posture and the two front hands should hold the *Veena*; the rest should be exactly similar to the description of *Vyakhyanamurti*. According to *Kamikagam*, the *Veena- Dakshinamurtis* should have His front right and left hands held in the *Kataka* pose, the former with its palm facing below and the latter facing above. The left arm should be lifted up and the right arm should be lowered below, so as to hold in proper position the long handled musical instrument *veena.* The *veena* should be held at the top by the left hand and by the right hand at the lower end. The resonating body of the instrument

should rest on the right thigh. The lower right hand should be manipulating the strings of the instrument. The *Veenadharmurtis* found in *Kumaun* resembles those of North India. In some of these icons, *Siva* is sculptured with His whole family while in others; He is sculptured all alone sitting on *Nandi.* These kind of *Murtis* have been found at *Sitoli* (Hemraj 1984-85:13) and at *Gananath* (Tiwari 1985:49). The icon found at *Sitoli* is of *Siva* sitting on a bull in *Sukhasana Mudra*. He has four arms out of which, the front two hands carry *veena* while the hands at the back are broken. This icon is 30 cm. in height and 17 cm. wide. In this icon *Siva* is wearing something like a *Dhoti* and has worn ornaments. According to Hemraj, this icon seems to have been sculptured in ninth century (Hemraj -1984-85: 13).

NATRAJ MURTIS

In *Shivagamas*, *Siva* is named as *Natraj, Nateshwar* i.e. the king of dancers. The dancing images of *Siva* have also been grouped under *Dakshinamurti,* for as, "the king of the dancers (*Natraj*)", He was the greatest exponent of the science and the art of dancing (Benerjea 1974:470). In the ancient times, *Nataraj* was recognized more in South India in comparison to North India. The four armed *Siva* found at *Nachna Kuthar* is the oldest *Nataraj* found in North India. This *Nataraj* belongs to Gupta period (Agarwal 1960-61:28-29). In this context some *NatarajMurtis* have been found in *Almora* also. In *Almora* district, *Nataraj* has been found in the *Kapileshwar* temple of village *Simulti* (Survey report 1981-82-83:29-30). In this *murti*, four armed *Siva* seems to be enjoying His dance because He is shown in *Prasanna Mudra*. His front left hand seems to be in *Gajhasta Mudra* while His right hand seems to be in *Sandesh Mudra*. His right hand at the back holds *Khatvanga* and His left hand at the back holds a *sarpa*. His third eye is placed at the centre of his forehead. He seems to be wearing *Kundala* in His ears, *Ekavali* in His neck. On the basis of the dating of the temple, this icon seems to have been sculptured during seventh century A.D. It seems to be the most beautiful and the oldest *Nataraj Murti* of whole Uttarakhand. The other two *Nataraj Murtis* have also been found at *Kapileshwar.* Apart from this, the *Nataraj Murti* found at *Jageshwar* is also very well made.

UMA-MAHESHWAR MURTIS

We get the description of such murtis in *Visnudharmottar Purana* (105.8;105.61); *Srimadbhagwat* (6.17.4) and *Rupamandan* (35.16.20). In *Uma-Maheshwar Murtis, Parvati* is usually shown seated on the left thigh

of *Siva* who is caressing her with one of His hands. Their respective mounts, a bull and a lion, are carved on the Pedastal, on who rest their two legs. Benerjea associates the icon of Eastern India with the prevalence of *Saktism* in the region. By giving the example of *Saundaryalahari*, Benerjea says that the tantric worshippers of *Tripurasundari* (another name of *Uma* or *Parvati*) are required to meditate on the *devi* as seated on the lap of *Siva* (Benerjea 1974:469).

On the basis of "*Anshumedhagama*", Rao divides these kinds of *murtis* into three parts i.e *Chandrashekhar Murti, Uma sahit Chandrashekhar Murtis* and *Alingan Chandrashekhar Murtis*. In *Uma sahit Murtis, Siva* is either carved as standing beside *Uma* or is shown as if He is embracing *Uma*. Though these poses have been mentioned in religious books but its iconography has not been described in any of these books.

In *Almora, Uma-Maheshwar Murtis* are found in greatest number in comparison to other *Shaiv murtis.* The *Uma-Maheshwar* found at *Siman* of *Chausala* village is worth mentioning in this case (Survey report 1980-81 :23). Its height is of 48 cm while its width is of 28 cm. In this *murti,* four armed *Mahesh* has been carved in *Lalitasana* pose. His right leg is kept on Pedastal while left leg is bent on His seat. Two armed *Uma* seems to be sitting on His bent leg. Her both the legs are kept on two different pedestals. *Mahesha's* right hand is in *Vyakhyana Mudra* while His left hand seems to be embracing *Uma.* He holds a lotus in front right hand and a *trishul* in His left hand. *Uma* has kept Her right hand on the bent leg of *Siva* while Her left hand has broken. *Maheswar* seems to be wearing the ornaments like *Jatamukut, Kundal, Haar, Keyur, Vanmala, Kankan. Naag* seems to be coming out of his *jatas* and *Prabhamandal* is embellished on the back of His head. Even *Uma* is ornamented with *Mukut, Haar, Ekavali, Katisutra, Mekhala* etc. *Uma's* ruffling *sari* and her sitting *mudra* are the most attractive features of this icon. The mount *Nandi* and lion of *Mahesh* and *Uma* respectively are carved on *Asana-Pithika*. Even the God *Ganesha, Bhringi* and *Kartikeya* along with two other people are carved on the *Asana- Pithika.*

LAKULISA MURTIS

According to *Vayu Purana* (23.205-09) and *Linga Purana* (24.129), *Lakulisa* was the 28th Incarnation of *Siva. Lakulisa murtis* have been found at different temples of *Almora*. Two armed *Lakulisa* of *Kapileshwar* is carved in *yogasana* pose. His right hand is in *Abhaya Mudra* while left hand holds

a *danda*. He has worn *Ekavali* in His neck, *Kundal* in His ears. On the basis of the dating of temple, this *murti* seems to have been sculptured during 7th Century A.D. The two armed *Lakulisa* of *Someshwar* holds the *akshmala* and *Lakut* in His one hand while holds *matulinga* in his other hand. *Lakulisa* sitting on *padmasana* is ornamented by *Karn-Kundal, Kanthhar, Bajubandh* etc. In this *murti* also, the emblem of *Srivatsa* is carved on his chest and contain *chakras* on the sole of his feet. These signs represent the influence of jainism. Apart from this *murti,* some *Lakulisa murtis* are found at *Jageshwar* and *Bamansuyal.*

FINDINGS

Traces of *Saiv* religion in Kumaun Himalayas are found since 2nd century BCE. **Saiva** religion was adopted and given patronage by the local rulers throughout the historical period. It was perhaps the largest practicing religion in Kumaun area in ancient times. *Saiv* worship was done mainly in the form of *linga puja*, thus different types of *lingas* are found here. These *lingas* are made according to the prescribed rules of religious scriptures. Many icons and statues were built in this period, some of which were discussed in this article. Some icons like *Neelkanth, Ravananugraha* and *Keval Murti* are unique in respect of Indian art.

Acknowledgement

The author acknowledges Uttarakhand Open University, Haldwani and in-charge of various museums and libraries of Kumaun for the support extended during this work.

References

1. Basham, 1972 : Adbhuta Bharat, Sivalal Agarwal and Company, Agra.
2. Benerjea, J.N., 1960 : Journal of the Numismatic Society of India Vol. XXII, p. 45.
3. Benerjea, J.N., 1974 : Development of Hindu Iconography, Ist edition 1956, Calcutta, IIIrd edition Munsi ram Manoharlal, Delhi.
4. Brahat Samhita : Shri Venktesh Mudranalay Mumbai.
5. Chanda, R.P., 1927 : The beginning of Art in India with special reference to Sculpture in Indian Museam Calcutta.
6. Hemraj, 1984-85 : Katyur Ghati ka Purattatvik Sarvekshan, Lucknow.
7. Joshi.M.M. : Uttarakand mein Shiva Dharma avam Shiva Dharma-Sthalon ka
8. Adhyayan, Journal of Uttarakhand Academy of Administration
9. Nainital(JUAAN),a peer reviewed Journal,2020, ISSN No-2582- 5798
10. Joshi, M.P. 1984 : The Kunindas : A Numismatic study, D. Litt Disertation, Magadh

University, Bodh Gaya.

11. Joshi, M.P.1986 : Siva the Auspicious as Depicted in some Kumauni Sculpture, Dimensions of Indian Art, Pupul Jayakar Seventy, Vol. I, II, Agam Kala Prakashan, Delhi.
12. Joshi, M.P.1989 : Morphogenesis of Kunindas (circa 200 B.C. -- A.D. 300): A Numismatic Overview. Shree Almora Book Depot, Almora.
13. Kramrisch, Stella, 1933 : Indian Sculpture, Calcutta.
14. Rao, 1916 : Elements of Hindu Iconography, Indological Book house, Varanasi.
15. Rupamandan : Ed. Dr. Balram Shrivastava, Varanasi.
16. Sanaskritayayan, R. 2015 : Himalay Parichay, Law Journal press, Allahabad.
17. Kramrisch, Stella, 1933 : Indian Sculpture, Calcutta.
18. Shrivastav, B.N., 1977 : Sangrahalaya Purattatva Patrika- June- Dec., 1977 p. 2-3.
19. Srimad Bhagwat : Pt. Ramtej Pandey Chaukhamba Sanskrit Pratisthan, Dehli.
20. Survey Report 1981-82-83 : Parvatiya Purattatva Ikai, Almora.
21. Tewari, D.N., 1985 : Kumaun Ki Dev Pratimayen, Almora.
22. Tewari, R., 1981 : Jageshwar, Dharmyug- 3-9 May, 1981.
23. Vishnu Dharmottar Puran : Ed. Prya Bala Shah, Baroda.
24. Brahmand Puran : Shri Khesmraj Sri Krishanda Sen Nag Publishers, Delhi.
25. Markandya Puran : Gauri Nath Shastri, Sitapur.
26. Matsya Puran : Hindi Sahitya Sammelan Paryag.
27. Rigved : Shri Venktesh Mudranalay Mumbai.
28. Photo Courtesy: Regional Archaeological Unit, Almora

---

1. Associate Professor of History, Dept. of History Uttarakhand Open University, Behind Transport Nagar, Haldwani-263139.Uttarakhand, India

Research Article

Thundering Sounds of Silence in Nature

–Nikita kumawat
–Ashok Singh Rao

In literature, Nature has an imminent function and integral relationship between literature and environment. Literature can not be flourished without using the natural aspects such as place, landscape, weather, seasons, flora and fauna.

Abstract

Nature appears to humans as aphonic, but it is a great illusion of homo sapiens. It might be true that Nature doesn't use dialogues for communication, still the question arises that is language the only medium to communicate? Silence is another way to communicate with natural forces. The silence of Nature sounds vigorous, humans are destroying every aspect of the mother Earth but human species need to consider that Nature strikes back in her own ways and the whole entity has to suffer its consequences. The present study calls attention to the correlation between silence, Nature and humans which shares a common ground for existence. Along with that this study focuses on how silence works as a literary device in literature and what are the messages provided by silence to humans. The silence of Nature conveys thundering pieces of information that humans need to acknowledge them. Present study analyzes the role of silence as well as Nature in literature and how Nature is the integral part of literary works. Present study gives the glimpse of ecocritical theory where the thought process of Wordsworth and Coleridge about silence are analyzed. This study focuses on how humans can listen to the silence of Nature and how Nature gives peace and silence of mind. The mother Earth is principled, committed, devoted, time-perfect and selfless which promotes beauty, art and the origin of discipline in all the elements of the universe. Therefore, definitely every natural aspect deserves love, care and respect from humans.

Silence, Nature and Humans

Human beings are convinced that only humans are able to speak and to hear the voices but the bitter truth is that humans don't want to listen to the silence of the universe that conveys tremendous voices. Humans made the surrounding rowdy with the thundering sounds of machines, loudspeakers, beeps, aeroplanes, lawnmowers and sirens. The sound of progress has deafened homo sapiens. Therefore, humans are not able to listen to the silences of natural phenomena. Human beings no longer love or respect Nature, they only love their selfish needs. For humans, Nature is mute and has nothing to communicate thus natural entities are treated as an object. This thought must be stamped out that Nature and natural specieses are mere things. Though Nature does not use language to convey her message, definitely Nature silently speaks and teaches life living lessons which humans need to understand. Salome Voegelin beautifully quoted that "silence is not the absence of sounds but the beginning of listening. This is listening as a generative process not of noises external to me, but from inside, from the body where my subjectivity is at the centre of the sound production, audible to myself. Silence reveals to me my own sounds"(Voegelin 83). It is a fact that homo sapiens are treating Nature inhumanly and destroying every aspect of Nature through their anthropogenic activities. Humans are forgetting that Nature is the integral part of mankind and it's their moral duty is to protect Nature. Many artists, authors and poets are inspired from the natural environment and portray environmental aspects in their arts. Some artists portray the beautiful side of the environment whereas some authors delineate the dark sides of Nature where human beings are interrupting the natural cycle of the universe. As David Abraham suggested in his book *The Spell of the Sensuous,* that Nature speaks and humans need to learn to listen. The silence of Nature is internal. If humans want to listen to the voices of Nature and to experience the divinity of the universe then the only way is to feel the silence of Nature and to focus on the changes that are happening around the surrounding. Nature responds in various ways like wildfires, global warming, rising sea levels, heatwaves, changing weather patterns, floods and droughts. Christopher Manes in his essay *Nature and Silence* quoted about the utterance of Nature that "animals, plants and even "inert" entities such as stones and rivers are perceived as being articulate and at times intelligible subjects, able to communicate and interact with humans for good or ill. In addition to human language, there is also the language of birds, the wind, earthworms, wolves and waterfalls – a world of autonomous speakers whose intentions (especially for hunter-

gatherer peoples) one ignores at one's peril"(Manes 15).

Silence as a Literary Device

Silence is a universal form to converse with the natural world. A literary silence can provide a variety of purposes in English literature. Silence as a literary device is a distinct approach that transfers profound meanings beyond what is physical which puts a special impact on writings. Silence binds her readers with a strong bond to help them to reach a deeper meaning that has been conveyed through literary texts. Silence is an imposed stage of speechlessness but it can design a tragic or comic surrounding to bring out the miserable, pessimistic, generous and cheerful emotions. Silence is not about the non-appearance of the words in spite of that silence channelizes the profound meanings. By listening to the sounds of silence one can set his motions to see the world with a brand new radiance. There is no exaggeration in phrasing that silence is the strapping literary device as any other owing to the fact that silence has power to express the unspoken notions in a highly expressive manner.

Silence in Nature

A famous musician and naturalist Bernie Krause researched on the unseen world of animals and he unveiled that the beauty and complexity of animal utterance has been affected by human anthropogenic activities. He noted in his book *The Great Animal Orchestra: Finding the Origins of Music in the World's Wild Places* that "a great silence is spreading over the natural world even as the sound of man is becoming deafening"(Krause). The most mysterious path to interconnect with Nature is silence. In spite of that humans anthropocentric activities are exploiting every natural thing. As Bernie Krause mentioned that "if you listen to a damaged soundscape … the community [of life] has been altered, and organisms have been destroyed, lost their habitat or been left to re-establish their places in the spectrum. As a result some voices are gone entirely, while others aggressively compete to establish a new place in the increasingly disjointed chorus"(Krause).

Human and Nature Relationship

Human and Nature have an intimate relationship from the beginning of the human world. Humans are always supported by Nature for their survival. The air to breathe, water, shelter, energy and all the survival needs of human beings are provided by Nature but what humans give back to Nature is that

population, pollution, soil erosion, deforestation and depletion of natural resources. Therefore, Nature is in great danger and humans exploitative activities are responsible for the environmental degradation. The undesirable ecological calamities are threatening the whole existence. It is a dark truth that humans are not able to communicate with natural phenomena. Humans need to change their behaviour towards Nature and to harmonise with mother Earth so that humans may be able to converse with the mother Earth. Silence allows humans to understand the Nature vibes without verbal communication.

Literature and Environment

In literature, Nature has an imminent function and integral relationship between literature and environment. Literature can not be flourished without using the natural aspects such as place, landscape, weather, seasons, flora and fauna. These relationships have been interpreted by many writers and poets from a long time when Iliad, Virgil, Homar and Milton used Nature as a primary subject till today where authors are warning to conserve the mother Earth throughout various cultures across the world because the themes of Nature have been accustomed. Nature is the place of peace where many poets, essayists and novelists use environmental themes to present the human sentiments that may be tragic or comic aspects in the works of literature. Somewhere Nature is presented as a living character or somewhere it functions as a background theme with symbolic meaning. The presence of Nature develops a deeper appreciation in characters.

Nature in literature

The relationship between Nature and literature is symbiotic that is being interpreted through ecocritical studies. The term "Ecocriticism" is tremendously adopted to elucidate the interrelation between Nature and literature. The thought of interpreting literature and Nature on the same ground was organised by Joseph Meeker in his work *The Comedy of Survival: Studies in Literary Ecology* (1972) as a philosophy called "Literary Ecology". Later in 1978, the expression "Ecocriticism" was stamped out by William Rueckert in his well known essay *Literature and Ecology: An Experiment in Ecocriticism*. Ecocriticism is a vast term that is also known as "Green Studies", "Environmental Literary Criticism", "Ecopoetics", "Ecocritical Studies" and "Environmentalism". Ecocriticism involves various areas of knowledge, where many artists, poets, authors, researchers and ecocritics analyse the work of art on the matter of environmental issues to find out

possible solutions for environmental crises and to spread eco-consciousness among the masses.

Wordsworth and Coleridge Beliefs About Silence of Nature

Many authors celebrate the silence of Nature and believe that silence is the best way to converse with Nature. Romantic poets embodied upon to perceive the inaudible sounds and silence of Nature despite the serenity of the atmosphere. William Wordsworth known as the 'Priest of Nature' was among the prominent writers who believed that silence is a different form of articulation. As he mentioned in the opening line of *Tintern Abbey* that the soundscapes become the matter of a subjective internal listening of external sounds. Romantic poets are of the opinion that the sounds of Nature can be heard through the ears of the mind because the bodily ears are limited to hear the external sounds of the universe. In *Ode: Intimations of Immortality,* Wordsworth contemplate the natural world by recalling the sounds of calm weather, water and the sounds of immortal sea:

> Hence in the season of calm weather,
> Though inland far we be,
> Our souls have sight of that immortal sea,
> Which brought us hither,
> Can in a moment travel thither,
> And see the children sport upon the shore,
> And hear the mighty waters rolling evermore(Ode: Intimations of Immortality).

Samuel Tailer Coleridge postulated that the eighteenth century industrial revolution, mechanization, wars, social and economic changes have spread all over the world that proceed humans far from their inner soul. So it's the responsibility of artists to lead people back to their souls and to depict reality by stumbling on unseen and unheard conceptions of the world. The soul purposefully allows the heart to hear the mysterious voice of Nature, as Samuel Tailer Coleridge acknowledged in *Reflections on Having Left a Place of Retirement* that:

> Such, sweet girl!
> The unobtrusive song of Happiness,
> Unearthly minstrelsy! then only heard
> When the soul seeks to hear; when all is hush'd,
> And the heart listens!

Along with Coleridge and Wordsworth, other romantic poets such as Purcy Busscie Shelley and Keats who celebrated the silence of Nature and were able to communicate with the natural phenomenon.

The Revanges of Nature

In the twentieth first century humans are obsessed with modern science and technology. Therefore, humans are not understanding the voices of the atmosphere that Nature wants to convey to human beings. Human anthropocentric activities have destroyed the natural cycle of the universe. Each part of the world has been touched by humans and has been dominated. The healthy environment has been degraded by destroying natural resources, pollution, combustion of fossil fuels, deforestation, use of pesticides, combustion in power plants and nuclear testing that are resulting the extinction of wildlife, habitat destruction, decline in biodiversity, climate change, ozone depletion, acidification, land degradation, irrigation and coral reef decline. All above the crisis happens because humans do not take themselves as a part of Nature, he considered himself superior to Nature. Therefore, humans consider that they have power to rule the world. Basically homo sapiens interprets that Nature can be trained by human hands, but humans are forgetting that Nature has vigorous weapons to strike back against human domination over Nature which includes some weather events such as floods, hurricanes, wildfires, cyclones, droughts or some biological weapons like plague, Ebola, yellow fever, MERS, SARS and COVID. So it is clear that Nature's struggle against human actions is not quite.

Conclusion

In conclusion, it can be said that silence is another way to communicate with natural entities. If the human species goes into a deeper thought process about the natural changes that are happening around them, then definitely they will be able to listen to the silence of Nature. As Scott Friskics in his essay *Dialogical Relations with Nature* claims that Nature speaks but humans are not able to listen. He writes "that they present themselves and disclose their presence as speech, is an insight shared among poets, philosophers, and religious thinkers alike"(Friskics 394). Silence in literature works as a literary device which finds out the hidden information behind silence. The "sounds of silence" simply means that humans must go into the lap of Nature, only then they will be able to feel and sensitize the demands of Nature. People must not forget that Nature is the best teacher in the world that can teach various

things to humans and every aspect of Nature provides a particular message for a better living. In Nature everything has a prime purpose. Every single aspect of Nature such as the moon, stars, mountains, ocean, hills, rivers, animals, sky and rain provides life lessons to human beings. Though natural phenomena being attacked by humans still Nature stays in peace, which denotes that Nature has an endless amount of patience. Therefore, humans must not forget the moral duties towards natural phenomena.

References

1. Friskics, Scott. "Dialogical Relations with Nature", *Environmental Ethics* 23:(2001) 391–410.
2. Krause, Bernie. *The Great Animal Orchestra: Finding the Origins of Music in the World's Wild Places*. New York: Little, Brown, 2012. Print.
3. Manes, Christopher. "Nature and Silence." *Environmental Ethics* 14(1992):339-350.
4. Voegelin, S. *Listening to Noises and Silence: Towards a Philosophy of Sound Art*. Newyork: Bloomsbury Academic, 2010.
5. Wordsworth, William, Marjorie Firth, and Mark L. Reed. *Ode on Intimations of Immortality: From Recollections of Early Childhood, and Six Sonnets.* , 1928. Print.

---

1. Research scholar, Mody University of Science and Technology, Sikar Email: nikitaganeri@gmail.com Contact: 7378183798
2. Mody University of Science and Technology, Sikar Email: asrao1975@rediffmail.com

Overcrowding by Political Parties in General Elections in India

–Bipin Kumar Thakur

Political parties have immensely contributed in the growth of the parliamentary democracy in India. From being 53 in the first General Election (1951-52), it has grown to 671during the seventeenth General Election (2019) depicting a twelvefold increase in their number. But this is also true that they have created overcrowding in the general elections. They presently are grappling with numerous issues raising serious questions about their credibility, role and the very existence. The present study investigates the phenomenon of overcrowding by political parties."

Although the framers of the Constitution of India did not provide much importance to the concept of political parties, they were keen in building a healthy party system contributing towards strengthening the institutions of democracy; integration and nation-building.

Periodic regular elections based upon the principles of universal adult suffrage without any qualification of sex, property, taxation, or the like for elections to the Lok Sabha, the State Assemblies, and at local levels are held under the supervision, control and direction of an independent Constitutional body to elect people's representatives for the democratic governance of the country. Political parties' role remains crucial in formation of a responsible, accountable and result-outcome oriented Executive and Legislature by supplying the requisite personnel (political leaders) to man these important institutions. They remain an important component of the very idea of 'government' and 'governance' because they are the most significant source responsible for facilitating the composition of the Legislatures both at the Union and State levels by providing

the men and women who contest and win the general and state assembly elections respectively (except for a very small number of 'independent' winning candidates). According to Harold J. Laski, "we need to know that the administration of the modern State is a technical matter, and those who can penetrate its secrets are relatively few in number." (Laski, 1984:17).

Political parties' main aim is to acquire political power either on its own or in cooperation with other political parties. The growth of the Indian parliamentary system has given rise to specific features to the Indian party system. Some of them are: i. prevalence of multiparty system; ii. lack of clear and distinct political ideology among them; iii. presence of large number of regional political parties; iv. importance of the personality of the individual leader and their family background; v. prevalence of defection and factionalism; vi. lack of regular and periodic organisational elections; vi. prone to criminal elements in the society; vii. lack of transparency in financial matters, vii. indulgence in populism etc.

Overcrowding by Political Parties

Although the framers of the Constitution of India did not provide much importance to the concept of political parties, they were keen in building a healthy party system contributing towards strengthening the institutions of democracy; integration and nation-building. The Constitution did not have the mention of political parties till 1985 when 'anti defection law' was passed and a separate 'schedule' (10th) was added to it through fifty second Constitutional Amendment Act. Over the years, number of political parties have increased in very large proportions. Table 1 gives an account of the increasing number of political parties since the first general election held in 1951-52. From the total number of 53 political parties which had contested the 1st general elections; it has increased to 671political parties which contested the 17th general election held in 2019, thus leading to more than twelvefold increase in their number. Over the years many important legislations related with electoral process have been enacted[1]. The Election Commission of India (ECI) has tried to conduct free and fair elections[2]. Political parties have contributed in the process of democratization in the country.

Table 1: Increasing number of Political Parties in General Elections (1951-2019)

General Elections	No. of Contesting Political Parties	General Elections	No. of Contesting Political Parties
First (1951-52)	53	Second (1957)	15
Third (1962)	27	Fourth (1967)	26
Fifth (1971)	53	Sixth (1977)	34
Seventh (1980)	36	Eighth (1984)	33
Ninth (1989)	113	Tenth (1991)	145
Eleventh (1996)	209	Twelfth (1998)	176
Thirteenth (1999)	169	Fourteenth (2004)	230
Fifteenth (2009)	363	Sixteenth (2014)	464
Seventeenth (2019)	671	-----	-----

Source: Election Commission of India, *Electoral Statistics Pocket Book 2017*, p.52
(Data for 2019 was taken from other ECI Publications, Website- https://www.eci.nic.in)

M. P. Singh observes, "the process of democratisation was triggered by the constitutional charters of legally enforceable fundamental rights of the citizens, the normative ideals of the directive principles of state policy, constitutionally and legally mandated elected governments at various levels and strategy of planned economic transformation and empowerment of the weaker sections of the society." (Singh & Raj, 2012: xii-xiii).

At the same time, political parties are facing numerous challenges, for example, absence of clear-cut future goals and policies for nation-building; fragmented strengths based upon caste, class, religion and region; association with criminal elements; lack of transparency in financial matters etc. Based upon the guidance of the Parliament and various orders of the Supreme Court, although the Election Commission has initiated a series of new measures in the direction of electoral reforms over the last few decades[3], we have to go miles in the direction of conducting a fully free and fair poll in our country. Political parties themselves must be above doubts and should come clean on the issues of their expenses, transparency in financial dealings and removal of criminal elements from their cadres. Rajni Kothari says, "if 'modernization' is the central tendency of our times, it is "politicization" that provides its driving force." (Kothari, 2014:1). Some of the aspects requiring urgent redressal are given below:

Registration and Recognition of Political Parties by ECI

The ECI registers political parties under Section 29A of *the Representation of the People Act, 1951*[4]. It also grants recognition to political parties on the basis of their poll performance as 'national' or 'state' parties under *the Election Symbols (Reservation and Allotment) Order, 1968.* Political parties other than the 'national[5]' and 'state[6]' parties contesting elections are known as 'registered unrecognised' parties.

These exercises by the ECI are insufficient to handle the myriad emerging contours of political parties and the nuances of politicisation involved therein. There is a need to assess the increasing number of political parties because they are the feeder line, a peripheral line to supply the leadership to the huge network called 'governance'. Many of them start functioning like fly-by-night organisations. Many of them are formed just a few days/months before the incoming general or state assembly elections[7]. The requirements for registration are very simple and recognition is provided on the basis of their performance in the last contested general/state assembly elections. There is a need to innovate and design a politico-legal mechanism to prevent mushrooming growth and subsequent overcrowding by political parties at the parliamentary elections.

Need of innovating a politico-legal framework for Assessment of Political Parties

Political Parties are the important link between the government, people and various other institutions of the government because of their multiple roles. They play an important role in the political education of electorates and influence the public opinion about the ongoing public policies and programmes of the government. They contribute an important part both inside and outside the legislatures in making the government policies successful; affecting and determining the quality of the polity and governance. They also provide an alternative before the electorates during general/state assembly elections or at other occasions requiring formation of the government.

Therefore, it becomes imperative on the part of political parties that they must conform to certain legal and constitutional requirements, for example, they must come clean about their accountability and adherence to the Constitution of India and rule of law. They are the source from which, the Indian polity gets strength and resources in the form of manpower. If the source is clean and accountable, the supplied resources would definitely be productive for

our democracy. Periodic and continuous assessment of political parties may be done by an independent national level body (Commission/Committee) constituted under an appropriate act of the Parliament in consultation with ECI and all other stakeholders.

The main function of the above-mentioned body will be to grant accreditation to be recognised as a political party. This will provide an opportunity for desirous political organisations to be recognised as worthy of being called a 'political party'. This will allow them to start and indulge in activities shaping the nuances of politics and governance of the country. This will further strengthen the foundations of representative system of governance.

The proposed body may comprise members (peers) from the existing national and state political parties; leader of opposition in the Parliament (both the Houses); representatives from the ECI; representatives from the Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), Other Backward Classes (OBC); women groups; representatives from the academics and intelligentsia etc. It may have a fixed term (may be coterminous with the Parliament). Regular appointment of the members; clearly defined terms of reference about nature and scope of powers, function and role; sufficient financial resources with adequate manpower must be provided. Above all it must have the power to work independently within the guidelines of the Constitution.

Parameters for Accreditation of political parties

The main purpose of accreditation of political parties will be to create a conducive political environment in the country conforming to the objectives enshrined in the Constitution of India. It will aim to encourage self-evaluation, accountability, autonomy and innovations among them. It will bring transparency in their operations and the electorates would be provided with better choice of electing their favourite representatives from amongst the accredited political parties. It will stop the mushrooming of fly-by-night political parties.

Some major criteria for being accredited as a political party may be as given below:

i). adherence and loyalty to the Constitution of India; ii). contribution towards fundamental duties; iii). clean background of its members; iv). representation of women in party cadres; v). compliance with Right to Information Act (RTI); vi). compliance with the income tax regulations; vii).

transparency about annual statement of finances; viii). charter of ideology, policies and future programme of action; ix). regular and periodic democratic internal elections; x). contributions towards unity and integrity of the nation; xi). fair treatment towards peers; xii). positive approach towards minorities, social justice and diversity; xiii). clear future vision towards nation building and upliftment of the society etc.

The process of accreditation should be based on continuous periodic evaluation, it may be coterminous with the general or state assembly elections. It remains significant because political activities remain one of the most important watched affairs in India and literally affects all other activities of the electorates. If political activities become clean and transparent, there will be no dearth of good political leaders taking care of the complex matters of governance and only serious political parties will exist in the political fray. This exercise will surely help in strengthening the foundations of Indian democracy.

Conclusion

Political parties play a significant role in the governance of the country by supplying the requisite human resources to man it. They have provided the political leadership since last seventeen general elections spread over seventy-five years of Indian independence. But they presently are grappling with numerous issues raising questions about their own credibility, role and very existence. There is an overcrowding created by them at the national level which needs urgent attention of all the stakeholders. In order to strengthen the Indian democracy, we have to clean the source from which we get the man/womanpower for the government—the political leadership.

Notes

1. Article 327 of the Constitution provides power to the Parliament 'to make provision with respect to elections to Legislatures.' Some of the important Acts and Rules are: *i. Representation of the People Act, 1950; ii. Prohibition of Simultaneous Membership Rules, 1950; iii. Representation of People Act, 1951; iv. Delimitation Act, 2002 etc.*
2. Article 324 of the Constitution provides power of 'superintendence, direction and control of elections to be vested in an Election Commission.'
3. Some of the important electoral reforms already initiated are: *i. Deputation of Officers to Election Commission under the control of ECI; ii. Staff requisitioning for Election*

Duty; iii. Age of Voting reduced; iv. Introduction of Electronic Voting Machines (EVM); v. Introduction of Voter Verified Paper Audit Trail (VVPAT); vi. Introduction of Elector's Photo Identity Card (EPIC); vii. Voting through Postal Ballot; viii. Vote through Proxy; ix. Voting Rights of Citizens of India Living abroad; x. Provision of the option 'None of the Above'(NOTA); xi. Accessible Elections; xii. Photo of candidates on EVM and ballot papers; xiii. Stringent action in case of Booth Capturing; xiv. Arms and liquor banned near Polling Area; xv. Holiday on Polling Day; xvi. Restriction on Number of Constituencies for contest; xvii. Provisions for Disqualification of Candidates for certain Acts; xviii. Timely Byelections; xix. Reduction in Campaign Time; xx. Requirement by Candidates to Declare Assets and Criminal Antecedents; xxi. Restrictions on Exit Polls; xxii. Political Parties to declare the reasons for selection of candidates having criminal background and to display their names on their official website; xxiii. Model Code of Conduct (MCC) etc.

4. *The RPA 1951* lays down the minimal conditions for the formation of a political party. These conditions are: it must consist only of Indian citizens; it must call itself a political party set up for the purpose of contesting elections to the Parliament and state legislatures and not for other purpose; and it must have at least 100 registered electors as its members.
5. Under the symbols order, a political party is recognised as a 'National' party if it fulfils any of the following conditions: i). candidates put up by it secure at least six percent of the valid votes polled in any four or more states at the last general election to the Lok Sabha or to the state legislative assembly concerned; and in addition, win at least four seats in the Lok Sabha from any state or states; or ii). The party wins at least two percent seats in the Lok Sabha (11 seats in the existing 543 members) in the last general elections and the candidates have been elected from at least three different states; or iii). the party is recognised as a state party in four states.
6. For getting recognition as a 'State' party, it has to meet any of the following conditions: i). the candidates put up by the party secure at least six percent of the valid votes polled in the state at the last general election to the legislative assembly of the state concerned, and in addition, the party wins at least two seats in the legislative assembly of the state concerned; or ii). The candidates put up by the party secure 6 percent of the valid votes polled in the state in the last general election to the Lok Sabha from that state, and in addition, the party wins one seat in the Lok Sabha from the state concerned in that general election; or iii). the party wins at least three percent of the total number of seats in the general elections to the legislative assembly of the state concerned, or at least three seats in the assembly, whichever is more; or iv). The party wins one seat in the Lok Sabha for every 25 seats or any fraction thereof allotted to the state at the last general election to the Lok Sabha from the state concerned; or v). the candidates put up by the party secure not less than eight percent of the total valid votes polled in the state at the last general election to the Lok Sabha or to the legislative assembly of the state.
7. The most recent example of this trend is: formation of *Punjab Lok Congress (PLC)* by former Chief Minister (CM), Amrinder Singh in 2021 to contest the incoming state elections in 2022; Announcement of *Bhartiya Kisan Union* (*Charuni* unit) to form a new political party to contest incoming Punjab Assembly elections; Formation of *Samyukta Samaj Morcha* (SSM) by as many as 22 farmer organisations who were part of *Samyukt Kisan Morcha* (SKM) to contest the Punjab Assembly elections, 2022

under the leadership of Balbir Singh Rajewal. Another example is related with the recognition given to the new faction of *Shiv Sena led* by Shinde, the present Chief Minister of Maharashtra.

References

1. ECI. (2017). *Electoral Statistics Pocket Book* (p.52). New Delhi: Election Commission of India.
2. Kothari, Rajni. (2014). *Politics in India*. New Delhi: Orient BlackSwan.
3. Laski, Harold J. (1984). *A Grammar of Politics*. New Delhi: S. Chand & Company Ltd.
4. Singh, M.P., & Raj, S.R. (Eds.). (2012). *The Indian Political System*. Delhi: Pearson.
5. *The Times of India.* (2021, December 16)., Charuni set to launch political party. p. 16.
6. *The Times of India* (2021, December 16). It's official: BJP & Captain's party form Punjab alliance., p. 16.
7. Vasdev, Kanchan. (2021, December 26). 22 farm unions float a political front in Punjab, to contest all seats. *The Indian Express*. Retrieved from https://www.indianexpress.com/article/cities/chandigarh/farm-unions-samyukta- samaj-morcha- political-front-punjab-elections-7689993.

---

1. Former Registrar, National Museum Institute, Ministry of Culture, Government of India, New Delhi and presently teaching Political Science at **Sri Guru Tegh Bahadur Khalsa College**, University of Delhi, Delhi-7, Email: bkthakur1510@gmail.com.

Research Article

Medieval History and Culture of Assam as Depicted in Jean Baptiste Tavernier's Travels in India: A Critical Study

–Imdad Ali Ahmed

In his first journey, Tavernier reached Constantinople early in 1631, where he spent eleven months, and then proceeded by Tokat, Erzerum, and Erivan to Safavid Persia. His farthest point in this first journey was Isfahan. He returned by Baghdad, Aleppo, Alexandretta, Malta, and Italy, and was again in Paris in 1633.

Abstract

In this paper a critical study regarding the history and culture of medieval Assam as reflected in "Travels in India" of Jean Baptiste Tavernier has been attempted. Tavernier was one of the pioneer observers during medieval Assam. We are fortunate to get some of his factual observations regarding the history, people, and culture of Assam during that period.

Key words: History, Medieval Assam, Jean Baptiste Tavernier

Introduction

The French explorer and gem merchant Jean Baptiste Tavernier (1605-1689) undertook six voyages to the East during his long and chequered career. From the 2nd half of the 17th century we have many accounts of European travelers on Assam. The European sources on Mir Jumla's invasion of Assam are many. Though he did not accompany Mir Jumla to Assam, but his account on Mir Jumla was that of an eye-witness and his observations on the invasion and description on Assam are highly interesting, recorded in his work *Travels in India* (later translated and edited by V. Bal in 2 vols, London: Oxford University Press, 1925, vol. ii. is important for our purpose).

Objectives

1) To prepare a contextual reference to the writings of Jean Baptiste Tavernier on the history and culture of Assam with a brief introduction of the writer.
2) To make a critical analysis of the medieval history and culture of Assam as reflected in Jean Baptiste Tavernier's *Travels in India.*

Discussion

Born in Paris, where Jean Baptiste Tavernier's father Gabriel and uncle Melchior, pursued the profession of geographers and engravers (Chisholm 1911). The geographical surroundings of Tavernier and the discussions which learned men held with his father, which he listened with avidity, served to inflame in his mind from his earliest years a strong desire to see foreign countries (Tavernier 1889). So between 1630 and 1668, Tavernier travelled voyages to the oriental countries at his own expense and later in 1675 at the behest of his patron Louis XIV of France, published *Les Six Voyages de Jean-Baptiste Tavernier* (*Six Voyages*, 1676).

In his first journey, Tavernier reached Constantinople early in 1631, where he spent eleven months, and then proceeded by Tokat, Erzerum, and Erivan to Safavid Persia. His farthest point in this first journey was Isfahan. He returned by Baghdad, Aleppo, Alexandretta, Malta, and Italy, and was again in Paris in 1633. Tavernier began a second journey (1638-43) traveling via Aleppo to Persia, thence to Dhaka and as far as Agra, and from there to the Kingdom of Golconda. He visited the court of the Emperor Shah Jahan and made his first trip to the diamond mines in Golconda (Wise 2010). The second journey was followed by four others. In these later voyages, Tavernier traveled as a merchant of the highest rank, trading in costly jewels and other precious wares, and finding his chief customers among the greatest princes of the East. On his third journey (1643–49) he came to West Bengal via Ceylon, went as far as Java, and returned by the Cape of Good Hope. His relations with the Dutch proved not wholly satisfactory, and a long lawsuit on his return yielded but imperfect redress. A fourth voyage (1651–55) took Tavernier to Alexandretta, Aleppo, Bandar Abbas, Masulipatam, Gandikot, Golkonda, Surat, Ahmedabad, Pegu, Dagon, Ava, Mogok, back to Bandar Abbas, and to Isfahan, thence back to Paris. During his fifth voyage (1657–1662), Tavernier started from Paris to Smyrna, Tokat, Kerman, Erivan, Tabriz, Isfahan, Surat, Choupar, Golconda and returned via Surat. After marring in 1662 at the age of fifty-six, Tavernier, in order to close up his affairs in the East, started from Paris his sixth and last voyage (1663-68). From Smyrna, Erivan, Tabriz, Isfahan, Bandar Abbas, Surat, Burhanpur, Sironj, Gwalior, Agra, Jahanabad (Delhi), Tavernier arrived at Agra again. From Agra, he started for Bengal, being accompanied by celebrated French physician Bernier and reached Allahabad, Banaras, Patna, Rajmahal and finally to Dacca and made his returned journey.

In all the voyages, except the first voyage, Tavernier visited many places in India including Bengal and Dhaka, but he did not visit Assam.

During his last two voyages, i.e., his fifth and sixth, he did not proceed beyond India. The details of these voyages are often vague; but they added to an extraordinary knowledge of overland Eastern trade routes and brought the now famous merchant into close and friendly communication with the greatest oriental potentates (Wikipedia 6 July 2020).

Tavernier's account of Mir Jumla, conqueror of Assam, was that of an eye-witnessed. Though he did not accompany the Mughal General to Assam, but some of his observations on the conquest and description of the country are highly interesting and are corroborated by the *Buranjis* and the Persian chronicles (Barpujari 1994). Tavernier pointed out that Assam was not properly known till its invasion by Mir Jumla. He attributes the invention of gun and gun powder to Assam from where they possibly went to Pegu and China for which it was credited to the Chinese. Mir Jumla brought back numerous iron guns. Assam produced excellent gun powder whose grain was not long and was much more effective than the other powder, as said by Tavernier (Tavernier 1889). Regarding *maidams*, i.e., funeral vault of Ahom kings and nobles, he wrote "since for many centuries every king has built for himself in the great pagoda a sort of chapel where he was to be buried, and during their lifetime, each of them sent, to be placed in the grave where he was to be buried, a quantity of gold and silver, carpets and other articles. When the body of a dead king is buried, all his most precious possessions are also placed in the grave, such as the household idol of gold or silver which he worshipped during life, and all things which it is believed will be required by him in the other world" (Tavernier 1889).

Tavernier comments that the kingdom of Assam is one of the best countries in Asia referring to the economic independence of the Assamese who produce all that is necessary to the life of man without there being need to go for anything to the neighboring states. There were mine of gold, silver, steel, lead and iron (Tavernier 1889). As for gold, no one was permitted to took away out of the kingdom, and it was not coined into money, but was kept in large and small ingots, which the people make use of in local trade, and did not export it; but as for silver, the king coined it into money of the size and weight of rupees, and of an octagonal shape, and they might be taken outside the kingdom (Tavernier 1889).

Tavernier points out that Assam also produces abundance of shellac, exported a large quality to China and Japan, which was used for lacquering cabinets is the best lac in the whole Asia (Tavernier 1889). There was a kind of silk which was produced on trees. The stuffs which are made of this silk are very brilliant, but soon fray and do not last long.

Regarding salt, Tavernier wrote that Assam did not produced salt but there were two methods for manufacturing salt. “The first is to collect vegetable matter which is found in stagnant water, such as ducks and frogs eat. This is dried and burnt and the ashes derived from it being boiled and strained as is described below, serve as salt. The other method, which is that most commonly followed, is to take some of those large leaves of the kind of fig tree which we call Adam’s fig, they are dried in same manner and burnt, and the ashes from them consist of a kind of salt which is so pungent that it is impossible to eat it unless it softened, this being done in the following way. The ashes are put into water, where they are stirred about for ten or twelve hours, then this water is strained three times through a cloth and boiled. As it boils the sediment thickens, and when the water is all evaporated, the salt, which is white and fairly good, is found at the bottom of the pot.” Though the first kind of salt preparation from the said vegetable as described by Tavernier is unknown, by the manufacture of salt from Adam’ fig, i.e., banana leaves, known as *kala-khar*, is well known to Assam in pre-colonial time.

In Assam extensive use is made of a type of lye called *khar* in Assamese and *karwi* in Boro which is obtained by filtering the ashes of various banana stems, roots and skin in their cooking and also for curing, as medicine and as a substitute for soap. A lye is a metal hydroxide traditionally obtained by leaching wood ashes, or a strong alkali which is highly soluble in water producing caustic basic solutions. Lye most commonly refers to sodium hydroxide (NaOH), but historically has been used for potassium hydroxide (KOH) (Wikipedia 1 September 2020). Regarding use of lye on silk, Tavernier wrote, “From the ashes of fig leaves in this country the lye is made to boil silk, which becomes as white as snow, and if the people of Assam had more figs than they have, they would make all their silks white, because white silk is more valuable than the other, but they have not sufficient to bleach half the silks which are produced in the country.”

The king takes no tribute from his people, but all mines of gold, silver, lead, steel, and iron belong to him, and to avoid oppressing his subjects, he employs only the slaves whom he buys from his neighbours for working in the mine.

Regarding the common people of Assam, Tavernier wrote that all the peasants of Assam were at their ease, and there was scarcely anyone who had not a separate house in his land, a well surrounded by trees, and the majority even kept elephants for their wives. For everyman, unlike those of India who have one wife, he spoke that they have four wives and in order not to be disputed among them, each of them was assigned to different household

works. Regarding physique, the men and women were of fine build and of very good blood.

But there are certain distortions of the writing of Tavernier on the history and culture of Assam. According to Tavernier "he (Mir Jumla) concluded, that when the war was finished (i.e., war of succession that led to the victory of Aurangzeb amongst his brothers), he would be no longer esteemed at Court of as highly as he had been when Commander-in-Chief of the armies of Aurangzeb, and all powerful in the Kingdom where he had a great number of supporters. In order, therefore, to retain for himself the command of the troops, he resolved to undertake the conquest of the kingdom of Assam, where he knew he would not meet with much resistance, the country having no war for 500 or 600 years, and the people being without experience in arms" (Tavernier 1889). Firstly, Bernier states that Mir Jumla was sent to Assam because "Aurangzeb justly apprehended that an ambitious soldier could not long remain in a state of repose, and that, if disengaged from foreign war, he would seek occasion to excite internal commotions" (Tavernier 1889; Bernier 1916). Apparently, he was appointed viceroy of Bengal to punish the lawless zamindars of the province, especially those of Assam and Mag (Arracan) (Sarkar 1928). Secondly regarding Tavernier's claim that the country had no war for 500 or 600 years, it is noteworthy to mention here that Assam was engaged in occasional war fares with the Turko-Afghan rulers of Bengal and continuous warfare with the Mughals since 1615. Thirdly, since Assam had been involving with various warfare with different enemies, both external and internal, so it is difficult to accept the view of Tavernier that "the people being without experience in arms".

Tavernier wrote that accordingly Mir Jumla left Dacca with a powerful army for the conquest of Assam. Here Tavernier's description is haphazard as how Mir Jumla entered Assam. In this context, the text of Tavernier cannot be reconciled with the actual facts as the Mir Jumla's route to Assam is fully given by Jadunath Sarkar. The principal cause of the return of Mir Jumla from Assam as written by Tavernier also went wrong. Instead of "rainy" he wrote "cold" season had commenced.

Regarding burial place, Tavernier mentioned *Hajo* instead of *Gargaon* that the tombs of the kings of Assam and of all the members of the royal family are situated. But he misinterprets that although the Assamese are idolaters, they do not burn the bodies of the dead, but bury them.

In the grave of dead kings, Tavernier wrote "but it is most strange, and savours much of barbarism, that as soon as the king is dead, some of his most beloved wives and principal officers of his house kill themselves by means of poisoned decoction, in order to be interred with him, so that they may serve

him in other world. Besides which an elephant, twelve camels, six horses, and numerous sporting dogs are buried with him, it being believed that all these animals will come to life again, after they are dead, and serve the king." Here, firstly dead kin wives and principal officers did not kill themselves as stated by Tavernier. Secondly, camels were unknown to Assam.

"Among the all articles of food", wrote Tavernier, "the flesh of the dog is especially esteemed; it is the favorite dish at feasts, and every month, in each town in the kingdom, the people hold markets where they sell only dogs, which are brought thither from all directions." But it is noteworthy to say here that the Nagas eat the flesh of dog, not the Assamese.

Tavernier wrote, "there are also quantities of vines and good grapes, but no wine, the grapes being merely dried for distilling spirits." Like camels, the climate of Assam does not suite for the growth for grapes.

Kamrup was the seat of Ahom Viceroy but Tavernier wrongly assigned this place to the king of Assam.

Conclusion:

Though there are some misrepresentation of the observations as Tavernier never visited Assam, but his account regarding the history and culture of Assam is highly stimulating. The history and culture of medieval Assam is incomplete without the illustrations of Tavernier.

References

1. Barpujari, H.K. (1994). ed. *Comprehensive History of Assam*, vol. iii. Publication Board Assam, Guwahati.
2. Bernier, Francois. (1916). *Travels in Mogul Empire* (A.D. 1656 – 1668), tr. & ed. A. Constable, Bombay: Oxford University Press.
3. Chisholm, Hugh, ed. (1911). "Tavernier, Jean Baptiste". Encyclopaedia Britannica. 26 (11th ed.). Cambridge University Press.
4. Sarkar, Jadunath. (1928). History of Aurangzeb, vol. iii, Calcutta, (Third edition)
5. Tavernier, Jean-Baptiste. (1889). *Travels in India,* tr. by V. Bal, 2 vols, vol. i, Macmillan & Co, London.
6. Wikipedia. (6 July 2020). *Jean-Baptiste Tavernier.*
7. Wikipedia. (1 September 2020). *Lye.*
8. Wise, Richard W. (2010). Historical Time Line, The French Blue/ Part II (http://thefrenchblue.com/timeline2.htm). *The French Blue*.

1. Assistant Professor, Department of History, Pub Kamrup College, P.O. Baihata Chariali, Dist. Kamrup, Assam, Pin: 781381, Mobile No: 9864087597, email: imdadghy@gmail.com
2. H/No. 4, C/O. R. Ahmed Opp. Lane of Hill-View South Sarania P.O. Ulubari Guwahati- 781007 Assam Contact No. 9864087597

Discomfort in 'comfort': A reading of Ian McEwan's *The Comfort of Strangers*

–Indrani Hazarika

Abstract

Ian McEwan, a British writer, is mostly know to be obsessed with the perverse, gross and thus, is righty given the nickname Ian Macabre. As Malcolm writes, "The secret of his appeal lay in his stylish morbidity, in the elegant detachment with which he chronicles acts of sexual abuse, sadistic torment and pure insanity." (4) As one reads his novel *The Comfort of Strangers*, one confronts violence, sadism, erotic pleasure. In this paper, I will attempt to throw light on these violence as the consequence of the brutal patriarchy that prevails in the society depicted by McEwan. McEwan is criticised as a writer who is mostly concerned with the grotesque and in this novel he deals with pure hostility with brutal paradigms of patriarchy. My attempt, in this paper, will be to showcase how McEwan actually tries to show how such violence and incarnate desires are universal and how characters try to live a different life in public and private. Unlike the critics, this paper will try to highlight how McEwan aims at imparting life lessons to readers so that they can control their human desires.

Keywords: violence, sadomasochism, patriarchy.

In the novel, McEwan combines "a fictional technique that continually draws attention to itself with a concern with human evil". (Malcolm, 66). The sordid end of the narrative alludes to two themes.

The Comfort of Strangers, written by the British writer Ian McEwan narrates a grimy tale. It is based in an unnamed location and the story basically revolves around four characters, Coin, Mary, Robert and Caroline. Later, Harold Pinter adapted it as a screenplay for a film under the

direction of Paul Schrader. As the novel begins, we find that Colin and Mary, who have known each other for around seven years, have come to this unnamed location for holidaying and reviving the zeal which is lost in their relationship. Mary is a divorced mother of two whereas details about Colin's life are not revealed much in the book. Their relationship is as monotonous as their holiday and intimacy "was no longer a great passion". (18). As the story progresses, we encounter two more characters, Robert and Caroline. Mary and Colin meet Robert one evening as they are wandering through the alleys and though it is a seemingly coincidental meet, readers can very easily comprehend that it actually invites all the gloom and peril in the couple's life. Robert's wife Caroline seems to be inflicted with immense pain. As Mary converses with her, we realise that Caroline harbours a very masochistic view of men. The second encounter of both the couples proves fatal for Colin and Mary. Mary is drugged and paralysed by Caroline and Robert slits Colin's wrist with a sharp razorblade. Colin bleeds to death and Mary regains her consciousness in a hospital where she is informed that Robert and Caroline have fled. The police further adds that such heinous crimes are quite common there.

In the novel, McEwan combines "a fictional technique that continually draws attention to itself with a concern with human evil". (Malcolm, 66). The sordid end of the narrative alludes to two themes. First, through the characters sadistic relation of Robert and Caroline, McEwan tries to throw light on raw human sexuality. Secondly, how the character of Robert is moulded by his childhood experience. The way he was brought up by a domineering father actually shapes his views and behaviour. Violence and death have been recurring themes in McEwan's novels and this novel is no exception. Presumably this is why he earned the nickname 'Ian Macabre'. McEwan is known for reconstructing the confines of literary works by painting it with macabre and contentious elements.

When we meet Caroline we find her living with immense pain which makes her semi invalid. Later, as the novel progresses, we become aware of the fact that the pain she has been living with is due to the sadomasochistic life she is living with her husband, Robert. In fact, Caroline says that she enjoys this sadomasochistic relationship and all women are essentially masochistic. She also reveals that both of them have the fantasy of killing each other during sex. As the novel comes to an end, we come to know how both Robert and Caroline touch Colin, kiss him deeply and later kill Colin by slitting his wrist

with a sharp razorblade. The two epigraphs in the beginning of the novel actually try to throw light on the main themes of the novel and the second one harps on the feminist views of McEwan. The epigraph is from the poem "Sibling Mysteries" by Adrienne Rich. The lines, vividly, portray that the world of men and women are different. McEwen carries forward this view from the beginning of the novel. Colin and Mary have known each other for quite some time but they sleep "on their separate beds. For reasons they could no longer define clearly, Colin and Mary were not on speaking terms." (11). Their dreams are different, alluding to the difference of the male and female world:

Colin's dreams were those that psycho-analysts recommend, of flying, he said, of crumbling teeth, of appearing naked before a seated stranger. For Mary the hard mattress, the unaccustomed heat, the barely explored city were combining to set loose in her sleep a turmoil of noisy, argumentative dreams which, she complained, numbed her waking hours; and the fine old churches, the altar pieces, the bridges over canals, fell dully on her retina, as on a distant screen. She dreamed most frequently of her children, that they were in danger, and that she was to incompetent or muddled to help them.

As McEwan refers to these dreams, he tries to indicate the alienation of both the worlds. A psychoanalytic reading of the dreams will reveal the hunting sexual desires that exist deep down the mind of Colin. By juxtaposing the two dissimilar kinds of dreams, McEwen tries to juxtapose two disparate worlds of men and women. Mary's maternal instincts never bother Colin and thus the dreams are vivid reflections of their disparate worlds. In chapter two of the novel, we find McEwan clearly hinting at his feminist concerns as Mary and Colin are wandering in the alleys in search of food to satiate their hunger. When the two saw the posters, the disjointed conversations of both reveal their different viewpoints. Colin is unperturbed by the posters of the rapists while Mary seems happy that the convicts will finally be castrated.

> Mary had climbed the first steps of the palace and was reading the posters. 'The women are nore radical here,' she said over her shoulder, 'and better organised.' Colin had stepped back to compare the two streets. They ran straight for a considerable distance and eventually curved away from each other. 'They've got more to fight for,' he said. 'We came by this way before, but can you remember which way we went?'........ 'Which way?' Colin said slightly louder........ She turned and smiled at Colin, 'They want convicted

> rapists castrate!'.......... Look I am sure we passed that drinking fountain before,....' Mary turned her back to the poster. 'No, It's a tactic. It's a way of making people take rape more seriously as a crime.' Colin moved again and stood, with his feet firmly apart,........ 'It's a way,' he said irritably, of making people take feminists less seriously.(23-24)

The above lines reveal that Mary is quite conscious of female sexuality and is intolerant towards any kind of harassment meted out to women. On the other hand, Colin doesn't respond to those posters as Mary and is infact, more engrossed in comparing two streets, talking about the water fountain and other mundane things. Throughout the novel we can see that their ideas, thoughts, dreams were entirely dissimilar. The way Mary appreciates the women of that place as "radical" and "better organised" show her awareness.

The other female character sketched by McEwan stands in sharp contrast to Mary is Robert's wife Caroline, who is crippled and unable to climb stairs. Caroline confesses that she and Robert are engaged in a sadomasochistic affair and Robert abuses her with violence during sex. Her disability is the consequence of this hostility by Robert. Surprisingly Caroline doesn't have any object to such treatment and in fact, agrees that she is a masochist.

> It's not the pain itself, it's the fact of the pain, of being helpless before it and being reduced to nothing by it........ We both liked what was happening. I was ashamed of myself and before I knew it, my shame too was a source of pleasure......I was terrified, but the terror and the pleasure were all one...... I didn't doubt Robert's hatred for me. It wasn't theatre. He made love to me out of deep loathing, and I couldn't resist. I loved being punished.(108-9)
>
> Quite often I was the one to initiate it, and that was never difficult. Robert was longing to pound my body to a pulp.....He wanted to kill me, as we made love. He was absolutely serious. ...Because of that possibility hanging over us, we made love like never before. (109-10)

The relationship of Robert and Caroline is marked by violence and "by violence as an expression of power and a pursuit of power". (Malcolm, 84) The way Caroline is described in the novel, "small face" "mouth, for example was no more than the word suggested" "lipped slit beneath her nose" (67) "just another beaten wife" "virtual prisoner" is a clear indication of her status in Robert's life. She is severely beaten and ill treated by Robert and has no

voice of her own. “They exchanged no greetings, and Robert did not step aside for her.” (69)

The reason of Caroline’s strange submission to Robert’s brutal treatment can be understood from the anecdotes she narrates about her childhood. She was “an only child” (50) and was pampered by her father. She and her mother “worked very hard looking after” her dad and Caroline followed every order of his. Later, when she marries Robert, she was hardly acquainted with him and has no prior experience of sex. Right from her childhood days, she is made to believe that women are meant to obey and serve men and passively follow their order. She cannot imagine a life without man and this is evident when she expresses her disbelief as Mary talks about all woman plays. She has never seen a play and when Mary talked about the play Hamlet, Caroline admits that she is completely oblivious of it.

Robert’s sadomasochistic attitude can be linked to the way he was brought up. In his family, he was made to believe that men are the dominating force and the women in the household are bound to follow their orders. In his family his mother and sisters were afraid of his father and Robert was his favourite. The domineering nature in Robert was inculcated in him right from his childhood. His father was a tyrannical figure for his sisters and “to everything he said NO!” (32). At a very tender age, Robert was made “the next head of the family!” (33) and Robert was not in very good terms with his sisters.

“My father would say, ‘Robert, may the girls wear silk stockings like their Mama?’ and I, ten years old, would say very loudly, ‘No Papa’. ‘May they go to the theatre without their Mama?’ ‘Absolutely not Papa.’....” (33)

In an incident, we can see how Robert was made to witness the tyranny of his father as he beat his daughters with his leather belt for putting make up. Robert’s masochistic attitude and the sadistic pleasure he derives from hurting others, actually, is the consequence of the cruelty and patriarchy he witnessed during his early days.

McEwan hints at the fact that the Mary and Colin’s relation is also not quite free from the grip of sadomasochism. Though Mary is sketched as a lady who is conscious of female rights and sexual sensibilities, after their meet with Robert and Caroline, shades of misogyny and violence is apparent in their relationship. As Hossein Payandeh writes: “What was missing in their sexual relations before meeting Robert and Caroline, was precisely

passion..... However, their contact with the sado-masochistic couple results in the awakening of their somnolent passion." Before meeting Robert and his wife, Colin and Mary's relation is quite monotonous. They talk about dreams and other mundane issues and sex "was no longer a great passion. Its pleasures were in unhurried friendliness, the familiarity of its rituals and procedures, the secure, precision-fit of limbs and bodies, comfortable, like a cast returned to its mould." (18) The way they rediscover their relation after their meet with the perverted couple is quite evident.

> ...that night they had slept in the same bed. They woke surprised to find themselves in each other's arms. Their lovemaking surprised them too, for the great enveloping pleasure, the sharp, almost painful, thrills were sensations, they said that evening on the balcony, they remembered from seven years before, when they had first met.......They went into bathroom together. They stood under the shower giggling and soaped each other's body(77)

McEwan presents the two characters, Mary and Colin as sensible people who are intellectually aware. The way Mary harps on the importance of women rights and freedom and Colin expresses his Marxist point of views makes them quite different from the sadomasochistic couple. Yet, after they meet Robert and his wife, they too succumb to the incarnate desires. Erotic fantasies are quite evident as they make love:

Mary muttered her intentions of hiring a surgeon to amputate Colin's arms and legs. She would keep him in a room in her house and use him exclusively for sex, sometimes leading him out to friends. Colin invented for Mary a large intricate machine, made of steel, painted bright red and powered by electricity; it had pistons and controls, straps and dials, and made a low hum when it was switched on......

These above mentioned lines scrape out the contrast that exist between the two couples. Just like Robert and Mary, Colin and Mary couldn't resist falling into the trap of erotic sexual pleasures. The grim end to the novel is pretty predictable, yet we see that Colin and Mary tries to seek "the comfort of the strangers". They are aware of the perverseness of Robert and his wife, yet they continue visiting them.

"After a prolonged silence Colin said, 'Perhaps he beats her up.' Mary nodded. And yet...' He lifted a handful of sand and let it trickle on tohis toes. '...and yet she seemed to be quite...' He trailed away vaguely.

‘Quite content?’ Mary said sourly. ‘everyone knows how much women enjoy being beaten up.’........... ‘What I was going to say was that she seemed to be, well, thriving on something.’

‘Oh yes,’ Mary said. ‘Pain.’” (91)

Even after being aware of the viciousness, the way Mary and Colin keep visiting Robert and his wife actually throws light on the fact that the former duo cannot keep distance with their incarnate desires and sexuality. As Payandeh writes, “McEwan suggests, because, like their hosts, they do not distinguish between pain and pleasure. It is precisely their failure to do so that makes them assume that Caroline takes delight in being maltreated.” When the murderers start hurting Colin, the way he stands still without protesting, the way Mary was silent with Colin’s dead body at the end of the novel, we may also interpret it as the duos’ fantasy of escape and of ecstasy. However such an interpretation will again pave newer ways of studying the themes of the novel.

The novel ultimately ends in a fatal murder. Many critics have criticised McEwan citing that this novel of his revolves around salacious subject matter just to startle his readers. But deeper analysis of the text throws light on the fact that McEwan tries to portray how patriarchal violence paves way to brutal sexual desires. McEwan mentions that one of his areas of interest is the way people’s unconscious brings them into clash with their social configuration. McEwan, in this novel, tries to include some complexities of human world within a seemingly limited scope.

Reference

1. Dunn, Douglas. “In the Vale of Tears.” *Encounter* 58.1 (1982): 49-53.
2. Malcolm,David. *Understanding Ian McEwan.* Columbia: University of South Carolina Press, 2002.
3. McEwan, Ian. *The Comfort of Strangers.* London: Picador-Pan, 1981.
4. Payandeh, Hossein. “Normal Abnormalities: Depiction of Sadomachistic in Ian McEwan’s *The Comfort of Strangers*” Çankaya Üniversitesi Fen-Edebiyat Fakültesi, Journal of Arts and Sciences, 2006. Web. 31 Dec.2022.
5. https://dergipark.org.tr/tr/download/article-file/45247

1. Dibrugarh University

Research Article

The Plight of Untouchables in Mulkraj Anand's Untouchable and Coolie

–J. Jayalakshmi
–Dr. K. Anand

Hunger and starvation are explored as a theme in both the rural and urban settings of Untouchable and Coolie, and Anand exposes the wrath of untouchability, exploitation, child labor, social governance, social set up of societal structure, traditions, religious belief, bigotry, and more. In other words, this is only a mirror of modern culture.

Abstract

Mulkraj Anand is renowned for his social creativity, social constructivism, and historical secularism with regard to the plight of the underprivileged. Anand's works are based on actual events, hence his work is solely social realism. Anand emphasizes and asserts that man is the standard of reality. For the poor and downtrodden, reality is measured by their plight. The plight of the destitute and dispossessed serves as his standard for gauging the height of humanity and society. The integrity of a supposedly democratic society constructed on the capitalistic enslavement of the poor or on the starvation and misery of the poor cannot be sustained, he suggests using artistic allusions. The most disconcerting worry of this author is the oppression and discrimination of the disadvantaged. The most notable aspect of his art is the writer's concern for mankind, true fellow feeling, acknowledgment of man's dignity, compassion for the impoverished and the afflicted, and honest effort to portray personalities in a manner that will elicit the desired responses.

Keywords: Miserable plight, Suffering. Poverty and Degradation

Untouchable (1935), a sociological novel by Mulk Raj Anand, tries to emphasize the horrors of untouchability by highlighting the horrible situation, misery, starvation, and debasement of a huge segment of Indian society. This book is about the existence and fortunes of lowly scavengers. Anand, on the verge of an influential writer, successfully protests the stigma of pollution associated with untouchables. Consequently, in

Untouchable, Anand is passionately concerned with a national-scale societal issue and assumes the position of an author dedicated to the redemption of social ills.

Mulk Raj Anand has rendered Untouchable and Coolie with social realist hues. Hard facts about life in early twentieth-century India are depicted in these two works. The main characters in these two books go through a lot of hardships, and their experiences are chronicled for posterity. In tandem, these works have held a unique position in Indian literature. Through their stories, Untouchable and Coolie offer a voice to the plight of mankind when it is rendered speechless by cruel conditions. Humans and the social environment are to blame for people being afflicted, yet even so, the unfortunate can hold on to high expectations for a brighter future. Both Untouchable and Coolie are the tragic tales of the protagonists, Bakha and Munoo.

Hunger and starvation are explored as a theme in both the rural and urban settings of Untouchable and Coolie, and Anand exposes the wrath of untouchability, exploitation, child labor, social governance, social set up of societal structure, traditions, religious belief, bigotry, and more. In other words, this is only a mirror of modern culture. Untouchability, exploitation, poverty, starvation, and the misery of the Indian masses are major elements within both of these stories. The novels reach the pinnacle of an epic because of how vividly they portray the theme of pain brought on by terrible conditions in life, and because of the courageous endless battle of the principal people against enormous obstacles.

M. K. Anand's Untouchable and Coolie, tales in the epic style, are able to move Indians because of their realistic and moving portrayal of the oppressed. The story of Coolie exemplifies the plight of the underprivileged and the downtrodden, who often struggle to make ends meet. Its unique qualities, potential for good, and wide reach have earned it translation into more than 38 languages. As a result, Anand is now widely recognized as one of the most successful and well-known authors writing in English.

The narrator's perspective reveals the foreseen and hidden atrocities of the Raj, including exploitation, caste discrimination, communal violence, and police bias. The novel travels from city to city, from rural areas to metropolitan centers, demonstrating the horrible and degrading treatment that the poor protagonist, Munoo, receives at the hands of the more privileged members of Indian society.

The billionaires and other wealthy Indians torture Munoo and other coolies both economically and physically because of their poverty. In the narrative, Munoo stands out as the main figure. The tale conveys clearly his desire to continue living. From the outset, it is clear that the people accountable for Munoo's plight, whether in the hamlet or the city, are identical.

The moneylender took possession of all of Munoo's parents' belongings. Unfortunately for Munoo, his father passed away from shock, leaving him an orphan. After school, he found employment in a textile mill. The capitalists there were likewise oppressive to him. The plight of oppressed laborers in society was accurately portrayed by Anand. Anand also demonstrates how a woman sexually exploits Munoo, leading to his death from the stress of pushing a rickshaw and the woman's abuse. Coolie is filled with characters in extreme pain, such as Munoo, Hari-Har, and Prabh Dayal.

Coolie is a heartbreaking actual story of the agony and anguish of the impoverished, like Munoo, and it's an epic of despair. Anand paints a heartbreaking and realistic portrait of the plight of the underprivileged in India, who have been exploited at every level of society, from the colonial to the capitalist to the communal. At the risk of seeming nave, Munoo searches for some kind of secure haven in this world.

The issue that Anand brings to light in Untouchable is the age-old wrong of classifying people in different categories on the basis of their place of origin and the occupation that their ancestors had. The protagonist, Bakha, is a member of the lowly sweeper caste (the Shudras) and is depicted as an athletic eighteen-year-old with lofty goals for his future. This is why, in the past, he would dress and act like a British soldier. He cleaned toilets for a living, yet he nevertheless made an effort to avoid dirtiness. This tale is a recounting of a single day in the life of Bakha, a young kid who works as a sweeper. Bakha dislikes having to clean the bathroom. He aspires to learn and advance his education. A significant portion of the success of the book can be attributed to the novel's innovative take on educating Untouchables.

Sohini, Bakha's sister, is thirsty while he arrives home, so she rushes to the community well to get some water. After waiting at the back of the line, the local priest, Pundit Kali Nath, helps her out and then wants her to clean the temple, which she accepts to do. Pundit Kali Nath wants to touch Sohini's breasts when she cleans the temple, but she pushes him away, saying she was besmirched when he mistakenly touched a "untouchable." Since nobody would believe a lady from an untouchable caste, she would be foolish to speak out against the priest. On numerous occasions, Bakha is humiliated and even physically attacked by members of the so-called privileged classes, yet he never dares to speak out against them.

At the novel's close, Bakha discovers the three ways he might escape the status of "untouchable" and improve his place in society. First, he may accept the invitation of the Christian Salvation Army to adopt the Christianity and therefore escape the caste structure in which he was living. Secondly,

Mahatma Gandhi's statements at a public gathering in the made-up town of Bulashah, where he describes untouchability as the "biggest stress on the face of the Hindu community," offer a possible solutions to the issue. Gandhiji implores the upper castes to abandon caste distinctions and embrace the untouchables as fellow Harijans (or "people of God"). In the end, a poet named Iqbal provided the final solution by writing about modern plumbing and the flush system. The wicked institution of untouchability may be removed if the so-called untouchables were freed from the task of cleaning latrines by hand thanks to this modern way of cleansing human waste. In this upbeat manner, Mulk Raj Anand concludes his novel Untouchable.

Social stigma, hunger, disease, poverty, death, and shame are all issues that Mulk Raj Anand's Untouchable and Coolie characters face in India. Characters like Bakha and Munoo, whom Anand gave eternal life to, exemplify Indian culture.

Throughout his novels, Anand displays a witty and ironic sense of humor. The novels' pathos comes from their depiction of the wretchedness of society's outcasts. His stories provide students with a comprehensive perspective on life and the fortitude to tackle whatever the future may hold.

In conclusion, it is possible to state that an in-depth analysis of any one of his novels exposes a particular type of recurring motif or trope of scathing humor that runs through all of them. Despite the fact that the protagonists of his stories go through a variety of ordeals and come into contact with malevolent forces, they do not become corrupted by any of these encounters and instead maintain their purity and fundamental goodness. Anand is distinctly democratic in nature, as well as humanistic. In point of fact, humanism is the most significant component that unites all of Anand's work in the sense that man is the primary focus of interest in all that he has written. People who live in poverty and have read any of his books are almost guaranteed to adore them, and they are usually, if not always, correct in topics concerning matters of life, love, suffering, and death.

Works Cited

1. Anand, Mulk Raj. Untouchable. New-Delhi: Arnold Associates, 1981. Coolie. New Delhi: Penguin, 1936.
2. Iyengar, K.R.Srinivasa. Indian Writing in English. New Delhi: Sterling Publishers PVT Ltd., 1995.

1. Research Scholar PG & Research Department of English Arignar Anna College (Arts & Science) Krishnagiri, Tamilnadu, India
2. Assistant Professor & Research Supervisor PG & Research Department of English, Arignar Anna College (Arts & Science) Krishnagiri, Tamilnadu, India E-mail: jjayalakshmi@outlook.com

Research Article

The Posthuman Postulation of Consciousness in Richard Morgan's *Altered Carbon*

–Bavatharani. A
–Dr. T.S. Ramesh

Set up in the future, Altered Carbon consists of interstellar travel facilitated by transferring consciousness between sleeves (bodies). The novel is set exactly in 2384, which is over three hundred years in the future. The imagination of the ability to develop and control technology is one of the major elements in Altered Carbon.

ABSTRACT

Posthumanism, in literature, entails revisiting the humanistic approach. Cyberpunk, on the other hand, investigates posthuman identities through the portrayal of human-artificial intelligence interaction. The study focuses on the posthumanist perspective of Richard Morgan's Altered Carbon. It explains the reason behind the significance of virtual immortality which has become an important feature in posthuman fiction. It sheds insight into the impact of technological advancement by describing the novel's fictitious settings and themes. The study also underlines Richard Morgan's attempt to depict the lawless subculture of an authoritarian society ruled by technology.

Keywords: Posthumanism, technology, consciousness, sleeves, science fiction.

The Posthuman Postulation of Consciousness in Richard Morgan's *Altered Carbon*

Science fiction plays a significant role in connecting two separate worlds of literature and science. There is a huge dissimilitude between science and literature. When one deals with the intellect, the other deals with imagination. It is considered to be a modern genre, where writers often seek out innovative scientific and technical developments. It thus expands the knowledge of the reader about science and literature in a disparate way. The evolution of science fiction paves way for various aspects involving dystopia, fantasy, and space opera. After World War II, there

were new directions in science fiction. The term became more sophisticated with adaptations of new technology. It includes many subgenres such as heroic fantasy, cyberpunk, and Posthumanism with themes concerning utopia, dystopia, alien encounters, and deductive plot.

Posthumanism is a philosophical concept of change and modification. However, while many proponents of Posthumanism provide several definitions, the best issue is to deal with technological breakthroughs. Thus, posthumanism signifies a growth beyond existing societal limitations in a postmodern environment. The term is further conceived from the humanistic perspective as follows,

> According to humanism – a clear and influential example of which can be found in René Descartes's Discourse on the Method (1637) – the human being occupies a natural and eternal place at the very center of things, where it is distinguished absolutely from machines, animals, and other inhuman entities; where it shares with all other human beings a unique essence; where it is the origin of meaning and the sovereign subject of history; and where it behaves and believes according to something called "human nature" (Mambrol 2018).

Digital representation and visual perceptions, according to Katherine Hayles' Posthuman perspective, becomes more dominant. Richard K. Morgan is a science fiction and fantasy novelist born in the United States whose writings are often set in Posthuman vision. Altered Carbon, his debut novel, was released in 2002.

Set up in the future, *Altered Carbon* consists of interstellar travel facilitated by transferring consciousness between sleeves (bodies). The novel is set exactly in 2384, which is over three hundred years in the future. The imagination of the ability to develop and control technology is one of the major elements in *Altered Carbon*. Such technology in science fiction involves robotics communications, prosthetics, intelligent machines, nanotechnology, and genetic manipulation. In *Altered Carbon,* the concept of a Sleeve is the salient feature. With the range of several attributes including sense, thought, emotion, awareness, and memory, consciousness may be examined with layers of complexities. According to Robert Pepperell, consciousness and environment cannot be distinguished.

While the analysis of consciousness and human being together still remains complex, Richard Morgan's *Altered Carbon* takes consciousness to the next

level in transferring the consciousness of the human mind from one sleeve to the other. A Sleeve is a human body with a device in the back of the neck. This device allows consciousness to be downloaded into it. Thus virtual immortality has been critically explained by Richard Morgan. The cortical stacks in the spinal columns of human beings are executed in a Posthuman context.

In reference to consciousness *Altered Carbon* also executes interstellar travel. There are numerous colony planets existing in the novel apart from the Earth. Richard Morgan explains a colony planet named Harlan's world. Takeshi Kovacs, being the novel's main character is sentenced to a long term in stack storage in Harlan's world. Kovacs and his partner Sarah Sachilowski were initially killed in an arms deal. On earth, Takeshi Kovacs is hired by Laurence Bancroft to solve his murder. The Depiction of the new world is executed in a detailed manner. Harlan's world is a habitable planet apart from the earth. It was previously inhabited by an alien civilization. Takeshi Kovacs belongs to Harlan's world, from where he has been transmitted to earth through another sleeve.

When the human condition of memory can be stored and retrieved, the Posthuman condition of memory is thus stored, digitized, and downloaded into a sleeve. Richard Morgan uses this particular Posthuman technology in *Altered Carbon* which makes the novel to be idiosyncratic from any other Posthuman novel. The usage of memory in many Posthuman fictions has been technologically modified and mediated. The such mediated sleeve is seen in *Altered Carbon*. While Laurence Bancroft is still alive in the form of a new sleeve, his consciousness has been transferred to the particular sleeve in which he survives. Thus, the re-sleeved Bancroft has lost his memories of the previous two days of his murder. This loss in memory makes him feel confused about his own murder. The technologically modified memory is also indecisive in such a circumstance which makes the story move further.

The explication of the human condition in science fiction is analyzed by Sara Hughes in her article, *People, the Final Frontier: How Sci-Fi Is Taking on the Human Condition*. She depicts the idea of depicting the human condition as,

> Science fiction has always been as much about the human condition as saving the world from an alien invasion, but now a new wave of films and books are taking that interest one step further and developing an existentialist genre set in outer space."The idea of

> putting a man on Mars is no longer a great leap of imagination," said David Barnett, whose novel Calling Major Tom was inspired by the moment in 2015 when British astronaut Peake called the wrong number from the International Space Station (Hughes 2017)

Cortical stacks are the most important factor of human consciousness which serve as a receptacle for human consciousness. Every member of the world has been implanted with the cortical stack when they are one year old. These cortical stacks are composed of non terrestrial metal. They were developed with the purpose of making interstellar travel possible. This travelling of planets is facilitated by cortical stacks. The transmission of consciousness takes place with the help of a waiting body, so called sleeves, on a distant planet. The method of such transmission is called Needlecasting.

Apart from various elements of technological advancements, Richard Morgan uses a biblical reference called Meth. Meth is the one who lives for multiple life spans. The concept of sleeving and re-sleeving to new bodies can be done only by the rich persons. And Laurence Bancroft is one such rich man, who used to be a Meth. He is the one who can afford the sleeve technology of virtual immortality on a continual basis. Thus death occurs only when the stack is destroyed unlike humanism. According to Richard Morgan, the consciousness can be re-sleeved even after the stack is destroyed. This becomes feasible only when the opulent members of the world start to keep copies of their minds in remote storage. This ensures that the storage is thus updated regularly for effortless re-sleeving.

Finding extraterrestrials or creatures from another planet is a staple of good science fiction. It may also refer to extraterrestrial worlds or the other dimensions of Earth. Harlan's Universe is a brand-new world that Richard Morgan builds. He also presents the Martians addition to this. The Martians are referred to as elders in real life. They are an old species of alien. The so-called Harlan's World, or home planet, belongs to the Martians. While humans are referred to as the Founders and Martians as the Elders, it was the Founders who committed genocide against the Elders, almost destroying them. Since humans first encountered them on Mars, they were given the moniker Martians.

In the novel, the characters experience contradictory feelings. With the development of technology, they aim to make matters more complicated. Morgan challenges us to reevaluate what can be even understood by the term "human" by focusing on both human and non-human characters. With the

introduction of his fiction, Morgan's point of view works extremely well, and his close-up perspective resonates with the protagonists. In comparison to realistic literature, science fiction often utilizes distinct terminology. The novel reaches new heights as technologically oriented language merged with multicultural expressions in the fluid online environment. The cyberpunk book that Morgan writes distinguishes itself from the parent genre. The lack of complexity in the worlds portrayed in cyberpunk literature is highlighted by the language Morgan utilizes throughout the book.

Instead of using a foreign language, Morgan employs invented language. They are the focus of scientific and science fiction studies. The fact that it has challenged generations of science fiction authors is one factor that prevented Morgan from using the alien tongue. Every generation has a unique method of communicating language through characters, and they have lived through situations that made amazing technologies possible. David Porush claims that the lexicon of cyberpunk further distinguishes it from even conventional science fiction. As a result, cyberpunk and language are related.

Like any other socialist novel, Altered Carbon also consists of crimes and punishments. Richard Morgan gives an inkling of new punishments like imprisonment on stacks, selling the sleeves to the bidder and so on. Takeshi Kovacs is assigned by Laurence Bancroft to find the mystery of his own murder. Trying to find out the reason behind Laurence's death, Kovacs witnesses Irene who is under imprisonment for illegally hacking Bancroft's memories. She is thus stored in a stack for days and her daughter Elizabeth is also considered to be a murder victim. Even though the re-sleeving technology exists, the poor condition of Elizabeth's father made no progress in re-sleeving her consciousness.

The scientific advancements thus redefined itself in *Altered Carbon*. However, the division of race, religion and class still exists. Religious coding is involved in the process of cortical stacks, where Neo Catholicism never allows re-sleeving. They believe that the soul goes to heaven and hence cannot be re-sleeved. This kind of religious coding is adopted as a practice in virtual reality. Murdering the Catholics is considered to very easy by the terminators. And the sleeve death is thus considered to be a lesser crime, as the destruction of the stack is even more offensive.

Every science fiction story will undoubtedly feature a bizarre, distinctive location that may be found in remote regions. Morgan, without a doubt, writes about an imagined and alternate universe. The universe he writes about is

situated in the future and includes several planets. The reality that we cannot overlook is that we cannot explain the situation without mentioning time. Creating a plausible atmosphere and location is the most critical part of science fiction. Unlike in conventional fiction, the imaginative setting plays an important part in science fiction.

Morgan displays the Earth as a third planet in the solar system. He depicts Earth as one of four terrestrial realms. It is humanity's place and home world. It is always mentioned as being in the forefront of history. It is positioned to be the epicentre of human politics. The planet's administration and military are based on the United Nations. Sol is the human and Earth's star system. It is also referred to as the Sol System for Mars and the Martian species. As the center of the United Nations Interstellar Protectorate, it became the home system of human civilization. After World War I, the notion of the United Nations emerged.

Morgan views the construction of a speculative setting in the same manner that he views the creation of a character. Harlan's environment serves as a focal point for the research of virtual reality. It is a habitable planet eighty light-years away from the Earth. Harlan's world features three moons, as well as a network of orbiting platforms. Angels are the name given to these orbiting platforms. Konrad Harlan, being a founder, discovered the planet. Harlan's planet is administered by the Harlan family, yet it falls under the jurisdiction of the Protectorate. The Protectorate refers to the United Nations Interstellar Protectorate. It is a sovereign colonel empire spanning a hundred light-years. It is a human-inhabited space outside the solar system.

Morgan leverages practically all of the five senses to create a well-rounded atmosphere that seems authentic and relevant to the scientific world. He explains Bay City, which is located on North America's western shore. He describes it as a megalopolis that was formerly known as San Francisco. The city has a population of 10 million inhabitants. It is the continent's cultural, financial, commercial, and economic center. The area is populated by a large number of wealthy persons known as Meths. They live in The Aerium, a city sector positioned above the clouds, amid skyscrapers. Richard Morgan provides an ultramodern perspective on the city. Tall towers with a futuristic appearance are being utilized, while individuals are housed in shipping containers.

The Enforcement of Law in Altered Carbon executes more flow between humans and machines. Mechanic rather than social values, rules, and laws play

an indispensable role in bringing out the solution. Richard Morgan enunciates Resolution-653 as a proposition. It deals with the law that countermands the religious coding so that the sleeve can be tested even after the death of the Catholics. As the Neo-C coding never allows the people to come back in life after death and thus cannot be tested, Reileen in the novel illegally changes her workers' codes to Neo-C. Takeshi Kovacs strives for the Resolution-653 to be passed and helps to solve the death of Bancroft. He also finds out the enigmatic conundrum behind the Rawlings virus which serves to be the reason behind the suicide of Laurence Bancroft.

The non-separateness between the human and techno realm is investigated with a Posthumanist perspective by Richard Morgan. The concept of the sleeve, the emergence of cortical stacks, the evolution of interstellar travel, the digitization of memory, introduction of Meth including the social punishments with a technical outcome proves that the writer thus approaches the subject with a theoretical point of view. It thus showcases how virtual immortality has become a major characteristic of the novel *Altered Carbon.* With all the reliance on technology and science, Richard Morgan thus portrays the lawless subculture of an oppressive society that is dominated by technology.

References

1. "Cortical Stack." *Altered Carbon Wiki*, https://alteredcarbon.fandom.com/wiki/Cortical_Stack. Accessed 7 Spring 2021.
2. Hughes, Sarah. "People, the Final Frontier: How Sci-Fi Is Taking on the Human Condition." *The Guardian*, The Guardian, 21 Jan. 2017, https://www.theguardian.com/books/2017/jan/21/science-fiction-sci-fi-films-books-tim-peake-effect.
3. Mambrol, Nasrullah. "Posthumanist Criticism." *Literary Theory and Criticism*, 25 July 2018, https://literariness.org/2018/07/25/posthumanist-criticism/.
4. Morgan, Richard. *Altered Carbon*. Orion Publishing Group, 2002.
5. N, Katherine Hayles. *How We Became Posthuman*. University of Chicago Press, 2010.
6. Pepperell, Robert. *Posthuman Condition, the: Consciousness beyond the Brain*. Intellect, 2003.

---

1. Ph.D. Research Scholar (FT) (bavatharanianantharaja@gmail.com) PG & Research Department of English National College (Autonomous), Bharathidasan University, Tiruchirappalli.
2. Associate Professor and Research Supervisor (drtsramesh@gmail.com) PG & Research Department of English National College (Autonomous), Bharathidasan University, Tiruchirappalli.

Research Article

Ecological Concern in Reading the Poetry of Kamala Das

–V. Anitha
–Dr.K. Ananad

The chief protagonist of her poems is herself. She makes no endeavor to be objective and scientific although her descriptions are exact, precise and moderately comprehensive in their content. She is obviously objective in her approach and makes no attempt to rationalize her emotions and feelings.

Abstract

An attempt to read Kamala Das's poetry from an ecofeminism point of view pass through new grounds and helps to endow with new insights into hitherto uncultivated regions in her poetic world, such as her poetry's connections between the human and non-human worlds, her celebration of the body, and male-female dichotomies. This paper explores to draw conventional hierarchies through her poetic voices and placing her poetic personality within biological environment which make her poetic output as ecofeminism.

Keywords: Ecofeminism, Nature, Memories, Love & Environment

Kamala Das' poetry is inspired by her matrilineal heritage, the land, the environment, as well as poetic personae and personal voice. She is able to absorb the seeming contradictions into a composite picture. She is deeply concerned with the social situation of women, and how their physical bodies have been reduced to being mere commodities to products for general consumption. Women held little space in a social system that was solely the male world. Even though, one can find admiration for the intrinsic value of everything in nature and respect for the natural in her poetry, a biocentrism rather than anthropocentric approach to the natural world.

Descriptions of nature and the outer world have always been abundant in Indian English poetry. Among the female writers, the voices of Toru Dutt and Sarojini Naidu's nature poetry stand out. Only with the publication of Kamala Das' poetry did

Indian poetry take on an extremely solemn personal tone, a self-impulsive language, and earn an exceptional place among world poetry in English. Kamala Das' elegiac utterances have a very personal tone.

The chief protagonist of her poems is herself. She makes no endeavor to be objective and scientific although her descriptions are exact, precise and moderately comprehensive in their content. She is obviously objective in her approach and makes no attempt to rationalize her emotions and feelings. Yet she does not really sentimentalize the identity. In one of her earlier poems *Composition* she writes that:

> By peeling off my layers
> I reach closer to the soul and
> …..What I narrate are the ordinary
> Events of an
> Ordinary life.

Yet as poet she transfers the commonplace of the everyday life into something splendorous. The ordinary events of her personal life encompass the corpus of her poetic worlds. She is able to renovate the personal into the political in a very unique manner using a very subjective tone. In her poetry the private world of herself is politicized giving candid expression to the full range of female experience. In many of her poems, Kamala Das reverts to the world of her everyday life. She has been taught as:

> Dress in sarees, be girl
> Be wife they said. Be embroider, be cook,
> Be a quarreler with servants…Don't sit
> On walls or peep in though our –draped windows
> Be Amy or be Kamala. Or better still be Madhavkutty.
> It is time to
> Choose a name a role. Don't play pretend games (35-42)

She is unswerving and frank in her poems. Her poetic personae are located in the Indian context with all its colonial complexities. In her poem, *An Introduction* she introduces herself as:

> I am Indian, very brown, born in
> Malabar, I speak three languages write in
> Two, dream in one. (4-6)
> She prefers to keep to her own decisions and explains her poetic standpoint in the poem where she demands boldness in her decision:
> Why let me speak in
> Any language I like? The language I speak

Becomes mine, its distortions, its queernesses
All mine, mine alone. (10-13)

Stray incidents from her early days, her school days, and her teenage fantasies, her marital and extramarital exploits-imaginary or otherwise, her family life, her relatives, her grandmother are some other major themes in her poetry. Her grandmother and the matrilineal home in which she lived are living personae in her poems. They presuppose a living quality, mixing memory with yearning, to experience again a precedent now gone astray to her. In her poem *My Grandmother's House* she describes the house and her love towards the same as:

There is a house now far away where once
I received love…that woman died,
The house withdrew into silence, snake moved
Among books I was then too young (32).

The house becomes a part of her past and the qualities of adore and affection she associates with her grandmother make it a living entity with a capacity to love that she cannot find in her urban present. Here the personal of herself with a personal history becomes amalgamated with her poetic subject. Her matrilineal home, from which she was estranged, becomes the spirit of youth, and she sees herself as a lost wanderer disinherited from her matrilineal past, pleading at strangers' doors for her lost inheritance of love.

The landscapes of the land wherein the poems are located become an inevitable and essential part of her poetry. The tharavad, her matrilineal home, appears in the majority of her poems. An appealing feature with regard to the tharavad, is the life style practices wherein the natural milieu extends into the house. There is a pond attached to every house as well as a large natural garden wherein a space is chosen to the worship of the elements and the non-human creatures are allowed for safe place of protection from human turmoil.

They are not only unharmed where shrubs and trees are allowed to grow wild and the natural habitat is not disturbed. The house itself is a marvel that allows for natural airing with large spaces within open to the sky and low sloping roofs that are ecological and suitable to the local climate conditions. It is therefore only evitable that poet extends those eco-friendly approaches to her poetic subject matter. She discusses her love of swimming, which 'comes naturally to me' and the opportunities she had in the tharavad to pursue her passion.

I had a house in Malabar
I did all my growing there

In the bright summer months.
I swam about and floated
And dived into the cold and green and gold
In all the house of sun
Unitl
My grandmother cried
Darling you must stop this bathing now (65-73)

Here the sensual pleasure of swimming in the green pool with its entire visual spectacle ends unexpectedly when she is made conscious of the growth of her body and her transformation into a young woman. The structure of the poem with its uneven rhythms broken at that stage reflects the break in her emotional response as well. The unexpected awareness of her growing body, which is a culturally imposed one and its implications are reflected through a discontinuity from the natural world around her.

In Kamala Das' poetry, love is the main obsession. She mourns for the loss of innocence and the forfeiting of relationships based on in several of her poems. Yet it is the physical and sexual oppression of love in her poems that has attracted much critical attention. Her obvious descriptions of the human body and the intrinsic sexuality of male-female relationships have brought her much unwarranted criticism:

Gift him all,
Gift him what makes you woman, the scent of
Long hair, the must of sweat between the breasts
The warm shock of menstrual blood and all your
Endless female hungers (12-16)

Many ecofeminist writers embellish the significance of celebrating the body. Both the male and female bodies are explored and distinguished in Kamala Das' poetry. When, in the same poem, the female persona gives the reader advice, her poetic voice exhibits ecofeminist characteristics.

Admit you
Admiration , Notice the perfection
Of his limbs, his eyes reddening under
Shower, the shy walk across the bathroom floor
Drooping towels (6-10)

Her approach to the male-female relationship, however, is not merely physical or dualistic. The mind of the soul is as important as the body as she makes clear in the poem like *Suicide* where she states that:

Bereft of soul

My body shall be bare
Bereft of body
My soul shall be bare (1-4)

Her poetic utterances are about her body as well as her mind. In her poems, she is unambiguous and unafraid about her inner longings and physical sexual hungers. To reflect her holistic vision, the persona of her poetry would require a body as well as a spirit and an environment that supports the whole. At other instances she would rather look at the spirituality of the emotions by sublimating them as in the Radha –Krishna poems. In her poem *Substitute* for instance the narrator says that:

Yes I was thinking lying beside him
That I was loved, and was much loved
It is a physical thing

Love therefore was not to be seen in merely physical terms, yet there was to be no refutation of the body or its sensuality in her poetic voice. Here lies her exclusive position for the female voice in modern Indian poetry in English. She has been referred to as a feminist though she herself is unsure of the appropriateness of the label. Kamala Das has no hesitation in placing herself among the world of the home with its familial rights and duties. For her, the world of her home is in permanence with her public self. She does not look at them as binary oppositions.

Her poetic personae's environments play a significant role in who they are or who she is. At times, the outer space is in compassionate union with the personae's inner self. At times, there is no discernible understanding. She does not romanticise the land or its many manifestations, nor does she separate herself from it. The poet's environment is never directly in conflict with the speaker, as when she speaks about Lord Krishna:

Ghanshyam
You have like a koel built your
Nest in the harbour of my
Heart
My life until now a sleeping jungle
Is at last astir with
Music (18)

The name Gnanshyam is a pseudonym for Lord Krishna. The name can be translated as the dark one heavy like dusk or the dark cloud heralding rain. The lover is compared to a natural phenomenon, a dark cloud heralding rain, with raindrops, of course, symbolising fertility. Here in the self and the other

the lover and his love become one with the natural phenomenon around the poetic persona. But despite its preoccupation with the self, it deals with the outer world and the natural phenomenon with respect and a certain sense of empathy. The human world and non-human schemata are coterminous. Birds, animals, trees, storms, and rain are all as much a part of her inner world as her emotions and opinions. In the final analysis of Kamala Das' poetry, environmental concerns dominate.

In the final analysis of Kamala Das's poetry, her poetry is steeped into environmental concerns. In fact Kamala's self becomes the ecological self though her poetic voice she was able to commemorate experience of being woman without admission of guilt or embarrassment. Through her poetic look one can have an assortment of oppositions like male-female, nature-culture and human-non-human and is above to arrive at an integrated and composite picture rather than a broken or discontinuous one. She does not gloss over or ignore differences, but rather attempts to view them with non-dualistic and holistic compassion. While Kamala Das looks at these dichotomies, she is extremely aware of the dependency existent in heterosexual relations their interdependent and hierarchal relationships as well as their need for distinctiveness and separateness. In theme and oeuvre, the poetry of Kamala Das lends itself to eco feminist readings.

Works Cited:

1. Das. Kamala. *Only the Soul knows how to Sing.* Kottyam:DC Books.1996. P 97.
2. Gaard. Greta. Introduction to Special Issue on Ecofeminist Literary Criticism. *ISLE* 3.1.
3. (Summer 1996).
4. Kaur. Iqbal. *Prefatory note to Perspectives on Kamala Das's Poetry*. New Delhi: Intellectual Publishing House. 1995.
5. King. Bruce. *Modern Indian Poetry in English*. Delhi: OUP.1987. P. 155.
6. Naik.M.K. *A History of Indian English Literature*. New Delhi: Sahitya Akademi. 1982. P 210.
7. Narasimhaiah. C.D. *Introduction to An Anthology of Commonwealth Poetry*. Ed. Madras: Macmillan.1990. P11.
8. Sivaramakrishnan and Hana Ujjwal. *Ecological Criticism for Our Times* Delhi: Authorpress.2011. PP 169-180.

---

1. Ph.D., Research Scholar, PG & Research Department of English Arignar Anna College (Arts &Science) Kri shnagiri, Tamilnadu, India
2. Assistant Professor & Research Supervisor Arignar Anna College (Arts &Science) Krishnagiri, Tamilnadu, India

Dubious Relationship In Shobha De's *Snapshots*

V. Hamsaveni
–Dr. M. Maheswari

This article tells the readers about the novel Snapshots (1995), in which five school friends are duped by Swati because they lack Swati's trust and the ability to see through her deceit.

Abstract

The current research focuses on the false companionship in the *Snapshots* by Shobha De. De is a writer of English-language Indian literature, which has a strong tradition of female authors who portray India at the time of their writing. Women's rights campaigners including Kamala Markandaya, Namita Gokhale, Manju Kapur, Anita Desai, Arundhati Roy, and Shashi Deshpande have expressed their justifiable concerns about the patriarchal society. De writes down what she discovers in the public. She unravelled the mysteries of the irascible and hypochondriac members of metropolitan Society. Swati, the protagonist, misdirects her life and deceives her five schoolmates for financial gain before exacting retribution on them due to the lack of parental love and the influence of western culture.

Keywords: Feminist, reverence, fragile, tapping, humiliation, desperate and immoral

A large number of Indian writers represented their resonating work by their important work in Indian English novels during the edified age of Indian women's activist or feminist. Kamala Markandaya, Anita Desai, Ruth Prawer Jhabwala, Nayantara Sahgal, Manju Kapur, Namita Gokhale, Arundhati Roy, and Shobha De are examples of female authors who have attained prominence and international notoriety. In presenting their characters, they emulated and followed British authors like the Bronte Sisters, George Eliot, Jane Austen, and Virginia Woolf. These authors

successfully and mathematically disagreed over women's inner thoughts, but they were able to adapt thanks to their own undeniable evidence. Their portrayal in the literature consistently demonstrates the undeniable legitimacy of their feminist beliefs, respect, and points of view.

This article tells the readers about the novel *Snapshots* (1995), in which five school friends are duped by Swati because they lack Swati's trust and the ability to see through her deceit. Author of 18 books, including fiction and nonfiction, Shobha De is a dangerous writer of modern-day urban India and a widely read editorialist in notable publications. Additionally, she is a fervent advocate for women's rights and a developing master of modern English literature.

She captures a true representation of contemporary urban life. Her writings help people of the affluent, urban class handle their obsessions, annoyances, and anxieties. She decides the characters and reflects them as they are, not as they should have been, with guileless realism. She uses her writing to arouse society by shining a light on the spoiled truth that prevails in Mumbai and other metropolitan urban cities of India's elite class.

She delves deeply into the characters' inner thoughts and exposes the hidden behaviour and unethical behaviour that they have adopted as a result of the influence of western culture. In Shobha De's *Snapshots,* one of the most remarkable aspects of Indian culture, fellowship is destroyed and loses its value. People have the ability to be persuaded, affected, and captured; how they use or abuse these traits in interpersonal interactions depends on them. Its application depends on the conditions and, incidentally, the person's goal in particular situations. In the book *Snapshots*, Swati's extreme unhappiness, troubling thoughts, and resentment formed a delicate, deceptive alliance.

The importance of companionship in a person's life cannot be overstated; it facilitates laughter, the sharing of worries and memories, and enjoyment. It happened precisely in the first *Snapshots*. The six Santa Maria High School friends Swati, Aparna, Reema, Rashmi, Noor, and Surekha gathered at Reema's house to greet Swati Bridges to recall old memories, for some old photos, and all the old group friends came together for lunch on Tuesday when they were driving unavoidable, mediocre, home lives and envisioned happiness.

Even though they all went to it, they all had problems of their own. Their open hostility damaged the atmosphere, and their kinship turned out to be

terrible. The post-colonial era is portrayed in the book *Snapshots*, which concretizes the experiences of magnificent, freed-up new women. Images show an urban culture where women vie for power and males maintain their outer limits. The purpose of Shobha De's message is to personify the shady kinship winning in urban India

The plot is intended to get revenge on the main character, Swati, for lying to and deceiving her friends due to her irresponsible behaviour. She treated life like a game that she constantly tried to win, and if she didn't, she planned to exact revenge on the loser. She experienced this intuitive emotion as a result of her worry and discontentment with her daily life.

The protagonist Swati has been portrayed by the author Shobha De as an example to all Oriental women who keep a strategic distance from all paths and are accepted by her to have a fairly exceptional existence. In this piece, Swati opposes her comrades and exacts revenge on each one of them. She is actually difficult to organise because of how unique she appears to everyone. Her Malayali father gave her a nutmeg complexion, while her mother gave her unusual highlights and tip-shifted Oriental eyes. She envies Aparna and sees her as a rival, while Reema views her as a prized visitor, Rashmi views her as a snobbish bitch, Noor views her as a high-class whore, and Surekha views her as flighty, vain, and cunning.

Swati is unorthodox, certain, seductive, more impressive financially and socially, as well as a vocalist who has grown more cunning since her school days. She exercises control over other people. She has good communication skills and is considerate of others. She prefers to dispel doubt with her immediate nature, which makes it easier for her to get away with telling lies. She makes a good first impression on everyone. In the class, Swati prefers Noor. Noor is a sweet and innocent young woman. She is unrealistic and aesthetic. Noor is subjugated by Swati and has her dignity crushed, which causes her to decide to end it all.

Noor's problem is that she discovered Swati's secret taping scheme after secretly placing electronic bugs in the room. After holding her brother Nawaz captive in an illicit, unscrupulous sexual connection with him in order to win Nawaz from Noor, Swati developed a haughty attitude toward Noor. She rejoices at the prospect that she is significantly superior to all women. She wanted the full amount that drew her in more and more. She had also removed items from Noor's home. Nawaz makes mention of:

> If Mummy finds out, that‟s it .She‟ll ban your friend from coming over. Next time I see Swati I‟m going to ask her about the silver ashtray. And the ivory horse." (84) "I‟ve got your sick little love-notes too, what fun. Imagine how they‟ll appear in print. You‟‟‟ll be exposed for what you are and always have been—suicidal psychotic bitch. You is nothing, Noor. Nothing at all.... (302)

Noor ended her life by locking herself in the lavatory because she was terrified of having an open relationship with her sibling that would result in incest. Swati also deceived Reema. Reema is an obscure, woolly person who lives on the periphery. She is a kind, demure person who doesn't really have an opinion. Reema was attracted to Raju in school and had sex with him there in a stolen automobile, but she kept it a secret. She discovers she is pregnant and is sent in humiliation from school. She failed her terminals and is afraid, remorseful, baffled, and ashamed that she avoided Raju. With the help of her aunt, Swati, a cunning and powerful character, takes advantage of Reema's helplessness for her own gain.

However, the fact remains that by helping Reema in her hour of need, Swati owes her for the rest of her life. Reema used to refuse Swati to give her a lift to school every day since Reema is greatly beloved by the instructor and has better grades than Swati. She also got the lead role in the yearly school play. Because of this, Swati developed jealousy for Reema and learned the truth about her. The other companions stood by her side, but they also said: "It would've gone off without a hitch, and Reema's misadventure would have remained a secret, but someone squealed. It was never known who the culprit was but everybody suspected Swati."(139)

Swati is probably helping Reema right now, but she also acts as a revelation and reveals Reema's mystery to her family by showing them a strange, dreadful letter that was written in her own handwriting. Raju, Reema's boyfriend, is slain as a result of Reema having to marry Ravi, a man against her wishes. Aparna is the other individual who suffers and experiences embarrassment as a result of Swati. Early on, while Swati was still in school, Aparna was selected as the most attractive and photogenic student, sowing the seeds of competition, jealously, and hatred in Swati's head. She supports the idea that other women are their worst and most horrible enemies.

Her jealousy of Aparna eventually causes her confidence to suffer, and she breaks their friendship. She stirs up resentment in order to control her friends. The word "spouse" began to disgust Aparna. Swati exacts revenge on each

and every young lady. She has irritated justifications for her own hostility and avarice toward her companions. She used to giggle merrily with Rohit, making Aparna feel like a stranger in her own house. She destroys Aparna's peaceful life by drawing her hubby. When it was time to bait Aparna at the gathering, Swati started to rub her, claiming that it was a Chinese tactic she had learned from a Hollywood therapist. She was interrupted by Aparna, who asked her to quit being so theatrical and manipulative. Aparna says: "There isn't one thing in the world you'd do for nothing .You didn't in the past and you certainly won't now. I have asked myself ---.You were and are the most dangerous person I know."(253)

After hearing the aforementioned statements, Swati became even more upset with Aparna and gave her a couple envelopes that Rohit had written. Swati now needed to learn more about Aparna's husband, including why she had a problem with him, how he appreciated her more than his significant other, and how he enjoyed watching her perform in bed. Aparna expresses herself honestly while crying uncontrollably: "You are lying, she said, blowing her nose. „I don"t believe you. I knew Rohit better than he knew himself, yes, he did love me. Only me. Nothing you say alter that. You destroyed our marriage. You killed me. What did I ever do? You turned on me like a viper?"(256)

As a result, Aparna chooses Prem as her office representative from his wife Renu. It is primarily caused by Aparna's winning of the best girl trophy during her school days. Swati has not forgotten the embarrassment and pain she felt as a result of losing the prize. It left a scar at the forefront of her thoughts, leaving her perplexed and crushed, and she exacted vengeance on Aparna by destroying her conjugal relationship and destroying her rest. Swati won the 'Best House' shield by holding Dolly's friendship accountable for ensemble practise and devious behaviour.

She'd also taught Dolly to annihilate the opposing Green House endeavours by keeping an eye on their work in progress, investigating their chosen songs, and discovering the plays they're planning. She looked down Dolly, who serves her at her leisure, primarily because she admits to having ground twenty (laxatives) intestinal medications into Priya's soft drinks, the talented young lady playing Eliza Doolittle in the Dramatics contest for the Green House production of Pygmalion. Dolly had ripped two of her outlandish outfits and snooped on Swati's orders to prevent her from winning the Best House shield of the year.

Someone had noticed Dolly preparing the drink, and it finally screeched, and Dolly was rusticated from the School. For a long time after the incident, no girl is willing to speak with her. Meanwhile, she cultivates the most intimate and spiritual relationship with her married companion Surekha. When Dolly realised Swati had welcomed Surekha, she responded: "Those female nearly destroyed me. I haven"t forgiven her. And never will. But you----why? Why do you want to go? What will you get out of this Stupid lunch? Have you asked yourself one question-----no" I"m sure not. The only reason Swati has asked you is to hurt me. What else?"(220)

Due to Swati's physical and intellectual degradation of Dolly, she remains rejected and thoughtless for the rest of her life. Dolly is terrified of being found out, so she finally decides to commit a social sin and tragically ends her life. It demonstrates Swati's phoney and irritating aspect of life, which is in opposition to Indian culture, customs, and human traits. Bijay Kumar Das better understands the issue of modern Indian women when he says: "Shobha De dives deep into the hearts of liberated, upper-class women in the contemporary society and depicted her characters as they are and not as they not as they should have been."(6)

De adopts Dr. Freud's idea and elaborates honestly on anything, presuming it to be horrifying, uncovering the mundane mysteries of life that are invisible to the naked sight. She warns about the danger and the worrying developments in metropolitan elite society. Swati is dishonest and has an unreasonable propensity for conceit. Due to the fact that she aided Dolly in her reprehensible situation, which badly harmed her ego, Surekha is hated by her dishonest nature. Rashmi "the all-rounder," an unmarried mother, is not helped by Swati because she is selfish and egotistical and because Swati is actually superior to Rashmi. She makes remarks at her in an effort to dehumanize her "What are you afraid of? You have not reputation to safe guard. And your bastard Son must know he has a whore for a mother."(304)

Rashmi's reputation is damaged in front of their friends by the utterance of malicious declaration, and they start behaving badly against one another. Rashmi's arms and legs started to bleed profusely, and they damaged an Onyx lamp in Reema's home. Some people could think that a specific kind of mental dysfunction affects such fraudulent acts. Charles Ford, a psychiatrist, is correct when he says "Lies are advantageously used by individuals and social groups to obtain power, sexual gratification, and material goods or wealth" (21).

Swati played it carefully and sold out the most trusted relationship, the friendship, presumably because she is ready to face the future with uncertainty and feels prosperous and confident in her life. Swati became increasingly reliant on everything that captivated her. She reasoned that resources like cash and materials are the best ways to get them. She secretly produces a blue film for western viewers out of her excessive longing, but the plan backfires. The declaration of success overseas was met with cheers at home.

In order to make a big, meaty serial called Sisters of the Sub-Continent and earn more money, she planned to use the voices of her pals at the reunion. The author is also opposed to the idea that certain Indians might be exploiting their nation's honour and reputation by selling their quiet, little voice, distinctiveness, and national feelings to the west in exchange for material gain. Swati is frustrated by her jealousy and tries to overcome it in order to advance, but she has never been able to do anything in daily life by feeling jealous of her friends. This form of connectedness pushes us far away from other people, and life loses its sense of purpose. Consequently, one may say that: "Discovering India through Indian eyes."(41)

Swati is relentless in her quest for success. From the fifth standard, she excels in tests, competitions, and plays. She moves to London and enrols at the School of Drama, but she ends up being an unsuccessful example of overconfidence. She is the young child who her parents ignore. Her mother is a prominent social worker and professor of anthropology who has dedicated her life to improving the lot of the working class and spends little time at home. Her father is also a civil engineer, spending the majority of his time working outside of town, and their home is desolate and cold. Swati does not have the parental love, care, delicacy and honor in her childhood and is acclimated with various ayahs to deal with her.

They could only occasionally hold workers to maintain the ideal exemplification in her home as suggested by her mother. Without love and compassion in her early years, she developed a toxic and criminal mind, was unable to justify her own actions, and felt abandoned without her parents. She keeps the atmosphere and structure of diverse ayahs. She joined forces with the oppressive environment from a young age and, as they grew older, accepted their sex and alcohol addictions, abuses, and psychological conditions of the *ayahs*.

She develops a strong, passionate bond with her adult guardian. Her character deteriorated into impudence, which damaged her life and rendered

her body, mind, and spirit worthless. She takes revenge on her friends due to a dumb human instinct of hers. As a result of her risky or illegal behaviour, she ultimately damaged her. She sold out her friends, was unsuccessful in her marriage, and was at an increased risk of substance abuse because she didn't understand connections and their importance in daily life.

Swati might have believed that occasionally her parents or her environment had wronged her. She believed that the best way for her to rise to prominence is to exact revenge on people for forming false friendships with her. Lack of parental affection causes a feeling of vulnerability, poor self-warmth, and maybe difficulty maintaining relational connections to her. Distinguished psychologist Donald Winnicott once said:

> "Babies do not become distinct individuals immediately after birth. They wade into personhood gradually, buoyed by the calm and protective waters of family. Long after the umbilical cord is cut, a second far stronger cord remains. This second cord is the subject of attachment theory of epigenetic inheritance, of the nature/nurture debat.It is spun from love and kinship, these ethereal fibres, and extends backwards through the generations and outward through family, community, country, and ultimately, the entire planet."(201)

Parenting or nurturing is really important! She is motivated to harm her physically, mentally, and passionately. To resolve this problem, parents should show their children love, care, and attention during the adolescent years in order to promote wonderful and enduring friendships as well as other inner connections. In her work *A Vindication of the Rights of Woman*, logician and novelist Mary Wollstonecraft describes the problems faced by women and the situation with women as follows: "I allow that more friendship is to be found in the male than the female world, and that men have a higher sense of justice."(28)

These don't seem to be the facial expressions of a woman's rights advocate. She needed to make it clear that men are fair in friendship and treat friends or associates with more respect than women. Then then, Shobha De is categorically opposed to this traditional approach. She has a thorough understanding of the feminine mentality and is eager to transfer the reins of power firmly into the hands of her female characters, ignoring the benefits and drawbacks of the situation in order to create their own reality.

Accordingly, it is harmful, dubious, unfortunate, and seriously terminated. In the piece, the pessimism fellowship caused destruction. Through her false

kinship, where she had tricked her friends for her own gratification but failed, Swati's inner self is undeniably evident. It suggests that in order to nurture children and help them develop their character to the best extent possible so they can become fully realised adults, parents must provide them with both love and guidance. Guardians should give them time and set a good example for their charges by maintaining their nationality, reliability, friendship, and persistent regard for one another in order to keep them on course.

This piece of writing will mould the public's characters, and it implores the readers to carefully analyse this fundamental problem affecting Indian elite urban culture. Each of the five pals is socially restless, and because they are unable to recognise Swati's deceit, they are all taken advantage of by her. Swati flits from one place to another, misdirects her life, and deceives her friends in an effort to obtain love and social acceptance.

Work-cited

1. Das, Bijay Kumar. "The Author and the Text: A *Study of Shobhaa De's Snapshots"*, Prof.R.S.Pathak, Indian Fiction of the Nineties. New Delhi: Creative Books, 1997. p.16.
2. De, Shobha.*Snapshots*.NewDelhi: Penguin Books, 1995. p.84
3. .... p.139
4. .... p.220
5. .... p.253
6. .... p.256
7. .... p.302
8. .... p.304
9. Dr.Block,JoelD&DianaGreenberg.*Women&Friendship*.USA:WellnessInstitute, Inc2002..p.28
10. Dr.Nicole,Letourneau&Justin,Joschko.*ScientificParenting*.Toronto:DunDurn. 2013. P.201.
11. Ford, Charles.V. *Lies! Lies! Lies! The psychology of Deceit*. Washington: American psychiatric Press, Inc. 1999.p.21
12. Vellani, Sarita. " Interview with David Davidar," Seminar, 384, Augus1999., p.41

---

1. PhD Research scholar, (PT), Department of English, Arignar Anna College of Arts and Science, Krishnagiri, Tamilnadu- India
2. PhD Research supervisor, Department of English, Arignar Anna College of Arts and Science, Krishnagiri, Tamilnadu- India

Research Article

Blacks' Struggles after Slavery in Chester Himes' *The Third Generation*

–R. Sivasankari[1]
–Dr. K. Lavanya[2]

Chester Himes' The Third Generation is mostly an autobiographical one which shows personal details of Himes and his family. And, it is also a domestic type novel which shows the domestic needs of Blacks after the end of slavery. It also shows the frustrations and reactions of the female character of the novel to lead a life of whites.

Abstract

This paper is on Blacks' struggles after slavery in Chester Himes' *The Third Generation*. Himes describes the story of a southern black family in the early 1900's, their struggle to live among whites after slavery, their expectation to get an equal rights and to lead a luxury life as that of whites. Taylor's family struggles to live like whites in this town. Though, blacks are freed, they are not given full rights during that time. Many blacks want to enjoy the life of whites; so they start to bring the whites' atmosphere around them. Lillian Taylor, the wife of William Taylor, wants to be white. So, she fuses her thought on her family. She makes an attempt to bring everything under her control so that she can achieve her goal. She thinks herself as 'half white'. She wants her children to live like whites. But situations make her wishes worse. Her husband, William Taylor being a professor, moves to different location. So, the family also moves to follow his career. Lillian despises the rustic lifestyle they have since relocating there. She couldn't see whites' atmosphere around her. Himes has depicted the life of Taylor, their struggles to keep up between their career and their wish to lead white's sophisticated life in white society.

Key Words: Struggle, Black family, White Society, atmosphere, setting…

Blacks' Struggles after Slavery in Chester Himes' *The Third Generation*

Chester Himes is an author of novels, essays, and short stories. He was born in Jefferson City, Missouri on July 29, 1909. After high school, he

attended Ohio State University but dropped out by the end of 1926. He preferred to hang out with pimps, gamblers, and hustlers. He broke the law while pimping for his girlfriend Jean Johnson. His behavior led to his arrest. He was sentenced to twenty five years in prison. He started to write in prison. He began to study human behavior and draw upon his own experiences to construct narratives and characters. In the 1940s, his writings reflected the anger and frustration building up in the Black community. He became discouraged as he encountered racial hostility while in the workplace. His works reflected mostly his own experiences.

Chester Himes' *The Third Generation* is mostly an autobiographical one which shows personal details of Himes and his family. And, it is also a domestic type novel which shows the domestic needs of Blacks after the end of slavery. It also shows the frustrations and reactions of the female character of the novel to lead a life of whites.

The story is concerned with an American Negro family, Taylor's family, William and Lillian Taylor and their three sons, Thomas, William and Charles. And it is concerned with life of a common black and almost 'White like' black after the slavery. After the end of slavery, all the blacks want to live a life of a white, with equal respect and rights. Even they want to lead a luxury life that of a white. They don't want a normal middle class life like them 'blacks'. Himes has shown the struggles of blacks after slavery which he has seen, in this novel. This novel depicts the instable life of black Americans in an era when the rights were limited.

The family's head, William Taylor, is a professor. Though the course of the story, the family moves to Missouri, Mississippi and other places. Lillian Taylor who wants to lead a life of white, doesn't like this transformation. She likes her children to follow disciplines like that of whites. She doesn't want their children go out to play. That may spoil the colour of their skin.

The conflict between William Taylor and Lillian is the root of many of the issues. Lillian is mentally troubling herself by her position between the black and the white communities. She thinks that she is white enough that she shall be allowed to live as a white woman. Even she takes risks like going into town and showing herself before whites. When their family moves to Mississippi, she blames her husband for many reasons. One is, she and her sons may be darkened by the harsh sun. Second is, her sons would become wild because of rural life. Third is, they may lose the wealthy domestic life setting of whites. "She was afraid it might encourage them to hate white people. She wanted them to grow up to love and respect fine white people

as she did" (10).

Himes has revealed the domestic life of free blacks, as well as their willingness to live a white life of freedom and equality, through the character of Lillian. The home as their own becomes the main thing which gives them pride in the society. That gives them a feeling that they become one among whites. This we can see in Lillian's mother and Lillian's mind. "how they had come out of slavery and made a home for themselves, and after great hardship had prospered and educated all seven of their children" (15). Then education becomes an important one. That, we can see throughout the novel, William Taylor frequently moves to different black colleges which show the importance of education.

In the first chapter itself, Himes has shown the importance of domestic life like whites for black:

> Upstairs were three comfortable bedrooms, and downstairs the living room, library, dining room and kitchen, all furnished tastefully as befitted a teacher's home. But the library, more than any of the others, revealed both the endowments and pretensions of Professor and Mrs. Taylor. It contained four large, mahogany-stained bookcases filled with mail-order de luxe editions, leather-backed, gilt-lettered volumes, known as 'sets'. A set of Thackeray sat atop a set of Dickens, and a set of Longfellow nudged a set of Poe: a set of *Roman Classics* vied with a set of *Greek Classics*, and a set of the Encyclopedia contested the place of honor with a set of the *Book of Knowledge*. (7-8)

The above quotation itself shows well about the quest of black Americans to lead a well luxuries life of at least middle-class whites. The books which are decorated the room of Taylors are not purchased to read; they just represent the white culture in it. Lillian reprimands her children for their conduct and for using improper grammar. For her, the behavior and way of sspeaking should be like that of white. These only show them as whites. She worries because the children always play their part like Indians rather than the whites. "She was afraid it might encourage them to hate white people. She wanted them to grow up to love and respect fine white people as she did" (10).

The black American expected middle-class values are shown here. There is no peaceful, loving family inside this house. In the progress of the story, Lillian Taylor has made her husband arrested for slapping her during a fight. She has no love towards him. She calls him as, "black despicable nigger" (41). His arrest makes him to lose his job in Missouri. Then, he finds a job in Mississippi and the family moves to a new place. It is located in primeval

landscape. Mr. Taylor is pleased with the home but Lillian feels, "It's a comedown" (49).

As the story moves, William Taylor unfortunately loses his job as professor and has to take on work as a waiter. Thomas, the elder brother, relocates to the city at his mother's request. So he can lead a life of whites in city. William, the second son becomes totally blind which lead to the complete breakup of the family and the home. Charles due to his behaviors, he is detached from his home. Due to the unfortunate condition in the home, William Taylor and Lillian Taylor get separated. It is mainly due to Lillian; William Taylor loses his profession, partly because she hates to return to the southern colleges where he is qualified to teach, partly, because of the economic condition and urbanization of the society.

The story moves totally changed which is not expected by Lillian. Each member of the family is left in different position. At the end of the novel, Mr. Taylor lives in a rented room.. Lillian is in a similar situation, having rented a room separately. Charles feels very bad on seeing their position. Their domestic settings and behavior indicate that they are completely given up. Lillian dyes her hair, Mr. Taylor drinks whiskey. These incidents show that the family has fallen from the heights of the middle class to the depths of the degenerate.

Conclusion:

Himes has chosen to write this domestic novel to show the life of many African Americans after the end of slavery. This shows the angry and disappointments of African Americans in their native country because they have risked their life for the democratic country but do not get access to the same at home. And, Himes also has shown his own personal experiences and his family's through the characters. Himes describes the story of a southern black family in the early 1900's, their struggle to live among whites after slavery, their expectation to get an equal rights and to lead a luxury life as that of whites. Taylor's family struggles to live like whites in this town. Though blacks are freed, they do not have full rights at the time. Many blacks want to live the life of whites, so they begin to recreate the whites' environment around them.

References:

1. Himes, Chester. *The Third Generation*. New York: Thunder's Mouth Press, 1989. Print.
2. Smith, Sandra Wilson. "Chester Himes's *The Third Generation:* A Dystopic Domestic Novel". *Southern Literary Journal*, Vol. XLI, number 2, spring 2009.

---

1. [1]Ph.D Scholar (part-time), St. Joseph's College of Arts & Science for Women, Hosur. E-Mail: sivasankari.ssmcas@gmail.com
2. [2]Head & Asst. Prof. of English, St. Joseph's College of Arts & Science for Women, Hosur. E-Mail: keethilav@gmail.com

Research Article

Individuality and freedom in the frame with reference to Githa Hariharan's *Times of Siege*

–M. Karthik
–Dr. K. Kumar

Kate Millett's 1970 book Sexual Politics is based on her PhD thesis. The book is regarded as a feminist classic and one of radical feminism's key texts. Millett claims that "sex has frequently ignored the political aspect" and goes on to discuss the role of patriarchy in sexual relations, focusing on the works of D.H. Lawrence, Henry Miller, and Norman Mailer in particular.

Abstract

The motivation for this study was to see how feminist elements were reflected in the works of Indian women writers such as Anita Desai, Githa Hariharan, Meena Alexander, and others. The current study is a feminist critical study of Githa Hariharan's In *Times of Siege*, with the goal of projecting and interpreting the protagonist's experiences through the lens of feminine consciousness and sensibility. The purpose of this study is to investigate Githa Hariharan's novel's rejection of patriarchal ideology and male-dominated culture. Her progressive ideas on women's autonomy through education and self-employment will be investigated in this study. The outcome will be based on female marginalisation and inferiority, women's marginalisation in patriarchal society, and gender disparities and longings of women in androcentric setup.

Keywords: Gender, Feminine, Marginalized, Disparity, Autonomy.

Strengthen the female mind by enlarging it, and there will be an end to blind obedience said by Mart Wollstonecraft's eighteenth-century British proto-feminist in the works of *A Vindication of the Rights of Woman* it was one of the first works of feminist philosophy. It was first published in 1792. Wollstonecraft responds in it to eighteenth-century educational and political theorists who did not believe women should be educated. She contends that women should receive an education commensurate with their social status, arguing that women are important to the country because they

educate its children and because they can be "companions" to their husbands rather than simple wives. Instead of viewing women as social ornaments or property to be traded in marriage, Wollstonecraft maintains that they are human beings deserving of equal essential rights as men. In areas such as morality, she does not state unequivocally that men and women are equal.

The Subjection of Women is an essay written by John Stuart Mill, an English philosopher, political economist, and civil servant, and published in 1869. His friendship with Harriet Taylor, whom he eventually married in 1851. The Mill argument is simply an extension of the Enlightenment belief that women's subordination was a barbaric relic of the past. Women appeared to be inferior to men in many ways, but this was due to social pressure and poor education. He claimed that women must be given the same opportunities as men in order to discover their true potential. He advocated for the abolition of women's legal servitude in marriage. They must have free access to education and employment, as well as the right to vote and hold political office. Mill was chastised for betraying the very principles that underpinned his feminism. Although he spoke about women's individual freedom, his ideology for married women was limited to separate spheres According to him, women are free to pursue their own careers and should not be forced into marriage in the name of economic security.

The Second Sex is a 1949 book by French existentialist Simone de Beauvoir that examines women's actions throughout history. *The Second Sex* is frequently cited as a major work of feminist philosophy and the foundation of second-wave feminism. She claims that men are considered the default, while women are considered the "other." Beauvoir defines the relationship of ovum to sperm in a variety of creatures, including humans. She describes women's demotion to the species in terms of reproduction, associates men's and women's physiology, and concludes that values cannot be built on physiology and that biological facts must be observed in light of the ontological, economic, social, and physiological situation.

The Feminine Mystique is a book written by Betty Friedan that is widely credited with igniting second-wave feminism in the United States. On February 19, 1963, it was released. Friedan was asked to conduct a survey of her former Smith College classmates for their fifteenth anniversary meeting in 1957; the results, which revealed that many of them were unhappy with their lives as housewives, encouraged her to begin research for *The Feminine Mystique,* conducting interviews with other suburban housewives as well as researching psychology, media, and advertising. She had intended to publish

an article on the subject rather than a book, but no magazine would accept her article.

Kate Millett's 1970 book Sexual Politics is based on her PhD thesis. The book is regarded as a feminist classic and one of radical feminism's key texts. Millett claims that "sex has frequently ignored the political aspect" and goes on to discuss the role of patriarchy in sexual relations, focusing on the works of D.H. Lawrence, Henry Miller, and Norman Mailer in particular. According to Millett, these authors view and discuss sex in patriarchal and sexiest ways.

In *Times of Siege*, by Githa Hariharan describes common events in New Delhi, was published in 2000. Shiv Murthy, a history teacher at an open university, lives a blank but comfortable life of staff meetings, lesson modules, and a halfhearted little affair with a colleague. Shiv, the novel's main character, is further heightened by internal conflicts. Prof. Shiv teaches mediaeval history at the university. Shiv is a predictable secular reformist. It has been stated about this character:

> Professor Shiv Murthy is a professor of medieval Indian history of correspondence University in New Delhi. He is also in some sense deeply and emotionally stunted by a childhood experience, the sudden disappearance of a father who had been a frustrated Indian freedom fighter. Shiv finds himself in hot water when the Hindu fanatics up on a series of lesson he's written on a twelfth century reform figure named Basava. (Web 10-04-2018)

An outspoken young woman with a broken knee enters his life and turns it on its head. Hindu extremists attack his writings on Basava, the reformer poet, at this time. Shiv discovers that the ideas he inherited about history, nations, and patriots change over time when fundamentalists arrive on his doorstep. Githa Hariharan's novel depicts the harsh realities of life. Furthermore, this novel indirectly reflects Githa Hariharan's feminist ideas. As Krishnan Das and Deep Chand Patra correctly pointed out:

> Female voices who have wielded the writer's pen to present forth literature which not only highlight women's plight in society, but have also enriched the field with brilliant narratives, styles, techniques and themes, enchanting generations of readers, and immortalizing their own. Agenda in penning their works. (Das Krishnan i)

Githa Hariharan picks up her protagonist for the first time from academe. Shiv Murthy, a middle-aged and mild-mannered history professor at Kasturba Gandhi Open University in Delhi, pays a visit to Meena, the broken-leg daughter of his childhood friend Sumathi. He takes her to his house for a few

days in the capacity of her local guardian. In the absence of his wife Rekha, he prepares everything for Meena's stay in his study room and assists her with daily tasks. She is also a sociology student at Kamala Nehru University, where she is researching the women who are exaggerated by anti-Sikh riots following Indira Gandhi's murder in 1984. "Being an 'activist', she often attends meetings and talks of causes and street theatre, gender and invites capture with the comfort of an expert." (31).

Meanwhile, the Professor of History is embroiled in a debate about his lesson on the twelfth-century poet and social reformer Basava. Because it offends the Hindu watchdog group 'Ithihas Surksha Manch,' they hold Shiv responsible for his planned falsification of Indian mediaeval history and demand a confession. According to Meena's information, the Professor neither apologises nor withdraws his lesson. To counter the Manch's attack, Shiv brainstorms an action plan with all of his classmates. At this point, Meena spreads her full support to Shiv by connecting her friends-Amar, who has been a devoted member of several citizens groups and his friends. While Shiv is annoying to originate emotive support from his freedom fighter father's teachings and his private tradition.

Shiv is then informed by colleague Menon that his lesson has been referred to a Review Committee, and his resignation is obvious. Meena, on the other hand, is somewhat opposed to this. With the help of her friends, she prepares for a press conference. Students are currently being asked to return mediaeval history lesson booklets to the university. The president and vice president of Manch call for a revival of Hindu courage. On the other hand, prominent Leftist historians condemn Kasturba Gandhi University's actions and advocate for their fight against Hindu organisations. Meena, with the help of Amar and his essential friends, organize a TV show; make a booklet attacking RSS and their ideologues.

A mob attacks Shiv on the KGU campus, and his colleague Menon saves him, but his office room is completely destroyed. As a result, the conflict between the Left and the Right becomes more heated. Shiv receives a large number of letters from Manch supporters. An unidentified caller also threatens his wife and daughter's lives. He receives numerous newspaper clippings and letters to the editor criticising his distortion of a historical fact. In response, a group of like-minded individuals has gathered to plan a public meeting and rally. In a television interview, the Vice Chancellor expresses his concern about the University's security. He writes Shiv a letter in which he informs him that the current incident has caused disrespect to the university. Shiv's father's thought serves as a walking stick for him. Meena and Shiv visit the doctor, where the cast is removed. Meena then departs for the hostel, accompanied by Amar and Shiv's father's walking stick.

Shiv is a regular guy who is content with his life and tries to avoid conflict whenever possible. However, Meena, a student from the younger generation, is able to pique the interest of this middle-aged thoughtful professor Murthy and instil a sense of growth in him when his personal and professional lives are shaken. Hariharan concludes by depicting how even "the cautious, silent, middle-class" voices will be raised during times of siege. On campus, people encounter politics primarily through the student union, the election of leaders, fights between different student groups during elections, the organisation of dharanas and the holding of rallies, and so on.

They also discover that students with ties to various political parties and other social and religious organisations fight in groups, resulting in bloodshed and requiring police intervention or action. Students plan and carry out programmes inspired by their political, religious, or community advisors. Some of the aforementioned events occur at Hariharan's fictitious KGU campus. She has unexpectedly brought a political and social issue worthy of national and international debate to a university campus. In response to a question about why Githa chose the university as the setting, she stated:

> Well, for me the campus is not central but the outside. If in a university set-up, debate, free and frank, is stifled, then that show the insidious nature of communal forces". But does it not show that academic culture and values are already atrophied had already become somewhat redundant? "Well, yes, I do recognize and foreground the fact that there is a return to a sense of fear, persecution and ghettoization. There is the atrophy of intellectuality and a decline of the romantic veneration of the teacher figure. (The Hindu)

This exposure demonstrates that she is well aware of academic demeaning values and the decline in the value of a teacher. She also wishes to demonstrate the impact of external common and political forces on academic structure and debate. The involvement of students in the controversy, as well as their activities, exaggerate the situation to the extreme. It completely assumes the form of a political conflict. The novel depicts one spectator releasing brochures and pamphlets, calling for urgent meetings, staging dharnas, organising rallies and planning processions, shouting slogans, displaying placards, making public statements by mocking the leaders and their philosophies on either side, media making crazy news, telecasting interviews on TV, destroying offices, and brick batting.

Because KGU offers courses on a reserve basis, the campus is usually free of regular students and class work. However, we are surprised to see gangs attacking the professor's office. This is an example of the outside

world interfering with university campuses. Campuses have become havens for both social and anti-social behaviour. We also encounter activities and activists from both sides. Manch and other leftist organisations. According to Madhuparana Mitra, Hariharan clearly wanted to draw devotion to what essentially amounts to thought control, exaggerating the chilling consequences of political control over intellectual freedom. During the siege, the protagonist Shiv Murthy becomes the author's ideological mouthpiece (141).

However, one can see novelist Hariharan's shadow in the character of Activist Meena, as Hariharan is very active in human rights activities. Meena also works for the women who were pretentious during the anti-Sikh riots, but she frequently attends meetings and talks about causes and street theatre, gender, and invites arrest with the comfort of an expert, such as Hariharan in real life.

The novel is based on an ideological war that occurred in India in the late 1990s. When the National Democratic Alliance took power in 1999, the government made every effort to replace the then-established Marxist intellectuals with right-wing scholars in national curriculum development agencies. The main conflict of the story, namely the imaginary Shiv's experience, is similar to that of a real-life playwright, H.S. Shiva Prakash, whose play on Basava was convicted by self-appointed historians a few years ago. Similarly, in History study material, the performance of mediaeval Basava leads to an argument in the novel.

The staff is clearly divided into left and right wings, with Dr. Arya on the right and Dr. Menon and others on the left. Professors' support and addressing different ideologies clash, turning the peaceful university into a place of contention. It is clear at the subdivision, during a staff meeting, that Dr. Arya is opposed to the removal of a history lesson from an important section: 'problems of the country and their Solutions' by Dr. Menon. Shiv is encouraged by Meena to enter her personal world of risk, danger, choice, and commitment.

When the fight between the Left and Right wings becomes heated, supporters from both sides, including Guru Khote, Prof. Fraudely, Arya, and Ameer Qureshi, join in. Meena implements her well-thought-out plan by preparing Shiv for a TV show, and later, twenty like-minded people gather to plan a public meeting and rally. In the interview, Hariharan discussed her Marxist heritage. She describes herself as a feminist, among other things. In an interview, it is revealed indirectly as:

> Am I a writer particularly concerned with "women's issues"? And am I a feminist? …And anyway, however you define yourself, all our work is informed in some way or the other by feminism, along with the ideas of Freud and Marx. So…I am a writer (as opposed

to a woman writer) who is a feminist, along with several other things! (16 Apr. 2018)

Thus all these research in treatise investigation bring to us three evidences as follows, Githa Hariharan's descriptions of liberal ideas are always pure, and she is an astute observer of cultural issues. The second aspect of this discourse study tells that religious writing which targets another religion must be evaded because they are complications in the social peace. The third important aspect is that progressive groups in the society must be prepared and they have to fight the communal forces.

CONCLUSION

Githa Hariharan, a winner of liberal ideas, has continued her feminist school in this political novel as well. She prospered following the Gujarat riots. She has mentioned that there is less room for debate in India and elsewhere. She later complained about this harsh reality. The preceding examples demonstrate the author's verbal assault and brutality of Ideological opponents. When the novel was in the middle, two historians were attacked in India for their historical writings, which drew Githa Hariharan's attention.

The ideological war between the Left and Right wings, as well as live politics on campus, are depicted in this novel. Because campus is a miniature version of the real world, it imitates real-world politics in its entirety. The author reflects the traditional view of Indian society and the protest against old-fashioned values. Githa Hariharan, the novel's author, is knowledgeable enough to describe campus life and campus politics in an appealing and articulate manner for her diverse readership.

References

1. Wollstonecraft, M. (1792). *A Vindication of the Rights of Woman: With Strictures on Political and Moral Subjects.*
2. Beauvoir, S. (1949). *The Second Sex.*
3. Friedan, B. (1963). *The feminine mystique*. New York: W.W. Norton.
4. Mill, J. S. (1869). *The subjection of women*. New York: D. Appleton and Company.
5. Millett, K. (1970). *Sexual politics*. New York: Ballantine Books.
6. Das, K. and Patra, D. (2012). *Studies in Women Writers in English*. New Delhi: Commonwealth Publishers, p.278.
7. Githa Hariharan, [online] Available at: http://wwwcurledup.com/githaint.html [Accessed 16 Apr. 2018].

1. Ph.D Research Scholar, (PT), Department of English, Periyar University, Salem 11, Tamilnadu, India
2. Asst. Prof, Research Supervisior and Guide, Department of English, Government Arts and Science College, Harur- Tamilnadu, India

Research Article

Transformation of the Human Race in Octavia E. Butler's *Clay's Ark*

–M.Prakash[1]
–Dr. K. Lavanya[2]

In response to his suggestion that she follow suit, Lynn is adamant about preserving control over the one portion of her biology that is operating correctly: "I don't want kids, but I don't want someone else telling me I can't have any … would you want someone else telling you what to do with your body?"

Abstract

This study analyzes Butler's *Clay's Ark*, which marks the start of a story that is told in earlier volumes. A man returns to Earth from a faraway galaxy, unknowingly bearing a disease organism that begins the metamorphosis of the human species. The organisms invade and recode human DNA. Threatening the hosts' lives if they are not transmitted to other humans. Because transmission necessitates the breaking of the skin of the uninfected person, the organisms trigger violent behavior and overwhelming lust. The children of the inevitable sexual couplings between infected individuals are not human; they look like catlike, graceful animals to highly intelligent quadrupeds with superhuman senses of smell and hearing. Resistance to the organism's need to spread, which is impossible except in the case of isolated individuals, causes physical and mental anguish, eventually leading to death. *Clay's Ark*, the least utopian of the paternity books, depicts three recently infected people attempting to maintain their humanity, which in this context means control over biological drives.

Key words: organism, transmission, biological, overwhelming…

Transformation of the Human Race in Octavia E. Butler's *Clay's Ark*

Clay's Ark the least utopian of the patternist book presents three recently infected individuals attempting to maintain their humanity, which in

this context signifies their control over biological drives. Black Maslin, a doctor, believes physical strength and medical technology can prevent the diseases spread; his beautiful and brilliant daughter Rane relies instead on mental willpower and morality.

Both try to escape the consequences of the disease, refusing to adapt to the physical and psychological changes it demands, and both ultimately lose their lives in the struggle. Only Keira, the younger daughter, who was dying of leukemia before succumbing to the new illness, is still alive. In progressing toward death, she has already begun to transform into something ethereal not quite of this world, with a vastly different physiology and psychology from her father and sister. Keria survives because she takes the step neither her father nor sister is willing to take: she bonds with disease and its carriers, willing accepting the inevitability of the changes necessitated by the organism.

Such evolution represents the only possibility for saving Keria's life, for the recently invented epigenetic therapy, a process that has all but eradicated leukemia by reprogramming faulty genes, has failed to correct her cells. Keira may not have as much of an interest in preserving human biology because her own biology has never been characteristically human morality because, unlike her sister Rane. She understands it as a utilitarian construct that can be discarded when its social value ceases to function.

The human lose to the organism and to another group of humans carrying a different mutation. The species divides into three competing groups. The self-destructive, telepathic "patternists", bred by the ancient patriarch Doro for their struggle against montelepathic humans and "Clayarks" (the decedents of the characters in *Clay's Ark*). Telepaths treat the nonpsychic humans as an inferior race, referring to them by the denigrating label mute. The clayarks, considered non-human by the others, are despised and shunned as carriers of the terrifying disease.

DGD patients, like the patients on Clay's Ark, bear a passing resemblance to AIDS patients. Butler portrays them as heroic, attempting to commit suicide or quarantine themselves to avoid injuring the healthy. As in the case of AIDS, some people angrily blame irresponsible sexuality for the spread of DGD: "The damned disease could be wiped out in one generation, but people are still animals when it comes to breeding. Still following mindless urges, like dogs and cats" (12). It's vital to notice that the speaker has undergone voluntary sterilization, demonstrating that biology need not determine one's fate, despite the speaker's assertion that humans are at the whim of their

biological inclinations.

In response to his suggestion that she follow suit, Lynn is adamant about preserving control over the one portion of her biology that is operating correctly: “I don’t want kids, but I don’t want someone else telling me I can’t have any … would you want someone else telling you what to do with your body?” (40), she has. The DGD victims also share some parallels with babies born addicted to crack. They suffer from motor and speech dysfunctions; some have never met their fathers for their own safety, while others have met only the brain-damaged ruin of their mothers; the crimes that cause prejudice against them are not their own.

Butler’s appeal for victims’ rights, however, shifts dramatically in light of her insistence that the disease may actually benefits society in long run. Just as AIDS research has led to new discoveries about the immune system and provided valuable information in treating cancer, leukemia, and chronic viral infections, DGD produces highly intelligent individuals who devote their lives to improve life for others; the specific value for double-DGD females was found by DGD patients, and their own laboratories represent the best prospect for a cure. “The Evening and the Morning and the Night” would thus seem to offer the most essentialist position in a Butler story, dividing humanity into the haves and the have-nots. But even here Butler demands diversity. The first half of the story focuses on the prejudice that still-healthy DGD carriers face; despite the fact that many of them have successful careers as scientists, and that DGD victims cure many types of cancer, they are ignored or abused by uninformed and fearful colleagues.

References:

1. Butler, Octavia E. *Clay’s Ark*. Warner Books, Inc: New York, 1996. Print.
2. Hunter, Jeffrey W, and Polly Vedder. *Contemporary Literary Criticism*. Vol. 121. USA: The Gale Group, 2000. Print.

1. 1Ph.D Scholar English (part-time), St. Joseph’s College of Arts & Science for Women, Hosur. E-Mail: prakashthinking@gmail.com

2Head & Asst. Prof. of English, St. Joseph’s College of Arts & Science for Women, Hosur. E-Mail: keethilav@gmail.com

Research Article

Dimensions of Language Learning: Special Reference of 'English Vinglish'

–Dr. Rajeshvari

Film 'English Vinglish' shows the journey of language learning of many of us in its own style and tries to give a lesson to everyone. Film gives a full class of learning English. In this paper my focus is English, as I have done a case study upon the movie English Vinglish.In the film, protagonist Shashi (role played by Sridevi), is a housewife.

ABSTRACT

Films are a medium of entertainment but they convey a significant message and teach a lesson too. English Vinglish too is one of those films. Story of a housewife who is intelligent enough with a talent to make delicious laddoos. But learning English is her passion and need. She keeps trying as her husband and children are good enough in speaking the language. But being a student of Hindi medium school and a housewife, for her, it is a herculean effort. Due to her inability to communicate in English, she feels inferior. But the film deals with the issue with a real approach and goes through many prisms of emotions and learning a new language. It delineates that when circumstances demand something from us and we are not able to perform, it loses your confidence. People are not interested in knowing your problems but they want you to perform whenever a particular situation demands it. Learning any language liberates you, makes you more confident. It widens the canvas of your thinking and links you with a bigger world. This is what this film focuses upon and you do not need to behave like a hero but your knowledge of language makes you feel like a hero of yourself. Moreover, the film displays that wherever you are, always try to keep yourself up to mark. It makes you realise why learning a language is always beneficial and opens new canvases of thinking and working. If we watch the film carefully it casts a light upon all aspects of learning a language. What are the difficulties in learning a language, why and how difficult it is,

support of people, how to learn a language and the role of your mother tongue. We can compare the film with the journey of a student and a teacher into learning a language. Moreover, due to global movement for various reasons like tourism, jobs or living abroad, learning a new language has become more relevant.

Key words: *English, , Learning, Techniques, Circumstances, Communication.*

Students in Australia will be offered the option to study Punjabi as the new curriculum creation for grades pre-primary through twelve will take place, education minister Sue Ellery said. Addad, " I am pleased to see the ongoing expansion of language curriculum for WA students, and the Punjabi curriculum is particularly fitting given it could support students in key future employment opportunities." This statement was given by Sue Ellery, the education minister, when recently Punjabi language was incorporated in the curriculum in West Australia for the students of Pre-primary to 12th. Earlier Tamil, Hindi, and Korean were added to the curriculum in 2021. It reveals how diversity in language provides a major strength for children as it gives social, cultural, and economic advantage. This decision of the Australian government shows that learning any language is indeed very important. Today, when the world has turned into a global village, learning new and required language has become more paramount. It boosts our confidence, liberates us and opens many new canvassases of thinking and knowledge. Learning a new language is a journey which contains many sweet and sour experiences.

Film '*English Vinglish*' shows the journey of language learning of many of us in its own style and tries to give a lesson to everyone. Film gives a full class of learning English. In this paper my focus is English, as I have done a case study upon the movie *English Vinglish.*In the film, protagonist Shashi (role played by Sridevi), is a housewife. Her husband is in a job and her children are students of English medium school. Although Shashi is quite efficient, intelligent and a small business woman who makes delicious laddoo, sales and delivers at the doorstep according to the orders people make. But it is English where her hand is tight. Although the movie is about the housewife and the English language.

But the same can be applied to any language and if we see it with a broader perspective and can be applied to students, teachers, any working person or to anyone who indeed needs or has a passion to learn a new language. From the beginning, the film shows the significance of language. How

language plays an important role in our life and how it becomes the reason of respect, achievement, humiliation, job opportunities and many more. As the movie focuses upon English, we see the difficulties a person faces in learning, pronunciation, feeling of humiliation when you are not able to speak wherever it is required, how you feel yourself out of it, how with the support of others learning a language becomes easy and how it becomes tough to learn in the absence of the same. We see that the protagonist Shashi is very passionate about learning English. She listens attentively and tries to learn the language. Once she pronounced the word 'Jazz' as 'Jhaaz'. Later on her son corrected her and she tried to learn to speak the word correctly. Along with fluency,pronunciation too is very important. If an extensive prizm applied to English language where unlimited opportunities a person receive to go abroad and doing jobs without correct pronunciation you cannot expect to find a job. As it is said, English is a funny language and yes this is true because if you do not check the pronunciation of the words from a dictionary or any other source you can never learn how to pronounce the word correctly.

If we watch the movie attentively it throws light upon a number of techniques on how to learn language. These techniques may be useful and used. As we see that whenever Shashi hears a new word she keeps repeating it, when she watches a movie she tries to lip the words and if she does not understand the meaning of a particular word she always tries to find out the meaning and keeps herself inquisitive during her English speaking classes. Apart from this she tries to learn more in less time as she is aware that hers is a short stay in New York. Her passion is pretty visible for learning English when she pretends to have a headache so that she can go and attend the class. She takes brave steps like to move out all by herself in an alien country to achieve her goal. Film attempts to display that when we make our effort wholeheartedly, circumstances too come in our favour. Similarly for a student, a person in a job and anyone who wants to learn another language should put their best foot forward.

Moreover, choice of words is very important in language. As it is said, "Words have power" and using this power carefully is wise. It is not necessarily right that people who have good knowledge of language and are intelligent enough can use language with correct words. As in the movie, Shashi has talent to make delicious ladoo and people admired the taste of them wholeheartedly.

But it is Shashi's husband makes fun of her and says, *"Tumahra janm hi*

laddoo banane ke liye hua hai." and many times he advised her to quit this profession of making laddoo which is a hobby and profession for Shashi. His words always hurt her. It only happens during her English speaking class where her teacher tells the meaning of the word 'entrepreneur' and makes her feel proud when she discovers that she herself is an entrepreneur. Later on her French friend appreciates her cooking and compliments her that cooking is an art and she is an artist. He knows the value of cooking anything as he himself cooks and wants to be a chef in near future. Thus, the knowledge of the suitable words is very essential.

Concept of a global village is very common in popular culture. People make movements globally whether it is physical or virtual like tourism, jobs or for living abroad. Not only highly educated and well off people travel across the country and across the globe but people with a handful of resources cross the border in hope of a better future and in such circumstances language becomes a nucleus matter. A person can choose the country but not the language. In the same way one can choose a subject, a profession but if it requires the knowledge of a particular language, learning the same becomes a condition. In the film, many characters from different countries and places cross their path. For instance, one Salman Khan from Pakistan works as a driver and is learning English so that he can find a better girl for himself; one from Bengal, P. Ramamurthy, who is an expert engineer but always put down by other employees because of his lack of command on English; one is from France who is a cook and wants to open his restaurant in near future; Eva, an Spanish lady works as a nanny and she has to learn English as her owner wants her to communicate with her children in English, a Chinese girl, who runs a salon is learning English to communicate with her customers and our protagonist Shashi who was always made feel inferior and feels herself inferior as she encounter humiliation because of her extremely weak English, sometimes by her own family members, sometime by outsiders in New York City and sometimes she felt insulted herself as she could not understand the language and could not take part in conversation because of it. One more important thing is that as everyone in the class is from different countries and different languages, and struggling to learn a different language, they understand well that learning English is not a piece of cake and without making efforts no one can be successful.

The world of language is very vast and a number of people become polyglot but mother tongue plays an important role in expressing our emotions and

gives a feeling of ownness and oneness. We begin our journey with our mother tongue and this is the reason that our mind and tongue are so accustomed to speaking words that we feel comfortable with our language of origin.

It makes us feel like a safe haven.In the film Shashi had been a student of Hindi medium school. The person who meets her during English speaking class likes her, is French. Whenever they do not or can't convey their emotions to each other they communicate in their mother tongue. Even after class , mostly characters communicate in their mother tongue. In one scene, Shashi goes to attend the PTM of her daughter Sapna. Her class teacher teaches English. Shashi tells him she is weak in English. Then he too revealed that he is weak at Hindi. Thus we can see that it is only the mother tongue where everyone feels comfortable. Usually we learn a language according to the choice of our subject. Otherwise it becomes very tough to learn a new language if you are not studying from that particular medium. For instance, if a person belongs to Hindi medium school, learning English becomes a tough job for anyone or vice versa as it happens with Shashi who belongs to a Hindi medium school.

Physical beauty plays an important role and makes us confident. But intellectual beauty makes a person more attractive, more respectful and more confident. For gaining knowledge, language is a must. When the film begins, Shashi asks her husband why he married a woman like her, not a better person. More intelligent and smarter. She asked this question because she feels humiliated due to her lack of speaking English and somehow it is her husband too who makes her feel that way. But ironically at the end it is her husband who feels himself unsafe and asks her, "Do you still love me?" Interestingly enough, it happens just because of her boosting confidence which has come from her learning and communicating in English. It is not that Shashi was not beautiful earlier, she was. But it is her knowledge of English that makes her more confident and more beautiful. Other people also admire her for this effort and she too feels good as she does not feel like an outcast when others communicate in English. Not only that, she gives a befitting reply to people who humiliated her many times.

Communication in a common language brings people close and it enhances the understanding between people or communities. It makes the situation conducive for a person and one feels confident enough to move around. In many jobs employees get promotion due to their communication skills and knowledge of language. Many times many opportunities are lost just owing

to lack of good communication. As the Novelist Narender Kohli said during an interview that not knowing Sanskrit was his pain and his limit too as he could not feel the original taste of Ramayana and Mahabharta as he did not understand Sanskrit. So the poetic element of these epics could never reach to Narender Kohli in an original way. Therefore, to understand the soul of a particular work or person, knowledge of language is the first condition. Film gives the message that no matter who you are. A housewife, working woman or from any place, try always to make yourself a better version of yourself and if something is essential to learn, keep trying to learn.

Being a woman circumstances may be more difficult for them but you can always shine out by going a few more extra miles. To conclude, watch the film if you want to understand the importance of learning English and how you can indeed learn it. The movie can give some tips to you and if you have already watched, watch it once more for a deeper understanding.

Reference:

1. Hindustan Times,09 January, 2023
2. *Naya Hindustan*, 15 January 2023, p.11.
3. Biswas, Brati & Ranjana Kaul, *Women and Empowerment in Contemporary India,* Worldview Publication,2016.
4. *English Vinglish,* Film by Gauri Shinde (2012).

1. SHYAM LAL COLLEGE DEPT. OF ENGLISH rajeeduttadu@gmail.com 9990073973

Research Article

Couture turns Communal-A Post Covid-19 Case Study of Brand Collaborations

–Nidhi Arora
–Manisha Gupta
–Mridul Dharwal
–Nitendra Kumar

Masstige, which refers to downward luxury extensions, is a new field of study within brand extension. Positioning a high-end product so that it appeals to a wide audience without watering down the product's prestige is seen as a novel marketing tactic (Truong, McColl and Kitchen, 2009).

ABSTRACT

As technology evolves and transforms the way brands work, to increasingly perform complex tasks with other Brands, successful Business Collaborations surface post Covid -19, in an attempt to increase sales and double profits. Strategic partnerships, especially on account of poor sales and cancelled orders, have helped many brands. However, sometimes these collaborations do more damage than good. In a case study analysis, the author reviews two opposite Fashion pioneers with decades of experience in their respective fields collaborate to reach to a wider audience in an attempt to firstly ascertain the consequential effects of collaboration on varied market segments and its resulting perception of brand patrons. Secondly, the paper aims to find out the impact of the controversial collaboration between fast fashion Swedish giant Hennes & Mauritz (H&M) and Indian iconic couturiere Sabyasachi Mukherjee on the Brand Image of the Couturier brand. H&M's list of partnerships with high-end designers provides a useful framework for analysing the positive and negative outcomes of these collaborations. The data is collected through brand website, social media platforms, research articles, conference papers and related case studies. The findings of this study have important repercussions for the luxury goods industry, including the fashion retailers and the merchandisers.

Keywords: Collaboration; Consumer

Perceptions; Couturiere; Covid-19; Fast Fashion

1.0 OVERVIEW

1.1 Luxury Fashion

Premium brands invoke uniqueness, have a very well brand recognition, have a high degree of brand knowledge and value perception, and also have a high level of customer satisfaction and commitment (Phau & Prendergast, 2000). A high-end fashion brand is certainly a combination of people's emotions and thoughts whenever they interact with a specific firm and its goods and services (Chevalier & Mazzalovo, 2008). As a result, a luxurious corporate image exists in the minds of customers, as well as its achievement is determined by how it is portrayed in the minds of consumers (Parrott, Danbury & Kantha-vanich, 2015). In fact, in luxury marketing, the building of brand value is important. Consumers, who derive tremendous pleasure from luxury fashion products, are likewise interested in brand value.

1.2 Fast Fashion

The goal of fast fashion is to obtain a competitive edge by being able to respond swiftly to constantly changing consumer demands and market needs (Barnes and Lea- Greenwood, 2010). This business model has been adopted by mass merchants such as H&M, who have been known for consistently updating their product selection with hot new styles, attracting media attention, and encouraging consumers to revisit their outlets (Rosenblum, 2015). As the concept has spread all across the world of fashion, they have been recognised as fast fashion brands, rather than being concerned with mass sellers (Bhardwaj & Fairhurst, 2010). The trendy affordable garments, designer counterfeits made from cheap material, swift speed, fashionable and up-to-date styles in garments that entice customers to pay full retail price immediately rather than delaying for the special discounts that are available at the end of season, are what distinguish these companies from each other, as stated by Bhardwaj & Fairhurst, 2010; Cohen, 2011; Joy et al., 2012; Rosenblum, 2015. Fast fashion substitutes uniqueness, elegance, individuality, and magnificence with mass market segmentation (Toktali, 2008).

1.3 About H&M

Hennes & Mauritz, commonly known as H&M, is the 2nd largest clothing brand all over the globe, with more than 3,700 outlets in 61 countries and over 132,000 employees worldwide (Bloomberg Business 2013). It is

also well-known for its inexpensive, hot-trendy runway designs, and its ready - to - wear model has captivated the youngsters all over the world. "Design, Style and quality products at an affordable price for all for in a sustainable manner," is H&M's primary philosophy.

H&M's main goal is to offer design, elegance and durability at a judicious price in a ecological manner. They feel that in order to get the best consumer service within each marketplace, they must have a diverse and wide-ranging assortment for ladies, gents, teens, and kids. Style, craftsmanship, durability and ecology are not a matter of cost for them, but rather of being able to provide inspired fashion at an exceptional price. Hennes & Mauritz (hereinafter H&M), a Swedish apparel company created by Erling Persson (1947) and now known as H&M Hennes & Mauritz AB (STO: HM-B), has been one of the most famous brands worldwide. The brand had employed more than one lakh permanent workers in 74 homelands since the end of 2019, including more than five thousand outlets under various brand identities. Based on innovative design, the finest quality at the best possible price, H&M has risen to the top of the fashion industry (Tungate, et al., 2008).

1.4 Masstige

Masstige, which refers to downward luxury extensions, is a new field of study within brand extension. Positioning a high-end product so that it appeals to a wide audience without watering down the product's prestige is seen as a novel marketing tactic (Truong, McColl and Kitchen, 2009). Masstige, according to Truong et al. (2009), is defined as "brands that take an approach between luxury and high street fashion," while other authors define masstige as "a phenomenon in which luxury brands and designers associate with high-street chains without sacrificing their core business (Andal-Ancion, Coyle and French, 2010). Masstige can be defined as an attempt to sell high-end products at affordable prices. Masstige originated with the practise of "trading up," in which consumers improve some of their purchases to higher-priced luxury items (Darlington, 2004). (Silverstein and Fiske, 2003).

1.5 Co-branding

According to Besharat 2010; Kupfer et al. 2018; Voss and Gammoh 2004, Co-branding is a type of brand association in which two or more enterprises combine and form an alliance. Significant partnerships amongst high-end fashion brands and other ready-to-wear brands have been gaining major attention from the media, since the turn of the century (Lee and Decker

2016). Previous studies have found that co-branding can have a favourable or negative impact on customer sentiments toward particular brands (e.g., Balachander and Ghose 2003; Geylani et al. 2008; Votola and Unnava 2006), as shown in Table 1:

Advantages	Disadvantages
Expands market reach	Shared Reputation
Becomes More affordable	Spill over effects
Reduces Risks	Financial issues might develop
Credibility increases	Can lead to confusions and conflicts
Product Image enhancement	Opposing Missions, visions, and values
Joint advertising, thus a wider scope	Overshadowing, Loss of personal image

Table 1: Advantages and Disadvantages of Co-branding

1.6 COVID 19 and its Impact on Luxury Market & Indian Economy COVID-19 or Coronavirus 2019 is a viral disease that affects the breathing system. It was first found in the city of Wuhan, the capital of China's Hubei province towards the end of 2019, and since then has spread worldwide, leading to the ongoing coronavirus epidemic of 2019-20. Due to the global economic downturn, the luxury marketplace has been hit the hardest, with Chinese customers spending USD 104.44 billion on premium products in 2019, accounting for one-third of worldwide luxury retail trade.

Since customers of China are now the leading luxury buyers over the world, the Covid-19 outbreak poses a serious threat to high-end premium brands and stores. Thus, the survey noted, the consumers of China accounted for 33 percent of the worldwide market. Couture shows were suspended, and Italy was forced for total lockdown. Luxury retailing is heavily reliant on Chinese consumers both domestically and overseas, and it is currently experiencing a crisis. Along with extensive store and mall closures in China, It has put a major impact upon this worldwide premium goods market, that has largely depended on Chinese buyers' consumption both locally as well as internationally.

The Covid-19 situation in 2020 had a significant influence on the H&M brand. The overall net sales (in currency of Sweden, SEK) shrank by 20% as evidenced in Table 2 below:

FINANCIAL YEAR (December 1st-November 30th)	2020	2019	2018	2017	2016
Net Sales, SEK m	187,031	232,755	210,400	200,004	192,267

Change Net Sales from previous year in SEK, %	-20	+11	+5	+4	+6
Change Net Sales from previous year in local currencies, %	-18	+6	+3	+3	+7
Operating Profit, SEK m	3,099	17,346	15,493	20,569	23,823
Operating Margin, %	1.7	7.5	7.4	10.3	12.4

Table 2: Five Year Summary (Sales Report) of H&M

In terms of Indian economy, the influence of Covid-19 has indeed been highly negative. More or less every sector has faced a hardship at some point. The textile sector has been one of India's biggest export producers, contributing for nearly 11.4 % export revenues for the financial year 2019, reaching up to INR 2,596 billion and increasing at a rate of 7% from 2004-2005. COVID-19 outbreak has a similar and unique impact worldwide. The monthly exports for Textile & Clothing for 2019 & 2020 are illustrated in Table 3 below:

Export Category	**2019**	**2020**	**% Change**
Handloom Items	844.22	148.11	-82.46%
Man-made yarn	388.61	61.76	-84.11%
Jute	22.15	2.08	-90.61%
Carpet	107.26	8.94	-91.67%
Apparel	1409.53	126.31	-91.04%
Textile & Clothing	2913.07	358.73	-87.69%

Table 3: Textile and Apparels Exports' Data (Value in USD Million);

Source: Directorate General of Commercial Intelligence and Statistics, Ministry of Commerce

The pandemic seems to have an impact on both demand and supply for textiles and garments. India is a major exporter of textiles and garments to the EU, accounting for roughly 60 percent of its total exports, and the disease has badly damaged these marketplaces. Since all the consumers are house-arrested, retail stores are shut, and access to internet marketing is prohibited, consumers from these marketplaces have either withdrawn their orders or have set them on wait.

2.0 Objectives of the Research

1. To determine the consequential effects of collaboration between diverse market segments on the consumer perception of the Couturier Brand.
2. To find out the impact of collaboration between Fast Fashion and Couture Brand on the Brand Image of the Couturier Brand.

3.0 Review of Literature

3.1 Covid-19 and Indian Fashion Designers

"The outbreak of Covid-19 has certainly put high fashion and luxurious enterprises in a risk zone," says designer *Shantanu Mehra*. There seems to be a degree of uncertainty that has never been seen before, and wealth has been eroded to some extent in each and every sector of the economy. While budget conservation is essential, many couturiers would be motivated to democratise couture by offering simple and affordable items and pricing levels."

Designer *Leena Singh* believes that, despite the fact that they have had a difficult year so far, sales would probably increase October onwards. "Until the last month, it was hard to anticipate if trade would recover this year. However, I'm receiving phone calls this month for consultations in September and October, and I'm expecting that by the end of the year, we'll be able to see a bright spot."

Rina Dhaka, Malini Ramani's friend and associate designer, was just not surprised when Malini Ramani chose to take a sabbatical from fashion a month ago. Rather, it made her consider if this is the right moment for her to take a break as well. "I've been in this business when I was 19 years old." Even when I was fighting with cancer, I fought against all obstacles and never gave up. But, now that the economy is in its worst slump in decades, I'm not sure what the purpose of working is at the moment. "I was thinking of taking a break after my workers went home and I paid all of them, but after a while I received a notification as an order for a medical centre for uniforms, which gave me some optimism," says Rina. She goes on to say that she's wondering what she'd be creating as everyone is preferring to wear a pyjama." She explains, "Demand isn't there, and the supply stream is clogged."

3.2 H&M (Fast Fashion Brand) & Collaborations

In order to compete, ready to wear fashion labels have recently developed associations with premium brands so as to explore more prospective clienteles (Uggla, 2004), enhance their overall image (Okonkwo, 2007), and design distinctive items (Griffioen, 2011). Karl Lagerfeld, who is the creative head

designer of Chanel and Fendi, produced a capsule collection in 2004 for H&M. This approach meant to spark trade innovations, distinguish the fast fashion brand from rivals, and increase revenue for both the collaborators (Amoye, 2011). The brand saw a 12 percent increase in sales in the very first month after launching the collection with this approach (Business of Fashion, 2013).

Several high-end designer labels have expressed interest in collaborating with the fast fashion sustainable brand, H&M. H&M has teamed with a slew of talented designers. H&M. The brand associated with numerous clothing designers after Karl Lagerfeld, including Stella McCartney, Jimmy Choo, Roberto Cavalli, Comme des Garcons, Versace, and Alexander Wang (H&M, 2015). By late 2013, with a 100% sell-out record and no discounts, Isabel Marant raised H&M's retail income by 21 percent (Business of Fashion, 2013).

Other associations of H&M with famous labels like Versace, Marni, Maison Martin Margiela, and Balmain were immensely creative, with the mass media reporting that brand partnership initiatives had brought together a mass market. The projects brought in a lot of money for H&M, and the luxury designers were capable of reaching a much larger audience than before. Many customers and the media have been waiting for the Balmain x H&M brand partnership, which was unveiled on November 5, 2015, and for which H&M also recorded a 10 percent increase in sale turnover by year end relative to the last year (Lidbury, 2016). H&M initiated its collaborations in 2004. Table 4 shows the set of fast fashion brand- H&M and Couturier Brands' collaborations (2004-2021).

Collaboration Year	Couturier Brand	Author
2004	Karl Lagerfeld	Yotka (2017)
2005	Stella McCartney	Fashionunited (2018)
2006	Viktor & Rolf	Weinstein (2007)
2007	Stella McCartney	Ballinger (2007)
2008	Viktor & Rolf	Fashionunited (2018)
2009	Matthew Williamson	The Guardian (2009)
2009	Jimmy Choo	Collins (2009)
2009	Sonia Rykiel	Schweitzer (2014)
2010	Sonia Rykiel	Scandinavian Mum (2010)

2010	Lanvin	Fashionunited (2018)
2011	Versace	Wischhover (2011)
2012	Versace	Cartner-Morley (2012)
2012	Maison Martin Margiela	Alexander (2017)
2012	Marni	Bearne (2012)
2013	Isabel Marant	Kirkova (2013) and Bloomberg (2013)
2014	Alexander Wang	Akbareian (2014)
2015	Balmain	Sherman (2015) and Brooks (2015)
2016	Kenzo	Woo (2016)
2017	Erdem	Edmonds (2017) and Teather (2017)
2018	Moschino	Glossy (2018)
2019	Giambattista Valli	GQ Magazine (2019)
2020	The Vampire’s Wife	Daisy Murray (2020)
2021	Simone Rocha	GQ Magazine (2021)
2021	Brock Collection	Amy De Klerk (2021)
2021	Sabyasachi	Business Today (2021)

Table 4: Collaborations between H&M and Couturier Brands

4.0 METHODOLOGY

4.1 Association Model (Figure 1)

H&M x Sabyasachi Collaboration (Downward Brand Extension or Masstige of the Luxury Couturier Brand)

↓

Consumers’ Perception of the Luxury Couturier Brand (Sabyasachi) in association with Fast Fashion Brand (H&M)

↓

Figure 1: Association Model

4.2 Case Study of 'Wanderlust' Collection (2021)

Case Study- Couturier Brand x High Street Brand

Sabyasachi x H&M (Wanderlust Collection)

August 2021

Collections: garments for both women and men, along with accessories

Sabyasachi Mukherjee (born on 23 February, 1974) is a Kolkata-based Indian fashion and jewellery designer, entrepreneur, and couturier. Handicrafts have always grabbed Sabyasachi's interest. With just three assistants and Rs 20,000 in his pocket, he started his personal label three months after graduating. His label quickly gained media attention as a result of its one-of-a-kind inventory. He favours clothing with unusual, uneven cuts and lengths. His definition of beauty was quite different from that of the glamour industry. His collection was never about glamour and glitter; instead, it was about muted colours in a combination that draws people›s attention right away, coffee hues, and uneven patchwork. In 2014, he turned out to be the first Indian designer to make 100 crores rupees in a single year, and his annual turnover is now about 253 crores.

Mukherjee is the council member of the National Gallery of Bollywood industry and also one of the Associated Designer Members of FDCI. Guzaarish, Baabul, Laaga Chunari Mein Daag, Raavan, and English Vinglish are among the Bollywood movies for which he created ensembles. Sabyasachi's first Summer Collection of 2007 at London Fashion Week received positive reviews, and his company began to sell internationally. Mythology, glamour, minimalism, architectural styles, and intricate craftsmanship were all present in this collection. Mukherji characterises his named label's products as "global style with an Indian essence," describing them as "a blend of designs with colourful ornamentation and a diversified colour scheme." His ingenuity and

imagination may be seen in several Indian films for which he has created costumes. Sabyasachi Mukherjee received the National Intellectual Property (IP) Award 2018 as the Best Indian corporation for his Creations and Corporatization after capturing nearly everybody's heart with the beauty of hand-embroidered fashion.

Post the pandemic, in August 2021, the association between Hennes & Mauritz and Sabyasachi Mukherjee, fashionista of India, made headlines. The partnership is the newest in a long line of H&M associations that commenced with Karl Lagerfeld in 2004 and so have subsequently featured Alexander Wang, Diane von Furstenberg, Stella McCartney, and perhaps also rock artists like Madonna and Kylie Minogue. The Sabyasachi x H&M collection featured garments for both women and men, along with accessories. The collection is inspired by *'Wanderlust,'* and was enriched with rich textiles in both contemporary and classic ethnic designs. The Sabyasachi Design Centre recreated Indian textile and printed traditions, which were significant aspects of the range.

Though Sabyasachi's worked extensively with Christian Louboutin and Bergdorf Goodman, a French footwear designer and a New York-based premium department store respectively. This was the first instance for a Couturier brand to collaborate with a high-street brand, H&M. When Sabyasachi x H&M was announced, the internet got driven into a frenzy, and the website almost ended up crashing as the collections sold out.

S. No.	H&M only			H&M x Sabyasachi			% Increase in Price
	Name	Product Image	Price	Name	Product Image	Price	
1	H&M Flounce Trimmed Dress [1]		Rs 2,999	H&M x Sabyasachi Dress [2]	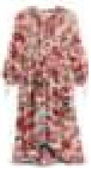	Rs 5000	40%

2	H&M Tie-belt Satin dress [3]		Rs 2,299	H&M x Sabyasachi Dress [4]	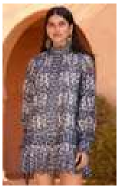	Rs 7000	67.1%
3	H&M Patterned Shorts [5]		Rs 1,499	H&M x Sabyasachi Shorts [6]		Rs 4000	62.5%
4	H&M Oversized Shirt [7]		Rs. 1,299	H&M x Sabyasachi Shirt [8]		Rs 5000	74%
5	H&M + Tie neck Blouse [9]		Rs 1,299	H&M x Sabyasachi Blouse [10]		Rs 4,000	67.5%

Table 5: Comparative Analysis of Retail Models (Wanderlust Collection)

Table 5 shows the comparative analysis of both H&M only products and the items from H&M x Sabyasachi 'Wanderlust Collection'. As evidenced in the table, the H&M only products are cheaper while the prices got increased when H&M collaborated with the Couturier Sabyasachi.

As is clear in Sample 1, the H&M 'Flounce Trimmed Dress' costs for Rs 2,999, whereas on the other hand, there is a hike of 40% in the price of a similar kind of dress from the H&M x Sabyasachi's Collection. Similarly, as observed in Sample 2, the H&M 'Satin dress' is only for Rs 2,299 whereas on the other hand, a similar style of dress from H&M x Sabyasachi collection is for Rs 7,000, which means there is a hike of almost 67% rise in prices.

4.3 Restorative Measure:

Restorative Measure is a strategy that seeks to repair any harm done to people and the relationships that have been damaged. Since the designer brand, Sabyasachi is associated with slow fashion and employee morals, the partnership drew a lot of criticism on social sites. The association with H&M that was criticized for harming its industrial labor and damaging the environment stands in contrast to Sabyasachi's fundamental vision. H&M

has been one of the organizations that have used the national pandemic as a justification to decrease employees' salaries, forcing them much further into poverty, as per data printed by the Clean Clothes Campaign (July 2021). The fast fashion brand, H&M agreed to pay its workers fairly for working till late to meet deadlines, but community organizations found that the corporation did not comply up. As a result, when the couturier brand teamed up with a fast fashion brand recognized for its supply chain mismanagement, it caused a lot of displeasure. Many people were also upset to see Sabyasachi's karigars, being highly regarded in the manufacture of traditional textiles of India, sit back and observe their ideas being bulk manufactured for a low price. The label, Sabyasachi is a person who believes in slow fashion, developed the concept of his company on handicrafts which could be expected to be followed through the generations. The collection, on the other hand, appeared disingenuous because it was neither durable nor empowers craftspeople of India in any manner. Sabyasachi has grown in popularity because of its commitment to sustainability and ethical fashion, but the recent partnership appeared to be a misleading attempt.

After witnessing the new collaboration's failure, Sabyasachi Mukherjee issued a statement [11] dated- August 14, 2021, confessing and explaining that the label had not expected such a reaction. Even with the best analytics, logistical, and distribution network staff, they couldn't interpret this answer. The entire goal of the alliance, it was stated, was to provide great value for money. This would even intend to provide unrestricted access to the ancient H&M Emblem, that we treasure. The designer brand ended his message by promising to address future business plan failures, meet everybody's demands as fast as possible, and expand the brand worldwide.

4.4 Data Collection

This qualitative study examines consumers' perception towards the collaboration of a high-end label and high-street fashion brand. Using a sample size of 18, in-depth interviews were conducted in the United Kingdom to learn how customers felt about the luxury couturier's co-branding with the fast fashion retailer.

The respondents, including both male and female, were selected using Snowball sampling between the ages of 20 and 35. The customers who had purchased a collaborated brand in the past and were willing to participate in

the study were located among the researchers' social networks.

4.5 Content Analysis

Name	Age	Gender	Purchased from Couturier Brand (Collaborated with H&M)
Christ	25	Male	Karl Lagerfeld
Shaler	34	Female	Jimmy Choo
John	21	Male	Versace
Serine	28	Female	Balmain
Jerry	32	Male	Kenzo
Harry	23	Male	Matthew Williamson
Stella	30	Female	Stella McCartney
Marris	31	Male	Viktor & Rolf
Maria	24	Female	Jimmy Choo
Doyin	22	Male	Karl Lagerfeld
Diana	35	Female	Maison Martin Margiela
Hilton	23	Male	Marni
Nanny	24	Female	Matthew Williamson
Julie	31	Female	Moschino
Monalisa	32	Female	Alexander Wang
Decris	24	Male	Karl Lagerfeld
Rose	33	Female	Moschino
Alfrendo	29	Male	Versace

Table 6: Content Summary

4.6 Sentiment Analysis

It is common for people to share their thoughts and feelings about a given scenario with others. This link may have both positive and negative implications. The qualitative data in this study was analysed using NVivo 12.0. The amount of positive and unfavourable responses for the collaboration from the study participants are shown in Table 7 below:

S. No	Name	Very Negative	Moderately Negative	Very Positive	Moderately Positive
1	Christ	6	7	2	10
2	Shaler	7	7	5	12
3	John	10	11	9	5

4	Serine	12	4	10	13
5	Jerry	5	2	11	6
6	Harry	2	1	7	7
7	Stella	3	3	6	10
8	Marris	7	9	4	3
9	Maria	5	10	8	9
10	Doyin	2	14	11	7
11	Diana	4	7	9	8
12	Hilton	8	6	12	8
13	Nanny	9	8	11	6
14	Julie	11	10	4	7
15	Monalisa	6	4	5	11
16	Decris	9	3	7	9
17	Rose	2	2	10	7
18	Alfrendo	1	2	11	5
	Total	109	110	142	143

Table 7. Sentiment Analysis towards Collaboration

Based on the data in the table, it appears that collaboration has a generally positive effect on sentiments. A positive attitude is mentioned 285 times while a negative one only appears 219 times.

5.0 RESULTS AND DISCUSSIONS

Price Differentiation- When a luxury item is available to the general public, it loses its uniqueness and then becomes common. As a result of collaboration, evident from Table 5, price variation is considerable as the profit margin has increased dramatically which will in turn affect the customer loyalty. The designer brand is no more exclusive now; it is no more confined only to the elite class but is affordable to all the customer segments, including the common man.

Global Publicity and New International Markets- The collaboration might be considered a success for the high - end designer companies because they are able to attract a large number of new clients while also retaining their existing ones. It became highly essential for luxury brands to distinguish themselves by expanding their business into new lines or branching into new categories, thereby increasing their prospective consumer base and addressing

the issue of competitive pressures.

Loss of Designer Brand Image: Collaborations like these also have a big impact on people's views of brand fit, reputation, and value. However, these alliances can often have a detrimental effect on luxury businesses' overall image. The consequent poor impressions of high-end brands have demoralised customers from buying their elevated products in the future. Respondents also stated that as a consequence of the partnership, they will refrain from participating in any future activities related with the premium brand. Although some participants considered spreading unfavourable words, many chose to quit purchasing from the premium brand entirely, indicating a significant brand boycott behaviour triggered by a discrepancy among consumer expectation and the actual brand performance.

From a managerial perspective, this study offers a wide range of contributions for managers in the process of designing innovative marketing strategies. The results of the study imply that, despite the enhanced brand awareness opportunity that can emerge from such collaborations, for luxury brands to prevent negative word-of-mouth, con-sumer disengagement and ultimately luxury brand avoid-ance, managers need to be vigilant about the value of their brand, while taking into consideration, over time, the value of any possible partnership.

6.0 LIMITATION

The study focusses solely on the influence that the H&M x Sabyasachi partnership had on the image of the Indian designer brand Sabyasachi, rather than the H&M brand. Despite the H&M association is a promotional tool for luxury designer firms to make people more aware and expand their reach, the paper did not concentrate on how well the H&M premium partnership was executed as marketing and advertising strategy but rather on the partnership impact on the self-image of a high-end Indian Designer brand.

7.0 CONCLUSION AND SCOPE OF STUDY

A lot of research has been done on how customers observe the Indian designer brand's image after partnerships but still there are gaps in this area as very few articles are published discussing the impact on branding of designer. While brand alliances have a favourable impact on mainstream market fashion companies, but their impact on premium brands is debatable. Whatever the

reviewers may say, the collection's boho-chic style immediately drew notice. The sales indicates that the partnership was a hit, also the publicity was precise.

The achievement and sustainability of such an association will be measured by time itself, in the long term. Without even a doubt, the worldwide brand H&M's collaboration with Sabyasachi had a significant influence on global business, resulting in new career prospects. Sabyasachi, on the other hand, had lost its brand image. For the first time in India, a renowned couturier, Sabyasachi, has joined hands with a fast fashion brand, H&M, implying that a couturier known for exclusivity has begun designing for the common people. Sabyasachi is presently producing in large quantities. In other words, since the pandemic, Indian grandeur has sunk to the realm of trashy, low-cost fashion.

Nabec et al. (2016) stated that future studies could concentrate on short-term partnerships, exposing a lack in understanding the effects of capsule design range coming from these kinds of partnerships. Further research could also look into the reactions of luxury buyers to this type of partnership in the fashion business. The social media impact of this association is essential to analyze for organizations who want to create ties with their customers and really want to spread their investigations regionally and to a wider socioeconomic background. The study could expand on this study by designing a survey technique that collects data from a sample using a questionnaire approach. Lastly but not the least, customer attitudes towards premium brands are subject to change. As a result, longitudinal research on customer attitudes in the long and short run especially after the introduction of the alliance would be intriguing.

References:

1. Amoye, E. (2011). *Questionable Co-branding, Lessons in Luxury*. Retrieved May 30, 2015, from http://lessonsinluxury.com/2011/11/23/focus-focus-focus-through-cobranding/
2. Balachander, S., and S. Ghose. (2003). *Reciprocal spill over effects: A strategic benefit of brand extensions.* Journal of Marketing 7(1):4–13
3. Barnes, L., & Lea-Greenwood, G. (2010). *Fast fashion in the retail store environment*. International Journal of Retail & Distribution Management, 10(38), 760–772. doi:10.1108/09590551011076533
4. Besharat, A. (2010). *How co-branding versus brand extensions drive consumers' evaluations of new products: A brand equity approach.* Industrial Marketing Management 39(8): 1240–1249.
5. Bhardwaj, V., & Fairhurst, A. (2010). *Fast fashion: Response to changes in the fashion*

industry. Inter-national Review of Retail, Distribution and Consumer Research, 1(20), 5–173

6. Business of Fashion. (2013). *H&M Could Do More to Catch a Lift from Designer Collaborations. The Business of Fashion*. http://www.businessoffashion.com/articles/news-analysis/hm-could-do-more-to-catch-a-lift-from-designer-collaborations
7. Chevalier, M., & Mazzalovo, G. (2008). *Luxury Brand Management: A World of Privilege*. Singapore: Wiley & Sons
8. Cohen, A. M. (2011). *Fast Fashion: Tale of Two Markets*. The Futurist, 45(5), 12–13
9. Geylani, T., J.J. Inman, and F.T. Hofstede. (2008). *Image reinforcement or impairment: The effects of co-branding on attribute uncertainty*. Marketing Science 27(4): 730–744
10. Griffioen, A. (2011). *Creating Profit Through Alliances: How collaborative business models can con-tribute to competitive advantage*. http://www.allianceexperts.com/images/documents/creating-profit-through-alliances-sq.pdf
11. H & M Group, Annual Report 2020, https://hmgroup.com/wp-content/uploads/2021/04/HM-Annual-Report-2020.pdf
12. Joy, A., Sherry, J. F. Jr, Venkatesh, A., Wang, J., & Chan, R. (2012). *Fast Fashion, Sustainability, and the Ethical Appeal of Luxury Brands*. Fashion Theory, 3(16), 273–296. doi:10.2752/175174112X13340749707123
13. Kupfer, A.K., N.P. vor der Holter, R.V. Ku¨ble, and T. Hennig-Thurau (2018). *The role of the partner brand's social media powerin brand alliances*. Journal of Marketing 82(3): 25–44.
14. Lee, C.L., and R. Decker. (2016). *Co-branding partner selection: The importance of belief revision.* Journal of Business Economics and Management 17(4): 546–563
15. Lidbury, O. (2016). *Did Balmain help boost H&M's December sales?* https://www.telegraph.co.uk/fashion/brands/did-balmania-help-boost-hms-december-sales/.
16. Nabec, L., B. Pras, and G. Laurent. (2016). *Temporary brand–retailer alliance model: The routes to purchase intentions for selective brands and mass retailers.* Journal of Marketing Management 32(7/8): 595–627
17. Okonkwo, U. (2007). *Luxury Fashion Branding: Trends, Tactics, Techniques.* Basingstoke, UK: Palgrave Macmillan. doi:10.1057/9780230590885
18. Parrott, G. R., Danbury, A. H., & Kanthavanich, P. (2015). *Online behavior of luxury fashion brand advocates*. Journal of Fashion Marketing and Management: An International Journal, 19(4), 360–383. doi:10.1108/JFMM-09-2014-0069
19. Phau, I., & Prendergast, G. (2000). *Consuming luxury brands: The relevance of the Rarity Principle*. Journal of Brand Management, 2(8), 122–138. doi:10.1057/palgrave.bm.2540013
20. Rosenblum, P. (2015). *Fast Fashion Has Completely Disrupted Apparel Retail. Forbes*. http://www.forbes.com/sites/paularosenblum/2015/05/21/fast-fashion-has-completely-disrupted-apparel-retail/
21. Toktali, N. (2008). *Global Sourcing Insights from the Clothing Industry: The Case of Zara, a Fast Fashion Retailer*. Journal of Economic Geography, (8): 21–38
22. Voss, K.E., and B.S. Gammoh. (2004). *Building brands through brand alliances: Does a second ally help?* Marketing Letters 15(2):147–159

23. Votola, N.L., and H.R. Unnava. (2006). *Spill over of negative information on brand alliances*. Journal of Consumer Psychology16 (2): 196–202
24. Uggla, H. (2004). *The Brand Association Base: A conceptual model for strategically leveraging partner brand equity.* Brand Management, 2(12), 105–123. doi:10.1057/palgrave.bm.2540208

Image Sources:

1. https://www2.hm.com/en_in/productpage.1031373003.html
2. https://www.townandcountrymag.com/style/fashion-trends/a37285847/hm-collaboration-sabyasachi/
3. https://www2.hm.com/en_in/productpage.1030218003.html
4. https://www.townandcountrymag.com/style/fashion-trends/a37285847/hm-collaboration-sabyasachi/
5. https://www2.hm.com/en_in/productpage.1050033003.html
6. https://www.indulgexpress.com/fashion/new-launches/2021/aug/09/heres-what-to-expect-from-the-sabyasachi-x-hm-collection-35100.html
7. https://www2.hm.com/en_in/productpage.0872901032.html
8. https://www.townandcountrymag.com/style/fashion-trends/a37285847/hm-collaboration-sabyasachi/
9. https://www2.hm.com/en_in/productpage.1062152002.html
10. https://www.hm.com/za/6231a-sabyasachi-x-hm/
11. https://www.instagram.com/p/CSibAyEJHTl/?utm_medium=copy_link

1. Sharda School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida, India -Visiting Lecturer, School of Fashion & Textiles, Satyam Fashion Institute (Affiliated to SNDT Women's University, Mumbai), Noida, India nidhiarora30@outlook.com
2. Sharda School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida, India manisha.gupta1@sharda.ac.in
3. Management Department Sharda School of Business Studies Sharda University, Greater Noida, India mriduldharwal122@gmail.com
4. Department of Applied Sciences and Humanities Accurate Institute of Management and Technology Greater Noida nkshukla.kumar4@gmail.com

Research Article

Objectification is a Way of life- A study on Disquieting Existence of Monisha and Jaya in Voices in the city and That Long Silence.

–Dr. M.N.V.Preya

Voices in the City by Anita Desai, and That long silence by Shashi Despande, depict the reality and the sufferings of women. The internal suffering of the characters Monisha and Jaya portrays the hard reality of many women who suffer silently in and around the world.

Abstract

Objectification is the concept of treating women as mere objects. It is a framework for understanding the experience of being female in a culture that sexually objectifies the female body. Martha Nussbaum is an American philosopher known for her Objectification theory, argued it is a negative phenomenon and defines it under seven traits as Instrumentality, Denial of Autonomy, Interness, Fungibility, Violablity, Ownership, and Denial of Subjectivity. Ray Langton draws together her ground-breaking and contentious work on pornography and objectification. She adds further three traits under Nussbaum's objectification as Reduction to Body, Reduction to Appearance and Silencing. Langton also highlight's how women are made a subordinate and a silence creature to men by losing their basic rights. Thus, Denial of Autonomy and Denial of Subjectivity are the two traits applied to Monisha in Anita Desai's Voices in the city and Silencing is applied to Jaya in Shashi Deshpande's That Long Silence.

Keywords: Objectification, Selfhood, Denial, Silencing, Hegemonic Masculinity

Objectification is the core concept in feminist theory where women are treated as mere objects for sexual gratification and to satisfy men's wants and desires. Treating a person as an object is a negative notion that affects a person's physical and mental health. Amy Reed in her work The Nowhere Girls illustrates how women are being neglected, unheard, and treated as an objects in the following manner, "They know she heard them, but they don't care, or maybe they even wanted

her to. Like she's not even a person, not someone with feelings, not someone who can get hurt. Just an object. Just something they can use" (Reed, 23). According to Martha Nussbaum, women are not equally treated with human dignity but as things to be manipulated and controlled by men. Instrumentality, Denial of Autonomy, Inertness, Fungibility, Violability, Ownership, and Denial of Subjectivity are the seven objectification traits laid down by her. Reduction to Body, Reduction to Appearance, and Silencing are the three objectification traits added to Nussbaum's traits by Ray Langton.

Voices in the City by Anita Desai, and That Long Silence by Shashi Despande, depict the reality and the sufferings of women. The internal suffering of the characters Monisha and Jaya portrays the hard reality of many women who suffer silently in and around the world. Desai and Despande, point out how women are socially and culturally structured where they get used to certain patriarchal norms. Sheila Jeffrey in his Beauty and Misogyny: Harmful Cultural Practices in the West, points out how man and woman are socially constructed into masculinity and femininity. They are judged by their gender roles and caged under the dominance of the patriarchy as, "Women are, of course, understood to be ``different'' from men in many ways, ``delicate, pretty, intuitive, unreasonable, maternal, non-muscular, lacking an organizing character'' (Jeffrey, 21). Shashi Despande's That Long Silence depicts the mute suffering of Jaya under the supreme authority of Mohan in the name of marriage. In Voices in the City, three siblings try to fit into the society but they are rejected at the end. Though the fictions talk about the existential crisis and patriarchy, this paper deals with gender inequality and two objectification traits such as Denial of Autonomy and Denial of Subjectivity by Martha Nussbaum in Anita Desai's Voices in the city and Silencing by Ray Langton in Shashi Deshpande's That Long Silence.

Denial of Autonomy and Denial of Subjectivity are the two objectification traits by Nussbaum as observed in Anita Desai's Voices in the City through one of her protagonists Monisha. The treatment of a person as something whose feelings and individuality are not been taken into account. Denial of Subjectivity and Autonomy of a woman ultimately dehumanizes her in all aspects which set forth them as an instrument for male fantasy and desire. Monisha's feelings are denied and rejected by her in-laws which drives her crazy and mad. Being married to an extended traditional Hindu family with rigid traditional conventions which treat women as a tool for childbirth. The role of the mother is caged inside the four walls, the refined ideal behaviour pattern of self-effacing, self-sacrificing women as "the conventional patterns of behaviour confines women and more specifically mother to domestic roles, to looking after the requirement of the family and managing the household

affairs, providing succour and comfort to the rest of the family at the cost of personal comfort, need and privacy" (Desai, 8). Simone de Beauvoir in her book The Second Sex points out the fact of how women's subjectivity is robbed by an external force such as culture and circumstance.

A woman has ovaries and a uterus; such are the particular conditions that lock her in her subjectivity; some even say she thinks with her hormones. Man vainly forgets that his anatomy also contains hormones and testicles. He grasps his body as a direct and normal link with the world that he believes he apprehends in all objectivity, whereas he considers woman's body an obstacle, a prison, burdened by everything that particularizes it. (Beauvoir, 25)

Her inability of bearing a child is the major reason for ill-treatment which leads her to frustration and detachment from herself. Desai comments on the condition of Monisha as "lives spent in waiting for nothing, waiting on man self-centred and indifferent and hungry and demanding and critical, waiting for death" (Desai, 46). Infertility, zero possibilities to cherish motherhood, and being hooked up in the clutches of societal norms drags Monisha to death. Simone de Beauvoir in her book The Second Sex quote the exact circumstances of Monisha as, "That the child is the supreme aim of woman is a statement having precisely the value of an advertising slogan." (Beauvoir, 217). The agony of the women whose wings are clipped in the name of marriage.

Ray Langton's third objectification trait is Silencing which is seen in Shashi Deshpande's That long silence. Jaya is a clever and bright girl whose qualities are constrained and bounded by the mainstream patriarchal power society. Andrienne Rich in her book Woman Born: Motherhood as Experiences and Institution identify women's body as a powerhouse for men's satisfaction, "There is nothing revolutionary whatsoever about the control of women's bodies by men. The woman's body is the terrain on which patriarchy is erected" (Rich, 63). From her childhood, Jaya is trained in a more conventional way to silence herself and not to raise her voice before any man. Pat Barker is an English writer and novelist who highlights the unarticulated torment of women in her work The Silence of the Girls as "Silence becomes a woman.' Every woman I've ever known was brought up on that saying" (Barker, 236). Jaya learned the art of cooking, cleaning, and all the household activities like any woman in the society who gets polished for nothing except being an object to the world. She is always a subservient woman to her husband and her in-laws. "A woman can never be angry; she can only be neurotic, hysterical, frustrated." (Deshpande, 147).

In a patriarchal society, the sacrifice made by a woman in a family goes unnoticed, where they long for human appreciation, reorganization, and prove them that they exist. Jaya learns to hide all her emotions to herself where

she eventually lacks individuality. Mohan expects Jaya to be an obedient wife who never questions him like his mother and sister who are very much submissive to his father. Maya Banks, a novelist, underlines the fact that men adore submissive women is reflected in her work Sweet Surrender as "Men love a submissive woman…Even when they say they don't. There's just something about a beautiful, soft woman looking to them to protect and take care of them that inspires a man to greatness" (Banks, 172).

Marriage is monogamous which involves a sexual relationship with the spouse. Mohan views Jaya as a pleasure-seeking object to satisfy his urge and throws her away right after his need is fulfilled. This silent agony and pain of Jaya are highlighted by Deshpande in this novel as "In any case, whatever my feelings had been then, I had never spoken of them to him. In fact, we had never spoken of sex at all. It had been as if the experience was erased each time after it happened, it never existed in words (Deshpande, 95)". Her marriage life with Mohan is a failure where they disagree on many things. For Jaya, Verbal silence from all ends makes her suffer a lot, thus leading to marital discord. Immanuel Kant in his theory underlines the fact that women are the most common victims of objectification. He also points out the reality that the monogamous marriage is reducing oneself to an object where the female surrender to satisfy the dominant hand (man) without any queries. In Lectures on Ethics he quotes,

> sexual love makes of the loved person an Object of appetite; as soon as that appetite has been stilled, the person is cast aside as one casts away a lemon which has been sucked dry. … as soon as a person becomes an Object of appetite for another, all motives of moral relationship cease to function because as an Object of appetite for another a person becomes a thing and can be treated and used as such by everyone. (Kant, 163)

Andrea Dworkin in his work Intercourse also quotes the sexual desire of men as the female potential is seized and stolen by men as

> Being female in this world means having been robbed of the potential for human choice by men who love to hate us. One does not make choices in freedom. Instead, one conforms in body type and behaviour and values to become an object of male sexual desire. (Dworkin, 177)

Thus, Voices in the city and That Long Silence presents modern life as lonely, threatening, and difficult to survive for women under the crux of hegemonic patriarchy. Hegemony is the dominance and control over women in the society where a woman is being neglected and objectified in public and

private sectors. Hegemonic masculinity is directly linked to patriarchy. This notion of domination starts from home where the females in the family suffer from domestic violence when they put forth their opinion. When the male member is the ultimate source in the family, women get to live under their roof, and rules abided by them. In that case, women are being conditioned to silence and threaten to live. Most of the women seek refuge in their kitchen thinking that's the only place where they belong. Their ultimate goal is to satisfy the needs and wants of their man. The gender inequality between men and women and the persistence of sexist ideas depends on how women are perceived in society. Simon de Beauvoir in The Second Sex voiced out the oppression and the crux of the problem is that women are framed by men as 'other' and they get easily replaced like an object when they fail to satisfy the societal norms. Women are the other that is not self but an object because they do not define themselves, men define and name them. loss of identity and selfhood is highlighted by Beauvoir in the following lines, "Thus it is that no group ever sets itself up as the One without at once setting up the Other over against itself…the subject can be posed only in being opposed – he sets himself up as the essential, as opposed to the other, the inessential, the object" (Beauvoir, 21).

Work cited:

1. Beauvoir, Simone de. (2015). The Second Sex. Vintage Classics. London.
2. Barker, Pat. (2018). The Silence of the Girls. Doubleday. London.
3. Banks, Maya. (2008). Sweet Surrender. Berkley Books. London.
4. Desai, Anita. (1965). Voices in the City. Peter Owen. London.
5. Deshpande, Shashi. (1988). That Long Silence. Virago. London.
6. Dworkin, Andrea. (2007). Intercourse. Basic Books. London.
7. Jeffreys, Sheila. (2005). Beauty and Misogyny: Harmful Cultural Practices in the West. Routledge. London.
8. Kant, Immanuel. (1963). Lectures on Ethics, Louis Infield (trans.), New York: Harper and Row publisher.
9. Langton, Rae. (2009). Sexual Solipsism: Philosophical Essays on Pornography and Objectification. Oxford University Press. Oxford.
10. Nussbaum, Martha. (1995). "Objectification", Philosophy and Public Affairs, 24(4): 249–291.
11. Reed, Amy Lynn. (2017). The Nowhere Girls. Simon Pulse. London.
12. Rich, Adrienne. (1995). of Woman Born: Motherhood as Experiences and Institution. W.W. Norton & Company. London.

1. Assistant Professor PG & Research Department of English National College (Autonomous) Affiliated to Bharathidasan University, Tiruchirappalli-62000 preyamnv@gmail.com

Research Article

Role of Digital Currency in Changing The Future of Banking Sector in India

–Dr. Suresh Kumar

The blockchain is the technology that will revolutionise the way that financial transactions are handled in the future. It is the future of the financial industry. A digitalized, decentralised, and publicly accessible ledger of all crypto currency transactions is known as a block chain.

ABSTRACT

The 21st century, the Internet, and the technological opportunities it presents are promoting significant changes in the modern business environment. These changes include an innumerable number of transitions and an enormous amount of money transfers within the span of a single day. Financial technology is the only thing that makes all of this possible. By its excess supply and contraction in money supply, the money supply drives both inflation and deflation in economies; as a result, the money supply is managed by the governments of various countries in order to battle inflation or deflation conditions. The use of digital currency and transactions is becoming increasingly important to the economies of many nations throughout the world. Even some countries do not want to regulate their monetary systems or their business dealings. This gave rise to additional innovation in the form of a new currency known as crypto money. One of the most sophisticated currencies that are devoid of uncertainties and regulations.

Keywords: *Digital, Currency, Changing, Banking, Sector*

INTRODUCTION

Money is a form of exchange, a unit of record, a store of significant worth, and a standard for postponed payment. As a financial instrument, money fulfils these functions and more. Companies and individuals have a tendency, within the

framework of the monetary system, to relate paper notes and coins produced by the central bank as cash, which is referred to as money. The scope of money is not limited at this point.

Automation and digitization emerged gradually and quickly assumed the role of primary instruments for the exchange of goods and services, which paved the way for the development of digital currencies (DC). Digital currencies (DC) are digital or electronic forms of currency that have not yet been issued in the form of real banknotes and coins. In addition to these names, it is sometimes referred to as Cyber Cash, Digital Money, Electronic Money, or Electronic Currency.

Technology behind digital currencies-Block chain

The blockchain is the technology that will revolutionise the way that financial transactions are handled in the future. It is the future of the financial industry. A digitalized, decentralised, and publicly accessible ledger of all crypto currency transactions is known as a block chain. The Block chain Technology is also known as "The Trust Machine" due to the fact that it enables individuals who do not have faith in one another to interact with one another without the involvement of a neutral central authority.

Global Trends in Digital currencies

There is a wide range of opinion among nations, regardless of the condition of their economy, regarding the question of whether or not they need to acknowledge digital currencies. In spite of the increased interest that has been exhibited in digital money, many governments continue to delay the implementation of it due to the many difficulties that are involved with it. Adaptability, security, the availability of technology, legal difficulties, and the involvement of central banks are only some of the challenges that need to be overcome. There are just a few of countries that have tackled the legal issues that are associated with digital currencies and updated their legislation to reflect these developments..

The introduction of digital technologies into the banking sector

As a consequence of recent reforms made to the banking system, the entirety of the financial services industry has been subjected to extensive transformation. Since the recent economic crisis, banks have been going through very rapid transformation as a direct result of consecutive advances and innovations in digital technology. This transition has been brought about

by successive advancements and innovations in digital technology. These developments and innovations include the rapid spread of technologies such as smart phones, artificial intelligence, and big data analytics, as well as the entry of new competitors and the changes in customer attitudes and behaviours. In addition, these developments and innovations include the entry of new customers.

The process of fully digitising all areas of the banking business, from client interactions to internal operations, is referred to as "digital banking," and the name "digital banking" refers to this process. This suggests that digital banks rely on artificial intelligence to automate back-end activities such as administrative work and data processing. This, in turn, reduces the amount of pressure placed on employees to accomplish day-to-day responsibilities, which in turn reduces the amount of stress that employees feel. Not only do digital banks make it possible for customers to make deposits and transfers to and from their accounts remotely, but they also make it possible for customers to apply for loans in a more streamlined manner and gain access to specialised money management services. Customers can make deposits and transfers to and from their accounts remotely using digital banks. As a result of the widespread adoption of the internet, which has led to a profound transformation in consumers' habits and preferences, consumers are becoming more accustomed to interacting via digital media to share information about themselves, conduct their dealings with the authorities, shop online, or access new services. This has led to a profound transformation of consumers' habits and preferences.

Bitcoin is an example of a crypto currency that is currently in use. It is a digital currency that can be exchanged directly from one user on the Bitcoin network to another without the need for any third parties to serve as intermediaries. It is a peer-to-peer system that does not have a central bank or a single administration. Bit coin is a decentralised system.

Cryptography is utilised by the nodes of the network in order to validate the veracity of transactions, which are then recorded in what is referred to as a block chain, which is a public distributed ledger. It is unknown who or what group of persons came up with the moniker Satoshi Nakamoto in 2008; however, the digital money known as bitcoin didn't get off the ground until 2009 when its source code was made publicly accessible as open-source software. Until then, the term Satoshi Nakamoto was used..

Identifying the differences between the many new digital assets

Even though there are a variety of methods for differentiating the features of the three categories of digital assets – crypto currencies, stable coins, and CBDCs – there are two aspects in particular that deserve to be brought to your attention. These are: the level of privacy offered by crypto currencies; the level of transparency offered by stable coins; and the level of anonymity offered by CBDCs.

- **Denomination and backing:** Stable coins are often denominated in fiat currencies or strive for stability versus fiat currencies. Additionally, they are backed by assets that are expected to ensure that they may be redeemed at the same value as when they were initially issued. On the opposite end of the spectrum are CBDCs, which are denominated in fiat, or aim for stability against fiat, and crypto currencies, which have their own unit, with no reference to any fiat currency and no asset backing, so that any value they might have is determined solely by what – if anything at all.
- **Governance and technology:** CBDCs and some stable coin arrangements already have centralised ('permission') governance arrangements in place, whereas this is typically not the case for ('permission less') crypto currencies, where governance may depend on some form of consensus developing in order to change the pre-existing software protocols for the system. CBDCs and some stablecoin arrangements already have centralised ('permissioned') governance arrangements in place. Centralized governance solutions, often known as "permissioned" governance, are already in place for CBDCs and certain stablecoin arrangements. In a similar vein, the verification processes for transactions conducted using CBDCs and stablecoins would be very different from one another. In contrast to cryptocurrencies, which use a variety of methods, including "proof of work" mining competitions, to select which entities will be allowed to verify transactions,

it is anticipated that CBDCs and stablecoins will rely on a smaller number of trustworthy entities to verify transactional activity. This is in contrast to cryptocurrencies, which will rely on a smaller number of trusted entities to verify transactional activity.

Information and financial intermediation in banking: a changing landscape

Since the commencement of financial intermediation, banking has been a vital component of the economic life of many advanced nations. This has been the case ever since the beginning of financial intermediation. This function of banking frequently acts as a signal of the economic and financial strength of a society, in addition to the sociological and cultural growth that has taken place in that culture. Despite the fact that banking has undergone significant change over the course of time and transitioned through a variety of shapes and forms, economists and finance theorists typically locate baking's beginnings in the presence of defects in capital markets and trade. This is despite the fact that banking has been around for a very long time. Increased transaction costs and asymmetric information, which are both central to the intermediation literature and exist in the majority of economic transactions, have been a driving factor in the establishment of financial institutions and the increasing importance of these institutions These market deficiencies are largely described by increased transaction costs and asymmetric information.

It would be useful to construct a simple framework that would aid us in appreciating how recent events have impacted the core qualities of a bank, since this will help us understand how those characteristics have been affected. The two key functions that financial intermediaries are responsible for in the process of encouraging economic expansion are as follows: I by altering the "nature of claims," such as by converting deposits into mortgages and loans; and (ii) by providing a brokerage, matchmaking, or transactional service by bringing together economic agents with complementary needs. This could include bringing together people and businesses that are looking for capital with those who have an excess of capital, or by bringing together entities that are looking for intermediation for payment services. To be more specific, I will be changing the "nature of claims," for example, by turning deposits into mortgages and loans; and (ii) providing a matching service.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To study on Digital transformation of the banking industry
2. To study on "crypto currency" effectively prohibits the use of and dealing in all forms of digital assets

RESEARCH METHODOLOGY

Research Design

This study is based on the quantitative and qualitative approaches which help to assess the role of Digital Currency in changing the future of banking sector.

Data Collection

To find out the objectives of the study, secondary data have been used. Secondary data have collected through academic libraries, internet, books, magazines, publications and financial websites govt. of India.

DATA ANALAYSIS

Top Bit coin Exchanges in India

As a consequence of a ban on trading that was enforced by the financial institutions of India, popular crypto currency exchanges in the nation, such as Zeb Pay, have been forced to shut down. Despite this, the following significant exchanges are still active in India at the present time.

Unocoin

Unocoin is the most prominent Bitcoin exchange in India. The company was established in 2013. It is a regulated company that offers modest fees of 1 percent, which decline to 0.7 percent with higher trading volumes and is supported by investments from the United States of America. It is a pretty straightforward trading platform that enables customers to purchase crypto money using any bank account in India. In spite of this, the impending plan to prohibit Unocoin could make things difficult for the cryptocurrency.

WazirX

WazirX was established in 2018, making it one of the most reliable exchange platforms in India. It concentrates on providing consumers with exchange-escrowed P2P services so that they can continue to withdraw INR.

WazirX is a cryptocurrency exchange that complies with the KYC standards, offers a mobile application for users of both Android and iOS, and promises to be able to process several hundred transactions per second..

BITCOIN AND RBI

The Indian government has traditionally held a pessimistic view on cryptocurrencies. In 2017, the Reserve Bank of India (RBI), which is India's central bank, explored a proposal to establish its own own crypto currency called Lakshmi. This plan has since been abandoned. Additionally, it has been investigating the possibility of promoting the use of blockchain technology in banking and payment organisations. However, the government has mostly ignored cryptocurrencies, and officials have instead chosen to criminalise their use through the use of jail and legal petitions. Bitcoin is not acknowledged as a form of legal cash, and as of the 23rd of July, 2019, a bill to ban cryptocurrencies and regulate official digital currencies has been introduced. An exchange headquartered in India known as Unocoin once enabled users to trade Bitcoins but has since removed this capability. Despite this, Bitcoin may still be bought and sold on digital currency exchanges in India such as Zeb Pay, Coin Delta, and Coin Secure. A significant number of Bitcoin dealers often purchase the cryptocurrency through diaspora networks in countries in which it is recognised as legal cash.

Crypto currencies this idea that one day cryptocurrencies will pose a threat to the financial system dates back to the day the idea was even introduced, when its purpose was stated, which was for the payments between two parties to be sent directly from one party to another without any central authority. Among the risk factors that are affecting or impacting the bank's power of competition and is reducing the bank's profit and revenue, this idea is one of the risk factors that is affecting or impacting Banks view cryptocurrencies as a potential risk for three primary reasons: the first is that the use of this digital currency will reduce the bank's ability to monitor and control the flow of funds, which means that the "Know Your Customer" regulation will be rendered obsolete, and the increased risk of money laundering as a result of the lack of oversight over the transferred funds; the second is that the digital currency can be used to conduct transactions anywhere, including in areas where traditional currencies are not accepted; and the third is that the use of cryptocurrencies.

Table 1: Bitcoin transaction fees

Date	Next Block Fee	3 Blocks Fee	6 Blocks Fee
2020-05-20	5.94 IND /tx	5.90 IND /tx	5.40 IND /tx
2020-04-20	0.28 IND /tx	0.27 USD/tx	0.09 IND /tx
2020-01-04	0.13 IND /tx	0.12 IND /tx	0.05 IND /tx
2019-06-28	6.25 IND /tx	6.25 IND /tx	5.64 IND /tx
2018-01-09	20.06 IND /tx	20.00 IND /tx	18.58 IND/tx
2017-12-21	33.82 IND /tx	33.26 IND /tx	33.26 IND /tx
2016-07-14	0.1 IND /tx	0.1 IND /tx	0.07 IND /tx

Source: https://billfodl.com/pages/bitcoinfees

Additionally, the growth of non-depository organisations that provide traditional banking services as well as creative new products can have an influence on the competitive environment. This is because these companies

offer both classic and innovative banking goods and services. In addition, the widespread adoption of new technology, such as internet networks, cryptocurrencies, and payment systems, could incur significant costs for the modification or adaptation of our existing products and services. This is because we will be expanding, evolving, and adding remote-connectivity solutions to our strategies for internet banking and mobile banking respectively. These expenses may be spent as a consequence of a mix of reasons, such as the fact that our goods and services need to be adjusted or adapted in order to suit mass adoptions. Those modifications and adaptations might be costly.

We can now see why Bitcoin or other crypto currencies are superior to banks in this regard because there are minimal to no transaction fees; we can also see that sometimes the fees are as little as 10 cents per transaction and sometimes it was over 30 Rs. per transaction, so why is there such a huge gap? Similarly, we can see that sometimes the fees are as little as 10 cents per transaction and sometimes it was over 30 Rs. per transaction. The above graph and table make it clear why cryptocurrencies like Bitcoin and cryptocurrencies in general are preferable to banks when it comes to this particular issue. So, let's take a look at the table once more and see how it compares to the value of Bitcoin at that same time. If it turns out to be the case, then finding it out shouldn't be too difficult. For example, transaction fees reached more than 30 rupees in December of 2017. On the twenty-first, the typical fee for completing a transaction was 33 Indian rupees. In December of 2017, the price of a single bitcoin had skyrocketed to around 19,000 Indian rupees at that point.

The Internet and Mobile Association of India filed a case with the Supreme Court of India in the year 2019, calling into question the legality of crypto currencies and requesting an order or directive that would prohibit the transaction of those currencies. The case also questioned the legitimacy of blockchain technology. In March of 2020, India's top court came to the conclusion that the ban on bitcoin transactions imposed by the RBI should be overturned.

A state-backed digital currency that would be issued by the Reserve Bank of India is one of the options that is being considered by the government for possible creation in the year 2021. In the meanwhile, Bitcoin and other forms of private digital currency will be made illegal...

Table 2 showing trends of Bitcoin value in respect of Indian rupee

Gold value (10 grams)			Bitcoin value		
Date	**Price**	**Change %**	**Date**	**Price**	**Change %**
Jan 2021	34,692.79	-1.71%	Jan-21	26,37,105	24.64%
Dec 2020	35,914.04	6.41%	Dec-20	21,15,850	45.18%
Nov 2020	31,716.05	**-5.63%**	Nov-20	14,57,389	41.63%
Oct 2020	35,615.24	-0.81%	Oct-20	10,28,993	29.89%
Sep 2020	36,198.87	-4.22%	Sep-20	7,92,221	-7.18%
Aug 2020	39,461.82	-0.46%	Aug-20	8,53,531	0.62%
Jul 2020	39,824.19	9.20%	Jul-20	8,48,261	22.87%
Jun 2020	33,397.56	3.23%	Jun-20	6,90,369	-3.49%
May 2020	31,339.62	3.75%	May-20	7,15,323	10.30%
Apr 2020	29,114.60	6.74%	Apr-20	6,48,529	34.20%
Mar 2020	25,555.22	0.73%	Mar-20	4,83,270	-21.91%
Feb 2020	25,185.69	-1.68%	Feb-20	6,18,838	-7.53%
Jan 2020	26,053.19	3.79%	Jan-20	6,69,214	30.35%
Dec 2019	24,186.47	3.62%	Dec-19	5,13,407	-5.16%
Nov 2019	22,524.01	-3.03%	Nov-19	5,41,312	-16.66%
Oct 2019	23,953.75	2.77%	Oct-19	6,49,510	10.86%
Sep 2019	22,680.36	-3.49%	Sep-19	5,85,865	-14.52%
Aug 2019	24,348.48	6.15%	Aug-19	6,85,360	-1.32%
Jul 2019	21,609.00	1.36%	Jul-19	6,94,522	-6.68%
Jun 2019	21,033.70	7.14%	Jun-19	7,44,275	25.36%
May 2019	18,322.33	0.98%	May-19	5,93,713	52.46%
Apr 2019	17,966.72	-0.74%	Apr-19	3,89,434	34.57%
Mar 2019	18,235.80	-1.81%	Mar-19	2,89,395	4.89%
Feb 2019	18,914.50	-0.63%	Feb-19	2,75,899	10.61%
Jan 2019	19,154.56	2.74%	Jan-19	2,49,431	-6.63%
Dec 2018	18,146.78	4.21%	Dec-18	2,67,136	-5.19%
Nov 2018	16,710.73	0.35%	Nov-18	2,81,748	**-40.28%**
Oct 2018	16,594.59	1.54%	Oct-18	4,71,799	-1.70%
Sep 2018	16,096.00	-0.70%	Sep-18	4,79,973	-3.62%
Aug 2018	16,325.17	-2.45%	Aug-18	4,97,978	-6.15%
Jul 2018	17,155.76	-2.52%	Jul-18	5,30,589	21.29%
Jun 2018	18,055.30	-3.68%	Jun-18	4,37,470	-13.36%
May 2018	19,460.25	-1.70%	May-18	5,04,930	-17.63%
Apr 2018	20,138.45	-0.48%	Apr-18	6,13,004	36.06%
Mar 2018	20,334.76	0.48%	Mar-18	4,50,550	-33.03%
Mean	**24457.61**			**694462.66**	
Std deviation	**7321.635818**			**484932.45**	
Co-Variance	**0.299360233**			**0.6982844**	
Correlation coefficient			**0.640122673**		

(Source: investing india.com)

	Variable 1	*Variable 2*
Mean	24457.61	694462.6571
Variance	53606351.05	2.35159E+11
Observations	35	35
Hypothesized Mean Difference	0	
Df	34	
t Stat	-8.172997212	
P(T<=t) one-tail	7.79545E-10	
t Critical one-tail	1.690924198	
P(T<=t) two-tail	1.55909E-09	
t Critical two-tail	2.032244498	

Inference:

The fact that the calculated T value (7.79) in the one tail test is greater than the table value of t (1.690) indicates that the alternative hypothesis has been accepted. This suggests that there is a significant disparity between the rates at which the prices of gold and bitcoin are fluctuating in relation to one another. The fact that the calculated T value (1.55), which is less than the table value of t (2.03) indicates that the null hypothesis has been accepted and that there is no significant difference between the changing values of gold and bit coin is supported by the findings of a test that was conducted with two different sets of data.

OBSERVATIONS OF THE STUDY

(a) The decision to abolish the limitation on trading cryptocurrencies that had been imposed by the RBI was handed down by the Supreme Court of India in March of 2020. The purchase and sale of cryptocurrencies can now legally take place within the borders of India.

b) The government intends to outlaw privately created cryptocurrencies like Bitcoin beginning in the year 2021, while at the same time investigating the idea of developing "a state-backed digital currency that will be issued by the Reserve Bank of India". Therefore, employing cryptocurrency in financial transactions might be considered a dangerous endeavour.

c) The rate of "change in the value of gold was unusually low in November 2020", coming in at a rate of -5.63 percent, but in July 2020, the rate of change in the value of gold was extraordinarily high, coming in at a rate of 9.20 percent.

d) The change in the price of gold in November 2020 came in excessively low, coming in at -5.63 percent, while it came in extremely high, coming in at 9.20 percent, in July 2020.

e) The price of gold will see a generally stable trajectory between March 2018 and January 2021, barring any unforeseen events. (which indicates that shifts in the value of gold are not constant).

f) From March 2018 through January 2021, it is anticipated that the value of Bitcoin will see a great deal of volatility. (which indicates that the value of gold does not behave predictably)

g) Based on their comparison of the ways in which bitcoin and gold's prices have fluctuated over time, researchers came to the conclusion that there was a significant disparity between the two; as a result, investing in gold is recommended above investing in bitcoin.

CONCLUSION

The publication of a white paper by Satoshi Nakamoto, who is credited with being the inventor of cryptocurrencies, is considered to be their point of genesis. In this paper, Nakamoto proposed "a system for electronic transactions" that would be built on a peer-to-peer network. The article was published in 2008. Nodes, which are individual computer devices that are a part of the network, would be in charge of verifying and recording any transactions that took place on this network. Transactions might then be carried out in a decentralised fashion as a result of this being feasible. Almost immediately after that, in the year 2009, Satoshi Nakamoto created and distributed the world's first cryptocurrency, which is now known as Bitcoin. The Inter-Ministerial Committee that was established on November 2, 2017, in order to propose particular actions regarding crypto currencies, has prepared a draught bill that is titled as the "Banning of Cryptocurrency and Regulation of Official Digital Currency Bill, 2019 (Draft Bill)." This bill is intended to prohibit cryptocurrencies and regulate official digital currencies. The purpose of this measure is to make the use of cryptocurrencies illegal while also regulating official digital currencies. The proposed piece of law has been subjected to research, but the legislative body has not yet been briefed on the findings. The proposed law has a wide definition of the word "cryptocurrency" and prohibits, in effect, the use of and dealing in any and all sorts of digital assets, including digital currencies as well as other types of digital assets. In the event that the bill was passed by parliament, it would have a detrimental effect on those who have invested in digital currencies. To achieve a level of diversification that is enough for a portfolio, the acquisition of bitcoin is not required. You should only risk a small, single-digit proportion of the overall value of your assets if you want to speculate on the price of bitcoin. If you do so, you should limit the amount you risk to a modest amount. There is not enough evidence to imply that one of the two possibilities will deliver more consistent returns than the other. Investing in gold, on the other hand, is better than investing in bitcoin due to the fact that investing in gold will create a consistent return on investment..

REFERENCES

1. Dr Mubarak(2021) "A Study On Cryptocurrency In India" © 2021 IJRAR February 2021, Volume 8, Issue 1 www.ijrar.org (E-ISSN 2348-1269, P- ISSN 2349-5138)
2. Victor Murinde (2022) "The impact of the FinTech revolution on the future of banking: Opportunities and risks" International Review of Financial Analysis Volume 81, May 2022, 102103 DOI: 10.1016/j.irfa.2022.102103

3. Ram Raj G (2018)“Is fintech leads cryptocurrency as a future indian currency?” https://www.researchgate.net/publication/330881439_IS_FINTECH_LEADS_CRYPTOCURRENCY_AS_A_FUTURE_INDIAN_CURRENCY
4. Roy Setiawan (2020) “The Concept of the Cryptocurrency and the Downfall of the Banking Sector in Reflecting on the Financial Market” January 2021 Rentgenologiya i Radiologiya 2021(60(S1)):17-33
5. *Ahmed Eltweri,* Social and Environmental Responsibility Effect on a Company’s Financial Performance, 2020.
6. *Narcisa Roxana Moşteanu,* Financial investments’ challenges in 2020–time for education and professional development, The International EFAL-IT BLOG Information Technology innovations in Economics, Finance, Accounting, and Law, Volume 1 – Issue 7/2020 – Bacau (Romania).
7. *Luigi Pio Leonardo Cavaliere, Julián Andrés Díaz Tautiva, Camila Barragán, Saad Uddin Khan, Analyzing* The Pattern And Relative Importance Of Remittance Sources Of Pakistan, International Journal of Management (IJM), Volume 12, Issue 1, January 2021, pp.879-888.
8. *Snehal Y. Hole, Luigi Pio Leonardo Cavaliere, Caterina De Lucia,* India’s Coastline Can Become an Engine of Growth: An Economic Overview, Psychology and Education Journal, 2021, Volume 58, Number 1,pages 2158-2167, DOI: https://doi.org/10.17762/pae.v58i1.1093
9. *Caterina De Lucia, Luigi Pio Leonardo Cavaliere, Ester Salvato, Alessio Faccia,* Growth Effects of Remittance: A Case of Turkey Diaspora, Psychology and Education Journal, 2021, Volume 58, Number 1, pages 690-698, DOI: https://doi.org/10.17762/pae.v58i1.819
10. Tejal Shah (2019) “Applications Of Blockchain Technology In Banking & Finance” February 2018 DOI:10.13140/RG.2.2.35237.96489
11. Manpreet Kaur (2020) “Digital Currency And Its Implications For India” September 2020 The Management Accountant Journal 54(11):64-67 DOI:10.33516/maj.v54i11.64-67p
12. Tatiana Zalan, E. T. (2017, july 26). The Promise of Fintech in Emerging Markets: Not as Disruptive. CONTEMPORARY ECONOMICS,Vol. 11 Issue 4.

---

1. Associate Professor, Department of Commerce Shyam Lal College (Evening) University of Delhi, Delhi-110007 Email ID: dhandaysk75@gmail.com

Research Article

Millennials Attitudes and Purchase Intentions toward Secondhand Clothing in North India

–[1]Rishab Manocha
–[2]Dr. Mridul Dharwal
–[3]Dr. Nitendra Kumar

It's been a long-standing practice to buy and sell used clothing (Damme & Vermoesen, 2009, p.276-277). An article of clothing can be re-purposed as long as it has its original functionality when it is sold as secondhand (WRAP, 2013, p. 7). There is a long tradition of thrifty clothes consumption in some European countries.

Abstract

Secondhand Clothing (SC) is a contemporary trend among India's millennials, who are noted for their commitment to eco-friendly purchasing practises. Despite this, the majority of customers indulge in these practises, primarily because they are perceived as fashionable. In other instances, it acts as a justification for purchasing more clothing. This does not appear to be motivated by sustainability or environmental concerns.

There hasn't been much research into why millennials purchase SC. In recent years, this generation has been identified as more inclined than others to recycle their old garments. Many millennials view shopping for SC as a sustainable type of consumption for a variety of reasons, including environmental concerns. Consideration is also given to thrifting as a component in the clothing consumption of millennials. The findings of this study cannot be generalised as a starting point for further quantitative research in this cutting-edge and essential area of the textile and apparel industry.

This study seeks to comprehend customer motivation, attitudes, and behaviour in North India regarding SC. It also explores the underlying causes of millennials' purchasing intents for used clothing, which are characterised by both excessive consumerism and, to some extent, environmental consciousness. This study examines how these factors, along with a few others, affect millennials' SC consumption. North Indian consumers who shop for pre-owned clothing were studied using

a quantitative methodology. Empirical conclusions are drawn using an online survey in the form of a questionnaire created with Google forms and a sample size of 300 young men and women from North India. A portion of the respondents' perspectives and awareness of sustainable methods in the apparel sector were restricted, and their consumption motivation was mostly influenced by current fashion trends and economic concerns. The applicability of the findings of this study to other states of India where SC has not attained the same level of popularity as in New Delhi can also be questioned due to the varying awareness of SC across the country. This study suggests that millennials can satisfy their need for stylish attire by purchasing previously used things.

Keywords: Secondhand clothing, Millennials, Sustainable Consumption Practice, Consumption Behavior, Purchase Attitudes, Purchase Intentions

Introduction

It's been a long-standing practice to buy and sell used clothing (Damme & Vermoesen, 2009, p.276-277). An article of clothing can be re-purposed as long as it has its original functionality when it is sold as secondhand (WRAP, 2013, p. 7). There is a long tradition of thrifty clothes consumption in some European countries. Secondhand clothing (SC) consumption is also a well-known business activity in the United States, where it can take several forms, including auctions, flea markets, and antique shops (Guiot & Roux, 2010, p.356). While the standard of living is deemed low in India, the consumption of worn textiles is becoming increasingly popular. It is possible that some groups of individuals are prevented from purchasing used goods because of socioeconomic status. Due to technological advancements such as the proliferation of Internet apps and new electronic gadgets, consumers now have access to a wider range of easy options for buying and selling goods. As a result of the rise of social media and mobile technology, the used apparel market has undergone significant transformations. As a result, the demand for used clothing is increasing at an alarming rate. Due to this, it is imperative to explore what influences the purchasing of worn apparel, as this is not a simple type of commerce." It's a way of life, a means of gaining what we need and discarding what we don't (Damme & Vermoesen, 2009, p.295). As a result, more research is needed into how people shop for SC and what influences their decision to buy preowned apparel. This is an exciting area of research, given the rise in popularity and commerce in used apparel. Hence, the main goal here is to look at the elements that influence the buying of SC.

Since SC sales have skyrocketed over the last two decades, experts have taken an interest in the phenomenon and the resulting question, "*Why do people buy SC*?" (2010), p.355 (Guiot and Roux) In addition to environmental and economic issues, SC is becoming more popular with consumers (Guiot & Roux, 2010, p.356). Online second-hand businesses are popular with '*disadvantaged individuals who cannot afford new clothing from normal retail shops*', according to Williams & Paddock (2003, p.18). Individuals in the underprivileged sector are those who lack the financial means to purchase new apparel (Mayer, 2003, p.3-4). The majority of people who buy used apparel are from lower socioeconomic backgrounds, however Williams & Paddock (2003, p.319) show that even *well-to-do* people participate in the second-hand market. A rational consumer is one who chooses the best course of action in order to maximize their utility and reap the greatest rewards (Shugan, 2006, p.1).

1.1 Objectives of the Research

1. To create new knowledge in the area of purchasing habits of SC and customer buying behavior through finding the factors most influencing the customer at the time of purchase.
2. To analyze the influence of Clothing Features, Price Sensitivity, Emotions & Experience, Location and lastly Societal Perceptions during the buying decision process of SC.

Background and Hypotheses Development

Prior to formulating the research objectives, this study sets out to examine the topic of SC and, more particularly, the factors that influence people's decisions to buy used clothing. As a result, the approach used in this essay is one of deduction (Bryman & Bell, 2011, p. 11-12). In addition, the quantitative method was employed to address the research challenges that are common in the social science study field when a deductive approach is used (Bryman & Bell, 2011, p. 27). Using the deductive technique, a survey was devised to gather the essential data. To answer the paper's research questions, the survey data was analyzed (Bryman & Bell, 2011, p. 11-27). Research on the '*why*' of customers buying used apparel indicated that this was the primary focus of previous studies (Guiot & Roux, 2010, Williams & Paddock, 2003, Davis, 2010, Scitovsky, 1994). According to this study, the numerous factors that influence a customer's decision to purchase SC will be analyzed (e.g. price, societal perceptions, and location). A range of theories, including brand impact, price, market, and social attitudes, have been used thus far to

investigate the influence of various factors on the buying of used apparel. In the end, a set of questions and a method for doing the research have been established. We now have a better grasp of the concepts and difficulties at hand, and we are better prepared to formulate the research questions for this project after conducting a literature review and examining earlier research.

The current study's research questions necessitated the creation of a research model (figure-1). When it comes to acquiring SC, there are five elements that could impact a customer's decision: A customer's decision to buy SC is influenced by product quality, price sensitivity, emotions and experience, location and societal attitudes. These variables, in contrast, are all interconnected.

Hypothesis 1 (H1): Consumers' decisions to buy used clothing are heavily influenced by the features of the garment.

Hypotheses 2 (H2): *Price Sensitivity has a significant influence on consumer's decision to purchase SC.*

Hypothesis 3 (H3): Consumers' decisions to buy used clothing are heavily influenced by societal perceptions.

Hypotheses 4 (H4): When it comes to purchasing used apparel, customers' decisions are heavily influenced by the seller's location (marketplace).

Hypotheses 5 (H5): Human emotions and experiences play a significant role in the decision of customers buying SC.

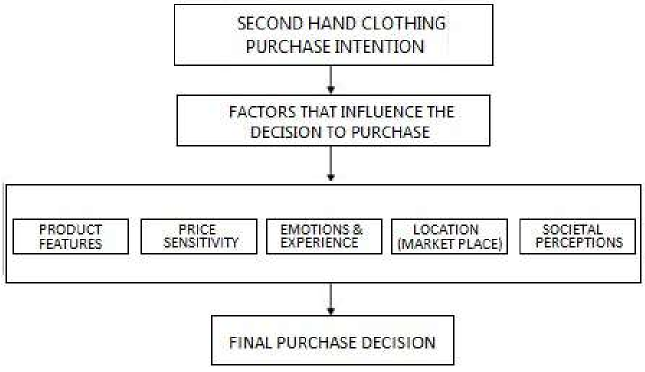

Figure 1. Research Model of the present study

Review of Literature

The literature review will provide background information for the study's topic in accordance with the study's objectives and research questions. In light of these findings, the research need highlighted in this work will be further clarified. After that, the theoretical framework will be put in place.

2.1 The Generation of Millennials

Since 1977, researchers have focused on influencing customer behaviour. (1977, 1999) Global spending patterns are investigated to better understand the generational gap and changing interests, attitudes, and needs among people of different ages and income levels (Badger et al. 1998; Schewe et al. 2004; Beller et al. 2005).

Late 20th-century environmental consciousness and quality-of-life concerns are a significant generational finding. Sustainable consumption and societal responsibility are becoming less relevant as environmental stewardship and social responsibility gain significance (Featherstone 1991). Consumer attitudes and opinions about these topics are now considered vital to consumer behaviour (Pew Research Center 2017).

Neil Howe and William Strauss published the first research on millennials in "Generations — a history of America's fate" (1991). The word "millennials" emphasises the generational divide. Millennials in India, where the study was done, are new to secondhand apparel. " OLX India CEO Amarjit Singh Batra says the urban used goods industry was worth Rs. 22,000 crore in 2014. Online players say pre-owned cars aren't just for the poor. (2015). Alibaba.com said that online demand for secondhand products in India tripled during the global recession. "Despite the weak recovery of the global economy, Indian suppliers continue to enjoy a robust level of demand from overseas consumers in pre-owned products, particularly used clothing and used vehicles," says Sandeep Deshpande, country general manager of Alibaba.com (Poduwal & Mehra, 2011). Olx, Quikr, and eBay have huge advertising campaigns and foreign capital, making them suitable for selling and buying used products. At Vogue's Fashion's Night Out event, renowned women sold inexpensive fancy handbags. Long lines gathered outside the Delhi mall where the event took place, and all the money donated went to charity (Dsouza, 2014). Millennials are becoming more prominent in Indian society as the majority generation in consumer spending, workforce recruiting, and macroeconomics (Wilson 2017). As prior generations retire, they gain importance (Wilson 2017). Millennials are 18 to 24 in 2018. (2016). A accurate assessment of the millennial generation requires highlighting both its individual traits and its broader growth and impact on society.

2.2 Characteristics of the Millennial Generation

Neil and Strauss (1991) investigated millennials' generational differences and similarities. As the internet and digital devices became more widespread,

generation became increasingly significant in research (Hira 2007). This section describes the generation's traits. Millennials are well educated due to better and more accessible educational systems in many Western countries (Hira 2007; Muralidharan et al. 2016). Millennials are the most educated generation ever (Muralidharan et al. 2016). This shows education and expertise (Muralidharan et al. 2016).

Millennials in India are the first generation to have grown up in a digital world, watching its ascent (Pew Research Center 2016). Pew Research Center calls this group "digital natives in a world of digital immigrants" (2016). Telefonica's 2014 global poll found that most millennials use mobile technology for education and research. Most respondents have a social media account, according to the survey (Telefonica 2014; Pew Research Center 2016).

Millennials' varied attitudes on modern technology call into question the Western world's consumption practises. Younger generations are ecologically sensitive and use new technologies and the internet constantly (Sheahan 2005). Despite being big clothes shoppers, they're economical. According to a 2015 Deloitte report, millennials now spend more than baby boomers. Unique costumes, coats, bridal gowns, footwear, and accessories have become more popular (Deloitte 2015). Younger generations in underdeveloped countries are more inclined to buy clothes, per Parment (2013). This generation is more interested in fashion and expressing themselves via dress than any other. Millennials believe that worn clothes are an excellent way to display individuality, but they're wasteful with their time (THREDUP 2018).

Muralidharan and Heo observed a link between environmental concern, reference groups, and social situations and millennials' greener shopping behaviour (2016). Pew Research Center found that millennials appreciate an environmentally conscious mindset and larger environmental concerns in their shopping decisions (Telefonica 2014). Higher prices for eco-friendly apparel dissuade environmentally conscious shoppers (Muralidharan and Heo 2016). Eco-consciousness and high consumption levels generate inequalities in sustainable consumption (Sheahan 2005).

Even knowledgeable environmentalists don't buy green items (Muralidharan et al. 2016). Providing background information on how an item of clothing reduces environmental concerns can help customers understand environmental issues and make better purchasing decisions.

Pew Research Center (2016) found that millennials expect firms to be more responsible. Incorporating give-back systems into goods and services is a new trend. Toms and Warby Parker use these systems. Toms and Warby Parker provide a pair of shoes or glasses for every pair sold (Toms LLC 2017; Warby Parker 2017).

They appreciate pricing more than prior generations, nevertheless (Kestenbaum 2017).

2.3 Second-Hand Clothing Consumption

Ginsburg Research on the trade in old clothing and its historical evolution within Europe from pre-industrial to industrial and post-industrial times has been conducted by several authors (Frick 2005; Damme and Vermoesen 2009; Barahona and Sánchez 2012).

The retailing of pre-loved clothing is another area of interest for the concept of secondhand clothing. Reselling pre-loved clothing has been around for decades, but only recently has it begun to gain traction in India. Fast fashion's growing disdain and the vast quantity of textile waste caused by the short garment life-cycles created by many consumers' disposable behaviors have fueled demand in antique clothing (Ferraro et al. 2016). Thus, used retailing is now an integral part of supply chain management, and has become a focal point of reverse logistics, which deals with material movement after the use phase (Kant-Hvass 2014). Aside from disposal, which is seen as the least environmentally friendly option, reverse logistics takes into account the several alternatives for returning material flows (Corvellec and Stl 2017). There are other environmentally beneficial options such as recycling and reusing clothing. Secondhand clothing sales have become increasingly popular as a means of reducing one's environmental footprint (Guiot and Roux 2010).

2.4 Factors Affecting the Consumption of Second-Hand Clothing

Since the Renaissance, poor people have worn secondhand garments (Frick 2005). Secondhand consumption dates to antiquity and continues today. Before the industrial revolution, new clothes were a luxury. Secondhand clothes were cheap and readily exchanged (Frick 2005). The Industrial Revolution popularised used garments (about 1700-1850). (2004); (Sanderson, 1997) Cheap cost made it popular, leading to a huge trade network.

Industrialization changed the meaning of "secondhand apparel." Mid- to late-19th-century ready-made clothing (thanks to the spinning wheel) allowed a broader choice of apparel at a lower cost, reducing second-hand trading.

Secondhand clothing became a status symbol for low-income families (Ginsburg 1980). Popular perception says this is how secondhand garments got a bad rap. In the 1990s, a new generation of fashionistas popularised retro-styled apparel and 1970s-inspired designs (DeLong et al. 2005). As antique clothing becomes increasingly trendy, so has this (McColl et al. 2013). Consumer and industry interest in sustainable consumption has boosted used clothing and sustainable consumption (Ferraro et al. 2016). Since secondhand clothing is becoming more popular, researchers have studied why individuals buy it.

In the last two decades, more studies have focused on used clothing in various circumstances. DeLong et al. (2005, 2012) and McColl et al. emphasise vintage context (2012, 2013). Turunen and Leipämaa-Leskinen researched it in luxury (2015) Xu et al. (2014) and Chan et al. (2015) studied second-hand clothes consumption in Asia. (2015) Second-hand buying is an important topic for scholars who investigate worn clothing (Williams 2003; Bardhi and Arnould 2005; Guiot et Rioux 2010). (Cervellon et al. 2012; Yan et al. 2015; Ferraro et al. 2016). The current study's purpose is to evaluate the latter in depth. In Western civilization, second-hand clothing is acquired for a number of reasons, leading to many theories. Recent research show that economic and leisure incentives are connected (Bardhi and Arnould 2005; Guiot and Rioux 2010) Ferraro and colleagues say happiness drives secondhand purchases (2016, p. 263). Academics of secondhand consumption have studied a wide range of motivations for used purchases. Williams (2003) investigated why people shop secondhand. According to study, people's economic condition and income level influence their propensity to buy used apparel. Low income motivates poor people to use alternate retail channels. Richer people spend their money on products that give them the most value. (Williams 2003:237) Williams (2003) notes that younger women from higher-income families buy used apparel to give it a particular meaning. The study identified many economic motivations for secondhand shopping (Williams, 2003). The following section summarises research on utilitarian and hedonistic incentives. "Defining thrift as a transient framework in which economic and hedonic inclinations coexist" Bardhi and Arnould (2005) examine thrift store purchases dialectically. Miller's (1998) premise in "Theory of Shopping" is questioned because he felt saving money and being safe couldn't coexist. Recreational and economic elements coexist. Guiot and Rioux (2010) add a critical dimension to eco-ethical factors. Guiot and Rioux (2010) recognised the three tiers of second-hand buying reasons and created a motivational score regardless of distribution method. The researchers' work sets the path for further research on why individuals resell old things. Guiot and Rioux

(2010) didn't focus on a specific type of secondhand apparel, prompting a fashion-related investigation. Ferraro et al. (2016) add fashionability to Guiot and Rioux's three-part model. Despite discussing many incentives for second-hand shopping, Guiot and Rioux (2010) and Ferraro et al. (2016) focus on one. The recreational, economic, critical, and fashion worlds all have four motivating variables that will be explored in the theoretical framework (Chapter 2.3.1) Cervellon et al. (2012) explore women's thrift store purchases. It's the only study to look at environmental consciousness and secondhand clothing purchases and determine it's not a driving factor. Yan et al. (2015) researched college students' second-hand apparel purchase behaviours, including sustainability. Based on their positive attitude toward sustainability and assumption that secondhand apparel is sustainable, they compared secondhand shoppers to others. They still buy at secondhand stores regularly because they believe it reflects their ideals (Yan et al. 2015) College students who shop at charity stores are more eco-conscious.

Research Methodology

For this study, an investigation was conducted on the numerous factors that influence a customer's decision to purchase SC. Product qualities and price sensitivity, as well as buyer emotions, past experiences and geographic location influence SC purchases. Consequently, a cross-sectional research approach was chosen in light of the nature of this study. It is said that 'cross-sectional design' entails the collection of data on several cases and at only one point in order to construct an overall body of quantitative or measurable data regarding two or more variables" by the authors Bryman and Bell (2011)

3.1 Data Collection

Quantitative research methods and a cross-sectional research design were employed in this study, as previously mentioned. This meant that adherence to the quantitative method's design, as well as the use of a cross-sectional study, was essential. An online survey with self-administered questions was used to collect all of the data required for achieving the study's goals.

3.2 Questionnaire Design

The current study focuses on characteristics that influence used-item purchases. Respondents were given a brief introduction to the poll, its aim, and any privacy concerns they might have.

In the first part of the questionnaire, respondents were asked about 'Product Features' while shopping for used clothing, such as Product Age, Product

Quality, and Brand Image. These questions will help us determine how much this characteristic affects customers' decisions to buy SC. Second, the questionnaire asked about 'Price Sensitivity' when shopping for used apparel, including questions on pricing and comparisons to new products. These questions will help us determine how much this characteristic affects customers' decisions to buy SC. Final survey questions ask about 'Emotions and Experiences' related to buying SC. These include negotiation, hygiene, and color/style memories. These questions will help us determine how much this characteristic affects customers' decisions to buy SC.

Respondents are asked if they prefer to buy SC offline or online and if they want to try them on before buying. These questions will help us determine how much this characteristic affects customers' decisions to buy SC.

Final 'Social Perception' questions while shopping for SC included poverty, mending issues, and embarrassment. These questions will help us determine how much this characteristic affects customers' decisions to buy SC.

Respondents submitted correct information using topic-specific scales. On a Likert scale, 1 means strong disagreement and 5 means strong agreement.

3.3 Data Processing

Self-administered questionnaires were used online to collect data. Google forms were used to collect the information. SPSS version 21 was then used to enter all of the raw data. To analyze data, researchers often use SPSS, a widely used statistical software program. For this article, SPSS was used to analyze each and every piece of data.

3.4 Analysis

Table 1: Correlation Table

		C_INT	PF	PS	EE	MP	SP
C_INT	Pearson Correlation	1	.390**	.356*	.315*	.469**	.477**
	Sig. (2-tailed)		.005	.010	.024	<.001	<.001
	N	51	51	51	51	51	51
PF	Pearson Correlation	.390**	1	.025	.089	.087	.061
	Sig. (2-tailed)	.005		.863	.535	.543	.670
	N	51	51	51	51	51	51

PS	Pearson Correlation	.356*	.025	1	.709**	.730**	.670**
	Sig. (2-tailed)	.010	.863		<.001	<.001	<.001
	N	51	51	51	51	51	51
EE	Pearson Correlation	.315*	.089	.709**	1	.752**	.753**
	Sig. (2-tailed)	.024	.535	<.001		<.001	<.001
	N	51	51	51	51	51	51
MP	Pearson Correlation	.469**	.087	.730**	.752**	1	.916**
	Sig. (2-tailed)	<.001	.543	<.001	<.001		<.001
	N	51	51	51	51	51	51
SP	Pearson Correlation	.477**	.061	.670**	.753**	.916**	1
	Sig. (2-tailed)	<.001	.670	<.001	<.001	<.001	
	N	51	51	51	51	51	51
**. Correlation is significant at the 0.01 level (2-tailed).							
*. Correlation is significant at the 0.05 level (2-tailed).							

Data from the correlation table shows that most features of used clothing have a strong connection to buyer intent. There was a correlation coefficient of 0.39 between product features, price sensitivity, Emotions and experience, Market place, and Societal perceptions with the dependent variable consumer intention among the five SC dimensions, which indicates that all five dimensions have a significant relationship with the dependent variable. Since "Consumer Intention" is a dependent variable, the qualities of SC were compared to "Social Perceptions," and the results showed that the former had the highest correlation, while the latter had the lowest.

1.5 Testing of Hypothesis

Table 2: Model Summary

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.615[a]	.379	.310	.82246
a. Predictors: (Constant), SP, PF, PS, EE, MP				

Table 3: ANOVA[a]						
Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	18.558	5	3.712	5.487	<.001[b]
	Residual	30.440	45	.676		
	Total	48.998	50			
a. Dependent Variable: C_INT						
b. Predictors: (Constant), SP, PF, PS, EE, MP						

Table 4: Coefficients[a]						
Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients		
B		Std. Error	Beta		t	Sig.
1	(Constant)	-.071	.928		-.077	.939
	PF	.432	.138	.370	3.118	.003
	PS	.171	.239	.133	.3100	<0.001
	EE	.282	.257	.217	2.773	<0.001
	MP	.147	.405	.116	.362	.719
	SP	.519	.373	.423	1.394	.170
a. Dependent Variable: C_INT						

Societal perceptions of the SC market include consumer intent, product features and price sensitivity as well as feelings and experiences, as well as the market environment and society attitudes. The results of a statistical test on the relative importance of the various variables are shown in the tables above. Product features were represented by the b coefficients (0,432), (0,171), (0,282), (0,147), and (0.519), while emotions and experience were represented by the b coefficients (-0,282) and (-0,282). There were significant correlations between product characteristics, price sensitivity, emotional and experiential factors, the market environment, and society perceptions, according to the standard regression coefficient (b), which indicates the significance of the regression coefficient.

Results & Discussion

According to Hypothesis 1, there is a strong link between product features and consumer intentions. Linear regression analysis found a substantial correlation between the variables (r=0.432, n=51, p0.05). The hypothesis is therefore accepted.

According to Hypothesis 2, there is a strong correlation between price sensitivity and consumer intention. Linear regression analysis shows a strong correlation between the variables (r=-0.171, n=51, p 0.001). The theory is accepted as a result.

Consumer Intentions and Emotions & Experiences are strongly linked, according to Hypothesis 3. It is clear that the variables (r=.282, n=51, p0.001) are linked, according to the results of linear regression. The theory is accepted as a result.

Hypothesis 4 states that there is a strong connection between the market and consumer intention. Following linear regression analysis (r= 0.147, n=51, p0.001), we may conclude that there is a substantial correlation between the variables. It follows that this theory cannot be accepted.

According to Hypothesis 5, there is a strong correlation between Societal Perceptions and Consumer Intention. When linear regression is applied, the variables show a significant correlation (r=0.519, n=51, p0.05). In the end, the hypothesis is found to be unfounded. The authors of this article did their research in the Delhi NCR area of northern India. This is a limitation, as most millennials were either students or working young adults in similar age groups. Therefore, it's recommended that a more extensive study be conducted with more diverse age groups.

SC was purchased mainly from Daryaganj and Sarojini markets in New Delhi, as well as online marketplaces like OLX and Quikr, which may be a limitation of the research.

Due to price, quality, and demand fluctuations, recycled or upcycled clothing and antique apparel were not included in the current study.

Conclusion

This paper aims to increase information about SC and client purchase habits. Determine what influences a customer's choice to buy SC to attain this goal.

Brand, price, and the desire to acquire SC seem to have little impact on one another. Social attitudes and geographical features are related, but not to brand, price, or intention. These results suggest that buying SC isn't like buying new clothes, as customers examine each component independently. The merchant should consider brand, pricing, societal perspectives, and geography equally. He should also provide appropriate information about these factors. Some customers may prioritize a product's price. You must disclose the original

purchase price, current retail price, and ultimate sale price when selling used clothing. Some customers may value cultural clothing attitudes. The vendor of secondhand clothing should include all necessary information, including the apparel's condition and any warranties or guarantees.

According to the report, SC buyers care most about price. Pre-owned garment price affects buying intention, while brand, location, and social judgments have minimal effect. SC retailers must use sensible pricing so consumers can afford their products. Consequently High price inhibits his ability to sell clothing (Völckner & Sattler, 2005, p. 1).Buyers seem to value brand, price, and consensus more than location. The regression model's results reveal that geography affects people's inclination to buy secondhand products. Buyers of used clothing consider the seller's location. The seller should specify the collecting spot and delivery method. Customers favour pricing and social views over brand awareness, according to the report. The seller should improve the used clothing's brand value by educating the customer on the benefits of a well-known brand and how a good brand can reduce cultural prejudices.

The research questions and goal were satisfied is a good conclusion. This study also examines brand, price, society, and seller location in relation to SC consumption and buyer behaviour. This study discusses researchers' perspectives. This research will increase understanding about brand, pricing, consumer sentiments, and seller location. This article's findings motivate a study into whether used apparel buying influences customer behaviour theories. This study suggests customer purchasing behaviours may impact SC purchases.

This study addressed a gap in the second-hand market by revealing no correlation between pricing, social attitudes, brand, and seller location. This is good for online and offline secondhand shops. According to the report, clients care more about SC costs, not brand names. According to this study, branding and pricing aren't linked in SC purchases. This research is practical for marketing managers. Businesses and their managers can use customer information to create efficient marketing strategies.

Because of the Internet, there are several web programs and gadgets for buying and selling garments. Social media and cellphones have also changed the second-hand market. People buy more SC every day. Because buying old clothing isn't simple mercantilism, many factors must be considered. Pricing, societal attitudes, brand, and the market environment have never been studied

in relation to SC buyers. When consumers buy SC, they consider pricing, cultural attitudes, brand, and location differently. Secondhand industry managers can create efficient marketing strategies using this knowledge. Price may be the most important factor for SC buyers. Focusing on the finding manager can lead to consumer-oriented pricing. SC buyers worry how society will see their purchases. A management strategy can remove SC cultural assumptions.

References

1. Bryman, A., & Bell, E., (2011). Business Research Methods. 3rd Edition. Oxford University Press Inc, New York
2. Damme, I. V., Vermoesen, R. (2009). S*econd-hand consumption as a way of life: public auctions in the surroundings of Alost in the late eighteenth century. Continuity and Change*, Vol.24 (2), 275-305
3. Deloitte . (2015). The 'generation that won't spend' is spending a lot on media content .London: Deloitte Touche Tohmatshu Limited
4. Guiot, D. &. (2010). A second-hand shoppers' motivation scale: Antecedents, consequences, and implications for retailers. Journal of Retailing, 383-399
5. Muralidharan, S., Rejón-Guardia, F., & Xue, F. (2016). Understanding the Green Buying Behavior of Younger Millennials from India and the United States: A Structural Equation Modeling Apprach. Journal of International Consumer Marketing, 54-72
6. Sheahan, P. (2005). Generation Y: Thriving and surviving with generation Y at work.
7. Richmond Victoria, Australia: Hardie Grant Books
8. Toms LLC. (2017). One for One. Von https://www.toms.com/improving-lives abgerufen
9. Warby Parker. (2017). Buy a pair, give a pair. Von https://www.warbyparker.com/buy-a-pair-give-a-pair abgerufen
10. Wilson, N. (30. 04 2018). DOS Magazine. Von https://dosmagazine.com/en/total-number-of-millennials-in-the-world-today/ abgerufen
11. Zhou, L., Dai, L., & Zhang, D., (2007). Online shopping acceptance model: A critical survey of Consumer factors in online shopping. Journal of Electronic Commerce Research, Vol. 8 (1) 41–62

1. School of Fashion, Pearl Academy, Jaipur, India Doctoral Student, Sharda University, Greater Noida, Email: rishab.manocha@pearlacademy.com
2. Department of Management, School of Business Studies, Sharda University, Greater Noida, U.P, India Email: mriduldharwal22@gmail.com
3. Accurate Institute, Department of Applied Sciences & Humanities, Accurate Institute of Management and Technology, Greater Noida, U.P India Email: nkshukla.kumar4@gmail.com

भाषा का प्रश्न और स्त्री

–प्रियंका चौधरी

मेरी आवाज तुमसे बहुत कुछ कहना चाहती है
बहुत कुछ कहते ना कहते
तुम तक पहुँचने से पहले ही दम तोड़ देती है।
तुम्हें मालूम है, तुम इतने क्यों आहिस्ता हो?
तुम्हारी लेखनी में वह सब कुछ दर्ज है,
जो तुम कहना या सुनना चाहते हो - वसीहत स्वरूप।
तुम्हारी जिंदगी यूं फांकों या टुकड़ों में नहीं कटी।
यदि सुरक्षा मुझे चाहिए थी तो तुम क्यों संरक्षक बन बैठे, मेरे भविष्य की?
मेरी दैहिक गठन आराम मांगती थी, अपने जीवन में स्थिरता नहीं---
मैं नदी हूँ जो बहना जानती है और चाहती थी---
पत्थर, पहाड़ आने पर उससे टकरा, वहीं आराम होता था मेरा,
पर रुकना कभी नहीं चाहा।
तुमने मुझे हर बार बांध बना, फाटक लगा अबाध गति में बहने से रोका
पर मैं इन्द्र को ललकारती हूँ और बाढ़ बन तुम तक अपनी पहुँच बनाती हूँ
मैं स्त्री हूँ, मैं भी कुछ कहना जानती हूँ।1

पहला सवाल यह उठता है कि औरत क्या है? कोई कहेगा, महज गर्भ या फिर औरत के कुछ कद्रदान कहेंगे कि अपने पास गर्भाशय जैसा यन्त्र रखने के बावजूद आज के किसी भी सीमित संदर्भ में औरत सिमटी नहीं रही। आज औरत की वास्तविकता कोई नकार नहीं सकता। वस्तुतः मानव-जाति में औरत का पृथक्‌ अस्तित्व एक लक्ष्य है। औरत मानवता का आधा हिस्सा है। यह अलग बात है कि हमें समझाया जाए कि आज नारीत्व खतरे में है। औरत को औरत

'मातृत्व सुख स्त्री के जीवन का सबसे बड़ा सुख है' - यह भाषा में किसने दर्ज किया? जाहिर-सी बात है 'मातृत्व' सुख की अनुभूति है यह जबरन स्त्री पर थोपा गया। 'मातृत्व' के कारण स्त्री के मानसिक और शारीरिक क्षति का कहीं भी जिक्र नहीं मिलता।

होना सिखाया जाता है। औरत बनी रहने के लिए उसे अनुकूल किया जाता है। तथ्यों के विश्लेषण में यह समझ में आ जाएगा कि प्रत्येक मादा मानव-जीव अनिवार्यतः एक औरत नहीं।य्2 - सीमोन द बोउवार

अर्थात् एक निश्चित वर्ग द्वारा भाषा इतिहास में दर्ज अभिव्यक्ति सम्पूर्ण जाति की नहीं हो सकती! इसी संदर्भ में सीमोन द बोउवार ने अरस्तू के स्त्री सम्बंधी विचारों का विश्लेषण करते हुए लिखा, फऔरत पुरुष के लिए भोग की एक वस्तु है और इसके अलावा कुछ भी नहीं। वह पुरुष के संदर्भ में परिभाषित और विभेदित की जाती है। वह आनुषंगिक है, अनिवार्य के बदले नैमित्तिक है, गौण है। पुरुष आत्म है, विषयी है। वह पूर्ण है, जबकि औरत 'अन्या है।य्3

यदि भाषा के प्रश्न की बात की जाए तो भाषा एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के समक्ष विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम है। मनुष्य द्वारा भाषा की निष्पत्ति जरूर श्रम के अपने कार्य अनुभव को दूसरों से साझा करने के कारणो से हुई होगी। जहाँ पत्थरों के घर्षण से आग की खोज, पहिए की खोज, शीशे आदि की उत्पत्ति का अनुभव, जो आदिमानव द्वारा जटिल परिश्रम से अर्जित की गई। वह सब, उसने अपने समुदाय को बता देना चाहा। शायद यही कारण रहा कि उसके और उसके समुदाय की प्रगति और विकास की कहानी भाषा में दर्ज होती चली गई। चाहे वह संकेत, चित्र या फिर, लिपि भाषा हो। आदिमानव अर्थात् आदिपुरुष। आदिपुरुष ने अपने श्रम से जीवन जीने के विविध आयाम को तराशा और उसे उन जटिल अनुभवों को संचय करने की आवश्यकता पड़ी, इस कारण एक स्थायी स्थान की जरूरत और इसी जरूरत के साथ परिवार की उत्पत्ति समझी जा सकती है। परिवार और परिवार से सत्ता पुरुष के अधिकार क्षेत्र का हिस्सा बन गए। भाषा पुरुष के अधिकार से मुक्त ना हुए लिहाजा अन्य सभी सामाजिक अस्मिताओं की अभिव्यक्ति गौण होती चली गई। इसी कारण भाषा हमेशा से अस्मिताओं की स्वानुभूति से वंचित और परानुभूति से लबरेज ही रही। उदाहरण के लिए स्त्री, किन्नर आदि सामाजिक अस्मिताएँ।

'मातृत्व सुख स्त्री के जीवन का सबसे बड़ा सुख है' - यह भाषा में किसने दर्ज किया? जाहिर-सी बात है 'मातृत्व' सुख की अनुभूति है यह जबरन स्त्री पर थोपा गया। 'मातृत्व' के कारण स्त्री के मानसिक और शारीरिक क्षति का कहीं भी जिक्र नहीं मिलता।

इसीलिए फअब तक औरत के बारे में पुरुष ने जो कुछ भी लिखा है उस पर शक किया जाना चाहिए, क्योंकि लिखने वाला न्यायधीश और अपराधी दोनों है।य्4

इसी प्रसंग में एलिन शोवाब्टर ने 'इन्ट्रोक्शन: दि राइज ऑफ जेण्डर' में लिखा, फसभी वक्तृताएँ अनिवार्यतः औरत के बारे में होती हैं। क्योंकि प्रत्येक भाषा में जेण्डर भाषाई कैटेगरी है। जबकि पुंसवाद भाषाशास्त्र का नियम है।य्5

फमइयां! तुम मेरे पीछे क्यों पड़ गयी हो। मेरे चाल-चलन की झण्डी फहराना जरूरी है? बिरथन ही छान-बीन करने में लगी हो, आज को तुम्हारा बेटा मेरी जगह होता तो पूछती की तू किसके संग सोया था? अब उसकी बाँह गह ले। मेरे पीछे तेरही तक भी खबर न करता और ले आता दूसरी। तुम खुश हो रही होती कि पूत की उजड़ी जिंदगी बस गयी। पर मेरी फजीहत कराने पर तुली हो।य्6

आदिकाल से लेकर आधुनिककाल तक का अधिकांश साहित्य स्त्री के शारीरिक सौंदर्य तक ही सीमित रहा, कहीं भी स्त्री की इच्छा और उसकी उपस्थिति को दर्ज करने की कोशिश नहीं की गई, कोशिश की गई तो उसे आदर्श रूप में गढ़ने की। 'स्त्री सजीव नहीं निर्जीव वस्तु है' इसी धारणा का पृष्ठ पोषण करता हुआ साहित्य रचा गया।

कामसूत्र में वात्स्यायन का कथन स्त्री संदर्भ में, फ्लड़की स्वयं शील व सुन्दरता सम्पन्न हो, जिसके दांत, नाखून, आँखें, स्तन न बहुत बड़े हों और न ही बहुत छोटे।य्7

अर्थात् समाज में कामुकता, काम और स्त्री ये तीनों अन्तर्ग्रंथित है 'स्त्री की झांई परत, अंधा होत भुजंग'। इतिहासकार जे-वी- स्कॉट का मानना है - फ्जेण्डर को प्राथमिक तौर पर पॉवर या ऑथरिटी या क्षमता के साथ जोड़कर पेश किया गया। पॉवर को मर्दानगी के साथ संहिताबद्ध किया गया। इसके विपरीत निर्भरता, कमजोरी, परायापन, सववर्सिब और अराजक के रूप में स्त्रीत्व को देखा गया है।य्8

सन् 1970 के बाद सारी दुनिया में वीमेन्स स्टडीज के विभागों की बाढ़-सी आ गई। शैक्षणिक संस्थानों में 'सांस्कृतिक स्त्रीवाद' अध्ययन के प्रमुख विषय के रूप में उभरा। इसमें माँ के अधिकार, मातृत्व केन्द्रित समाज के पुनर्गठन के प्रस्ताव को जेनी एल्बर्ट ने अपने एक निबंध 'मदर राइट्स' (1973) के नाम से प्रकाशित किया। इसे समाजवादी विजन के विकल्प के रूप में पेश किया। इसके तुरंत बाद अमेरिका की चर्चित कवयित्री आन्द्रेनी रीख ने 'ऑफ वूमेन बोर्न' (1977) में स्त्री के शरीर की क्रांतिकारी सम्भावनाओं और मातृत्व के अनुभवों को पितृसत्ता से भिन्न नजरिए से पेश किया। साठोत्तरी यूरोपियन दर्शन ने स्त्रीवादी चिन्तन को व्यापक रूप में प्रभावित किया। खासकर उत्तर-संरचनावाद और मनोविश्लेषणात्मक औजारों के इस्तेमाल के कारण स्त्रीवादी चिंतन में 'अदर' या अन्य चिन्तन सामने आया। इसे स्त्रीवाद का 'अदरनेल' के साथ रोमांस भी कहा गया। खासकर देरिदा की विखण्डन सिद्धांत के कारण अस्मिता के अनुभवों को चुनौती दी गई। देरिदा ने सैद्धांतिकी में 'डिफरेंस' या भिन्नता का अर्थ सेक्सुअल डिफरेंस नहीं है। बल्कि इसका अर्थ है सब्जेक्टिविटी का अन्तहीन प्रसार। अर्थ का अपरिहार्यतः निरन्तर बदलते जाना।

विगत तीन दशकों में पश्चिमी स्त्रीवाद में नाटकीय परिवर्तन आए हैं। पहले साझा अनुमानों और विवादरहित रूढ़ियों के खिलाफ स्त्रीवादी विचारकों और महिला आन्दोलन ने तवज्जह दी। किन्तु सत्तर के दशक में स्त्रीवाद में 'छद्म निश्चितता' को निशाना बनाया और स्त्री-शोषण के संरचनात्मक कारणों की खोज पर ध्यान केन्द्रित किया। नब्बे के दशक में स्त्रीवाद ने स्त्री-शोषण के सीधे-सादे सामाजिक और भौतिक कारणों की व्याख्या का काम छोड़कर ज्यादा जटिल सवालों पर केन्द्रित किया। सामाजिक हायरार्की, सामाजिक वैषम्य और खासकर लिंगभेद के सवाल पर केन्द्रित किया। इसी क्रम में 'बायनरीअपोजीशन' के सवालों पर गौर किया। साथ ही स्त्री के शरीर का नए सिरे से मूल्यांकन किया।

मैं स्त्री हूं, बंदी नहीं
मैं तुम्हें बार-बार चेताउंगी, मैं स्त्री मनुष्य होने की पंक्ति में खड़ी
तुम संरचना तले दबे हुए

तुम्हारा यह आरोपन मुझे विरोध की छूट देता

मैं तुम्हारे उस संरचना को तोड़ने का प्रयास करती, जो तुम्हें शक्ति देता

बार-बार प्रहार करती, नतीजतन तुम घायल होते

तुम्हारी शक्ति क्षीण होने के स्थान पर

बलवान होने की सीढ़ी चढ़ती

तुम्हें ऐसा टूटता देख मैं खुद भी थोड़ा-थोड़ा टूटती जाती और

मेरा इस कदर टूटना, मेरे विरोध का बिखराव होता

क्योंकि तुम्हें टूटता देख मैं ममता से भर उठती,

आगोश में ले तुम्हें चुमती, पुचकारती

तुम्हारी हार को मैंने जीत में बदला, मैं अबला नारी नहीं 'स्त्री' हूं।

मैं अपनी अनुभूति को दर्ज करना चाहती हूं और

भाषाशास्त्र का नियम मनुष्यता के आधार पर गढ़ना चाहती हूं।9

संदर्भ

1. स्वरचित कविता
2. स्त्री उपेक्षिता - सीमोन द बोउवार (ज़्ीमै मबवदकै मग) दूसरा रीप्रिंट, अक्टूबर 2008 (अनुवाद - प्रभा खेतान), पृ- 21, उद्धृत भूमिका से।
3. वही, पृ- 23
4. कामुकता पोर्नोग्राफी और स्त्रीवाद - जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह, पृ- 12, स्त्री-अस्मिता, स्त्री-चेतना और स्त्रीवाद, प्रथम संस्करण-2007
5. वही, पृ- 13
6. चाक (उपन्यास) - मैत्रेयी पुष्पा
7. कामसूत्र - वात्स्यायन
8. लोकप्रचलित कबीर का दोहा
9. स्वरचित कविता

❒❒❒

1. शोधार्थी हिन्दी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली मो-- 9811120653 ईमेल- priyankamotilal95@gmail.com

फोर्ट विलियम कॉलेज और हिन्दी भाषा का प्रश्न

प्रभंजन कुमार झा
प्रो- संजय कुमार

'साहित्य और विज्ञान के अंगों के सामान्य ज्ञान की उन्हें वह शिक्षा दी जानी चाहिए जो यूरोप में ऐसे ही पद ग्रहण करनेवालों को दी जाती है। इस मूलाधार के साथ उन्हें भारतीय धर्मशास्त्र, शरअ मुहम्मदी, धर्मनीति और एशिया में ग्रेट ब्रिटेन के राजनीतिक एवं व्यापारिक हितों और सम्बंधों की शिक्षा सहित भारतीय इतिहास, भाषाओं और रीति-रस्मों और आचारों से भली भांति परिचित करा देना चाहिए

'प्रभावपूर्ण शासन के लिए भारत से प्रेम जरूरी है, भारत से प्रेम करने के लिए यहां के मूल निवासियों से सम्प्रेषण जरूरी है और यहां के मूल निवासियों से सम्प्रेषण के लिए यहां की भाषाओं की जानकारी अनिवार्य है।'

सत्ता को चलायमान स्थिति में बनाए रखने की कोशिश में ज्ञान की आवश्यकता जान पड़ी। जहां सम्प्रेषण के लिए भारतीय भाषाओं की जानकारी अनिवार्य समझी गयी। वॉरेन हेस्टिंग्स भारत के वह गवर्नर रहे जिन्होंने भारतीय भाषाओं और संस्कृति के अध्ययन में गति पैदा की। हेस्टिंग्स का मानना था कि सक्षम सिविल कर्मचारी वही हो सकता है जिसमें परसंस्कृति अपनाने का सामर्थ्य हो। परसंस्कृति अपनाने का अर्थ मात्र सामाजिक मेल-मिलाप नहीं अपितु बौद्धिक आदान-प्रदान भी है।

शेखर पन्द्योपाध्याय ने वारेन हेस्टिंग्स को उद्धृत करते हुए लिखा है - '1784 ई. में हेस्टिंग्स ने लिखा - ज्ञान का हर संचय राज्य के लिए उपयोगी है...वह दूर (अतीत) के प्रेम को आकर्षित करता और अपना बनाता है यह उस जंजीर को हलका बनाता है जिसके द्वारा मूल जनता को अधीनता में रखा जाता है, और यह हमारे अपने देशवासियों के दिलों पर परोपकार के भाव और दायित्व की छाप छोड़ता है। - लेकिन अगर प्राच्यवादी संवाद आरंभ में प्राचीन भारतीय परम्पराओं के सम्मान की भावना पर आधारित था तो वहीं उसने अधीनस्थ समाज के बारे में ऐसा ज्ञान भी पैदा किया, जिसने आखिरकार शासन की नीति के रूप में प्राच्यवाद के अस्वीकार का आधार तैयार किया।'

1784 ई. में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना हुई। एशियाटिक सोसाइटी के प्रयासों से गम्भीर बौद्धिक परिवेश का निर्माण हुआ जिसका प्रभाव नवजागरण के दौर में पूरे पश्चिम बंगाल में देखा जा सकता है। विलियम जोंस, जॉन हाइड, डेविड एंडर्सन, विलियम चेम्बर्स, जोनाथन डंकन, चार्ल्स विल्किंस, जार्ज बार्लो, चार्ल्स

हैमिल्टन और फ्रांसिस गाल्डविन आदि इससे जुड़े। 'एशियाटिक रिसर्चेज' के जरिए गंभीर और अनिवार्य प्राच्य विषय प्रकाश में आने लगे।

विलियम जोंस ने एशियाटिक रिसर्चेज के पहले खंड में इस सोसाइटी के उद्देश्यों को लेकर 'एक डिस्कोर्स ऑन दी इंस्टीट्यूशन ऑफ ए सोसाइटी फॉर इन्क्वायरिंग इनटू दी हिस्ट्री, सिविल एण्ड नेचुरल द एंटीक्विटीज, आर्ट्स, साइंसेज एंड लिटरेचर ऑफ एशिया' लेख में अपने मंतव्य रखे - 'यह मेरे लिए अनिर्वचनीय आनंद की स्थिति है कि मैं एशिया के उस विस्तृत प्रदेश के मध्य में खड़ा हूं जिसने विज्ञान को विस्तार दिया, आह्लादकारी कलाओं का सृजन किया, श्रेष्ठ बुद्धियों को जन्म दिया, जो प्राकृतिक आश्चर्यों से परिपूर्ण है और जहां अनेक प्रकार के धर्म, प्रशासनिक व्यवस्थाएं, परम्परा, व्यवहार, भाषा और यहां तक कि मनुष्यों के रूप-रंग भी दृष्टिगत होते हैं। मैं यह कहने से स्वयं को रोक नहीं सकता कि इतना विस्तृत और महत्त्वपूर्ण प्रदेश अभी तक अन्वेषित है।' जोंस आगे लिखते हैं - सिर्फ वही जिज्ञासु और अध्ययनशील लोग इस सोसाइटी की सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं जिनके भीतर ज्ञान के लिए प्रेम हो और जिनके भीतर इसका विकास करने की उत्कंठा हो।'

इस प्रकार के मूल विचार को अपनाकर चलने वाले को सिर्फ साम्राज्यवादी चश्मे से देखना ज्ञान के क्षेत्र में इनके योगदान को एक सिरे से नकारना होगा। यहां सत्ता और ज्ञान के अंतर्संबंध को परखना लाजिमी है किंतु ज्ञान नदी है जो स्वयं अपना रास्ता तैयार करता चलता है। उदाहरण के लिए ओ.पी. केजरीवाल की पुस्तक 'भारत के अतीत की खोज' में बड़े दुख के साथ ए.एल. वैशम ने लिखा है 'सोसाइटी ने अपने प्रारम्भिक दिनों में प्रकृति विज्ञान में जो रूचि ली, उसे पश्चिम के प्राच्यविदों ने आलोचकों ने अपने इस तर्क का आधार बनाया कि अंग्रेजों ने भारत संबंधी अध्ययनों में केवल इसीलिए रूचि ली ताकि वे इस क्षेत्र पर अपनी प्रशासनिक पकड़ को और मजबूत तथा प्रभावशाली बना सकें। इस तरह के विचार हमें द्विशतवार्षिकी के अवसर पर आयोजित गोष्ठियों में भी सुनने को मिले।' आगे वे लिखते हैं 'जब जोंस ने 'शकुन्तला' का अनुवाद किया और सारे पाश्चात्य जगत् को संस्कृत नाट्यशास्त्र की समृद्धि से परिचित कराया तो उनके बारे में क्या हम यह सोचें कि उन्होंने ऐसा जानकर किया कि 'मैं ऐसा इसीलिए कर रहा हूं, ताकि मेरा देश अपने अधीन लोगों पर अपने शासन की पकड़ को और अधिक मजबूत कर सकें? क्या जेम्स प्रिंसेप के मन में यही भावना थी जब उन्होंने अशोक के अभिलेखों को पढ़ा? वेदों के प्रथम अध्ययन के पीछे कोलब्रूक का उद्देश्य क्या राष्ट्रीयता से प्रेरित था? यदि इन विद्वानों को अपने खाली समय के उपयोग के माध्यम से अपने देश या ईस्ट इंडिया कम्पनी की और अच्छी सेवा करनी थी तो निस्सन्देह उनके पास विद्याध्ययन से अधिक प्रभावशाली तरीके थे।'

ज्ञान के कारण सत्ता का अस्तित्व मान बैठे विचारकों से भिन्न रामविलास शर्मा मार्क्सवादी इतिहास-दृष्टि का इस्तेमाल करते हुए उपनिवेशवाद के आरम्भ का गम्भीर विश्लेषण करते हैं। 'ज्ञान को प्राच्यवादी की परंपरा से मुक्त करके नहीं बल्कि तार्किक अन्तर्दृष्टि का इस्तेमाल करते हुए इन प्राच्यविदों के महत्त्वपूर्ण कार्यों को प्रकाशित किया जाए और उसका भारतीय संस्कृति के विश्लेषण के लिए प्रयोग किया जाए।'

सर जॉन शोर ने विलियम जोंस पर केन्द्रित अपने एक व्याख्यान में कहा है - 'ज्ञान और सत्य उनके सम्पूर्ण अध्ययन के अभिप्रेत थे और उनका लक्ष्य मानव सृष्टि के लिए उपयोगी होना था। इसी दृष्टि से उन्होंने अपने अध्ययन का विस्तार सभी भाषाओं, देश और काल के लिए किया।'

सत्ता और ज्ञान के अंतर्विरोधों के बीच एशियाटिक सोसायटी, फोर्ट विलियम कॉलेज का अध्ययन जरूरी-सा मालूम पड़ता है क्योंकि आरोपित तथ्य से मुक्त होकर ही इनका स्वतंत्र अध्ययन व विश्लेषण संभव है।

सन् 1801 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की गई, जिसके मूल में वेलेजॅली की मंशा स्पष्ट दिखाई देती है -

'साहित्य और विज्ञान के अंगों के सामान्य ज्ञान की उन्हें वह शिक्षा दी जानी चाहिए जो यूरोप में ऐसे ही पद ग्रहण करनेवालों को दी जाती है। इस मूलाधार के साथ उन्हें भारतीय धर्मशास्त्र, शरअ मुहम्मदी, धर्मनीति और एशिया में ग्रेट ब्रिटेन के राजनीतिक एवं व्यापारिक हितों और सम्बंधों की शिक्षा सहित भारतीय इतिहास, भाषाओं और रीति-रस्मों और आचारों से भली भांति परिचित करा देना चाहिए।... ताकि वे भारत में ब्रिटिश साम्राज्य में व्यवहृत विभिन्न कानूनों के मूल भेदों को समझने और न्याय शासन करने तथा शांति एवं सुशासन की रक्षा करते सामय उन दोनों भावना को व्यवहार में ला सकें।'

उपर्युक्त कथन से जाना जा सकता है कि ब्रिटिश शासन को स्थायित्व प्रदान करने के लिए ज्ञान को अनिवार्य औजार के रूप में इस्तेमाल, फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के मूल कारणों में निहित है। किन्तु इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि फोर्ट विलियम कॉलेज का अस्तित्व, भारतीय भाषा तथा भारतीय ज्ञान परंपरा का विस्तार व समृद्धि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

फोर्ट विलियम कॉलेज ने एक अकादमिक माहौल तैयार किया। बंगाल में फैल रहे ब्रिटिश प्राच्यवाद का प्रभाव कॉलेज पर साफ दिखाई देता है। जिस काउंसिल और अध्यापकों के साथ फोर्ट विलियम कॉलेज की शुरुआत हुई, वे सभी प्राच्यविद्या के क्षेत्र में अपना स्थान बना चुके थे। फोर्ट विलियम कॉलेज से जुड़ने वाले सभी शिक्षक/विद्वान खालिस व्यापारिक मनोवृत्ति से नहीं अपितु शिक्षा व शिक्षण के उद्देश्यों को लेकर जुड़े थे, जिनमें सबसे प्रमुख नाम हिन्दुस्तानी भाषा को प्राथमिकता देने वाल जॉन बॉर्थविक गिलक्रिस्ट थे।

जॉन बार्थविक गिलक्रिस्ट हिन्दुस्तानी भाषा के समर्थक होने के बावजूद भी हिन्दी भाषा ग्रंथों की रचना लल्लूलाल व सदल मिश्र की सहायता से करवाते हैं। गिलक्रिस्ट हिन्दुस्तानी को अरबी-फारसी और हिन्दी को ब्रजभाषा से जोड़कर प्रस्तुत करते हैं। नवीन ग्रंथों व कोशों को तैयार कर उन्होंने भारतीय भाषा को समृद्ध किया।

बहरहाल आगे चलकर जॉन विलियम टेलर ने हिन्दुस्तानी का अधिक महत्त्व होने के बावजूद भी हिन्दी के अध्ययन को आवश्यक माना। जॉन विलियम टेलर के कार्यकाल में हिंदी-हिंदुस्तानी के कुछ नए ग्रंथ तैयार हुए कुछ अनुवाद कार्य हुए, पुराने ग्रंथों के नए संशोधित संस्करण प्रकाशित हुए, साथ ही

ग्रंथकर्ताओं को पुरुस्कृत करने का कार्य भी किया गया। टेलर के तीन बड़े सहयोगियों - टॉमस रोएबक, विलियम प्राइस और तारिणीचरण मिश्र ने भी अपने-अपने कार्यक्षेत्र में उम्मीद से बढ़कर कार्य किया। तारिणीचरण मिश्र ने टॉमस रोएबक को कोश तैयार करने में भरपूर मदद की, साथ ही उन्होंने विद्यापति के संस्कृत ग्रंथ 'पुरुष परीक्षा' का हिन्दुस्तानी अनुवाद भी प्रस्तुत किया।

'हिन्दी और हिन्दुस्तानी सेलेक्शंस, भाग-1' की भूमिका और 'कॉरेसपॉण्डेसेज ऑफ दी कॉलेज ऑफ फोर्ट विलियम' में संकलित प्राइस का पत्र इस बात का प्रमाण है कि भाषा के रूप में हिंदी को स्वीकृति प्रदान कराने में फोर्ट विलियम कॉलेज का क्या योगदान रहा -

हिन्दी को आधुनिक अर्थों में ग्रहण किया गया।

हिन्दुस्तानी से अधिक वरीयता हिन्दी को मिली।

कम्पनी के अधिकारियों का ध्यान प्रशासन और उच्च वर्ग की हिन्दुस्तानी से हटाकर जनसामान्य की भाषा की ओर करने का प्रयास।

हिंदी-हिंदुस्तानी के संबंध में वैज्ञानिक विवेचन

हिंदी-हिन्दुस्तानी व्याकरण का आधार ब्रजभाषा को नहीं, बल्कि खड़ी बोली को माना।

'फोर्ट विलियम कॉलेज' अपने अस्तित्व को बनाए और बचाए रखने के राजनैतिक उठा-पटक से भरा दास्तान है। फोर्ट विलियम कॉलेज लॉर्ड बेलेजली के अग्रिम पहल का परिणाम है। बतौर भाषा वह भी हिन्दी भाषा को स्थायित्व रूप देने में महती भूमिका फोर्ट विलियम कॉलेज और गिलक्रिस्ट, विलियम प्राइस तथा अन्य सहयोगियों की रही। ज्ञातव्य है कि जॉन गिलक्रिस्ट के दौर को अकादमिक दृष्टि से फोर्ट विलियम कॉलेज का स्वर्ण युग कहा गया।

कई विवाद और विरोधों के बावजूद फोर्ट विलियम कॉलेज 1800 ई. से फरवरी 1854 ई. तक के अपने समयकाल को पूरा करने में सफल रहा। किंतु 'कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स की आग में समय-समय पर तपना और अंत में उसे भस्म होना पड़ा और उसके भस्म हुए राख की ढेर पर 'बोर्ड ऑफ एग्जामिनर्स' की नींव रखी गयी।

उल्लेखनीय है कि भाषा के रूप में हिन्दी की विकासयात्र शुरु हो चुकी थी। पत्र-पत्रिकाओं, नित नवीन रचनाओं के माध्यम से हिन्दी अपना रूप दिन-प्रतिदिन गढ़ती जा रही थी... अतः कहा जा सकता है कि विकास की यात्र खत्म नहीं होती बस! उसका स्वरूप बदलता है।

'मैं सब बोलता हूं ज़रा-ज़रा

जब बोलता हूं हिन्दी'

संदर्भ

1. डेविड कॉफ, ब्रिटिश ओरिएंटलिज्म एंड बंगाल रेनेसां, फर्मा के.एल. मुखोपाध्याय, कलकत्ता, 1969, पृ. 5
2. शेखर बंद्योपाध्याय (अनुवाद - नरेश नदीम, पलासी से विभाजन तक, ओरिएंट लॉन्मैन प्राइवेट लिमिटेड,

2007, पृ. 43
3. एशियाटिक रिसर्चेज ऑर ट्रांजैक्शंस ऑफ दी सोसाइटी इंस्टीट्यूटेड इन बंगाल फॉर इन्क्वायरिंग इनटू दी हिस्ट्री एंड एंटीक्वीटीज, दी आर्ट्स साइंसेज एंड लिटरेचर ऑफ एशिया, भाग-1, भारत भारती ओरिएंटल पब्लिशर्स एंड बुक सेलर्स, दुर्गा कुंड, वाराणसी, पृ. vii (अनुवाद-शीतांशु)
4. ओ.पी. केजरीवाल, भारत के अतीत की खोज, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, प्रस्तावना से।
5. वही
6. एशियाटिक रिसर्चेज ऑर ट्रांजैक्शंस ऑफ दी सोसाइटी इंस्टीट्यूटेड इन बंगाल फॉर इन्क्वायरिंग इनटू दी हिस्ट्री एंड एंटीक्वीटीज, दी आर्ट्स साइंसेज एंड लिटरेचर ऑफ एशिया, खंड-4, चतुर्थ संस्करण (फ्रॉम दी कैलकटा एडिशन), लंदन, 1807, पृ. 117
7. हिन्दी अनुवाद उद्धृत - लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय (1800-1954), इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रकाशन, इलाहाबाद, 1947, परिशिष्ट से, पृ. 180
8. केदारनाथ सिंह की कविता

सहायक पुस्तक

1. कम्पनी राज और हिन्दी (सन्दर्भ: फोर्ट विलियम कॉलेज) - शितांशु प्रथम संस्करण-2018, राजकमल प्रकाशन
2. साहित्य चिंतन, डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, राजस्थान प्रेस

❒❒❒

1. शोधार्थी हिन्दी विभाग मिजोरम विश्वविद्यालय, मिजोरम मो.- 8447747603 ईमेल: jhaprabhanjan89@gmail.com
2. शोध-निर्देशक आचार्य, हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, मिजोरम आईजोल, मिजोरम-796004 ईमेल: sanjaykumarmzu@gmail.com

महात्मा बुद्ध और साहित्य -समाज परिवर्तन-कारी चेतना

–सूरज प्रकाश बडत्या

यहाँ बहुत ही स्पष्ट रूप में दो प्रकार की वैचारिकी, आचार-विचार, पूजा-पद्धति, साहित्य और प्राचीन मध्ययुगीन लेखकों के नामोल्लेख के साथ उनकी वैचारिकी और समझ को बताया गया है ।दिनकर के कथन से स्पष्ट देखा जा सकता है कि एक भारतीय चिंतन परंपरा में एक धारा आडंबरों और अंधविश्वास के साथ जातिव्यवस्था को प्रश्रय देती रही है और दूसरी धारा 'लोक' की अवधारणा को आगे बढ़ाती रही है।

शोधालेख सार - इस शोधालेख में बौद्ध एवं आधुनिक चिंतनधाराओं के आधार पर भारतीय समाज का विश्लेषण किया है | इसके अंतर्गत भारतीय चिंतन परंपरा में बौद्ध, जैन , चार्वाक , लोकायत अम्बेडकरवाद जैसी दार्शनिक वैचारिकी को भारतीय समाज के सन्दर्भ में जांचा-परखा गया है |

बीज शब्द- भारतीय समाज , चिंतन पद्धति , वर्ण व्यवस्था , बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन, लोकायत , आंबेडकरवाद , इतिहास -दर्शन , वर्चस्ववादी वैचारिकी |

किसी भी समाज में विकास सामूहिक प्रयास और बिना प्रतिरोध के संभव नहीं है । पहले से स्थापित मूल्य समर्थित व्यवस्था अपने वर्चस्व को कायम रखने के लिए हर संभव प्रयास करती है और नवचेतना संपन्न समुदाय नई मूल्य-व्यवस्था के स्थापना के लिए पुरानी मूल्य-व्यवस्था का प्रतिरोध करता है । इसीलिए शंकर गुहा नियोगी ने कहा था कि 'ध्वंस और निर्माण की प्रक्रियाएं साथ-साथ चलती हैं | बिना पुराना टूटे नए का निर्माण नहीं किया जा सकता।' लेकिन क्या यह प्रतिरोध की चेतना अचानक कहीं आकाश से टपक पड़ती है या जमीन के गर्भ से अवतरित हो जाती है। चूंकि हमेशा से ही स्थापित मूल्य- व्यवस्था के भीतर ही प्रतिरोध करने वाला समुदाय विद्यमान रहता है | उसी वर्चस्ववादी और प्रतिरोधी चेतना का विश्लेषण हम इस शोधालेख में करेंगे | साथ ही बौद्ध दर्शन ने कैसे समाज-साहित्य को प्रभावित किया उसे भी परखेंगे | इस आलेख में हम बौद्ध दर्शन के सामाजिक योगदानों को देखेंगे | बौद्ध दर्शन की इस प्रक्रिया को समझे बिना हम आज के दलित साहित्य और उसकी वैचारिक आधारभूमि को ठीक प्रकार से नहीं समझ पाएंगे ।

बौद्ध धम्म-दर्शन

बौद्ध धम्म तत्कालीन समय के वैदिक धर्म की कुरीतियों, वर्चस्ववादिता, अन्याय के विरुद्ध पैदा हुआ एक लोकधर्म था ऐसा भारतीय ही नहीं बहुत से विदेशी चिंतकों ने भी माना है । इसे और ठीक

प्रकार से समझने के लिए हम हिंदी साहित्य के महत्वपूर्ण लेखक और चिन्तक रामधारी सिंह 'दिनकर' के कथन को यहां उद्धृत कर अपनी बात को आगे बढ़ाना चाहेंगे। दिनकर अपनी बहुचर्चित पुस्तक **' संस्कृति के चार अध्याय '** में कहते हैं- ''बुद्ध के समय से ही भारत में संस्कृति की दो धाराएं बहुत ही स्पष्ट रही हैं। एक धारा वह है जो वर्णाश्रम धर्म को अक्षुण्ण रखना चाहती है जिसका विश्वास वेदों, पुराणों, स्मृतियों और धर्मशास्त्रों में है और धर्म के स्मृति रूपों में श्रद्धा रखती है, मंदिर, मूर्ति, तीर्थ और व्रत में विश्वास करती है। इस धारा के आचार्य मनु, शंकर तथा उनके कवि कालिदास, जयदेव, विद्यापति और तुलसीदास हैं। दूसरी धारा वह है जो बुद्ध के कमंडल से निकलकर बौद्ध आचार्यों से होकर सरहपा, नाहपा आदि सिद्धों में पहुंची और उनके कवि कबीर, नानक, दादू हैं।''1

यहाँ बहुत ही स्पष्ट रूप में दो प्रकार की वैचारिकी, आचार-विचार, पूजा-पद्धति, साहित्य और प्राचीन मध्ययुगीन लेखकों के नामोल्लेख के साथ उनकी वैचारिकी और समझ को बताया गया है।दिनकर के कथन से स्पष्ट देखा जा सकता है कि एक भारतीय चिंतन परंपरा में एक धारा आडंबरों और अंधविश्वास के साथ जातिव्यवस्था को प्रश्रय देती रही है और दूसरी धारा 'लोक' की अवधारणा को आगे बढ़ाती रही है। आडंबरों और अंधविश्वासों को प्रश्रय देने वाली इस वर्चस्ववादी वैचारिकी और संस्कृति का कोई सीधा संबंध मनुष्य के श्रम के साथ नहीं था। श्रम से संबंध न रख पाने के कारण इस वर्ग की सृजनात्मक क्षमता सीधे तौर पर प्रभावित हुई। श्रम और सृजन का बहुत ही सीधा सा गणित है। इस कारण यह समुदाय काल्पनिक कथावाचक और भोगविलासी होता चला गया। हवन, यज्ञोपवीत संस्कार, पौराणिक कथा का वाचन या क्रियाएं, अभिजात्य भाषा (संस्कृत) में श्लोकों का निर्माण में ही एक समुदाय विशेष ने अपनी सारी सृजनात्मक शक्ति को लगा दिया। बल्कि यह अपनी सत्ता को बनाए रखने की लालसा से ही किया होगा ऐसा बहुत से चिंतकों ने माना है। इसलिए नए विचार इनके मानस से दूर होते चले गए। दूसरी तरफ इसके समानांतर वैचारिक प्रक्रियाएं थीं वह कोई एक न होकर कई सारी इकाइयों का समुच्चय था और वह श्रम तथा लोक से सीधी जुड़ी होने के कारण सृजनात्मक संभावनाओं से लैस थीं। इस कारण अधिक सृजन और प्रयोग होते रहे। बौद्ध धर्म उनमें से एक मुख्य वैचारिकी के रूप में मानी जानी चाहिए। जिसने न केवल भारत बल्कि पूरी दुनिया को प्रभावित किया | आज भी भारत को बुद्ध के देश के रूप में मानकर उसका सम्मान किया जाता है | अतः यहां बौद्ध धम्म-दर्शन के योगदानों का विश्लेषण किया जाएगा।

भारतीय इतिहास में यदि छठी शताब्दी ई. पू. को देखा जाए तो यह वह काल है जिसने भारतीय दर्शन, समाज, संस्कृति, साहित्य और जीवन पद्धति को सीधे प्रभावित किया। इस युग को भारत के दार्शनिक चिंतन के युग के रूप में भी पहचाना जाना चाहिए। इसी युग में महात्मा बुद्ध का प्रादुर्भाव हुआ था। इसके बारे में बताते हुए भारत की प्रमुख इतिहासकार रोमिला थापर का मानना है कि-

'भारत में जन्मे किसी भी अन्य ऐतिहासिक व्यक्ति ने विश्व का बलात् इतना अधिक ध्यान आकृष्ट नहीं किया है, जितना बुद्ध ने किया है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि बुद्ध ने अपने समय के तेजी से बदलते समाज का विश्लेषण करने तथा मनुष्य-जाति के लिए एक स्थायी समाजदर्शन प्रदान करने का अत्यंत गहन और व्यापक प्रयास किया था। बौद्ध धर्म ने एक वैकल्पिक समाज का भी खाका खड़ा कर दिया था। उसने उस समय अपनी जड़ जमाती श्रेणी-बद्ध असमानतावादी विचारधारा और व्यवहारों

से भिन्न सिद्धांतों पर आधारित समाज को संगठित करने की संभावना खड़ी कर दी थी।''2

रोमिला थापर ने यहां दो महत्वपूर्ण बातें की हैं जो सीधे बौद्ध की चिंतन प्रणाली को ठीक प्रकार से समझने में सहायता करती हैं। वह एक स्थान पर कहती हैं कि 'बौद्ध धर्म ने एक वैकल्पिक समाज का खाका खड़ा कर दिया था।' तो हमारा प्रश्न यहाँ पर यह है कि उस समय में इस 'वैकल्पिक समाज' की आवश्यकता क्यों बनी? क्या तत्कालीन समाज इतना बर्बर और अन्यायी था कि उसके समानांतर एक बेहतर, आदर्शात्मक और लोकतांत्रिक समाज की दरकार थी ? यानी कि भारतीय समाज 'वर्ग' और 'वर्ण' में बंटा हुआ था। कहने का मतलब यह है कि तत्कालीन समाज किसी भी मायने में एक बेहतर और स्वस्थ समाज नहीं रह गया था। संभवतः इसीलिए एक वैकल्पिक समाज की रूपरेखा बुद्ध ने तैयार की होगी। दूसरी बात जिस पर रोमिला थापर ने जोर दिया है वह है, 'श्रेणीबद्ध असमानतावादी विचारधारा' यानी कि समाज श्रेणियों में बंटा था। समाज असमानतावादी वैचारिकी पर आधारित था। लेकिन वह कौन सी वैचारिकी थी? असमानता की प्रकृति कैसी थी? इस पर भी बात होनी चाहिए। अधिकांश विद्वानों, इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों का यह मानना है कि- यह जड़ जमाती हुई अन्याय और असमानता पर आधारित वैचारिकी ब्राह्मणवादी और वैदिक संस्कृति से परिचालित थी। चूंकि इसी वैचारिकी ने समाज में असमानता की दीवार को बड़ा और खाई को गहरा किया था। लेकिन यह असमानता केवल वर्गीय नहीं थी बल्कि कहीं इससे गहरे यह जाति आधारित थी। जातियों की अपनी श्रेणियां बनी हुई थीं और उन श्रेणियों में शूद्र सबसे निचले पायदान पर था। लेकिन इसमें भी 'अछूत' (अत्यंज) तो इनके किसी भी सामाजिक दायरे में शामिल ही नहीं था। उसे तो समाज को श्रेणीबद्ध करने वाले चिंतकों ने देशनिकाला (नगर-गांव से बाहर) किया हुआ था। ऐसे कारुणिक और बर्बर युग में गौतम बुद्ध ने आज के दलित और उस समय के शूद्र एवं अंत्यज को देश भीतर (नगर-गांव में) ठहरने की, रहने की नई व्यवस्था का प्रतिपादन किया। यह कोई छोटी बात नहीं थी, यह अपने आप में एक क्रांतिकारी-ऐतिहासिक घटना थी। या इसे कहें कि यह जड़ हो चुके भारतीय सामाजिक ढांचे की टूटन की दिशा में बढ़ा पहला सांगठनिक कदम था। यह उस ईमारत की नींव थी जिसको आधुनिक युग में पूरा निर्मित करने का श्रेय डा. अंबेडकर को जाता है। गौतम बुद्ध के बारे में बताते हुए बाबा साहेब डा. भीमराव अंबेडकर का कहना है कि-

'प्रथम समाज-सुधारक और उनमें सबसे महानतम गौतम बुद्ध थे। समाज- सुधार का इतिहास ही बुद्ध से शुरू होता है और कोई भी इतिहास उनकी उपलब्धियां बताए बिना अधूरा रहेगा।'3

बात सही भी है कि भारतीय समाज में समाज-सुधार का सूत्रापात गौतम बुद्ध ने ही किया था। इसीलिए रोमिला थापर जैसी महत्वपूर्ण और गंभीर इतिहासकार को यह कहना पड़ा कि बुद्ध ने नए समाज का एक वैकल्पिक ढांचा तैयार किया था। किसके लिए यह वैकल्पिक ढांचा तैयार किया था यह पूरी तरह से स्पष्ट है। इसे हम जयशंकर प्रसाद के नाटक चंद्रगुप्त में आए कथन से और अधिक स्पष्ट करना चाहेंगे। चूंकि जयशंकर प्रसाद के बारे में प्रायः यह माना गया है कि उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से इतिहास के गंभीर प्रश्नों को साहित्य में पिरोने का कार्य किया है। वे हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म के व्याख्याता के रूप में स्थापित हैं। उनके द्वारा रचित हिंदी नाटक 'चंद्रगुप्त' में उन्होंने बौद्ध धर्म के बारे में चाणक्य के मुख से कहलवाया है कि -'वेश्याओं और शूद्र के लिए एक धर्म की आवश्यकता थी जिसकी पूर्ति बौद्ध धर्म के रूप में हुई।'

इसी से समझा जा सकता है कि बौद्ध धर्म ने किस समुदाय को प्रश्रय देने का कार्य किया होगा। बौद्ध धर्म ने वैदिक सामाजिक ढांचे को इसी वर्चस्ववादी वैचारिकी के जकड़न से ढीला किया। शूद्र, अंत्यज एवं स्त्री समुदाय ने थोड़ी मुक्त की सांस ली होगी | यहीं से उनके जीवन में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई।

बौद्ध दर्शन के प्रभाव और तत्कालीन समाज को समझने के लिए हमें डा. अंबेडकर के चिंतन से होकर गुजरना होगा। अतः हम यहां डा. अंबेडकर के चिंतन को थोड़ा विस्तार के साथ उद्धृत करना चाहेंगे। डा. अंबेडकर कहते हैं कि- ''बुद्ध ने जब अपना अभियान शुरू किया और उनकी शिक्षा से जो महान सुधार आया उसको समझने से पहले तत्कालीन आर्य सभ्यता की विकृत स्थिति को जानना आवश्यक है। तत्कालीन आर्य समुदाय सबसे घृणित सामाजिक, धार्मिक और आध्यात्मिक व्यभिचार में फंसा हुआ था। कुछ सामाजिक बुराइयां बताने का उदाहरण है, जुआ खेलना। आर्यों में शराब पीने की आदत की तरह जुआ भी समाज में व्यापक रूप से फैला हुआ था। प्रत्येक राजा के यहां जुआ खेलने के लिए महल के साथ ही एक मंडप हुआ करता था। हर एक राजा जुए के विशेषज्ञ को नौकरी पर रखते, जो खेल के समय राजा का सहायक हुआ करता था।''4

डा. अंबेडकर आगे बताते हैं कि-

''अब आर्यों के समाज की बात करें जो कि वर्ग-संघर्ष और वर्ग-अप्रतिष्ठा का शिकार था। आर्यों का समाज चार वर्गों को मान्यता देता था। वे हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इनमें विभेद केवल धरातल का नहीं था, ये विभेद ऊंच-नीच का था, एक वर्ग दूसरे के ऊपर था। एक-दूसरे के ऊपर या नीचे होने के कारण चारों वर्णों में ईर्ष्या और विद्वेष था। इस ईर्ष्या और विद्वेष से शत्रुता पैदा हुई। यह शत्रुता दो सर्वोच्च वर्गों, अर्थात ब्राह्मण और क्षत्रियों में अधिक थी। इन दोनों में सतत वर्ग-संघर्ष चलता रहता था। यह इतना तीव्र था, जिसका विवरण पढ़कर मार्क्सवादी प्रसन्न हो जाएंगे। दुर्भाग्य से ब्राह्मण और क्षत्रियों के बीच के वर्ग-संघर्ष का विस्तृत इतिहास नहीं मिलता। केवल कुछ उदाहरण लिखे गए हैं। वेन, पुरूरवा, नहुष, सुदास, सुमुख और निमि ऐसे क्षत्रिय राजा थे, जिनका ब्राह्मणों से संघर्ष हुआ था। ..... इन दोनों वर्गों के बीच कितने बड़े मुद्दे थे। इनके बीच संघर्ष केवल यदा-कदा होने वाले दंगे नहीं थे। यह दोनों वर्ग एक-दूसरे को मिटा देने के लिए संघर्षरत थे। परशुराम जो एक ब्राह्मण थे, क्षत्रियों से इक्कीस बार लड़े और प्रत्येक क्षत्रिय को उन्होंने मार डाला। वैसे वे दोनों वर्ग सर्वश्रेष्ठता के लिए आपस में लड़ रहे थे, फिर भी दोनों वैश्यों और शूद्रों को वश में रखने के लिए एक थे। वैश्य दूध देने वाली गाय के समान थे। उनका कार्य केवल कर चुकाना था। आमतौर पर शूद्र भार स्वरूप जानवर थे। इन दो वर्गों का एकमात्र उद्देश्य ब्राह्मण और क्षत्रिय को गौरवमय बनाना और खुशहाल रखना था। इनके अपने जीने के कोई अधिकार नहीं थे ....ये लोग समाज और कानून की परिधि के बाहर थे। इनके न तो कोई अधिकार थे और न इन्हें कोई अवसर थे। ये आर्यों के समाज से बहिष्कृत थे।''5

डा. अंबेडकर ने तत्कालीन वैदिक समाज में रहने वाले वर्ण और वर्ग आधारित समुदाय का एक खाका खींचा है। इसे जाने बिना हम बौद्ध दर्शन के योगदानों को भली प्रकार नहीं समझ पाएंगे। उन्होंने ऐतिहासिक रूप से उनके पुराणों और धर्मग्रंथों का अध्ययन-विश्लेषण कर अपने विचारों को लिखित रूप

दिया। वे आगे बताते हैं कि-

''आर्यों के समाज की यौन अनैतिकता जानकर उनके समाज एवं वंशजों को सदमा पहुंचेगा। बुद्ध पूर्व के आर्यों पर यौन और वैवाहिक संबंधों के लिए आज की प्रतिबंधित श्रेणियों जैसा नियम नहीं था। आर्य धर्मग्रंथों के अनुसार ब्रह्मा सृष्टि के रचयिता हैं। ब्रह्मा के तीन पुत्र और एक पुत्री थी। उसके एक पुत्र यक्ष ने अपनी बहन से विवाह किया। इस भाई-बहन के विवाह से जो पुत्रियां पैदा हुईं, उनमें से कुछ ने ब्रह्मा के पुत्र मारिचि के पुत्र कश्यप से विवाह कर लिया और कुछ ने ब्रह्मा के तीसरे पुत्र धर्म से विवाह कर लिया। ऋग्वेद में एक प्रसंग है कि यम और यमी भाई-बहन थे। इस प्रसंग के अनुसार यमी अपने भाई यम को सहवास के लिए आमंत्रित करती है और उसके ऐसा करने से इनकार करने पर क्रोधित हो जाती है।

पिता अपनी पुत्री से विवाह कर सकता था। वशिष्ठ ने अपनी पुत्री शतरूपा के वयस्क हो जाने पर उससे विवाह किया था। मनु ने अपनी पुत्री इला से विवाह किया था। जाह्नु ने अपनी पुत्री जाह्नवी से विवाह किया था। सूर्य ने अपनी पुत्री उषा से विवाह किया था। बहुपति-प्रथा प्रचलित थी, जो साधारण किस्म की नहीं थी। आर्यों में जो बहुपति-प्रथा पाई जाती थी, उसमें एक ही परिवार के कई लोग एक ही औरत से सहवास करते थे। '6

उपर्युक्त उद्धरणों से पता चलता है कि किस तरह तत्कालीन समाज पतन की ओर अग्रसर था। उस पतनशील समाज की संस्कृति और मूल्य-व्यवस्था निश्चित रूप से जातिविशेष के लिए ही सुलभ थी। आम जनता में प्रायः इस प्रकार की कुप्रथाओं का निषेध था और यह चलन में नहीं था। जाति-प्रथा के कठोर बंधन थे। स्त्रियां केवल भोग-विलास की वस्तु मात्रा थीं। ऐसे समय में गौतम बुद्ध का प्रादुर्भाव एक युगांतकारी घटना थी। बुद्ध ने अपने समय की इन सत्ता प्रतिष्ठिनों की संस्कृति और बौद्धिक मूल्यों का प्रतिरोध किया। जहां शिक्षा, धर्म और मान्यताएं उच्चवर्णों तक ही सीमित थीं | बुद्ध ने अपने यहां यह आम जन को सुलभ कराईं। इसमें निश्चित रूप से उस समय के वंचित समुदाय ने राहत की सांस ली होगी। वे बौद्ध धर्म की तरफ आकर्षित हुए। उनके लिए यह नए तरह का अहसास था जहां वे अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकते थे। बौद्ध विहार जो की नए प्रकार के शिक्षालय थे उनमें किसी भी प्रकार का जातिगत भेदभाव नहीं था। हालांकि स्त्रियों के मामले में बौद्ध दर्शन की भी कुछ सीमाएं रही हैं। उनका विहारों में आना वर्जित किया गया था। हालांकि प्रारंभिक दौर में ही ऐसा था। बाद में वे भी बौद्ध विहारों में आने लगी थीं इसका संकेत मिलता है। लेकिन शूद्रों-अन्त्यज को इससे बहुत फायदा हुआ। उनमें शिक्षा और ज्ञान का प्रकाश फैला। हालांकि यहां इसकी गति बहुत धीमी थी लेकिन यह एक सुखद शुरुआत थी। बौद्ध धर्म के योगदान को रेखांकित करते हुए बाबा साहेब डा. अंबेडकर का कहना है कि-

''बुद्ध ने जाति-प्रथा की निंदा की।...असमानता का सिद्धांत जो कि जाति-प्रथा का आधार है, उस समय सुस्थापित हो गया था और इसी सिद्धांत के विरुद्ध बुद्ध ने एक निश्चयात्मक और कठोर संघर्ष छेड़ा। अन्य वर्गों पर अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए ब्राह्मणों के मिथ्याभिमान के वह कितने कट्टर विरोधी थे और उनके विरोध के आधार कितने विश्वासोत्पादक थे, उसका परिचय उनके बहुत से संवादों से प्राप्त होता है। इनमें से सर्वाधिक महत्वपूर्ण अम्बट्ठ सुत के रूप में जाना जाता है।''7

बौद्ध दर्शन या धर्म ने दलितों में नई प्रकार की चेतना का संचार किया। हालांकि इससे उनकी जिन्दगी में कोई बड़ा गुणात्मक परिवर्तन नहीं आया था लेकिन धीरे-धीरे उनमें कर्मकांडों के प्रति मोहभंग अवश्य हुआ होगा। सर्वप्रथम किसी भी प्रकार के परिवर्तन के लिए विचार का बदलना अनिवार्य होता है। बुद्ध ने कार्य-कारण शृंखला के आधार पर बताया कि कोई भी वस्तु बिना कारण के अस्तित्ववान नहीं है। उनके होने के लिए कोई न कोई कारण अवश्य होगा। बुद्ध ने ईश्वर की सत्ता को एक हद तक नकारने का साहस किया जिसके आधार पर 'जाति-उत्पत्ति' का सिद्धांत टिका हुआ था। कर्मफल के सिद्धांत को खारिज करके उन्होंने दर्शन की दिशा को ही बदलकर रख दिया। उन्होंने ब्राह्मणों और क्षत्रियों के राज करने के दैवीय सिद्धांत को चुनौती दी। अपने समय में यह कोई साधारण बात नहीं थी। महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने अपनी पुस्तक 'बौद्ध दर्शन' में विस्तार से बौद्ध दर्शन को समझाने का प्रयत्न किया है। बौद्ध दर्शन के योगदानों को जानने के साथ-साथ हमें यह भी जानना चाहिए कि आखिर बौद्ध दर्शन क्या है ? हम संक्षेप में राहुल सांकृत्यायन द्वारा बौद्ध दर्शन के बारें में लिखी गयी कुछ महत्वपूर्ण बातों को यहां रख रहे हैं। उन्होंने बताया हैं कि-

''बुद्ध के उपदेशों को समझने में सहायता मिलेगी यदि पाठक बुद्ध के इन मूल चार सिद्धांतों तीन अस्वीकारात्मक और एक स्वीकारात्मक को पहले जान ले। वे चार सिद्धांत ये हैं-

(1) ईश्वर को नहीं मानना, अन्यथा 'मनुष्य स्वयं' अपना मालिक है इस सिद्धांत का विरोध होगा।

(2) आत्मा को नित्य नहीं मानना, अन्यथा नित्य एकरस मानने पर उसकी परिशुद्धि और मुक्ति के लिए गुंजाइश नहीं रहेगी।

(3) किसी अन्य को स्वतः प्रमाण नहीं मानना; अन्यथा बुद्धि और अनुभव की प्रामाणिकता जाती रहेगी।

(4) जीवन-प्रवाह को इसी शरीर तक परिमित मानना; अन्यथा जीवन और उसकी विचित्राताएं कार्य-कारण नियम से उत्पन्न न होकर सिर्फ आकस्मिक घटनाएं रह जाएंगी। बौद्ध धर्म में चार बातें सर्वमान्य हैं।''8

हम यहां उपर्युक्त चारों बातों की विस्तृत व्याख्या में नहीं जाएंगे लेकिन इसमें जो स्पष्ट है वह है ईश्वर की सत्ता को नकार कर व्यक्ति को स्वयं अपने अच्छे और बुरे के लिए जिम्मेदार मानना। यानी की वह चाहे तो स्वयं द्वारा अपने को बेहतर बना सकता है। इसके अलावा वह बुद्धि और अनुभव को किसी भी बात के लिए प्रमाण स्वरूप स्वीकार करने पर बल देता है। आत्मा की सत्ता को पूरी तरह से खारिज करना अर्थात उसे अनित्य मानना। इसके अलावा वह 'परिवर्तन' को एक बड़ा मूल्य मानने पर बल देते हैं।

लोक-संस्कृति और मूल्यों की स्थापना में बुद्ध का मुख्य योगदान रहा है। उन्होंने लोक-संस्कृति को परिमार्जित किया और 'धम्म' की स्थापना की। इससे अमानवीय वैदिक-पुरोहित संस्कृति के प्रभाव को कम किया। उन्होंने समाज को 'करुणा' और 'प्रेम' का संदेश दिया। लेकिन 184 ई. पू. में पुष्यमित्रा शुंग ने राजनैतिक शक्ति प्राप्त कर तलवार के बल पर बौद्ध संस्कृति का विनाश करने का प्रयास किया और वैदिक धर्म के अनुरूप ब्राह्मण धर्म की पुनः स्थापना कर डाली। ऐसा नहीं था कि शुंग के विरोध करने पर बुद्ध अनुयायी आगे नहीं आए होंगे। जिस सांस्कृतिक प्रतिरोध के मूल्यों की स्थापना बुद्ध ने की थी उसे अनेक

अनुयायियों ने भी आगे जारी रखा था। लेकिन सातवीं शताब्दी तक आते-आते शक, कुषाण, हूण और यवन जैसे विदेशी आक्रांताओं के साथ मिलकर शंकराचार्य जो कि बौद्धिक वैदिक चिन्तक थे उन्होंने बौद्ध धम्म को दार्शनिक स्तर पर ख़तम करने का गंभीर कार्य किया। तत्पश्चात ऐसा कहा जाता है कि बौद्ध अनुयायी बज्रयानी सिद्ध और नाथपंथियों के नाम से लोकमानस में अपने मत का प्रचार करने लगे। इनकी सबसे बड़ी विशेषता थी समाज में मौजूद आडंबरों, विधि-विधानों और कर्मकांडों के खंडन-मंडन का अभियान।

नाथों-सिद्धों के इस अभियान के संदर्भ में रामधारी सिंह 'दिनकर' की पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय से उनके मत को यहां पर रखना चाहेंगे-

''इस देश में वेद विरोधी लोगों का दल बहुत बड़ा हो गया था और जो बातें मुसलमानों के आगमन के बाद कबीर, दादू, नानक ने कहीं उन उपदेशों का सिक्का बौद्ध संत (सिद्ध लोग) जनता के मन पर पहले ही (सातवीं, आठवीं, नौवीं सदियों में) बिठा चुके थे। जिसने सिद्धों के पद पढ़े हैं वह त्रिकाल में भी यह नहीं मान सकता कि नानक, कबीर, दादू के प्रादुर्भाव का एकमात्रा कारण इस्लाम था। इस्लाम और सूफियों का प्रभाव इन संतों पर अवश्य पड़ा किन्तु उनके वास्तविक पूर्वज मुस्लिम सूफी नहीं प्रत्युत बौद्ध सरणी के सिद्ध संत थे जिन्होंने धर्म के बाह्याचार पर उतने ही भीषण प्रहार किए थे, जितने भीषण प्रहार आगे चलकर निर्गुणियां संतों ने किए। कबीर की बहुत सी बातों में हम सिद्धों की उक्तियों की आवृत्ति पाते हैं।''9

दिनकर की यह उक्ति हिंदी के प्रमुख आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल से अपनी असहमति दिखाती हुई दिखती है कि भक्ति काल के संत साहित्य के प्रादुर्भाव में एकमात्र प्रमुख कारण इस्लाम हैं। जबकि उपर्युक्त विद्वानों के मतों के आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि संतों की दलित चेतना का मुख्य कारण वैदिक संस्कृति विरोधी चेतना है जो बुद्ध से प्रवाहमान होकर नाथों-सिद्धों से होती हुई यहां तक आई है।

संदर्भ

1. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह 'दिनकर' लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद ,संस्करण 2016, पृ. 342.
2. प्राचीन भारत, रोमिला थापर का लेख राजकमल प्रकाशन , नयी दिल्ली , संस्करण, 2001, पृ. 35.
3. बाबा साहेब डा. अंबेडकर संपूर्ण वाङ्मय, खंड डा. बी.आर. अंबेडकर, डा. अंबेडकर प्रतिष्ठान, कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्लीसं स्करण 2001 पृष्ठ ३२ .
4. वही, पृ. 33.
5. वही, पृ. 35-36.
6. वही, पृ. 36.
7. वही, पृ. 75.
8. बौद्ध दर्शन, राहुल सांकृत्यायन, किताब महल प्रकाशन , संस्करण, 2013, पृ. 1.
9. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर, लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद ,संस्करण 2016 पृ. 13.

❐❐❐

1. विजिटिंग एसोसिएट प्रोफेसर टोक्यो यूनिवर्सिटी ऑफ़ फोरेन स्टडीज , टोक्यो , जापान badtiya.suraj@gmail.com, 9891438166

भाषा का प्रश्न और वेब सीरीज

–संदीप कुमार जायसवाल

वेब सीरीज ने भाषा का विकेंद्रीकरण किया है ।जिस तरह इनके कंटेंट में कोई एक खास शहर केंद्र में नहीं वैसे ही यहां सिर्फ खड़ी बोली केंद्र में नहीं है। हिंदी की विविध बोलियों, उप भाषाओं के प्रयोग को यहां पर देखा जा सकता है। फिल्मों में बड़े शहरों को ही लोकेशन के तौर पर दिखाया जाता है। वैसे हाल के वर्षों में छोटे शहरों और कस्बों ने भी सिनेपट पर अपनी जगह बनाई है जैसे अलीगढ़ फिल्म या जिला गाजियाबाद।

प्रस्तुत शोध आलेख में वेब सीरीज की भाषा का अध्ययन किया गया है जिसके लिए समाजशास्त्रीय अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है। वेब सीरीज मनोरंजन का आधुनिक माध्यम है। इसमें इंटरनेट के जरिए विभिन्न प्लेटफार्म जैसे नेटफ्लिक्स, अमेजॉन प्राइम आदि पर सीरीज देखे जाते हैं। यह कई एपिसोड में होते हैं। वेब सीरीज विभिन्न विषयों को लेकर बनते हैं जैसे राजनीति, क्राइम थ्रिलर, फैमिली ड्रामा, कॉमेडी आदि। वेब सीरीज ने जहां कई नए विषयों पर अपने एपिसोड बनाए हैं वही एक नई तरह की भाषा भी गढ़ी है जो दर्शकों के बीच लोकप्रिय हो रही है। इसकी भाषा में यथार्थ को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का आग्रह है। यह बदलती हुई सामाजिक संरचना ,स्थितियों को भी प्रकट करती है। प्रस्तुत आलेख में इस बात का अध्ययन किया गया है कि वेब सीरीज किस तरह स्थानीय भाषा को प्रमुखता देते हैं, सामाजिक बदलाव को पकड़ते हैं।वेब सीरीज पात्रों की मुखरता, बोलियों की विविधता आदि को कितने स्वभाविक ढंग से दिखा पाए हैं तथा संप्रेषण में कितने सहज हो पाए हैं, के साथ ही इसमें प्रयुक्त भाषा की सीमा क्या है, इन बिंदुओं पर विचार किया गया है।

निष्कर्ष - वेब सीरीज में गालियों की अधिकता भले ही देखने को मिलती हो पर वह यथार्थ को छुपाती नहीं। उसे वास्तविक रूप में प्रकट करने का आग्रह रखती है साथ ही वह वंचित तबके के लोगों को आवाज देती है। भाषा की स्थानीयता, विविधता आदि उसकी अन्य विशेषताएं हैं, जिसे इस आलेख में दिखलाया गया है।

बीज शब्द - वेब सीरीज, स्थानीयता, संप्रेषण, मुखरता, विविधता

इधर मनोरंजन के नए माध्यम के रूप में वेब सीरीज तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। यह एक ऐसा माध्यम है जिसके लिए ना तो सिनेमा हॉल जाने की जरूरत है ना ही टीवी सेट की। यह आपके

मोबाइल पर ही उपलब्ध है वह भी बिना किसी विज्ञापन के। वेब सीरीज इंटरनेट पर जारी धारावाहिक या वीडियो एपिसोड की एक श्रृंखला होती है। सिर्फ इंटरनेट पर प्रसारण होने के कारण ही इसे वेब सीरीज कहा जाता है। एपिसोड तो टीवी सीरियल में भी होते हैं पर वह इनसे इस मायने में अलग है कि इसमें समय की कोई सीमा नहीं होती। बिना विज्ञापन के निर्बाध रूप से सभी एपिसोड एक साथ देखे जा सकते हैं ।जहां टीवी सीरियल में कई एपिसोड होते हैं वही वेब सीरीज के एक सीजन में 8 से 10 एपिसोड होते हैं।

नेटफ्लिक्स, अमेजॉन प्राइम, सोनीलिव, डिजनी हॉटस्टार, zee5 वे तमाम प्लेटफार्म है जहां दर्शक अपने मनचाहे वेब सीरीज देख सकते हैं। नए- नए विषयों और नई शैली के कारण वेब सीरीज ने दर्शकों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। आमतौर पर वेब सीरीज क्राईम थ्रिलर कंटेंट को ज्यादा प्रमुखता देते हैं पर बहुत से अन्य विषयों को भी इसने रोचक तरीके से प्रस्तुत किए हैं जिनमें फैमिली ड्रामा से लेकर देशभक्ति, कारपोरेट जगत, कॉमेडी, स्त्री,दलित, आदिवासी मुद्दे भी शामिल हैं। इन तमाम कंटेंट को नए उभरते एक्टर-एक्ट्रेस ने अपने दमदार अभिनय से जीवंत किया है। वहीं फिल्म जगत के पुराने सितारों ने भी इसमें हाथ आजमाया है। कंटेंट के नएपन के साथ वेब सीरीज की संवाद अदायगी व भाषा भी अपनी पहचान बना रही है। तमाम सारी वेब सीरीज ने अपनी भाषा शैली के कारण दर्शकों के बीच अपनी पैठ बनाई है चाहे वह 'खाकी' वेब सीरीज की भाषा हो या 'गुल्लक' की ।उनके संवाद और भाषा के अनूठेपन ने पात्रों को दर्शकों के बीच लोकप्रिय किया है। यथार्थ के बेहद निकट जाकर जिस जमीन से वह किरदार आते हैं, वही भाषा उसी लय में बोल कर उन्होंने संवाद अदायगी की एक नई शैली विकसित की है। बोलियों की विविधता, उनकी स्थानीय रंगत, उनका सधा हुआ उच्चारण जो किसी भी तरह के बनावटीपन से दूर है दर्शकों के बीच सहज संप्रेषणीय हो रहा है। बेशक इसमें आपके कान कुछ कर्कश शब्दों, गालियां वगैरह को भी सुनते हैं लेकिन है, वह आपके आसपास के जीवन की ही भाषा। एक ऐसी भाषा जिसमें अभिजन तो बोल ही रहे हैं हाशिए का तबका भी अपने को बिना हिचक अभिव्यक्त कर रहा है। स्थानीयता, विविधता, अस्मिता बोध, स्वाभाविकता, विकेंद्रीकरण वेब सीरीज की भाषा की पहचान बन चुकी है।

वेब सीरीज ने भाषा का विकेंद्रीकरण किया है ।जिस तरह इनके कंटेंट में कोई एक खास शहर केंद्र में नहीं वैसे ही यहां सिर्फ खड़ी बोली केंद्र में नहीं है। हिंदी की विविध बोलियों, उप भाषाओं के प्रयोग को यहां पर देखा जा सकता है। फिल्मों में बड़े शहरों को ही लोकेशन के तौर पर दिखाया जाता है। वैसे हाल के वर्षों में छोटे शहरों और कस्बों ने भी सिनेपट पर अपनी जगह बनाई है जैसे अलीगढ़ फिल्म या जिला गाजियाबाद। पर वेब सीरीज इनसे भी एक कदम आगे है। भारत के वे छोटे शहर- कस्बे जिनका नाम भी लोगों ने नहीं सुना होगा वह इनके केंद्र में हैं। 'आरण्यक' वेब सीरीज में हिमाचल प्रदेश का सिरोना शहर, 'जामताड़ा' वेब सीरीज, 'खाकी' में शेखपुरा आदि इसके उदाहरण हैं और जब छोटे शहर मौजूद हैं तो उनकी भाषा क्यों पीछे रहे वह भी अपनी पूरी ठसक के साथ मौजूद हैं। इन वेब सीरीज में अलग-अलग क्षेत्रों की बोलियां ही नहीं बल्कि ध्यान दें तो एक ही बोली के अलग-अलग लहजे भी यहां सुन सकते हैं -गोरखपुर की भोजपुरी अलग है तो पटना की अलग। छोटे शहरों, कस्बों के केंद्र में आने के साथ वहां की बोलियां और भाषाएं भी इन वेब सीरीज में आ गई। आप किसी सीरीज में राजस्थानी सुन सकते हैं तो कहीं

पर हिमाचल की बोलियां या फिर झारखंड की। भोजपुरी, अवधी तो है ही इनके अलावा हिंदी से इतर दूसरे राज्यों जैसे पूर्वोत्तर की भाषाएं भी सुनी जा सकती हैं। यहां बोलियों का प्रयोग सिर्फ शौकिया ही नहीं है या फिर एक दो संवादों में ही नहीं है बल्कि किसी चरित्र के पूरे व्यवहार में है ।जैसा चरित्र है वैसी भाषा बोली। स्थानीयता का पूरा ख्याल रखा गया है। बिहारी मजदूर हो या झारखंड का किसान वह अपनी स्थानिकता के साथ मौजूद है, अपनी संस्कृति- भूगोल को अपनी भाषा के माध्यम से व्यक्त करता हुआ और ऐसा करते हुए इन पात्रों में किसी शर्म या संकोच का भाव भी नहीं है। वह बहुत सहज ढंग से अपनी भाषा का बर्ताव करते हैं। उनके सामने कितना भी आभिजात्य व्यक्ति क्यों ना खड़ा हो भाषा को वो नहीं छोड़ते ।

हिंदी की भाषिक विविधता से हम प्रायः परिचित हैं पर जब सिनेमा या टीवी सीरियल की भाषा की बात आती है तो वहां खड़ी बोली का ही प्रभुत्व दिखता है। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में टीवी सीरियल में कुछ पात्रों को भोजपुरी, हरियाणवी आदि का प्रयोग करते हुए दिखाया गया है पर वह इतना आरोपित होता है कि अपने चरित्र के साथ न्याय नहीं कर पाता। पर वेब सीरीज के साथ ऐसा नहीं है। उसके पात्र स्वाभाविकता का निर्वाह करते हैं। भाषा की विविधता के माध्यम से जहां यह पात्र हिंदी की समृद्धि और उसके विस्तार का परिचय देते हैं वही उसके विकेंद्रीकरण के द्वारा हिंदी के तमाम रूपों, शैलियों का भी। वह किसी एक के वर्चस्व को चुनौती भी देते हैं। बिहार के लोग मैं की जगह हम का प्रयोग करते हैं तो इस विशेषता को बिहार आधारित वेब सीरीज में दिखाया भी गया जहां पात्र 'मैं' की जगह 'हम' बोलते हैं जैसे कि 'खाकी' वेब सीरीज में।

स्वभाविकता का आग्रह एक अन्य संदर्भ में भी देखा जा सकता है हिंदी से इतर भाषाओं के संदर्भ में। पुरानी फिल्मों में जब किसी दक्षिण भारतीय या बंगाली पात्र को बोलते हुए दिखाया जाता था तो उसे एक खास टोन और भंगिमा के माध्यम से। वह एक रूढ़ि सा बन गया। जैसे किसी तमिल का यह बोलना – "आइयो हम रंगास्वामी बोलता जी।" गैर हिंदी भाषी का लिंग में अंतर ना पैदा कर पाना अथवा क्रिया पदों आदि को ना समझ पाना यह उनकी विशेषता बना दिया गया और प्रायः हास्यास्पद भी। लेकिन वेब सीरीज इन रूढ़ियों से काफी हद तक मुक्त है। अब किसी सीरीज में यदि कोई गैर हिंदी भाषी पात्र जैसे तमिल,तेलुगू, बंगाली का है तो वह जबरदस्ती हिंदी का प्रयोग करता नहीं दिखाई देता। वह जितना हिंदी समझता है उतना ही बोलता है अन्यथा अपनी ही भाषा में स्वाभाविक ढंग से बिना किसी नाटकीयता के। यानी वह यथार्थ के निकट जाने की कोशिश करता है।

भाषा के संप्रेषण को आसान बनाने का काम किया है सबटाइटल्स की सुविधा ने। वेब माध्यमों पर जितने भी सीरीज उपलब्ध है चाहे वह नेटफ्लिक्स हो या अमेजन प्राइम, वह सभी सबटाइटल्स की सुविधा के साथ आते हैं। यह सबटाइटल्स कई विकल्पों में भी होते हैं जैसे हिंदी के साथ अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु आदि में। इससे दर्शक जब किसी किरदार की भाषा को नहीं समझ पाता तो वह सबटाइटल के माध्यम से अर्थ ग्रहण कर लेता है । उदाहरण के तौर पर 'SHI' सीरीज के पात्रों का तेलुगू में बोलना और स्क्रीन पर सबटाइटल्स के तौर पर अंग्रेजी का विकल्प आना। इस तरह सबटाइटल्स संपर्क भाषा का काम करता है और संप्रेषण की बाधा को दूर करता है । इधर ऐसे कई वेब सीरीज आए हैं जिनके पात्र हिंदी के अलावा

कई अन्य बोलियो या भाषाओं का प्रयोग करते हैं पर सबटाइटल के कारण अर्थग्रहण की कोई दिक्कत नहीं होती। 'द लास्ट ऑवर' में पूर्वोत्तर की भाषा को सुना जा सकता है इस तरह यह भाषा की विविधता को प्रकट करते हैं।

वेब सीरीज अपनी गालियों और भदेसपन के लिए बहुत चर्चित हैं। गालियों का खुला प्रयोग वेब सीरीज की पहचान बन चुका है। जब अश्लील दृश्यों, घटनाओं पर कोई सेंसर नहीं है तो फिर भाषा भी यहां खुली छूट प्राप्त कर लेती है। यहाँ शिष्ट –अशिष्ट भाषा जैसा कोई भेद नहीं, जिसके जो जी में आए बेहिचक बोलता है।जैसा वह आम जिंदगी में प्रयोग करता है। अभिजन उसे पर्दे पर देख रहे हैं इसकी कोई परवाह नहीं।सिनेमा सामूहिक कला की विधा है जिसमें समूह के तौर पर दर्शक भी शामिल हैं।कोई फिल्म किसी एक दर्शक को ध्यान में रखकर नहीं बनाई जाती उसे एक साथ बैठकर कई लोग देखते हैं। यही बात टीवी सीरियल के साथ भी है जहां पूरा परिवार साथ बैठकर देखता है। पर वेब सीरीज के साथ ऐसा नहीं है वेब सीरीज थिएटर के लिए नहीं बनती वह इंटरनेट के द्वारा अपने लैपटॉप और मोबाइल पर कभी भी अकेले देखी जा सकती है। किसी अन्य का वहां कोई हस्तक्षेप नहीं। वह दर्शक को एक स्पेस देती है आप कुछ भी सुन सकते हैं, कुछ भी देख सकते हैं। जाहिर सी बात है जब हम अकेले देख सुन रहे हैं तो ऐसी वेब सीरीज का निर्माण करते वक्त नैतिकता का दबाव भी नहीं होता। कहीं ना कहीं उसके निर्माण में यह बात दृष्टिगत है कि इसकी जो भाषा है वह समूह के लिए नहीं। समूह में आयु वर्ग की भिन्नता हो सकती है पर जब समूह का दबाव है ही नहीं तो भाषा की अभिव्यक्ति भी उसके दबाव से मुक्त है, अर्थात नैतिकता के आग्रह से मुक्त। शायद यही वह बिंदु है जहां वेब सीरीज की भाषा यथार्थ को जस का तस प्रकट करने में खुद को सहज पाती है।

कुछ वेब सीरीज जैसे 'मिर्जापुर', 'जामताड़ा', 'द फैमिली मैन','SHE' आदि में उनकी भाषा इतनी मुखर है कि दर्शक श्रोता असहज महसूस करने लगता है। बावजूद गालियों का प्रयोग वेब सीरीज के पात्रों के स्वभाव में ढल चुका है। क्या सीरीज की सफलता के लिए गालियों का प्रयोग जरूरी है? इस प्रश्न की छानबीन करते हुए यह बात उभर कर आती है कि जब यह सीरीज यथार्थ को जस का तस प्रस्तुत करने में कोई हिचक नहीं दिखाते तो भाषा को कैसे छोड़ देंगे। कितना भी वीभत्स, अरुचिकर दृश्य हो कैमरा उन्हें फोकस करता है। कुछ दृश्य तो बाकायदा जूम करके दिखाए जाते हैं जैसे किसी के चेहरे पर बहते खून आदि को। वही हाल भाषा का भी है रोजमर्रा की जो भाषा है या जो बदलाव भाषा में आए हैं, वह बिना किसी कांट-छाँट के यहां प्रस्तुत है। दरअसल यह आवरणहीन भाषा का दौर है। भाषा की काया पर प्रतीकों, संकेतों के आभरण नहीं हैं। जो जैसा है वैसा ही। आवेश, उन्माद, घृणा, स्वप्न सब की भाषा बोली यहां मौजूद है। एक ऐसा यथार्थ जहां शिष्ट- अशिष्ट साथ चलते हैं। 'दिल्ली क्राइम' वेब सीरीज में पुलिस की एक उच्च्च अधिकारी जो बहुत संवेदनशील और गंभीर अफसर के तौर पर दिखाई गई है आवेश के क्षण में बेहिचक गाली का प्रयोग करती है। यथार्थ के निकट होने का आग्रह पात्रों की भाषा में भी दिखाई देता है। अधिकांश वेब सीरीज क्राइम थ्रिलर के कंटेंट को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। जिनके पात्र भी आपराधिक प्रवृत्ति के या अशिष्ट होते हैं। जिस वर्ग का वे प्रतिनिधित्व करते हैं, वैसी ही भाषा भी उनके

व्यवहार में झलकती है। वेब सीरीज के संवाद उनको वैसे ही परोस भी देते हैं। कुछ सीरीज में जहां गालियों को ग्लैमराइज करके या उनकी भरमार पैदा करके दिखाया गया है बेशक खटकते हैं, लेकिन जहां वह स्वाभाविक ढंग से आए हैं, जैसे हताशा के क्षणों में साला, कमीना आदि कहना, वहां हम उसे इग्नोर कर देते हैं। कोई पात्र जिस परिवेश में रहता है वह वैसी ही भाषा का प्रयोग करता है। यह आम धारणा बना ली जाती है कि जो अशिक्षित, पिछड़ा है वही गाली का प्रयोग करता है। जबकि वेब सीरीज में यह दिखाया गया है कि शिक्षित व्यक्ति भी गालियों का प्रयोग करते हैं भले ही वह अंग्रेजी में क्यों ना हो। इस तरह वह यथार्थ के अधिक निकट है।

वेब सीरीज में मुखरता बहुत है ।यहां कोई चुप नहीं है, सब बोलते हैं शायद यह बदलते भारत की तस्वीर है। स्त्री हो या बच्चे सभी बोलते हैं, बिंदास बोलते हैं। पुरानी फिल्मों में स्त्री हीरो की प्रेमिका तक ही सीमित दिखाई देती है और उसका बोलना भी नपा तुला, हीरो की दुनिया के इर्द-गिर्द सिमटा हुआ। वेब सीरीज में स्त्री की भूमिका बदली है। वह डॉक्टर है, स्टूडेंट है, पुलिस अधिकारी है, बिजनेसमैन है, सपनों को तलाशती स्त्री है। घर से बाहर कदम रखने के साथ उसकी भाषा का भी दायरा बढ़ता है। यहां चुप्पियाँ बोलने लगती हैं, वर्षों का मौन टूटता है। वह राजनेता के तौर पर बोलती है, पुलिस अधिकारी के तौर पर बोलती है। वह वर्जित शब्दों को चखती है उन्हें उगल भी देती है। अपनी दमित इच्छाओं को वह जाहिर कर देती है। 'शी' वेब सीरीज में एक पुलिस इंस्पेक्टर के रूप में भूमि नामक पात्र का बिंदास बोलना इसका एक उदाहरण है। एक प्रसंग में वह अपने पति को लताड़ते हुए मन की गांठों को भाषा के माध्यम से खोल देती है। सिर्फ स्त्री ही नहीं किशोर, बच्चे हाशिये के अन्य चरित्र भी यहां बोलते हैं। वर्जित क्षेत्रों को लांघ कर बोलते हैं। 'द फेम गेम' में एक किशोर अपने समलैंगिक होने को अपनी मां के सामने कह देता है। 'द फैमिली मैन' में एक किशोरी पिता से पीरियड, सेनेटरी नैपकिन की बात करती है। इसी सीरीज में बच्चा पिता के सामने गाली देता है वह कुछ नहीं कहता। सामाजिक बदलावों को वेब सीरीज की भाषा बखूबी प्रकट कर रही है।

वेब सीरीज में सिर्फ गालियों या अभद्र भाषा का ही प्रयोग नहीं है जैसा कि एक आम धारणा बना ली गई है। वह भाषा का एक साफ सुथरा रूप भी सामने रखती है। पारिवारिक मुद्दों पर बने वेब सीरीज में भाषा की इस तरलता को देखा जा सकता है। 'होम शांति', 'गुल्लक' जैसी वेब सीरीज की भाषा मुग्ध करती है। कुछ दमदार संवादों के माध्यम से स्त्री की सशक्त छवि को भी प्रस्तुत किया जा रहा है।

वेब सीरीज में गाने ना के बराबर होते हैं तो इसमें सारा दारोमदार संवादों पर टिका होता है। यहां संवादों का चुस्त होना भी जरूरी है क्योंकि एक एपिसोड 40- 45 मिनट का होता है तो उनमें कसावट लाने के लिए संवाद का प्रभावी होना जरूरी है। फिल्म की कहानी 3 अंकों में विभाजित होती है इसलिए उनमें एक कसावट होती है। उसमें एक्शन दृश्यों के साथ संवाद दृश्यों का भी बराबर महत्व होता है। लेकिन वेब सीरीज में एक ही कहानी कई एपिसोड में चलती है ऐसे में वहां संवाद दृश्यों का महत्व बढ़ जाता है। मनोहर श्याम जोशी ने टीवी सीरियल के विषय में लिखा है, "संवाद प्रधान दृश्यों में आपको छोटे और पैने संवाद रखने चाहिए। कोशिश यह होनी चाहिए कि संवादों से या तो चरित्र चित्रण हो या ऐसी कोई सूचना मिले

जिससे कहानी आगे बढ़े या दर्शकों के मन में पात्रों के प्रति किसी विशिष्ट भावना का उद्रेक हो या जबरदस्त ड्रामा पैदा हो ।याद रखें कि ड्रामा तभी पैदा होता है कि जब पात्र आपस में टकरा रहे हों।"1 टीवी सीरियल में संवाद प्रधान दृश्यों की भरमार रहती है। संवाद प्रधान दृश्य वेब सीरीज की भी विशेषता है । वेब सीरीज में भी विपरीत स्वभाव के पात्र आपस में टकराते हैं। उनके बीच में तमाम उलझने होती हैं जो खिंचती ही चली जाती है ऐसे में संवाद की गुंजाइश भी काफी बढ़ जाती है। विभिन्न पात्रों के व्यक्तित्व और उनके आपसी टकराव को वेब सीरीज की भाषा ने बहुत कुशलता से गढ़ा है। मिर्जापुर, महारानी, पंचायत वेब सीरीज के पात्रों के स्वभाव चाहे किसी का चुलबुलापन हो, क्रूरता या उसका सनकीपन, यह सारी भंगिमा उनकी भाषा में झलकती है। मिर्जापुर वेब सीरीज में कालीन भैया और गुड्डू पंडित के आपसी टकराव को संवादों के जरिए खूब प्रकट किया गया है ।

'खाकी' में चंदन का वहशीपन हो या फिर 'मिर्जापुर' में कालीन भैया की दबंगई, यह उनकी भाषा खूब अच्छे से प्रकट करती है। स्थिति और पात्रानुकूल भाषा के विषय में प्रसिद्ध पटकथा लेखिका मन्नू भंडारी ने भी लिखा है । उनके शब्दों में, " संवाद स्थिति और पात्रों के अनुकूल तो हों ही, सटीक और संक्षिप्त भी हो तो अच्छा है।"2 इस कसौटी पर वेब सीरीज की भाषा खरी उतरती है। कब किस समय भाषा का तेवर शालीनता को ओढ़ेगा, कब उसमें भदेसपन आ जाएगा, यह उतार-चढ़ाव वेब सीरीज की भाषा में खूब झलकता है। एक ही किरदार की भाषा के विभिन्न तेवर को यहां लक्षित किया जा सकता है । अलग-अलग स्थितियों की रंगत को भाषा ने बहुत अच्छे से व्यंजित किया है। उनमें पर्याप्त विविधता झलकती है। ' द फेम गेम' में माधुरी दीक्षित की भाषा एक सेलिब्रिटी के तौर पर कुछ और है वहीं परिवार में मां के तौर पर कुछ और ।कह सकते हैं कि वेब सीरीज की भाषा एकरसता से मुक्त हैं।

प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक सत्यजीत रे कहते हैं, "मनुष्यों में वर्गगत अंतर के साथ-साथ भाषा में भी अंतर आ जाता है।"3 यह बात वेब सीरीज के पात्रों की भाषा में भी देखी जा सकती है। आरण्यक और खाकी वेब सीरीज दोनों में ही पुलिस के किरदार दिखाए गए हैं। इनमें सबके बोलने की टोन अलग-अलग है जहां भ्रष्ट पुलिसकर्मी की भाषा में भदेसपन, कुटिलता दिखाई देती है वहीं ईमानदार पुलिसकर्मी की भाषा में संयम और शालीनता दिखाई गई है। खाकी में आईपीएस अफसर अमित लोढ़ा और दूसरे पुलिसकर्मियों की भाषा में काफी अंतर है। इस तरह वेब सीरीज ने अपनी भाषा के जरिए यथार्थ को पकड़ने की कोशिश की है। सिर्फ वर्गगत अंतर ही नहीं एक चरित्र के व्यक्तित्व को भी भाषा बखूबी प्रकट करती है। सत्यजीत रे इस बारे में लिखते हैं, " पटकथा लिखने की आदर्श स्थिति शायद यह है कि पटकथा लेखक अपनी सत्ता का पूर्ण विलय कर के चरित्रों के अंतर में प्रवेश कर उन चरित्रों की सत्ता को संवादों के द्वारा प्रकट कर दे।"4 फिल्म के संबंध में कही गई यह बात वेब सीरीज के लिए भी कहीं जा सकती है। तमाम सारी वेब सीरीज के पात्रों ने अपने व्यक्तित्व को जहां अभिनय के साथ जीवंत किया है वहीं उसी के अनुरूप भाषा का तेवर रख कर उसे और प्रभावशाली बनाया है। आरण्यक में राजनीतिक कुटिलता का प्रसंग हो या मिर्जापुर के पात्रों की आपराधिक मनोवृत्ति यह उनकी भाषा बेहतर तरीके से प्रकट करती है। 'शी' में भूमि नामक पुलिसकर्मी का अंडरकवर ऑपरेशन करने के लिए जो किरदार गढ़ा गया है, उसे वह अपनी संवाद अदायगी से खूब

प्रकट करती है। एक सेक्स वर्कर के तौर पर उसकी जो भाषा है बोलने की टोन है, वह कहीं से भी आरोपित नहीं लगती। इस तरह के चरित्र और भी बहुत सारी वेब सीरीज में देखने को मिलते हैं जिसके पात्रों ने भाषा के जरिए अपने किरदार को जिया है ।

जिस तरह कुछ फिल्में अपनी संवाद अदायगी के कारण दर्शकों के बीच बहुत लोकप्रिय रही हैं, वैसी ही लोकप्रियता वेब सीरीज के संवादों ने भी हासिल की है। ' पंचायत' वेब सीरीज का यह संवाद –"देख रहा है विनोद कैसे अंग्रेजी बोल कर बात को घुमाया जा रहा है", इस कदर चर्चित हुआ कि उस पर मीम्स बनने लगे । इसी तरह 'मिर्जापुर' वेब सीरीज का यह संवाद- " स्वीटी तुम्हें हम अपनी जान से ज्यादा लव किए थे" दर्शकों में लोकप्रिय हुए हैं। सिर्फ लोकप्रिय ही नहीं दमदार संवादों ने भी अपनी जगह बनाई है जो दर्शक को झकझोरती है। जैसे "हमारे हाथ का पानी भी ना पीते यह लोग आगे कैसे बढ़ने देंगे" या फिर 'खाकी' वेब सीरीज का यह संवाद- "ईमानदार ऑफिसर सभी को अच्छे लगते हैं पर अपनी सरकार में नहीं।"

संवाद प्रयोग में तमाम छोटी-छोटी बारीकियों का भी ध्यान रखा गया है जिससे भाषा सहज लगे। बिहार में लोग मैं की जगह हम बोलते हैं तो उन पर आधारित सीरीज के संवादों में 'मैं' की जगह 'हम' का प्रयोग करते हुए पात्रों को देखा जा सकता है। 'खाकी' वेब सीरीज का एक पात्र नई पोस्टिंग हुए पुलिस अधिकारी से कहता भी है, "जिस दिन मैं छोड़कर हम पर आ जाइएगा 50% बिहारी उसी दिन हो जाइएगा ।" इसी सीरीज में किसी के नाम के साथ 'वा' जोड़ने की प्रवृत्ति को भी इंगित किया गया है, जैसे चंदन को चंदनवा कहना यह प्रवृत्ति भोजपुरी भाषा में देखी जा सकती है। इस तरह के सम्बोधन पात्रों की सामाजिक स्थिति को भी प्रकट करते हैं । इनके प्रयोगों में भाषा की स्थानीयता का पूरा ध्यान रखा गया है।

वेब सीरीज की भाषा में अन्य भाषाओं के प्रयोग को भी खूब देखा जा सकता है जैसे कि स्थानीय बोलियों का प्रयोग। उसी तरह हिंदीतर भाषा का भी, विशेष तौर से अंग्रेजी का। कुछ वेब सीरीज में जहां धड़ल्ले से अंग्रेजी संवादों का प्रयोग हुआ है वहीं किसी सीरीज के संवाद में हिंदी के साथ अंग्रेजी के शब्दों को भी मिला दिया गया है, जैसे 'स्कैम 1992' सीरीज का यह संवाद –"रिस्क है तो इश्क है" इस तरह के संवाद और भी बहुत सारी सीरीज में देखी जा सकती हैं। भाषा की यह विविधता बदलती सामाजिक संरचना को भी प्रकट करती है। वैश्वीकरण, सूचना क्रांति के कारण लोग एक दूसरे की भाषाओं, शब्दों को जानने समझने लगे हैं जिसका प्रभाव वेब सीरीज की भाषा में दिखाई देता है।

संदर्भ-

1. पटकथा लेखन,मनोहर श्याम जोशी, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, सं-2014,पृ-119
2. कथा पटकथा,मन्नू भंडारी,वाणी प्रकाशन,दिल्ली,सं-2013,पृ -15
3. विषय :चलचित्र,सत्यजित रे,रेमाधव पब्लिकेशन्स,नोएडा,सं-2007,पृ -90
4. विषय :चलचित्र,सत्यजित रे,रेमाधव पब्लिकेशन्स,नोएडा,सं-2007,पृ -91

❑❑❑

1. असिस्टेंट प्रोफेसर, श्यामलाल कॉलेज,दिल्ली विवि ई मेल –sandeepjaiswal2007@gmail.com मोबाइल न –9899920027 पता -507,पाकेट डी,दिलशाद गार्डन,दिल्ली 110095

सामी के काव्य में वेदांत

–रमेश एस. लाल
–प्रो. हासो दादलाणी

सामी जी स्वांत: सुखाय काव्य-रचना करते थे। लगभग चालीस वर्ष की उम्र में भाई चैनराय सामी ने सलोक (संस्कृम शब्द 'श्लोक' क तद्भव लिखना आरंभ किया)। वे गुरुमुखी में श्लोक लिखते और एक घड़े में डालते जाते। शिकारपुर सिंध में रहकर उन्होंने 2100 श्लोकों की रचना की। अमृतसर में रचित श्लोकों की संख्या 1900 के आस-पास है।

सामी के काव्य में वेदांत

सिंध की पवित्र भूमि जहां वैदिक संस्कृति फली-फूली और जहां वेदों की रचना हुई, जहां अनेक संतों महात्माओं ने वेदांत और आध्यात्मिक ज्ञान का उपदेश दिया, वहां अवश्यमेव श्रेष्ठ साहित्य का सृजन हुआ, यह निश्चित है। किन्तु सिंधु प्रदेश की प्रतिकूल राजनैतिक परिस्थितियों एवं सिंधु नदी के सदैव बदलते प्रवाह के कारण सिंध का प्राचीन साहित्य उपलब्ध नहीं है। चैदहवीं सदी का केवल 'दोदो चनेसर' प्रथम वीर काव्य उपलब्ध है। तत्पश्चात् मामोई फकीरों के कुछ दोहे, काजी काजन के दोहे, सोरठे, शाह अब्दुलकरीम के दोहे-सोरठे उपलब्ध हैं। शाह अब्दुल लतीफ भिटाई जैसे विश्व विख्यात कवि, शाह इनायत, संत रोहल, सचल सरमस्त, चैनराइ सामी साहिब, दलपतराइ, बेकसि, बेदिल आदि कवियों ने सूफी, संत, एवं भक्ति काव्य का सृजन किया।

'वेदान्त' संस्कृत का शब्द है, इसका शाब्दिक अर्थ है वेदों का अंतिम भाग, जिसमें वेदों के मंत्रों में समाहित दार्शनिक विचारों को समझाया गया है इसलिये 'वेदान्त' शब्द का एक अन्य अर्थ है 'उपनिषदों का ज्ञान' उपनिषदों के दार्शनिक विचारों को समझाने के लिए जो सूत्र ग्रन्थ लिखे गये हैं, उनमें महर्षि बादरायण के रचित ग्रन्थ 'ब्रह्म सूत्र' या 'वेदान्त सूत्र' की विशेष ख्याति है। उसे 'उत्तर मीमांसा' भी कहते हैं, अथवा वेदांत का दूसरा नाम उत्तर मीमांसा भी है। पूर्व मीमांसा में कर्म काण्ड का वर्णन है और उत्तर मीमांसा उपनिषदों द्वारा आत्मवादी दर्शन समाहित है। उपनिषद वैदिक साहित्य का अंतिम अंग हैं। उपनिषदों में ही वेदों का अंत होता है। इसलिये वेदांत का अर्थ है उपनिषदों का ज्ञान। इस ग्रन्थ के सूत्रों को समझाने के लिए अलग-अलग आचार्यों न 'ब्रह्म सूत्र' पर टीकाएं लिखी हैं। इस प्रकार कालान्तर में वेदान्त के विभिन्न सम्प्रदायों का स्थापन हो गया। शंकराचार्य (788-820 ई.) का अद्वैत-वेदान्त, रामानुजाचार्य (1037-1137 ई.) का विशिष्टाद्वैतवाद, निम्बार्काचार्य (11वीं ई.

सदी) का द्वैत-अद्वैत-वाद, मध्वाचार्य (1199-1303 ई.) द्वैतवाद, वल्लभाचार्य (15-16वीं ई. सदी) का शुद्धाद्वैतवाद इस क्षेत्र में प्रमुख हैं, जिनके दार्शनिक विचारों का प्रभाव मध्यकालीन भक्ति साधना पर बहुत पड़ा है। इनमें भी शंकराचार्य के अद्वैतवाद का मध्यकालीन संतों और भक्तों के काव्य रचनाओं पर सबसे अधिक और व्यापक प्रभाव पड़ा है।

शंकराचार्य के अद्वैत वेदान्त का मूल मंत्र है-'ब्रह्म सत्यं, जगत्मिथ्या, जीवो ब्रह्मवै नापरः।' अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है, यह सारा जगत मिथ्या है अथवा माया का खेल है। जीवात्मा स्वयं ही ब्रह्म है, वह ब्रह्म से अलग नहीं है। जीवात्मा अज्ञानवश स्वयं को ब्रह्म से अलग समझती है और इस संसार को सत्य समझती है। इसी अज्ञान, भ्रम और माया के जाल में फंसकर जीवात्मा इस संसार मे अनेक प्रकार के दुःखों कष्टों को भोगती है। परन्तु जब जीवात्मा को अपनी वास्तविकता का ज्ञान होता है कि 'अहं ब्रह्म अस्मि' अर्थात् मैं ब्रह्म हूं। और यह सारा जगत् केवल परमात्मा की लीला है, जिसे वह प्रलय के समय फिर समेट लेता है, तब उसके अज्ञान का पर्दा हट जाता है। अज्ञान के नष्ट होने से और आत्मज्ञान की प्राप्ति से जीवात्मा आनन्दित हो उठती है। यह आनन्द ब्रह्म के साक्षात्कार की अनुभूति से प्राप्त होता है। इसे ब्रह्मनंद कहते हैं। इसकी अनुभूति ही मोक्ष अथवा मुक्ति है। आत्मज्ञान की प्राप्ति के बिना मुनष्य का ममत्व मोह ओर अज्ञान नष्ट नहीं होता। परन्तु ज्ञान के साथ-साथ प्रेम और भक्ति भावना को होना भी आवश्यक हैः-

बिना आत्म ज्ञान, ममत्व मिटे न मन का,
चाहे सब साधन कर, पढ़ तू वेद पुरान,
गीता में भगवान, ने अर्जुन से यों कहा।

गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन से यह कहा है कि चाहे तुम सभी वेद-पुराण पढ़ो या अन्य साधन करो, परन्तु आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के सिवाय ममत्व का विनाश नहीं होता।

सिंधी संत कवियों के महान वेदांती कवि चैनराइ बचोमल 'सामी' का जन्म अखण्ड भारत के सिंध प्रांत के शिकारपुर शहर में सन 1743 ई. में हुआ। 'सामी' साहब ने श्लोकों के माध्यम से वेदों की वाणी को सरल सिंधी भाषा में विस्तार पूर्वक समझाकर सिंधी भाषा साहित्य के ज्ञानकोष में वृद्धि की है। प्रो. जेठमल परसराम, कौडामल खिलनाणी ने सिंधी साहित्य मंडल द्वारा सामी के चयनित श्लोक प्रकाशित किये गए तत्पश्चात, इन श्लोकों के ग्रंथ, सिंधी के अलावा हिंदी, अंग्रेज़ी व अन्य भाषाओं में भी प्रकाशन किया गया। सामी जी ने अपने श्लोकों वेदांत के दार्शनिक विचार प्रस्तुत किए हैं और उन के सुंदर प्रस्तुतीकरण हेतु उपयुक्त अलंकारों का प्रयोग भी किया है। उन्होंने ब्रह्म, जीव, जग, माया और मुक्ति के बारे में जो दार्शनिक विचार व्यक्त किए हैं, उन का संक्षेप में वर्णन इस प्रकार हैः वेदांत वाक्य ''एको अहम बहु स्याम''-मैं एक हूं और अनेक रूप धारण कर जगत में व्याप्त हो रहा हूं। ब्रह्म भिन्न रूपो में विद्यमान है।

सामी जी स्वांतः सुखाय काव्य-रचना करते थे। लगभग चालीस वर्ष की उम्र में भाई चैनराय सामी ने सलोक (संस्कृम शब्द 'श्लोक' क तद्भव) लिखना आरंभ किया। वे गुरुमुखी में श्लोक लिखते और एक घड़े में डालते जाते। शिकारपुर सिंध में रहकर उन्होंने 2100 श्लोकों की रचना की। अमृतसर में रचित श्लोकों की

संख्या 1900 के आस-पास है। 'सामी' साहब के श्लोक आत्मिक दर्शन से ओत-प्रोत हैं। वे श्लोकों का अर्थ ऐसे सम्मोहक ढंग से समझाते हैं और इतने सुंदर उदाहरण देकर अपनी बात कहते है कोई भी उनकी बात से प्रभावित हो जाता है। उनके अनुसार, ''लोगों ने मानवीय सौंदर्य पर न्यौछावर होकर सैकड़ों बार अपने प्राण त्यागे हैं। पर जिस ईश्वर ने ऐसी इंसानी सुंदरता बनाई है, उसके सौंदर्य का हमें ध्यान ही नहीं रहता है। यदि परमात्मा की सुंदरता की ज़रा भी करें तो उसकी उपासना करना हम कभी नहीं भूल सकते!'' वेदांती कवि सामी साहब के श्लोक सिंधी निर्गुण भक्ति काव्य का बहुमूल्य कोष हैं। ये श्लोक अध्यात्मिक उन्नति हेतु मार्गदर्शन करते हैं। उनके एक श्लोक में कहा गया है कि:

छह, अठारहं, चारि गाल्हि चवनि था हिकिड़ी,

भगति करि भगवान जी, नाना भरम निवारि।

अर्थात् षठदर्शन, अठारह पुराण और चार वेद यही एक बात कहते हैं कि भगवान की भक्ति करो, अन्य नाना प्रकार के भ्रमों को त्याग दो। ताकि द्वैत को बुलाकर, नाना प्रकार के भ्रमों को दूर कर भक्ति के द्वारा ईश्वर से एक-रूप हो जाएं। 'प्रेम बिना प्रकासु, कंहिं खे थियो कीन की।' जिसका अर्थ यह है कि प्रेम के बिना किसी को भी आत्म प्रकाश नहीं मिला है।

मधुर-मधुर मुरली, कान वजाई मुख सां,

बुधी गोपी ग्वाल जी, सामी सुरति भुली।

अविद्या गंढि खुली, डिसी मुंहु, महबूब जो।

अर्थात् श्रीकृष्ण भगवान ने जब मधुर मुरली बजाई तब सभी गोपियां और ग्वाल अपनी सुधि-बुधि गंवा बैठे। उन्होंने जब अपने प्रियतम का मुख देखा, तब उनकी अविद्या रूपी गांठ खुल गई।

सामी जी के श्लोक निर्गुण भक्ति परम्परा के अंतर्गत आते हैं। उन्होने आत्म ज्ञान की महिमा के साथ-साथ भक्ति और योग को भी महत्व दिया है। परमात्मा के सगुण, साकार स्वरूप की उपासना पर भी उन्होंने बल दिया है। वे दार्शनिक सिद्धांत प्रस्तुतकर्ता आचार्य नहीं थे। इसलिये उनके श्लोकों में क्रमबद्ध किसी विशेष एक वेदांती सम्प्रदाय का सिद्धांत नहीं मिलता है। सभी भाषाओं के संत कवियों ने अपने आत्मिक अनुभव व्यक्त करने को महत्व दिया है। सामी जी ने साधना के मार्ग पर चलते हुए भिन्न-भिन्न ग्ंरथों और शास्त्रों का अध्ययन किया और कुछ साधु संतों और महात्माओं के सत्संग से ज्ञान प्राप्त किया है। उनकी वाणी में उसी का स्वाभाविक और सुंदर ढंग से वर्णन मिलता है। उन्होंने अपने श्लोकों में त्याग, वैराग्य, अहिंसा, वेदांत, कर्म योग, भक्ति और अन्य कई विषयों पर वीचार व्यक्त किए हैंः सामी जी कहते हैं कि मेरे सतगुरू ने मुझ पर कृपा करके ऐसा आत्मज्ञान दिया और वह दिव्य आत्मिक दृष्टि प्रदान की, जिसके द्वारा मैं उस आत्मिक संसार तक नज़र फैलाई, जिसकी हर दिशा में केवल ब्रहम ई ब्रहम दिखाई दिया।

सिंधी महाकवि सामी की कविता भारतीय जन-मानस का प्रतिनिधित्व करती है। उसमें संत-काव्य की सभी विशिष्टताएं विद्यमान हैं। संत-कवि पूजा-उपासना के बाहरी प्रदर्शन-पाखंड के विरोधी हैं। सामी

वेदांती कवि होते हुए भी, वे उस वेद-अध्ययन के खिलाफ़ हैं, जिसमें प्रेम और भक्ति को समुचित स्थान नहीं मिला है। वे कहते हैं-

नीहं बिना नादान, वेद पढ़ी वादी धिया,

बांभण कनि बियाई सां, तप-जप दान-सनान।

कबीर ने कहा-ढाई आखर प्रेम का पढ़े, सो पंडित होय। सामी भी पोथी के स्थान पर प्रेम को पंडित का लक्षण मानते हैं और कोरे जप-तप, दान-स्नान में उनकी आस्था नहीं है। भारतीय संत-काव्य में कर्मकांड का विरोध करना; काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को शत्रु समझकर उनका दमन करना; साधुओं-संतों को मित्र मानना; गुरु-महिमा का गान करना; एक ईश्वर को मानना, साथ में अद्वैत की भावना भी रखना आदि विषय वर्णित हैं। सामी के काव्य में भी ये सब उपलब्ध हैं।

''सत्गुरु'' का संधि विच्छेद हैः सत$गुरू, सत्गुरु अर्थात् सच्चा गुरू या कामिल मुर्शिद। गुरू शब्द दो पदों से बना है एक 'गु' दूसरा 'रू' 'गु' अर्थात 'अंधकार', 'रू' अर्थात् 'रोशनी'। इस प्रकार, गुरू अंधेरे से प्रकाश में लाने वाला या अज्ञान अथवा अविद्या का अंधकार दूर करके ज्ञान का प्रकाश देने वाला। अज्ञानी व्यक्ति को जब कोई सत्गुरू मिलता है तब वह उसके अज्ञान के पर्दे को हटाकर उसकी आंखें खोल देता है। सत्गुरु या सिद्ध पुरुष के मार्गदर्शन के बिना आत्मिक मार्ग पर चलना असंभव है। मनुष्य को इस संसार के भवसागर से पार उतारने के लिये, उसे आत्मिक मार्गदर्शक की आवश्यक्ता होती है।

'सतगुरु जहिड़ो शाह कीन डिठोसीं काथहीं,

परची जंहिं डिनो पूरबी, आत्म धन अथाह,

न की पुछियाईं जात पात, न की पुछियाईं राह,

करे मन अचाह, 'सामी' डिनाईं खिन में।'

हिन्दी अनुवाद

'सतगुरु जैसा शाह कहीं भी देखा नहीं,

जिसने दे दिया पूरबी, आत्म धन अथाह,

पूछी नहीं जात पात, और न पूछी राह,

कर दिया मन अचाह, 'सामी' उसने क्षण में।'

सामी जी ने कहा है कि ''वेदों की वाणी मैं सिंधी में सुनाता हूं।'' यहां वेदों का अर्थ है-वेदांत, यानी वेदों का दर्शन। 'उपनिषदों का ज्ञान' जैसे कि सामी जी ने किसी विशेष वेदांती संप्रदाय के विचारों का चयन नहीं किया है परन्तु उन्होंने अपने आत्म-अनुभव को व्यक्त करते हुए भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों और संतों, महात्माओं, भक्तों की वाणी से कई मोती लिये हैं। ब्रहम, जीव-आत्मा और सृष्टि का संबंध समझाते हुए उन्होंने शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत और दर्शन के प्रभाव को ग्रहण किया है तथा ज्ञान के साथ भक्ति, प्रेम

भावना और योग को भी विशेष महत्व दिया है।

सामी जी इस संसार को मृग तृष्णा के समान झूठ कहकर संबोधित करते हैं, जो कि भ्रम के अलावा कुछ नहीं होता है। जिस प्रकार हिरण कस्तूरी की तलाश में उसके पीछे निर-उद्देश्य दौड़ता ही रहता है, उसी प्रकार मनुष्य भी झूठी दुनिया के प्रलोभनों में भाग-दौड़ कर निराश होकर प्राण त्याग देता है। सिंधी के सुप्रसिद्ध कवि श्री लेखराज 'अज़ीज' ने अपनी 'सामी' नामक पुस्तक में इस विषय पर समझाते हुए लिखा है, ''जिस प्रकार गोधुलि की वेला में किसी राही को दूर से रस्सी को देखकर सांप का भ्रम होता है तो राही रस्सी वाली दिशा ही बदल देता है। भ्रम वाले समय में भी वह केवल रस्सी ही थी और सांप का कोई अस्तित्व ही नहीं था। परंतु राही भ्रम का शिकार हुआ। वास्तव में वही रस्सी हर काल में असली अस्तित्व रखती है जिसे सांप समझना केवल भ्रम है। इसी प्रकार, हर काल में आत्मा का ही वास्तविक अस्तित्व होता है। जिसे छोड़कर बाक़ी यह सम्पूर्ण जगत और अन्य भोग-विलास उसी भ्रम की भांति हैं, जो न कभी अलग थे और न ही बाद में रहेंगे। आत्मा ही अनादि और अविनाशी है। सत चित आनंद स्वरूप आत्मा, माया के कारण क्षणभंगुर जगत के पदार्थ के रूप में दिखाई देती है, जिसे 'अर्निवचनीय' या 'असत्य' कहते हैं। क्योंकि जो उसका अस्तित्व है वही वास्तव में आत्मा का है। फिर भी उसे सत्य इसलिये कहते हैं, वह जो अस्तित्व है वह वास्तव में आत्मा का है। जगत के अस्तित्व की आशा भी केवल आत्मा है, जिससे सृष्टि को प्रकाश मिलता है।'' सामी भारतीय संस्कृति के सुगंधमय पुष्प हैं। उन्होंने भारतीय संस्कृति के सुंदर विचार हृदय में रखकर काव्य रचना की है।

माया, ईश्वर द्वारा रचित जादू का खेल है, जिसने जीवात्मा को भ्रमित कर दिया है। माया ने सांसारिक लोगों में मोह-ममत्व उत्पन्न कर उन्हें अंधा बना दिया है। सभी मृग तृष्णा रूपी जल में बहते जा रहे हैं। ऐसे गुरूमुख पुरुष विरल है, जिन्होंने सतगुर की कृपा से मन के पांचों विकारों को अपने वश में कर लिया है, और माया रूपी मृग तृष्णा को पार कर गये हैं।

करती जनता अंधी, माया मोह ममत्व से,
मृग तृष्णा के जल में, जाये सदा बहती,
कृपा से बिरले ने, तट सीमा लाघी,
बांभन बांध रस्सी, पांचों को वश में किया।

माया वश होकर ही जीवात्मा में अविद्या या अज्ञान उन्पन्न होता है। अतः वह अपने मूल रूप को न पहचान कर, इस नाशवन्त संसार के अनेक बंधनों में स्वयं को फंसा देती हैः-

सामी कढी जनि, अविद्या मैल अंदर मूं,
से निरमल संसार में, सदा अलेप रहनि,
चींटी ऐं कुंजर में, सम रूपु डिसनि,
लिंव लिंव रसु पियनि, आतम पद अपार जी।

अर्थात् सामी जी कहते हैं कि जिन्होंने अपने मन में अविद्या रूपी मैल को निकाल कर बाहर फैंक दिया है, संसार में रहते हुए भी हमेशा निर्मल, निरलेप हैं। वे चींटी और कुंचर में समान रूप में उसी एक आत्म तत्व को देखते हैं। वे उसी आत्मा के साक्षात्कार के अनुभव का रस पीकर, एयर ब्रह्मनन्द में सदा लीन रहते हैं। यह संसार क्षणभंगुर है। अतः उस पर गर्व न कर, आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रयत्न कर।

कोहु करीं अभिमान, काया माया कुल जो,

स्थिर रह्ये कोन को, मीरु मलिक सुल्तानु,

समुझी डिस, सामी चए, अथी फ़ानी सभु जहानु,

पाए आतम ज्ञानु, कलपत कढु अंदर मूं।

सामी जी कहते हैं कि अपने शरीर, धन दौलत और कुल आदि का अभिमान क्यों करते हो। इस ससांर में राजा, महाराज कोई की अमर अटल नहीं रहे हैं। यह सारा संसार क्षणभंगुर है। अतः आत्म ज्ञान को प्राप्त कर, अविद्या को अपने मन से निकाल दो। गुरूमुख मनुष्य जीवन मुक्त बन जाता है। उसको संसार में कोई भी मोह नहीं रहताः-

सदाईं महमानु, गुरुमुख जाणे पाण खे,

डिठो जंहिं गुर-ग्याति सां, फ़ानी सभु जहानु,

काया, माया, कुल जो, रखे न अभिमानु,

पाए पदु निर्बाणु, सामी रहे सुभाअ में।

गुरुमुख अर्थात् आत्मज्ञानी मनुष्य इस संसार में स्वयं को अतिथि समझता है। गुरु से ज्ञान प्राप्त कर, वह इस संसार को क्षणभंगुर समझता है। उसे अपने शरीर धन दौलत और कुल को काई अभिमान नहीं। वह जीवन में ही निर्वाण-पद को प्राप्त कर, सम-अवस्था में रहता है। सामी जी ने कुछ श्लोकों में योग साधना के द्वारा चित्त-शुद्धि कर, आत्म ज्ञान की प्राप्ति का उल्लेख किया है। उदाहरणार्थः-

नयन-नासिका-नाभि, सोधियो जिनीं गुर-ग्याति सां,

सो सामी नाना भरम में, करे न जीउ खराबु,

पताईं परची करे, अनभइ आतम लाभु,

जम जो हर्फु हिसाबु, वरे वासिलु थी रह्यो।

अर्थात् जिसने गुरु से ज्ञान प्राप्त कर, नयन, नासिका और नाभि को साधित किया है, वह योगी नाना भ्रमों में फंसकर अपने मन को क्षुब्ध नहीं करता। वह योग साधना से आत्मज्ञान को प्राप्त करता है। इस तरह मानो मृत्यु पर विजय प्राप्त कर, जीवन मुक्त होकर, इस संसार में समावस्था में रहता है।

वेदांत का उद्देश्य है जीव तथा ब्रहम की एकरूपता। अर्थात् जीव तथा ब्रहम एक हैं, इसके द्वारा अज्ञान दूर किया जाता है और अज्ञान का अंत होने के पश्चात प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। अनेक शास्त्र साधना का

उद्देश्य सुखों की प्राप्ति नहीं अपितु दुखों से मुक्ति बताते हैं। वेदांत आशावादी दर्शनशास्त्र है, जो जीव को अखण्ड आत्म-आनंद प्राप्ति का आश्वासन देता है, इस आनंद की कल्पना करके जीव दुख को भुला बैठता है। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि सुख प्राप्त कैसे होगा? सुख आत्मा का स्वरूप है, जो न कहीं से आता है और न कहीं से प्राप्त किया जाता है। यह प्रत्येक स्थान पर उपलब्ध है, परंतु अज्ञानवश उसका आनंद नहीं ले सकते। अज्ञान क्या है? सूक्ष्म में स्थूल को न देखना, अज्ञान है। हम भूल से इस जगत को सत्य मान लेते हैं। यही दुख का कारण है। जिस प्रकार एक रस्सी और सांप में अंतर होता है, परंतु हम रस्सी को सांप समझ कर डर जाते हैं, उसी प्रकार ब्रहम संसार से निराला है, पर अज्ञानवश हम ब्रहम को संसार मान लेते हैं। स्वयं दुखों की तलाश करते हैं। अज्ञान का दामन छोड़ेंगे तो उसी दुख से सुख की प्राप्ति होगी सत्य केवल वही है जो भूत, वर्तमान और भविष्य में एक समान रहता है।

वेदांत का मुख्य उद्देश्य है,''मनुष्य का स्वयं को ढूँढ निकालना।'' स्वयं को पहचानना कि वह कौन था, अब कौन है और आगे चलकर क्या होगा? वेदांत सत्य की खोज हेतु अग्रसर करता है। वेदांत स्वच्छ दर्पण की भांति इस प्रकार पारदर्शी है, जिसमें व्यक्ति स्वयं से मिलन का आनंद ले सकता है, अपने अंदर झांक कर सत्य का दर्शन कर सकता है। वेदांत आत्मिक मार्ग प्रशस्त करता है। सामी जी भी वेदांत का रहस्य और मित्र का दर्शन करने के लिये अंर्तमन में झांकने का मार्ग बताते हुए कहते हैं कि-

सभ जे अंदर आहि, प्रेम पदारथ राम धन,

सामी डिसे कीन की, मुंहुं मढ़ीअ पाए,

सतगुरु लखाए, त डिसे पदु अखियुनि सां।

अर्थात प्रत्येक जीव के अंदर प्रेम पदार्थ रूपी राम धन व्याप्त है, सामी जी कहते हैं कि जीव अपने मन के अंदर झांक कर नहीं देखता है, यदि सतगुरू की कृपा उस जीव पर हो जाए तो वह उस उच्च पद पर विराजमान राम जी के दर्शन अपने नेत्रों द्वारा कर सकता है। आत्मिक सूझबूझ ही वेदांत है। अक्ल की उलझन से वेदांत की प्राप्ति नहीं हो सकती है। वेदांती, संसार के बाहरी दिखावे और आडम्बरों पर आर्कषित रहने का परामर्श नहीं देते हैं। यह संसार की माया, ममता, मोह, मृग-तृष्णा के जल और रेगिस्तान में जल के आभास की भांति है। वेदांत कहता है कि, ''प्रीतम तेरे अंदर में बसता है, जिस प्रकार कस्तूरी मृग की नाभि में होती है, पर वह उसकी सुगंध को बाहर तलाशता है। उसी प्रकार, दुनिया का बाहरी सब पसारा भी ब्रहम का प्रतिबिम्ब है।'' अनेक रूपों में ब्रहम इस प्रकार समाया हुआ है जैसे ध्वनि और उसकी प्रतिध्वनि। ध्वनि और प्रतिध्वनि सुनने में तो दो आते हैं परंतु उनकी आवाज़ में कोई अंतर नहीं होता है। क्योकिं जो भी हम आवाज़ करेंगे, उसकी प्रतिध्वनि भी वही सुनाई देगी। दोनों में अंतर केवल यह है कि प्रति ध्वनि, ध्वनि के बाद सुनाई देती है। अनेकता और एकता वेदांत का ही सिद्वांत है।

वेदांत के अनुसार ब्रहम का दर्शन सारी सृष्टि के कण-कण में होता है। हर स्थान पर सृष्टि रचयिता का निवास है। जिस प्रकार घड़े में आकाश का रूप दिखाई देता है। उसी स्थान पर घड़े चाहे कितने भी हों, सभी में आकाश का आभास समान होता है। परंतु आकाश वास्तव में एक ही है। अस्थित है, मिट्टी वही

है, चाहे मिट्टी के घड़े या रूप कितने भी हों, पर एक ही मिट्टी के रूप ही हैं। स्वर्ण के आभूषण चाहे अनेक हों पर उनका असली रूप तो सोना ही है।

सामी जी कहते हैं कि मनुष्य के पाँच परम शत्रू: काम, क्रोध, लोभ, मोह अंहकार हैं, जो सदैव उस पर हावी रहते हैं। इन्हीं शत्रूओं को शांत करने हेतु स्मृतियां, अंजील आदि सब प्रकाशित हुए। इन शत्रूओं को परास्त करने के लिये व्यास और वाल्मिकी, महात्मा बुद्व एवं ज़रदश्त, मूसा और ईसा, कन्फ्यूशस आदि पैगम्बर और कवियों ने जन्म लिया। परंतु ये दुश्मन आज तक हम पर हावी हैं, ये न केवल हमारे हृदय में पाल्थी मार कर बैठे हैं, पर हमारे सज्जनों और देवताओं की शिकायतें लेकर, सारी सेवा और उपासना अपनी ओर खींच लेते हैं। इन प्रेतों को दूर भगाने हेतु कितने मंत्र बने हैं, परंतु इन दुश्मनों से हमारी ऐसी प्रीत हो गई है, कि मंत्र साधने की बिल्कुल इच्छा नहीं होती। मानुष देह का अर्थ अब इन दुश्मनों की गुलामी नहीं है और जैसा सामी साहब कहते हैं-''काल को काट कर अकाल होना है।'' वे भक्तिकाल की अंतिम प्रामाणिक आवाज़ थे। उन्होंने अपने एक श्लोक में लिखा है-

वेद, पुरान, क़ुरान सभिनी में हिकु सूत,

समुझी डिसु सामी चए, लाए मनु मज़बूत,

जिअं आकास घटनि में, सभ में साखी भूत,

को आतम-रत अवधूत, समुझे हिन सुख़न खे।

अर्थात्-वेद, पुराण और क़ुरान में एक ही सूत्र है। सामी कहते हैं, अपना मन मज़बूत कर इस बात को समझो। जैसे विभिन्न घटों (शरीरों) में एक आकाश (प्राण) है, वैसे सब में वह एक है। इस बात को कोई आत्मलीन अवधूत ही समझ पाएगा।

इस रोग की दवा, सामी जी के अनुसार साधु-संगति में है। और साधु-संगति का अर्थ है, उनकी संगति नहीं, जो स्वयं को साधू कहलाते हैं या पैसे मांगते हैं, परतुं ऐसे संत जिनका सत कर्म, सील-संतोष, निरवेर, सेवा, दया और धर्म है। साधू वे हैं जो हर हाल में प्रसन्न रहते हैं, जो जगत को ज्योति समझते हैं, काया-माया के मोह में नहीं फँसते हैं। साधू वे हैं, जिनके मन में राम सदा बसते हैं। साधू वे हैं जिन के लिये सुख-दुख एक समान है। और जो ईश्वर के स्वरूप के प्रति इस प्रकार सम्मोहित रहते हैं जिस प्रकार चकोरी चन्द्रमा और पतंगा प्रकाश की ओर सम्मोहित रहते हैं। तात्पर्य यह है कि साधू वह है जिनका धन, आत्म धन और जिनका ज्ञान आत्म ज्ञान है। इस बात से कोई इंकार नही कर सकता है कि वही धन उत्तम है और वही ज्ञान उत्तम है।

सामी जी अपने दर्शन, भाषा, भाव शैली, काव्य गुणों- अलंकारों, छंदों, रूपकों और उपमाओं की दृष्टि से मध्यकालीन सिंधी संत कवियों से भिन्न प्रतीत होते हैं, ठीक उसी समय वे भारतीय भक्तिकालीन कवियों, संतों तथा दार्शनिकों से उतने ही समीप दिखाई देते हैं। वे भारतीय संत कवियों को अपना आदर्श मानते थे। वे उन्हें आदर्श की दृष्टि से देखते थे। उनका कविता कहने का ढंग भी भारतीय संत कवियों जैसा ही है।

भारत-उपमहाद्वीप के मध्यकाल के अंतिम महाकवि सामी संपूर्ण धर्मदृष्टि के कवि थो और अन्यान्य संत-सूफ़ी कवियों की तरह समन्वयवादी थे। संसार के अन्य देशों में लोग मध्यकाल को भले ही अंधकार-काल की संज्ञा दें, परंतु भारत में वह काल एक ऐसा प्रकाशमय काल था, जिसमें हम भारतवासियों ने धरती की सतह पर सही तरीक़े से जीने के समन्वयवादी सिद्धांत का निर्माण किया था। हमने निर्माण ही नहीं किया था, अपितु इस सिद्धांत को अपनाया भी था।

सामी साहिब के श्लोकों में मोह-ममता को नष्ट करने पर अधिक बल दिया गया है। पर मोह-ममता कैसे नष्ट होगी यदि हम स्वं को कोई बड़ी हस्ती मान लेंगे। और जो कुछ हमारे पास है धन-दौलत, सम्पति, बुद्धि, शिक्षा, कला आदि को अपना मान लेंगे न कि ईश्वर का। हमें अपना तन, मन और धन हथेली पर रखकर ईश्वर की सेवा में त्याग करना चाहिए। यह सच्ची विद्या है, जिसकी सामी जी ने प्रशंसा की है। इस विद्या के अनुसार दूसरों की भलाई में अपनी भलाई है, दूसरों की सेवा में अपनी सेवा है और ईश्वर की भक्ति राजाओं के राज से बढ़कर है। यही शिक्षाएं हैं, जो वेदांत हमें प्रदान करता है। यही शिक्षाएं सामी जी के श्लोकों में विद्यमान हैं, जिन्हें ग्रहण कर हम अपना जीवन सार्थक कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

हिंदी पुस्तकें:

1. 'सामी के श्लोक', भाग-1-3, अनुवादक खीमन यू. मूलाणी, 2013
2. 'कबीर ग्रंथावली, संपादक-श्री श्याम सुंदरदास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1928
3. कबीर साखी सार-तारकनाथ बाली, 1956
4. वैदांत और अद्वैतवाद, स्वामी गणेशदास उदासीन, मुम्बई, 2015
5. सिंधी भाषा, लिपि और साहित्य, डा. मोतीलाल जोतवाणी, प्रकाशक-सिंधी अकादमी, दिल्ली, तृतीय सं_स्करण-2007

सिंधी पुस्तकें:

1. सामी, हिकु वेदांती शाइर - डा. वंदना अशोक रामवाणी, 2010
2. सामीअ वेद सुणाया... -लछमण परसराम हर्दवाणी, 2010
3. 'सामी'' (छापो पहिरियों) लेखराज अज़ीज, मुम्बई, 1965
4. ''सामी'' (छापो पहिरियों) कल्याण आडवाणी, मुम्बई, 1965
5. 'तहकीक'-सामी अंक, सिंधु शोध पीठ, म. द. स. विश्वविद्यालय, अजमेर, 2017

❒❒❒

1. शोधार्थी
2. शोध निर्देशक

कृष्णा सोबती का रचना-संसार

–प्रो. मंजुला राणा

यही कारण है कि उपन्यास होते हुए भी इस कृति ने रंगमंच की ख्याति प्राप्त की। अतः दृष्य और श्रव्यकाव्य दोनों की सरहदों को पार करके लेखिका ने अपनी कलम को ऊर्जा प्रदान की है। कृष्णा जी ने मध्यवर्ग के संस्कारों, परंपराओं, आवाजों, आहटों, आषाओं, अपेक्षाओं, कुंठाओ और आक्रोष को पूरी षिद्दत के साथ महसूस किया है। मध्यवर्गीय स्त्री की अस्मिता से जुड़े तमाम प्रष्नों का हल उनके लेखन में ढूंढा जा सकता है।

किसी युग और भाषा में लेखक का जन्म एक दुर्लभ घटना होती है। विगत् चार दशकों के हिंदी-साहित्य में 'कृष्णा सोबती' ऐसे नामों में सहज ही याद की जाती हैं। 18 फरवरी सन् 1925 ई0 को गुजरात (अब पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त) में जन्मी भारतीय संस्कृति की अनुपम निधि 'कृष्णा' एक ऐसी बेबाक लेखिका हैं, जिन्होंने कलम को संपूर्ण मानवीय संवेदनाओं से सजाया है। उनके लिए लिखना बस लिखना नहीं बल्कि जिंदगी की तमाम हरकतों को पोर-पोर से रचना में सराबोर करना है। भारतीय साहित्यिक परिदृश्य में उनकी उपस्थिति अपनी संयमित अभिव्यक्ति और सुधरी रचनात्मकता के लिए प्रसिद्ध है। यही गुण है कि अपनी भावात्मक ऊर्जा और कलात्मक उत्तेजना से उन्होंने अपना अलग पाठक तंत्र निर्मित किया है।

लेखिका ने 'थोड़ा' लिखकर बहुत ज्यादा पहचान पाई है। यह उनके सच की अतिशय प्रासंगिकता का प्रमाण भी है। अपने अन्तर्मन का हिसाब-किताब समझाते हुए सर्जक और रचना-धर्मिता को उन्होंने चोली-दामन के रूप में स्वीकार किया है। उनका मानना है - ''सर्जक की निर्मल और निर्मम आँख पाना लेखक के लिए अनन्त का पुरस्कार है। हम मानवीय तन-मन में उस अपनी अन्तर भाषा को चीन्हते हैं। उसके स्वरों से बाहर के कोलाहल को पहचानते हैं। अज्ञात, अनजान रहस्यमयी निकटताओं और दूरियों और आहटों को बीनते हैं। ध्वनियों को शब्दों में पिरोते हैं, अर्थों को अपने अन्तर में प्रतिध्वनित करते हैं। संवेदना की रेखाओं को आंक लेते हैं। मानवीय संबंधों के संघर्ष से वह कोलाहल बुनते हैं, जिसे प्राण रहते लगातार हम सुनते चले जाते हैं। वहीं जिए हुए का लेखा-जोखा, दुख-दर्द, हंसी-खुशी, घृणा-प्रेम, हर्ष-विषाद् अपने पाठ द्वारा अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते हैं।''1

उनके कृतित्व की अहम् विशेषता यह है कि उनका संपूर्ण रचना-संसार आम आदमी के अक्सों से भरा पड़ा है। उन्होंने अपनी साहित्यिक यात्रा मे अनेक उन्नत उपन्यासों का सर्जन कर मानवीय

अनुगूंज पैदा की है। 'डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, यारों के यार तिन पहाड़, बादलों के घेरे, सूरजमुखी अंधेरे के, जिंदगी नामा, ऐ लड़की, दिलो दानिश, हम हशमत, समय सरगम, सोबती एक सोहबत' ये हिंदी साहित्य के ऐसे दस्तावेज बनकर उभरे हैं, जिन्होंने लेखिका को कालजयी जामा पहना दिया है और जहाँ उन्होंने हर बार अपनी अलग पहचान दी है। अपनी क्षमताओं का लोहा मनवाने का कौशल तथा अपने प्रति सचेत और समाज के लिए पूरी चेतना से सोचना उनकी लेखनी का विशिष्ट तरीका है। भाषा-संस्कार के घनत्व, जीवंतता और स्पष्ट संप्रेषण ने एक पैनी जीवन-दृष्टि और साफ-सुथरेपन को साहित्य में स्थान दिलाया है। सामंती व्यवस्था हो या मध्यवर्गीय पीड़ाओं का आकाश उनके व्यक्तित्व में इससे कोई अंतर नहीं आता। वे आम-आादमी के दुख-दर्द से इस कदर जुड़ी हुई हैं कि उनके जीवन में इसकी प्रतिच्छाया देखी जा सकती है। उन्होंने स्वयं स्वीकारा है - ''इस लोक में रहने वाले हर इंसान की तरह मैं भी हर दिन धरती और आकाश को जीती हूँ। सूरज और चाँद को जीती हूँ। अपने शहर की सड़कों चौराहों कों। पैदल पार पथों को। मैं वहाँ पहुँचना चाहती हूँ। जहाँ खुली हवा हो और दिल के किवाड़ बंद न हों। पेशेवर मुहासिब नहीं कि हाँ में हाँ और ना में ना। मुझे मेरे 'मैं' से लगाव है पर दूसरों की कीमत पर नहीं। मुझे दूसरों का 'अहम्' स्वीकार है पर मेरी अपनी कीमत पर नहीं।''2 अपने में और दूसरों के अहम् की पूरी गारंटी लेखन में प्राप्त होती है।

कृष्णा जी का साहित्य आधुनिक परिवेश में घुमड़ रहे सभ्यतागत् सवालों और सृजनात्मक सरोकारों से जूझने वाला साहित्य है। स्वयं महानगर में रहकर महानगरीय परिवेश और संस्कृति को उन्होंने अपने लेखन के लिए चुना। महानगरीय बोध और मूल्य संक्रमणशीलता से उसकी रचनाएँ बेहद प्रभावित हैं। मध्यवर्गीय मिजाज का असर भी उनपर भरपूर हैं। पुराने नए का टकराव, पात्रों का आत्ममंथन, अंतर्द्वंद, सही-गलत का अनिश्चय यहाँ तक कि नैतिकता के बदलते साँचे सभी कुछ मध्यवर्गीय संस्कृति की छाप लिए हैं।

आधुनिक भारतीय परिवेश में स्त्री-चेतना की प्रखरतम् वक्ता कृष्णा सोबती ने कलाकार की दृष्टि से पुरुष प्रधान समाज में स्त्री होने के दुर्निवार सत्य को झेला है और इसी संघर्ष की उपज है कि उनके उपन्यास नायिका-प्रधान है और नायिकाएँ ऐसी जिन्होंने परिवेश की घिसी-पिटी जर्जर मानसिकता को जड़ से उखाड़ फेंकने का बीड़ा उठाया है फिर चाहे मित्रो मंरजानी की मित्रो हो या डार से बिछुड़ी की पाशो या ऐ लड़की की नायिका का भव्य अकेलापन हो। उन्होंने अपने उपन्यासों में दमदार नारी-चरित्रों की रचना की है, जो पुरुष समाज के समक्ष आत्मविश्वास के साथ खड़े ही नहीं होते वरन् अपने लिए एक गरिमामय सह-अस्तित्व का सद्भावपूर्ण संघर्ष भी कर रहे है। वे अपने नारी होने के कारण आत्मदया और आत्मग्लानि से त्रस्त नहीं है। जिनमें सृजन का माद्दा है पर जो कभी पुरुष वर्ग से अहं की लड़ाई नहीं लड़ते। वे दुस्साहसी हैं पर बुनियादी तौर पर उच्श्रृंखल नहीं। बस उनकी इच्छा समाज में अपने लिए स्वनिर्मित एक संसार सुरक्षित कर पाने की है, जहाँ के रीति-रिवाजो, मूल्यों और आचार संहिताओ में उनकी सहमति हो, स्वीकृति हो।

कृष्णा जी की समूची रचना-यात्रा नारी के लिए एक मानवीय और गरिमामय भाव-भूमि तलाश करती है और इस यात्रा में उन्होंने नैतिक-अनैतिक, सही-गलत की कहीं परवाह नहीं की। पुरुषों के प्रति किसी भी प्रकार के असम्मानजनक संकेत भी उनके यहाँ नहीं मिलते, न व्यक्ति की तरह, न हजारों वर्षों

की साजिश के प्रतिनिधि की तरह। उनके नारी-पात्रों में न कहीं विद्रोही होने का दंश मिलता है, न किसी को छोटा करने का अहंकार। बेजुबान जानवर की तरह इधर से उधर भटकती 'पाशो' हो या घर परिवार सबको ठेंगे पर रखने वाली 'मित्रो'। शायद उन्हें पता भी नहीं होता कि वे कब इन सबसे ऊपर होती हैं और कब इनके शिकंजे में। उनके नारी आक्रोश का लक्ष्य कुछ तोड़ना नहीं बल्कि स्त्री व्यक्तित्व के लिए बेहतर मानवीय धरातल का निर्माण है। दरअसल लेखिका का रचनाकाल एक ऐसे बोध और संवेदना के धरातल को जी रहा था, जिसमें अलगाव, असंतोष, घुटन, विघटन और अजनबीयत पल-बढ़ रही थी किन्तु उनकी प्रीतिपरक 'एप्रोच' के कारण इस बोध की परिणति नकार, अवज्ञा और आत्मघात में न होकर जीवनजगत् के सार्थक पहलुओं और जिंदगी को समृद्ध बनाने वाले आयामों के निर्माण और अन्वेषण में होती है। कथा-साहित्य को लेखिका का यह योगदान एक ऐतिहासिक घटना है। शायद ही कोई ऐसा लेखक मिले, जिसने इतने अदम्य साहस के साथ छद्म मर्यादित लकीरों को लांघने का प्रयत्न किया हो। इस दायित्व बोध को उनके संस्मरण-संकलन 'हशमत' में देखा जा सकता है। जहाँ अपने छद्म नाम हशमत मियाँ के हवाले से स्वीकार किया है - ''दोस्तों हर लेखक अपने लिए लेखक है। अगर वह संघर्ष से जूझता है, परिस्थितियों से टक्कर लेता है तो एहसान किसी दूसरे पर नहीं सिर्फ कलम पर है। कोई भी अच्छी कलम मूल्यों के लिए लिखती है, मूल्यों के दावेदारों के लिए नहीं अगर ऐसा नहीं तो लेखक और कलाकार शामियानों और विज्ञान भवनों की शोभा बनकर रह जाएगा।''3

उनका यही कथन समाज के चेतनावादी ठेकेदारों को असमंजस में डाल देता है। यही कारण है कि 'मित्रो मरजानी' जैसा चरित्र समूचे कथाजगत् में दुर्लभ है। मांसल कथावस्तु लगभग रीतिकालीन कवियों के सदृश, देह की अदम्य पिपासा और उसकी खुली अभिव्यक्ति, प्राणिक संवेदना एक अविस्मरणीय घटना की तरह पाठकों को झकझोरती रहेगी - ''मेरा बस चले तो गिनकर सौ कौरव जन डालूं पर अम्मा अपने लाडले बेटे को तो आड तोड़ जुटाओ। निगोडे मेरे पत्थर के बुत में भी कोई हरकत तो हो। बहुत हुआ तो हफ्ते पखवारे।''4 सुरखरू हो बैठो अम्मा! तुम्हारे इस बेटे के यहाँ कुछ होगा तो मित्रो चूहड़ी के पैरों का धोवन पी अपना जनम सुफल कर लेगी।

यही कारण है कि उपन्यास होते हुए भी इस कृति ने रंगमंच की ख्याति प्राप्त की। अतः दृश्य और श्रव्यकाव्य दोनों की सरहदों को पार करके लेखिका ने अपनी कलम को ऊर्जा प्रदान की है। कृष्णा जी ने मध्यवर्ग के संस्कारों, परंपराओं, आवाजों, आहटों, आशाओं, अपेक्षाओं, कुंठाओ और आक्रोश को पूरी शिद्दत के साथ महसूस किया है। मध्यवर्गीय स्त्री की अस्मिता से जुड़े तमाम प्रश्नों का हल उनके लेखन में ढूंढा जा सकता है। 'डार से बिछुड़ी' उपन्यास में नानी की घोषणा ''संभलकर री! एक बार का थिरका पाँव, जिन्दगानी धूल में मिला देगा।''5

औरत के सारे बंधनों को कहीं लेखिका ने मन से स्वीकार किया है और कहीं-कहीं उन्हें उतार फेंकने की तड़फ भी उनके उपन्यासों में देखने को मिलती है। संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा होने के कारण मिट्टी की गंध को उनकी कथाभूमि के प्राण-तत्व के रूप में जाना जाता है। जड़ परंपराओं को नकारती कृष्णा सोबती की लेखनी ने सामाजिक परिवर्तन का बिगुल भी बजाया है। बेटी के जन्म को जहाँ तत्कालीन परिवेश में

एक दुर्घटना के रूप में मान लिया जाता था, वहीं उनका यह कथन - ''अपनी समरूपा पैदा करना माँ के लिए बड़ा महत्वकारी है। पुण्य है। बेटी के पैदा होते ही माँ सदाजीवी हो जाती है। वह कभी नहीं मरती। हो उठती है वह निरन्तरा। वह आज है कल भी रहेगी। माँ से बेटी तक। बेटी से उसकी बेटी। बेटी से भी अगली बेटी। अगली से भी अगली। वही सृष्टि का स्त्रोत है।''6

इस कथन ने मध्यवर्ग के संपूर्ण संशयों को हाशिए पर लाने का प्रयत्न किया है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे जब भ्रूण-हत्या, दहेज-प्रथा, बलात्कार के प्रसंगों से औरत को टुकड़े-टुकड़े में मारा जा रहा है, वहीं बेटी के जन्म की वकालत करके लेखिका ने पुरुष मानसिकता से लबालब समाज में एक अलग अर्गला तैयार कर ली है। स्त्री की अनिवार्यता और उसकी उपयोगिता को स्वीकारते हुए उनका मानना है - ''शादी के बाद औरत पूरे परिवार के लिए मांझी बन जाती है। झील में तैरती नाव और शिकारे तो देखे हैं न तुमने। उन पर सवार परिवार मजे-मजे झूमते हैं और चप्पू चलाती है औरत। गृहस्थी में पांव रखकर स्त्री का जो मंथन-मर्दन होता है, वह भूचाल के झटकों से कम नहीं होता। औरत सहन कर लेती हैं क्योंकि उसे सहन करना पड़ता है।''7

उनके संबंध में प्रसिद्ध कवि और आलोचक डॉ. अशोक बाजपेयी का कथन द्रष्टव्य है - ''कृष्णा सोबती सिर्फ हिन्दी की ही नहीं बल्कि समूचे भारतीय साहित्य की इस समय सक्रिय एक मूर्धन्य कलाकार हैं। (एक तरह से अनुभव और संबंधों के अध्यात्म की कथाकार हैं)। हम हैं तो समय है, ये एक विश्वास अपने होने में और उस होने से निकलने के तमाम दार्शनिक आशयों में विश्वास जितना कृष्णा जी का है, उतना बहुत कम कथाकारों का है। उनके यहाँ एक पूरा जनपद, एक पूरी सभ्यता बोलती है।''8 अपना दैनिक जीवन हो या लेखन-यात्रा सब कुछ साफ-साफ। एक आदमी की तमाम जरूरतों, दायित्वों, संबंधों की सहजता में स्वयं को ढालना यह उनके व्यक्तित्व के विशिष्ट रंग है। 'जिन्दगीनामा' उपन्यास में लेखिका ने अपने साहसिक लहजे का सृजनात्मक उपयोग किया है। यह उपन्यास हिंदी उपन्यास की सीमाओं को बहुत विस्तृत करता है। भारत-पाकिस्तान का विभाजन जिस दर्द-भरी आवाज में व्यक्त किया गया है, उसने दो देषों की जमीन ही नहीं बांटी अपितु दिलों को भी काट कर अलग कर दिया है। जिस आजादी में सबने साझी जिन्दाबादियों को तरकीब से सहेज कर रखा था। लेखिका ने इस सांझे चूल्हे को दो देशों के बीच बाँटकर दर्द का सैलाब तैयार किया है।

निष्कर्षतः हम पाते हैं कि 'कृष्णा सोबती' एक ऐसी जिंदादिल श्लाका हैं, जिसे समय भुला नहीं सकता। जब तक साहित्य की सुगंध जिंदा है, उनका एक-एक शब्द सूक्ति बनकर याद किया जाता रहेगा क्योंकि ''चिराग तो हर दिल का एक-एक हुआ ही करता है। कभी मद्धम, कभी तेज, कभी लौ बढ़ाता हुआ सुर्ख चिराग, लिखने से पहले उसकी लौ आँखों में झिलमिलाती है फिर अंधेरे में घुलमिल दिल की देहरी पर पसर जाती है। चिराग उधार नहीं मिलते कि देना जरा रूह को उजाला करूँ। हर रूह के दामन में अपना चिराग होता है। हर किसी को अपना ही पैगाम उसे देना होता है। जलो कि लौ तुम्हारी सुर्ख रहे। जलती रहे। वह लौ जो कलम थामने वाले के पास होती है।''9

अतः यह महज संयोग नहीं कि आधुनिक हिंदी कथा-साहित्य में कृष्णा जी का नाम मूर्धन्य है, यह उनके लेखन की क्षमता का साहित्यिक स्वीकार है।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. छवि संग्रह: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-2
2. समय सरगम: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-12
3. हम हषमत: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-78
4. मित्रो मरजानी: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-80
5. डार से बिछुड़ी: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-1
6. डार से बिछुड़ी: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-40
7. ए लड़की: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-20
8. दूसरों के शब्दों में: छवि संग्रह, अशोक बाजपेयी
9. सोबती सक सोहबत: कृष्णा सोबती, पृष्ठ-4

❒❒❒

1. पूर्व सदस्य, उत्तराखंड उत्तराखंड लोक सेवा आयोग प्रोफेसर, हिंदी-विभाग हे0न0ब0 गढ़वाल (केंद्रीय) विष्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल), उत्तराखंड

भारतीय साहित्य में नैतिक मूल्य:

–डॉ. मनोरमा मिश्रा

छठी सदी ई- में अलवारों और नैयनारों एवं अनेक बाद के आचार्यों की परम्परा ने भारतीय साहित्य के स्वरूप को सहिष्णुता, सद्भावना, चारित्रिक शुद्धता जैसे नैतिक भाव सुमनों से सजाया। यद्यपि राजनैतिक स्तर पर भारतीय उपमहाद्वीप का यह युग हमेशा की तरह अलगाव का शिकार था, पर साहित्य ने हमेशा की तरह ही इस युग को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में सूत्रबद्ध किया।

अरस्तू ने माना था कि कला का विशिष्ट उद्देश्य आनन्द है, पर यह आनन्द नीति सापेक्ष है- यह अनैतिक नहीं हो सकता। अर्थात् साहित्य नैतिक मूल्यों का आग्रही होना चाहिए। इस मानदण्ड पर यदि भारतीय साहित्य का मूल्यांकन किया जाय तो हम पाते हैं कि भारतीय साहित्य का एक बहुत बड़ा भाग अपनी भाषाई, सांस्कृतिक सामाजिक और धार्मिक विविधताओं के वावजूद इसी मानदण्ड के इर्द-गिर्द बुना गया है। अर्थात् नैतिक मूल्य भारतीय साहित्य का केन्द्रीय चरित्र है। विविधता भरे भारतीय साहित्य में केन्द्रीकृत सम नैतिक मूल्य उसे एकता के सूत्र में सूत्रबद्ध करते है।

राजनैतिक एकता इस भारतीय उपमहाद्वीप का आभूषण भले ही न रही हो, पर साहित्य ने आरम्भ से ही समान नैतिक मूल्यों के बल पर धार्मिक सामाजिक क्षेत्र को वैचारिक एकता से हमेशा अलंकृत किया है। इन नैतिक मूल्यों में जन्ममूलक वर्णव्यवस्था और अस्पृश्यता का निषेध, धर्मिक जड़ता का विरोध, आचरण और चरित्र की शुद्धता तथा स्वकर्तव्याकर्तव्य का बोध इत्यादि तो वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य तक में समान रूप से परिव्याप्त हैं।

यद्यपि कुछ मनीषी ऋग्वेद में जातिवाद के बीज खोजते हैं। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि ऋग्वेद की चतुर्वर्ण की दैवीकल्पना समाज में कर्तव्यों के सुचारु संचालन के निमित्त थी, न कि जन्ममूलक जातिव्यवस्था और अस्पृश्यता की स्थापना की आकांक्षा से। इसका प्रमाण ऋग्वेदिक साहित्य में यत्र तत्र सर्वत्र विद्यमान है। उदाहरण के लिए ऋग्वेद का एक मंत्रकार लिखता है- 'मैं कारु (मंत्र निर्माता) हूँ, मेरा पिता भिषक् (वैद्य) है और मेरी माता उपल प्रतिक्षिणी (पत्थर की चक्की से अनाज पीसने वाली) है' (ऋग्वेद- 9/112/3) स्पष्टतः यहाँ जन्ममूलक जातिव्यवस्था का निषेध है।

इस तरह भारतीय साहित्य ने जन्माधारित अस्पृश्यतामूलक वर्णव्यवस्था को कभी प्रोत्साहित नहीं किया। महाकाव्यकालीन साहित्य से विदित होता है कि मन्त्रिपरिषद् में शूद्र प्रतिनिधि होते थे।

युधिष्ठिर ने राजसूय के समय शूद्र प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया था।

विवाह जैसी महत्त्वपूर्ण सामाजिक संस्था के प्रति भी भारतीय साहित्य का दृष्टिकोण उदार रहा है। भारतीय साहित्य में अन्तर्जातीय और विधवा विवाह की स्वीकृति इसका प्रमाण है। अन्तर्जातीय विवाह के उदाहरण वैदिक साहित्य में भरे पड़े हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है- ब्राह्मण विमद और राजकन्या कुमद्य का विवाह (अनुलोम विवाह), महिर्षि शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी और राजा ययाति का विवाह (प्रतिलोम विवाह) इसी तरह देधिषव्य अर्थात् विधावापुत्र (तैतरीय संहिता) तथा पुनर्भू जैसे शब्द वैदिक साहित्य में विधवा विवाह की तरफ स्पष्ट संकेत करते हैं। सूत्रकालीन व्यवस्थाकारों में वशिष्ठ ने तो अभुक्त विधवा तथा प्रोषितपतिका दोनों को पुनर्विवाह का अधिकार दिया है।

प्राचीन भारतीय साहित्य की गुणवत्ता स्त्री के प्रति उसके सम्माननीय दृष्टिकोण में परिलक्षित होती है। ऋग्वेद में 'जायेदस्तम्' अर्थात् पत्नी ही ग्रह है का उद्घोष तथा अथर्ववेद की चतुष्पति कल्पना, (जो स्त्री के शैक्षिक, शारीरिक, मानसिक एवं सांस्कृतिक विकास को संकेतित करती है) इसका प्रमाण है।

इस तरह प्राचीन भारतीय साहित्य ने स्त्री को सभी राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक अधिकार दिए। लेकिन बाद में आर्यों की राजनैतिक परिस्थितियों के चलते जब स्त्री के राजनैतिक अधिकार छिन गए तब मेधातिथि जैसे व्यवस्थाकारों का अपने साहित्य में 'स्त्रीधन' की स्थापना द्वारा स्त्री को आर्थिक अधिकार दिए। जो प्राचीन भारतीय साहित्य की नैतिक और प्रगतिशील सोच का प्रमाण है।

यद्यपि प्राचीन साहित्य के उत्तरकालीन स्वरूप में जड़ता आती गई, तब बौद्धकालीन साहित्य में इसकी मुखर प्रतिक्रिया हमें देखने को मिलती है। त्रिपिटक में समाहित बौद्ध साहित्य, जिन अष्टांगिक मार्ग और दसशीलों को स्थापित करता है, वह भारतीय साहित्य के नैतिक मूल्यों की उच्चावस्था है। इसी तरह जैन साहित्य भी नैतिक मूल्य और उच्चादर्श के रूप में चार महाव्रत (बाद में पाँच) और त्रिरत्न को स्थापित करता है। जैनदर्शन का ज्ञानमीमांसीय सिद्धान्त-स्यादवाद और तत्त्वमीमांसीय सिद्धान्त-अनेकान्तवाद, निश्चय ही भारतीय साहित्य की वैचारिक सहिष्णुता का प्रमाण है।

वस्तुतः भारतीय साहित्य में उच्चादर्शों और उच्चगुणवत्तापूर्ण नैतिक मूल्यों की अनुगूंज पूर्व में पाटिलपुत्र में सम्पन्न तृतीय बौद्ध संगीति (तीसरी सदी ई-पू-) और प्रथम जैनसभा (चौथी सदी ई-पू-) में लेकर पश्चिम में गुजरात के बल्लभी में सम्पन्न द्वितीय जैन सभा (पांचवीं सदी ई-) तक तथा उत्तर में कश्मीर के कुण्डलन में सम्पन्न चतुर्थ बौद्ध संगीति (पहली सदी ई-) से लेकर दक्षिण के मदुरै में सम्पन्न संगम साहित्य सम्मेलन (पहली सदी ई-) तक में सुनाई देती है।

इस तरह प्राचीन भारतीय साहित्य का एक बहुत बड़ा पक्ष एकता, सहिष्णुता, सद्भावना, नैतिकता और उच्चादर्शों की गुणवत्ता का साहित्य रहा है। भारतीय साहित्य के एक पक्ष में आने वाली जड़ताओं और रुढ़ियों का विरोध साहित्य के दूसरे पक्ष ने हमेशा ही बड़ी मुखरता से किया।

छठी सदी ई- में अलवारों और नैयनारों एवं अनेक बाद के आचार्यों की परम्परा ने भारतीय साहित्य के स्वरूप को सहिष्णुता, सद्भावना, चारित्रिक शुद्धता जैसे नैतिक भाव सुमनों से सजाया। यद्यपि राजनैतिक स्तर पर भारतीय उपमहाद्वीप का यह युग हमेशा की तरह अलगाव का शिकार था, पर साहित्य ने हमेशा की तरह ही इस युग को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में सूत्रबद्ध किया।

जिस समय दक्षिण भारत में अलवारों के परवर्ती आचार्य भारतीय संस्कृति की जड़ताओं पर अपने दार्शनिक बज्र से प्रहार कर रहे थे, तभी शंकराचार्य जैसे दार्शनिक 'ब्रह्मसूत्र' की रचना कर धर्म और समाज की रुढ़ियों को ध्वस्त कर रहे थे, साथ ही वे उत्तर (केदारनाथ), दक्षिण (श्रृंगेरी), पूरब (पुरी जगन्नाथ), पश्चिम (द्वारका) मे नैतिक मूल्यों की वैचारिकपीठ की स्थापना कर राष्ट्रीय एकता का मार्ग प्रशस्त कर रहे थे।

हालांकि इस समय उत्तर भारत के दरबारी कवियों में क्षेत्रीय संकीर्णता में बद्ध होने का सिलसिला शुरु हो चुका था। लेकिन तमाम संकीर्णताओं की दीवारें ज्यादा दिन टिक नहीं सकीं, शीघ्र ही प्रतिक्रियास्वरूप सिद्ध और नाथों के चर्यापदों ने इस पर आघात किया। सरहपाद जैसे सिद्ध ने अपने साहित्य में जड़ होती जातिव्यवस्था पर प्रहार करते हुए लिखा कि- 'ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से पैदा हुए थे, जब हुए थे तब हुए थे। इस समय तो वे भी वैसे पैदा होते हैं जैसे दूसरे लोग, तो फिर ब्राह्मणत्व कहाँ रहा? यदि कहो कि संस्कार से ब्राह्मणत्व होता है, तो चाण्डाल को भी संस्कार देकर क्यों नहीं ब्राह्मण हो जाने देते?'

गोरख के प्रगतिशील विचार तो जग जाहिर ही है। लेकिन आगे चलकर जब ये सिद्ध और नाथ उन्हीं जड़ताओं, रुढ़ियों, व्यभिचारों एवं तंत्र-मंत्र के शड्यन्त्रें में उलझे, जिनका इन्होने विरोध किया था, तो भारतीय साहित्य दर्शन के दूसरे पक्ष ने पुनः मोर्चा संभाला। यह मोर्चा अलवारों की परम्परा में हुए परवर्ती आचार्यों द्वारा संभाला गया। अलवारों की वैष्णवी श्रद्धा और आचार्यो की दार्शनिकता ने गर्त में गिरते भारतीय साहित्य और समाज को पुनः सम्बल दिया और पूर्वमध्यकालीन भारतीय समाज के विषैले तत्त्वों और जड़ताओं का शमन किया। साथ ही भारतीय समाज और साहित्य के रंगमंच पर भक्ति आन्दोलन रूपी रंगारंग जीवनोत्सव का उद्घाटन किया। फलतः तमाम भेदभावों को मिटाती सहिष्णुता की भागीरथी अविरल प्रवाहित हुई, जिसमें 'मानुष प्रेम भयउ बैकुण्ठी' की अवधारणा और 'सुरसरि सम सबकर हित' की कामना निहित थी।

भक्ति आन्दोलन वास्तव में भारत का प्रथम नवजागरण काल था। यद्यपि इसके पश्चात् रीतिकालीन साहित्य लोक से विमुख होकर दरबार में जा घुसा। तथापि यह साहित्य कला की दृष्टि से अत्यन्त उच्चकोटि का था। लेकिन जीवन मूल्यों और लोक कल्याण भाव से शून्य कविता नव यौवना प्राप्त कामिनी के कुचों पर बलखती और उसके कचों में अपने को उलझाती हुई अन्ततः उसके नाभि सरोवर में डूब गई। फिर भी रहीम जैसे कवियों ने नैतिक मूल्यों की राह नहीं छोड़ी। पर 1857 की भारतीय क्रान्ति के पश्चात् भारत की विविध भाषाओं के साहित्य में जो नवजागरण हुआ, वह नैतिक मूल्यों और प्रगतिशीलता की दृष्टि से विविधता में एकता का प्रत्यक्षीकरण है। इस समय सम्पूर्ण भारतीय साहित्य ने एक साथ सामाजिक अंधविश्वासों एवं विद्रूपताओं के प्रति आलोचनात्मक रूख अपनाया।

इसकी शुरुआत हिन्दी में भारतेन्दु मण्डल से हुई। तत्पश्चात् हिन्दी साहित्य द्विवेदीयुगीन सांस्कृतिक गौरव का बोध प्राप्त करता हुआ छायावादी सांस्कृतिक स्वच्छन्द चेतना को प्राप्त हुआ। साथ ही प्रगतिवादी साहित्य शोषितों की संवेदना बनकर मुखरित हुआ। इस प्रगतिवादी साहित्य पर गांधीवादी और मार्क्सवादी विचारधारा का भी समानान्तर प्रभाव रहा। इस सब के बीच से मधुशाला की मस्ती में साम्प्रदायिकता को चुनौती देते बच्चन जैसे हालावादी भी मुखरित हुए-

'मुसल्लमान औ हिन्दू हैं दो, एक, मगर उनका प्याला,
एक मगर उनका मदिरालय, एक मगर उनकी हाला_

दोनों रहते एक न जब तक, मस्जिद-मन्दिर में जाते_

बैर बढ़ाते मस्जिद-मन्दिर, मेल कराती मधुशाला।'

यह भारतीय साहित्य का द्वितीय नवजागरण था। जिसमें मूलतः स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व का स्वर मुखर था। रुढ़ियों और जड़ताओं का विरोध था। बंगाल में इस स्वर के उद्घोषकों में अग्रणी थे- राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, रविन्द्रनाथ टैगोर, बंकिमचन्द (आनन्दमठ, दुर्गेशनन्दिनी, कपाल कुण्डला) माइकेल मधुसूदनदत्त (मेघनाथ वध तथा वीरांगना जैसी रचनाओं में पौराणिक आख्यानों को नूतन सन्दर्भ में देखने की आकांक्षा निहित है) ताराशंकर बनर्जी (धरतीदेवता, गणदेवता, पंचग्राम आदि), उड़िया में इस नवजागरण को स्वर दिया फकीर मोहन सेनापति, राधानाथ औरा मधुसूदन जैसे साहित्यकारों ने, तो असमिया में आनन्दराम फुकन, कमला कान्त भट्टाचार्य (चिन्ता, चिन्तातरंग आदि कविता संग्रह) हेमचन्द बरुआ एवं लक्ष्मीकान्त बेजबरुआ जैसे साहित्यकार इस नवजागरण के अग्रदूत थे। लक्ष्मीकान्त बेजबरुआ की कविताओं में राष्ट्रीय चेतना का प्रस्फुटन सांस्कृतिक अतीत के लगाव के रूप में हुआ है।

गुजरात में नैतिक मूल्यों से आप्लावित नवजागरण के स्वर के पुरोधा नर्मदा और उनके सहयोगी (मनसुखराम, गोवर्धनराम आदि) हैं। गांधी जी का आधुनिक गुजराती साहित्य पर व्यापक प्रभाव रहा। काका साहेब कालेलकर, महादेव देसाई, नरहरिभाई, किशोरी लाल मश्रूवाला तथा के- एम-मुंशी (स्वप्नदृष्टा- उपन्यास) जैसे रचनाकारों पर गांधी के कृतित्व और व्यक्तित्व का प्रभाव स्पष्ट है। इसी तरह उमाशंकर जोशी की कविता विश्वशान्ति, तथा कविता संग्रह-निशीथ और 'गंगोत्री' पर गांधी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

मराठी साहित्य में इस नवजागरण का श्रेय यदि केशवसुत और ज्योतिबाफुले (गुलामगीरी) को जाता है, तो तेलगू में नवोत्थान के अग्रदूत 'राजशेखर चरित्रम्' उपन्यास के रचिता वीरेशेलिंगम् पंतुल माने जाते है। और कन्नड़ साहित्य में यह श्रेय वी- रामाराव आलूर और एस-जे- नरसिंहाचार आदि को जाता है।

सुदूर दक्षिण भी इस साहित्यिक नवोत्थान की लहर से अछूता नहीं रहा। जहाँ तमिल में इसका श्रेय सुब्रह्मण्यम भारती, रामलिंगम पिल्लई, और कृष्णमूर्ति कल्कि जैसे साहित्यकारों को है वहीं मलयामल नवोत्थान के अग्रदूत वेनमणि, राजराज वर्मा, कुमारन आशान आदि माने जाते हैं। कुमारन आशान की 'दुरावस्था, चाण्डाला, भिक्षुकी' आदि रचनाओं में तिरस्कृत एवं उपेक्षित सर्वहार के अभिशप्त जीवन का करुण चित्र है, तो 'चिन्ताविष्टयाय सीता' में एक पारम्परिक पौराणिक आख्यान को युगीन सन्दर्भ में देखने का सफल प्रयास है। मलयालम के ही एक अन्य रचनाकार केशवदेव का कथा साहित्य भी सर्वहारा के स्वर से गुंजायमान है।

सम्पूर्ण विवेचन का सार यही है कि समस्त भारतीय भाषाओं के साहित्य में नैतिक जीवन मूल्य और मानवतावाद जैसे भाव भारतीय साहित्य की केन्द्रीय संवेदना है। वास्तव में ये भाव भारतीय साहित्य के माध्यम से सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप को सांस्कृतिक एकता के सूत्र में आबद्ध करते है।

❑❑❑

1. विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग) मिहिर भोज पी-जी-कॉलेज दादरी, ग्रेटर नोएडा गौतम बुद्ध नगर- 203207 (उ.प्र.)

परशुराम की प्रतीक्षा और भारतीय प्रसंग

–डॉ. पूनम कुमारी

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ओज और वीर रस के कवि थे। उनकी रचनाओं में ओज और वीर रस का समन्वय मिलता है। परंतु इनकी श्रृंगारिक भावनाओं से ओत-प्रोत उर्वशी और रसवंती जैसी काव्य-कृतियाँ भी है, जहाँ कवि की आत्मा वास करती है। रेणुका, हुंकार, रश्मिरथी, कुरुक्षेत्र, सामधेनी और परशुराम की प्रतीक्षा आदि इनकी काव्य-कृतियाँ है।

लगातार तीन सौ वर्षों की गुलामी के बाद जद्दोजहद के पश्चात् आजादी मिलने से लगा था कि भारतवर्ष में चारों ओर सुख-समृद्धि और शांति का आलम स्थापित हो जाएगा परंतु ऐसा संभव नहीं हो पाया। चीनी आक्रमण के समय सारा भारत देश जिस चरम क्रोध से एक होकर गरज उठा था उसकी मिसाल भारत के समग्र इतिहास में नहीं है, बल्कि गर्जन प्राचीन और मध्यकालीन युगों में भी सुनाई पड़ा होगा। राष्ट्रकवि दिनकर ने उस आग को एक कविता के भीतर समेट कर अमर कर दिया है। आगे आने वाली संततियों जब-जब 'परशुराम की प्रतीक्षा' को पढ़ेगी उन्हें यह आग गर्मी पहुँचाएगी और लोग याद करेंगे कि भारत के इतिहास में कोई घड़ी ऐसी भी आई थी जब राष्ट्रीय अपनापन से क्षुब्ध होकर सारा भारतवर्ष एक साथ हुँकार उठा था।

साहित्य सड़क पर या युद्धभूमि में घटित होनेवाली घटनाओं का विवरण नहीं लिखता। वह काम इतिहासकार का है। कवि तो घटनाओं के पीछे छिपी भावनाओं का अंकण करते हैं, उन आवेगों का चित्रण करते हैं, जिनका चित्रण इतिहासकारों और दार्शनिक पंडितों के लिए भी अशक्य हैं। आग की लपटें जो मनुष्य के हृदय से निकल कर शून्य में विखर जाती हैं शोक के उच्छवास जो वायु में विलीन हो जाते हैं प्रेम की मस्ती जो वसंत के साथ विदा हो जाती है, ये सब जीवित इसलिए मंजूषा में बंद कर देता है।

नेफा के मैदान में जब भारतीय सेना पराजित हो गई तब उस पराजय के दंश से सारा भारत वेहाल हो उठा और प्रत्येक व्यक्ति

इस सिपाही के अनुसार भारत की पराजय इसलिए हुई कि व्यवहार को भूलकर वह आदर्श और कल्पना में गया था। राष्ट्रकवि दिनकर का कहना है कि जो जाति अपने आपद्धर्म का पालन नहीं कर सकता, उसका परम धर्म आप से आप विनष्ट हो जाता है। उच्चतर मनुष्यता सचमुच ही श्लाध्य और काम्य है। किन्तु यह आदर्श पर्वत की चोटी पर अवस्थित है

अपने आप से यह सवाल करने लगा कि आखिर यह विशाल देश इतनी आसानी से हार क्यों गया? हमने हथियारों का बंदोबस्त क्यों नहीं किया था? हमारे राष्ट्रीय चित्रण में वह कौन सा दोष है जो हमें सबल नहीं बनने देता? हमने यह धोखा कैसे खाया? क्या हमारी सरकार असावधान थी? अथवा हम शांतिवादि नारों के शिकार हुए हैं? अथवा दोष हमारे जातीय दर्शन का है? लेकिन अब हम किस तरह चलें कि ऐसा अपमान हमें फिर कभी झेलना नहीं पड़े?

राष्ट्रकवि दिनकर की 'परशुराम की प्रतीक्षा' में ये सारे सवाल बारी-बारी से आते हैं और राष्ट्र के हृदय में घुमडनेवाली बेचैनियों को कवि बारी-बारी से अभिव्यक्ति देता है और कविता के अंतिम खण्ड में वह उस मार्ग का भी संकेत करता है जिस पर आरूढ़ हुए बिना भारत सम्मान के साथ नहीं जी सकेगा।

'परशुराम की प्रतीक्षा' कोई पाँच छह सौ पंक्तियों की कविता है और वह पाँच खंडों में विभक्त है। इस कविता की शैली यह है कि नेफा के मैदान में हमारा हारा हुआ सिपाही खड़ा है और कवि उसे सवाल करता है तथा वह पराजित सैनिक कवि को उत्तर देता है। सिपाही से कवि का पहला ही सवाल इतना तीखा है कि वह हमारी तत्कालीन रक्षा-व्यवस्था पर प्रश्न चिन्ह बन जाता है।

'गरदन पर किसका पाप वीर ढोते हो? शोणित से तुम किसका कलंक ढोते हो?

और इस प्रश्न के उत्तर में सिपाही जो कुछ कहता है उससे उस विचारधारा पर करारी चोट पड़ती है जिसे लेकर भारत उस समय चल रहा था। सिपाही कहता है हाय मैं उनका पाप ढो रहा हूँ जिसके हृदय में असीम करुणा थी, जिनके भीतर न तो जवानी का आग थी, न कोई जहर था, जो लोग सस्ती कीर्ति पाकर खुशी से फूल गए थे और जो ऐसे आदशों पर आसक्त थे जो निवीर्य और निस्सार है।

" गीता में जो त्रिपिटक - निकाय पढ़ते है, तलवार गला कर जो तकली गढ़ते है, शीतल करते है अनुल प्रबुद्ध प्रजा का, शेरों को सिखलाते है धर्म अजा का, सारी वसुन्धरा में गुरु पद पाने को, प्यासी धरती के लिए अमृत लाने को, जो सन्त लोग सीधे पाताल चले थे, (अच्छे है जब, पहले भी बहुत भले थे।) हम उसी धर्म की लाश यहाँ ढोते है शोणित से सन्तों का कलंक धोते है" । +2

इस सिपाही के अनुसार भारत की पराजय इसलिए हुई कि व्यवहार को भूलकर वह आदर्श और कल्पना में गया था। राष्ट्रकवि दिनकर का कहना है कि जो जाति अपने आपद्धर्म का पालन नहीं कर सकता, उसका परम धर्म आप से आप विनष्ट हो जाता है। उच्चतर मनुष्यता सचमुच ही श्लाध्य और काम्य है। किन्तु यह आदर्श पर्वत की चोटी पर अवस्थित है लेकिन इस चोटी की ओर जो राह जाती है, वह हिंस्त्र जंतुओं से भरी हुई है। अतएव उच्चतर मानवता तक पहुँचने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी सामान्य मानवता सुदृढ़ और ठोस हो। परम धर्म की प्राप्ति हम आपद्धर्म के जरिये करते हैं। अर्थात् उच्चतर श्रृंग पर वही मनुष्य पहुँच सकता है। जिसमें यह शक्ति हो कि वह रास्ते में मिलनेवाले हिंस्त्र जंतुओं के झपटों से अपने को बचा सके।

" हैं खड़े हिंस्त्र वृक-व्याध, खड़ा पशुवल है। कंठी माला के सहित चवा जाते है।

'जो वीर काटकर इन्हें पार जाएगा अतुंग श्रृंग तक वहीं पहुंच पाएगा।

नेफा की लड़ाई का सबसे कारुणिक पक्ष यह है कि बिना किसी तैयारी के हमारे नौजवान उस युद्ध में झोंक दिये गए थे। उस समय यह अपवाह देश में सर्वत्र सुनी जाती थी कि हमारे सिपाहियों के हाथ में सर्वत्र सुनी जाती थी कि हमारे सिपाही के हाथ में जो बंदूके थी वे महज मामूली किस्म की थी और उनके पास गोलियाँ काफी तादाद में नहीं थी। धायल सिपाहियों का एक दल जब मैदान से लौटा तो इलाज के लिए दानापुर (पटना) में अस्पताल में रखा गया। उन सिपाहियों का अभिनंदन करने को जनता मिठाईयाँ और पुष्पाहार लेकर दोड़ी, लेकिन सिपाहियों ने कहा 'ये फूल मिठाईयाँ क्यों लाए हो। अगर हो सके तो हमें बंदूक और गोलियाँ लाकर दो जिससे हम दुश्मन के अंहकार को चकनाचूर कर सके।

इसी पृष्ठभूमि के याद रखते हुए कवि ने सिपाहियों से दूसरा सवाल यह पूछा है कि हे वीर तुम्हारी हत्या का दायित्व किस पर है? वह कौन है, जिसे हम तुम्हारे वध के लिए जिम्मेदार मान सकते है।

सिपाही कहता है हम दुश्मन से नहीं हारे हैं। पराजय हमारी अपने ही घर में हुई है। जिस देश का राजनीतिज्ञ लोभ के मारे सत्य नहीं बोल सकते, जिस देश के सत्ताधारी चारों ओर ठगों का पक्ष लेते हैं तथा चाटुकारों को अपना मित्र समझते हैं। जिस देश में आत्मबल की मिथ्या प्रशंसा के लिए बाहुबल की अपेक्षा की जाती है जिस देश के नेता केवल शांति की बातें बोलते है और जिसके कवि धरती को छोड़कर आकाश में उड़ान भरते है, वह देश लड़ाई में कभी भी विजयी नहीं हो सकता।

घातक है जो देवता सदृश दिखता है। समझो उसने ही हमें यहाँ मारा है। चारों के हैं जो हित ठगों के बल है, या चाटुकार जन से सेवा लेते है। " * 4

यह पाप उन्हीं का हमको मर गया है, भारत अपने घर में ही हार गया है''+5

जिसके देश शासन में विलासिता, आलस्य और कदाचार हों उस देश की सेना युद्ध विजय नहीं पाती है। लड़ाई जीतने की जिम्मेदारी केवल फौजियों की नहीं होती। लड़ाई जितने के लिए शासन को निष्कपट और शुद्ध होना पड़ता है तथा सभी लोगों को कठोर जीवन बिताना पड़ता है। जिस समय मोर्चों पर गए हुए जवान अपना रक्त बहा रहे हो, उस समय देश के भीतर प्रत्येक व्यक्ति को उस रूधिर का मूल्य अपने स्वेद से चुकाना चाहिए। नेफा का सिपाही कहता है कि राजाओं, व्यापारियों और मजदूरों से कहो कि वे न्यायशील हो। अगर शासन में पवित्रता नहीं आई तथा अयोग्य बढ़ते गये तो इस देश को युद्धों में विजय कभी भी नहीं मिलने वाली है।

कविता की तीसरी खण्ड कवित्व की दृष्टि से कदाचित सर्वश्रेष्ठ है। इस खण्ड में भारत के उन सभी वीरों का आह्वान किया गया है जिन्होंने भारत का गौरव की रक्षा के लिए कभी तलवार उठाई थी। चाणक्य और चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य और राणा प्रताप, गुरु गोविंद सिंह और शिवाजी महाराज और लक्ष्मीबाई, भगत सिंह का आह्वान कवि ने ऐसी भावाकुलता से किया है कि उसे पढ़कर एक वाल भुजाएँ फड़क उठती है। कवि कहता है कि भारत कोई साधारण देश नहीं है। कसूर उसका यह है कि उसने शरीर बल की उपेक्षा अपना सारा ध्यान आत्मा पर केंद्रित कर दिया।

अतः चीनी आक्रमण के समय देश की आत्मा अपना लक्ष्य परशुराम को बनाना चाहती थी, अतएव

राष्ट्रकवि ने परशुराम का ही चित्र देश के सामने उपस्थित कर दिया। परशुराम की प्रतीक्षा कवि की कोरी कल्पना नहीं भारतीय जनता की ह्दय की पुकार है और इस कविता का विरोध चाहे जितना भी किया जाए, उसका प्रभाव देश पर पड़ता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. रामधारी सिंह दिनकर, परशुराम की प्रतीक्षा, पेज नं.-9
2. -वही पेज नं.-9
3. -वही पेज नं. - 10
4. -वही- पेज नं.-11
5. -वही पेज नं.- 26

❒❒❒

1. अतिथि प्राध्यापिका हिंदी विभाग बलिराम भगत महाविद्यालय समस्तीपुर (बिहार) मो. नं. 7363870758 ई-मेल - punammehada@gmail.com

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में त्रि-भाषासूत्र का महत्व व चुनौतियाँ

–कल्पना उप्रेती

त्रिभाषा सूत्र सूत्र तभी सफल माना जाएगा, जब हिन्दी भाषी क्षेत्र अन्य भारतीय भाषाओं को सम्मान देना शुरु करेंगे, इसके लिए उन्हें कम से कम एक या इससे अधिक ऐसी अन्य भारतीय भाषाओं को जानने की जरूरत है जो दूसरे प्रांत मे बोली जाती हो,

अनेकता में एकता के नाम से प्रसिद्ध हमारे देश भारत में भाषायी आधार पर भी विभिन्नताएं देखने को मिलती हैं। भारत में राष्ट्रीय भाषा का दर्जा किस भाषा को दिया जाए,

यह हमेशा से ही एक गंभीर मुद्दा रहा है। भाषा एक-दूसरे से संबंध स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण तत्व है। शिक्षा प्रणाली में भी भाषा एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है या यूँ कहें संपूर्ण शिक्षा प्रणाली की नींव भाषा ही है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषा के महत्व को स्वष्ट करते हुए त्रि-भाषा सूत्र की वकालत की गई है। केवल राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने ही नहीं बल्कि इससे पहले भी अनेक आयोगों, समितियों व परिषदों ने भी त्रि-भाषा सूत्र के महत्व को स्पष्ट करते हए इसे अपनाने की सलाह दी है। त्रि-भाषा सूत्र का मुख्य उद्देश्य हिंदी व गैर-हिंदी भाषी राज्यों में भाषा के अंतर को समाप्त करना है। पूरे देश में भाषा के आधार पर हो रहे भेद-भावों को समाप्त करना है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बच्चों की सृजनात्मकता को बढ़ावा देने की बात करती है। इसका मानना है कि बच्चों को सीखने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। बच्चों की आन्तरिक क्षमताओं को उजागर किया जाना चाहिए तथा उनके अन्दर छिपी सृजनात्मकता को बाहर लाकर सही दिशा प्रदान की जानी चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि बच्चों को अपने आप को प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिए। वे जिस भी भाषा में स्वयं को प्रस्तुत कर रहे हैं शिक्षक द्वारा उसे स्वीकार कर, उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। एक बच्चे के लिए अभिव्यक्ति का सवोत्तम माध्यम उसकी अपनी मातृभाषा होती है। जिसे वह प्रत्येक दिन सुनता व बोलता है। कक्षा-कक्ष में पढ़ने वाले अनेक विद्यार्थी अलग-अलग भाषीयी

पृष्ठभूमि से आते हैं, सभी की अपनी बोली व भाषा भिन्न हाते ी है। अर्थात् एक कक्षा बहुभाषी कक्षा होती है, जिसमें अनेक भाषाओं का समावेश होता है। प्रत्येक बच्चे की अभिव्यक्ति व उसकी भाषा का सम्मान करना एक शिक्षक के लिए परम आवश्यक है। अब यहाँ

एक शिक्षक के लिए चुनौतिपूर्ण कार्य होता है कि वह प्रत्येक विद्यार्थी को भाषा का सम्मान करते हुए उसे अभिव्यक्ति के लिए प्रेरित करे व उसकी समस्याओं का समाधान करें। कक्षा में, स्कूल में, समाज में तथा देश में भाषा के आधार पर छात्रों अथवा व्यक्तियों के अवसरों में समानता बनी रहे इसके लिए हमारे विशेषज्ञों तथा शिक्षाविदों द्वारा त्रि-भाषा सूत्र.को देश की शिक्षा प्रणाली में अपनाने की सलाह दी गई है।

की-वर्ड- त्रिभाषा सूत्र शिक्षा प्रणाली, आयोग, समितियाँ, विरोध, संवैधानिक प्रावधान। त्रिभाषा सूत्र- देश की शिक्षा प्रणाली में सममता लाने हेतु त्रिभाषा सूत्रका प्रतिपादन किया गया है। त्रिभासा-सूत्र में पहली भाषा मातृभाषा या क्षेत्रीय भाता हैं, दूसरी भाषा हिन्दी भाषी राज्यों में

यह अन्य आधुनिक भारतीय भाषा था अंग्रेजी हैं। गैर हिंदी भाषी राज्यों में यह हिंदी या अंग्रेजी है। ततृीयभाषा के रूप में यह अंग्रेजी या एक अन्य आधुनिक भाषा है। गैर हिन्दी भाषी राज्यों में यह अंग्रेजा या एक आधुनिक भारतीय भाषा होगी।

भाषा के संवैधानिक प्रावधान- भाषा से संबंधित विचार-विमर्श भारत के संविधान में विस्तृत रूप से मिलता है। भारत के संविधान में भाषा से संबंधित नियम-कानूनों का विशेष रूप से वर्णन किया गया है, तथा देश की प्रत्येक भाषा को सम्मान व उचित दर्जा प्रदान करने की कोशश की गई है भारत का संविधान भाषायी आधार पर विभिन्नता को स्वीकार करता है, तथा इस विभिन्नता में भी एकता बनाने का प्रयास करता है। भाषा के आधार पर देश में कोई भेद-भाव उत्पन्न ना हो इसके लिए संविधान निर्माताओं ने उचित प्रयास किये है, तथा विभिन्न अनुच्छेदा में भाषा से संबंधित तथ्यों को स्पष्ट किया है

अनुच्छेद-29 भारतीय संविधान का अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यका के हितों की रक्षा करता हैं। अनुच्छेद मे कहा गया है कि नागरिकों के किसी भी वर्ग जिसकी स्वयं की विशिष्ट भाषा, लिपि, या संस्कृति है, को उसका संरक्षण करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद- 343- इस अनुच्छेद में भारतसंघ की आधिकारिक भाषा से संबंधित है। इस अनुच्छेद के अनुसार, हिन्दी दिवनागरी लिपि में होनी चाहिए और अंको के सन्दर्भ में भारतीय अंको के अंतराष्ट्रीय रुप का अनुसरण किया जाना चाहिए, इस अनुच्छेद में यह भी कहा गया है कि संविधान का अपनाये जाने के शुरुवाती 15 वर्षों तक अंग्रेजी का अधिकारिक भाषा के रूप में उपयोग जारी रहेगा।

अनुच्छेद-346- इस अनुच्छेद में राज्यों और संघ एवं राज्य के बीच संचार हेतु आधिकारिक भाषा के विषय में प्रबंध करता है। अनुच्छेद के अनुसार, उक्त कार्य के लिए अधिकृत भाषा का उपयोग किया जाएगा।

हालांकि यदि दो या दो से अधिक राज्य सहमत हैं, कि उनके मध्य संचार की भाषा हिन्दी होगी, तो आधिकारिक भाषा के रूप में हिन्दी का उपयोग किया जा सकता है।

अनुच्छेद 347- इस अनुच्छेद के अन्तर्गत किसी राज्य की जनसंख्या के किस भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध, यह अच्छेद राष्ट्रपति को किसी राज्य की आधिकारिक भाषा के रुप में एक भाषा को चुनने की शक्ति प्रदान करता है। यदि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह

चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निर्देश दे सकता है कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह किसी विनिर्दिष्ट करे शासकीय मान्यता दी जाए।

अनुच्छेद-35(0।) - इस अनुच्छेद में वर्णन किया गया है कि प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा मे शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान की जाए।

अनुच्छेद-35(0ठ)- इस अनुच्छेद में भाषाई अल्पसंख्यकों के लिए एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति का प्रावधान करता है। विशेष अधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाएगा। यह भाषाई अल्पसंख्यकों के सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच करेगा तथा सीधे राष्ट्रपति को रिपार्ट सौंपेगा। तत्पश्चात राष्ट्रपति उस रिपोर्ट को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष प्रस्तुत का सकता है। या राज्य सरकारो को भेज सकता है।

विभिन्न आयोगों/ परिषदों के सुझाव

त्रिभाषा सूत्र के संबंध में विभिन्न आयोगों व परिषदो ने अपनी-अपनी सिफारिसे साकार के समक्ष प्रस्तुत की हैं

- केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् - इस परिषद ने सन् 1956 में विचार-विमर्श करने के पश्चात् त्रिभाषा सूत्र को प्रस्तुत किया तथा इसे अपनाने का सुझाव दिया।
- कोठारी आयोग - कोठारी आयोग ने 1964-66 में त्रिभाषा सूत्र के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत किये की तथा अपने सुझाव सरकार के समक्ष रखें, कोठारी आयोग के अनुसार, निम्न प्राथमिक स्तर पर एक मातृ भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा पढ़ाई जानी चाहिए। उच्च प्राथमिक स्तर पर दो भाषाएं मातृ भाषा अथवा होताय भाषा एंव संघ की राजभाषा अथवा सराज्य भाषा पढ़ाई जानी चाहिए। निम्न प्राथमिक स्तर पर कक्षा (8 से 10) तक तीन भाषाएं, मातृ भाषा, अथवा क्षेत्रीय भाषा, संध की राज्य भाषा अथवा सह सहायक भाषा एवं क्षेत्रीय भाषा अथवा विदेशी भाषा पढ़ाई जानी चाहिए शिक्षा का माध्यम सभी स्तरों पर क्षेत्रीय भाषायें ही होनी चाहिए।
- मुदालियर आयोग- इस आयोग के अनुसार, मातृ भाषा या प्रादेशिक भाषा- शिक्षक माध्यम के रूप में, सामान्य रूप से माध्यमिक स्तर पर मातृ भाषा या प्रादेशिक भाषा को शिक्षण का माध्यम बनाना चाहिए पान्तु भाषाई अल्पसंख्यकों को कें शिक्षा परामर्श बोर्ड के अनुसार, विशेष सुविधाएँ दी जानी चाहिए। माध्यमिक स्तर पर वो भाषाओं को आरंभ करना चाहिए। अंग्रेजी और हिंदी निम्न स्तर पर, माध्यमिक स्तर के अंत पर आरंभ की जानी चाहिए। दोनों भाषाओं की शिक्षा एक ही वर्ष में आरंभ नहीं किया जाना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयाम ने सुझाव दिया है कि स्कूल में हिन्दी का अध्ययन अनिवार्य होना चाहिए।

राधाकृष्णन आयोग - सन् 1949 इस आयोग ने वकालत की कि उच्च स्तरीय शिक्षा का माध्यम

छात्र की मातृभाषा हो परन्तु कुछ समय पहले तक अंग्रेजी चलती रहें। विश्वविद्यालय आयोग का सुझाव यह है कि त्रिभासा-सूत्र को लागू किया जाना चाहिए। परन्तु आयोग ने इसे उच्च स्तर पर लागू करने से विद्यार्थियों पर भाषा का बोझ अत्यधिक बढ़ जाएगा। जिसके परिणाम स्वरूप इनकी शक्तियां व्यर्थ होगी तथा उच्च शिक्षा में विषय का ज्ञान का स्तर भी गिर जाएगा। आयोग में उच्च स्तर पर भाषा के अध्ययन के लिए सुझाव दिया है।

इस प्रकार अनोक आयोगों द्वारा त्रि-भाषा सूत्र पर अपने सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं, तथा इसके सकारात्म पहलूओं को सामने रखा हैं। छब्थ्-2005 ने भी त्रि-भाषा सूत्र का महत्व स्पष्ट किया है तथा स्पष्ट शब्दों में कहा है कि अगर बच्चे की तुलनात्मकता अथवा मौलिकता को उजागर करना है तो त्रि-भाषा सूत्र को अपनाना होगा। शिक्षा प्रणाली को मजबूत आधार -त्रिभाषा सूत्र के माध्यम से ही प्रदाम किया जा सकता है।

त्रिभाषा सूत्र के समक्ष चुनौतियाँ -

त्रिभाषा सूत्र सूत्र तभी सफल माना जाएगा, जब हिन्दी भाषी क्षेत्र अन्य भारतीय भाषाओं को सम्मान देना शुरु करेंगे, इसके लिए उन्हें कम से कम एक या इससे अधिक ऐसी अन्य भारतीय भाषाओं को जानने की जरूरत है जो दूसरे प्रांत मे बोली जाती हो, साथ ही दक्षिण भारतीय राज्यों को भी हिन्दी के प्रति अपने नकारात्मक दृष्टिकोण का त्याग करना होगा, नई शिक्षा नीति में त्रि-भाषा सूत्र के पालन की बात करते ही राजनीतिक हलकों में इसकी प्रतिक्रिया विरोध के रूप में मिलने लगी, जबकि इसमें कोई नई बात नही कही गई है, इसके पहले भी यह नीति बनी थी जो लागू नही हो सकी इसके अन्तगर्त प्रावधान है कि प्रत्येक हिन्दी भाषी प्रांत को एक दक्षिण भारतीय भाषा सीखनी होगी, और दक्षिण नहीं भारतीय राज्यों को हिन्दी भाषा सीखनी होगी, तमिलनाडू पुनः इसका विरोध करते हुए हिन्दी भाषा को अपने ऊपर थोपने की बात कह रहा हैं। हिन्दी भासी त्रिभाषा सूत्र का अपनाना आसान नही है, क्योंकि हिंदी भासी राज्यतीसरी भाषा के रूप में किसको अपनाये जबकि संविधान में 22 भाषाओं को जगह मिली हुई हैं। इनमें से किसी एक भाषा को चुनना उनके लिए बहुत बड़ी चुनौति है। शिक्षा प्रणाली का आधार ही भाषा है अब शिक्षाविदो के सामने यह बड़ी चुनौति है कि शिक्षा का आधार किस भाषा को बनाया जाए; जो कि पूरे देश में समान रूप से लागू हो सके, तथा देश के प्रत्येक विद्यार्थी को अवसरों में समानता मिलें, भाषा के आधार पर हो रहे भेद-भावों का प्रभाव विद्यार्थी की उपलब्धि पर ना पडे।

त्रिभाषा सूत्र की आवश्यकता व महत्व:

राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 में भाषा को बच्चे के संज्ञानात्मक विकास से जोड़ा गया हैं। बच्चे का संज्ञानात्मक विकास तभी संभव है जब उसे अवसर की उपलब्धि हो, वह अवसर जिसके माध्यम से वह अपने विचारो को अपने तर्कों को तथा अपने मनोभावों को प्रस्तुत कर सकें। अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति दे सके। यह संभव तभी हो पाएगा जब उसे उस भाषा में अवसर प्रदान किया जाए जिसमें वह सहज वसरल महसूस करें, यह उपलब्धता एक विद्यार्थी को त्रि-भाषा मूत्र के माध्यम से ही प्राप्त हो सकती है।

क्योंकि उसमे मातृभाषा को उचित स्थान दिया गया है। हमारे देश की शिक्षा नीतियाँ शिक्षा के क्षेत्र में बहुउदेश्यता, सद्भाव समान अवसर तथा सृजनात्मकता को बढ़ावा दने की बात करती है यह तभी संभव हो पाएगा जब शिक्षा प्रणाल में त्रि-भाषा सूत्र को अपनाया जाए, त्रि-भाषा सूत्र का एक महवपूर्ण उद्देश्य यह भी है, हिन्दी व गैर हिंदी भाषी राज्यों में भाषा के आधार पर अंतर समाप्त हो, ताकि प्रत्येक भारतीय छात्र अथवा नागरिक को पूरे देश में समान अवसर उपलब्ध हो, भाषा के आधार पर किसी में हीनभावना का विकास न हो, सभी स्वयं को एक देश का नागरिक समझें, शिक्षक के लिए भी यह आवश्यक है कि वह प्रत्येक बच्चे की भाषा का सम्मान करते हुए उसे स्वीकार करें तथा कक्षा में बहुभाषिता को बढ़ाता दें। त्रि-भाषा सूत्र बच्चे के संज्ञानात्मक, भावात्मक तथा सामाजिक स्तर को देखते हुए ही बनाया गया एक प्रावधान है जो कि सार्वभौमिक है अर्थात् देश के प्रत्येक बच्चे के लिए आवश्यक हैं। देश मे बहुभासावाद तथा राष्ट्रीय एकता व अखण्डता के लिए त्रि-भाषा सूत्र एक महत्वपूर्ण आयाम है। प्रत्येक राज्य को इसे सहर्ष स्वीकार करने की आवश्यकता है। आपसा राजनैतिक मतभेदो में फसने के बजाए हमे हमें अपने देश की शिक्षा व्यवस्था को एक मजबूत आधार प्रदान करने की आवश्यकता हैं, किसी भी देश की मजबूत आधार शिला में उसकी भाषा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। अगर हमें अपने देश को विश्व पटल पर मजबूती प्रदान करनी है, अन्य विकसित देशों के समान अपने देश की शिक्षा के स्तर को ऊंचा उठाना है, तो हमे त्रि-भाषा सूत्र को स्वीकार करना होगा। देश की शिक्षा प्रणाली में त्रि-भाषा सूत्र निश्चित ही नये कर्तिमान उपलब्धियों का हासिल करेगा,

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. Hindikeguru-com
2. https/lw-ww-dristiias-com
3. Ncf- 2005 Document
4. गोयल राजकुमार, पाठ्यक्रम मे भाला एंव पाठ्यक्रम, विकास ISBN – 93-87053&16-4, RRcall Bodi Depet.

❐❐❐

---

1. एम0एड0छात्रा सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा उत्तराखण्ड

माटी के सम्मान की कविताएँ: 21वीं सदी का आदमी

–प्रो. सुशील कुमार शर्मा

डॉ. आशीष कंधवे को छंद मुक्त कविता प्रिय है। प्रस्तुत संकलन के पूर्व डॉ. आशीष कंधवे का एक और काव्य संकलन – "जन- गण- मन" प्रकाशित हो चुका है। उसमें भी इस संकलन की भाँति विविध भाव- भूमि पर सृजित छंद मुक्त कविताएँ हैं। अन्तर इतना है कि 'जन-गण-मन' में एकाधिक लघु कविताएँ अथवा क्षणिकाएँ हैं। '21 वीं सदी का आदमी' में केवल एक कविता इस प्रकृति की है, जो कृति के अंत में है और मात्र बारह शब्द इस 'ठग' शीर्षक कविता में हैं

माटी अर्थात् भू, पृथ्वी, पंच महाभूतों का एक तत्व। कबीर ने तो अपने फक्कड़ अंदाज में बहुत ही कड़वी सच्चाई कही है:

माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रूँधे मोय।
एक दिन ऐसा आएगा, मैं रूँधूँगी तोय।। [1]

जैन संत आचार्य विद्यासागर ने माटी पर एक वृहद् महाकाव्य ही लिख डाला- 'मूकमाटी'। 'मूकमाटी' की शैली मुक्त छंद की है। डॉ. आशीष कंधवे कृत काव्य- संग्रह – '21वीं सदी का आदमी' की शैली भी मुक्त छंद की है और प्रकारान्तर तथा प्रत्यक्षतः इसका मूल स्वर 'अपनी माटी' के प्रति प्यार और समर्पण है:

इसीलिये, मैं कहता हूँ, मेरे मित्रों/थोड़ी सी मिट्टी
इस यात्रा में/साथ लिये चलो
हाथ में लिये चलो/अपनों के लिए!
क्योंकि,
स्वयं से प्रतिष्ठित है मिट्टी/स्वयं में प्रतिष्ठित है मिट्टी
और हम/प्रतिष्ठा के लिए युद्धरत हैं
इस मिट्टी पर। [2]

कवि कर्म अत्यंत जटिल होता है। एक ओर उसे अपने काव्य-धर्म का निर्वहन करना होता है, तो दूसरी ओर अपने पाठक और श्रोता की मनःस्थिति का ध्यान रखना होता है। कवि डॉ. आशीष कंधवे ने इन दोनों के मध्य समन्वय स्थापित किया है। 'शब्द- लावा' शीर्षक से 183 पंक्तियों में डॉ. आशीष कंधवे ने अपने उदगार व्यक्त किये हैं, कि वे कविता क्यों लिखते हैं :

मैं विकल हूँ, मंजिल की राह से भटक कर
जीवन चक्र के फेर में अटक कर, इसीलिए; मेरी लेखनी मजबूर हो गयी है
उस दूरी को लिखने के लिये/जो मैं अपने कमजोर कदमों से

चलकर तय नहीं कर पाया/देखते हैं,

क्या मेरे नवजात शब्द/व्यस्क हो पाते हैं ?

क्या मेरी नवजात कविता/आकार ले पाती है ?

मैं समय को नहीं जानता/पर मेरा समय उस पल को जानता है

जो मैं जी रहा हूँ/इसलिये,मैं कविता लिख रहा हूँ। [3]

डॉ.आशीष कंधवे ने संकलन के प्रारंभ में जिस माटी की बात की है, वह कबीर की भाँति केवल रूंधने -रूंधाने की बात नहीं करती। वह मृत्तिका है, तो जीवनदायिनी भी है। जगत के सारे कार्य- व्यापार इसी की क्रोड़ में संचालित होते हैं। भाव जगत के समूचे अवयव- प्रेम, करूणा, संवेदना, छल-छदम् इत्यादि की साक्षी यही माटी है। यहाँ भावुक हृदय कवि की करूणा दार्शनिक हो जाती है:

अस्तित्व से/अस्तित्वविहीन की/यात्रा में/थोड़ी-सी मिट्टी

मेरे मित्रों/साथ लिये चलो/हाथ अपने!

साथ अपने!! [4]

कवि की माटी अंत:जगत की यात्रा करने के उपरांत बाहय जगत में प्रवेश करती है। इस मध्य राजनीति, समाज, विज्ञान, धर्म, संस्कृति, साहित्य जैसी विविध क्रिया-कलापों की वह पड़ताल करती है:

मंदिर- मसिजद/गीता-बाईबिल-कुरान/सब पर/एक परत

इस लोकतांत्रिक मिट्टी की/जमी मिलेगी

X X X

इस लोकतांत्रिक मिट्टी की/गुण-धर्म की विवेचना/इतनी सरल नहीं है।[5]

यदि लोकतंत्र का भविष्य धूल-मिट्टी की आवरण हीनता से तय होता है, तो इसकी जनोपयोगी उर्वरता को भी यही धूल-मिट्टी इसके सूनेपन को भरती है। मिट्टी का बहुत ही मन भावन लाक्षणिक प्रयोग कवि ने किया है :

वातानुकूलित कक्षों में/तय होता लोकतंत्र का भविष्य/जिस पर/कोई मिट्टी की परत नहीं है

कोई धूल नहीं है,

क्योंकि/लोकतंत्र के रख वालों को/धूल- मिट्टी से एलर्जी है।

X X X

इस लोकतंत्र की/असहाय लोकतांत्रिक जनता पर

तो रोज एजर्जी वाली/शुद्ध लोकतांत्रिक धूल- मिट्टी की परत

बिन पूछे ही जम जाती है।। [6]

लोकतंत्र एक खुली हुई शासन प्रणाली है, जिसमें जनता ही सर्वोपरि होती है। जनता के चयनित

प्रतिनिधि चाहें तो इस प्रणाली को स्वस्थ बना दें अथवा इसे विकृत कर दें। जनतंत्र के स्वार्थी पहरुवों पर कवि का कठोर व्यंग्य:

गलत तो वह लोकतांत्रिक हवा है/जो मिट्टी को उड़ाकर

तुम पर परत जमा देती है/गलत तो वह सूरज है

जिसकी रोशनी में कण-कण/दमक रहा है

X X X

सचमुच/यह प्राकृतिक प्रकोप ही है

जब मिट्टी तुम पर जमती है/जब धूल तुम पर बैठती है

तो दलदल भी तो तुम्हारा है

X X X

इस लोकतंत्र की/लोकतांत्रिक मिट्टी में

हँसकर धसो या/रोकर फँसो

यही तुम्हारी/यही हमारी

और यही/लोकतंत्र की नियति है। [7]

डॉ. आशीष कंधवे को छंद मुक्त कविता प्रिय है। प्रस्तुत संकलन के पूर्व डॉ. आशीष कंधवे का एक और काव्य संकलन – "जन- गण- मन" प्रकाशित हो चुका है। उसमें भी इस संकलन की भाँति विविध भाव- भूमि पर सृजित छंद मुक्त कविताएँ हैं। अन्तर इतना है कि 'जन-गण-मन' में एकाधिक लघु कविताएँ अथवा क्षणिकाएँ हैं। '21 वीं सदी का आदमी' में केवल एक कविता इस प्रकृति की है, जो कृति के अंत में है और मात्र बारह शब्द इस 'ठग' शीर्षक कविता में हैं:

मेरे शब्द/सुबह- शाम

मुझे ही ठग लेते हैं/वक्त बदलते ही

अर्थ बदल/लेते हैं। [8]

'21 वीं सदी का आदमी' की कविताएँ अपने वर्तमान के विद्रूप परिवेश से विद्रोह करती हैं । इन कविताओं में एक आक्रोश जन्य छटपटाहट परिलक्षित होती है:

लक्ष्य आँखों से/बन पंछी

उड़ते जा रहे हैं/सदियों से लिखी गई परंपराएँ

युगो से सींची गई सभ्यताएँ/अब पथहीन हो गयी हैं

मनुष्य से हारकर/मैं बैचेन हूँ

मगर मैं यह नहीं/जानता हूँ

सत्य हार कर कहाँ जाता है ? [9]

पुराने समय से सुनते आ रहे हैं और ग्रंथों में उल्लेख है कि सत्य कभी पराजित नहीं होता। सत्य की सदैव विजय होती है- 'सत्यमेव जयते।' [10] परंतु कवि डॉ. आशीष कंधवे इस शाश्वत सत्य के विपरीत कह रहे हैं- 'सत्य हार कर कहाँ जाता है ? ' वस्तुतः कवि के इस कथन में व्यंजना है, वक्रोक्ति है, जो आकर्षक है।

'21 वीं सदी का आदमी' की कविताओं में जहाँ आदमी की बात है, सत- असत की बात है, देश की बात है, देश के पर्यावरण की बात है, विभिन्न क्रिया- कलापों का निदर्शन है, वहीं कतिपय कविताएँ उच्च कोटि के दर्शन और बौद्धिकता से मंडित हैं:

मन और जीवन को/किसी भी तुला

पर तोल कर/संतुलित नहीं किया जा सकता

मन भटकाव से नहीं बच सकता/जीवन बिखराव से। [11]

इस दर्शन और बौद्धिकता के उपरांत भी कविताओं की भाषा इतनी दुरुह नहीं है कि अभिव्यक्ति को हृदयंगम न किया जा सके। 'इतिहास के पन्नों में संवेदनायें कहाँ होती हैं',[12] 'इरादों के रंग नहीं होते' [13] जैसे सर्वथा नवीन गढ़े हुए मुहावरों के प्रयोग से कविताएँ अतिरिक्त प्रभामय हो गयी हैं।

यह प्रभा डॉ. आशीष कंधवे की आगामी कृतियों में और अधिक उद्दीप्त होगी -- ऐसी अपेक्षा उनसे की जा सकती है।

संदर्भ :

1. कबीर ग्रंथावली: संपा. श्यामसुन्दर दास, पृ.103
2. 21 वीं सदी का आदमी: डॉ. आशीष कंधवे, पृ.6
3. वही, पृ.10
4. वही, पृ.16
5. वही, पृ.124
6. वही, पृ.125
7. वही, पृ.126
8. वही, पृ.135
9. वही, पृ.38
10. मुंडकोपनिषद, पृ.371
11. 21वीं सदी का आदमी: डॉ. आशीष कंधवे, पृ.46
12. वही, पृ.44
13. वही, पृ.130

❑❑❑

1. वरिष्ठ आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, मिज़ोरम केंद्रीय विश्वविद्यालय, आइज़ॉल–796004 (मिज़ोरम)

अपराध, राजनीति, और व्यापार से संबंधित ख़बरें और 'एनडीटीवी'

–अमित आर्य
–मैथिली गंजूँ

आज का टीवी भारत में समाचार और मनोरंजन के एक प्रमुख स्रोत के रूप में विकसित हो चुका है। समाचार पत्र और समाचार चैनल देश का सार्वजनिक एजेंडा निर्धारित करते हैं। टीवी समाचार कार्यक्रम, दर्शकों की वास्तविकता के मनोवैज्ञानिक धारणा को निर्धारित करने में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। हम कह सकते हैं कि प्रभावी तरीके से लोगों के विश्वास को प्रभावित करने के लिए समाचार एक अच्छी तकनीक है

शोध सार

समाचार, मीडिया का एकमात्र उपज नहीं है बल्कि यह एक शक्तिशाली उपकरण है जिसका उपयोग लोकतंत्र में जनमत को प्रभावित करने के लिए किया जा सकता है। विशेषकर, टेलीविजन समाचार का जनमत पर गहरा प्रभाव पड़ता है। टेलीविजन समाचार की सामग्री पत्रकारों और शिक्षाविदों के बीच चर्चा और शोध का एक ज्वलंत विषय रहा है। इस लेख के माध्यम से भारत के निजी प्रसारक एनडीटीवी चैनल के प्रसारण को समझने का प्रयास किया गया है। कुल 24 घंटे की अवधि में अलग-अलग कार्यक्रमों से विभिन्न प्रकार के समाचारों के विषय-वस्तु का विश्लेषण किया गया है। यह लेख, सभी समाचारों और कार्यक्रमों के प्रारूप पर केंद्रित है। विभिन्न पहलुओं पर पत्रकारों के दृष्टिकोण का पता लगाते हुए एनडीटीवी के बदलते विषय-वस्तु के परिदृश्य पर प्रकाश डाला गया है। इस लेख में समाचार चैनल एनडीटीवी के कार्य में सम्मिलित एवं इससे प्रभावित तथा इसको प्रभावित करने वाले सभी कारकों को शामिल किया गया है।

भारतीय पत्रकारिता का परिदृश्य चिंता का प्रमुख विषय बनता जा रहा है। एक तरफ़ जहां बदलते समाचार सामग्री की यात्रा ने साधारण समाचार बुलेटिन से नाटकीय समाचार, चर्चा और बहस जैसे प्रभावी चरण देखें हैं वहीं दूसरी तरफ़ इसके परिणामस्वरूप 24x7 टेलीविजन समाचार चैनलों ने इस पेशे के लिए नए नियम भी निर्धारित किए हैं। टीवी समाचार सामग्री के मुद्दे के कई पहलू तथा पैमाने हैं जो किसी भी टेलीविजन समाचार चैनल की सामग्री को प्रभावित करते हैं। वित्तीय स्थिति, टीआरपी (टेलीविजन रेटिंग प्वाइंट), विज्ञापनदाताओं की मांग, व्यवसाय और मालिकों के हित, संपादकीय नीतियां, संपादकीय टीम की प्रकृति, कर्मचारी पत्रकारों की गुणवत्ता ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं जो टीवी प्रसारण की

सामग्री को प्रभावित करते हैं। दूरदर्शन को छोड़कर, पूरा टेलीविजन समाचार उद्योग निजी क्षेत्र के अंतर्गत आता है और लाभ उनके अस्तित्व को बनाये रखने का अतिआवश्यक कारक है। मुनाफे लिए इन्हें अधिक से अधिक दर्शक और प्रभावी प्रोग्रामिंग की आवश्यकता होती है और ये ही प्रोग्राम टेलीविजन समाचार चैनलों की सामग्री तय करते हैं (राव, 2016)। समाचार सामग्री का चयन और चयनित सामग्री का प्रस्तुतिकरण, टीवी समाचार प्रसारण में ये दो महत्वपूर्ण चरण हैं। समाचार चयन 'क्या दिखाना है' यह तय करता है तथा प्रस्तुतिकरण 'कैसे दिखाना है' यह निर्धारित करती है। चैनल पहले उन मुद्दों और कहानियों का चयन करते हैं जिन्हें वे जनता को दिखाना चाहते हैं तदुपरांत यह तय करते हैं कि इन चयनित मुद्दों, समस्याओं और कहानियों को कैसे प्रस्तुत किया जाए। जैसा की पहले ही इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि ऐसे कई कारक हैं जो एक टेलीविजन चैनल में समाचार सामग्री की प्रक्रिया, चयन और प्रस्तुतिकरण को प्रभावित करते हैं।

आज का टीवी भारत में समाचार और मनोरंजन के एक प्रमुख स्रोत के रूप में विकसित हो चुका है। समाचार पत्र और समाचार चैनल देश का सार्वजनिक एजेंडा निर्धारित करते हैं। टीवी समाचार कार्यक्रम, दर्शकों की वास्तविकता के मनोवैज्ञानिक धारणा को निर्धारित करने में एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। हम कह सकते हैं कि प्रभावी तरीके से लोगों के विश्वास को प्रभावित करने के लिए समाचार एक अच्छी तकनीक है (अफगाही और सादात, 2014)। अधिकांश लोग अक्सर प्राइमटाइम समाचार और डिबेट शो देखते हैं। प्राइमटाइम समाचार चैनलों के दर्शकों और उसके अर्थशास्त्र के मामले में सबसे मूल्यवान, महत्वपूर्ण और कीमती समय है (वी, 2014)। सूचना और प्रसारण मंत्रालय (MIB), भारत सरकार (GOI) के दस्तावेज़ से पता चलता है कि भारत में हर दूसरा टेलीविज़न चैनल एक न्यूज़ चैनल है (ब्रॉडकास्टिंग डॉक्यूमेंट्स MIB, GOI, 2018)। 1.37 बिलियन से अधिक की आबादी (भारत की जनसंख्या, 2020) और टेलीविजन सेट वाले लगभग 197 मिलियन घरों में, टीवी कार्यक्रमों का लोगों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है (फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री, वार्षिक रिपोर्ट 2018-19 में प्रकाशित, ट्राई- 2020)। उपरोक्त तथ्य भारतीय टीवी समाचार प्रसारक एनडीटीवी की विषयवस्तु का लेख करने के लिए प्रेरित करते हैं। निजी समाचार प्रसारक ऐसे टेलीविजन समाचार चैनल हैं जो निजी कंपनियों, समूहों या व्यक्तियों द्वारा व्यावसायिक उद्देश्यों और मुनाफे के लिए जो चलाए जाते हैं (पीकोन एंड डॉडर, 2020)।

समाचार पत्र और समाचार चैनल विधायी मुद्दों, प्रशासन और यहां तक कि बाजारों के लिए भी देश के सार्वजनिक एजेंडा को प्रांतीय और राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित करते हैं। समाचार मीडिया की सामग्री पूर्ण रुप से बाजारों को प्रभावित करती है और देशव्यापी स्वभाव, प्रतिनिधियों की चिंता, प्रशासन की प्राथमिकताओं इत्यादि को प्रतिबिंबित करती है (राव, 2016)। टीवी समाचार कार्यक्रम दर्शकों की मानसिक धारणा को निर्धारित करने में एक मुख्य भूमिका निभाते हैं तथा जनता के विश्वास को प्रभावित करने के लिए समाचार एक अच्छी तकनीक है (अफगाही और सादात, 2014)। अधिकांश लोग अक्सर प्राइमटाइम समाचार और वाद-विवाद जैसे शो देखते हैं (वी, 2014)। सभी समाचार प्रसारक अपने सर्वश्रेष्ठ

कार्यक्रम को प्राइमटाइम के दौरान दिखाकर दर्शकों का ध्यान खींचने की कोशिश करते हैं तथा लोकप्रियता बढ़ाने की उम्मीद करते हैं (एन, चाणक्य सीएन और नरसिम्हामूर्ति, 2019)। प्राइम टाइम के लेख से पता चलता है कि भारत में, राष्ट्रीय राजनीति, फिल्म और मनोरंजन, अपराध और खेल जैसे समाचार प्राइम टाइम के लगभग आधे हिस्से पर कब्जा कर लेते हैं और शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण समाचारों का हिस्सा 2005 में 1.10 प्रतिशत से गिरकर 2013 में 0.69 प्रतिशत रह गया (गर्ग, 2016)। पांडा और त्रिपाठी (2016) ने सार्वजनिक सेवा प्रसारक, डीडी न्यूज, और निजी समाचार चैनल, एनडीटीवी 24*7 की रात 9 बजे के प्राइमटाइम समाचार सामग्री का लेख करते हुए पाया कि दोनों समाचार चैनलों द्वारा कवर की गई कुल समाचार में डीडी न्यूज ने पैकेज के रूप में एनडीटीवी 24*7 से अधिक समाचारों को प्रस्तुत किया। एंजेला एंड स्टेला (2011) ने सीएनएन और चैनल्स टीवी पर 6 सप्ताह की अवधि में प्रतिदिन एक घंटे के लिए विश्व समाचार का अध्ययन किया और खुलासा किया कि दोनों चैनल राजनीतिक समाचारों को अधिक महत्व देते हैं। रॉड्रिक्स (2005) ने द इंडियन पब्लिक सर्विस ब्रॉडकास्टर, दूरदर्शन और विदेशों में स्थित एक टेलीविजन नेटवर्क, स्टार न्यूज के प्राइमटाइम समाचार कार्यक्रमों के सामग्री की जांच की। एक वर्ष की अवधि के अध्ययन में यह पाया गया कि किसी भी अन्य समाचारों की तुलना में «राजनीति» से संबंधित खबरों पर अधिक ज़ोर दिया गया।

उपलब्ध साहित्य से यह पता चलता है कि समाचार चैनल अपराध, राजनीति, और व्यापार से संबंधित ख़बरों को अधिक महत्ता देते हैं और कृषि, शिक्षा, पर्यावरण, सामाजिक मुद्दों, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, आदि से संबंधित मुद्दों पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।

भारतीय टीवी उद्योग में विषय-वस्तु और समाचार प्रस्तुतिकरण के बदलते पैटर्न के बारे में एक बड़ा महत्वपूर्ण अंतर देखा जा रहा है। भारतीय न्यूज चैनलों द्वारा दर्शकों की विचारधारा और आदतों को दिशा प्रदान करने जैसे तथ्यों ने हमें एनडीटीवी के विश्लेषण और अध्ययन के लिए मनोबल प्रदान किया। इसका लेख का उद्देश्य एनडीटीवी द्वारा प्रस्तुत किए जा रहे टेलीविजन समाचारों के विभिन्न स्वरूपों को समझना है। यह पता लगाना है कि समाचार सामग्री में कितनी विविधता है और किस प्रकार से विभिन्न समाचार कार्यक्रमों के प्रारूप का प्रसारण हो रहा हैं? भारतीय समाचार चैनल एनडीटीवी का चयन सघन साहित्य समीक्षा के बाद इसकी लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए किया गया है जो 24 घंटे संचालित एक निजी वाणिज्यिक नेटवर्क हैं। वर्तमान लेख में दिनांक 07\28\2021 को प्रसारित सभी कार्यक्रमों की अवधि को शामिल किया गया है।

जैसा कि रॉड्रिक्स (2005) ने उल्लेख किया है, "टेलीविज़न चैनलों के लिए अकादमिक शोधकर्ताओं को डेटा प्रदान करना एक आम बात नहीं है", इसलिए हमने विश्लेषणात्मक डेटा एकत्र करने के लिए चयनित टीवी चैनल के कार्यक्रमों की रिकॉर्डिंग सुनने का निर्णय लिया। अपने लेख के लिए, हमने एनडीटीवी समाचार चैनल के 24 घंटे के स्लॉट का चयन किया।

चैनल का नाम : NDTV

प्रसारण तिथि एवं समय : 07\28\2021

तालिका 1: विषयवस्तु तथा कार्यक्रमों का वर्गीकरण

प्रसारण में ख़बरों को दिया गया समय	कुल समय	प्रसारित समाचारों का विषय प्रतिशत	प्रतिशत
जनसरोकार समाचार	30 मिनट	राजनीति	60%
समाचार आधारित कार्यक्रम	2 से 3 घंटे	अपराध	5%
चर्चा एवं विश्लेषण	3 से 4 घंटे	फिल्म	10%
मनोरंजन कार्यक्रम	30 मिनट	स्वास्थ्य	2%
अपराध कार्यक्रम	20 मिनट	विज्ञान-प्रोद्योगिकी	0%
धार्मिक / ज्योतिष कार्यक्रम	शून्य	बुनियादी ढांचा	8%
खेल / अन्य कार्यक्रम	10 से 20 मिनट	शिक्षा	0%
24 घंटे में प्रसारित समाचारों की संख्या(स्पीड न्यूज़ के अतिरिक्त)	23	मूलभूत आवश्यकताएं	5%
रिपोर्टर द्वारा खोजकर लाए गए समाचारों की संख्या (बयान, कार्यक्रम, प्रेस कांफ्रेंस आदि के अतिरिक्त)	4 से 5 खबरें	कृषि, पर्यावरण- महिला एवं बच्चे, सामाजिक भेदभाव / कुरीतियाँ	0%
फॉलोअप समाचारों की संख्या	शून्य	भारत से जुड़े विदेशी मामले एवं महत्वपूर्ण वैश्विक समाचार	3%
		आध्यात्मिक	4%

जैसा कि हम तालिका 1 में देख सकते हैं कि जन-सरोकार समाचार को 30 मिनट , समाचार आधारित कार्यक्रमों को 2-3 घंटा, चर्चा एवं विश्लेषण को 3-4 घंटा, मनोरंजन कार्यक्रमों को 30 मिनट, अपराध कार्यक्रम को 20 मिनट, धार्मिक / ज्योतिष कार्यक्रम को नहीं के बराबर तथा खेल / अन्य कार्यक्रमों को 10-20 मिनट का समय दिया गया है। वहीं यदि प्रसारित समाचारों के विषय की प्रतिशतता की बात करें तो राजनीतिक ख़बरें को 60%, अपराध को 5%, फ़िल्म तो 10%, बुनियादी ढांचा और मूलभूत आवश्यकताओं को 8% तथा 5%, भारत से जुड़े विदेशी मामलों और महत्वपूर्ण वैश्विक समाचारों को 3-3 %, आध्यात्मिक समाचारों को 2% तथा स्वास्थ्य को 2% का समय दिया गया है। 24 घंटे में प्रसारित समाचारों की संख्या(स्पीड न्यूज़ के अतिरिक्त) 23 है। इसके साथ ही, विज्ञान-प्रोद्योगिकी, शिक्षा, कृषि, पर्यावरण, महिला एवं बच्चे, सामाजिक भेदभाव / कुरीतियाँ जैसे विषयों की महत्ता को नकारते हुए इन्हें किसी भी कार्यक्रम में शामिल नहीं किया गया है।

तालिका 2: एकत्रित आंकड़ो के आधार पर स्रोत एवं क्षेत्र का वर्गीकरण

प्रसारित समाचारों का स्रोत	प्रतिशत	टीवी स्क्रीन पर दिखने वाले व्यक्ति	प्रतिशत	समाचारों का कवरेज क्षेत्र	प्रतिशत	अन्य संबंधित मानक	प्रतिशत
रिपोर्टर	5%	रिपोर्टर	10%	राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र	40%	कुल प्रसारण में रिपोर्टर द्वारा लाई गई एक्सक्लूसिव खबरों का प्रतिशत	5%
समाचार एजेंसी	10%	एंकर	70%	बड़े प्रदेशों की राजधानी	40%	खोजपरक (इन्वेस्टिगेटिव) एवं अनुसंधानात्मक खबरों का प्रतिशत	2%
सोशल मीडिया	35%	विशेषज्ञ	10%	बड़े शहर	10%	समाचारों के पुनर्प्रसारण (रिपीटेशन) का प्रतिशत	95%
विभिन्न प्रवक्ता	5%	प्रवक्ता	10%	छोटे शहर और कस्बे	1%	गलत तथ्यों पर स्वीकारोक्ति अथवा खेद का प्रतिशत	0
घटना-दुर्घटना	5%			गांव	1%	गलत तथ्यों का पुनर्प्रसारण प्रतिशत	
समाचार पत्र				विदेश	8%	बयान आधारित समाचारों की प्रतिशत	20%
इंटरनेट	40%						

प्रस्तुत आंकड़े बताते हैं कि ख़बरों के पुनः प्रसारण के द्वारा ही पूरे दिन का कार्यक्रम दिखाया जाता है। ममता का दिल्ली दौरा, राजस्थान में कैबिनेट विस्तार , दिल्ली के नए पुलिस कमिश्नर राकेश अस्थाना, बारांबकी- सड़क हादसा, दिल्ली में BJP का मंथन जैसी ख़बरों की ही पूरे दिन पुन: प्रमुखता से दिखाया गया है। तालिका 1 और 2 के आधार पर कहा जा सकता है पूरे दिन बस खबरों को पुनर्प्रसारित किया गया है ।अगर बात करे एकंरों की तो इसमें महिला एकंर की संख्या पुरुषों के मुकाबले अधिक है और रिपोर्टरों में पुरुष की संख्या अधिक है। उपरोक्त तालिका यह साबित करती है कि चर्चा वालें शो पर अधिक समय खर्च किया जाता है । वहीं नॉन स्टॉप 100 कार्यक्रम में क्षेत्रिय खबरों को अधिक जगह मिली है। जैसा कि हम तालिका में देख सकते हैं कि सभी शो स्टुडियों में बने है। अन्य ख़बरों के मुक़ाबले राजनीतिक खबरों को ज्यादा समय दिया गया है उसके बाद जनसरोकार समाचार से जुड़ी खबरों को और तीसरे नंबर पर मनोरंजन कार्यक्रम से जुड़ी खबरों को लिया जा सकता है। समाचार चैनलों पर समाचार आधारित प्रसारण के अतिरिक्त मनोरंजन, हास्य, ज्योतिष, अपराध कथाएं, फिल्मी गॉसिप, वाहन या इलैक्ट्रॉनिक गैजेट्स की प्रचारात्मक समीक्षा तथा इंटरनेट वीडियो आधारित कार्यक्रमों का प्रसारण समय बढ़ा है । खोजपरक समाचारों का प्रतिशत समाचार चैनलों में न्यूनतम स्तर पर है ।

निष्कर्ष:

चर्चा एवं विश्लेषण संबंधी कार्यक्रमों पर ज़ोर देता टीवी मीडिया निजी समाचार प्रसारक एनडीटीवी पर समाचारों की संख्या में कमी दिखती है तथा वे महत्वपूर्ण मुद्दों पर जोर देने और उसी के अनुसार समाचार प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। लेख के दौरान पता चला कि इंटरनेट के आगमन ने समाचारों के पैटर्न को बदल दिया है। अब, समाचार दर्शकों का एक बड़ा वर्ग ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से नवीनतम समाचार प्राप्त करता है इसलिए, विचार आधारित कार्यक्रम जैसे वाद-विवाद, चर्चा संबंधी कार्यक्रम आदि की हिस्सेदारी बढ़ाई गई है। टीवी न्यूज चैनलों पर आजकल खेल, अपराध, समाज और धर्म से जुड़े कई कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं लेकिन फिर भी लोग अन्य कार्यक्रमों की तुलना में टीवी समाचार चैनल पर वर्तमान घटनाओं को अधिक देखना पसंद करते हैं और इसी कारण राजनीतिक विषय से संबंधित समाचार के कवरेज को चैनल पर प्रमुखता से प्रसारित किया गया है। एनडीटीवी, प्राइम टाइम स्लॉट के दौरान 'बहस और चर्चा' प्रारूप को प्राथमिकता देता है और चर्चा के लिए सीमित विषयों पर ध्यान केंद्रित करता है।

एनडीटीवी ने न्यूज बुलेटिन, बहस और चर्चा, विशेष कार्यक्रम जैसे प्रारुप पर जोर दिया है।वर्तमान लेख में पाया गया कि समाचार कवरेज के मामले में एनडीटीवी, अपने दर्शकों को समाचार देने के लिए बुलेटिन प्रारूप के अलावा समाचार रैपिड न्यूज बुलेटिन प्रस्तुत करने के नए चलन को अपनाया है और अधिक समाचार देने का प्रयास किया है। लेख से यह भी पता चलता है कि समाचार चैनल अपने दर्शकों को जोड़ने के लिए विभिन्न प्रकार के समाचार कार्यक्रम प्रसारित कर रहा है तथा कार्यक्रम के दौरान समाचार सामग्री की विविधता का भी ध्यान रख रहे हैं।

शोध संदर्भ

1. गर्ग, एस. (2016). द प्लीथ ऑफ प्राइम टाइम. पी.एन. वसंती और पी. कुमार (सं.), टीवी न्यूज चैनल्स इन इंडिया बिजनेस, कंटेंट एंड रेगुलेशन, नई दिल्ली: अकादमिक फाउंडेशन और सीएमएस. पृ. 131-140.

2. रॉड्रिक्स, यू.एम. (2010). ग्लोबलाइजेशन ऑफ इंडियन टेलीविजन: इन इंडियन मीडिया इन ए ग्लोबलाइज्ड वर्ल्ड, सेज प्रकाशन इंक. पृ. 3–25. https://doi.org/ 10.4135/9788132105992.n1
3. रॉय, पी. (2015, 4 मई). द टैबलॉडाइजेशन ऑफ इंडियन न्यूज. 25 मार्च, 2017 (https://www.ndtv.com/opinion/prannoy-roy-on-the-tabloidization-of-indian-news-760247) से पुन: प्राप्त.
4. कुमार, डॉ और कुमार, नवीन. (2021). अ कम्पैरिटिव एनालिसिस ऑफ द प्राइम टाइम शोज़ ऑफ पब्लिक एंड प्राइवेट न्यूज़ चैनल इन इंडिया. 10.31620/JCCC.06.21/33.
5. सिंह, एस. (2016). न्यूज़ वर्सेज़ टॉक हैज टॉक रिप्लेस्ड जर्नलिज़्म ?. पी.एन. वसंती और पी. कुमार (सं.) में, टीवी न्यूज चैनल्स इन इंडिया बिजनेस. कंटेंट एंड रेगुलेशन, नई दिल्ली: अकादमिक फाउंडेशन और सीएमएस. पृ. 141-146.
6. गौर, पी., कुमार, ए. (2019). कंटेंट ऑफ हिंदी एंड इंगलिश न्यूज चैनल: द जर्नलिस्ट परस्पेक्टिव. आई_आरए-इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मैनेजमेंट एंड सोशल साइंसेज (आईएसएसएन 2455- 2267), 14(1), 8-13। doi:http://dx.doi.org/10.21013/jmss.v14.n1.p2.
7. अफगानी, ई., और सादात, एस.आर.एन. (2014). ए कंपैरेटिव स्टडी ऑफ न्यूज़ स्ट्रक्चर ऑफ स्टेट टीवी न्यूज़ चैनल ऑफ ईरान एंड टर्की: कंटेंट एनालिसीस ऑफ फॉरेन न्यूज़, ग्लोबल मीडिया जर्नल: टर्किश एडिशन, 5(9), 1-18। http://खोज।ebscohost.com/login.aspx?direct=true&db=ufh&AN=99716099&site=ehost-live
8. कीरत, एस. (1995). बीबीसी एंड सीबीएस इंटरनेशनल न्यूज कवरेज: अ कंटेंट एनालीसिस ऑफ द इवनिंग न्यूज, रिव्यू अल्जीरिएन डी कम्युनिकेशन, पृ: 23-43.
9. एन, चाणक्य सी एन और नरसिम्हामूर्ति, एन (2019). द रोल ऑफ विजिबिलिटि पॉलिटिक्स इन डिटर-माइनिंग द प्राइम टाइम कंटेंट ऑन टेलिविज़न, जर्नल ऑफ एडवांसेज एंड स्कॉलरली रिसर्च इन एलाइड एजुकेशन, 16(4).
10. पांडा, बी., और त्रिपाठी, एन. (2016). ए कंम्पैरेटिव स्टडी ऑन न्यूज़ कंटेंट ऑफ पब्लिक न्यूज़ चैनल वर्सेज़ प्राइवेट न्यूज़ चैनल (विथ रिफेरेंस टू डीडी न्यूज़ एंड एनडीटीवी 24*7). इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमेनिटिज एंड सोशल साइंस रिसर्च, 2(1), 24-26.
11. ट्राई. (2020). भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण: वार्षिक रिपोर्ट 2018-19.
12. राव, एन. बी. (2016). द सिन ऑफ न्यूज चैनल इन इंडिया. टीवी न्यूज चैनल इन इंडिया. बिजनेस कंटेंट एंड रेग्युलेशन, अकैडेमिक फाउंडेशन. पृ. 19–36.
13. ब्रॉडकास्टिंग डॉक्यूमेंट एमआईबी, भारत सरकार. (2018). https://mib.gov.in/all_broadcasting_documents.

❒❒❒

1. रिसर्च स्कॉलर, मानव रचना इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च एंड स्टडीज
2. प्रोफ़ेसर, मानव रचना इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च एंड स्टडीज

केंद्रीय हिंदी संस्थान

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

संपर्क : हिंदी संस्थान मार्ग, आगरा-282005, वेबसाइट : www.khsindia.org

संक्षिप्त परिचय

केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा 1961 ई. में स्थापित एक स्वायत्त शैक्षिक संस्था है। इसका संचालन स्वायत्त संगठन केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल द्वारा किया जाता है। संस्थान का मुख्यालय आगरा में स्थित है और इसके आठ क्षेत्रीय केंद्र : दिल्ली, हैदराबाद, गुवाहटी, शिलांग, मैसूर, दीमापुर, भुवनेश्वर तथा अहमदाबाद में हैं।

संस्था के प्रमुख उद्देश्य—

(i) भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 के अनुपालन में अखिल भारतीय भाषा के रूप में हिंदी का विकास करते हुए इसके विकास और प्रसार की दृष्टि से उपयोगी शैक्षणिक पाठ्यक्रमों की प्रस्तुति एवं संचालन (ii) विभिन्न स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण हिंदी शिक्षण का प्रसार, हिंदी शिक्षकों का प्रशिक्षण, हिंदी भाषा और साहित्य के उच्चतर अध्ययन का प्रबंधन, हिंदी के साथ विभिन्न भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन को प्रोत्साहन और हिंदी भाषा एवं शिक्षण से जुड़े विविध अनुसंधान कार्यों का आयोजन (iii) अपने विभिन्न पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के लिए परीक्षा आयोजन तथा उपाधि वितरण (iv) संस्थान की प्रकृति एवं उद्देश्यों के अनुरूप उन अन्य संस्थाओं के साथ जुड़ना या सदस्यता ग्रहण करना या सहयोग करना या सम्मिलित होना, जिनके उद्देश्य संस्थान के उद्देश्यों से मिलते-जुलते हों और इन समान उद्देश्यों वाले संस्थानों को संबद्धता प्रदान करना (v) समय-समय पर नियमानुसार अध्येतावृत्ति (फैलोशिप), छात्रवृत्ति और पुरस्कार, सम्मान पदक की स्थापना कर हिंदी से संबंधित कार्यों को प्रोत्साहन आदि।

संस्थान के कार्य—

• **शिक्षणपरक कार्यक्रम :** (i) विदेशी विद्यार्थियों के लिए हिंदी शिक्षण (ii) हिंदीतर राज्यों के विद्यार्थियों के लिए अध्यापक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (iii) नवीकरण एवं संवर्द्धनात्मक कार्यक्रम, (iv) दूरस्थ शिक्षण कार्यक्रम (स्ववित्तपोषित) (v) जनसंचार एवं पत्रकारिता, अनुवाद अध्ययन और अनुप्रयुक्त हिंदी भाषा विज्ञान के सांध्यकालीन पाठ्यक्रम (स्ववित्तपोषित)

• **अनुसंधानपरक कार्यक्रम :** (i) हिंदी शिक्षण की अधुनातन प्रविधियों के विकास के लिए शोध (ii) हिंदी भाषा और अन्य भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक व्यतिरेकी अध्ययन (iii) हिंदी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में आधारभूत एवं अनुप्रयुक्त अनुसंधान (iv) हिंदी भाषा के आधुनिकीकरण और भाषा प्रौद्योगिकी के विकास के उद्देश्य से अनुसंधान (v) हिंदी का समाज भाषा वैज्ञानिक सर्वेक्षण और अध्ययन (vi) प्रयोजनमूलक हिंदी से संबंधित शोधकार्य। अनुसंधानपरक कार्यों के दौरान द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के लिए उपयोगी शिक्षण सामग्री का निर्माण।

• **शिक्षण सामग्री निर्माण और भाषा विकास :** (i) हिंदीतर राज्यों और जनजाति क्षेत्र के विद्यालयों के लिए हिंदी शिक्षण सामग्री निर्माण (ii) हिंदीतर राज्यों के लिए हिंदी का व्यतिरेकी व्याकरण एवं द्विभाषी अध्येता कोशों का निर्माण (iii) विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण पाठ्यपुस्तकों का निर्माण (iv) कंप्यूटर साधित हिंदी भाषा शिक्षण सामग्री का निर्माण (v) दृश्य-श्रव्य माध्यमों से हिंदी शिक्षण संबंधी पाठ्यसामग्री का निर्माण (vi) हिंदी तथा हिंदीतर भारतीय भाषाओं के द्विभाषी/त्रिभाषी शब्दकोशों का निर्माण।

संस्थान के प्रकाशन : हिंदी भाषा एवं साहित्य, भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी अध्ययन, भाषा एवं साहित्य शिक्षण, कोश विज्ञान आदि से संबद्ध विभिन्न विषयों पर उपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन। अब तक 200 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। विभिन्न स्तरों एवं अनेक प्रयोजनों की पाठ्यपुस्तकों, सहायक सामग्री तथा अध्यापक निर्देशिकाओं का प्रकाशन। त्रैमासिक पत्रिका-गवेषणा, संवाद पथ, समन्वय दक्षिण, समन्वय पश्चिम, प्रवासी जगत, समन्वय पूर्वोत्तर, शैक्षिक उन्मेष, भावक, संस्थान समाचार एवे दो छात्र पत्रिका 'हिंदी विश्व भारती' तथा 'समन्वय' का प्रकाशन किया जाता है।

पुस्तकालय : भाषाविज्ञान, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, भाषा शिक्षण और हिंदी साहित्य के विभिन्न विषयों की पुस्तकों के विशेषीकृत संग्रह की दृष्टि से हिंदी के सर्वश्रेष्ठ पुस्तकालयों में से एक। एक लाख पुस्तकों का विशाल संग्रह उपलब्ध है। 75 से अधिक जर्नल, शोधपरक पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध।

संस्थान से संबद्ध प्रशिक्षण महाविद्यालय : हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के स्तर को समुन्नत करने तथा पाठ्यक्रम में एकरूपता लाने के उद्देश्य से उत्तर गुवाहटी (असम), आइजोल (मिजोरम), दीमापुर (नागालैंड) के राजकीय हिंदी शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों को संस्थान से संबद्धता।

योजनाएँ : (i) भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, कोलंबो एवं कैंडी में सिंहली विद्यार्थियों के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान के पाठ्यक्रम की 2007-08 से शुरुआत (ii) अफगानिस्तान के नान्गरहर विश्वविद्यालय (जलालाबाद) में संस्थान द्वारा निर्मित बी.ए. का पाठ्यक्रम 2007-08 से प्रारंभ (iii) विश्व के कई अन्य देशों (चेक, स्लोवानिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, मॉरीशस, बेल्जियम, रूस, जापान, उज़्बेकिस्तान एवं कज़ाकस्तान आदि) के साथ शैक्षणिक सहयोग और हिंदी पाठ्यक्रम संचालन के संबंध में संवाद जारी (iv) हिंदी के बहुआयामी संवध र्न के लिए हिंदी कॉर्पोरा परियोजना, हिंदी लोक शब्दकोश परियोजना, भाषा-साहित्य सीडी निर्माण परियोजना, पूर्वोत्तर लोक साहित्य परियोजना, हिंदी विश्वकोश परियोजना पर कार्य।

-श्री अनिल कुमार शर्मा
उपाध्यक्ष, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल
ई-मेल : vicechairmankhs@gmail.com

-प्रो. बीना शर्मा
निदेशक
ई-मेल : directorkhs1960@gmail.com

विश्व हिंदी साहित्य परिषद

हिंदी साहित्य, संस्कृति एवं भाषा

से संबंधित पुस्तकों के प्रकाशन के लिए संपर्क करें

अध्यक्ष : डॉ. आशीष कंधवे

ईमेल : vhspindia@gmail.com
www.vhspindia.in

संपर्क : 011-47481521, 9811184393

1. हिंदी एवं भारतीय भाषा का प्रचार-प्रसार एवं समग्र विकास
2. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी भाषा के विकास और विस्तार के लिए सेमिनार, सम्मेलनों का आयोजन
3. उत्तम साहित्य का प्रकाशन
4. साहित्यकार सहायता योजना
5. हिंदी को तकनीक से जोड़ना
6. पुरस्कार / प्रतियोगिता का आयोजन
7. रोजगारोन्मुख हिंदी के लिए प्रयास एवं योजनायें
8. संग्रहालय / पुस्तकालय / संगोष्ठी कक्ष की स्थापना
9. साहित्य एवं संस्कृति के चहुंमुखी विकास के लिए प्रयासरत
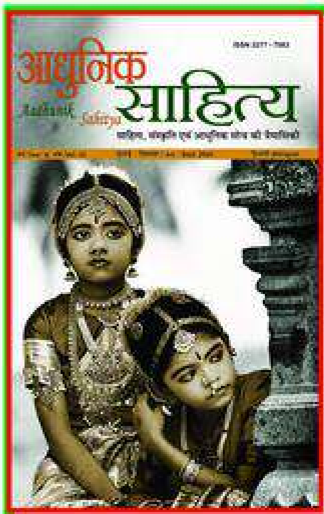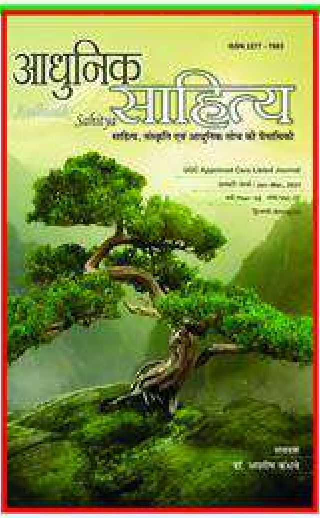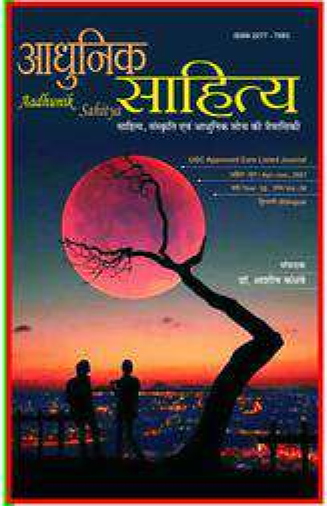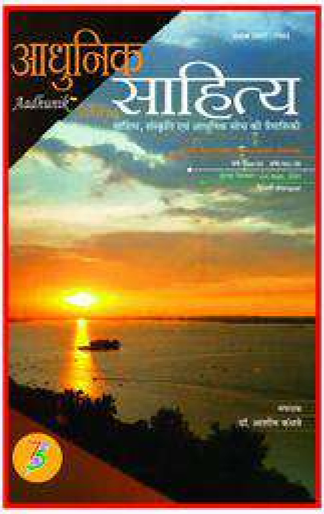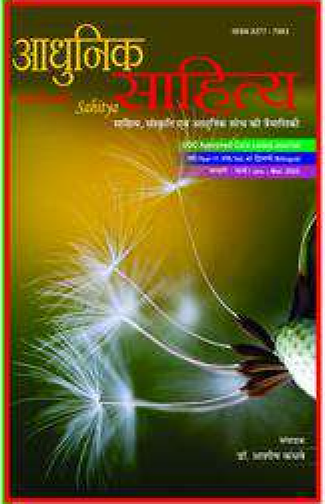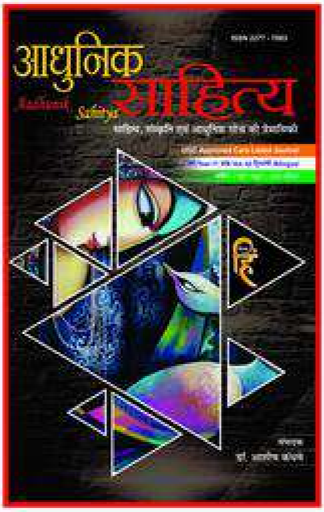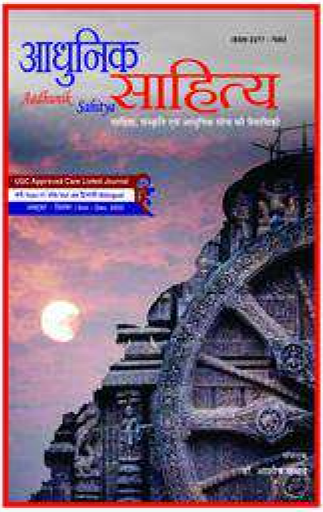
RNI No. DELBIL/2012/42547